श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

जिल्द II

रासि तीसरी से चौथी रासि की समाप्ति तक

भाई संतोखसिंह

भाषा विभाग, पंजाब

Shri Gur Pratap Suraj Granth (Hindi)

Vol. II

by

Bhai Santokh Singh

Transliterated and Annotated *by*
Dr. Manmohan Sehgal.

Revised *by*
Prem Bhushan Goyal

गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

जिल्द II

भाई संतोख सिंह

प्रकाशक :
भाषा विभाग, पंजाब,
पटियाला ।

प्रथम संस्करण :

मूल्य : 8—65 पैसे

मुद्रक :—
स्वैन प्रिंटिग प्रैस,
अड्डा टाँडा, जालन्धर—1
द्वारा कण्ट्रोलर, प्रिंटिग एवं स्टेशनरी विभाग,
पंजाब, चण्डीगढ़ ।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

जिल्द II

विषय सूची

अंशु पृष्ठ संख्या

प्राक्कथन

पंजाब को भारत की खड्ग भुजा कहा जाता है। यह ठीक भी है। किन्तु पंजाब को मात्र शक्ति एवं सम्पन्न प्रदेश कहना या समझना भ्रामक है। भारतीय साहित्य व संस्कृति के कोष को भी पंजाब ने जगमगाते रत्नों से भरा-पूरा है। भ्रान्ति का कारण काफ़ी हद तक तालमेल की कमी तथा हमारी परतन्त्रता थी। इन्हीं कारणों से भारतीय अपने साहित्य और संस्कृति से कट गए और पाश्चात्य साहित्य के अध्ययन और अनुसंधान को ही अपने जीवन की इति श्री मान बैठे। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् हमारी भाषाओं और साहित्य ने भी करवट ली और इस दशा में नवजागरण हुआ। इसका प्रभाव यह हुआ कि हम अपने प्रति जागरूक होकर अपने साहित्य और संस्कृति की ओर मुड़े। फलत: जहाँ देशीय भाषाओं में नव साहित्य सृजन प्रारम्भ हुआ वहाँ हमारी दृष्टि उस भूले-बिसरे साहित्य की ओर भी गई जो किन्हीं कारणों से जनता के सम्मुख नहीं आ पाया था।

भाषा विभाग, पंजाब ने ऐसे साहित्य को प्रकाश में लाने का बीड़ा उठाया है और अब तक कई दुर्लभ ग्रंथ यथा गुरु नानक प्रकाश, कथा हीर रांझणि की, पंचनद, ज्ञान त्रिवेणी इत्यादि हिन्दी जगत् को भेंट कर चुका है।

प्रस्तुत ग्रंथ 'श्री गुर प्रताप सूरज' एक महान् रचना है। कवि चूड़ामणि भाई संतोख सिंह जी ने इस अपूर्व काव्य ग्रंथ का सृजन बीस वर्ष की निरन्तर साहित्य साधना के पश्चात् किया। कवि का जन्म गाँव नूरदी, तहसील तरनतारन, ज़िला अमृतसर में भाई देवा सिंह जी के घर 1785 ई० में हुआ। भाई देवा सिंह जी, जिन्हें अपने काम धंधे के लिए प्राय: अमृतसर आना पड़ता था, ने अपने सुपुत्र संतोख सिंह की शिक्षा-दीक्षा का भार ज्ञानी संत सिंह जी के हाथों सौंप दिया। इनके यहाँ रह कर भाई संतोख सिंह ने गुरुमत विद्या, संस्कृत और ब्रजभाषा का गहन अध्ययन किया। लगभग दस वर्ष तक 'बूड़िए' गाँव में रहने के पश्चात् वे कुछ समय के लिए पटियाला दरबार में आ गए। मगर महाराज राम सिंह के यहाँ वे बहुत दिन टिक न सके। इसके पश्चात् वे श्री उदे सिंह, कैथल नरेश, के राज्य आश्रय में आ गए जहाँ उनको सादर रखा गया :—

उदे सिंह बड भूप बहादुर।
कवि बुलाए राखिउ ढिग सादर।

(गरब गंजनी)

और फिर 1829 से जीवन पर्यन्त अर्थात् अक्तूबर, 1845 तक वहीं दरबारी कवि रहे और इस काल में उन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ की रचना की। इससे पूर्व वे नामकोश, गुरु नानक प्रकाश, गरब गंजनी, बाल्मीकि रामायण का काव्यानुवाद, आत्म पुराण आदि रचनाएं लिख चुके थे।

वस्तुत: गुरु नानक प्रकाश भी "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" का ही एक अंग है। गुरु नानक प्रकाश, जिसे पिछले वर्ष हम पाठकों के सम्मुख भेंट कर चुके हैं, में श्री गुरु नानक देव जी का जीवन-वृत्त काव्य में लिखा गया है। भाई संतोख सिंह जी इसी प्रकार अन्य गुरुओं के जीवन काव्य लिखना चाहते थे। इसी आशा को फलीभूत करने के लिए उन्होंने गुरु प्रताप सूरज ग्रंथ की रचना की। उन्होंने स्वयं लिखा है :--

श्री गुरु को इतिहास जगत महि, रलमिल रह्यो एक थल सम नाहि
जिम सकता महिं कंचन मिले, बीन डावला ले तिह भले,
तथा जगत ते मैं चुनि लेऊँ कथा समसत सु लिख कर देऊँ।
बानी सफल बरन के कारण, करिहौ सत गुरु सु जस उचारन।
जिम दधि बिखै घ्रित मिल रहै, करहि कथन नीके शुभ लहै,
तिम जग महि बाद बिवादु, गुरु जस संची दे अहिलादु।

(गु० प्र० सू० अंशु 5)

भाई संतोख सिंह जी ने गुरु-काव्य लिखने का बीड़ा उठाया। मगर यह कार्य कोई सरल नहीं था। गुरुओं के जीवन पर प्रकाश डालने के लिए उन्हें कोई भी प्रमाणिक सामग्री उपलब्ध न हुई। फिर भी उन्होंने गुरु ग्रंथ साहिब, दशम ग्रंथ, वारां भाई गुरदास, बाले वाली जन्म साखी, पंज सौ साखी, भक्त माल, ज्ञान रत्नावली, महिमा प्रकाश आदि ग्रंथों का गहन अध्ययन तथा अनुशीलन किया। ऐतिहासिक तथ्यों को अपनी कल्पना एवं प्रतिभा का रंग चढ़ा कर इन्होंने अपने अद्‌भुत काव्य-भवन का निर्माण कर डाला।

इस बृहद् काव्य रचना का नाम उन्होंने गुरु प्रताप सूरज रखा था, इसलिए संपूर्ण कथानक को सूर्य की गति के आधार पर 12 राशियों, 6 ऋतुओं और 2 अयनों अर्थात् कुल बीस बड़े भागों में विभक्त किया है। पुन: सूर्य की किरणों के आधार पर अध्यायों को अंशुओं की संज्ञा प्रदान की गई है। इसलिए रचना के नामकरण तथा इसके रचना विधान में एक सुन्दर रूपक की कल्पना की गई है। सूर्य की भांति गुरुओं का जीवन भी अंधकार को दूर करता है।

बारह राशियों में गुरु नानकोत्तर गुरुओं की जीवन गाथा है, छ: ऋतुओं और अयनों में संत सिपाही श्री दशमेश जी का जीवन वृत दिया गया है। इस संपूर्ण रचना के कुल 1150 अध्याय हैं। जिनका विवरण निम्न अनुसार है :—

सूरज गुरु प्रताप ते, वरनी द्वादश रासि,
अपट साच पातशाह के, बरनों वर गुण रास । (15)
दछणाइने उतराइणे, अयन बनैगे दोइ,
बरनत रितु जो खषट शुभ, तिम पर बरनन होइ । (16)
प्रथम कही कविता रुचिर, श्री नानक प्रकाश,
पूरबारध उतरारध इम, बर बरने गुग लास । (17)
अब कलगीधर की कथा, खषट रुतन पर होइ,
गुरु प्रताप सूरज भयो, या ते सभ गति जोइ । (18)

(गु० प्र० रु० 1, अंशु 1)

केवल परिमाण और आकार की दृष्टि से देखें तो पंजाब के इस हिन्दी कवि की इस अद्वितीय रचना की तुलना में विश्व भर के किसी अन्य कवि की रचना नहीं ठहर पाती । पंजाब के प्रत्येक गुरुद्वारे में सायंकाल इस ग्रंथ की विधिवत् एवं नियमित कथा की जाती है ।

भाई साहिब ब्रजभाषा के विद्वान् कवि होने के साथ साथ, संस्कृत, पंजाबी तथा अन्य कई भाषाओं के महान् पण्डित थे । बाल्मीकि रामायण तथा आत्म पुराण जैसे संस्कृत ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद इसका ज्वलन्त उदाहरण कहे जा सकते हैं । यह तो गुरु प्रताप सूरज के प्रारम्भ में दिए गए, 'मंगलाचरण' से भी भली-भांति स्पष्ट हो जाता है कि उन्हें भिन्न-भिन्न भारतीय भाषाओं पर कितना अधिकार प्राप्त था ।

कवि की काव्य प्रतिभा को परखने के लिए हमारे पास उनके दो ग्रंथ हैं, गुरु नानक प्रकाश और गुरु प्रताप सूरज । इनमें ऐसा काव्य सौष्ठव है कि हर पंक्ति पर कवि की काव्य प्रतिभा को देखकर चकाचौंध हो जाना पड़ता है । भाव और भाषा दोनों की दृष्टि से ही ये अनुपम काव्यत्व के स्वामी ठहरते हैं ।

सोहलवीं-सत्तारहवीं शती में हिन्दी साहित्य में भक्ति-भाव की काव्य रचना का बाहुल्य था । इस धारा के शिरोमणि कवि गोस्वामी तुलसीदास (1532-1625) और सूरदास (1473-1563) थे । गोस्वामी तुलसीदास जी और सूरदास के काव्य मृदुलता और मधुरता के लिए अद्वितीय हैं और लोक कल्याण की भावना से भी इनका काव्य ओत-प्रोत हैं । कुछ ऐसी ही बात चूड़ामणि भाई संतोख सिंह जी के समूचे काव्य-जगत के बारे भी कही जा सकती है । चाहे इनकी रचना भक्ति भावना प्रधान है फिर भी यह भक्ति काल के अन्तर्गत नहीं आती ।

इस ग्रंथ के हिन्दी में प्रकाशित होने से आलोचक इसका तुलनात्मक अध्ययन कर सकेंगे और अन्य हिन्दी कवियों के परिप्रेक्ष्य में पंजाब के इस मेधावी हिन्दी-सेवा का यथोचित स्थान निर्धारित कर पायेंगे । कवि ने इसमें पौराणिक शैली को अपनाया है । इस आगे रचना को इसी दृष्टि से देखना उपयुक्त होगा । भाई संतोख सिंह का काव्य गुणों का गुलदस्ता है जिसकी महक के बारे में किसी समकालीन कवि ने लिखा है :—

कविता अपार है कि गुन को पहार है,
कि माधुरी आगार है, कि भाव कवि कोश है।
मूखन है कवि कें कि दूखन हा कवि के,
बिदूखन के बीच भी प्रसिद्ध हरि दोष है।
बानी ही उतंग है सु अंक हीऊ रंग है,
अनग अंग भंग के बिसूलन निसेस है।
नानक अरथ जोऊ कीनो कली कल सोऊ,
नाम तो संतोख सिंह धीयवर कोश है।

प्रस्तुत ग्रंथ को आठ जिल्दों में प्रकाशित किया जा रहा है। दूसरी जिल्द का लिप्यन्तर डा० मनमोहन सहगल ने किया है। इसमें श्री गुरु अरजन देव जी के वैकुण्ठ गमन और श्री हरिगोबिंद के दुर्ग से निकलने तक के प्रसंग हैं। संज्ञा कोश तथा टीका भी पाठकों की सुविधा के लिए इसके साथ ही दे दिए गए हैं।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि हिन्दी जगत् पंजाब के इस महा कवि की महान् रचना का भव्य स्वागत करेगा।

पटियाला
फरवरी, 1974

रजनीश कुमार
निदेशक,
भाषा विभाग, पंजाब।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।

स्री वाहिगुरू जी की फते ।

(अथ त्रितिय रासि कथनं)

अंशु १

प्रिथिए को प्रसंग

१. 'कवि संकेत' मर्यादा का मंगल ।

दोहरा

सारसुती[1] सरिता वहो बाक[2] तरंग विचार ।
चारु सु मम मानस बिखै[3], जानों सार असार ।। १ ।।

२. इष्टदेव—अकाल पुरख—मंगल ।

सवैया

करता जग केर सुरासर को निस द्योस चराचर को भरता[4] ।
भरता सभि को परमेश्वर पूरन दास बिनै नित आचरता[5] ।
चरिता जिसके न लखे पर है मुनि शेश गिरा कहि अच्छरता[6] ।
छरता मति को[7] लखि चातुरता तजि, आतुरता गहि[8], संकरता[9] ।। २ ।।

३. इष्ट गुरू—श्री गुरू नानक देवजी—मंगल ।

कवित्त

मिटिकै बिकारनि ते शरन परीजै नित, नाम के उचारन ते मोह जाति घटिकै ।
घट कै मझार[10] ध्यान धारनि ते, पार होहि मन टिक जाइ बिशियान ते[11] उलटि कै ।
लटकै न सिर तरवायो[12] ह्वै गरभ बीच, पर्यो बसि सदा वहुबंधनि बिकट कै ।
कटि कै सुदेहिं मोख, ऐसे गुरु नानक जी बंद हौं पदारबिंद[13] इंद्रिनि सिमिटि कै[14] ।। ३ ।।

४. इष्ट गुरू—श्री गुरू अंगद देव जी—मंगल ।

दोहरा

कंद अनंद बिलंद के श्री गुर अंगद चंद ।
चंदन सम दुख धाम को बंदौं बिधन निकंद[15] ।। ४ ।।

५. इष्ट गुरू—श्री गुरू अमरदास—मंगल ।

---

1. सरस्वती रूपी नदी । 2. वाक्य रूपी तरंगें । 3. बीच में । 4. पोषक, स्वामी । 5. दासों की विनय (सुनकर) नित्य उसके (अनुकूल) आचरण करने वाला । 6. अक्षरता, अनश्वरता । 7. बुद्धि को छलने वाला । 8. विनम्रता ग्रहण कर । 9. कल्याण-प्रदता । 10. अन्तःकरण में । 11. विषय-वासनाओं से । 12. नीचे की ओर । 13. चरण-कमल में नमन करता हूँ । 14. इन्द्रियों को समेट कर अर्थात् इन्द्रियों को बहिर्जगत से हटाकर । 15. विघ्न-निवारक ।

दोहरा

मार[1] हंकार जु डसति नित तांहि सहाइक मार[2]।
मारसि चहिं, श्री अमर भजि नित, जे बिना शुमार[3] ॥ ५ ॥

६. इष्ट गुरू—श्री गुरू रामदास जी—मंगल।

दोहरा

रामदास श्री सतिगुरू रूप एक श्री राम।
राम भ्रात[4] ह्वै रिपु हते नमो चरन अभिराम ॥ ६ ॥

७. इष्ट गुरू—श्री गुरू अरजन देव जी—मंगल।

दोहरा

अरजन-सर-से वाक जिन विदत सुजस अरजन[5]।
अरज़नि[6] दासनि की सुनति नमो गुरू अरजन ॥ ७ ॥

८. इष्ट गुरू—श्री गुरू हरि गोबिंद जी—मंगल।

दोहरा

बिंदु नीर पद परस की प्रापति मुख अरबिंद।
बिंदक[7] बिखै निहाल किय श्री गुर हरिगोबिंद ॥ ८ ॥

९. इष्ट गुरू—श्री हरिराय जी—मंगल।

दोहरा

राइ जगत के[8] अवतरे सुख उपजे भजि नाइ।
नाइ सीस करि वंदना जैं जै श्री हरि राइ ॥ ९ ॥

१०. इष्ट गुरू—श्री गुरू हरि क्रिषण जी—मंगल।

दोहरा

क्रिशन रिदा उज्जल करहिं प्रथम रूप श्री विशनु[9]।
बिस न रहति बिषियान की सिमर गुरू हरिक्रिशन ॥ १० ॥

११. इष्ट गुरु—श्री गुरू तेग बहादुर जी—मंगल।

दोहरा

तेग बहादर सतिगुरू दे शत्रुनि उदबेग[10]।
बेग[11] धारि जनन गिरा दुषट पर तेग ॥ ११ ॥

---

1. सर्प। 2. काम। 3. अलेख्य, परम। 4. राम के सहायक या बलराम के भाई श्री कृष्ण। 5. जिनका अर्जित यश लोक-जनित है। 6. अर्जियाँ, प्रार्थनाएँ। 7. थोड़े समय में ही। 8. जगत के स्वामी, करतार। 9. विष्णु से भी अपूर्व। 10. उद्वेग, घबराहट। 11. वेग, शीघ्रता-पूर्वक।

१२. इष्ट गुरू—श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी—मंगल ।

दोहरा

सिंघ म्रिगन रिपु ब्रिंद[1] को महांबली नर सिंध ।
सिंघ पंथ के मूल द्रिढ भजि श्री गोबिंद सिंध ॥ १२ ॥

१३. समसत गुरू मंगल ।

दोहरा

रचौं रासि अबि तीसरी सतिगुर सुजस बिसाल ।
नमसकार करि सभिनि को बिघन ब्रिंद को टालि ॥ १३ ॥

(मंगलाचरण समाप्त । गुरु-कथा का आरम्भ)

सुनति सिंध गुरु कथा को प्रेम साथ पुलाकित ।
पीवति अंम्रित त्रिपति नहिं रुचि चौगुन उपजाति ॥ १४ ॥

चौपई

भाई रामकुइर मुख चंद । निकसति तिस ते सुधा मनिंद ।
जिस महिं सदगुन को समुदाइ । धरि हिरदे जम भेट न पाइ ॥ १५ ॥
कहति सुनति जिस अनिक महातम । क्या तिन महिमा धरैं जु आतम ।
उपजहि दिन प्रति चाउ घनेरा । इक मन होइ सुनहिं करि घेरा ॥ १६ ॥
रामकुइर गिरवर के समसर[2] । कथा जु उपजी सलिता सुख-करि ।
गुर जसु उजल जल भरपूरा । प्रेम प्रवाह बिमल वहु रूरा ॥ १७ ॥
भ्रम बेमुखता द्वै द्रिढ कूला । जिन पर अवगुन तरुगन फूला ।
पठनि सुननि बल बेग बिसाला । जर समेत भगनति ततकाला[3] ॥ १८ ॥
सदगुन कमल ब्रिंद बिकसावति । मन संतन के मधुपनि भावति[4] ।
सिंध सकल जलजंतु अनंदति । करति केल गुर रहति अनिंदति[5] ॥ १९ ॥
दस गुर दसहुं घाट जिस केरे । दुखी त्रिखातुर जन हुइ नेरे ।
गुर-जस जलते सभि सुख पावहिं । विषियन त्रिखा तुरत बिनसावहिं ॥ २० ॥
अंतक[6] घाम पीर नहिं देई । नित प्रति निकट होइ जो सेई ।
रामकुइर परबीन जु माली । कीरति गुरनि सकेलि बिसाली ॥ २१ ॥
ग्रंथ बनावनि बाग लगायहु । तरुवर जेतिक ध्याइ सुहायहु ।
छंद अनेक प्रकारन शाखा । तुक बहु पत्र सघन शुभ भाखा ॥ २२ ॥

---

1. मृग रूपी शत्रुओं के दल पर सिंह-समान आक्रमण करने वाले । 2. समान । 3. उसी समय उसे जड़-मूल से उखाड़ देती है । 4. सद्गुण रूपी सुविकसित कमल सन्तों के मन रूपी भंवरों को लुभाते हैं । 5 गुरु की अनिंद्य कथासरिता में कल्लोल करते रहते हैं । 6. अंत में आने वाली अर्थात् यम रूपी धूप पीड़ा नहीं देती ।

गुण-गन तिन महिं सुमन सफूले। अरथ सुफल जुति, भाखन झूले।
शांति रसादिक रस जिन मांही। कषट धाम हति छाया तांही[1] ॥ २३ ॥
प्रेम बारि ते सिंचन करिता। ढिग नहिं होहि मोह पशु हरता।
अस सपवन महिं जो नर वासे। मोख सुगंध्रि सदा तिन पासे ॥ २४ ॥

दोहरा

सभि श्रोता बच कहति भे हाथ जोड़ि हुइ दीन।
'हरि गोबिंद के जनम की कहहु कथा परबीन' ॥ २५ ॥
सुनि कै साहिब रामकौर[2] कहति भए सुखदाइ।
आदि अंत सभि कहति हौं सुनहुं कथा मन लाइ ॥ २६ ॥
जहिं कहिं गुर सिक्खी हुती बिदत्यो एत्र प्रसंग।
सरब जगत महिं जसु महां करहि सु उज्जल रग ॥ २७ ॥

कवित्त

सुने देश देश हूं ते आए हैं अशेष सिख, भेटनि बिशेष को चढ़ावें पग सीस धरि।
गादी पै बिराजें गुरू अरजन बैठे बीच, करामात पूरन सुजोति जगदीश धरि।
बांछति को देति हैं अनंद हूं को हेत हैं, दुखनि हरि लेति हैं सु दासनि असीस धरि।
केऊ रहैं पास हरैं जमहूं को त्रास बहु धारैं गुन रास को, निवारें मोह रीस धरि[3] ॥ २८ ॥
संगति पिता नै दीनि, थोरी कछु आवै तहां, प्रिथीए सु महांदेव हेत गुजरान के[4]।
करामात साहिब सु एक गुरू अरजन तां सो द्वैष ठानैं, नहिं साकही पछान कै[5]।
दरब उदार आवै चल्यो दिश चारू हूं ते अनिक पदारथ अनूठे गति दान के।
जरी हूं न जाइ[6], जर जाइं[7] दुख पाइ करि-हुतो लघु भ्रात भयो ऐश्वरज महांन के ॥२९॥
कोऊ दिन बीत गए गादी गुरुता की लीए मेला तब आयो महां, मेख संक्रांति को[8]।
मिली दूरि दूरि हूं ते संगति हज़ूर गन पूरन पदारथ दरब भूर भांत को।
बैठे गुरू अरजन हेरि करैं अरजनि सखा-अरजन[9] के सरूप सुख दात को।
भेट धरैं आइ आइ जाचैं चित चाइ चाइ पाइ पाइ बर को हरख भरि जाति को ॥ ३० ॥
आयो सिख एक बर जेवर को ल्याइ धर्यो, तेवर[10] मनोहर चढ़ायो हाथ बंद के।
बिनती सुनाई 'देहु मंदर पुचाई एहु, भावना पूरेहु[11] मेरी, दानी हो अनंद के।

---

1. ग्रंथ रूपी उद्यान में फले-फूले पेड़ कष्ट की धूप का अन्त करके वहां छाया कर रहे हैं। 2. रामकुँवर या रामकुइर। 3. देखा-देखी। 4. पिता ने गुरुआई एवं संगति गुरु अर्जुन को दी थी, फिर भी कुछ थोड़ी संगति पृथीए और महाँदेव के पास भेंट ली जाती थी, जिससे उनका गुज़ारा चलता था। 5 (वास्तविकता) नहीं पहचान सकते। 6. सहन नहीं कर सकते। 7. (ईर्ष्या से) जल जाते हैं। 8. मेष-संक्रान्ति का मेला, वैशाखी 9. कृष्ण। 10. ज़नाना पोशाक। 11. इसे घर में (ज़नाने में) पहुँचवा दें, मेरी यह भावना पूर्ण हो।

कह्यो मानि, दास को पठायो सु अवास को, बिलोक्यो छबि रास को जु मोल धन ब्रिंद के ।
गंगा[1] हरखाई, अंग पहिरे सुहाई बहु गुरता बडाई जान कंतहि बिलंद के ।। ३१ ।।

सवैया

संगति ब्रिंद बिदा करि दीनि दीए सिरुपाउ[2] जथोचित जाने ।
केतिक पै बहु कीनि खुशी धन पूतन के जु मनोरथ ठाने[3] ।
'श्री गुर अंत सहाइक होवहु' केतिक नै इह भांति बखाने ।
केतिक को सतिनाम लगायहु, केतिक ग्यान ते कनि महांने ।। ३२ ।।

भांति अनेकन केर मनोरथ सिख्यन के सभि पूरन कीने ।
जाति भए निज धामन को, अभिराम कहैं जस को रसभीने[4] ।
'सुंदर रूप सुशील महां बर देति उदार, समान न चीने[5] ।
श्री गुर नंद[6] बिलंद गुणे करि, रूप मुकंद अभै बर दीने ।। ३३ ।।

फेर गए गुर मंदर को पिखि[7] गंग उठी उर में हरखाई ।
तेवर जेवर की सभि बाति सु पूछति भी कित भेटजु आई ।
कीनि अजाइब[8] मोल महान को देश किसू महि भा अधिकाई ।
रावर के[9] चरनांबुज को अरप्यो करि भावनी सों छबि पाई ।। ३४ ।।

कबित्त

भनैं निज भारजा सों 'आरजा[10] ! श्रवण करि, बड़े गुरू नानक प्रताप सभि देश करि ।
कली काल भारी जानि सिक्खी बिसतारी आनि, बिशै बिस तारी[11], सतिनाम दे विशेषु करि ।
आवैं दूरि दूरि ते उपाइन को भूर ल्याइ पूरन मनोरथ हदूर मैं अशेष करि ।
तिनहूं के नाम करि आनै निज धाम हूंते, चीर अभिराम धन मुकतादि वेश करि[12] ।। ३५ ।।

महिमा उतंग[13] गुरु नानक की सुनी गंग, महां प्रेम संग नमो कीनि हाथ बंद के ।
ऐसे रामदासपुरि बास कै बिताइ समों, दास मिलि आस धरि पास ह्वै मुकंद के ।
ज़रीदार अंबर पटंबर सुहाइ बड़ो कबि कबि पहिरे समेत ह्वै अनंद के ।
नातुर सुधारि धरें दासी जे संभारि करैं, बचन उचरैं 'बन्यो लागे धन ब्रिंद के' ।। ३६ ।।

ग्रीखम बिताई रुति बरखा की आई पुनि घटा घुमडाई जल जलधर छोरिते ।
झरी मीटि गई जबि दासी सुधि लई तबि, सभि पशमंबर[14] पटंबर ले भोर ते ।

1. गुरू अर्जुन देव जी की पत्नी । 2. समादृत किया । 3. जिन स्त्रियों ने पुत्र-कामना की थी । 4. रसमय होकर उनका यशोगान करते हैं । 5. उनके समान और कोई नहीं देखा । 6. गुरु रामदास के सुपुत्र गुरु अर्जुन । 7. देखकर । 8. आश्चर्य प्रकट किया । 9. आपके । 10. अपनी स्त्री से बोले, हे श्रेष्ठ नारी सुन । 11. विषयों के विष से मुक्त किया । 12. बढ़-चढ़ कर । 13. उच्च । 14. रेशमी कपड़े ।

आतप लगैबे हेत[1] पाए सो निकेत पर[2], बैठी ह्वै सुचेत करै राखी चहूं ओर ते ।
बीथका मैं जाति लोक सुंदर बिलोकि करि सगरे सराहैं 'सिख ल्यायो सुख लोर ते[3]' ॥ ३७ ॥

प्रिथीए की दासी देखि ईरखा विशेख करि, गई तिस भारजा के पासि ह्वै सुनाइ दीन ।
दिराणी के लुभाणी शुभ चीर हेरि[4] आए किसी देश ते विशेष धनु लाइ कीन ।
आगे न बिलोके अस, सुने हूँ न कान करि, किसी पातिशाह ढिग होंहि किधौ नांहि चीन ।
ऊपरि परे हैं, महां दमक भरे हैं, चारु कैसे किसू करे हैं[5], छरे हैं भाव बीन बीन[6] ॥ ३८ ॥

सुनि कै शरीकनि[7] लगी है मन नीक न, अरूढ़ी निज मंदर पै सुंदर निहारिओ ।
सूरज की जोति संग एक रग होइ रह्यो, जरी अंग अंग मैं, नजरी जाइ जारिओ[8] ।
झलमल झलकति आग सम लाग्यो नैन, बैन हूं न बोल सकै मानो उर फारिओ ।
होई बिसंभार[9] लीन दासी ने उतारि तब, धारति उदासी, मन मानो कित हारिओ ॥ ३९ ॥

बैठी सारे दिन, उदबिगन भई है मन, रैन परी जानि कै प्रिथीया धाम आइओ ।
हेरि बाल हाल को बुलाइ कै बिहाल को कह्यो है 'किस ख्याल ते बिसमाद[10] बडो पाइओ' ?
कौन काज भौन को बिगर गयो ? मौन करी, कैधों किह संग लरी, कै कछू गवाइओ ?
दीजै सो बताइ सभि चिंत को बिताइ अबि, कैसे पछुताइ मुरझाइ ? समझाइओ' ॥ ४० ॥

सुनिकै सनेह सानी बानी कंत हूं की करमो कहति भई रिस धारि अतीआ ।
'हमरे शरीक हूं के नीकी नीकी भेट आवैं, चीर तांकी ती के[11]हेरि होई बिसमतीआ'[12] ।
झलाझल झलकति डीठ न ठहिर सकै, धूनी ज्यों धुखति मम सुलगति छतीआ ।
होइ है बडाई नित, हमरी घटाई, बात साकन मैं बिथरै जगत जित क्रितीआ[13] ॥ ४१ ॥

करते पिता की सेव पावते सुपद एव, गुरता को लेव गुरु देव जग होवते ।
छूछे रहे जेठे तुम, पैठे घर बैठे रहे, ले गयो अनुज, सोई काटैं जोई बोवते ।
अनगिन धनु आवै, जन गन मन भावै, मोद मैं समावै, हम दीन होइ रोवते ।
भई विपरीति महां, जरी हूं न जाइ चीति, तुमरी अनीत हेरि सुख मैं न सोवते' ॥ ४२ ॥

भारजा बिलोकि कै, सशोक बीच ओक के, सु करत प्रसंन तिस बाक को बखानिओ ।
'चिंता चित चूर करि, दुख को बिदार दूर, जानीए न कूर लेहु साचि मनि मानिओ ।
जीवति हैं जावति सो पावति उपाइन को संमत किंतिक होइ अरजन हानिओ[14] ।
जनमै न सुत, म्रितु पाश हमै होइ हित[15], पावैं गुरिआई को जो पद महानिओ ॥ ४३ ॥

---

1. धूप लगवाने के लिए । 2. छत पर । 3. सुख की इच्छा से । 4. तुम्हारी देवरानी के घर सुंदर पोशाक देखकर मैं मुग्ध हो गई । 5. किसी ने बड़े ही सुन्दर बनाए हैं । 6. भाव चुन चुनकर बनाए हैं । 7. सम्बंधिनी । 8. सहन नहीं हुआ, ईर्ष्या से जल गई । 9. बेसुध । 10. दुःख । 11. स्त्री के । 12. देखकर आश्चर्य होता है ! 15. यत्र-तत्र । 13. गुरु अर्जुन की मृत्यु । 14. हमारा भला ।

नंद के अनंद बिन[1] वसतू बिलद गन भर्यो जो सदन सभि आपनो ही जानी अहि।
मालक न और बैठि ठौर जे संभारें सोऊ, यांते हम लेहिंगे, न देहिं आन मानी अहि।
सगरे पदारथ अकारथ सपूत बिन, हम को सकारथ बनहिं, पहिचानी अहि।
को दिन बडाई जरो, हेरि कै न जरो तिह, जर हीन ज़र किस काज की[2] ?
बिगानी अहि[3] ॥ ४४ ॥

सवैया

यौं प्रिथीए कहि धीरज दीनसि होहि सुचेत न चिंत धरीजै।
बीत गई अबि हाथ न आवति, पाछल बात न याद करीजै।
अपनी संगति ते बित आवत ले खरचो पट चारु बनीजै।
जेर जवाहरि जेवर को करि तेवर जेवर को पहिरीजै॥ ४५ ॥

दोहरा

इत्यादिक कहि तीय को करि प्रसन्न तिह जीय।
रलि कीनसि कूरी रलि[4], हुइ निशचै लखि लीय॥ ४६ ॥
बुरा चितवि करि अपर को आपन आनद ठानि।
प्रभू बिपरजै कदति[5] तिस इह तो बिदति जहान॥ ४७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितीये रासे 'प्रिथीए को' प्रसंग बरननं नाम प्रथमो अंसु॥ १ ॥

---

1. पुत्र-प्राप्ति की प्रसन्नता के बिना। 2. जड़ बिन धन, अर्थात् पुत्र के बिना धन किस काज ? 3. बेगाना है। 4. झूठी खुशी। 5. प्रभु उलटी करता है।

अंशु २

बुड्ढे निकट गमन प्रसंग

(२. माता जी की सुपुत्र हित याचना और गुरु जी की आग्या)

दोहरा

दासी प्रिथीए की सुनति दंपति के सभि बैन।
मन प्रसंन अति ही भई करि बिचार दिन रैन ॥ १ ॥
श्री गुर अरजन की हुती इक दासी बुधिवान।
तिह सों कह्यो प्रसंग सभि जितनो कीन बखान ॥ २ ॥
'प्रिथीए निज तिय निकट हुइ गुर अरजन पर कोप।
दियो स्राप-सुत होहि नहिं-इह राखहु उर गोप ॥ ३ ॥
सकल वदारथ हम लहैं जब गुर म्रितु को पाइं।
गुरिआई को लेहिं तबि चिंता करहु न काइ ॥ ४ ॥
होनहार निशचै इही जानी जाति सु बात।
बीते संमत बहुत ही[1] नहि जनम्यो ग्रिह तात[2] ॥ ५ ॥
यांते मालक इही हैं गुरता जुत घर वार।
नहिं अपरन[3] को प्रापती, देखहु रिदै बिचार ॥ ६ ॥

सोरठा

गुर दासी सुनि बैन नैन भरे जल कहति इमु।
'दे प्रभू सुत गुर ऐन[4] गुरता इन के होहि किम ॥ ७ ॥
अजहु न जरा अरूढ़ दंपति की वय है तरुन।
मतसर अगनी गूढ़ जरति मरति कहि दुरबचन[5] ॥ ८ ॥
बसहि गुरू को धाम इह उजरे जग फिरहिंगे।
सुत जनमहि अभिराम जिसु हेरति रिपु डरहिंगे ॥ ९ ॥
मिलि दासी इम दोइ निज निज पख की बात करि।
अपने मंदरि सोइ गमनी चिंता रिदैं धरि ॥ १० ॥

---

1. बहुत वर्ष बीत गए। 2. घर में पुत्र-जन्म नहीं हुआ। 3. अन्य लोगों को। 4. घर, अयन। 5. उसमें अहंकार की बड़ी आग है, जो मृत्यु के दुर्वचन कहता है।

गुर अरजन के धाम आनि सुनाई तरक जुत।
'इम प्रिथीए की बाम बुरा चितहि-किम ह्वै न सुत ॥ ११ ॥
सगरो सुन्यो प्रसंग तिन की दासी ने भन्यो।
भरी हरख के संग, मैं दुख पावति सिर धुन्यो ॥ १२ ॥

कवित्त

सुन्यो श्रोन गंग तातकाल चित भई भंग, लेति स्वास दुख संग सोचन को सोचती।
'नंद ते बिलंद ही अनंद होति ब्रिंद बीच नंद-हीन मैं हौ' कही आंस्वन को मोचती[1]।
हमरे शरीक नित म्रित्तु की उडीक करैं तांकी तीय सगरे पदारथ को लोचती।
ऐसे मन गिनती गिनति बीते निस दिन, नीको खान पान चीर भूखन न रोचती[2] ॥ १३ ॥
समै पाइ सतिगुरू आए निज मंदर मैं सुंदर प्रयंक पै बिराजे मन शांति है।
गंगा उठी हेरि करि हाथ जोरि नेर करि, खरी होइ बिनती सुनाई हित तात है।
'करबो ग्रिहसत सुठ सदन समान जानो, उपजै सपूत इह दीपक की भांत है।
नांहि त अंधेर होति, दुख को उदोत नित, लोक परलोक मैं न शोभा उपजाति है ॥ १४ ॥
आप सरबग्य[3], क्या मैं कहौं अलपग्य मन, तऊ निज दुख को सुनावौं महां दीन होइ।
रावरे सहोरद ने आपनी क्रिशोदरी[4] सों भन्यो जिमि, सुन्यो तिम, दासी सुनि आई सोइ।
पुत्र ह्वै न तिन घर पीछै हम बनैं गुर सगरे पदारथ को लेहिं रमणीक जोइ।
शोक मुझ होति है, तनूज न उदोत है[5], सभिनि सिर मौत है सथिर जगु नांही कोइ ॥ १५ ॥
सिक्खन हज़ारन की कामना को करहु पूर, वित्त सुत आदिक सकल समुदाय को।
आपने सदन मैं सु नंद देहु गुरू तुम, बंस को बिभूखन अनेक रिपु धाय को।
हासी न शरीक करैं हेरि न अनंद धरैं तैसे बिधि करो अबि तुम सभि लाय को'।
ऐसे कहि बैन, करे नीचे जुग नैन, भई लाज हूं को ऐन, ते संकोची निज काय को[6] ॥ १६ ॥
'हमरे न तात भयो ऐसी तो कहति बात, मो को बिन भाग जानि मानति अनंद को।
आप समरत्थ नाथ, सभै बिधि हाथ जिखै, क्रिपासाथ कहो बाक, सुंदर सु नंद को[7]।
कीजै मो क्रितारथ सकारथो सदन होइ दासी जान मेटीअहि संकट बिलंद को'।
धारी पुनि मौन, नहीं बोल्यो जाइ बैन कौन, नैनन मैं नीर औनि डारै ब्रिंद बुंद को[8] ॥ १७ ॥
सतिगुर हेरी क्रिपा ठानि कै घनेरी तबि, 'लालस वडेरी जो पै कीनी सुत लेनि की।
राखा रहि घास को न गमनै अवासु को, दरसु करि तास को शकति बर देनि की।
साहिबु सु बुड्ढा नाम, महांगुन ब्रिंद धाम, ग्यान अभिराम शेर मोह सम एन की[9]।
कीजीए प्रसंन बर लीजीए सु धंनि बनि, बिनती भनीजीए बडाई तजि बैन की[10] ॥ १८ ॥

---

1. अश्रु बहाते हुए। 2. वस्त्राभूषण भी नहीं रुचते। 3. सर्वज्ञ। 4. स्त्री। 5. पुत्रोत्पत्ति नहीं होती। 6. ऐसे वचन कहकर माता गंग ने दोनों नेत्र नीचे झुका लिए और लज्जा अनुभव करते हुए शरीर को भी सकुचित कर लिया। 7. कृपा पूर्वक सुन्दर पुत्र होने का वर दो। 8. आँखों में जल भर आया और अश्रु गिरने लगे। 9. जिसके सुन्दर ज्ञान रूपी सिंह के सम्मुख मोहादि मृग के समान हैं। 10. नम्रता पूर्वक।

सभि ही गुरू के पाइ सेवति बिताइ बैस, ग्राम गुरू धाम को संभारै कार तिन की ।
महां समरत्थ है, जि हाथ धरे मत्थ है[1], सकल दुख लत्थ है, बिहाइ चिंत मन की ।
पुरवै मनोरथ प्रसंन होहि जाही पर, बांछत को देहि, लाज राख है शरन की ।
चित में अचल है, बिसाल धी[2] प्रबल है, टहिल[3] ता सफल है अटलता बचन की ।। १९ ।।

ऐसे निज दास की प्रसंसा को प्रकाश कीनि गंगा सुनि लीनि आसा धारी उर नंद की ।
बाक पै बिसास करि राति को निवास करि उद्यो[4] सपतासु[5] त्यारी करी जान ब्रिंद की ।
स्यंदन तुरंग जोरि[6] सुंदर सजाइ रंग, कलस उतंग चामीकर[7] दुति दुंद[8] की ।
गाजै मंद नीरधर शबद गंभीर भयो बारता सकल करैं आनंद बिलंद की ।। २० ।।

दासी ब्रिंद सिक्खनी बहिल पै अरूढ़ि चली[9] मानव की भीर संग गमने सु राह को ।
मधुर सनिगध, बिसद है बरन जिस लीनो पकवान हेत खान चित चाह को ।
जो भरे बाहन खुले है[10] बहु दिन खरे, चंचल चलाकी करैं देति उतसाह को ।
ब्रिद्ध को सथान नेरे रह्यो तबि प्रेरे पंथ, भाजे घंट बाजे, छवि छाजे शुभ बाह[11] को ।। २१ ।।

पीछे ते बहिल ब्रिंद बल को बिलंद करैं सगरी धवाई[12] धूर चढ़ी असमान मैं ।
घुंगरू धमके, घोरे पैर को बजंते, नेमी[13] शबद उठंते, जान[14] दौरति पयान मैं ।
शोर उठे जोर, खग्ग उड्डे चहुं ओर धाए बन ते पलाए म्रिग त्रासि तिस थान मैं ।
कोऊ ब्रिध पासि तांसो पूछ्यो 'एहु कौन आवै? जीव भए ब्याकुल बिसाल ही भयान मैं ।। २२ ।।

तां ने पहिचान करि, बुड्ढे सों बखान करि, 'गुरू के पयान करि आवें इत ओर को ।
नरनि की भीर संग, स्यंदन तुरंग लगे, भाजे ते शबद होति, सकट सु जोर को' ।
बैन श्रौन धारे ते उचारे ब्रिध तांसो फेर रामदास पुरे किन कीनो अस शोर को ।
भाजर[15] को पाइ समुदाइ नर ल्याइ साथ चले किस थान को उठाइ घोर को ।। २३ ।।
ऐसे कहि देखन लगे हैं पुन तांही ओर इतने मैं नेरे आइ त्यागे सभि यान को ।

गंगा संग दासी लीनि दासन को आगे कीनि नमो पाइ ठानि[16], आगे धर्यो पकवान को ।
सहिज सुभाइ ब्रिध बाक को सुनाइ कह्यो 'कैसे आई मात करि भाजर महान को ?
सुने कंपमान भई पौन लगे केला जिम सूक्यो मुख, बोली नहीं, महां त्रास मान को ।। २४ ।।

दासी बोली हाथ जोरि, 'सतिगुरू इत ओर. आग्या दै कै पठी, सुत लोरै तुम बैन ते ।
सिक्खन मैं मुक्खि, गूरू नानक को देख्यो आप, गुन मैं महान हो, समान आन है न ते ।

---

1. जिसके सिर पर हाथ रख देते हैं । 2. बुद्धि । 3 सेवा । 4. उदित हुआ । 5. सूर्य, सप्ताख । 6. रथ-घोड़े जोड़कर । 7. ऊँचे स्वर्ण कलश । 8. दोनों की शोभा । 9. बहलियों (बैल गाड़ियों) पर चढ़कर चलीं । 10. घोड़े । 11. वाहन । 12. दौड़ाई । 13. पहिए । 14. यान, वाहन । 15. भगदड़ । 16. चरणों में प्रणाम कर ।

घाली बड़ी घाल भए बैस मैं बिसाल अबि संकट कराल के कटैपा देखि नैन ते[1]।
हूजीए क्रिपाल वर दीजीए निहाल करि, जाचै मात बैठी पद वंदै मन दैन ते[2] ॥ २५ ॥

वुड्ढे श्रौन सुनि कै जबाब दीन भनि कै, तनूज कहां मोहि ढिग, घाही गुरधाम को[3]।
राखा रहौं बीड़[4] को, शकति मो मैं कहां अस, सेवक सदा के करैं काम अभिराम को।
आप गुरू पूरन हैं पूरति मनोरथनि, नाचति हज़ारों दास लेहिं तिन नाम को।
कोस होहिं सैंकरे अराधे जन भै धरे, सहाइ जाइकै करैं, बिदारैं रिपु बाम को ॥ २६ ॥

मौन पुन धारी सुनि गंगा यौ निरासु भई, मन मैं उदास बहु संकट को पाइ कै।
दासी दास ब्रिंद जान सगरे बिमन भए, बोलति न बैन दीनो हरख मिटाइ कै।
नमो ठानि ठानि कै उठे हैं चढ़ि जान पै सु पंथ प्रसथान कै बिसाल चिंत पाइ कै।
प्रिथीए को बाक होइ साचो सभि-जान्यो मन-उपजै न नंद, चले जाति मुरझाइ कै ॥ २७ ॥

आइ गए रामदास पुरि मैं, उतर बरे सदन, गुरू जी देखे, बंदना को धारि करि।
कोमल कमल कुमलायो सो बदन हेरि, पूछी, 'सुत-कामना को पाई चिंत टार करि ?
कैसे तू बिमन ? नहीं आनंद समेत मन, बारता को भनि. जिम आई तहां कार करि'।
लोचन मैं बारि भरि. ऊचे बड स्वास भरि, बारता वताई मुख बाक को उचारि करि ॥ २८ ॥

'सुनो प्रभु ! रावर के प्रेरे हम गए तहां बंदन को ठानि कीन आगे अरदास को।
आतमज रह्यो कित, दीनसि अहित महां[5]-भाजर परैगी पुरि संकट प्रकाश-को।
ऐसी बिपरीत भई चिंता बड चीत भई, आई भयभीत भई आपने अवास को।
कलपतरू पै जिम जाइ को जतन करि, पाइ न पदारथ गवाइ बित पास को[6] ॥ २५ ॥

बूझी गुरू गवनी तें कौन से समाज संग, कैसे भाउ कीन, भेट दीन कौन जाइ करि' ?।
गंगा ने उचारी 'चढ़ि रथ असवारी गई, गाडी बहु संग लैके, जन समुदाइ करि।
मधुर सनिगध प्रसादि को अगारी धर्यो, भन्यो है मनोरथ सु दासी ने सुनाइ करि।
तिनों ने टलाइ करि[7], स्राप को अलाइ करि, सभै बिसमाइ करि, त्रास उपजाइ करि ॥ ३० ॥

सवैया

श्री गुरु अरजन सुनि करि पुन कहि, सिच्छा[8] दई सुमत बिसतारि।
'पूरन पुरखर के ढिग जानो डिंभ[9] न कीजै कछू बिचार।

---

1. अपनी कृपा-दृष्टि से ही महान् संकटों को काट देने वाले हो। 2. मन की दीनता से। 3. मैं तो गुरु-घर का घसियारा हूं, मेरे पास पुत्र (अर्थात् पुत्र के वरदान की शक्ति) कहाँ ? 4. जंगल। 5. पुत्र का वरदान तो कहाँ, अहित का अभिशाप मिला। 6. मेरी ऐसी दशा हुई जैसे कोई यत्नपूर्वक कल्पतरु के पास पहुँच कर भी मनोवांछित फल प्राप्त न कर सके, वरन् गाँठ का धन भी खो बैठे। 7. उन्होंने टाल दिया। 8. शिक्षा। 9. पाखंड।

होइ दीन हंकार निवारहु, बिनती कीजहि आप उचार ।
नहीं जनावन आपा करी अहि, बचन धूरि के बन अनुहार* ।। ३१ ।।

दोहरा

इत्यादि शुभ मति कही सुनि गंगा पछुताइ ।
बिना बिचारे मैं कर्यो तिस को फल दुख पाइ ।। ३२ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिन्थे त्रितिय रासे 'बुड्ढे निकट गमन प्रसंग बरननं नाम्र दुतीओ अंसु ।। २ ।।

---

* समान ।

अंशु ३

भाई बुड्ढे ते बर लेने प्रसंग

दोहरा

नीच बिलोचन करि रही सोचति सोच बिसाल ।
कितिक देर महिं धीर धरि बोली नंम्रत नाल ॥ १ ॥

सवैया छंद

'श्री जग गुर सरबग्य सदा उर सकल शकति महिं पूरन भूर ।
चहहु करहु नहिं बिलम लगहि प्रभु ! सभि देशन महिं सभिनि हदूर ।
करहिं अराधन पहुंचहु ततछिन, शरधालु की इच्छा पूरि[1] ।
लाखहुं के काजन कहु करिता, बहु इम कहहिं, न हौं कहि कूर ॥ २ ॥

ब्रिध ने सुजस आपको उचर्‌यो—जगु जाचक सो देवन हार ।
जद्‌यपि समरथ सभि बिधि इम हो तद्‌पि आग्या कीनि उचारि ।
तिन ते बर लिहु पुत्र चहति जो-सो मुझ ते हुइ सकी न कार ।
बिगर्‌यो आप सुधारन करीअहि शुभ सीछा[2] दिहु, मैं अनुसारि ॥ ३ ॥

बुड पुरषन की सेवा करनी इस महिं चहीऐ बुधि अधिकाइ ।
बंसु बिभूखन, पूखन समसर[3] सुति हुइ, अस मति दिहु सिखराइ ।
तिम अबि कीजहि, हेर प्रसीजहि[4], शुभ बर लीजहिं चिंत बिलाइ ।
बखशहु भूल लखहु अनकूली, लहौं मूल सुख धूली पाइ' ॥ ४ ॥

इम हुइ दीन गुरु जब बूझे शुभ मति देति भए ततकाल ।
'जाट सिक्ख पुन इंद्रै जित है[5], तिह सेवहु अपने कर नालि ।
धरहु प्रेम आपा न जनावहु[6], करहु कार उठि भोर बिसाल ।
प्रथम शनानहु, पुन क्रित ठानहु, अंन सुधारहु शुभ तिसकाल ॥ ५ ॥

---

1. आराधना करने वाले श्रद्धालु की इच्छा तत्क्षण पूर्ण करते हो । 2. शिक्षा । 3. सूर्य सदृश । 4. देखते ही पसीज उठें । 5. एक तो वे जाट-ज़िमींदार हैं, दूसरे इन्द्रियजित हैं । 6. अहंकार न प्रकट करो ।

अरध चणक गोधूम मिलावहु[1], पीसहु आपे लेहु पकाइ।
मोट रोटका लवण अमेज़ी[2], तिह ऊपर बहु घ्रित को पाइ।
दधि मथी अहि थोरा जल पावहु, संघनी छाछ, तनक तुरशाइ[3]।
धूप देहु लिहु बासन पाई, दुइ त्रै गठे[4] सथूल मंगाइ ॥ ६ ॥
पाइनि नगन उपाइन अस लिहु, निज सिर धरि गमनहु तिस पास।
तजि गिनती बिनती को मनीअहि हुइं क्रिपाल तबि सभि गुन रासि।
देहिं सु बर को इच्छा पुरहिं, लखहु निसंसै लिहु सुत आसि[5]।
अति उत्तम होइ बली बिलंदहि सेवहिं जितिक वनहि समदास[6] ॥ ७ ॥
सुनि अनंद किय, मनहु नंद भा[7] नीठ नीठ[8] निस कीनि बितीत।
जाग्रत रही चौंप[9] अति उपजी अंम्रित वेला[10] मज्जन कीति।
सुंदर अंन सुधार्यो रुचि करि, पीसन लगी आप उठि प्रीति।
दासी जाचि रही बहुतेरी, तरज तरज बरजी दिढचीत[11] ॥ ८ ॥
आपहि करी पकावन घ्रित जुत, पंचन को प्रशादि करि त्यार।
छाछ धूप दे संघनी स्वादल, गठे सहत निज सिर पर धारि।
चरन नगन गमनी जबि मारग, दासी दोइक चली पिछारि।
अपर बरज करि सरब हटाए, तऊ दूरि हुइ गमने लार[12] ॥ ९ ॥
भयो श्रम्म गमनी जबि मारग, तऊ न ल्यावति भी मन मांहि।
सीस उठायों दुखति भयो बहु गिनहि नहीं चित चौंप सु तांहि।
महिमा सिक्खन की बड परखति धरहि भाव गुर सेवक मांहि।
कौन वसतु है दुलभ तिनहु कहु धंन पुरखु सभि बिखै कहांहि ॥ १० ॥
पहुंची जाइ सु बीच बीड़[13] के आगे ब्रिध[14] सो छुधति बिसाल[15]।
तिसु निसु नहिं भोजन को कीनसि अधिक त्रिखत[16] बैठ्यो तिस काल।
जबहि गंग को आवति देख्यो ततछिन उठ्यो प्रीति के नाल।
'धंन मात हो ! उचित सदन गुरु, मम कारन आई पग नालि ॥ ११ ॥
डोरे सयंदन जोग गमन हित पुन ल्याई सिरि भार उठाइ।
क्यों न आस पूरन हुइ तेरी, सभि ते बजो, बहुर इमु आइ।

1. आधे चने और आधे गेहूँ मिलाओ। 2. नमक-मिश्रित। 3. थोड़ी खट्टी। 4. प्याज़। 5. आशीर्वाद, वरदान। 6. उत्तम, बलवान तथा ऊँचे स्तर के भी सब लोग दासों के समान उसकी सेवा करेंगे। 7. ऐसी प्रसन्नता हुई जैसा पुत्र ही हो गया हो। 8. ज्यों-त्यों। 9. चाव, लग्न। 10. उषा-काल। 11. तरह तरह से दृढ़-चित्त होकर उन्हें मना किया। 12. पीछे चलीं। 13. रक्षित वन। 14. बाबा बुड्ढा। 15. बहुत भूखा। 16. प्यासा।

किसू प्रकार हंकार न कीनसि, मन नीवे बनि, प्रेम बढाइ'।
इम कहि मिल्यो, उतार्यो सिर ते, मात जोरि कर नमो कराइ ।। १२ ।।
मोटि रोटिका गट्ठे संग करि ब्रिध तबि स्वादल करि करि खाइ।
पानि छाछ करि कवर[1] पाइ मुख, रुचि करि भोजन-रह्यो अघाइ।
'सुत को छुधति जननि जबि जानति सभि तजि करि तिस कौ त्रिपताइ[2]।
तिमि हे माता। मुहि त्रिपताइस छुधति त्रिखति लखि कै सहिसाइ'।। १३ ।।
गंगा सुनि करि बिनै बिखानी सुकचति दीन-मना कर जोरि।
'गादी को मालिक शुभ बखशहु शरनि परी दासी मैं तोर।
श्री नानक के दरशन करता सेवति भे गुर चरन निहोरि।
तुमरे समसर अपर न लखीअति संकट अंधकार के भोर[3] ।। १४ ।।
भई अवग्या छिमहु गुरू सिख, सेव करन ते मैं अनजान।
केवल बड़े प्रेम को हेरहिं नहि कछु भूखे खान रू[4] पान।
कहति सुनति इम त्रिपत्यो ब्रिध तबि करि कै चुरी पखारे पान[5]।
तिस छिन बह्यो बायु बहु बल सों जलधर गर्जयो गगन महान ।। १५ ।।
तडिता लशकति तेज अधिक धरि दसहु दिशनि महिं कीन प्रकास।
मनहुं मेघ है सुभट महाबलि, छटा खड़ग थरकावति पास[6]।
जनु हेरति ब्रिध को तबि प्रेरति—बरको देहु पूरी अहिआस[7]—।
पिखि[8] लच्छन बिसमत हुइ हरख्यो हुइ है नंदन बल की रासि'।। १६ ।।
बोल्यो बड उतसाह बढावति 'धंन मात! आवन भा तोहि।
बली बिसाल खड़ग खर कर धरि मुगलन मार गुरु बड होहि।
गादी तजहि तखत पर बैठहि अस लच्छन दीखति हैं मोहि।
रण प्रिय, रण घमसान मचावहि, दुषट व खपावहि करि कै क्रोहि[9] ।। १७ ।।
जथा सु कंदक[10] मैं अबि फोरे तिम मुगलन के फोरहि सीस।
जिम खुध्यारथु मुझि त्रिपताइस तिम तूं त्रिपतहिं आस जु थीस[11]।
पीरी अरु मीरी जुग धारहि नाम सु हरि गोविंद जगदीश।
जोधा प्रगटहि सदन तुमारे जीतहि अनगन शत्रु महीश ।। १८ ।।

1. ग्रास। 2. जैसे पुत्र को भूखा जानकर माता सब काम छोड़कर पहले उसे तृप्त करती है। 3. संकट रूपी अन्धेरी रात्रि को दूर करने वाले भोर के उजाले। 4. अरु, और। 5. कुल्ला करके हाथ धोए। 6. दामिनी रूपी खड्ग चमकाता है। 7. प्रतीत होता था कि वह (बादल रूपी वीर योद्धा) बाबा बुड्ढा को देखता हुआ प्रेरित कर रहा था कि माता गंगा को वर देकर उसकी आशा पूरी करो। 8. देखकर। 9. क्रोध ; 10. प्याज़। 11. जो आशा होगी।

सुनहु मात तैं सुजसु लियो बहु जनम्यो राम कौशल्या जैस।
श्री घनश्याम देवकी जाए तेरे भाग भए अबि तैस।
अतिशै पुंननि को फल प्रगटहि सुंदर रूप सरब ही बैस।
अंग बिलंद सभिनि ते होवहिं, बल की समता होइ न हैसु' ॥ १९ ॥

सोलहि सै इकवंजा संमत मास असौज इकीसव जानि[1]।
बुड्ढे बाक बखान्यो तिस दिन सुनति श्रोन भा अनंद महान।
धंन धंन सतिगुर के सिख तुम सेवति वांछति देवति दान।
करि बंदन पुनि पुनि कर बंदति हरखति उर घर कीनि पयान ॥ २० ॥

ततछिन मिले दास गन दासी बिगसति वदन देखि सुख मानि।
'कहहु मात बांछति अबि पायहु सेवे भली भांति हित ठान' ?
सभि को धीरज दे कहि म्रिदु बच, आई रामदासपुरि थान।
सभिनि गुरू कहु ध्यान धारि करि नमहि चरन करि बिनै बखानि ॥ २१ ॥

जिस दिन मात गंग बर लीनसि तिस दिन सुत चाहति सो जाइ।
तस प्रशादि कर तिह थल पहुंचहि उर मैं ब्रिध को ध्यान धराइ।
करि अरदासि अहार सु बंटहि, निज कर ते सभि सेव कराइ।
नंदन बांछति नंदन पावहि, अबलौ फलदाइक वहि थाइ[2] ॥ २२ ॥

ग्रिह लग आवति गंगा पग सों थकति भई बहु म्रिदुल सरीर।
असन[3] खान पुनि कीनसि कुछ नहिं, सूके अधरन पीनो नीर।
चरन अरुन अति रुधिर चुवति जनु लपटी धूर अंगु अरु चीर।
छुधति त्रिखति पुनि श्रम बहु होवा तऊ प्रेम ते तजी न धीर ॥ २३ ॥

सरब आरबल सुख सों बीती नहीं बिसादि भयो कबि कोइ।
गमन पंथ को क्यों कबि कीनसि, यांते अधिक थकति भई सोइ।
नीठ नीठ घर आनि पहूंची पाइ सु बांछति हरखति होइ।
कछू खेद को गिनति नहीं मन चिरंकाल की चिंता खोइ ॥ २४ ॥

उशन उदक कर चरन पखारे दासी ब्रिंद करहिं सभि सेव।
तबिलौ संध्या भी 'रवि असत्यो' कहति भई 'भोजन लिहु जेव'।
'पति दरशन करि असन अचौंगी करति उडीकन बैठी एव'।
सुनि सुनि सदन अनंद मन ठानहि इतने महिं आए गुरुदेव ॥ २५ ॥

थित प्रयंक पर सतगुर होए पुन प्रसंग पूछ्यो 'किम कीन ?'
भनी बारता सरब छोर ते 'पुत्त खड़ग धारी बर दीनि।

---

1. आश्विन बदी २१, संवत् १६५१। 2. अब तक वह स्थान पुत्र-दाता है।
3. भोजन।

सेव बिलोकि प्रसंन भए अति अधिक अधिक कहि बाक प्रवीन ।
पीरी पीरी बरतहि दोनहुं डील बिलंद, सबल हुइ पीन[1] ॥ २६ ॥
क्रिपा आप की ते बर पाइस, औचक भए शगुन शुभ आइ ।
गरज्यो घन अरु चमकी तड़िता तिन को देखि ब्रिद्ध हरखाइ ।
बैठहि तखत, महद हुइ जोधा रण प्रिय, हनहिं रिपुनि समुदाइ ।
गुण बिशाल, निजबंस ब्रिधावहि, गुर घर महिं अससुत उपजाइ' ॥ २७ ॥
सुनति प्रसंग भए गुर अरजन महिमा संतनि करहिं उचार ।
'शुषक सथल जल पल महिं पूरें, पूरन शुषक करहिं इक वार ।
रंक राव ते, राव रंक ते, म्रितु जीवाइं जिवति दें मारि ।
अचल चलावहिं, चलति थिरावहिं, बाक अमिट हैं, प्रगट संसार ॥ २८ ॥
अंत संत को कोइ न पावहि, सुर नर असुर जाति सभि हारि ।
संत हुकम को फेर न सार्कहि, सगरे सादर लें सिर धार ।
बुड्ढा साहिब तपकी मूरति, आतम ग्यानी गुन गनसार[2] ।
जिह सेवे बांछति हइ प्रापति, दुख दारिद के दंद बिदार[3]' ॥ २९ ॥

दोहरा

इत्यादिक गुन ब्रिद्ध के बरने श्रीमुख आप ।
सुनि गंगा बंदन करी धंन सिक्ख निषपाप ॥ ३० ॥
जनभ दारिदी घर बिखै कलप तरु जिम पाइ ।
तिम प्रसंन गंगा भई चिंता सकल मिटाइ ॥ ३१ ॥

सोरठा

पति को असन अचाइ परम प्रेम बैठी निकटि ।
पुन आपनि मुखि पाइ चित चिंता काटी बिकट ॥ ३२ ॥
निस महिं आनंद मानि, सुपति जथा सुख ह्वै रहे ।
तिन पद बंदन ठानि, कवि संतोख सिंह गुन कहे ॥ ३३ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे भाई बुड्ढे ते वर लेन प्रसंग बरननं नाम त्रितियो अंशु ॥ ३ ॥

---

1. शक्तिशाली, बलवान् । 2. अत्यधिक श्रेष्ठ गुणों वाले । 3. दु:ख-दरिद्र का द्वंद्व दूर करता है ।

अंशु ४

श्री हरि गोबिंद जनम प्रसंग

दोहरा

श्री अरजन उर गंग जुत परम प्रसन्न सु होइ ।
चहति पुत्र वड तेज मय जिह सम दुती न कोइ ।। १ ।।

कबित्त

ब्रिद्ध बर पाइ गंग गरभ धर्‌यो है तबि दंपति अनंद भए, दासी अर दासगन ।
और हितकारी सु प्रसंन भए भारी सुनि-गुरु अवतारी प्रगटेगो जिन जास गन[1] ।
होइगी बधाई, हम वांछति को पाई, तबि लहैंगे दरसु करैं पूरन की आस गन[2] ।
बढ़ैगे बिलासु गन हेरैंगे प्रकाश गन, शत्रु ह्वैं उदास गन, लहैंगे बिनाश गन ।। २ ।।
संतन की महिमा अनंत ही बिचारैं चित, सम भगवंत के, मिलैंगे अंत ताहि सों[3] ।
गुरू अरजन उर धार्‌यो जो उचार्‌यो स्राप तांको सत्त होनि बनै, हीन फल नांहि सो ।
पुत्र ते प्रथम भन्यो, प्रथम ही भोग्यो जाइ, जोगता इही है: दुख सुख सेवैं चाहि सो ।
बचन अमिट्ट है, उपाइ ते न हट्ट है, अनेक ही पलट्टि है, न मिटै लटकाहि सो[4] ।। ३ ।।
इतने मैं सुधि सुनि सुलही को आगमन, ब्राहनी सहंस्र पंच संग भट भीर की ।
प्रिथीआ को मीत, तां पै पत्रिका पठाइ नीति, 'हमको अनीत भई, रीति न गहीर की[5] ।
जेठो मैं सु बैठो रह्यो, लघु ने इकैठो धन लीनि गुरिआई न सहाइ तोहि बीर की[6] ।
ऐसे सुनि आयो संग अधिक समाज ल्यायो, जेन केन रीति लीनि आग्या जहांगीर की ।। ४ ।।
कीनसि खुटाई गुरु अरजन बांधि लेऊं, रामदास पुरा लुटि, देऊं मैं सजाइ को ।
मीत पर करों उपकार को सिधारि करि—आयो रिस धारि कै लै अनी समुदाइ को ।
सारो भेव सुन्यो गुरदेव समो जानि लेव—आइ, अहंमेव जुत जमन कुदाइ सों[7] ।
होइ फल स्राप को अवास तजैं आपको समेत ह्वै संताप, परै भाजर सथाइ सों ।। ५ ।।
घर को समाज लादि, नरनि बिसाद भयो, चले गुरू अरजन, त्रास धरि सैन को ।
नगर के संग नर चले हैं दुखति उर, प्रिथीए को गारि देति, सूने करि ऐन को[8] ।

1. जिसका यश होगा । 2. सबकी । 3. अन्तत: उसी प्रभु से मिलेंगे । 4. विलम्ब करने से भी वे मिटते नहीं । 5. बड़े लोगों के लिए यह अनुचित है । 6. तुम्हारे वीरत्व की भी सहायता न मिली । 7. अहंकार-पूर्ण यवन खोटी नियत से चढ़ आया है । 8. घरों को सूना करके ।

ग्राम है वडाली तहां जाइकै प्रवेश भए, बसे हैं अशेष, कीन सैन जाइ रैन को।
गुरू गुन गावैं, सतिनाम सभि ध्यावैं, सिख संग सुख पावैं, यौं अलावैं 'हमैं भै न को' ।। ६ ।।
'सुलहीजमन आयो' प्रिथीए ने सुनि पायो, 'संग चमू ल्यायो, भयो हेत मेरे आवनो'।
शत्रु है सहोदर सु त्याग गयो घर अबि, जाइ मिलौं आगै करौं तिसैं हरखावनो।
आवै रामदास पुरि खेचल करैगो बहु[2], यांते रोकों जाइ, भयो काज मन भावनो।
कर्यो तबि जावनो पदारथ सुहावनो लै, होइ गरबावनो बिसाल चितचावनो ।। ७ ।।
मिल्यो जाइ आगे, देखि दोऊ अनुरागे मन, गरे संग लागे, पुन बैठे मुसकाइ करि।
जावत[3] के हेत घन दीनो हित कीनो बहु, 'आए हो करम घरि[4] मीत सुखदाइ करि'।
सुलही भनति 'मै न लेवों घन, अनबन देनो बनै गुरू तुम मानै जग भाइ करि।
बांछति को पाइकरि, सीस को निवाइ करि भेटनि चढाइ करि, बनैं सिख आइ करि' ।। ८ ।।

सवैया

प्रिथीआ सुलही सों भनै 'सुनि मीत गुरू घर को इह जानि प्रसादू।
धन देग के हेत[5] दयो तुम को, लिहु आप, करो हमरो अहिलादू।
बिसवास बिसाल अहै तुमरे पर, देख सको नहिं मोर बिसादू।
बल संग सहाइक हो रिपु घाइक को न सकै करि मो सों बिबादू ।। ९ ।।

कबित्त

सुलही सलाहै 'तुम सखा हो बिसाल मेरे तेरी सुधि सुनि कै चढ़ाई करि आइऊं।
बंधों गुरू अरजन, लेहुं मैं पकरि करि, रामदास नगरी को सगरी लुटाइऊं।
तोहि सों मिलाप करि, अधिक प्रताप करि, रिपुनि संताप करि, शाहू पास जाइऊं।
सभि को सुनाइऊं, गुरू तुमहिं बनाइऊं, सखा को सुखदाइऊ बिसाल जस पाइऊं' ।। १० ।।
प्रिथीए वखानी 'साध साध[6] प्रीति ठानी, शुभ कीरति महानी जग भई सखा दोइकी।
आगमन तेरो सुनि गयो है पलाइ रिपु पुरी को उजारु कियो, वसतू न कोइ की।
महां समरत्थ तुम नाम लीए काम होहि, आप चलिआए पुनि चिंता किस लोइ की[7]।
कित्त कित्त कीनि सभि काज को सुधार दीनि, मो पै उपकार कीनि, रीति तरुतोइ की[8]।। ११ ।।

सवैया

मैं अबि लोक वुलाइ मिलाइ कै फेर पुरी को बनाइ बसाऊं।
जे उजरे उजरे सो रहो, पुनि आइब सैं तबि मैं न हटाऊं।
आप पयान करो घर को सुख होहि तुमैं इमु नीत मनाऊं।
शाहु सों मेल रहो नित बाढति चौगन काम असीस मैं गाऊ ।। १२ ।।

---

1. कहें। 2. बहुत श्रम किया। 3. ज़ियाफत, भोजनार्थ आमन्त्रण। 4. कृपा करके। 5. लंगर के लिए—समूह भोजन के लिए। 6. साधुवाद कहा, शाबाश दी। 7. किस व्यक्ति की। 8. वृक्ष और जल की रीति।

कबित्त

सुलही सु लही सुधि[1] महां दुरबुद्धी कूर आनंद बिलंद ते वदन मुसकाइ करि।
गयो भाज जानि देहु, काहे तिस नाम लेहु, राखो निज गेह सभि नगरी बसाइ करि।
फेर बसै आइ करि बैर को लगाइ करि, आप पुजवाइ करि धन समुदाइ करि।
दीजै मो सुनाइ करि. आवों पंथ धाइ करि, तबि ही गहाइ करि देवौं मरवाइ करि' ।।१३।।
ऐसे कहि धीर दीन मिले दोऊ बीर सम प्रिथीआ प्रसंन भयो निज धाम आइऊ।
सुलही बिताइ निसि और काम हेत गयो, हुतो पातिशाहि को सु नीको सुधराइऊ।
फेर दिल्ली पुरि को पयानो कीन मंद मति बाहनी समीप ते अधिक परवाइऊ।
चाहौं चित करौं सोइ, आगे नांही अरै कोइ, माने तुरकेशु बैन, मैं जथा अलाइऊं[2] ।। १४ ।।
रामदास पुरी मैं प्रिथीआ रह्यो धामकरि थोरी कुछ भेट आवै तप्यो रहै रात दिन।
लालसा दरब की–सरब मोहि पूजै आइ बाढै बडिआई–पिता समता को चाहै मन।
संगतां अनुज पास जातिको बिलोकै सुनै त्यों त्यों बढै क्रोधयुत ईरखा को बोधबिन[3]।
जैसे पटबीजनो[4] चहति रवि बीजनो[5] न जानै तेज छीजनो बिसालता जनाइ जनु।। १५ ।।
पतिशाह पंचम प्रपंच को न रंच जानै[6] सूधो ई सुभाव रहे ग्राम तिस जाइ करि।
पर उपकार हेत धारन सरीर कर्यो जहाँ रहैं तहां चहैं हित समुदाइ नर।
पूरब कराए धाम बासिवे को अभिराम, जेते मैं सुखेन बसैं तेतो कीनि थाइं बर।
गए संग लोक जेई वसैं करि ओक[7] तेई, गुरु की शरंन मैं अशोक सुख पाइ उर।। १६ ।।
पुन लगवायो कूप महिमा अनूप मनी, नाम है छिहरटा अजौ सु लग जानीयहि।
मज्जन जो करै नर, पापन सो परहरि जोग ह्वै सुरग के सगल सुखदानीअहि।
मास मास प्रति इशनानै इस थान आनि नंदन अनंद लहि नारी दुख हानीअहि[8]।
बांछति अपर[9] लहै, दोषनु को दहै नर, सतिगुरु शरधा बिलंद होइ मानीअहि।। १७ ।।

कबित्त

आए देश देश ते बिशेष ले उपाइन को बूझि बूझि जात है वडाली गुर पास को।
अनिक पदारथ सकारथे करति नर अरपै चरन तीर, बोलैं अरदासको।
भीर भई रहै इक आवति है जाति कोई, सेवा को कमावै कोई हेरि सुखरास को[10]।
करते कराहु वहु बरते उमाह होति हरते उपाधि गन, धरते प्रकाश को।। १८ ।।
खुरासान, काबल, पिशौर, कशमीरपुरि, धंनी, घेप, लमेदेश आवैं दरसानि हित।
बलखबुखारा, मुलतान ते महांन नर संगति पहुचै आइ भेट अरपानि हित।

---

1. पृथीए की सुधि लेकर।2. मैंने जो वचन कहे वे तुरकेश (जहाँगीर) ने भी मान लिए। 3. तब-तब अविचार-पूर्ण ईर्ष्या तथा क्रोध बढ़ता। 4. जुगनू। 5. चाहता है कि (मैं भी) सूर्य समझा जाऊँ। 6. पंचम गुरु अर्जुन देव किंचित भी छल नहीं जानते। 7. घर। 8. स्त्रियाँ दुःख-मुक्त होती हैं। 9. और भी। 10. सुख-राशि (गुरु अर्जुन देव) को देखकर।

दूरि दूरि ते हदूर पूर कामना को रूर मुख देखते जरूर हरखान हित।
सदा सुख मानि चित कोऊ रहैं पास नित, सेवति सुजान थित लेनि रिदै ग्यान हित ॥ १९ ॥
दुशमन देखि देंख दाह होति दुखी बहु, जरी हूँ न जाइ खुनसाइं निंदु भाखते।
बक के करम करैं[1], हंसनि की रीसि धरैं[2] उघरै कपट जानैं धन अभिलाख ते[3]।
बस न बसाइ ठाने अनिक उपाइ मूढ, झूठे ह्वै बिबाद ते महांन मन माखते[4]।
रिदै गोप राखते बिलंद बिषै कांखते बड्यों की सीम नाखते न सेवा बिखै गाखते[5] ॥ २० ॥

सवैया

ग्राम वडाली बसै सुख सों नव मास तहां इस भांति बिताए।
सिक्ख समूह की श्रेय करैं सतिनाम ररैं लिव देति लगाए।
मेलि रहै बहु संगत को, धनि ब्रिंद पदारथ भेट चढ़ाए।
सो उपकार के कारन श्री गुर कूप ते आदिक दें बनवाए ॥ २१ ॥

देग चलै दिन रैति निरंतर[6], ब्रिंद मसंद ही कार गुजारैं।
आप गुरु धन को न छुवैं कर सेवक आनि धरैं जु अगारैं।
लेहिं संभार पदारथ जो सभि पै खरचैं जिम आप उचारैं।
केवल हेत सभै उपकार के, हेरि त्रिलोक प्रसंस पसारैं ॥ २२ ॥

मास चढ़यो दसमो ग्रभ को जबि होति भयो सु प्रसूत समो।
धाइ[7] जि स्यानी बुलाइ लई तबि, आनि असीस दी नंद जमो[8]।
कोशठ अंतरि दीपक आठ दिपाइ धरे करि दूरि तमो।
सौन[9] सभै शुभ, वार निछत्रनि नौग्रिह आनि कै कीनि नमो ॥ २३ ॥

संमत सोलहि सै अरु बावन हाड़ इकीसवी को दिन सोऊ।
जामनी आधि बितीति भई जबि, पुख्य निछत्र[10] समो तबि होऊ।
और भले ग्रिह राज को जोग भा रूप मनोग सु बालक जोऊ।
धाइनि सेवतिते जनम्यो सुनु[11] देखि अनंद करै सभि कोऊ ॥ २४ ॥

दोहरा

आदितवार सु दिन महां थिति इकादशी जानि।
सुकल पक्ख्य आषाड़ को प्रगटे गुरू महांन[12] ॥ २५ ॥

---

1. बगले के कर्म करते हैं। 2. हंसों की चाल चलते हैं। 3. अर्थ-लाभ की अभिलाषा का कपट प्रकट हो जाता है। 4. क्रोध करते। 5. सीमोल्लंघन करते हैं। 6. सेवा में संलग्न नहीं होते। 7. रात-दिन लंगर (सदाव्रत) चलता है। 8. धाय, दाई। 9. पुत्रोत्पत्ति हुई। 10. शकुन। 11. पुष्य नक्षत्र। 12. पुत्र। 13. रविवार, आषाढ़ शुक्ला एकादशी।

सवैया

चारू प्रकाश अवास भयो पिखि धाइन बे-बसि ह्वै बलिहारू ।
हारू उद्यो मन को[1] जनु चंद बिलंद सरूप शुभै सम मारू ।
मारू रिपून को, सेवक तारक, मोहनी मूरति बुद्धि उदारु ।
दारू सुदोष हुतासन भा बल प्राक्रम जा बिथरै दिस चारु ।। २६ ।।
दीपक मंद बिलंदप्रकाशतै, धाइ भई बिसमे हरखावति ।
बाल अनेक भए मम हाथ, नहीं इसके सम को दुति पावति ।
सुंदर सूरति शोभते पूरति श्री मुख मंद मनो मुसकावति ।
आपको पीर न मात को पीर, सधीर प्रसंनता भूर उपावति ।। २७ ।।

कबित्त

बीजरी प्रकाशै जिम, तेजको उजासै तिम, लोचन को भासै तबि गंग को सुनायो है ।
'जनम्यो सपूत' सुनि धाइन ते पूत मना कलमखधूत[2] के रिदा सु हरि खायो है ।
ब्रिंद ताप तापते सु प्रेम के प्रताप ते सदीव नाम जापते मनों सु प्रभू पायो है ।
रंक नित ऐन ते कलपतरु लैनि ते ज्यों, कौन भनै बैन ते जितिक मोद छायो है ।। २८ ।।
चाहै चिरकाल की जु कामना बिसाल की शरीकनि के साल[3] की बिनासी चिंता मन की ।
कमल समान भी प्रफुल्लिति महान तबि बानी सुखदानी सुनि जैसे मोर घन की ।
जेवर जराव मीन धाइ के सु हाथ दीनि, आनंद उदधि मीन रीति सखी जन की[4] ।
चीरन को देति है दरब कोई लेति है, सु दासी दौर दौर करैं, कहैं ज्यों बचन की ।। २९ ।।

दोहरा

अधिक महिद उतसाह को गंगा कीन अनंद ।
घर अंतरि सभि इसी बिधि बखशी बखश बिलंद ।। ३० ।।
सदन बिखै मेव्यो नहीं पूरन ह्वै ततकाल ।
निकस्यो बाहर उछर करि उतसव सुखद बिसाल ।। ३१ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे श्री हरि गोबिंद जनम प्रसंग बरननं नाम चतुरथो अंशु ।। ४४ ।।

---

1. मन के हरण करने वाला । 2. पावन, पाप जिसके निकट नहीं आता । 3. दु:ख । 4. आनंद रूपी सागर में दास-दासी मछली-सी रीति निभा रहे हैं ।

अंशु ५

श्री हरि गोबिंद जन्म प्रसंग

दोहरा

इक दासी दौरति गई गुर अरजन जिसु थान ।
करति उडीकनि सुत जनम जागति क्रिपा निधान ।। १ ।।

सवैया छंद

सिमरहिं अबिनाशी पुरषोतम 'सत्य नाम' श्री बदन उचार ।
सुठ प्रयंक पर प्रभू बिराजहिं बैठे एकल बुद्धि उदार ।
सुधि दीनसि दासी कहि बानी 'श्री गुर जनम्यो पुत्तर तुमार ।
अति अनंद हुइ सदन अंदरे उतसव करति सरब ही नारि' ।। २ ।।
सुत जनमनि को बैन श्रोनि सुनि श्री अरजन मन अनंद उदार ।
हाथ बंद करि बंदन कीनसि श्री परमेशुर ध्यान सु धारि ।
उभग्यो प्रेम छेम को करता निस दिन बसै जु रिदै अगार ।
जाम जामनी ते मज्जन बहुर बिराजै आसन डारि ।। ३ ।।
सुत परथाइ सबद शुभ कीनहु, महांपुरख अवतार सुजान ।
अनिक नरन पर पर उपकारी दैगो दुशटन दण्ड महान ।
पीरी अरु मीरी कहु बरतहि नई रीति बिदताइ जहान ।
पहिरहि शसत्र तखत पर बैठहि बंस बधाइ जुगनि लगि मान[1] ।। ४ ।।

दोहरा

कुल भूखन दूखनि रिपुनि पूखन तेज प्रचंड[2] ।
तम दुशटन खै[3] करनि को दे संघर[4] महिं डंड ।। ५ ।।

सोरठा

रिदै अनंद बिलंद प्रभु मुकंद को प्रेम उर ।
शबद बदति सुखकंद आसा राग सु गाइ गुर ।। ६ ।।

---

1. युग-युगान्तर तक ही समझो । 2. प्रचण्ड तेज वाला सूर्य । 3. क्षय । 4. युद्ध ।

श्री मुखवाक

आसा महला ५

सति गुर साचै दीआ भेजि ।
चिर जीवनु उपजिआ संजोगि ।
उदरै माहि आइ कीआ निवासु ।
माता कै मनि बहुतु बिगासु ॥ १ ॥
जंमिआ पूतु भगतु गोविंद का ।
प्रगटिआ सभ महि लिखिआ धुर का ॥ रहाउ ॥
दसी मासी हुकमि बालक जनमु लीआ ।
मिटिआ सोगु[1] महा अनंदु थीआ ।
गुरबाणी सखी अनंदु गावै ।
साचे साहिब के मनि भावै ॥ २ ॥
वधी वेलि बहु पीड़ी चाली[2] ।
धरम कला हरि बंधि बहाली ।
मन चिंदिआ[3] सतिगुरु दिवाइआ ।
भए अचिंत एक लिवलाइआ ॥ ३ ॥
जिउ बालकु पिता उपरि करे बहु माणु ।
बुलाइआ बोलै गुर कै भाणि ।
गुझी छंनी नाही बात ।
गुर नानकु तुठा कीनी दाति ॥ ४ ॥ ७ ॥ १०१ ॥

बिलावल महला ५

सगल अनंद कीआ परमेसरि अपणा बिरदु समारिआ[4] ।
साध जना होए किरपाला बिगसै सभि परवारिआ ॥ १ ॥
कारजु सतिगुरि आपि सवारिआ ।
वडी आरजा रि गोबिंद की सूख मंगल कलिआण बीचारिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
वण त्रिण त्रिभवण हरिआ होए सगले जीअ साधारिआ ।
मन इछे नानक फल पाए पूरन इछ पुजारिआ ॥ २ ॥ ५ ॥ २३ ॥

दोहरा

सतिगुर नानक दीन सुत चिरजीवी जग माहि ।
चित अपुत्र को शोक हरि[5] मंगल अनंद उछाहि ॥ ७ ॥

---

1. शोक । 2. परिवार बढ़ा और वंश चल निकला । 3. मनचाहा । 4. परमेश्वर ने अपने यश की लाज रखी । 5. पुत्र के न होने के शोक को मन से दूर कर ।

धरम कला ते कुल चली मन चिंद्या फल पाइ।
हुइ प्रसंन नानक गुरु, दात न छपै छपाइ ।। ८ ।।
बुड्ढा साहिब साध जन क्रिपा करी दिय नंद।
बडी बैस कल्याण जुति हुइ है हरि गोबिंद ।। ९ ।।

सवैया

आसा राग समैं को लखि करि गायहु शबद प्रेम प्रभु नाल।
दुती बिलावल मंगल सूचक सबद बनायो अनद बिसाल।
उतसव इम होवति शुभ हरखति भई प्रभाति उद्यो अंसुमाल।
ग्राम समसत बिखै सुधिसुखदा मनहिं सुनहिं आवहिं ततकाल ।। १० ।।
बंदनवार हरित दलफूलन अनिक बरन की रचि करि सोइ।
श्री गुर घर दर पर बहु बंधी लघुदुदभि मधुरी धुनि होइ।
अबला ललितकलित बर बसत्रनि जेबर जेब[1] अजाइब जोइ।
देति बधाई आपस महिं मिलि, बोलहिं हरख भरी सभि कोइ ।। ११ ।।
म्रिग-द्रिग स्रिग[2] ग्रीवा बर धारी बिधु-बदनी करि करि शिंगार।
कोकिल कंठी गावहिं गीतनि, देति परसपर हसिहसि गार।
देव बधूटी कपट वेस धरि मधुर मधुर सुर मगल चार।
भई भीर को सकिय पछान न सुंदर मंदिर जुति बिसतार ।। १२ ।।
गगन गोप हुइ सुर बर आए[3] गुर मंदर को चरचहिं चारु।
मंजुल फूलनि, अंजुल भरि भरि, चंदन केसरि घसि घसि डारि।
अनिक सुगंधिनि सींचहि रुचि करि, रचि रचि रुचिर कुसम बिसतार[4]।
धूप धुखावति, बंदन धारति, करति सतुति को बचन उचारि ।। १३ ।।
भानु ग्यान के शांत रूप बर, सति संतोख छिमा गुन ब्रिंद।
श्री अरजन सिरजनि सुख दासनि महिमा महां चरन अरबिंद।
केवल नरन कल्यान कारने कांयां धरी सुछंद मुकंद।
जनम्यो पुत्र आपके जोधा 'रण प्रिय नाम सु हरि गोविंद ।। १४ ।।
दाहक दुशटनि, ग्राहक गुन को, चाहक धरम, सु बाहु जवान।
शसत्र धरहिं संग्राम करहिं बड, हनहिं तुरक की दल बलवान।
दीननि दासनि सहत उपासनि तिनको रच्छक होई महांन।
नहीं अरिनि को अरनि देहिंगे[5], अरुन करहिं रन अरन समान[6] ।। १५ ।।

---

1. शोभा। 2. माला। 3. गगन के देवता गोपनीय वेष में आए। 4. फूल बिखराते हैं। 5. जो शत्रुओं को टिकने नहीं देंगे। 6. रण (भूमि) को सूर्य समान लाल करेंगे।

नमसकार करि सुरग सिधारे, गुर के चरित उचारति जाति ।
कलजुग बिखै प्रकाश पंथ को, सत्तिनाम सिमरनि अवदाति ।
बडे भाग नर अंगीकारहिं पावहिं मुकति रिदै करि शांति ।
जोग भोग महिं हरख सोग महिं सिमरहिं सदा हुकम प्रभु दाति ।। १६ ।।

जाचिक जाचति जो चित बांछति गुर अरजन मन महद उदार ।
ढाढी[1], डोम, भाट बहु आए गाइं कलावंत मगलचार ।
दरब दीनि ले आशिख[2] उचरति 'जीवहु जुग जुग पुत्र तुमार' ।
बसत्र अंन भूखन ते आदिक बखशहिं गुरु न लावैं बार ।। १७ ।।

तुरही ढोल नगारे बाजहिं, म्रिदुल म्रिदंग रबाब सतार ।
गावहिं शबद रबाबी रागनि सत्तिनाम को जस विसतारि ।
भयो कुलाहल कौतक देखहिं पावहिं नट बाजी हित धारि ।
अपर सिक्ख सेवक दे धन को लें मंगत जैकार उचार ।। १८ ।।

कहिंलग कहों महिद[3] उतसाहू सभिहिनि रिदे अनंद बिलंद ।
चिरजीवो आशिष मुख भाखति चिरंकाल के चाहति नंद ।
पूरन आस कहि गुरु नानक पिखहु द्रिगनि ते नित सुखकंद ।
इम कहि कहि जाचक घर गमने श्री अरजन को सुजस भनंद ।। १९ ।।

ग्राम वडाली घर घर मंगल करति हरख भरि गन नर नारि ।
जाम दिवस जबि चढ्यो अनंदति वुड्ढा साहिब संत उदार ।
ले गुरदास संग तबि आयहु दरशन कारन गुर दरबार ।
उतसव अधिक कुलाहल होवति लघु दुंदभि की धुनि सुनि चारु ।। २० ।।

पुत्र जनम गुर घर महिं होयहु सुनति अनंदति दरशन कीनि ।
हाथबंद पद बंदन करि कै बहुर वधाई दई प्रबीन ।
चिरंजीव थीवहु[4] कुल भूखन, सुजस अदूखन[5], बल महिं पीन ।
राज साज ऐश्वरज समाजू जोग भोग देइन सुख लीनि ।। २१ ।।

श्री अरजन ब्रिध को बड आदर म्रिदुल बाक कहि कीनि महांन ।
श्री नानक के सेवक तुम हो. हरख शोक महिं त्रिती समान ।
भसम बिखै पावक जिम छप रहि[6], सकल कला जुति पूरन ग्यानि ।
बचन अमिट, दुख कटहि बिकट जो धंन धंन तुम बड़े सुजान ।। २२ ।।

गावरि बर प्रताप इह होवा, दीनसि दासी को सुखदान ।
जिस पर क्रिपा करहु हित ठानहु, तिसके चार पदारथ पान[7] ।

1. प्रशस्ति-गायक । 2. आशीष, आशीर्वाद । 3. महत्, अत्यधिक । 4. हो । 5. अदूषित । 6. जैसे राख के नीचे आग छिपी रहती है । 7. हाथ ।

तप महि प्रीति तपहु तप दीरघ, गुर सिख्यन महिं मुक्खि महान[1]।
तुमरी महिमा कौन सकहि कहि संत रूप परमेस्वर मान ।। २३ ।।
सुनि गुरदास गुरु के बाकनि सनमानति बोल्यो करबंद ।
सत्य कहति सरबग्य प्रभू तुम पूरन सभि गुन ग्यान बिलंद ।
पंच गुरनि के दरशन परसे सेवा कीनसि लीनि अनद ।
सरब प्रसंन भए हैं इन पर अपर न जनीअति इनहु मनिंद' ।। २४ ।।
इम ब्रिध के गुन ब्रिद्ध भने तबि रहति भए श्री सतिगुर पास ।
रामदास पुरि महि सुधि पहुंची गुर अरजन के पुत्र प्रकाश ।
सुंदर बसत्र बिभूखन पहिरे नर नारिनि तजि अपन अवास ।
भेट जथोचित ले सभि गमने चित सचौंप[2] उर धरे हुलास ।। २५ ।।
ग्राम वडाली धाम गुरु के आनि प्रवेशे उतसव होति ।
भनति बधाइ, अरप उपाइन, पाइन परहिं अनंद उदोति ।
'अधिक जतन ते नंदन उपज्यो, चिर जीवी हुइ श्री गुर जोति ।
चाहति सुत चित चिंत उदधिवत असगंगा तिसके इह पोत'[3] ।। २६ ।।
रामदास पुरि की सभि नारी मिलि बालक अवलोकनि चाहि ।
तिस घर के दर पर ठांढी नमो कीनि उर बहु उतसाहि ।
साहिबजादे को शुभ दरशन दिखरावहु कहिं प्रेम उमाहि ।
धाइ लयो सिस दोनहु कर पर[4] देखि देखि करि बलि बलि जाहिं ।। २७ ।।
सभि नारिनि सो गंग उचारति हे प्रियसखी सुनहु मनलाइ ।
बुड्ढे साहिब दे हम को बर कर्यो निहाल भयो सुखदाइ ।
कुलभूखन सभि घर को दीपक सुंदर सुत ऐसो अबि पाइ ।
हे सजनी ! इस रजनी ऊपर उमग उमग मन बलि बलि जाइ ।। २८ ।।
करि दरशन सुंदर सिस केरा अधिक सराहति रूप बिसाल ।
ब्रिध के बर ते ब्रिद्ध होइ बय[5] आशिख देति प्रेम के नाल ।
गुरु देग को भोजन अचि[6] सभि रामदास पुरि के मग चालि ।
सुजस परसपर उचरनि हित धरि पहुँचे सदन नारि नर जाल ।। २९ ।।
पुन स्री गुर संग बुड्ढा बोल्यो बालक दरशन दिहु दिखराइ ।
महिद लालसा मन महिं मेरे, मात गरभ ते भा चित चाइ ।

1. गुरु-सिक्खों (शिष्यों) में समादृत । 2. चाव-भरे । 3. जिसके चित्त में पुत्र-प्राप्ति की चाह सागर के समान थी, उस गंगा (माता) को जहाज़ समान (पुत्र) मिला; अर्थात् चिन्ता दूर हुई । 4. दोनों हाथों पर लेकर । 5. बुड्ढे के वर से पैदा होने वाले पुत्र की आयु भी दीर्घ होगी । 6. गुरु के लंगर से भोजन-प्रसाद पाकर ।

जिनके कारन भए शगुन शुभ पिखे अचानक मैं बिसमाइ।
जिस हित जननी भई नंम्रिता अनिक जतन ते अबि सुत पाइ ॥ ३० ॥
श्री अरजन कहि धाइ हकारी लेहु ब्रिद्ध को संग सिधार।
अंतर सदन दिखावहु बारिक गुर नानक को नाम उचारि।
अपर न डर करीअहि, हरखावहु रच्छक जिसके श्री करतार।
जिम उर कांखहिं, मुख ते भाखहिं रहु इस आग्या के अनुसारि ॥ ३१ ॥
सुनि ब्रिध को ले संग सिधारी, अजर बिठायहु आसन डारि।
गंगा को गुर हुकम सुनायहु हरखति हुइ करि लिहु कर धारि।
बालक तिन को मैं नित दासी कहैं सु करहु बिहीन बिचार।
बुड्ढे साहिब को हम ते प्रिय[1] दरसहि निज करुना फल चारु[2] ॥ ३२ ॥
हाथन पर थिति करि सुंदर सिस घर के दर लौ ल्याई धाइ।
देखति उठ्यो त्याग ब्रिध आसन दीरघ दरशन दिखि हरखाइ।
लाल म्रिदुल पद मनहु कोकनद उरध उठावति जनु बिखराइ।
अंग बिलंद सकल शुभ लच्छन मच्छ अकार रेख कर पाइ[3] ॥ ३३ ॥
रेख छत्र की दाहन करमहिं चमरु रेख शोभति है बाम[4]।
नख गन रक्त सुमिलि सभि अगुरी, ब्रतलाकार बदन है बाम[5]।
रुचिर चिकर मेचक लघु चिववन[6], बड़े बिलोचन, बरनी बाम[7]।
बालक बपू बिराजति श्री प्रभु बरनति बानी, ब्रह्मा, बाम[8] ॥ ३४ ॥

दोहरा

बंदन करि दरसे गुरु, ब्रिध के बध्यो अनंद।
सभिनि सुनावति नाम कहि शुभ श्री हरिगोबिंद ॥ ३५ ॥
गुर अरजन ढिग आइकै आइसु ले हरखाइ।
निज थल गमन्यो बीड़ को सत्यनाम लिवलाइ ॥ ३६ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे श्री हरि गोबिंद जनम' प्रसंग बरननं नाम पंचमो अंशु ॥ ५ ॥

---

1. बुड्ढे को तो, यह हमसे भी प्रिय है। 2. अपनी ही कृपा का सुन्दर फल। 3. हाथ और पैर में मछली के आकार की शुभ लक्षणी रेखाएँ हैं। 4. बाएं हाथ में चँवर रेखा सुशोभित है। 5. सुन्दर। 6. सुन्दर चिकने छोटे घुंघराले बाल। 7. विषम बरौनियाँ। 8. सरस्वती।

अंशु ६

श्री हरिगोबिंद जनम उतसव प्रसंग

दोहरा

निकट निकट जे ग्राम हैं सभिनि सुनि सुधि कान ।
मंगत गन[1] सगत तबहि देति बधाई आनि ।। १ ।।

सवैया छंद

नाचहिं हीज[2] गाइ सुख राचहिं, जाचहिं धन, माचहिं निज खेल[3] ।
ढोलक, टलका[4] घुंघरू, ताली ताल मिलाइ, भवाली मेलि[5] ।
हाथनि भाव उसारति शारति[6] वारति वथु[7], डारति वहु वेल[8] ।
बैठति कबहुं अमैठति अंगन, भौह अमैठति[9], पैठति पेल[10] ।। २ ।।
होति प्रसंन हेरि गुर अरजन मन वांछति धन पाइ सु जाइं ।
इत्यादिक उतसव अति बरधति सेवक सिक्ख रहे हरखाइ ।
जिति किति पूरन मोद महां चित गाइ शवद पद गुरु मनाइ ।
वहु नर नारि शिंगार धारि करि मिले वडाली महिं समुदाइ ।। ३ ।।
ग्राम अलप उतसव अति बरध्यो चहूं कोद बहु मोद बिथार ।
ग्राम नगर महिं सुनि सिख सेवक मिलमिलि करहिं मंगलाचार ।
प्रिथीए की दासी सुनि धाई कीनसि करमो निकट उचार ।
'गुर अरजन के जनम्यो नंदन जहिं कहिं होइ रह्यो जैंकार' ।। ४ ।।
गुर के ओक बिहीन रोक के कीन बिलोकनि सो कहिं बैन[11] ।
मंदर के अंदर सिस[12] सुंदर देखति रही न त्रिपते नैन ।
अधिक सराहजि रिदा उमाहति चाहति चित हित ते बिछरै न ।
होति अनंद बिलंद वडाली देनि लेनि बहु ह्वै तिन ऐन ।। ५ ।।

---

1. भिखारी । 2. हीजड़े । 3. अपने खेल दिखाते हैं । 4. वंटियाँ । 5. घूम-घूम कर फेरियाँ लेते हुए । 6. हाथों द्वारा भावों को प्रकट करने के इशारे करते हैं । 7. धन न्यौछावर करते हैं । 8. 'वेल' अर्थात् शुभ-कामना युक्त गीत गाते हैं । 9. भौंहें चढ़ाते हैं । 10. धकेल कर । 11. गुरु-घर में (जिन्होंने) स्वतन्त्रतापूर्वक उसे देखा है, वे कहते हैं । 12. शिशु ।

बहु संगति उतसाहति गमनति सदन गुरु अरजन के जाइ।
दिन प्रति अधिक प्रताप वधति तिन अनगन धन जस को उपजाइ।
निकसे रामदास पुरि जबि ते भए न घट, ऐश्वरज बधाइ।
तुमरे नर कुछ थोरे आवहिं तहां उपाइन बहुती आइ ॥ ६ ॥
दलक्यो रिद[1] दासी ते सुनि करि मनहुं सरप ने डसी दुखंति।
पीरी परी धीर उर हरिकरि हुइ भैभीत-शरीक बधंति[2]।
बह्यो जाति चित चिंता सलिता खान पान कुछ तनक करंति।
दुरबलता अंगनि भई सगरे उशन सास बहु बार भरंति ॥ ७ ॥
भई राति पति आइ समीपी, मन संकट को भनति कराल।
हे गुर सुत ! तुम बाक बखान्यो—श्री अरजन के होइ न बाल।
अबि जनम्यो सुंदर सम चंदहि सगरी करहिं सराहनि बाल।
अधिक उपाइन चढ़हि दरब बहु तिन दे संगति कए निहाल ॥ ८ ॥
अनिक रीति के उतसव होवति बजहि बधाइ अनंद बिसाल।
जहिं कहिं सुजस बिथार्यो अपनो जनम लाभ लीनसि इस काल।
बस्यो ग्राम सो, तुम पित के पुरि तऊ न समता भी तिस नाल[3]।
बचन कूर[4] पुन भए तुमारे मैं झुरति हेरति अस हाल ॥ ९ ॥
प्रिथीए भन्यो जथा सुत लीनसि गई ब्रिध ढिग नगन सु पाइ।
देखि सेव तिसने बर दीनसि यांते पुत्र लियो हरखाइ।
मोहि बाक नहिं झूठ बिचारहु अपर जतन ते क्योहुं त पाइ।
श्री नानक सेवक ने दीनहुं जिसको कोई न सकहि मिटाइ ॥ १० ॥
बडे पुरख निज सेवा हेरहिं बसतु अदेय जु देति क्रिपाल।
जग गुर नुखा[5] पगनि ते गमनी बिन पनही[6], सिर भार उठालि।
सकल टहिल अपने कर कीनसि श्रमति भई हुइ खेद बिसाल।
इस उपाइ ते नंदन प्रापति नांहि त मम बच सहै कराल ॥ ११ ॥
भयो पुत्र तो क्या अबि होयहु रिदे हमारे सल्ल्य[7] समान।
नहीं उखारहिं जावत इसको तावत उपजति करक[8] महान।
नींद निसा नहिं भोजन दिन महिं चिंता बधहि नई नित आनि।
जतन बनहि जिम, चितवति रहु तिम कितिक दिवस महिं करहिं सु हान[9] ॥ १२ ॥
ज्यों क्यों गुरता निज घर राखहिं इस हित ठानहिं अनिक उपाइ।
जबि लौ मात गोद महिं बालक तबि लौ त्रिया जाइ को घाइ।

---

1. हृदय फट गया। 2. सम्बन्धियों को बढ़ते देख भयभीत हुई। 3. वह ग्राम में बसा है (गुरु अर्जुन) और तुम पिता की नगरी में हो, फिर भी उसके साथ कोई समता नहीं। 4. मिथ्या। 5. पत्नी। 6. जूता। 7. काँटा। 8. चुभन। 9. नाश।

कुछ चतुराई सो करि पहुंचहि करहि सु धातु घात को पाइ[1]।
अस इसत्री खोजति नित रहीअहि, देहु दरब तिस लेहुं लुभाइ ॥ १३ ॥
निज पुरि महिं हुइ सो तहिं पहुंचहि मिसि कुछु करहि रहहि तिनि धाम।
कै तिसि ग्राम होहि बुलवावहु करहु लुभावनि दै करि दाम।
कै दासी तिसि रहे समीपी सो सुखेन ही करि है काम।
खोजति रहहु आज ते तैसी बालक हनहि मिलहि अस बाम ॥ १४ ॥
इम मसलत[2] करि हरखी करमो करम क्रूर महिं दुरमत धारि।
अच्यो असन[3], बिसरामे निस महिंचित महिं चितवति अनिक प्रकार।
जहिं कहिं बुद्धि कीन बिसतारनि, खोजति मन करि तैसी नारि।
भई प्रभात चिंत गलतानी प्रिय दासी को निकटि हकार[4] ॥ १५ ॥
मन की ब्रिथा[5] उचारनि कीनसि पुरि महिं तै त्रिय ऐसी आनि।
ले करि दरब कामु इम ठानहिं श्री अरजन को नदन हानि।
तिसकी नित गुजरान करावहिं असन बसन दें सभि सुखदान।
हित करि नित खोजति रहु चित करि इह मेरो लखि काज महान ॥ १६ ॥
इम दासी करि गोप बात को सनैसनै[6] बूझति बहुनारि।
इति श्री अरजन अति उतसाहति मंगति के दो दरब अपार।
सुनि सुनि दूरि दूरि ते आवहिं ले करि गमनहिं सुजस उचार।
बडे भाग जुत सुत शुभ जनम्यो जहिं कहिं जिसते हुइ जैकार ॥ १७ ॥
अधिक प्रसंन होति सुत हेरति बलिहारी हुइ करति दुलार।
सूंघति मसतक[7] परम प्रेम ते ब्रिध को लखहि महां उपकार।
कीनि छठी को उतसव[8] भारी सभि को दीनि कराह अहार[9]।
बाजे दर पर बाजति हैं बहू सिख संगति सुख करहिं उदार ॥ १८ ॥
दस दिन बीते पुन उतसव भा मंगल करहिं अनेक प्रकार।
कुल की सगल रीति शुभ कीनसि जथा ब्रिधन के अगीकार[10]।
लघु दुंदभि की होति मधुर धुनि सुनि श्रोननि ते अनंद उदार।
बजहिं नफीरनि[11], गाइं सबद बिच, खरे लोक उचरैं जैकार ॥ १९ ॥
आदि बिलावल सुंदर रागनि गाइं रबाबी प्रेम लगाइ।
सुनि सुनि सिख सेवक के हिरदे द्रवहिं रीझ ही मोद बढाइ।
बखशहिं बसत्र बिभूखन बहु बिधि बिरमत बैठहि उठ न सकाइं।
'धंन धंन गुरु धंन जनम सिस जिसते दस दिश जस पसराइ ॥ २० ॥

1. घात लगाकर जो चोट कर सके। 2. परामर्शोपरांत निर्णय। 3. भोजन ग्रहण किया। 4. बुलाकर। 5. व्यथा। 6. शनैः शनैः। 7. सिर सूँघना अर्थात् प्यार देना। 8. छठवें दिन का उत्सव। 9. हलवे का भोजन। 10. जैसी बुज़ुर्गों (पूर्वजों) की मर्यादा थी। 11. शहनाई।

बधति सरीर दूज ते जस ससि तिम तिम सुंदरता अधिकाइ।
एक मास बीत्यो जबि ऐसे करति दुलार मात बल जाइ।
रात दिवस सुत को मुख देखहि नहिं लोचन क्यों हूं त्रिपताइ।
बरबस निंद्रा अधिक वधहि जबि सुपतहि, छिप्र जाग को पाइ॥ २१॥
जनु पंगन मन मनि सो लाग्यो[1] अहनिस राखन मंहि हितकार।
निंद्रा ते जबि उघरहिं लोचन तनुज बदन पर द्रिषटि पसार।
पालति, ललित, घालति घाले, डालति नयन श्यामता चारु।
झगली[2] झीन महीन सूत की बरन बरन की पाइ सुधारि॥ २२॥
कंचन के कंकन करवाइस जुग जुग हीरे जरे जराइ।
छुद्र घंटका बाजनवारी कारीगर ने घरी सुहाइ।
पावन पदपंकज महिं नूपर रुणकति रुचिर जि उरध उचाइ[3]।
छाप छला इनि गर के भूखन शोभति सभि ही शुभ पहिराइ॥ २३॥
श्याम बिंदु सुंदर बिच भौहन श्याम केस ऐसे छबि पाइ।
अलको बालक अल गन तजि करि धस्यो पंक अंम्रित के आइ[4]।
डीठ न लगहि डरति उर जननी वारति राई लीन[5] मंगाइ।
तिनका तोरि तोरि करि गेरति रच्छक श्री नानक ले नाइ॥ २४॥
जेवर जरे जवाहर जाहर जेब अजाइब जबर जरंति।
सुवरन को सुवरन तन दुति मिलि समता ते भेव न लखियंति[6]।
करकस होति सपरस जानीयत कै हीरन की दमक दिखंति।
तिन की उपमा कहौं कौन की मन भ्रम हार्यो लघू लगंत॥ २५॥

दोहरा

इस प्रकार ब्रिद्धति गुरु सुंदर सरब सरीर।
अंग बिलंद बिलोकीयति हरगुबिंद मतिधीर॥ २६॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रथे त्रितिय रासे 'श्री हरिगोबिंद जनम उतसव' बरननं नाम खष्टमो अंशु॥ ६॥

---

1. यथा सर्प का मन मणि में लीन होता है। 2. कुर्ता। 3. जब (वे) पावन चरण-कमल को ऊँचा उठाते हैं, तब घुंघरु बजते हैं। 4. काली भौंहों तथा काले केशों के बीच माथे पर काली बेंदी ऐसी प्रतीत होती है, जैसे कोई भ्रमर-शावक भ्रमरावली से भटक कर अमृत-पंक में आ फँसा हो। 5. राई-नमक उस पर स्पर्श कर आग में डालती है — बला टालना। 6. स्वर्णिम शरीर में स्वर्णाभूषणों की शोभा अभेद के कारण दीख ही नहीं पड़ती।

अंशु ७

धाइ मारन प्रसंग

दोहरा

प्रिथीए की दासी फिरी खोजति दुरमति नारि ।
इक ने कहि धीरज दई 'तोहि करौं मैं कार' ।। १ ।।

सवैया छन्द

रामदास पुरि बसहि कुचलणी[1] धाइन की क्रित ते गुज़रान[2] ।
दासी मसलत अघ की करिकै करमो निकट सु मेली आनि ।
सादर सदन बिठाइ समीपी पूरब भाख्यो कषट महान ।
'अनुज लीनि गुरता बिप्रीती जेठो बैठो रह्यो सुजान ।। २ ।।
बहु उपचारन ते निपज्यो सुत तिनहुं कीनि उतसव हरखाइ ।
कहै कि-गादी को इह मालक पाछे गुरता ले शुभ पाइ ।
पूरब आस हुती हमरे मन—श्री अरजन जबि तन बिनसाइ ।
संतति नहीं, बनहिं हम ही गुर, चारहुं दिश के पूज कहाइं ।। ३ ।।
जबि को नंदन तिन के जनम्यो तबि ते हम हुइ गए निरास ।
अबि उपाइ अस करि चित चितवनि जिस ते बालक होइ बिनास ।
पुन तिन के जनमे न आतमज हमरे काज होइं सभि रास ।
दरब आदि सुंदर सभि वसतू चहुं दिश ते चलि आइ अवास ।। ४ ।।
तबि तेरी बहु करहिं जीवका भोजन बसन सकल परवार ।
निज घर ते हम देहिं तोहि कहु अरु तेरो जानहिं उपकार ।
मिहरवान के पिता पास ते आदर मैं करिवाउं उदार ।
इह कारज निज चातुरता ते करहिं अबहि उपजहि सुख सार ।। ५ ।।
इक शत लेहु रजतपन[3] अबिहूं, करहु काज को बिलम बिसारि ।
बालक म्रितु हमरो हित लखि चित, पुन नहिं कमी, भरहिं भंडार ।
इम कहि बसत्र आपनो ले करि दीनसि तिस के ऊपर डार ।
अति सनेह की बात बखानति कहि कहि कबहूं भरि द्रिग बारि ।। ६ ।।

---

1. दुराचारिनी । 2. धाय का धंधा करती थी । 3. रुपए (चाँदी के) ।

धाइ क्रूर करमा अति पापनि सुनि करि हरखी धीरज दीनि ।
दुखी न होहु करौं मैं तौ हित, रचौं कपट, को लेय न चीन[1] ।
तुमरे सुख ते है सुख मो कउ खान पान की सभि सुधि लीनि ।
सो उठि गए कहां तिन साथहि[2], लेनि देनि कुछ नांहि न कीन्हि ।। ७ ।।
चित बांछति इह कारज मोकउ करिहौ मैं अब्रि बिलम बिसारि ।
चिंता रंचक हूं नहिं कीजहि निशचै लखहु सुधारी कार ।
मेरो द्रोह प्रथम ही तिन सों अपर धाइ को लीनि हकार ।
नहीं अवाहन मो को कीनसि नहिं कुछ दीनसि, बहु बुरिआर ।। ८ ।।
लर्गाहि सूल मुझ तिन के मंगल जिस हति होइ महां सुख मोहि ।
प्रिथीए की बामा सभि सुनि कै कहै कि 'साध साध बहु तोहि ।
भयो भरोस लखी बुधि दीरघ, तुझ ही ते कारज सिध होहि ।
इस प्रकार निशचै करि दोनहु दुरबुद्धागन पाप अरोहि[3] ।। ९ ।।
ले कुछ दरब सदन महिं आई रंगदार अंबर तन धारि ।
रुचिर बिभूखन पहिरे रुचि करि मुख पखार द्रिग अंजन डारि ।
ज़हिर अजाहर[4] करले रगर्यो निज असतन[5] जुग लेप सुधारि ।
शुषक कीनि पुन अंगीआ पहिरी पंथ वडाली के पग धारि ।। १० ।।
दरब लोभ ते चौंप चोगनी-हति सिस को मै लेउं इनाम ।
सकल आरबल की गुज़ारन जु हुइ है मोहि करे इस काम ।
इत गंगा ने करि चालीसा बरतहि बंस रीति अभिराम[6] ।
नितप्रति उतसव नए नए बहु प्रिय सुत जबि को जनम्यो धाम ।। ११ ।।
भयो अनंद बिलंद नंद ते दरब ब्रिंद ते लेति असीस ।
बहु ग्रामनि की बाम आइ करि सिसु अभिराम धाम महिं दीस ।
सादर तिन को बांछति बखशति डरति मात नहिं कहिं दुरशीस ।
श्रेय सहत जिम चहति कहति बच लहति महत मुद करि[7] बखशीश ।। १२ ।।
दुराचारनी मंगल समये आइ प्रवेशी गुरू निकेत ।
अधिक भीर नारिनि की जहिं कहिं जथा जोग आदर कहु देति ।
कितिक बाल को दरशन करती, कितिक सराहति प्रीत समेति ।
केतिक लेति उछंग दुलारति[8], केतिक बिगसति दंतनि सेत[9] ।। १३ ।।

---

1. ऐसा कपट रचूँगी कि कोई पहचान नहीं पाएगा । 2. वे तो (गुरु अर्जुन) चले गए हैं, उनके साथ हमारा क्या मेल-जोल है । 3. दोनों दुर्बुद्धि वाली स्त्रिएँ, जिनके सिर पाप चढ़ा हुआ था । 4. न दिखाई पड़ने वाला । 5. स्तनों पर । 6. इधर गंगा (माता) ने सवा मास का उत्सव वंश-परम्परानुसार सम्पन्न किया । 7. प्रसन्न हो कर । 8. गोद में दुलराती हैं । 9. कई (खिल खिलकर हँसती हैं.) सफेद दाँत खोलती हैं ।

दोहरा

बसत्र बिभूखन देखि शुभ आदर साथ बिठाइ ।
इसत्रिनि के समुदाइ मैं पुत्रनि बात चलाइ ॥ १४ ॥

सवैया छन्द

सभिनि बिखै गंगा म्रिदु बच कहि दो इक दिन ते अनमन नंद ।
असतन लेति न रुचि करि मुख महिं को दुख, सुधि नहिं मोहि बिलंद ।
जितिक बिद्ध उपचारनि भाखति गुरती[1] आदि देह सुखकंद ।
घाति पाइ करि दुषटा बोली क्रिशन पूतना केरि मनिंद ॥ १५ ॥
मोहि बिखैं गुन दियो प्रभूने बहुबालक ते मैं पतिआइ ।
पान करहि जो असतन मेरे तिस सिस के दुख निकटि न आइ ।
हरहि अरूच को ततछिन छुधतहि, आरबला[2] सु अधिक बिरधाइ ।
रहै निरोवा[3] सुख सो बय महि नहिं औषधि की चाहि रहाइ ॥ १६ ॥
रामदास पुरि बासकीनि मैं जबि के तुम आए इस थाइं ।
मम गुन सुनिकै प्रिथीए आनी, सुतवंती तिय सभि ढिग आइ ।
इक दुइ दिन असतन दे मेरो रुज[4] गवाइ गमनी समुदाइ ।
भागवान के मैं चलि जावौं निरभागन के को चलि जाइ ? ॥ १७ ॥
अधिक चाहि करि तुमरे आई पुरी तुहारी बसी जु आनि ।
परमेशुर ते मैं नित जाचौं—सुतवंती हुइं त्रिया महान—।
इस बिधि करि गुज़रान करौ सद दरब सहत पावों सनमान ।
जीवन जोग पुत्र इह तेरो मुझ कोछर[5] महिं दीजहि आनि ॥ १८ ॥
तिसते सुनि सभि त्रियनि सराही, बसन बिभूखन सुंदर हेरि ।
'बिन औषधि रुज की इह हरता धंन तोहि गुन लह्यो बडेर' ।
मरजी सभि नारिनि की लखि करि मात गंग बिसमाइ घनेर ।
दियो पुत्र तिस गोद प्रमोदति दुषट जीअ तिन को सम शेर ॥ १९ ॥
श्री गुरु हरिगोविंद चित जानी क्रूर जु करमा आवे नारि ।
दिन चारिक ते अनमन होए जिस ते मात चिंत ले धारि ।
धाइ उछंग दहिगी[6] रुचि करि—यांते पूरब बिधी सुधारि ।
दुषटन के नाशन को मम तन—सिस सरूप ते करी सु कारि ॥ २० ॥
धाइ उछंग गए हुइ चंचल, इत उत मुख करि अंग चलति ।
कछु रोदन करि बहुर टिके तहिं लोरी देति मधुर छलवंति ।
अंगीआ ते असतन करि बाहर एक हाथ सों समुख करंत ।
दूसर कर पर सिस को सिर धरि ऊपर डार्यो बसत्र दुरंत ॥ २१ ॥

---

1. घुट्टी । 2. आयु । 3. नीरोग । 4. रोग । 5. गोद । 6. धाय की गोद में देंगे ।

कबित्त

ततछिन अंतर बसन असतन देति, लेति न तनक, गहे होति इत ऊतना[1]।
गाढो[2] जबि कीनि तौ पयोधर को लीन मुख, हाथ को पसारि गही छोरी तव गूतना[3]।
दूजे हाथ साथ गह्यो दूजो कुच द्रिढ करि खोटी क्रित हेतु आई लागे लोभ भूतना।
जांको मन पूत ना[4] लख्यो गुरू सपूतना, जिसी के पीर पूतना[5], संघारी सम पूतना[6] ॥ २२ ॥
गाढे अंग पीर करि, गाढी उर पीर करि प्रान ते सरीर करि भिंन ऐंच लीनिओ[7]।
जैसे पोल तील ते किलाल को सु फूक नालि खैंच लेति[3] बालक सुभाइक ही कीनिओ।
हाइ हाइ बोलती बिहाल ह्वै बिसाल 'बाल! छोरो अबि मोहि को, प्रताप चित चीनिओ।
लोचन मैं नीर भरि, धीर हरि चीर तजि, परी सभि तीर धर[9], प्रान करि हीनिओ ॥२३॥
कूकती पुकार बिसंभार ह्वै पसार अंग, परी म्रितु भई, द्रिग निकरे परति जनु।
मुख ते झगूर[10] जाति, पीरी पर गई गात, भयो उतपात, हेरि नारी बिसमाई मन।
कहां होइ गयो बैठी सभिनि मैं लियो सिसु त्रास उपजयो, तजी दूर जहां परयो तन।
गंगा भयभीत भई पुत्र को गहनधाई हाथनि उचावै प्रिया क्रिपन को मानो धन ॥ २४ ॥
हाथ गही बेनी, बल साथ नहिं छोरें तांहि मात छुटकावैं कहाँ एतने सु होइ जोर।
दासी को पुकारे रिस भरी 'क्यों न आवै पासि'? कंपति सरीर त्रासधारे उतपात घोर।
मिली गन आइ, नीठ नीठ करि छोरी तबि, कंठ सों लगायो नंद परयो है बिलंद शोर।
परी जिस ठौर अवलोकति न तांही ओर[11], डरी उर होर धाई थान निज छोरि छोरि ॥२५॥
मरी दुराचारनी ते कुछक प्रकाश भयो बीजरी की रीति थरकाई है अजर बीच।
सभि के बिलोचन गए हैं मुंद तेही छिन, बोलति न बैन कोइ हेरिकै करम नीच।
हाथ जुग पाव को पसार कै परी है घर दास गन दासी मिलि देखी सु ग्रसी है मीच[12]।
जीव गयो ऊपर अपर देहि धार करि, मुरछति कोई लखि ताके मुख बार सींच[13] ॥ २६ ॥

दोहरा

इस प्रकार जबि मरि गई अपर देहि धरि सोइ।
छपि आकाश मैं भेद निज भनति सुनति सभि कोइ ॥ २७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'धाइ मारन' प्रसंग बरननं नाम सपतमो अंशु ॥ ७ ॥

---

1. इत-उत, इधर-उधर। 2. जोर से दबाया। 3. तव हाथ पसार कर उस की लटकती चोटी पकड़ ली। 4. जिसका मन पवित्र नहीं। 5. जिसे कभी पुत्र की पीड़ा का सामना नहीं हुआ। 6. उसे पूतना राक्षसी की भाँति मार डाला। 7. अन्तर में जोरदार पीड़ा उत्पन्न कर प्राण शरीर से अलग खींच लिए। 8. जैसे बीच से खाली नलिका से फूंक मार कर जल खींच लेते हैं। 9. सबके निकट धरती पर गिर पड़ी। 10. फेण। 11. (वहाँ एकत्रित स्त्रियाँ) उस स्थान की ओर देखती ही नहीं, जहाँ (धाय) पड़ी थी। 12. मृत्यु। 13. कोई उसे मूर्छित समझ कर उसके मुँह में पानी डालते हैं।

अंशु ८

'बालक लीला प्रसंग'

दोहरा

दूरी गगन महिं बचन कहि डरहु न मो ते कोइ ।
सभि प्रसंग सुनि लीजिए, भयो कहौं मैं सोइ ।। १ ।।

सवैया छन्द

पूरब जनम मोहि गंधरबी, सकल शकति जुति मैं मन मान ।
गावन विद्या बिखै निपुन बहु सुंदर अति सरूप दुतिवान ।
सुरग सदा बिचरति सुख पावति इक दिन सुरनि सभा के थान ।
करति गान बहु तान मिलावति सुनति कान सो हुइ बिरमान[1] ।। २ ।।
तबि सुरगुरु[2] आयो किस कारन हेरति उठे सभा सुर ब्रिंद ।
सादर नमो कीनि बड जान्यो ब्रह्म विद्या महिं निपुन बिलंद ।
बैठ्यो आनि सभिनि कहु देखति राग रंग महिं भए अनंद ।
मम दिशि लखि करि जानि मान बड-इह दुषटाचारणि मतिमंद ।। ३ ।।
गावनि अरु सरूप बड मेरो इहु गुन जानि धरति हंकार ।
सुरनि सभा के उचित न दुषटा नहिं मन जान्यो मोहि उदार ।
अपर सरब ही मानहिं दीरघ इंद्र आदि जेतिक बलिभार[3] ।
दंड जोग है देउं स्राप इस गरब बिनाशहि इसी प्रकार ।। ४ ।।
इम बिचार करि स्राप दीनि तबि म्रितु मंडल महिं जनम सुधारि ।
जाइ करम धाइन के करि कै, हेत जीविका करहु अहार ।
पाप कमावहु जीवनि दुख करि[4], धरहु देहि जे महिद गवार ।
मद्द्र देश महिं बिचरहु जित कित भोगहु दुख ह्वै करि बुरिआर ।। ५ ।।
मैं कर जोरे सुर गुरु आगे—कबि मेरो पुन होइ उधार ।
गरब कीनि तिसको फल पायो तुम क्रिपाल हो सदा उदार ।
इसत्री मति पीछे सुधि आवति निज सरूप गुन के हंकार ।
साधू सदा छिमां को धारति अपकारी पर भी उपकार ।। ६ ।।

---

1 मोहित हो रहे थे । 2. वृहस्पति, देवताओं के गुरु । 3. इन्द्रादि जितने बली हैं । 4. जीवों को दुःख पहुँचा कर ।

सुर गुरु भन्यो होहिं गुरु अरजन श्री नानक के बैठहिं थान ।
तिन को पुत्र जनम जबि धारहि तिसके साथ मेल निज ठाठ ।
सो तेरो तबि करहिं उधारनि निज बल ते हानहिंगो[1] प्रान ।
बहुर सरीर परापति हुइगो, गंधरबी को रूप महान ।। ७ ।।

भयो पतन सुर गुरु के वच सुनि, मा अग्यान जनम को पाइ ।
चिरंकाल की बिचरति इत उत रामदास पुरि वासी आइ ।
प्रिथीए की दासी मुझ मिलि करि करमो ढिग पहुंचाई जाइ ।
तिसने दीनि रजतपण इक शत, इम सिख्या दे इहां पठाइ ।। ८ ।।

श्री अरजन नंदन को हति करि, इह मो पर कीजहि उपकार ।
लोभ लहिर ने प्रेरन कीनसि मैं आई सु मनोरथ धारि ।
कपट बेस धरि बालक नाशनि, ज़हिर सथन मैं लेप निकार[2] ।
प्रभु अवतार पुत्र है तेरो, पकरि पयोधर को मुझ मारि ।। ९ ।।

अबि मैं रूप गंधरबी पायहु जाति सुरगुको, नमो हमार ।
शत्रु तुमारो प्रिथीआ जानहुं करहि बैर सगरो परवार ।
रहहु सुचेत न करहु भरोसा ज्यों क्यों ठानहिंगो अपकार ।
इम कहि गमन कीनि निज घरको, अति प्रसंन ह्वै रिदे मझार ।। १० ।।

अजर बिखै त्रिय ब्रिंद मिली तबि, सुनि सभि भेव रही बिसमाइ ।
'धिक धिक करमो कीन कुकरमो, हते बाल क्या कर मो आइ[3] ।
परालबध[4] पर निशचै नाहिन पाप मती उर महिं प्रगटाइ ।
परमेशुर जिन केर सहाई बंक रोमको करि न सकाइ ।। ११ ।।

लग्यो कलंक कुली अकलंक जु मतसर पावक जरति महान[5] ।
बड़े भाग इनके सभि रीति पिता प्रेम ते गुरता दान ।
उत्तम करति हैं निस दिन सत्तिनाम को सिमरनि ठानि ।
चहुं कोद ते[6] सम पयोद के पाइ प्रमोद देति धन आनि ।। १२ ।।

पावन पद पंकज को पूजति अनगन संगति भेट चढ़ाइ ।
तऊ न मान करहिं इहु दंपति सभि को सुख दे सरल सभाइ ।
प्रभु अवतार पुत्र इन केरा, महिमा सभि महिं कही सुनाइ ।
मूरख बुरा कौन करि सकही जथा चंद को चोर निकाइ[6] ।। १३ ।।

---

1. नाश करेंगे । 2. स्तनों पर विष का लेप लगाकर । 3. करमो (पृथीआ की पत्नी) ने बड़ा कुकर्म किया, भला बालक को मार कर उसके हाथ क्या आयेगा ? 4, प्रारब्ध कर्म । 5. (पृथीचंद) अकलंक कुल का कलंक बन गया है और सदैव अहंकार की अग्नि में जलता रहता है । 6. चारों ओर से । 7. समुदाय, सब ।

इत्यादिक प्रिथीए को निंदति श्री अरजन को सुजस भनंति।
सुत गर संग लगायहु गंगा नीर बिलोचन बूंद ढरंति।
चीत महां भयभीत भई पिखि क्यों सुत दीनि रिदे पछुतंति।
शत्रु शरीक बडे दुरचारी कीनि कपट को नहीं लखंति ॥ १४ ॥

कह्यो दास को 'पास पधारहु जग गुर को सुधि देहु सुनाइ।
श्री नानक ने पुत्र बचायहु, नांहि त हत्यो हुतो छल लाइ।
अंगण[1] म्रितक धाइ को देखहु सुधि सभि कही गगन महिं जाइ।
लीनि कलंक भ्रात इह तुमरे जो हम को नहिं देखि सकाइ ॥ १५ ॥

पुरी उजारे ग्राम बसे हम तऊ न बैर तजहि अघवंति[2]।
निज कुल को पन बालक बय को हतनि पाप को नहीं लखंति।
इक बुरिआई साथ प्रीति है, हम तिस को नहिं बुरा करंति।
जाहु छिप्प्र, घर आनहू हेरहिं अति उतपात अधिक दुखवंति' ॥ १६ ॥

सुनति दास दौर्यो गुर पासहि, बहिर बिराजति हैं जिस थान।
'क्रिपा निधान! कहाँ हो बैठे, कारज गिर्यो हुतो महान।
सतिगुर राख्यो बंस तुमारो', सकल प्रसंग सु कीनि बखान।
सुनति उठे गुर अरजन आए कुछ सिख सेवक संग सु आनि ॥ १७ ॥

परी अजर महिं[3] धाइ म्रितक ह्वै कहि गिरवाई वहिर उजार।
'श्री नानक रच्छक है हमरे घर बाहर संगै इक सार।
को बपुरा नर बुरा करहि जो, जबि इक स्वामी राखनहार'।
उमग प्रेम ते सबद बनायहु सुंदर आसा राग मझार ॥ १८ ॥

श्री मुखवाक

आसा महला ५

गुर पूरे राखिया दे हाथ।
प्रगटु भइआ जन का परतापु ॥ १ ॥
गुरु गुरु जपी गुरु गुरु धिआई।
जीअ की अरदासि गुरु पहि पाई ॥ रहाउ ॥
सरनि परे साचे गुरदेव।
पूरन होई सेवक सेव ॥ २ ॥
जीउ पिंडु जोबनु राखे प्रान।
कहु नानक गुर कउ कुरबान ॥ ३ ॥ ८ ॥ १०२ ॥

1. आंगन में। 2. पापी। 3. आंगन में।

दोहरा

इम श्री नानक की महां कही वडाई चारु।
पठहि जु चितवहि चरित गुर त्रास न कित ते धारि।। १९ ।।

कबित्त

भयो अस कौतक बिसम रहे लोक सभि पुत्र को बिलोकि भए दंपति अनंदअति।
कीनसि कराहु बांट दीनसि उछाह करि, सगरे गुरनि को ले नाम धरि ध्यान चित।
रैन दिन रच्छक, द्रुजन गन भच्छक, बिसाल जस स्वच्छक, जे सेवक वछल[1] नित।
रिदे मैं अराधते, सकल सुख लाधते, अनेक बाधा बाधते[2] सदीव सतिनाम हित ।। २० ।।

सवैया

गंग अनंद सो नंदन को प्रतिपारति होइ सुचेत सदा।
मंदर अंदर सुंदर पालना लालति लाल झुलाइ तदा।
नारिनि ब्रिंद मैं ना कबि ल्यावति—देखति डीठ लगै न कदा।
टामन[3] को करि जाइ नहीं रखवार रहो गुर रूप सदा।। २१ ।।
तांते करे जल मज्जन को मुख चारु पखारति, लालति है।
पौंछति सूखम चीर गहे, पट सुंदर फेर उढालति है।
बाघ नखा मढि कंचन ते मखतूल गरे महि डालति है[4]।
यों दिन केतिक बीत गए सुत प्रेम करे प्रतिपालति है।। २२ ।।
श्री हरिगोबिंद सुंदर रूप अनुपम बैठने लागि तबै।
सोच बिमोचति लोचन ते अविलोकति तेज समेत जबै।
लेति उछंग पिता गुर पूरन संगति पंगति देखि सबै।
ज्यौं अजनंदन[5] कै रघुनंदन बालक बैस मंहि बैठि फबैं।। २३ ।।
अंगण मैं रिंगमाण भए[6], पुन देखि भले किलकावति है।
जे घर बीच गलीचन पै इत आवति फेरि सु जावति हैं।
बैठति हैं बिच संगति के गन दास तबै बतरावति हैं।
भावति हैं, मुसकावति हैं, चपलावति हैं, सू हसावति हैं।। २४ ।।
जुग दत सुमंति महां दुतिवंत हैं ओषट लाल बिसाल सुहाए।
मुकता बिब संपट बिद्‌द्रम के बिधि सुंदर ते जनु बीच टिकाए।
मुसकावति ते दिखरावति हैं जनु अंम्रित बीच भिगोइ बनाए।
कवि और बनाइ कहै उपमा जनु कीरति[7] के जुग बीज दिखाए।। २५ ।।

1. वत्सल। 2. वाधाओं को दूर करते। 3. टोना-जादू। 4. शेर के नाखून को स्वर्ण में मढ़ाकर तथा रेशमी धागे में पिरोकर गले में डाल रखा है (ताकि किसी की बुरी नज़र न लग जाये)। 5. अज के पुत्र, दशरथ। 6. आँगन में घुटनों के बल चलने लगे। 7. एक पौधा।

अंगण बीच फिरैं गुडली[1] बहु भांतिनि ते करि बालक लीला।
खैंचति पावन पावन पंकज नूपर को रुणकाइ छबीला।
द्वै करबंद करैं अभिबंदन दोख निकंदन रूप गहीला।
पाइं सु चारु पदारथ सेवक दें गुरदेव अतेव[2] सुशीला ॥ २६ ॥
मानुख रूप धरयो जग मैं जिन भूम को भार उतारन को।
आयुध धारि महां बल सों तुरकान के तेज निवारनि को।
सेवक संतन को सुख दे उर ग्यान की सीख सिखारनि को।
बालक बय अबि क्रीड़ति हैं, करि कूर[3] जरां सु उखारन को ॥ २७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'बालक लीला' प्रसंग वरननं नाम अषटमो अंशु ॥ ८ ॥

---

1. घुटनों के बल। 2. अतीव। 3. नष्ट करके।

अंशु ६

सरप को हतन प्रसंग

दोहरा

इस प्रकार श्री सतिगुरू संमत द्वै के होइ।
ग्राम वडाली क्रीड़ते पिख हरखति सभि कोइ ॥ १ ॥

सवैया

प्रिथीए पुन प्रेरनि कीनि हुतो इक द्योस बिखै इक आइ सपैला।
वड नाग तज्यो सभि ते दुर कै सु प्रवेश भयो घर अंतरि भैला[1]।
नहिं मात उछंग टिकैं हरि गोविंद रूप बिलंद अनंद दे छैला।
चित चाहति हैं तिस जीव[2] उधारनि, ह्वै गुडली मिस खेलति खेला ॥ २ ॥

श्याम भुजंग फिरै खुड[3] खोजति, पावति है न छपै जिस मांही।
मात की डीठ लगी कित और, सु दासनि कारज को बतराही।
जाइ के बेग समेत तबै गहि लीनसि हाथ बिखै तन तांही।
फुंकरतो डसिबे भजिबे हित जोर करयो पै छुट्यो कर नांही ॥ ३ ॥

सीस दबाइ कै फेस दियो[4] बहू दीरघ सो उलट्यो वलु खाए।
लांगुल[5] को पटकाइ मरयो तबि तां दिश मात ने नैन लगाए।
भै करि भीत भई ढिग धाइकै श्री हरिगोबिंद दीनि बगाए[6]।
दूर पर्यो म्रितु भोग[7] पसार कै, भूर भयंकर ह्वै सरलाए[8] ॥ ४ ॥

मात ने जाइ उछंग लीए, बिसमाइ रही सभि देखति कांयां।
डंग हत्यो नहिं होइ, पर्यो म्रितु, श्रीगुर नानक नंद बचाया।
अंगन ते म्रितका[9] पट पोंछति धीरज ते मन फैर टिकाया।
हौल[10] रह्यो उर रौर[11] पर्यो, पुन दौरति आवति दास निकाया ॥ ५ ॥

श्री गुर पै तब धाइ कह्यो 'इक नाग महां निकस्यो बलि भारी।
श्री हरि गोविंद हाथ गह्यो तजि प्रान पर्यो नहिं जाइ निहारी।

---

1. भयंकर। 2. यहाँ सर्प से अभिप्राय है। 3. बिल। 4. कुचल डाला। 5. दुम। 6. फेंक दिया। 7. फण। 8. सीधा होकर। 9. मिट्टी। 10. भय। 11. शोर।

नांहि छुयो बड आनंद भा, परमेशुर आप भयो रखवारी'।
देखनि को घर आवति भे सिख साथ कछू बिसमे नरनारी ॥ ६ ॥

दोहरा

श्री अरजन जी जबि गए म्रितक सरप भा जोइ[1]।
अपरदेहि सुंदर घरी करी दिखावनि सोइ ॥ ७ ॥

स्वैया

बूझनि कीनि तिसे 'कहू कौन तूं कैसे भुजंगम को पायो ?।
क्यों म्रितु भा, किम देहि लई अस, क्यों कहु कारन ह्यां चलि आयो ?।
हाथ को जोरि प्रसंग सुनायहु 'पूरब देह मुनी तप तायो।
हुयो हंकार उदार मुझे-नहिं मो सम बेद किनूं नर गायो ॥ ८ ॥
एक समैं बिचरंति हुतो रिखि नारद भो ढिग आइ गयो।
ग्यान प्रसंग भने बहुते, भगती भव तारक नाम लियो।
मैं प्रशनोतर भूर करे गरब्यो उर मैं नहिं मान कियो[2]।
धारि रिदै समता तिह सो बच क्रूर कहे तबि कोप भयो ॥ ९ ॥
क्यों तपतावति है तन मूरख बेद रहस्य नहीं मन जान्यो।
मोर अनादर को फल पावहू, तां छिन मैं इम स्राप बखान्यो।
तूं कुटलाई[3] करें अधिकै अरु मोहि जु बाक नहीं हित मान्यो।
याते भुजंग सरीर धरो करि कोटलता सभि सूधत हान्यो ॥ १० ॥
बेद पढ्यो तन पाप तप्यो इसको फल स्राप के अंत मो पावैं।
संकट के बसि जीवनि देखि, धरैं अवतार प्रभू घर जावैं[4]।
हाथ छुवै तिन को तन तेरे ही ता छिन मैं सुरलोक सिधावैं।
तौ लगि जून भुजंगम की दुखदाइक धारि धरा बिचरावैं ॥ ११ ॥
श्री गुर ! सो अबि आइ समों, गहि मोहि सपैले ने आनि कै छोरा।
प्रेरनि कीनि शरीक तुमारे नै लोभ दिखाइ कछु तिस थोरा।
खोजि रह्यो खुड पाई नहिं, गहि लीनि तबै बल ते सिर फ़ोरा।
जाउं अबै सुरलोक जहां, गुर पूरन ! हो अभिबंदन मोरा ॥ १२ ॥
ब्रिंद खरे नर नारि सबै सुनि सारो प्रसंग रिदै बिसमाए।
श्री गुर ने म्रितु पंनग को उचवाइके बाहर दीनि दबाए।

---

1. दिखाई पड़ा। 2. उनकी बात नहीं माना। 3. कुटिलता। 4. अवतार धारण कर जब परमातमा धरती पर जायेंगे।

कीन महां उतसाहन को धन दीनसि रंक मिले समुदाए।
और कराहु करैं वहुते गुरु नानक आदिके पैर मनाए[1] ॥ १३ ॥
जाति सभै सुधि लोक भनै, प्रिथीए सुनि कै रिस को उपजाई।
'मूरख लोग जि बात सुनावति, झूठ कहैं सभि गाथ बनाई।
मो उर को परतीति न आवति, हाथ मलैं बिधि लेति उपाई[2]।
उत्तमता निज नंदन की जग बीच बिथारति ही हरखाई ॥ १४ ॥
लोभ बध्यो मन मैं अधिकाइ पुजावन को इम बात बनावै।
दोहिं उपाइन को समुदाइ सु कीरति आपनी लोक सुनावै।
क्या उहु बालक जानति ना कुछ, एक ते एक वडाई बधावै।
ज्यों धंन आइ उपाइ बनावति यों छलि कै निज पाइ पुजावै ॥ १५ ॥
आपनी संगत ह्वै इकठी जबि, तौ प्रिथीआ सभि बीच सुनावै।
ए छल के करता पुजवावति मूरख लोकन को बिरमावै।
आप गुरू बनि बैठति बीचि, छलै धन को, बहु दंभ कमावै।
जो सिख मोहि, वहीं दरसो तिस यो करि निंद सभा मैं बतावै ॥ १६ ॥

सवैया

साचो बनैनिज संगति मै नित पाप कमावति कूर[3] भनंता।
निंदति है गुर पूरन को उर धारि छिमा जुऊ धीरज वंता।
हान रु[4] लाभ समान जिनो कहु, शोक नहीं कबि, ना हरखंता।
भोग मैं जोग अरोग करैं, जढ लोगन[5] पै उपकार करंता ॥ १७ ॥
श्री गुर बैठनि थान गए जबि गंग बिलोकति ह्वै बलिहारी।
नीर त सारो शरीर पखारति दासी जि तीर सों बात उचारी।
'देखहु री कस संकट भा सुत मेरो बच्यो गहि पंनग भारी।
मैं दिन रैन रखौं ढिग ऐन मैं, हेरति हौं निज नैन अगारी[6] ॥ १८ ॥
थोरे ई काल कर्यो इति लोचन तां फल हील पर्यो उरि मेरे'।
यौं कहि हाथ रुमाल धरे मुखचंद को पौंछति भी तिस वेरे।
सारो शरीर सुधारि भले नव चीर निकास कै ल्याई अछेरे।
नंदन को पहिराइ अनंदति सुंदर रूप मुकंद को हेरे ॥ १९ ॥

---

1. हलवे का प्रसाद किया तथा गुरु नानक आदि के चरणों का ध्यान किया। 2. (जादूगर की नाई) लोग हाथ मलकर बातें (चीज़ें) उपज लेते हैं। 3. झूठ। 4. और। 5. जड़ता-पूर्ण लोग। 6. आंखों के सम्मुख।

ब्रिंद नुछावर[1] कीनि तवै निज हाथ ते देति गरीबनि को।
अंम्रित ते मधुरी अधिकै अस लेति है पुंज असीसनि को।
बादित पौर बिखै बजवाइ, भनैं दुरब्राक शरीकनि को[2]।
होति महां उतसाह तहां प्रभु के गुन गावत गीतनि को॥ २०॥

भेद न जानति नंदन को जिन पंनग कालीको[3] मानु मथ्यो।
केसी कराल, बकासुर, कंस हते गन दैंत मुनीनि कथ्यो।
मल्लयु चंडूर हन्यो बल सों, मघनाथ को जांही ते तेज अथ्यो।
जाइ सुयंबर भूपति केगन बैल को एक ही बार नथ्यो[4]॥ २१॥

श्री हरिगोबिंद नंदन की महिमा कबि हूं चित जानति है।
श्री गुरु पूरन केर सपूत भयो अवतार ही मानति है।
हीन करे बिघनां सभि हूं शकती अतिवान—पछानति है।
पंनग भीखन मार दियो, हति धाइ, महांबल ठानति है॥ २२॥

मात करै निशचै असको जवि, श्री हरिगोबिंद जानि रिदे।
मोह उपावति हैं तिसके करिबालक रीति अनेक तदे।
होइ छुधातुर जाचति भोजन धूरि लगावति धाइ कदे।
गोद ते जाति प्रमोद भरे चहुं कोद फिरैं रुदयंत जिदे[5]॥ २३॥

बालक की सम चंचलता अवलोकति गंग सपूत ही जानति।
पालति है नित लालति है, हित घालति है मन को प्रिय मानति।
केतिक द्योस बितीत भए सुख साथ तवै पग मैं बल ठानति।
होति खरे गुन पुंज खरे[6] जिन दास तरे सतिनामु बखानति॥ २४॥

श्री चरणांबुज ते चलिवे पग नूपर भू पर दौर बजावैं।
कंचन की बर किंकनि है कटि हीरे जराउ जरे दमकावै।
पीत गरे झगुली बहु झीन महां दुति ते तन चारु दिपावै[7]।
हाथ मैं कंकन छाप छलायनि सीस बिभूखन शोभ बढ़ावैं॥ २५॥

बालक और मिले तिस ठौर मैं दौरति हैं अगुवा पिछवाई।
खेलति हैं बहु मेलति रौर गुरु हरिगोबिंद जी हरखाई।

---

1. बहुत-सा न्यौछावर किया। 2. घर-द्वार पर बाजे बजवाए और सम्बन्धियों (दुराचारी) को दुर्वाक् (दुर्वचन) कहे। 3. कालीय नाग। 3. इस पद में कवि ने गुरु हरिगोविंद की कीर्ति की पूर्व-कथा में श्रीकृष्ण के पराक्रमों का अभेद बताया है। 5. हठ पूर्वक रोते हैं। 6. सम उत्तम गुणों के स्वामी खड़े होने लगे हैं। 7. सुन्दर शरीर दीप्त होता है।

होइ इकैंठति बैठति हैं कबि अंग अमैठति देति पलाई।
सुंदर मंदर अंदर ह्वै कबि बाहर, रोकति हैं भज जाईं।। २६ ।।

ग्राम वडाली के बालक जे बड भाज्ञ भये इम खेलति हैं।
श्री हरिगोविंद संग मिले बहु स्वाद के भोजन मेलति हैं।
द्योस सबै नहिं पास तजैं मिलि आपस मैं बल रेलति हैं[1]।
आप दिखाइ करे कुशती गहि हाथनि साथ धकेलति हैं।। २७ ।।

दोहरा

इस प्रकार क्रीड़ति प्रभु खेलति खेल बिसाल।
मिलहिं जाल बालक ललित, निस महिं निज निज साल[2]।। २८ ।।

इति स्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सरप को हतन' प्रसंग बरननं नाम नौमो अंशु ।। ६ ।।

1. धकेलते हैं। 2. रात्रि में अपने-अपने घर (चले जाते हैं)

अंशु १०

देवन को प्रसंग

दोहरा

श्री अरजन हुइ जामनी आवहिं अजर मझार।
बैठि प्रयंक बिराजते सभि सुख के दातार ॥ १ ॥

सवैया

हाथ को जोरि कै गंग बखानति आप महां मति देति सबै।
मोहि रिदा डरपंति रहै इस हेतु करौं बिनती सु अबै।
ब्रिंद बडे उतपात के घातक आप सम्रत्थु जबै रु कबै[1]।
होइ न को बिघना तिस थान जहां तुम नाम उचारि तबै ॥ २ ॥
आइ बसे हम ग्राम बिखै करि ब्रिंद उपाइ को नंदन पायो।
सुंदर रूप बिलंद अनदक एक अहै न दुती उपजायो।
श्री गुरनानक आप दया करि हाथ दै जानि कै दास बचायो।
धाइ महां अपराधनि ते इस पंनग ते सुख सों उबरायो ॥ ३ ॥
आप चलो अपने पुरि को तहिं बास करो बिघनो नहिं होवै।
सेवक ब्रिंद बसें सभि सेवहिं, चिंत तहां बसि कै हम खोवैं[2]।
ईखद[3] ग्राम बिखै बसते, नर ब्रिंद नहीं पुरि जेतिक जोवैं।
थान बडेन के वास करो सुखरासि ! निशचिंत ही सोवैं ॥ ४ ॥
श्री गुरनाथ भन्यो 'डर ना उर, बालक के रखवार रमापति[4]।
भावी टरै नहिं को कित जाइ, बनै तिस रीति मिटै न कदाचित।
आस करो परमेशर की जिसते नहिं और बडो सुखदा हित।
त्रास बिनां किम त्रास करै, सिमरो सतिनाम बिसाल सदा चित ॥ ५ ॥

---

1. अत्यधिक उत्पातों को नाश करने में आप ही समर्थ हैं। 2. वहाँ रहकर हम निश्चिन्त हो जायेंगे। 3. छोटे से। 4. रमा के पति विष्णु; यहाँ रमा माया या प्रकृति को कहा गया है, अर्थात् स्वयं प्रभु।

गूढ महां कपटी प्रिथीआ नहि देखि सकै पर की वडिआई।
बाहर प्रेम करे हित भाखति राखति खोट रिदै दुषटाई।
हेरति ही हम को दुख पावति या हित ठानि अनेक उपाई।
यांते रहे तिसते हुइ दूरि भली न शरीकनि की कुटलाई' ॥ ६ ॥

यौं कहि श्री गुर तूशन[1] कीनि, विचारति नारि सुभाव स त्रासा।
सोचति है सुत धारि सनेह को, जानति है इहे बल रासा।
धीरज छोरि डराकुल[2] बोलति बाक सुने अस होति उदासा।
चाहति है पुरि मैं बसिबे कहु पास शरीकनि केर अवासा ॥ ७ ॥

यौं चित मैं चितवंति दयानिध हेत प्रसंन के बैन कहे।
'बासुर केतिक बास करो इत, फेर करैं चितर तोर चहे।
बालक को प्रतिपाल करो नित होइ बिसाल अनंद लहे'।
गंग ने श्रोन सुनी हरखी उर—छोडि हैं ग्राम को बास इहे ॥ ८ ॥

या विधि बोलति बूझति[3] को निस जाम गई करि खान अहारा।
फेर जथा सुख सों सुपते उठि प्रात समें जल मज्जन धारा।
तात को लालति है प्रतिपालति भूखन घालति शौक उदारा[4]।
सुन्दर चीर सरीर बिखैं पहिरावति ही हरखावति भारा ॥ ९ ॥

दासन पै न भरोस धरै, अठ जाम रखै निज नैन अगारी।
सोवति हाथ लगाइ कै नंदन औचक जाग उठे डर धारी।
नीत सनेह अछेह नवों हुइ[5], डील बिसाल व्रधै बलि भारी।
सुन्दर सूरति शोभति है, निज कोछर लेकरि ह्वै बलिहारी ॥ १० ॥

केतिक द्योस बितीत गए जबि एक निसा परि कै सभि सोए।
देव मिले समुदाइ तवै सभि आवनि कीनि प्रमोदति होए।
श्री हरिगोविंद जानि तिनो कहु छोरि प्रयंक उठे सभि जोए।
द्वै कर बंद करैं अभिवंदन दूख निकंदन तीर खरोए ॥ ११ ॥

नारद, सारद, पारद से तन[6], श्री ब्रह्मा, मघवा[7] जुत आए।
आठ बसु अर रुद्र इकादश, पावक अग्र मिले समुदाए।
और कहां तिनकी गिनती हुइ देखनि को अवतार सुहाए।
चौसठ जोगनि, वीर बवंजन द्वै कर जोरति सीस निवाए ॥ १२ ॥

---

1. मौन। 2. डर से व्याकुल। 3. बोलते-पूछते। 4. बड़े शौक से आभूषण पहनाती है। 5. नित्य ही स्नेह रूपी एक नया रस उपजता। 6. स्वच्छ-निर्मल शरीर। 7. सुरपति, इन्द्र।

'नाशनि को तुरकानि समूह, सरीर धर्यो तुम अंतरजामी।
सेवक संतनि को प्रतिपारनि, जो सतिनाम जपै नित स्वामी।
लोक अनेक उधारनि को चित देनि बिबेक भए पथगामी।
सूर महाँ भुज पूरन श्री गुर, शत्रुन चूरनि को[1] नित कामी, ॥ १३ ॥
कीरति को बिसतीरति यौ पद पूजति चंदन को चरचाए।
धूप धुखावति फूल चढावति और सुगंधिन को अरचाए।
कुंकम सों घनसार[2] घसाइ करैं बिनती सुर ह्वै समुदाए।
'ज्यों हुइ आइस रावर की हमकाज करैं तिम द्यो फ़ुरमाए' ॥ १४ ॥
चौसठ जोगनि कीनि बिनै बड भूख हमै नहिं पाइ अहारा।
बीर बवंजनि बाक कहे 'हम चाहति हैं बड जुद्ध अखारा।
नारद आदिक प्रारथना करि 'ब्रिंद मलेछ बलीन संघारा।
रावरि क्रुद्धति जुद्ध करो इम चाहति देवन को गन सारा' ॥ १५ ॥
श्री हरिगोविंद देति अनंद का देवन ब्रिंदन सो कहिबानी।
'बीर सभै तुम धार सरीर को धीरज सों बिचारो धरि आनी।
नारद को दिखराउं महां रण, मारि मलेछ करों घमसानी।
पीवहु श्रोनत चौसठ जोगनि ! लेहु डकार महां त्रिपतानी ॥ १६ ॥
जुद्ध घमंड प्रचंड रचौं, शिव लेहु बिलद ही मुंडनि माला।
काली ! कपाल[3] भरो अपनो पल श्रोणत संग[4] उमंग बिसाल।
जो सभि देवनि के मनि भावति सो करि हौं बल धारि कराला।
लालति मात को देउ अनंद सु बालिक आरवला इस काला ॥ १७ ॥
जो सुर के उर होइ मनोरथ आइ सरीर धरो धरि मैं।
मो संग सैन बनो रण मैं वलवंत मलेछनि संघर[5] मैं।
आयुध केर प्रहार करो उतसाहित ह्वै करि कैबर मैं।
फेर पयान करैं सुरलोक सुधारि के काज बसैं घर मैं ॥ १८ ॥
'धंन गुरू ! सभि देव मनोरथ पूरन को करता हरखावति।
शाँतकी पंच सरीर धरे सतिनाम सनेह मैं सेवक लावति।
मानव कीन निहाल करोरनि श्री प्रभु के उमगैं गुन गावति।
पंच सरूप अनूप धरे अबि पंथ प्रकाश करो रिपु घावति ॥ १९ ॥

1. शत्रुओं का नाश करने को। 2. केसर। 3. खप्पर, काली (देवी) को रक्त-पान के लिए खप्पर भर सकने का आश्वासन दिया गया है। 4. रक्त-माँस के साथ। 5. संघर्ष, युद्ध।

घोर महां कलि काल बिखै जुग आदि की रूर म्रिजाद चलाई।
क्यों न चले, सभि के करता तुम आप भए जवि आनि सहाई।
देवनि यौ सिफती करि दीरघ[1] देखि सरूप सभै वलि जाई।
देखि निकंदन को करि बंदन आनंद कंद बिलंद कराई ॥ २० ॥
जानि लगे जबि गंग बिलोचनि नींद को त्यागति ही बिकसाए।
गौनति की[2] अविलोकति पीठ, अचंभ भई उर त्रासको पाए।
ब्रिद ए चोर गए भज कै मम नंदन को इह लेवनि आए।
चारु बिभूखन हीरन के जुत ले अब जाति जि, कौन छुटाए ॥ २१ ॥
सेवकनी सुपती जि समीप[3] पुकार के ऊंचे समूह जगाई।
'क्यों न बिलोकति हो उठिके ? गन चोरनि आनि कै दीनि दिखाई।
श्री हरिगोविंद मोहि ते दूर हुते अबि मैं, गहि लीनि उठाई।
देखति मेरे सु अंगण बीच ते जागती जानि गए सु पलाई ॥ २२ ॥
दासी उठी ततकाल फिरी चहुँ कोद मैं, हेरति ना दरसाए।
शेष निसा जितनी जु हुती सभि जागति मात ने जाम बिताए।
बोलति बातन को बतरावति, त्रासति नींद गई किस थाए।
चिंतति चित महां चित में-सुत को बिघना न कछू हुइ जाए ॥ २३ ॥
भोर भई सभि जागति ही अनुरागति तात को मात दुलारे।
श्री हरिगोविंद केर पिता गुर आए जबै निज धाम मझारे।
मीर भयाकुल भूर भई भगवंत सु कंत के आई अगारे।
हाथ को जोरि निहोरति है 'तुम क्यों नहीं तात को त्रासु बिचारे ॥ २४ ॥
जामनी मैं जबि जागती नहिं मैं संकट होति महां भए दाए।
चोर हुते समुदाइ सु अंगण श्री हरिगोबिंद लेनि को आए।
बीच लीए सभि सों परवारति आपस मैं बहु बाक अलाए।
आंख गई खुल मेरी तबै ततकाल ही त्रास ते देखि पलाए[4] ॥ २५ ॥
मैं उठि तूरन[5] नंदन लीनसि दासी जगाई बिलोकनि चोरनि।
धाइ गई सगरी दिश महिं तिसने बहु बोलि दई सुधि होरन[6]।
रौर पर्यो सुन दौरि गए तबि दास फिरे घर के चहुँ कोरन[7]।
क्यों न चलो अपुने पुरि को ? इस ग्राम को बास करो अबि छोरनि ॥ २६ ॥

---

1. देवताओं ने इस प्रकार गुरु जी की स्तुति की। 2. जाते हुए (देवताओं की)। 3. निकट ही सोने वाली दासियाँ। 4. देखकर डर से भाग गए। 5. शीघ्रता पूर्वक। 6. अन्य (दासियों) को। 7. कोनों में।

होति महां उतपात इहां सुखबास तहाँ पुरि रूर जहाँ[1]।
मोहि को त्रास बिसाल रिदे बिप्रीत ही नीत भई असहां[2]।
श्री हरि गोबिंद नंदन मेरो जु होइ बिलंद तौ भै न कहां।
चित लहां इस ग्राम हां, करजोर कहां करि मोरचहां[3] ॥ २७ ॥

श्री गुर गंग के बाक सुने मुसकावति धीरके बाक कहैं।
'तेरो कह्यो हम मानि चलैं पुरि बीच अवास के बासु चहैं।
तो सुत को नहिं त्रास किसू थल श्री परमेशुर रच्छक हैं।
भोर को प्यान करैं नगरी निज, ले सगरी वसतू जि अहैं' ॥ २८ ॥

दोहरा

इस प्रकार कहि श्री गुरू त्यारी सकल कराइ।
सदन समाज संभारिओ दास लगे समुदाइ ॥ २९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'देवन को प्रसंग' बरननं नाम दशमो अंशु ॥ १० ॥

---

1. जहाँ सुन्दर नगर है। 2. यहाँ तो नित्य ही विपरीत हो रहा है। 3. मेरी इच्छा पूरी कीजिए।

अंशु ११

श्री गुर रामदास नगर प्रवेश प्रसंग

दोहरा

जब श्री अरजन चलनि को कह्यो सभिनि के मांहु ।
दासी दास समूह जै हरखति कीन उमाहि ॥ १ ॥

कबित

चारु असवारी करी सारी तबि त्यारी तहिं हेरि नर नारी को उछाह भयो मन मैं ।
स्यंदन[1] बहल[2] अरु सकटे[1] समाज भरे, दास करै कारज को लादी आनि तिन मैं ।
बडे बरटोहे[3] थार दीरघ कराहे[4] लीनि और सभि बासन संभारे तिस छिन मैं ।
बसन के भार भूर धरे करि पूरन को ब्रिखम[5] को जोरि कीनि तूरन गमन मैं ॥ २ ॥
सुंदर सुरंग सज्यो स्यंदन पै ज़रीदार, ऊरध उतंग द्वै कलस चामीकर[6] के ।
चंचल तुरंग बल संग भरे अंग जिन, घंगरू घमंकति सजाए बीच गर के ।
जूले साथ जोरि कर, हेरे कछु तोरि करि, फेरे पुन मोर करि खरे दर घर के[7] ।
श्री हरि गोबिंद नंद ले करि उछंग गंग आनंद बिलंद करि, वैठी बीच बरि के ॥ ३ ॥
पालकी अरूढ भए गुरू गुन गूढ़ महां पंथ प्रसथाने हरखाने पुरि जानिको ।
नंद मुख चंद देखि गमनै सु मंद मंद, दासी, दास, ब्रिंद सिख, संगतां महान को ।
रामदास नगरी मैं जाई कै प्रवेश भए, बादित अशेष बजवाए हरखान को ।
दुदभि अलप संख शोर औ नफीर गन बाजति म्रिदंग सो रबाबी करै गान को ॥ ४ ॥
रहे तीन संमत[8] वडाली गुरू महाराज, सगरे समाज साज परी निज आइगे ।
लोक समुदाइ गुर आगम को सुनि पाइ, भए इक थाई सभि ही के मोद छाइगे ।
आए अगुवाइ, धाइ मिले चित चाइ चाइ, शबद सु गाइ, प्रेम उमगाइ गे ।
भेट अरपाइ, अरदासनि सुनाइ करि, सीस को निवाइ करि गुरू पग लाइगे ॥ ५ ॥
देति है बधाई, 'परी आपनी सुहाई, बसो पुत्र के समेत नित दरस को दीजिए' ।
लेकरि सिधारे संग सदन सुरंग जहां, हाथ जोरि कहै 'इहां सुख सों बसीजीए' ।

---

1. रथ । 2. बहलियाँ, बैल गाड़ियाँ । 3. बटलोहे । 4. कड़ाहे । 5. बैल । 6. स्वर्ण । 7. घर के द्वार पर आ खड़े हुए । 8. तीन वर्ष ।

श्री हरि गोबिंद नंद हेरति उछंग गंग, स्यंदन ते उतरी, सुनारी कहैं 'जीजीये'[1]।
सदा मोद कीजीए सु नगरी थिरीजीए, उपाइन को लीजीए, हमारे पै प्रसीजीए ।। ६ ।।
सदन समाज को संभारि कै उतारि करि पिता के सथान पुन गुरु ने गमन कीनि ।
चरन नगन करि गंग ले उछंग नंद गमनी है संग बहु उत्तम प्रसादि लीनि ।
गए तबि हाथ बंद, बंदना करी है तहां अरज गुजारि कै प्रसादि को बरताइ दीनि ।
फिरे हैं प्रकरमा तीन अधिक अधीन होइ, कुछक असीन[2] पुन बंदत सुमन दीनि[3] ।। ७ ।।
तैसी बिधि गंग सुत संग ले करति भई पूज गुरु थान को सदन पनि आइ के ।
जगत म्रिजाद हेत बहुरो बिचारयो उर, जेठो है सहोदर समीप मिलै जाइकै ।
मधुर प्रशाद लीनि रिदै अहिलाद हित, गोप बाद ठानै नहिं, ऐसे चित ल्याइकै[4] ।
चले हरखाइके स-दास समुदाइके, उपाइन उठाइ के जिठाइता रखाइके[5] ।। ८ ।।
प्रिथीए के पास जाइ बंदन करी है पाइ, आइसु को पाइ बैठे राखिके जिठाई को ।
गंगा म्रिदु बानी बोलि मिली है जिठाणी साथ, टेक्यो माथ, नंद को लगाइ तिस पाई को
करमो निहारि करि सुंदर लिलार महां दीरघ दरस भले भाग बडिआई को ।
टूक टूक रिदा भयो, जल बल छार थियो[6], ऊपर कपट कीयो दुध बिख न्याई[7] को ।। ९ ।।
आशिख कहति चिरंजीव सुत होहि तोहि कुशल प्रशन करि गोद में बिठायो है ।
एतने मैं सतिगुर दास को पठायो तहां ल्याइ करि प्रिथीए के पाइ पर पायो है ।
आपकी क्रिपा ते जैसे क्रिपन लहै सुधन, तैसे ही इह नंदन सदन मैं सुहायो है ।
जानो निज दास काजै आशिखा प्रकाश शुभ, उमर बिसाल होइ जैसे जनमायो है ।। १०।।
देखति बिसम गयो, रिदै महां गम भयो, बध्यो मन कमि थियो[8], सुंदर सु नंद जानि ।
माधुरो बचन कह्यो होवै चिरजीव बाल, आरबला अधिक अनंद को बिलंद ठानि' ।
मोर जिम बाक आछे जीवन को मच्छ काछे, बंचक ज्यों कहै कुछ राखे कुछ रिदे आन[9] ।
घटे मुख दूध धरे पेट बिख संग भरै[10], तैसे सो करम करैं संकट महान मान ।। ११ ।।
''संमत कितिक को अनंद संग भयो नंद' ? गुरु तबि कह्यो 'अबि तीसरे बरस' को ।
कुशल प्रशन दोऊ दिशि ते सकल कही, कोऊ घटी बैठे सिस अंगनि परस को ।

---

1. दीर्घायु होवो । 2. बैठकर । 3. सु-मन (सच्चे हृदय) से वंदन किया । 4. ताकि (पृथीआ) गुप्त वाद (झगड़े) खड़े न करे, ऐसा विचार कर । 5. बड़प्पन की मर्यादा रखने के लिए । 6. (ईर्ष्या से) जल कर राख हो गई । 7. दुग्ध-विष न्याय । 8. बढ़ा मन निराश हो गया । 9. जैसे मोर की वाणी सुन्दर है. परन्तु वह जीव-भक्षी है, जैसे ठग कहता कुछ है और मन में कुछ और रखता है । 10. जैसे विष का भरा घड़ा, मुंह पर दूध ।

श्री हरिगुविंद संग आप ले उठति भए, गमने बहुर महां देव[1] के दरस को।
सदन प्रवेश कीनि, पाइन प्रणाम ठानि, मिलि कै परसपर धारति हरष को ।। १२ ।।
श्री हरिगोविंद नंद पायो चरणारबिंद देखति उठायो महां देव लीनि गोद मैं।
सूंघति लिलार को दुलारति उचारि बच, 'होहि महाजोधा चिरंजीवी रहो मोद मैं।
बंस को बिभूखन, अदूखन ह्वै पूखन सों, कटैगो कलूखनि, सस्रूखैं चहूं कोदमैं[2]।
बडो ह्वै है डील, तैसे सुंदर सुशील वहु, सुजसु पसारै ते बिताइ बय बिनोद मैं ।। १३ ।।

दोहरा

इम कहि महां प्रमोद करि महादेव धरि प्रीति।
दरब निछावर बहु कियो निज सुत सम लखि चीत ।। १४ ।।

कबित्त

श्री गुरु उचारी, 'भई करुना तुमारी भारी यांते सुखकारी सुतकांखति को दीनिउ।
आप ह्वै सहाइ लीनि दुख ते बचाई नित, बिघन विनास कै प्रबल कीनि हीनिओ।
महांदेव कह्यो पिता सतिगुरु हमारे जोइ तिनकी क्रिपा ते ऐसो पद महां लीनिओ।
सोई ह्वै सहाइ निज प्यारे को बचाइ लेति, संकट न कोऊ होति जहां पक्ख कीनीओ[3] ।। १५ ।।
आपस मैं ऐसे कुछ बारता करति भए आइसु को पाइ पुन आए हैं सदन को।
सुख सों बसे है, सभि संकट नसे हैं, देखि दास बिकसे है, गुरु बालक बदन को।
खेलति अजर मांझ पिता पै सकार सांझ[4] बैठति घरी-क दुख दासन कदन को।
मंदर के अंदरि बिराजैं रूप सुँदर, सु आनंद बिलंद कै लजावति मदन को ।। १६ ।।
स्वादल अहारि देति जागे ते सकार होति, फेर जाम दिन चढे भोजन करति हैं।
खेलति पलावति ब्रिभूखन सुहावति है, सीस फूल हीरनि जराव को धरति हैं।
दीरघ बिलोचन बिलोकत हैं, जिसि दिशि होति हैं निहाल दुख सागर तरति हैं।
आस पास दास रहैं बास मैं निवास करैं, राखे मात त्रास, न बिसास को परति है[5] ।। १७ ।।
होति राति मात निज हाथ सों अचाइ पुनि पास ले सुपति प्रति पारति है प्रीति करि।
हाथ लाइ गात साथ सेवति है, जागै प्रात चंद मुख धोवति, दुलारै मोद चीत करि।
नए नए रंगदार अंबर पटंबर ले अंग मैं सुरंग कवि श्याम कबि पीत करि।
ऐसी विधि नीत करि, महां मन हीत करि, उतसाह रीतिकरि, वसे पुर थीतकरि[6] ।। १८ ।।

---

1. गुरु अर्जुन के दूसरे बड़े भाई। 2. चारों ओर पूजित (सेवित, संस्कृत सुश्रुषा)। 3. जहाँ (गुरु रामदास ने) पक्ष लिया, वहीं संकट नाश हुआ। 4. प्रातः-सायं। 5. किसी का विश्वास नहीं होता (माता को)। 6. स्थित होकर।

केतिक बिते हैं मास ब्रिद्धति प्रकाश बय, होए तीन संमत के श्रीहरिगोविंद चंद ।
गंगा के उमंग मन बोली श्री गुरु के संग बिघन बिसालनि ते प्रभु ने उबार्यो नंद ।
ब्रहम भोज कीजै आप, अधिक प्रताप होइ, जेन-केन दीजीए अहार ह्वै अनंद कंद ।
खाइ हरखावै, देखि आशिख अलावैं, बहु जस्सु बिथारवैंगे बिलंद ही निकंद दुंद[1] ॥ १९ ॥

बानी पुंनसानी[2] सुनि सतिगुरु अरजन होइ कै हरखमन हुकम बखानओ ।
'दीजै पुंज धन आवैं वसतू अनेक मन कीजिए बिसाल ह्वै अतोट अन आनिओ ।
मानुख असंख आवैं, भोजन जो मन भावैं खावैं हरखावैं करैं पाक को महानिओ ।
घ्रित को मंगावो सरकरा को खरीद ल्यावो, सुंदर गुधूम को पिसावो.जो प्रमानिओ ॥ २० ॥

दासन दरब देय वसतू मंगाई सभि धरे हैं कराहे, बहुकीनि पकवान को ।
करयो है कराहु, पूप पूरिका[3] कचौरी बहु, मोदक बनाए जेऊ मोदक महान को ।
मेवे सों अमेज़[4] करि राइता सलौन बडो, मूलिका, ब्रिंदारक रिधाए[5] संग खानि को ।
भोजन सो कोशठ भरायो भांति भांति करि, सिक्खय को बिठायो करैं जपुजी बखान को ॥ २१ ॥

प्रिथीआ सु प्रथम हकार्यो[6] सनमान साथ, करमो बुलाई संग दासी चलि आई है ।
महांदेव महां मोद रिदै करि आयो आप और सिक्ख संगतां मिली जु समुदाई है ।
बिप्प्र आए ब्रिंद मिलि सुनि सुनि ग्रामनि ते, रंक भए अनगन[7], पंकति बिठाई है ।
लगे हैं परोसनि असन को अनेक नर 'लेहिं' 'देहिं' बानी तहिं आनन अलाई है ॥ २२ ॥

जितनो असन खाइ नर त्रिपताई रहैं एकबार तेतनो परोस्यो है बनाइ करि ।
कोऊ देहि मोदक सु पूरिका कराहु देति, पूप सो कचौरी खाइ रहे त्रिपताइ करि ।
दधि सों पकौरी बरे जीरक मिरच पाइ, धनीआ लवन सों परोसी है मिलाइ करि ।
साद को सराहैं अहिलादति उमाहैं मन, त्रिपति ह्वै चाहैं खानि रहे बिसमाइ करि ॥ २३ ॥

रंकन को भोजन दियो है त्रिपताई करि, जाचति जितिक देति सभिनि हकार करि ।
खावति अघावै, बहु आशिख अलावैं गन श्री हरिगोविंद जीवो जग्ग जुग चार करि ।
तबि गुरू अरजन मन के उदार महां, दच्छना रजतपन दीनि है, सुधारि करि ।
सुजसु उचारैं सारे कहि बिसतारैं बहु धंन गुरू कीनो मख उर को उदार करि ॥ २४ ॥

दच्छना को लेइं दिज आशिखा को देय बहु 'उमर बिलंद होइ सुंदर सु नंद की' ।
करते सतुति आप आपने सदन गए प्रिथीए को भोजन अचायो संग ब्रिंद की ।
करमो को सादर अहार दीनो भांति भांति, ऊपर प्रसंन रीति कपट बिलंद की ।
महांदेव महां मोद श्री हरिगोविंद गोद अचिकै असन को म्रिजाद ज्यों बिलंद[8] की ॥२५॥

---

1. कष्टों का नाश करने वाला । 2. पुण्य-युक्त । 3. पूड़े-पूरियाँ । 4 मिश्रित कर । 5. मूलियाँ और बैंगन पकवाए । 6. आमन्त्रित किया । 7. अनगिनत । 8. जैसे बड़ों की मर्यादा है ।

दोहरा

महादेव गुरदैव सुत अहंमेव जिस नांहि ।
गुरता गुरु निज अनुज की पिखि प्रसंन मन मांहि ।। २६ ।।
नंदन अपन मनिंद लखि हरि गुविंद सुखकंद ।
धरति अनंद बिलंद को पिखि चकोर जिम चंद ।। २७ ।।

सोरठा

रिदै मुदति अति होइ अधिक मुदतिकरि अनुज को ।
जस बिसतीरति सोइ सदन गयो नर संग कुछ ।। २८ ।।
सुनि सुनि आवति धाइ सगरे नर गुर नगर के ।
बांछति भोजन खाइ करति सतुति गमने सदन ।। २९ ।।
बाजे बजहिं बिसाल अंम्रित वेला होति ही ।
संध्या लगि सुख नालि लघुदुंदभि सुत नफीर गन ।। ३० ।।
मचहि कुलाहल जाल फैलति जस सतिगुर महत ।
लेनो देन बिसाल होति गुरु दरबार महिं ।। ३१ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'श्री गुर रामदास नगर प्रवेश' बरननं नाम इकादशमो अंशु ।। ११ ।।

अंशु १२

सीतला को प्रसंग

दोहरा

अति उतसाह बिलोक कै करमों दिल दिलगीर ।
नर नारिनि ते सुनति जस मनहुं रिदा दे चीर ॥ १ ॥

पाधड़ी छंद

बजियंत पौर बाजै बिसाल । सुनियंति श्रोन तबि ह्वै बिहाल ।
बस चलहि नहीं संकट महान । मन गिनति गटी— किम बिघन ठानि ? ॥ २ ॥

उर सल्लय[1] मोहि किम निकसि जाइ । श्री हरिगोविंद जिम काल खाइ ।
तबि अनंद उदहि, रिद करक होइ । नतु म्रितक तुल्ल हम जियनि जोइ[2] ॥ ३ ॥

नित करति महांमंगल सु चार । बहु दरब आइ भरि लिय भंडार ।
लघु थान हमहुं ते भे महान । सुत भयो चंद समु लखि जहान ॥ ४ ॥

मंगलकरंति गंगा अनंद । श्री हरि गुबिंद जिस शोभ नंद ।
जबि बडो होइ सम बली सिंह । सभि को निवाइ संतोख सिंह ॥ ५ ॥

इम राति दिवस करती बिचार । पति साथ दुखत बाकनि उचारि ।
किम नहीं चित चित मैं तुमार । दीरघ शरीक नित ह्वै उदार ॥ ६ ॥

इक पुत्र तिनहुकिम दिहु खपाइ[3] । गुरता बहोर हमरे सु आइ ।
तुम रहे बैठि नहिं करि उपाइ । इहु बडो काज मन नहीं ल्याइ ॥ ७ ॥

ज्यों ज्यों ब्रितंत हमरो बितीत । निज पुत्र पौत्र क्या करहिं रीति ।
हुइ दरब हीन मांगति फिराइं । सिख दें न भेट, नहिं लगहिं पाइ ॥ ८ ॥

तबि अपन बडनि को खोट जानि । मुरझाइ झूर क्या क्रित ठानि[4] ।
अबि तो उपाइ जे करहि आप । अस जुगति ठानि तिन पुत्र खाप ॥ ९ ॥

गुरुता बहोर हम बंसु पाइ । सभि सिख्य देंहि धन, लगहिं पाइ ।
करि सकहिं कछू तौ बिलम टारि । अस करि उपाइ तिन पुत्र मारि ॥ १० ॥

---

1. हृदय की पीड़ा । चुभन । 2. हमारा जीना मृतक के समान है । 3. मार डालो । 4. क्या कार्य करेंगे (हमारे बच्चे) ।

सभि सुने प्रिथीए बचन कान। तबि दई धीर तिसको बखान।
'मत करहु चित, नहिं जियहि सोइ। है बाल अलप नहिं वडो होइ ।। ११ ।।
तिह निकसि सीतला करहि हान। मम बचन पता[1] अबि लेहु जानि।
तिसते जि बचहि नहिं म्रितु होइ। तौ मैं उपाव अस करहुं कोइ ।। १२ ।।
जिसते बिनासि श्री हरिगुविंद। हम पुत्र पौत्र सभि ह्वै अनंद।
अब आइ निकटि बिधि ह्वै सुखैन[2]। इस हतौं रीति करि जेनकेन' ।। १३ ।।
करमो सुनंति बोली कु वैन। 'तुमरो बचन बरक़त सु है न।
भा प्रथम कूर कहि—ह्वै ज़रूर। मैं सुनति जांहि किय हरखभूर ।। १४ ।।
तुम घटति जाति ऐश्वरज मांहि। सो ब्रधै सदा, को काष्ट नांहि।
ऐसे बिलोकि मुझ चित होति। दिन रैन ऐन संकट उदोति' ।। १५ ।।
कहि प्रिथीआ 'अबि कै देखि लेहु। सुख होहि तोहि ज्यों मैं कहेहु'।
इम सदा करति दंपति बिचार। कुछ करैं कपट मिलि बच्च उचारि ।। १६ ।।
नित चितहिं खोट किम ह्वै अनरथ। नहिं करामात की कुछ समरथ।
इति अरजन गुरु सरलै सुभाइ। उपकार करन इक रिदै ल्याइ ।। १७ ।।
लोकनि अनेक की करति श्रेय। सतिनाम देति किस ग्यान देय।
श्री हरिगुबिंद आनंद कंद। खेलति ब्रिधंति जिम दूज चंद ।। १८ ।।
म्रिदु बचन तोतले मुख कहंति। सुनि मधुर श्रोन को सुखदवंत।
गंगा अनंद करती दुलार। गर संग लाइ सूंघति लिलार ।। १९ ।।
सुनि बाक तोतरे त्रिपति ह्वै न। पुनि पुनि बुलाइ सुंदर सु बैन।
मुख चंद देखि करि नहिं अघाइ। पित निकट गए चित आकुलाइ ।। २० ।।
बहु बार पठावति निकटि दास। सुधि सुनति पुनहि पुन ल्याइ पास।
जिम धेनु वतस लघु नहिं तजंति। तिम महां प्रीति दिन दिन ब्रिधंति ।। २१ ।।
तजि मात गोद को निकसि धाइं। तबि अलकार म्रिदुधुनि उठाइं।
पग नूपर भू पर चलति बाज। कटि किंकनि कंचन बर बिराज ।। २२ ।।
हीरनि जराउ करि कटक[3] शोभ। दुति देखि रुचिर किस के न लोभ।
बिच अजर चारु दौरति फिरंति। सिर सीस फूल सुंदर सुभंति ।। २३ ।।
सूखम सु चीर गर पीत रंग। गोटा सु लाग सभि कोर संग[4]।
चमकहिं सु फूल तिस के बनाइ। गर कंध जुगल पर बहु सुहाइ ।। २४ ।।

---

1. परख लो। 2. अब वे हमारे निकट आ गए हैं, अब कार्य सरल हो जाएगा।
3. हाथ के कड़े। 4. किनारों से।

मधुरे सुबोल क्रीड़ा करंति। जो करहि दरस उर मुद धरंति।
तन गौर रंग लोचन बिशाल। अरबिंद पांखरी सेत लाल॥ २५॥
भुज हैं प्रलंब कंधे उतंग। बर सुमिल आंगुरी नख सुरंग।
मुख मंडल पर कुंडल डुलंति। सुंदर सु केस मेचक[1] सुभंति॥ २६॥
नित प्रति नवीन इम ह्वै अनंद। बित गए द्योस तन ह्वै बिलंद।
जबि भए बरख पंच बितीत। क्रीड़ति बिसाल हरखंति चीत॥ २७॥
इक दिन चढ्यो सु ज्वर हरिगोबिंद। तबि रहे पौढि चित मात चिंद[2]।
पुनि दिवस तीसरे भी दिखाइ। जिह नाम सीतला जगत गाइ॥ २८॥

बहु सघन निकसि बिसफोट[3] ब्रिंद। को दिखति छोट, को ह्वै बिलंद।
इक बार सरब भा तन सुलाल। नहिं छूछ थान[4] कीने बिहाल॥ २९॥
पौढे प्रयंक पर दिवसु राति। बिसफोट सघन ते सोज गात।
कर चरन तरव पर जीह मांहि[5]। सघनी घनी सु खर चुंच जांहि[6]॥ ३०॥
लोचन दु बीच मीच गए सु। उघरंति नहीं दिखियति न लेश।
रहि बैठ निकट तजि धीर गंग। बहु बारि पुत्र के दिखति अंग॥ ३१॥
जिम होवै सागर महिं जहाज। किह लाद लीनि सभि घर समाज।
वहि बायु कुफेरी[7] हेरि तांहि। इक प्रभु आस तिम चित मांहि॥ ३२॥
गुर अरजन तबि दिजबर बुलाइ। दुरगा सु पाठ पढिबे लगाइ।
कुछ दुरगिआणे थल बिठाइ। सभि धूप दीप तिन को दिवाइ॥ ३३॥

पूजा जु सौज सभि भेजि दीनि। संपट सु पाठ पढते प्रबीन।
कुछ सदन बिठाए बोलि बिप्प्र। सभि चहिं—अरोग, सुख होहि छिप्प्र॥ ३४॥
सगरे उदास दासी जु दास। जे नगर लोक बिनती प्रकाश।
थल दुरगिआणे प्रात जाइ। बहु बिनै बाक कहि सीस न्याइ॥ ३५॥
तन कुशल करहु श्री हरि गुबिंद। हम बहुर बिलोकैं ससि मनिंद।
बहु करति जतन युति चित गंग। नित होम होति बहु घ्रित संग॥ ३६॥
सरकरा डारि जल तिल भिलाइ। खारक[8] बदाम विच अगनि पाइ।
शुभ दे अहार कंन्यां बुलाइ। भूखन सु देति चुनरी उढाइ॥ ३७॥

---

1. काले केश। 2. तब माता के मन में चिन्ता हुई। 3. छाले फूट पड़े। 4. खाली स्थान। 5. हाथ-पाँव के तलवों और जीभ पर। 6. (छाले) सघन, तीखे और चोंचदार हैं। 7. आँधी-तूफान। 8. छुहारे।

सभि हरख धारि बोलति असीस। 'चिरंजीव करहि सुत तोहि ईश।
जय मात चंडिका हुइ सहाइ। जिन हते दुष्ट संतन बचाइ॥ ३८॥
दिज एक काल भोजन करंति। हुइ सुच शरीर दुरगा जपंति।
इस रीति जतन बहु करति गंग। द्रिग मुंदे देखि अरु सोज अंग॥ ३९॥
बहु डरति रिदे चिंता बिलंद। 'मम पुत्र् एक जनु चारु चंद।
है जितक हमारो गन कुटंब। प्रिय सभिनि रिदे इक इह अलंब[1]॥ ४०॥
जिम क्रिपन जतन करि धन उपाइ। तिम अधिक चाह ते नंद पाइ।
प्रभु पारब्रह्म रच्छक अकाल। अबि हुइं सहाइ मुझ पर क्रिपाल॥ ४१॥
गुर नानक सिस[2] निज दास जान। होवहु सहाइ सभि कपट हानि।
शुभ रहो चारु लोचन बिसाल। नहिं अंगभंग कीजहि क्रिपाल॥ ४२॥
हुइ मात सीतला बहु प्रसंन। मम पुत्तर रच्छ हो सुख सपंन।
इम करति बेनती गंग मात। दिन लघु अहार नहिं सुपति राति॥ ४३॥
चिंता बिलंद जिसके रहंति। बहु कष्ट पुत्त के तन लहंति।
जो प्रभू आप सभि दुखनि खोइ। तिस देहि कष्ट अस है न कोइ॥ ४४॥
तद्दपि जु धर्यो मानुख सरीर। अनुसारि तांहि वरतहिं सु धीर।
दिन तीन बिते निकसी जु ब्रिंद। सभि भरी, ऊच ह्वै करि बिलंद॥ ४५॥

दोहरा

इस प्रकार परिवार सभि चिंता धरति उदास।
निस दिन प्रभु अराधते 'संकट होहिं विनाश'॥ ४६॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे व्रितिय रासे 'सीतला को प्रसंग' बरननं नाम द्वादशमो अंशु॥ १२॥

---

1. अवलम्ब, आश्रय। 2. शिशु।

अंशु १३

सीतला को प्रसंग

दोहरा

इत कुटंब सभि चित जुत महादेव ते आदि ।
चित चाहति हुइ कुशल तन पुनहिं पिखैं अहिलाद ॥ १ ॥

पाधड़ी छंद

उत प्रिथीआ रिदै अनंद धारि । करमो समीप बाकनि उचारि ।
'अबि हेरि भयो जिम तिनहुं नंद । नहिं जियन आस, शोकति बिलंद ॥ २ ॥
सति बाक मोर अजहुं न जानि । जिम कह्यो प्रथम मैं कोप ठानि ।
तिम भई सीतला निकसि भूर । अबि होइ म्रितु तिसकी ज़रूर ॥ ३ ॥
मैं कई बार लीनो पत्याइ । मुख कहौं बाक नहिं निफल[2] जाइ ।
बल करामात को मोहि मांहि । अरजन लखै इक, और नांहि ॥ ४ ॥
सो डरति रहति मो ते बिसाल । पद करहि बंदना मिलिनि काल ।
नहिं महांदेव ते भै करंति । भोरा सुभाउ नहिं कुछ बुलंति ॥ ५ ॥
सुत मरे पिछारी बनहि दीन[3] । पुन नहीं निपजि है आस हीन' ।
सुनि कंत बैन करमो सु चैन । उर हरख धारि परफुल्लय नैन ॥ ६ ॥
'इम बचन साच तुमरो जि होइ । इम सम उछाह नहिं अपर कोइ ।
जिस निकटि बीस दस ग्राम राज । बड होइ खरच तुट्यो समाज ॥ ७ ॥
तिस ढिग अचानकै बनि सु जाइ । सभि चक्क्रवरति को राज पाइ ।
इस बिधि उछाह हमरे सु होइ । गुरता सु पाइ हम बंस जोइ ॥ ८ ॥
संमत हजार लग होहिं पूज । जग जिह समान नहिं और दूज ।
पूजंति पाइ बनि सिक्खय ब्रिंद । बंदैं अनंद चंदहि मनिंद' ॥ ९ ॥
इम चितहिं पाप-किम हुइ अनरथ । जिन केर ठटन सभि ह्वै बिअरथ[4] ।
बड प्रीति पाप सों दिवस रैन । पर हैं सु नरक इम जानि भै न ॥ १० ॥

---

1. युक्ति । 2. निष्फल । 3. पुत्र की मृत्यु के पश्चात् दीनता, निर्धनता आएगी । 4. जिनके (पृथीए) सब ठाट (आयोजन) व्यर्थ होने वाले हैं ।

इन कै अनंद दुरि दुरि करंति[1]। बहु दुषट बुद्धि पर दुख चहंति।
इस लोक अजस नहिं डरहिं कूर। परलोक नरक प्रापति जरूर॥ ११॥
श्री हरिगुविंद जी दिवस पच। दुख भयो अधिक सुख ह्वै न रंच।
बिसफोट भयो इकबार ब्रिंद। चमकहि बिसाल मुकता मनिंद॥ १२॥
नहि खान पान नहिं बाक भाख। तूषन रहंति, नहिं खोलि आंख।
करि म्रिदुल सेज तूलादि पाइ[2]। दिशि दुतिय मसे[2] पासो फिराइ॥ १३॥
को गहैं अंग पिलपिल करंति। इक पास परे चिरलौ बितंति।
पिखि मात गंग चिंता बिलंद। सतिगुर सहाइ ह्वै अनंद कंद॥ १४॥
मैं दीन बहुत इह दरब मोर। दुख हरहु आप इह अधिक घोर।
करुना निधान ज़ाहर जहान। दीनान नाथ सुख करि सुजान॥ १५॥
दिन रैन बैन बिन चैन एव। गंगा भनंति जसु देव देव[4]।
दीरघ उसास ले बार बार। द्रिग भरति ढरति बहु बूंद बारि॥ १६॥
सुत अंग बिलोकति[5] टक लगाइ। कवि अवनि पिखहि निशचल रहाइ।
बहु भई दूबरी देहि जांहि। रहि वैठि निकट मुख मौन तांहि॥ १७॥
इम पंच दिवस लग दुख बिसाल। सभि कुटंब दास दासीन जाल।
नहिं करति कोइ रुचि सों अहार। उदबिगन रिदे करि नहिं संभारि॥ १८॥
निस मैं न सुपति बहु रहति जाग। करिगंग पुत्र बातैं सुभाग।
गुर अरजन ढिग भाखंति जाइ। 'दिन रैन गंग नहिं असन खाइ'॥ १९॥
सुनि देति धीर 'नहिं करहु त्रास। इक पारब्रहम की धरहु आस।
गुर नानक इनके नित सहाइ। जिन नाम जपे सभि कषट जाइ'॥ २०॥
बहु इस प्रकार तिस को सुनाइं। हहि एक पुत्र किम चैन पाइ।
जबि दिवस खषटमो भा बितीत। तिस राति फिरी मुरझान कीति[6]॥ २१॥
तबि भई प्रात उदियंति भानु। श्री हरि गुविंद अखियां महान।
बिकसे बिसाल जनु कमल पत्र। पिखि मात अनंद अति भा बचित्र॥ २२॥
कुछ भा भरोस-द्रिग रहिं अदोष[7]। सुत को सरीर की आइ होष।
कुछ अलप कीनि मुख खान पान। पिखि सभि कुटंब बड मोद ठानि॥ २३॥
उर भे सधीर बोलति प्रसंन। सभि कहैं 'गुरू नानक सुधंन।
दुख समय आन होए सहाइ। निज दास जानि लीनसि बचाइ'॥ २४॥

---

1. इनके (पृथीए के घर) छुप छुप कर आनन्द मनाते हैं। 2. रूई आदि डालकर बिछौना नर्म कर दिया गया। 3. बड़ी कठिनाई से। 4. देवाधिदेव-परमात्मा। 5. पुत्र की ओर देखती। 6. मुरझा कर घटने लगी। 7. नेत्रों में कोई दोष नहीं आया।

सुनि महांदेव सुधि होति आइ। नित चित करति सुख को मनाइ।
गुर अरजन ढिग बैठ्यो सु आइ। करि नमो सहत आदर बिठाइ ॥ २५ ॥
'सुध देहु बाल की सुख सरीर। हम सुनी अबहि मिटि गी सु पीर।
बिसफोट अहैं किस बिधि, बताइ ?। बर बचे नेत्र शुभ मुख सुहाइ' ॥ २६ ॥
सुनि श्रोन गुरू अरजन भनंति। 'तुम हो बिशाल करुना करंति।
तहिं सकल कुशल सहिजे सुभाइ। उपजंति मोद, नहिं बिघन आइ ॥ २७ ॥
अब मुरी सीतला सभि सरीर। मुरझाइ सकल बिसफोट पीर।
दीनान नाथ होए सहाइ। द्रिग लिए आप कर दै बचाइ ॥ २८ ॥
कुछ लग्यो करनि अबि खान पान। हुइ है अरोग अंगनि महान।
जबि अए प्रथम सुधि लेनि आप। तबि थे बिहाल सभि तन संताप ॥ २९ ॥
तुम दया साथ सभि सुख सरीर। अबि गई बहुत मिटि अंग पीर।
सुनि महांदेव ह्वै करि अनंद। तबि दई आशिखा 'सुख बिलंद' ॥ ३० ॥
पुन आयो प्रिथीआ कपट धारि। उर मैं अनरथ मुख म्रिदु उचारि।
सनमान साथ गुर नमहि कीनि। बहु भाउ धारि बैठाइ लीनि ॥ ३१ ॥
'सुधि देहु नंद की होहि जैस। बहु दुखद सीतला मांहि भै सु[1]।
द्रिग मुंदे खोलबे नांहि कीनि। सुख करै ईश, नहिं होहि हीन' ॥ ३२ ॥
गुर कह्यो 'प्रभु होवहिं सहाइ। तुमरी क्रिपा सु दै हैं बचाइ।
जीवनि अधीन इह नांहि कार[2]। इशुर जिवाइ कै देहि मार ॥ ३३ ॥
इक आस प्रभु की धरहिं चीत। जो सकल जगत दुख सुखहि कीत।
इम सुनि प्रिथ्थीए जानि लीनि। नहिं कुशल इनहुं के कष्ट भीन ॥ ३४ ॥
मुख शोकवान करिकै दिखाइ। चित मैं अनंद अधिकै बधाइ।
उठि गयो सदन कपटी बिसाल। रिद मैं गुनंति-नहिं जिये बाल ॥ ३५ ॥
इम भयो दिवस सपतम् बितीति। श्री हरिगुबिंद तन अनंद थीत[3]।
रुचि संग कीनि तबि खान पान। बिकसे मनोग लोचन[4] महान ॥ ३६ ॥
तबि लगे शुषक होवनि सुखेन। बिसफोट हुते भरि भूर जेन[5]।
तन प्रथम चरम जुत शुष्क होइ। सभि गए उतर नहिं दिखति कोइ ॥ ३७ ॥
सुख संग गंग सुत तन पखार। मुख चंद धोइ करि उशन बार[6]।
सभि दास अपर दासी सु आइ। हरखाइ बाक को कहिं सुनाइ ॥ ३८ ॥

---

1. भय होता है। 2. यह कार्य जीवों के वश नहीं। 3. हुआ। 4. सुन्द नयन। 5. जो (छाले) बहुत भरे थे। 6. जल गर्म करके (उनके) चन्द्र-मुख को धोया।

दोहरा

'लेहु बधाई पुत्र की उर प्रमोद को धारि'।
जित कित अति उतसाह ते सुनि करि नर गन नारि ॥ ३९ ॥

करि शनान निज नंद को भूखन बसत्र उठाइ।
मात होति बलिहारने नवों जनम जनु पाइ ॥ ४० ॥

श्री अरजन के निकटि तबि ल्याए दास उठाइ।
पद पंकज पर पाइ करि रिदै अनंद बधाइ ॥ ४१ ॥

नंदन दिख्यो अनंद जुत गोद लीनि बैठाइ।
सिर पर धरि कर कमल को आशिख दी हरखाइ ॥ ४२ ॥

चारु बिलोचन हेरि करि अरु सुख सकल सरीर।
कर्यो शबद अरजन गुरू जो धीरन महिं धीर ॥ ४३ ॥

॥ गउड़ी महला ५ ॥

नेत्र परगासु कीआ गुरुदेव।
भरम गए पूरन भई सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सीतला ते रखिआ बिहारी।
पारब्रहम प्रभ किरपा धारी ॥ १ ॥

नानक नामु जपै सो जीवै।
साध संगि हरि अंम्रितु पीवै ॥ २ ॥ १०३ ॥ १७२ ॥

दोहरा

'श्री नानक गुरदेव नै करे सु नैन प्रकाश।
रच्छा कीनसि हाथि दै लखि पूरी मम आस[1] ॥ ४४ ॥

पूरन सेवा जानि करि भरम बिदार्यो दूर।
निशचै अपने करि लए सभि निंदक करि कूर ॥ ४५ ॥

निकसी अतिशै सीतला तिस ते ह्वै रखवार।
दास उधार्यो आपनो पारब्रहम करतार ॥ ४६ ॥

श्री गुर नानक नाम कौ जपति होइ चिरंजीव।
साधू ब्रिध के वाक ते दुख हरि अंम्रित पीव' ॥ ४७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सीतला को प्रसंग' बरननं नाम त्रियोदशमं अंशु ॥ १३ ॥

---

1. मेरी आशा को जानकर पूरा किया।

अंशु १४
सीतला पूजन प्रसंग

दोहरा

पुन गंगा मन मोद करि चहति सीतला पूज ।
सभि त्यारी करवाइ करि ले सुत जनु ससि दूज ॥ १ ॥

पाधड़ी छंद

परवार सरब प्रिथमै मिलाइ । करमो जिठाणि भेजी बुलाइ ।
श्री हरिगुबिंद इशनान कीनि । इम कह्यो जाइ दासी प्रबीन ॥ २ ॥
'दुरगा सु पूजने जाति मात । अबि चलहु आप भी तहिं बुलाति' ।
सुनि करि दुखी सु हिरदै कुभाग । जनु डसी सरप बिख चढनि लागि ॥ ३ ॥
सोचति बिसाल, निशचल सरीर[1] । नहिं उठ्यो जाति द्रिढ गूढपीर ।
पुन कितिक देर महिं हुइ तयार । पहिरे न बसत्र कुछ रंगदार ॥ ४ ॥
नहिं अलंकार पहिरे सु चारु । चलि गई सदन जहिं ब्रिद नारि ।
दासी कितेक जहिं लीन संग । मिलि रही बैठ ह्वै निकट गंग ॥ ५ ॥
श्री हरि गुबिंद ले गोद माइ[2] । करमो चरंन मसतक टिकाइ ।
उर कपट सु मुख ते बच भनंति । 'चिरंजीवि होहु सुंदर शुभंति' ॥ ६ ॥
पठि दास प्रित्थीआ पुन बुलाइ । अरु महांदेव सादर मिलाइ ।
इन आदि अपर नर नारि ब्रिंद । पुरि केर मिले करि करि अनंद ॥ ७ ॥
सभि पहिर बिभूखन चारु चीर । घर बिखै कीन मिलि भूर भीर ।
बहु देति बधाई आनि आनि । सनमान ठानि गंगा महान ॥ ८ ॥
जिनि कंठ कोकिला गाइं गीत । बहु करि उछाह धरि हरख चीत ।
मुख हसति चलति जे हसति चालि । जनु अनंद उदधि महिं मीन जाल ॥ ९ ॥
इकठे सु होइ नर एक थान । गमने सु अग्र उर हरख ठानि ।
श्री हरिगुबिंद ले गंग संग । सभि त्रिया गावती मन उमंग ॥ १० ॥

1. अतीव चिन्ता में डूब गई, शरीर स्तब्ध रह गया । 2. माता गंगा ने ।

दिश पशचम पुरि ते गमन ठानि। तहिं दुरगिआणि दुरगा सथान।
बहु संग सु वादित[1] तब बजाइ। लघु दुंदभि बाजति धुनि उठाइ ॥ ११ ॥
कर झांझ नफीरनि[2] शबद होति। ले पटहि[3] पणव[4] धुनि उच उदोति।
इत्यादि अनिक बाजे बजाइ। सभि चले जाति मारग सुहाइ ॥ १२ ॥
त्रिय सहत प्रितीआ पिखि उछाह। जनु चुभति सूल उर द्रिगनि मांहि।
बहु कषट रिदे मुख मधुर भाखि। कहि तनक बात नतु मौन राखि ॥ १३ ॥
नहिं समुख किसी के आंख जोर। इम चले जाति दुरगयाणि ओर।
पहुंचे समीप थल रुचिर भौन। सभि कीनि वंदना औनि औनि[5] ॥ १४ ॥
पूजक सु विप्र बैठ्यो सथान। दे प्रथम बंधाई धुज महान[6]।
चंदन सुगंधि धूपनि धुखाइ। बड फूल माल सुदर चढाइ ॥ १५ ॥
पट पाट[7] को सु चेला बिसाल। धरि चंडि उपर जो रंग लाल।
गन पूंग नालीअर[8] सो चढाइ। हरखंति कीनि सभि जगत माइ ॥ १६ ॥
कीनस कराहु तहिं बांट दीनि। गन लोक संग सभिहूनि लीनि।
दिज पाठक तिन को दरब देय। शुभ बसत्र मधुर भोजन अचेय ॥ १७ ॥
सभि को प्रसंन करि ह्वै प्रसंन। कहिं 'मात भगवती धंनि धंनि'।
इक बार कीनि जैकार बोल। पुन हटे नगर दिश बांधि टोल ॥ १८ ॥
बजियंति वाज सुनियंति दूरि। दिजियंति[9] दान दीनान भूर।
गावंति गीत धरि मोद चीत। पुरि मैं प्रवेश करि वंस रीति ॥ १९ ॥
घर आनि अधिक सनमान कीनि। बहु करि कराहु सभि पान दीन।
बधाई सहत आशिख उचार। 'श्री हरि गोबिंद की बय उदार' ॥ २० ॥
कंन्या हकारि दीनसि अहार। शुभि बसत्र बिभूखन देय चारु।
तिन को प्रसंन कीनसि महान। सभि दे असीस म्रिदु वच बखान ॥ २१ ॥
दिज घर जु पाठ करते प्रबीन। तिन को प्रसंन करि दरब दीनि।
सभि अपर जाति जाचिक जि आइ। सनमान साथ तिन धन दिवाइ ॥ २२ ॥

दोहरा

भयो कुलाहल गुरू घर लेनि देनि की भीर।
सुत पर वारति दरब बहु बखशति सुंदर चीर ॥ २३ ॥

---

1. बाजे। 2. तूती। 3. छोटा नगाड़ा। 4. डफली। 5. धरती पर झुक कर। 6. ब्राह्मणों के हाथों पहले ध्वजा बंधवाई, भाव दुर्गा मन्दिर पर ध्वजा चढ़ाई। 7. रेशमी कपड़ा। 8. सुपारी और नारियल। 9. देते हैं।

पाधड़ी छंद

उतसाह अधिक गुर घर करंति। सिख मिलहिं आइ पूजा चढंति।
नरनारि सभिनि महिं जसु बिसाल। मिलि सकल कहति सुखदा रसाल ॥ २४ ॥

पुन खुशी होति निति प्रति महान। दिन प्रति कराहु हुइ करहिं खान।
अरदास होति बांछति जु कोइ। करुनानिधान पूरंति सोइ ॥ २५ ॥

सभि देश देश महिं तजि मसंद। गुर कार चली आवहि बिलंद।
सिख मुक्खि तिनहुं सिरुपाउ देति[1]। बहु संगि संगतां सोइ लेति ॥ २६ ॥

देशनि बिदेश बडि टोल बांधि। धन ले पहुंच गुर को अराधि।
अति दुलभ पदारथ आइ पास। अरपंति दीन हुइ दरब रास ॥ २७ ॥

हुइ दीप माल संक्रांत मेख[2]। सिख संगति तबि आवहि विशेख।
गुर तीर भीर भरि जाइ भूर। इक दरशन हित आवहिं जरूर ॥ २८ ॥

सभि घटनि जानि गन सिक्खय् आइ। बांछति सु देति आनंद उपाइ।
उपदेश देति सतिनाम केर। सिमरंति सिक्ख शकती बडेर ॥ २९ ॥

'तजि काम क्रोध मद लोभु मोहु। अपमान मान इक रसहि होहु।
हौं मैं निवारि भाणा सु मंन। प्रभु कर्यो जानि नित रहु प्रसंन ॥ ३० ॥

नहिं अपर कोइ दुख सुख जु देय। करतार पुरख तिस नाम लेय।
अंन्याइ करति नहिं कबहुं जोइ। सभि जथा जोग क्रित करहि सोइ ॥ ३१ ॥

अस दीन बंधु तिस करहु मीत। पुन चिंत छोरि धरि नाम चीत'।
इस भांति देति उपदेश सार। उर धरहिं जु नर तिस भे उधार ॥ ३२ ॥

सिख करामात जुत मे कितेक। नहिं तजहिं गुरू पग धरहिं टेक।
अंम्रित बधीक जबि साद पाइ। अस कौन मूढ तहिं त्याग जाइ ॥ ३३ ॥

सिख रहै पास सेवंति सेव। गुर लखैं सकल देवा न देव।
उर हरख शोक जिनके न लेश। नर रूप सु नट ज्यों काछ वेस[3] ॥ ३४ ॥

नितप्रति प्रताप होवति बिसाल। जिन बडे भाग नित रहति नाल।
धन ब्रिंद आइ नहिं छूवति हाथ। सभि दें लगाइ उपकार साथ ॥ ३५ ॥

सुनि जसु बिसाल द्रोही जू कूर। बिन अगन जरति दुख पाइं भूर।
दुरबुद्धि मूढ बिन हेतु द्रोह। मतसर महान करि निफल क्रोह[4] ॥ ३६ ॥

---

1. मुख्य या प्रधान सिक्खों को 'सिरोपाउ' दिए। 2. वैशाखी, मेष-संक्रान्ति। 3. गुरु जी ने नर की भांति मनुष्य रूप बनाया है। 4. क्रोध।

को कहै तिनहुं के संग जाइ। 'तजि मान क्यों न पग परहु आइ।
उर अनंद लहहु दुख ह्वै न कोइ। सगरे पदारथनि लेहि सोइ' ॥ ३७ ॥
क्या करहि जंतु जिन के न भाग। जस सुनति जरति उर हीन आग[1]।
त्यौं त्यौं प्रताप गुर को बधंति। किस जतन सूर मूरख छपंति[2] ॥ ३८ ॥
पुरि रामदास के होइ भीर। बहु बसन लागि लखि गुरनि तीर।
सिख-मन-बिकार-म्रिग तिनहुं सिंह। अस गुरू दरस संतोख सिंह ॥ ३९ ॥

दोहरा

कुछक दिवस बीतति भए गुर को इसी प्रकार।
सुनि श्रोता आगल कथा दे जु पदारथ चार ॥ ४० ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सीतला पूजन' प्रसंग बरननं नाम चौदशमो अंशु ॥ २४ ॥

---

1. बिना अग्नि के ही मन में जलते हैं। 2. मूर्ख किस प्रकार सूर्य को छिपा सकते हैं ?

अंशु १५

बिप्र बिख दैन प्रसंग

दोहरा

लघु दुंदभि दुइ समैं मैं बाजति गुर के पौर ॥
सबद नफीरन को मिलहि, गाइं सबद सिरमौर ॥ १ ॥

निसानी छंद

बजहि कुलाहिल होति है मंगल उपजंते ।
पतनी प्रिथीए की सुनै उर शोक ब्रधंते ।
नहिंन बडाइ सहि सकहि दुख प्रापति भारी ।
नहिं पूरी मत भावनी दुषटां जो धारी[1] ॥ २ ॥
अनिक उपावनि चितवती चिंता गलतानी ।
बस न बसावहि बुरे पर[2] दुरमती अयानी ।
जतन बाद ही जाति है नहिं पूर्यो काजा ।
अबि दिनप्रति बहु बधति है सभि रीति समाजा ॥ ३ ॥
तसु लायक सभि रीति ते सुन्दर बल भारी ।
कितिक बरख महि होइ है सुध लेहि संभारी ।
गुरता रहि है तिनहुं ढिग कुल चलहि अगारी ।
हम छूछे जिस भांति, तिम संतती हमारी ॥ ४ ॥
कहां करहिंगे बापुरे जाचहिं घर जाई ।
रलीआं[3] पिखहि शरीक की दीरघ दुख पाई ।
अबि तो थोरे जतन ते हुइ आवति काजा ।
हरि गोबिंद इक हते ते सगरे सुख साजा ॥ ५ ॥
लघु दरखत जबि उगति है बल अलप उखारे ।
गाढो होवहि मूल ते नर लगि तबि हारे ।
इत्यादक चिंता करहिं निस बासुर सोऊ ।
जिम पपीलका सैल को चहि भगनति कोऊ ॥ ६ ॥

---

1. दुष्टों की धारणा अभी तक पूरी नहीं हो सकती थी । 2. बुरा करने को वश नहीं चलता । 3. रंग-रलियाँ ।

इक दिन प्रिथीआ वैठि करि निज पतनी पासू ।
करति बडाई आपनी सुख सहत बिलासू ।
अरजन गुरु कहावतो मम पद सिर धारे ।
किम सिख हमारे तांहि के हुइं नंम्रि अगारे ।। ७ ।।

जो सिख है शुभ मती जुति मोहू कहु मानै ।
करामाति साहिब लखै गन भेटनि आनै ।
बांछति पावहिं कामना बहु कहति सुनाए ।
अमुक सथल जहिं बिखम थो तहिं भए सहाए[1] ।। ८ ।।

इम सुनि कै करमो खिझी क्या करति बडाई ।
एक सल्ल छाती ठुक्यो सो नहिं निकसाई ।
जतन अनेकनि करि थक्यो सभि बाद गए हैं ।
लखहु न संकट अति वडे नित ब्रिधति भए हैं ।। ९ ।।

प्रथम भन्यो तुम वाक को-सुत नहिं उपजै है ।
कूरो भयो[2] न कछु फुरयो अबि सो मुदतैं[3] है ।
गुरता हमरे आइ है, सो भी नहिं होवा ।
चहति हुतो-हति होहिगो-अबि म्रिखा[4] सुजोवा ।। १० ।।

जतन धाइ के पठन को तबि भयो सु बादू ।
प्रान बिनासे तिसी के बालक अहिलादू ।
बहुर सरप कै त्रास ते जीवति ही जोवा ।
पशलबध के वेग ते तिसकों हति होवा ।। ११ ।।

कह्यो निकसि है सीतला सिस प्रान बिनासै ।
सकल अंग सुन्दर रहे कुछ बिघन न तासै ।
इह सभि तुमरे वाक थे क्यों न सच थीवे ।
जिसहि चहिति संघारिवे बिन रूज सो जीवे ।। १२ ।।

जिसकी चिंता राति दिन बासहि उर मेरे ।
धूनी सम छाती धूखति रिपु घाती हेरे ।
अपन बडाई बाद ही किम आह सुनावैं ।
जिसते सगरी कुल दुखहि सो चीत न आवै ।। १३ ।।

सुनि प्रिथीए धीरज दई बहु बिधि समुझाई ।
बचे प्रान तिस पुत्र के बहु करे उपाई ।

---

1. अमुक स्थल पर जब कष्ट पड़ा था, तो सहायक हुआ था । 2. झूठा निकला । 3. हर्षित हैं । 4. मिथ्या ।

पाठ करे बहु चंडि के दिज ह्वै समुदाई ।
दान दीनि अनगिनति ही मम बच निफलाई ॥ १४ ॥

तऊ सुनहु मम बाक को तै चहि तिह हाना ।
सो कारज मैं करहुंगो बचहैं नहिं प्राना ।
प्रथम जतन सभि बाद भे इहु होइ न बादू[1] ।
पहुंचहि जमके धाम को तुझ हुइ अहिलादू ॥ १५ ॥

सल्ल्य उखारों बंस को[2] गुरता हम लैहैं ।
देश विदेशनि सकल ते पूजा करवै हैं ।
बेदी तेहण बंस महिं भल्लयन के नांही ।
गुरता सोढनि के अहै हम तीनहुं मांही ॥ १६ ॥

महांदेव भोरो अहै नहि चाह करंता ।
अरजन हुइ बिन पुत्र ते अधिकै दुखवंता ।
वैस बिते तन बिनस ह्वै इसथिर नहिं कोई ।
पुन हम ही गुर होहिंगे को दुतिय न होई ॥ १७ ॥

तजहु चिंत उर हरख धरि लखि सचु मम बानी ।
बिख दै करि बालक हतौं सभि के अगवानी ।
बिप्र खिडावा[3] इक अहै हरि गोविंद केरा ।
दे करि दरब लुभाइहौं मानहि बच मेरा ॥ १८ ॥

सुनि करमों इस जतन को जान्यो हति होवै ।
सल्ल रिदे चिरकाल को इस बिधि ते खोवैं ।
करि मसलति मोदति उठे[4] हरि चिंत महानी ।
जान्यो कारज हुइ गयो हरिगोविंद हानी ॥ १९ ॥

इक दुइ दिन बीते जबहि कुछ अवसर पायो ।
परी राति पठि दास को सो बिप्र बुलायो ।
सनमान्यो म्रिदु बैन ते निज निकट बिठायो ।
'शुभ सुभाव तेरो अहै हमरे उर भायो ॥ २० ॥

हम देखति हैं निताप्रति बहु सेव करंता ।
रात दिवस बिचरति रहैं इत उत हितवंता ।

---

1. पूर्व-यत्न तो निष्फल हुए, यह व्यर्थ नहीं जायेगा । 2. अपने कुल की इस चुभन को सदा के लिए दूर कर दूंगा । 3. बालक खिलाने वाला ब्राह्मण । 4. मंत्रणा करते एवं प्रसन्नता प्रकट करते हुए ।

तोहि राखिबे पास को चित चहति हमारो।
करवावहिं गुज़रान को नित रखहिं सुखारो ॥ २१ ॥
श्री अरजन तुछ देति हैं ठाने बडि सेवा।
नहिं परखति तुझ किरत को हम जानहिं मेवा'।
बिप्प्र भन्यो 'सुनि गुरु जी ! चाहति गुज़राना।
जु कछु कहहिं कारज करौं आलस बिसराना ॥ २२ ॥
अपर थान नहिं जीवका मैं भयो खिडावा।
जाग्रति राखौं गोद महिं बहु करि परचावा।
खरो फिरति हौं सदन महि जंघा थकि जै हैं।
राखति उरध उठाइ कै[1] नहिं बैठन दैहैं ॥ २३ ॥
दीरघ थूल सरीर है जिस भार घनेरा।
करौं खिलावनि गोद लै परचाइ बडेरा।
अपरनि ढिग नहिं जाति है रहि कोछर मोरी।
सुख सौं राखति खेलते, जाति न कित ओरी ॥ २४ ॥
पुन प्रिथीआ कहिबे लग्यो 'कारज इक मेरा।
सिद्ध होति सो तोहि ते लिहु धन बहुतेरा।
एक बारि करि लेहिं जे सुख हुइ बय सारी।
करन सुखारो तोहि को, अपरनि कहु भारी' ॥ २५ ॥
बिप्प्र कह्यो 'अस काज क्या मो ते बनि जावै।
जिस ते दरब समूह दिहु तुमरे चित भावै।
क्यों न करहुं गो मैं तिसै जिस ते सुख पाऊं।
अपने हित सगरे चहति क्या रंक जु राऊ' ॥ २६ ॥
कहि प्रिथीआ 'प्रथमे सपथ कर लेहि जनेऊ।
मैं भी उचरौ सपथ को तुझ को धन देऊं।
मोर तो चहुं श्रोन ते सुनि है नहिं पंचो।
दोनो को बिसबास हुइ संसै नहिं रंचो ॥ २७ ॥
सपथ करनि ते होति द्रिढ़, संदेहि न होवै।
धीरज उपजै दुहनि के सिध कारज जोवै।
लेहु जनेऊ हाथ गहि नहि कहूं बखानो।
तन मन ते बल बुद्धि ते तुमरो हित ठानो' ॥ २८ ॥

---

1. ऊपर उठाए रखता हूँ।

सुनति बिप्र ने बच कहे गहि हाथ जनेऊ।
'गोप बात जिम तुम कहो, नहिं कहूं कहेऊ।
जे मुझ ते हुइ आइ है तो मैं करि दैहो।
नांहि त इसकी सपथ मुझ नहिं आन सुनै हों'॥ २९॥

सुनि प्रिथीए धीरज भई निज कपट सुनावा।
'हे दिज ! अबि उपकार करि धन लिहु मन भावा।
हरिगोबिंद को देहु बिख इह कारज मेरा।
सल्ल्य रिदै करता करक दुख[1] दिख घनेरा॥ ३०॥

श्री अरजन सुत बिन रहै, गुरता हम पावहिं।
नांहि त, इन के वंस ते क्यों हुं न कर आवहि।
लेहु रजतपण पंच सै हम ते ततकाला।
सरब आरबल[2] लगि रहहु सुख देहिं बिसाला'॥ ३१॥

सुनि दिज ने तूषनि करी पुन प्रिथीआ भाखै।
'मोहि जनेऊ की सपथ धन कह्यो न राखै।
अपर रीति खातरजमा[3] जिम होवहि तेरी।
हम नहिं कूर बखानते, क्यों चिंत घनेरी॥ ३२॥

इहु करनो तुझ को सुगम नित रखहिं उछंगा।
किसहूं बिधि मुख दीजीए नहिं देखहि गंगा।
अपर न को रखवार है तुझ पर बिसवासा।
दे बिख म्रितक करीजीए कहि-सूल प्रकाशा[4]॥ ३३॥

कोइ न जानै बिख दई सभि सूल पछानहिं।
तो कह नहिं किह भांति डर हम पख को ठानहिं।
जे कोई तव नाम ले डांटहु वहु तांही।
नतु आवहु हमरे सदन किस देवहिं नांही[5]॥ ३४॥

दरब लोभ ते फिर गयो दिज मूढ़ वडेरा।
कह्यो 'गंग सुधि नित रखै लखि निज संझ सवेरा।
नहीं अपर की चौकसी लागे निज काजा।
घर अंतरि मैं राखतो जहिं सकल समाजा'॥ ३५॥

---

1. पीड़ा पहुँचाता है। 2. सारी आयु। 3. विश्वास। 4. कहना कि पीड़ा उठी है। 5. किसी तरह भी (उनके हाथ) नहीं देंगे।

कहि प्रिथीआ 'बल वुद्धि करि छल ठानहु ऐसे ।
घर महिं बिख दिहु लखै नहिं गंगा किम जैसे ।
पुन तुझ को किछु डर नहीं आवहु मुझ पासू ।
इस प्रकार दिज द्रिढ़ कियो सभि दे भरवासू ॥ ३६ ॥
अपर बहुत मसलत करी कहिं लगि लिखि सोऊ ।
कपट करनि कहु पाप मे पापी बड दोऊ ।
बहुत बात परपक्य करि दिज गुर घर आवा ।
प्रिथीए ने जो बिख दई सो सिर धरि ल्यावा ॥ ३७ ॥

दोहरा

पाहन सों पीसनि करी अति सूखम तिस राति ।
पुरी बांधि[1] सिर महिं धरी उठिकरि दैहौं प्रात ॥ ३८ ॥
रैन सैन करि परि रहे ऐन[2] गुरु के विप्प्र ।
प्रात होति जागति भए कर्‌यो पाप चहि छिप्प्र ॥ ३९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'बिप्र बिख दैन', प्रसंग बरननं नाम पंचदशमो अंशु ॥ १५ ॥

---

1. पुड़िया बाँध कर । 2. अयन, घर ।

अंशु १६
बिख दैन प्रसंग

दोहरा

भई प्रात उठि बिप्प्र ने हरि गोबिंद ले गोद।
इत उत लग्यो खिलावने गंगा दिखति प्रमोद ॥ १ ॥

निसानी छंद

दासी दधि ल्यावति भई बहु मधर मलाई।
अलप कटोरा रजत को जिस महि नित खाई।
तबि दिज निज कर मों लियो सभि आंख बचाए।
घर ऊपर घर[1] गयो तहिं नहिं अपर दिखाए ॥ २ ॥
धर्‌यो कटोरा ताक महिं सो पुरी निकारी।
दधि महिं दीनसि झारि करि बिच अंगुरी मारी।
नीक्रो दियो मिलाइ कैं नहिं लखी अहि न्यारे।
धरकति छाती त्रास करि, इत उतहि निहारे ॥ ३ ॥
बिप्प्र छिप्प्र को करति भा गहि हाथ कटोरा।
लग्यो पिलावनि ऊपरे करि मुख की ओरा।
श्री गुर हरिगोबिंद जी सभि अंतर जामी।
नाक एंठ फेर्‌यो बदन लखि कै दिज खामी[2] ॥ ४ ॥
दिज ने बल ते मोर मुख[3] किय समुख कटोरा।
बाक क्रूर ते झिरकतो 'हाऊ इत ओरा[4]।
आवहि गहि लै जाइगो नातुर दधि पीजै।
अधिक मधुर है स्वाद मैं नहिं देरि करीजै' ॥ ५ ॥
हरिगोबिंद श्री गुर तबै जान्यो मुख लावै।
छल ते बल को करति है बिख द्रुजन पिलावै।
निज कर सो बिख दधी मिलि दीनो सु हटाई[5]।
निकट न मुख को करति मै इत उत फिरि जाई ॥ ६ ॥

---

1. ऊपर की छत पर। 2. ब्राह्मण की कुटिलता। 3. द्विज ने बल-पूर्वक मुख को मोड़ कर। 4. इस ओर हौआ है। 5. अपने हाथ से विष मिली दही हटा दी।

बिप्र क्रोध को करि तबहि ताड़ति झिड़कंता।
गहे हाथ द्वै हाथ इक बल सकल करंता।
दुतिय हाथ सों दधि गह्यो मुख बल करि लायो।
नेत्र दिखावति लाल करि बड त्रास उपायो॥ ७॥

हरि गोबिंद मुख बल धरे चिंघार पुकारी[1]।
शोर कर्‌यो ऊचे महां रोदति रव भारी।
दधी लगाई अधर सों दिज अधम सुजोरे[2]।
तऊ शबद अति सिस कर्‌यो इत उत मुख मोरे॥ ८॥

कर पकरे करि जोर सों दधि-दिशि मुख फेरै।
'क्या होवति है तोहि को' ऊचे इम टेरै।
'जे नहि पीवति अबि भला आवति है हाऊ।
गहि लेवहि, छोरहि नहीं, मैं तो चलि जाऊं'॥ ९॥

फेर घेर बहु करति है कबिहूं परचावै।
हाथ ग्रीव द्रिढ गहि रह्यो दधि समुख लिजावै।
एक बारि किम पीय ले चाहति चित मांही।
बहुर करहि रोदन अधिक मुझको डर नांही॥ १०॥

कंपति कर त्रासति रिदा धीरज सभि नाशा।
रुदति पसारति बदन जबि दधि करि मुख पासा।
पावौं, किमहुं लंघाइ ले उदरंतरि जावै[3]।
पुन चोरी छपि जाइगी कारज बनि आवै॥ ११॥

रुदति पुकारे ऊच तबि दे दूरि सुनाई।
श्रोन परी धुनि गंग के बैठी जिस थाईं।
आतुर शवद दुखार तो जो सुन्यो न जाई।
दौरति श्री अरजन निकट तूरन चलि आई॥ १२॥

'हरिगुविंद कितरुदति है बहु ब्याकुल बानी।
सुनियति ऊच पुकारतो अति संकट सानी'।
श्री गुर भाखति 'प्रात ते[4] दिज गोदी लीनो।
ऊपर ले घर महिं गयो कछु जाइ न चीनो'॥ १३॥

---

1. चीख मारी। 2. अधम द्विज ने बल-पूर्वक होठों से दही लगा दी। 3. पेट में पहुँच जाये। 4. प्रातः से।

हौल पिख्यो उर गंग के गुर दास पठायो ।
'छिप्प्र बिलोकहु जाइ करि कैसे रुदनायो' ।
दौरति दास पहूचिओ जहिं एकल ठांढे ।
हाथ बिखै दिघ लै रह्यो छोरे कर गाढे[1] ।। १४ ।।

'रुदनायो किम बिप्प्र ! तुम गुर सुनि करि पूछा' ।
कहति सु 'मै दधि प्यावतो' बोलति छबि छूछा[2] ।
'नहिं पीवति इम जानि कैं झिरक्यो डरपायो ।
तूं भी पिखि अबि खरो रहु' पुन मुख ढिग ल्यायो ।। १५ ।।

हाथ साथ ते हटकि कै पिखि नाक चढ़ायो ।
देखि दास निज नैन ते गुर तीर बतायो ।
बहुर पठ्यो 'अबि जाइ कै आनहुं हमपासे ।
क्यों नहिं, पीवति दधी को बड रुदन प्रकाशे ।। १६ ।।

दधि समेत आनहुं दुहनि कया कारन होवा ।
अपनि हदूर खवाइ है, देखहु किम रोवा' ।
दास गयो तिन पास पुनि आने गुर तीरा ।
बिनां लखे दिज मूढको बिनस्यो सभि धीरा ।। १७ ।।

श्री गुर अरु गंगा खरी नंदन को हेरा ।
झलकति नेत्र बिसाल जुग जल भर्यो घनेरा ।
मुख ब्याकुल कुछ अधर सो दधि लागि रह्यो है ।
सुबकति रोदति अधिक ही बहु कषट लह्यो है ।। १८ ।।

पित की दिशा बिलोकते अजमत[3] ते जानो ।
दुषट बिप्प्र बिख देति है समझावति मानो ।
पकर बिखै मन गंग को[4] कछु कारण भारी ।
इस प्रकार खोटो रुदन नहिं कीनि अगारी ।। १९ ।।

श्री अरजन सभि जानि कै बूझ्यो दिज तांई ।
'क्यों नहिं पीवति दधी को बालक रुदनाई' ? ।
बिप्प्र भन्यो 'नित पियत जिम तिम आज पिलावों ।
करति हटावनि हाथ ते जबि मुख ढिग ल्यावौं ।। २० ।।

1. बलशाली हाथ ढीले कर दिए । 2. (यह कहते हुए) मुंह का रंग उड़ गया ।
3. प्रताप । 4. गंगा (माता) के मन में विचार उठा ।

मुख फेरति नहिं समुख ह्वै मैं कहि डर पायो।
रुदन पुकार अचानकै किम नहीं लखायो[1]।
भन्यो गुरु ने सुनि सकल 'अबि निकट हमारी।
दधी पिलावहु सहिज सों हुइ सिसु अनुसारी'॥ २१ ॥

इम श्री गुर के बाक सुनि दिज उर हरखायो।
देवौं बिख इन देखते अवसर शुभ पायो।
कपट न मेरो अव लखहिं शुभ कारज होवा।
जानहिंगे म्रितु सूल ते दधि सभि ने जोवा॥ २२ ॥

तवि धीरज धरि दधी को मुख के ढिग ढोवा।
पीवहिंगो अबि, म्रितु होइ डर उर ते खोवा।
भ्रिकुटी कुटल चढाइ करि द्रिग क्रूर दिखाए।
हटक्यो बासन हाथ ते[2] रिस कुछ उपजाए॥ २३ ॥

हरिगुबिंद जबि इम करी श्री अरजन जानी।
कपट दधी महिं कुछ कर्यो दिज दुरमति ठानी।
लेकरि अपनी गोद महिं प्रिय नंद बिठायो।
द्रिग पौंछति दे प्यार को मुख मधुर अलायो॥ २४ ॥

दिज करि ते दधि कर लई प्यावन पुन लागे।
हरखति दिज भी कहति है 'करीअहि मुख आगे'।
जबहि कटोरा ढिगबदन श्री गुर ने कीनो।
नीच बिलोचन करि रहे हटक्यो, नहिं पीनों॥ २५ ॥

दिखि दिज बिसमै हुइ रह्यो अजमत इन मांही।
दधी सदोष पछानि कै लावति मुख नांही।
कुछ हुइ जाइ न अस[3] अबै मन कपट उघारै।
त्रसति भयो पुन मन बिखै बहु गटी[4] बिचारै॥ २६ ॥

अलप जाति[5] कूकर हुतो पिसता कहिं जांही।
जिस प्रयंक पर गुर थिरहिं तिस तरै रहाही।
वहिर चलति कित संग हुइ पग पंकज तीरा।
रहति हदूर सदीव ही जिह भाग गहीरा॥ २७ ॥

---

1. क्यों अचानक रो पड़े, यह नहीं दीख पड़ता। 2. बरतन हाथ से हटा दिया।
3. ऐसी कुछ न हो कि (मेरा कपट खुल जाय)। 4. युक्ति। 5. छोटे कद की जाति वाला कुत्ता।

कर्‌यो हकारन स्वान को परयंक तरे है।
निकस्यो पूंछ हिलावतो द्रिग समुख करे है।
तिसके बासन गुरू ने दधि कर ते पाई।
सूंघति ही तिसते हट्‌यो मुख तनक न लाई ॥ २८ ॥
अज़मत गुर के स्वान महि जूठो नित खैहै।
बिख जानी अचवी नहीं गुर को समझै है।
सिर हिलाइ खरकाइ कै अपने जुग काना।
बिख समेत इहु दधी है मैं करौं न खाना ॥ २९ ॥
अपगति मेरी होइगी, खोटी म्रितु पावौं।
दुषट दिजाधम की क्रित कैसे इस खावौं।
क्रिया करति को परख कै गुरबाक अलाए।
'तूं हमरे नित संग हैं इत उत सभि थाएं ॥ ३० ॥
नहिं बिछरहिं शुभ होइ गति संदेह न कीजै।
बिदतहि कपट जि दुषट ह्वै दधि अबि सभि पीजै'।
इस प्रकार गुर ते सुनति तजि म्रितु को त्रासा।
बिन बिलंब सभि ही दधी पी करि त्रिपतासा ॥ ३१ ॥
बैठि गई गंगा निकटि दिज दुषट बिठावा।
अपर दास सिख पास गन बैठे तिस थावा।
हेरति बिसमति चित समसत कारण क्या होई।
बिप्प्र बदन तबि पीत भा सभि धीरज खोई ॥ ३२ ॥
धरा प्रवेश्यो जाइ नहिं, नभ उड्डयो न जाई।
कपट खुटाइ क्रिती मम सभिहूं लखि पाई।
धरि मुख मौन बिलोकते बोलति नहिं कोई।
अंतरजामी धंनि गुर उर सभि सुधि होई ॥ ३३ ॥
घटी[1] एक महि स्वान सो गिर परयो जु ठांढा।
तरफति मारति पगनि कहु संकट बड वाढा।
लांगुल ऐठति[2] बैठि कबि पैठति घर जाई[3]।
शबद करति कबि आइ कै आगै लिट जाई ॥ ३४ ॥
लाल बिलोचन हुइ गए व्याकुलता पाए।
इस प्रकार संकट लह्यो सभि के अगुवाए।

1. एक घड़ी समय में ही। 2. दुम अकड़ाता। 3. घर में घुस जाता है।

केतिक चिरमहिं मरि रह्या मुख दीनि पसारे।
दंत निकासे वहिर को गिर गुरू अगारे ॥ ३५ ॥
पग पंकज तबि आपतो कूकर के छवावा।
गयो बिकुंठ बिबान[1] चढ़ि उत्तम पद पावा।
सभि देखति विसमाइगे करि हाहाकारा।
हरि गोविंद उबरे भले जन सुखद उदारा ॥ ३६ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितीआ रासे 'बिख दैन' प्रसंग बरननं नाम खोड़समो अंशु ॥ १६ ॥

1. देव-विमान।

अंशु १७

बिप्र स्रितक जीवालबो प्रसंग

दोहरा

जानि खोट दिज दुसट को श्री गुर सहि न सकाइ ।
क्रोध कर्यो देखति भए जबहि स्वान स्रितु पाइ ॥ १ ॥

कबित्त

'जैसो दुख पायो स्वान द्रुजन महान दिज ! भयो प्रान हान अबि हेरति अगारी तोहि ।
तैसे पाइ संकट बिसाल तातकाल फल, मूरख अजान ! जानि तेरो तन नाश होहि' ।
ऐसे गुर बैन भने सुने श्रोन मूढ बिप्र, उठयो सूल तेही छिन गिर्यो धर भयो मोहि[1] ।
लिटति करति हाइ हाइ, न सहाइ अबि पर्यो अरिराइ[2] दुख पाइ जो धरति द्रोहि ॥ २ ॥
एक घटी सूल भयो, संकट बिसाल दयो, फेर मरि गयो हाथ पाइनि पसारि करि ।
मरे दोऊ हेरि करि, बिसमे बडेर सभि कहैं बाक 'प्रभू ने बचायो हित धारि करि ।
पापी इन कीन कहां ठानि कै कपट महां बिख को पिलाइ रहा, पीओ न, पुकार करि ।
अंस जगदीश की शरीर धर्यो आइ करि, नंदन तुमारो करामात को उदार करि ॥ ३ ॥
आप अवतार तुम सम जायो आतमज, अपर जि होति मारि देति न बचति है ।
लेगयो इकाकी, बिख पाइ के दधी को मूढ ओज ते पिलाइ रह्यो, क्यों हूँ न अचति हैं[3] ।
श्री हरिगोविंद कीनि जतन बिलंद आप, मार्यो महां पापी, पाप पावक तचति है[4] ।
आज भी जनम नयो बडे भाग जुत उधरिओ कपट कैसे मूढ ते पचति है[5] ॥ ४ ॥
कीनि क्यों कुकरम अधरमी भरम करि कौने सिखलायो बिख दै कै सिसु मारनो ।
महां दुरबुद्धी नहीं पाप की पछान करी, दिज को जनम, पै चंडार क्रित कारनो[6] ।
जैसे काज कर्यो तैसो पायो है बिलंब बिन, मूरख महान कीनि काहू ने सिखारनो ।
पर्यो है कुरूप हेरि श्री गुरू जी तिसी बेर शबद बनायो फेर कीनसि उचारनो ॥ ५ ॥

---

1. पीड़ा उठी और मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़ा । 2. चीत्कार करता हुआ । 3. किसी भी प्रकार नहीं पिया । 4. पापी पाप की अग्नि में तप्त होता है । 5. मूढ़ से क्यों कर (कटप) छिप सकता है । 6. जन्म से द्विज किन्तु कृत्य से चण्डाल था ।

(श्री मुखवाक भैरउ महला ५)

लेपु न लागो तिलका मूलि ।
दुसट ब्राहमणु मूआ होइकै सूल ॥ १ ॥
हरि जन राखे पारब्रहमि आपि ।
पापी मूआ गुर परतापि ॥ १ ॥ रहाउ ॥
अपणा खसमु जनि आपि धिआइआ ।
इआणा पापी ओहु आपि पचाइआ ॥ २ ॥
प्रभ मात पिता अपणे दास का रखवाला ।
निंदक का माथा ईहां ऊहा काला ॥ ३ ॥
जन नानक की परमेसरि सुण अरदासि ।
मलेछु पापी पचिआ भइआ निरासु ॥ ४ ॥ ६ ॥

कबित्त

पापी दिज मर्‌यो, सूल कर्‌यो ईश महांराज पर्‌यो फल भर्‌यो दुख, जीवबेकी हानकीनि[1]।
जैस मात पित निजपुत्र को वचाइ लेति तैसे निज दासको भयो है रखवार चीनि ।
निंदक हमारे जे शरीकनि कलंक महां, कारो मुख कारस पखारे ते न होइहीन[2] ।
दिनोदिन ह्वै सदाई प्रभु ने लगाई अस कुल ते न जाइ अपजस यों कमाइ लीनि ॥ ६ ॥

दास सिक्ख ब्रिंद देखि निंदति अशेख तस-कलुख बिशेख कीनि, कौने सखलाइ करि ?।
कांके बिन प्रेरे क्यों करति दिज लोभ बिन ? सभिनि को मन इम आवै बिसमाई करि ।
श्री हरिगोबिंद चंदआरजा बिलंद इन, कौन प्रान भंग सके प्रभू जे सहाइ करि ।
दासन के गोप[3] तास नंद को उबारो क्यों न, भए अवतार गुरु नानक जी आ करि ॥ ७ ॥

कूकर बिलोक करि क्रिपा को करति गुर, गुन को उचर करि दासनि सुनायो है ।
रह्यो हम संग, जबि बैठति प्रयंक पर, तरे रहे पर, नहि अपर सिधायो है ।
पनही को पावति निहारति उठति चलै, खरे हेरि खरो रहै लांगुल हिलायो है
ऐसो मतवान स्वान दुलभ न आवै पान आग्या दीनि खफ्फन सो छित में दबायो है[4] ॥ ४ ॥

पर्‌यो दिज हेरि, फेर गंगा कर जोर कहै 'मर्‌यो इह पापी, पै प्रगट पाप भयो नाहि ।
कौन हेत बिख देय मार्‌यो चहै नद मेरो, यांको कौन काज होति ठानै पाप जिसी चाहि ?।
कैधो सिखलायो किन, बने जोऊ दुशमन, आगै उपतात कीनि, बसति वडाली मांहि ?।
निरनै भयो न एहि, सभि को संदेह रह्यो, गयो त्याग देहि को बताइदेहि बात याहि ॥ ९ ॥

---

1. मर गया । 2. काले मुँह की कालिख धोने से नहीं हटती । 3. 'रक्षक' से अभिप्राय है । 4. कफ़न डालकर धरती में दबा दो ।

आपके बचन ते उठ्यो है सूल, मर्यो एहि प्रभू जी, जिवावो, नहिं मारन करीजीये ।
एक दिज देहि दूजे खोइ है संदेह सभि, छल को बताइ देहि, बूझि इस लीजीए ।
सभि को प्रतीति आइ, देय गो सुनाइ, नहिं गोप को रखाइ, इस मुक्ख ते सुनीजीए ।
आपके शरीक बिन पाप अस करै कौन, तऊ ब्रिंद लोकन मैं दिज ते कहीजीए ॥ १० ॥

और सुनो बात, लोक निंदा को बखान करै बिप्प्र मार्यो धाम बिखै, भेद न सकैं गे जानि ।
धेनु दिज रच्छक है बिरद तुमारो भारो, छमो अपराध आप पापी पै क्रिपा को ठानि ।
सहज सुभाव है क्रिपालता बिशाल धरो, बिनै मेरी मानीए, सदीव तुम राखो मान ।
कर्यो जिम भर्यो तिम, मर्यो धरि पर्यो अबि डर्यो न शरीक टर्यो जर्यो न हर्यो
न मान[1] ॥ ११ ॥

गंगा के बचन सुनि बोले गुरु अरजन, 'पापी दंड देनि जोग दोष न पछान कोइ ।
बालक हतनि पुन निमक हमारो खाइ, फेर गुरु धाम को अदाइब न कीनि जोइ ।
ऐसो बडो कलमलधारी न गिलान मन[2], कौन जानै कैसे कीनि मूरख निलाज होइ ।
क्यों तूं इम बात कहैं बिप्प्र को जिवायो चहैं ? काषट मैं पाइ दहैं[3], लेहिफल म्रितु सोइ'॥ १२ ॥

गुरु बाक सुनिकै बखानी गंग बानी पुन, 'सुनि मैं कहानी कान बडे पुरखान की ।
तुम सों भनति न बनति महांमति आप, तऊ सु प्रसंग पाइ कहौं हठ ठानि की ।
दिज दोषवान होइ देहि को न दंडदेहि[4] अपर अनेक बिधि ठानै जिम जानि की ।
खोटनि को खोट प्रगटावैगो सु दिज जीवि यांते मेरी बेनती सु मानो तिय बान की' ॥ १३ ॥

श्री गुरु सु जानी, बिनै ठानी मन मानी, पुन मंत्र सतिनाम को पठ्यो है जल हाथ लीनि ।
छिरक्यो बदन पर सगरे शरीर फेर, जीव उठ्यो मूढ मति कपट जु गूढ कीनि ।
जैसे गाढि निंद्रा मैं सुपति चिरकाल हूं को जागि पर्यो तातकाल सारी सुधि तैसे चीनि ।
हेरे चहूं ओर बैठे नर परवार करि, सिमरी खुटाई, निज लोचन निवाइ दीनि ॥ १४ ॥

धारी उर शरम, अधरमी सो गुरू भनैं 'कैसे तूं भरम कै कुकरम कमायो है ? ।
लीनि धन धान, कीनि खानपान नीकी रीति, ऐसी बिपरीति बिखै किम तूं लुभायो है ?।
कौन काज तोहि होति, पाप को उदोति जबि, कैधों कुछ दीनि किनि पाप सिखलायो है ?।
साच ही बताउ, नहिं कीजीए वलाउ, मूढ छोर्यो तोहि मारबे को याने[5] बखशायो है' ॥ १५ ॥
सुनि कै दिजाधम समुख न करति डीठ, नीठ नीठ ऊपर को लोचन उठाइ है ।
कंपति सरीर, उर धीरजि न, त्रास महां भयो भयभीत कौन पीर उपजाइ है ।

---

1. (शरीक) आपका मान-हरण नहीं कर सका । 2. जिसके मन में अपने कुकर्म के लिए भी नफरत नहीं । 3. लकड़ियों में डाल जला दें । 4. दोषी ब्राह्मण को भी दैहिक दण्ड न दें । 5 इसने (भाव गंगा माता ने) ।

म्रितक ह्वै पर्यो तबि म्रितका लगी है गात, मुख में झगूर, सीस पाग ते नंगाइ है।
मानहु नरक ते निकासि के बिठायो अघी, पीत मुख लोटिवे ते भयो बिकलाइ है ।। १६ ।।
सूल ने संकट दीयो सूल ज्यों चुभे हैं तन, भयो अस सूल न बिलोक्यो जाइ पातकी ।
बोल्यो हाथ जोरि करि चोर सम घोर अघी, 'छोरते बतावौं बात भई जिम घात की।
प्रिथीए बुलायो मोहि, बोलि के लुभायो ध्रोहि ठानै वहुद्रोह क्रोह महांउतपात की ।
मेरे सनमान करि, मधुर बखान करि, सीछ्या यों महान करि बारता सुराति की[1] ।। १७ ।।
पंच से रजतपन देवौं एकबार गिन, फेर सुधि लेऊं तेरी सदा गुज़रान की ।
भावी तबि प्रेर्यो मोहि, मान लीनि भनी तिन, संखीआ मंगाइ करि दीन निज पान की[2] ।
ल्यायो मैं रगर. पुरी बांधि करि धरी सिर, भोर होति दधि मैं मिलाई हेत खान की[3] ।
मत मेरी हान की, द्रिड़ाई पाप ठान की, भ्रमाई यौं अजान की न कीनि बात स्यान की ।। १८ ।।
श्री हरि गोबिंद, करामात मैं बिलंद, जानि पान ते हटाइ, नहीं पान करी त्याग दीनि ।
देनि बिख कारन उचारन कर्यो है सभि, आपहो क्रिपाल छिमा छित के समान चीनि ।
लोभु की लहिर ने कहिर उपजायो उर, पतित उधारन को रावरि बिरद कीनि ।
बखशो खता को[4], कह्यो साच मैं पता को अबि, करो न भरोस वांको पाप मैं प्रबीन पीन' ।।१९।।

सवैया

श्री गुर ने सुनि साच भन्यो जबि होए क्रिपाल बखानति बैना ।
'कीनि खता जिनकी तुझने तिन आगे बिनै करि ह्वै मन दैना[5] ।
सो बखशैं शरनी परीए, अपराध असाधन, ते जिन भै ना ।
मात की गोद में बैठे बिराजति तांही के नाम ते ह्वै सुखचैना' ।। २० ।

श्री हरिगोबिंद की दिश ह्वै दिज बेनती वाक कहे समुदाई ।
'सेवक मैं सभि सेव करौं तुम, देवन देव सभै जगराई[6] ।
मैं मतिहीन कर्यो अपराध छमो प्रभु आप पर्यो शरनाई' ।
यौं कहिके पग पंकज ऊपर सीस धर्यो परिकै अगुवाई ।। २१ ।।

संमत श्री पित को चित जानि[7] दयानिधि बान[8] तवै हुइ आई ।
कीनि महांअपराध जिने बखश्यो बिनती सुनि के सहसाई[9] ।
नाथ ने हाथ पसार तवै तिह माथ धर्यो दुति साथ सुहाई ।
एक गरीब निवाज गुरु बिन आन के बीच कहां बडिआई ।। २२ ।।

---

1. यह आज रात की बात है । 2. अपने हाथों उसने संखिआ मँगवाकर दिया । 3. खाने के लिए । 4. मेरी भूल को क्षमा कर दीजिए । 5. दीन-मन होकर । 6. जग-स्वामी । 7. पिता की सम्मति जानकर । 8. दया के स्वभाव से । 9. शीघ्र ही ।

ऐसो बडो अपराध कर्यो जिन प्रानके हान लौ कीनि उपाई ।
पातक बालक घातक को पुनि अंन ते लौन गुरू घर खाई ।
सो ततकाल बिनै सुनिकै करि दीनो निहाल पिखैं समुदाई ।
एक गरीब निवाज़ गुरु बिन आनके बीच कहां बडिआई ।। २३ ।।

दोहरा

इस प्रकार बखश्यो सु दिज गुरू गरीब निवाज़ ।
मातपिता देखति अनंद अरु सिखदास समाज ।। २४ ।।

महिमा महां प्रमान ते महांपुरख सुखकंद ।
गुर घर महिं अवतार लिय श्री हरिगोबिंद चंद ।। २५ ।।

भयो नरन समुदाइ तहिं बैठि रहे परवार ।
बिसमहिं अधि दीरघ पिख्यो बखश्यो बहुर उदार ।। २६ ।।

'दाता होवैं अधिक ही जबै तनूं बल ज्वान ।
करहिं निहाल अनेक ही जो इन के बिदमान ।। २७ ।।

इत्यादिक कीरति करति भरति हरख उर बीच ।
और जतन कोई करहु किम हुइ इनकी मीच ।। २८ ।।

धाइ हती, पंनग हन्यो, दिज को कीन बिनाश ।
उलट परति है तिनहुं पर, बुरा जु चहिं करि आस ।। २९ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिथे द्वितिय रासे 'बिप्र भ्रितक जीवालवो' प्रसंग बरननं नाम सपतदशमों अंशु ।। १७ ।।

अंशु १८

प्रिथीआ गुर झगरन प्रसंग

दोहरा

सगरे सुनति प्रसंग को दिज मूरख चहूं ओर।
बोले श्री अरजन गुरु 'कीन जु तैं अघ घोर ॥ १ ॥

स्वैया

सो प्रथीए मुख पै कहि हैं तिह देहु मनाइ मनी जिम बानी।
पंच से देनि कहे तुझको, विख की जिम तांही ने सीखि सिखानी।
पाप मती जिसके नित है चित, ईरखा आगि में दाहि महानी।
संकट घोर घनो हुई देखति कीरति को सुनि कै सुख हानी' ॥ २ ॥
बिप्प्र कह्यो 'सुनि श्री गुर पूरन ज्यों तिसने मुझको समुझाई।
त्यों तिस आनन पै उचरौं, ममनाश कीओ अस सीख सिखाई।
मैं गुज़रान करौं तुमरे घर, भूर कलंक दीओ दुखदाई।
भावी ने प्रेरन कीनि बुरे महिं, दोनहु लोक मैं लीनि गवाई' ॥ ३ ॥

दोहरा

श्री अरजन दिज सों कह्यो 'महां मूढ क्या कीनि।
साहिबज़ादे मोल को पंच सहस करि दीनि ॥ ४ ॥
बहुर कह्यो 'संग दासि के धाम प्रित्थीए जाइ।
आनहु साथ हकारि के लेकरि हमरो नाइ ॥ ५ ॥

कबित्त

करो सनमान बोलि मधुर महान साथि आनो हम धाम को प्रसंनता उपाइ मन'।
गयो सुनि दास बैठो प्रिथीआ अवास जिस, सीस को निवाइ अभिबंदन सु कीनि तिन।
आपको हकारन करयो है गुरु अरजन, अबि ही उठीजै, चलि मिलीए बिलंब बिन।
सुनि के हरख करि, गमन्यो गुरु के घरि, मोहि साथ कौन ? बुझ्यो दास साथ भनि ॥ ६ ॥
मोहि को न सुधि कोइ ? पठ्यो चलि आयो इत ऐसे बात बोलति सो आयो गुर धाम को।
कोठे मैं विठायो दिज 'बोलीए न बाक तुम हमरे बुलाए बिन, बैठ इकजाम को'।

बिप्प्र ने अलायो, जिम आपने बतायो तिम करौं, बैठि रहौं जबि लेहुमम नाम को ।
तबि मैं छपी न राखौं, जथारथ सोई भाखौं, मुकर न देय हौं विगार्यो जिमु
काम को ॥ ७ ॥

इतने मैं प्रिथीआ पहुंच्यो गुरु पास आनि, हेत सनमान के उठे हैं कीनि बंदना ।
मधुर महान को बखानिकै बिठायो तीर, आप ते अधिक करि जानि दुख कंदना[1] ।
नंम्रि होइ बोले भ्रात हमरे बिसाल तुम, आदर सथान सदा कहैं हम मंद ना ।
द्वैष को न लेश लखि, आपते विशेष हम जानति अशेष तुम बनति बिलंद ना[2] ॥ ८ ॥

बडो भ्रात पिता के समान जग जानियत्ति, हित को करति, इही बारता प्रमान को ।
बैर मन ठाने तो हमारे संग होहि तेरो[3], बालक अदोष, नहीं मित्र शत्रु जानकी ।
खोटोकामु कीनि बिख दधी सों दिवाइ दीन, बिप्प्र को लुभ्भाइ लीनि प्रेर्यो दुर बान की ।
लाज न जहान की, न कीनि कुल कान की, न रीति दयावान की, न पाप की
पछान की ॥ ९ ॥

जम को न जान्यो न कलंक को प्रमान्यो, ह्वै अजान हित हान्यो[4], काज ठान्यो मति मंदको ।
राखे गुरु नानक सहाइ भए आन करि, तेरे मुख कालख लगाइ जिम चंदु को ।
मिटै न पखारी, दिनो दिन होइ कारी बहु, अपजस भारी दुख कारी लै बिलंद को[5] ।
हंसन के कीच, जिम कालमा कमल बीच, तिम बुधि नीच तेरी, करैं छंद बंद को[6] ॥ १० ॥

लाग्यो एक अंक ही[7] मुख तेरे अबि, रहै चिरकाल, दहै चित कुल सुनि सुनि ।
खोटो तुझ जानैं, मौन ठानैं, न बखानै कछु, संगतां मझार पछुतावैं सीस धुनि धुनि ।
सुनैं गुर सिख, दीनी बालक को बिख इन, चाहैंगे न मुख पिखि, दोष महां गुनि गनि ।
निंद को उचारैं, तेरी क्रित को धिकारैं सभि, फैले जग सारे, भनैं आप समै
पुनि पुनि ॥ ११ ॥

क्रोधकरि छोभ सों हंकार धरि बोल्यो तबि 'झूठे उपालंभ देति आप ते बनाइ करि ।
हमरो बिगार्यो कहां जां ते बिख देनि चहा मेरो नाम कौन लेति द्वैष उपजाइ करि ?।
कोऊ नहिं प्रेर्यो कबि, कूर क्यों कहति तूम, देखि न सकहु तुहमत[8] द्यो उठाइ करि ।
हाथन को मल करि बातन बनाइ लेति, कौन कर्यो काम नाम दीजिइ सुनाइ करि ॥ १२ ॥

बोले गुरु अरजन 'सेवक उठहु अबि, सांकुर को छोरिकै किवारों को उघार देहु' ।
तातकाल उठि कै निकार्यो दिज, बैठो आइ प्रिथीए के सनमुख, चपे दोऊ[9] चोर जेह ।

---

1. दुःख दूर करने वाले (गुरु जी) । 2. आप बड़े नहीं बनते । 3. मन मैं बैर हो भी तो वह हमारे साथ होगा । 4. प्यार समाप्त कर दिया । 5. तुम्हारा बड़ा दुःखदायी अपयश होगा । 6. छल-बल करते हो । 7. एक बारगी । 8. लांछन । 9. दोनों (चोर की भांति) लज्जित हुए ।

लोचन को जोरै नहिं, वोल्यो मुख लोरे नहिं, छपुन को टोरै दाव, पावति न मिसकेह[1]।
उघर्‌यो कपट, जाति निघर्‌यो प्रिथी के बीच[2], मुख पै खुटाइ की शरम बरखाइ मेंह ॥ १३ ॥

बोल्यो दिज 'मूढ़ ! क्यों करायो थो कपट गूढ, कैसे गुरबंस मै जनम तुम लीनिओं ?।
आप पाप कूप मैं डूबति मोको संग गहि, करामात साहिब सों बैर बड कीनिओं।
किम निबहोगे दुऊ लोक सुख खोगे, सभि निंदा जुत होगे, दुख भोगोगे मलीनिओं।
मुकरति कैसे ? मो सों कह्यो राति जैसे अबि सभिनि मैं तैसे कहु, पाप मै प्रबीनिओं ॥ १४ ॥

सुनि कै कुटल बडो कपट न माने, पुनि लोचन न नीच करै, बोलति कठोर बैन।
'कहां भयो दिज को सिखाइ के कहायो कूर, उपालंभ देति, तपतावै मन मोहि भै न।
निंदा को बिथारै जग. लोकन मैं बने ठग, आपको पुजावै, अग्न पास ते दरब लैन[3]।
करै उतपाति, मैं न डरौं इन बातनि ते, घातनि बनावै सगरेन को सुनाइ दैनि[4] ॥ १५ ॥

जान बडो ढीठु, अविलोककै निठुर डीठ पाप यांको मीठ है—बिचार्‌यो गुरु अरजन।
औगुन करत नहीं लाज को धरति, पुनि बकति कठोर, बनै बातन मैं सुरजन।
आनन पै भनै दिज, मानति न, करै जिव, उलटो सु क्रोध होति दुरमति दुरजन।
जांकै हित पाप घरै, औगुन अनेक करै सो तो नहीं पावै दई गुरता जु गुर जन ॥ १६ ॥

फेर बोल्यो पापमति 'अबि लौ न कीन कुछ उद्दम करै हों अस अधिक बिचारिकै।
पुत्र के समेत तोहि जम के निकेत पठौं कोऊ दिन बीत, लेहु ठीक उर धारि कै।
मैं तो बडो पूत त्याग दीनसि पिता ने आप, बैस में अलप लीनि गुरता हंकार कै।
कोई तो करैगो न्याइ, कैसे कै अंन्याइ होइ ना तुर अंधेर परै जग अविचार कै ॥ १७ ॥

श्री गुर बखानी कुछ नई नहिं रीति ठानी, आदि हूं ते चली आइ बिदत जगत है।
भए गुरु नानक सपुत्र दोइ महां मत सेवा नहिं लगे, लीति सेवा जो लगति है।
दूजे गुरु अंगद उदार चित ग्यान रूप दोनों सुत दीनि नहीं, लीनि जो भगति है[5]।
तीजे गुरु अमर बिराजे. तिन दोइ मंद छूछे रहे, आन थान जोति सु जगति है ॥ १८ ॥

चौथे गुरु रामदास परम प्रकाशवान, सेवा करी जानिकै बिठाइ गादी हमको।
जथा जोग जानै, को अजोग को बखानै इसु, जहां कहां मानै नहिं पावै[6] अबि तुमको।
ईरखा करे ते इक रिदे को संताप लेहि, देखि देखि पाइ दुखि, पाइ नही समको।
जतन अनेक ते बिबेक हीन गुरु ह्वै न, कैसे भार धारि है, बिचार, त्याग गम को' ॥ १९ ॥

---

1. बहाना नहीं मिलता। 2. पृथ्वी में समाता जाता है। 3. अज्ञ लोगों से धन लेते हो। 4. सबको सुनाने के लिए बातें बनाते हो। 5. जिन्होंने भक्ति की, उन्होंने पाया। 6. नहीं प्राप्त होगी।

सुनि के सु पायो दुखि, बोल्यो करि लाल मुखि 'बैठनि न देऊं सुखि बाति जो बनाई अबि।
लघुन के पास ते खसोटतो जो बली होइ जैसे कैसे मार लेति, जानति हैं लोक सबि।
पिता की करी को फेर देति हैं सु बल पाइ, तिसी अनुसार बन जाति है कहैं जु सबि।
निबल पै छोरै कौन, मैं तो रह्यो मौनि धरि, देखि हैं तमाशो अबि जोरिकरि लेऊं
जबि' ॥ २० ॥

'बली जे अनीति करै, मति बिप्प्रीत धरै, तांको प्रभु हरै, हार जाति है हंकार ते।
भयो हरणाखस प्रहलाद सों विरोधी बडो, इंद्र को निकास दीनि आयुध प्रहार ते।
सहि न सकहि जगतेश नरसिंह भयो लागी न बिलंब कुछ नखन सों मारते।
बहुर सुग्रीव संग बाली बल कीनि महां, रामचंद आगे नहीं अटकिओ बिदारते ॥ २१ ॥

कपट प्रबीन! ए पुरातन कहानी सुनि, और भयो रावन बिसाल बलवान है।
जहां कहां ओज ते अनीति महां ठानी जग, इंद्र आदि देव, नर देवन को हान है।
तापसी सु बेसधरि राघव बिशेष बल कुटंब असेस जुत कीन अवसान है।
गंजन गरब, रिपु भंजन बिलंद ओज[1], रंजन भगत मधुसूदन की बान है ॥ २२ ॥

पापमती ! और सुनिगुनि मधुसूदन के, भयो है द्रजोधन नरेश कौरवान को।
पांडव निकारिकै हंकार को उदार करि, सारो राज लीनि जानै मोहि न समान को।
बल ते अनीति करि, बुधि बिप्प्रीति करि, मानुज को मीत करि महां मन मान को।
जंग बीव हार्यो, मार डार्यो, न संभार्यो बल, कौन न बिदार्यो जो हंकार्यो अघ
ठानि को ॥ २३ ॥

बड़े वड़े गिने लघु भए तिन कौन भनै, दुज्जन गुमानी हनै, बान भगवान की।
तूं तो एक जंत कहां बल को गरब धरै, बांको रोम होइ है न जनत महान की[2]।
सगरे तुरक मिलि आवैं न गुराई पावैं बाद सभि जावैं, पछुतावैं हित हान की।
ऐसे मन जानिकै, बिचार ओर ठानिकै, समझ लेहु स्यानि के, समान मतिवान की ॥ २४ ॥

दोहरा

रकत नैंन दुरवैन कहिं, भै न हमै, छल ऐन ॥
पाइ हैं न कुछ लाभको, रैन सैन करि चैन' ॥ २५ ॥

कबित्त

सुनि जरगयो, दुख थियो तपतयो उर प्रिथीआ कहति भयो आंखै करि लालको।
'प्रिथीआ कहावों तब, पुत्र के समेत जबि तुमरो बिनाश करौं, सालतिबिसाल को।

---

1. बलवान शत्रु का नाश करने वाले। 2. महान यत्न करने पर भी बाल बाँका नहीं हो पाएगा।

जाइ दिल्ली पुरि मैं पुकारो जहांगीर आगै, सगरी अनीत को सुनावौं तोहि हाल को।
मैं तो ठानि टाल को, न आन्यो इत ख्यालको, करौं सु अबि घालिको तुरक पठौं जालको[1] ॥ २६ ॥

मारजा तनूज के समेत तिसी थान बैठि पकर मंगाऊं खेद साथ ततकाल को।
दुखति पुकारैं जबि, छूटबो न होइ किम, तबि फल पैहैं मेरी आंख भई लालको।
गुरता न छोरौं फेर लैहों करि जोर महां, सुख सों सुपत सिङ छेर्‌यो तैं कराल को।
जैसे हाथ नाल को पकर ले बिसाल को न जानै बिखी ब्याल को, सु ऐसे जान हाल को[2]' ॥ २७ ॥

श्री गुरु बखानी 'जगदीश जिम ठानी विधि, सोई हम मानी सुख खानी मन जानि कै।
श्री हरि गोबिंद इन पौत्र[3] ह्वै बिलंद बली, पंथ को प्रकाशै गो बिसाल तेज सानकै।
सिक्खन को सिख तेरो बंसबन जै है मिलि, पाइ अस हीनता जु भाखैं तूं महान कै।
अचल कलंक तेरे अमिट मयंक के ज्यों, सुनि सुनि दुखै तेरो दोष बुरो मानिकै ॥ २८ ॥

दोहरा

करति पाप सुकचति नहीं दुरमति मतसर धारि।
बनि बनि दीनि सु बेनती भाखहु तुरक अगार' ॥ २९ ॥

अधिक सपरधा[4] बधि चली कहि सुनि बाक कठोर।
गारि देति प्रिथीआ उठ्यो गमन्यो निज घर ओर ॥ ३० ॥

नरक परन की करति मति, चिंता नदी बिसाल।
बह्यो जाति डूबति सकल कलिमल कलित कराल ॥ ३१ ॥

इति श्री गुर पताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'प्रथीआ गुर झगरन' प्रसंग बरननं नाम अष्टदशमो अंशु ॥ १८ ॥

---

1. तुम्हें पकड़वाने को तुर्क भिजवाने का प्रयास करूँगा। 2. तुम अपना हाल ऐसा जानो, जैसे कोई भूल से बड़े विषैले साँप को हाथ से पकड़ ले। 3. गुरु गोबिंद सिंह। 4. स्पर्द्धा।

अंशु १९

प्रिथीआ समुझावन को प्रसंग

दोहरा

प्रिथीआ गमनति धाम को हटि फिर ठांढो होइ ।
कहिन लग्यो करि क्रोध को 'धन दे तुझ सभि कोइ ॥ १ ॥

सवैया छंद

सुख की नींद न सोवनि देवौं करि पुकार मैं पकरि मंगाई ।
सुत बनिता जुति खेदति करिकैं[1] तुरकनि ते तुझको मरवाइ' ।
मूछन पर निज करको फेरति, 'तौ मैं प्रथीआ नाम कहाइ ।
मिलिनि होइ तबि हूं तुमरै संग, राखहु याद बिसर जिन जाइ[2]' ॥ २ ॥

इम सुनि सतिगुर कर्‌यो धिकारनि 'करम करनि को धिक धिक तोहि ।
पन तेरे बाकनि को धिक धिक, करनि पैंज को धिक धिक होहि ।
मुख को धिक धिक, मूछनि धिक धिक, कुल की रीत तजी धिक जोहिं ।
परहिं नरक महिं तारहि नहिं को, गन कलिमल करिता उर क्रोहि[3] ॥ ३ ॥

गमन्यो प्रिथीआ गारि निकासति सदन प्रवेश्यो रिदा तपंति ।
गिनती गिनति अनेक भांति की—नहिं पुरि बसौ चित्त चितवंति ।
आइ संगतां मुख पर मेरे निंदा भाखहिंगे अत्यंति ।
सही न जाइ, बिगार होहि गो, परहि रार तिस काल तुरंत ॥ ४ ॥

तिसके सिख संगति बहु आवहिं अनगन धन आनहिं मन चाइ !
अलप होहि मुझ ढिग तब हारौं घर परवेशहिं लूटिन लैजाइं[4] ।
जहां प्रबल रिपु नितप्रति ढिग रहि तहिं ते कुशल चहहि किस भाइ ।
सरप शेर को जथा समीपी इक दिन महिं कबिहूं बिनसाइ ॥ ५ ॥

पुत्त भारजा संग लिचलिहौं[5] दिल्ली पुरी पहुंचि इक बार ।
सुलही सों मिलि मसलत करिकैं जहांगीर ढिग करौं पुकार ।

---

1. कष्ट पहुँचा कर । 2. भूल मत जाना । 3. हृदय से क्रोधी । 4. मेरे पास कम धन होगा, मैं हार जाऊँगा और वे घर में घुसकर मुझे लूट ले जायेंगे । 5. ले चलूँगा ।

जहिं मैं जाउं सिक्ख तहिं मेरे आनेंगे[1] सभिही उपहार।
तिन ते करिगुजरान निबाहौं रहे इक्कत्र सरब परवार॥ ६ ॥
मिलि दारा सों मसलत कीनसि नगरी त्याग चलहु किस थान।
बढी सपरधा हमरी अतिशै इहां बसन मैं कुशल न जानि।
बडो बिगार भए ते पूरब गमन करहु इह महां सियान[2]।
त्यारी करहु विलंब न ठानहु, नांहि त होइ आन की आन[3]॥ ७ ॥
इस प्रकार जबि मतो मतायहु[4] भागनि की त्यारी करि लीनि।
सरब पुरी महिं रौरा[5] पर ग्यो भाज चल्यो प्रिथीआ डर कीनि।
श्री हरगोविंद को बिख दीनसि, उघर्यो कपट, लाज भयभीन[6]।
साहिब जादे अजमत बल ते अपनो आप बचायहु चीनि॥ ८ ॥
मिलि मिलि नर दुरि दुरि करि बातैं मारनि हित छल बल बड धारि।
गुर सुत महांदेव घर बैठो सुन्यो श्रोन महिं सभि दुरचार।
कर मीजति सिर धुनि धुनि ढोरति[7] कहां करम कीनसि बुरिआर[8]।
धन कारन दारुन क्रित ठाननहि निंदा बिदतहि जगत मझार॥ ९ ॥
बैठ्यो पछुतावति घर अपने इतने महिं इक मानव आइ।
'प्रथीआ सण परवार त्यार भा दिली बिखै पुकारू जाइ'।
कीनि सुनावनि, हौल उठ्यो, तबि तूरन[9] पग पनही को पाइ।
गयो उताइल करिकै बरजनि सरल रिदा जिह सहिज सुभाइ॥ १० ॥
दसक दास जिह साथ गए चलि देख्यो घर प्रिथीए को जाइ।
असवारी गन त्यारी होवति सभि वसतू के भार बंधाइ।
सकल सकट[10] महिं लादति सांभति हेरति लोक खरे समुदाइ।
वहिर सदन ते को थिति अंतर केतिक पौर सथिर दरसाइ॥ ११ ॥
मंद मंद कहिं आपस महिं नर प्रिथीआ महां उपद्रव मूल।
तपति विशेष द्वैष को ठानति अघ अशेष ते डरहिं न भूल[11]।
गादी पर बैठे गुर अरजन तबि को होति भयो प्रतिकूल।
हाथ नहीं कुछ प्रापति होवति जिस पर नहिं भे पित अनकूल॥ १२ ॥
अबि उतपात करनि कहु गमनति विख की बात बिदति गई होइ।
दब्यो लाज ते रहि न सकै पुरि, निंदहिं नर नारी सभ कोइ।

---

1. ले आएँगे। 2. यही बुद्धिमानी है। 3. नहीं तो कुछ का कुछ हो जायेगा। 4. विचार-विमर्श द्वारा निर्णय लिया। 5. शोर। 6. शर्म और भय से भरा। 7. डुल गया। 8. बुरा व्यक्ति। 9. शीघ्रता-पूर्वक। 10. रथ। 11. पाप करने से भूल कर भी नहीं डरता।

सुंदर श्री हरिगोविंद बालिक अनुज नंद मंदर गुन जोइ।
तिस हतिबे को चाहति नित प्रति मति हति भई दुखति पिखि सोइ॥ १३॥
प्रिथम धाइ, पुन पंनग छोरा, अबि कुकरम इह कीनि महान।
गुर सुत के सहाइ परमेशुर दिपति जोति मुख मंडल जानि।
इत्यादिक सभि करति बारता अधिक भीर होई तहिं आनि।
महांदेव घर मांहि प्रवेश्यो महां उपद्रव चाहति हानि[1]॥ १४॥
भ्रात बिसाल पिख्यो करि बंदन भर्यो क्रोध सो रिदा तपंति।
रक्त नेत्र कुछ आंसू झलकति जिस को मन सम बिहंग उडंति।
अनिक खोट संकलप उठावति चहै सभिनि के प्राननि हंति।
कहि दासनि त्यारी करिवावति बिपता परी उजर गमनंति[2]॥ १५॥
महांदेव मन महां क्रोध पिखि हाथ जोरि कहि बिनै समान।
'कित कहु त्यारी आप करावति? सण परवार जाहु किस थान?।
घर की वसतु समसत बँधावहु मनहु पुरी कबि पिखहु न आनि[3]।
कारन कौन भौन को त्यागहु? भौ न किसी को इह ठां मानि'॥ १६॥
कहि प्रिथीआ 'दिल्ली पुरि गमनौं जहांगीर के पहुंचहुं पासि।
करि पुकार मैं अखिल सुनावौं पठौं तुरक गन इनहु अवास।
सुत बनिता जुति अरजन को तबि पकर लेहिंगे दे दुखरास।
तहां मंगावौं, कैद करावौं, मनवावौ तबि जो मम आस॥ १७॥
सुनि तबि महादेव कर जोरे 'हम दोनहु तुव अनुज लगंति।
बैस बिखै लघु, सुमति बिखै लघु, सुत समान हम लखहु सुचिंत।
तुमहो बडे सियाने बय महिं बुधि बिसाल सभि रीति महंत।
रच्छा हमरी जिम किम करीअहि अहै जोगता इम लखियंति॥ १८॥
पित सम तुम प्रतिपालक होवहु लायक इसी बात के जानि।
उचित नहीं उतपात करनि के बनहु पुकारु पिखहि जहान।
धरहु न रिदै ईरखा तप करि ह्वै करि पिता प्रसंन महान।
गुरता दई जगत गुर कीनसि लख्यो जोग बैठाइ सु थान॥ १९॥

हम तुम को चहियति अबि इस विधि अखिल मसंद संगतां संग।
सभि को ले तिन पग सिर धारहु पित आयसु कहु मानि अभंग।

---

1. महा-उपद्रव को मिटाना चाहते हुए। 2. उजड़ कर जाता है। 3. मानो दोबारा नगर का मुंह नहीं देखना।

इक तौ पिता दूसरे गुर हैं तिनके वाक बिलंद उतंग।
हुइ सपूत कैसे नहिं मानहिं, समझ बिचारहु रिदै निसंग॥ २०॥
उठि अवि चलहु साथ मैं तुमरे तिन के पग पर नमहि करेहु।
नांहि त जग सभि हासी करि है अपजस सिख संगति ते लेहु।
जिस हित अघ ठानति नहिं त्रासति सोधन किस के संग न केहु।
सुत बनिता हित करि उतपातनि अंत समै नहिं साथी एहु॥ २१॥
इन सनेह को मिथ्या जानहु, मेरो कह्यो बचन लिहु मानि।
मिलहु प्रेम करि तजहु विरोधा आगै थिति हुइ जोरहु पान।
करे कपट अघ सों वखशावहु जिस ते होइ न त्रास निदान।
तिन महिं परम जोति परकाशति गुर नानक ते आदि जु जानि'॥ २२॥
सुनि प्रिथीआ बोल्यो बिरमावति[1] 'महांदेव मेरे वचमानि।
चलहु संग मम दिल्ली पुरि महि तुझको गुरु बनाइ महान।
सभि कोई पूजहि तुव चरननि अनगन धन अरपहिं गन आनि।
हम दोनहु भ्राता सुख पावहिं वहि एकाकी होवहि हान[2]'॥ २३॥

दोहरा

महांदेव भाख्यो बहुर 'मुझ किम गुरता होइ।
पिता प्रसंन न मैं बडो ले वैठ्यो है सोइ'॥ २४॥

सवैया छंद

प्रिथीआ भनहि 'सुनहु हित बाकनि[3] चलि मेरे ह्वै करि अनुसारि।
जहांगीर सों मिलिकै भाखों कीजै नीको न्याउं हमार।
वसतु पिता की गोदी के जुति वडो पुत्र को है अधिकार।
सो मुझ को अबि आप दिवावहु इक ने दाब लीनि बलिकार॥ २५॥
जे करि-वसतु के अधिकारी सगले नंदन-कहै बनाइ।
तऊ सु दीरघ गादी लेवै[4] इस मैं कछू न संसे आइ।
सो मैं त्यागी महांदेवहित इसको टीका दे हरखाइ।
पातिशाह ते कहिं गुर करि हैं सभि संगति तुझ पूजे पाइ॥ २६॥
मैं सभि ते वड, अरजन है लघु दोनहुं को बिवाद बड जानि।
नहिं दोनहुं को गादी पावहि यांते मध्यम करहु महान।

---

1. भ्रमाने के लिए। 2. वह अकेले विनष्ट हो जायेगा। 3. हित के वचनों को सुन। 4. तब भी बड़ा गद्दी का अधिकारी होगा।

महादेव है महांदेव सम, मोरा मन, नहिं छल, नहि मान।
याते हम इस पर सभि खुश हैं जग गुरता के उचित प्रमान ॥ २७ ॥

हम कहि कै तुझ करि गुर ल्यावहिं कीजहि त्यारी हमरे संग।
दोनहुं मिलै, भली बिधि बनि है, मिलहि तोहि पद अधिक उतंग।
अगनि समान मोहि कहु जानहु तुझ समीर ते मचहि अभंग।
अस को कारज फेर न सिधि ह्वै हम तुम होए इक रंग[1]' ॥ २८ ॥

महांदेव सुनि कै बिकसानो 'भलो मनावन आयो तोहि।
सभि सुख पावति निजघर बैठे इक भी चिंता नहिं मन मोहि।
लग्यो बिगारनि को उपदेशनि जिसते संकट अतिशै होहि।
मैं नहिं मानौं द्वेष न ठानो अरजन गुरु न राग, न द्रोहि ॥ २९ ॥

सुनहु भ्रात इक बात नीतिकी अति उतपात चहति चित ठानि।
घर फूटे बड संकट होवति लघुता पावति ह्वै जु महान।
जहिं कहिं हासी करहिं जगत महिं पुन अपजस को पाइ अजान।
प्रथम बिसाल बली जग उपजे भेद भए ते प्रापति हान ॥ ३० ॥

मिलिनि बिखै गुन अनिक भांति के फूटनि बिखै सु अवगुन ब्रिंद।
करहु खुश मद[2] तुरकनि केरी देहु दरब रिशवती बिलंद।
भ्रात परसपर जहिं जहिं बिगरे तहि तहिं अपदा परि दुखवंद।
बिदति बात तुम जानहु क्यों नहिं छिमां करनि ही सभि सुखकंद ॥ ३१ ॥

बिगरे बाली भ्रात सुग्रीव जु तिन महुं भयो बडे को नाश।
रावण नाश बिभीखन कीनसि भेद राखशनि करति प्रकाश।
कौरव पांडव हठि करि निष्ठुर संघर करि बिनसे बल रासि।
इस बडियनि की दशा भई जबि अलपनि की गिनती कहु क्या सु ॥ ३२ ॥

घर की बात बहिर परकाशनि करहिं परसपर निंद बखान।
हौरे अरु खोटे सभि भाखहिं[3], बिनसहि गौर, बडाई, मान[4]।
खरचहिं धन, चित चिंता चितवहिं अषट जाम लौदुख गलतान।
बिनै करनि अरु दीन होनि बहु इसफल बिन पाइं न कुछ पान[5] ॥ ३३ ॥

श्री नानक ते आदि गुरु सभि जग महिं महिमा इनहु महान।
अदब करहिं सभि सीस निवावैं पातिशाह आदिक नरजानि।

---

1. ऐसा कौन सा कार्य है जो हमारे तुम्हारे एक रंग होने पर भी सिद्ध नहीं होगा। 2. खुशामद, चापलूसी। 3. खरे-खोटे सभी कहते हैं। 4. गौरव, बड़ाई और अभिमान सब नष्ट हो जायेंगे। 5. इनके बिना और कुछ हाथ नहीं लगेगा।

जबि तुम गए पुकार करनि कहु झगरो दुइ दिश रिस अतिठानि ।
फेर न पूजहिं बंदन ठानहिं, जानहिंगे धन के हितवान ।। ३४ ।।
इत्यादिक औगुन हैं लाखहुं, तजहु बिरोध सरल उर होइ ।
करहु परसपर बंदन भ्राता अति अनंद घर महिं लिहु दोइ ।
कभी पदारथ की कुछ नांहिन श्री गुर करी कमाई जोइ ।
गुन हैं अधिक मेल जे ठानहु सुजसु जगत महिं कहिं सभि कोइ ।। ३५ ।।

दोहरा

महांदेव इस महांमति महां कुटिल समुझाइ ।
चिक्क्वन बासन बूंद जिम[1] छुई न मन कुछ ल्याइ ।। ३६ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'प्रिथीआ समुझावन' को प्रसंग नाम एक ऊनिबिंसती अंशु ।। १९ ।।

1. चिकने बरतन पर जल-बूँद की तरह ।

अंशु २०

'महांदेव प्रिथीआ संबादि'

दोहरा

सुनिकै प्रिथीआ लखहि मन इह भोरो मति नांहि ।
आलस की लालस जिसे रहै बैठि घर मांहि ॥ १ ॥

स्वैया छन्द

'महांदेव तुम सुनो भ्रात जीजे अबि उद्‌म करिहौं नांहि ।
शत्रु सहोदर ने सभि लीनसि हमरो बंस कहां ते खाहि ।
जे अबि मुझते लई गई नहिं पुन गुरता किम को ले पाहि ।
मैं समरथ हौं लैवे को इह, बिलम जानि की दिल्ली मांहि[1] ॥ २ ॥
मेरो क्या बिगरै गो कहु तूं महिमा इस की जगत बिसाल ।
दरब पदारथ अधिक अनूठे चहुंदिशि ते आवैं ततकाल ।
झगरति कैद होइ तबि हौरा हेरहिंगे देशनि जाल ।
पुनहि उपाइन अरपहिंगे नहिं कितिक दिवस महिं हुइ अस हाल ॥ ३ ॥
हम दोनहुं लघु ऐश्वरज मांही, गादी बैठि भयो धनवान ।
चहुं दिशि ते गन संगति सिक्खन अनगनदरब वसतु दें आनि ।
तूं किम जरहि जरहिं नहिं उर मैं[2] हम तीनहुं इक पितके जानि ।
इक मालक द्वै रहैं सु छूछे इम अनीति तूं मनमहिमानि ॥ ४ ॥
पातिशाह पहि करौ पुकारनि गुरता लेवौं तूरन छीनि ।
सुख सों नहीं बासिबे देवौं, संकट परहि होहि बहुदीन ।
महांदेव तुम भोरे अतिशै हान लाभ की समझ बिहीन ।
मोहि कहे को इसी समें को झुरहिंगो मैं क्यों नहिं कीनि ॥ ५ ॥
श्री अरजन निज छलबल करता तुम सूघे छल सकहु न जानि ।
तुझ प्रसंन करिदेति नम्र हुइ त्रास धरति इह झगर न ठानि ।

---

1. दिल्ली जाने-भर की देर है । 2. तुम कैसे सहन करते हो, मन में ईर्ष्या नहीं होती ?

तीनहुं हम जिसके अधिकारी ले बैठयो एकल सुख भानि।
सभि मसंद कहि कहि अपनाए चहुं दिशि ते धन आइ महान ॥ ६ ॥
अवि उपावहुइ सके, संग चलि, क्यों चूकति चितचौक सुचीनि[1]।
तेरो अधिक प्रताप वधहिगो हम भी तुझ ते होवहिं हीन।
तुझ पर मैं सुप्रसंन अधिक नित गुरू बनहिं बैठहिं दुति लीनि।
चहुं दिश की संगति मिलि पूजहि अनिक उपाइन अरपन कीनि ॥ ७ ॥
छलकारी उर कपट करहि नित मोहि न नीको लागहि सोइ।
पिखि सरूप कंटक चख चुभते[2] चित महिं चहति न चितवनि होइ।
सुजस बाक तिस के अति तीखन बान समान कान लगि दोइ।
रिद को वेधति करकति निस दिन तिह सुनि बचन इस समी जोइ ॥ ८ ॥
महांदेव तेरो बड कारज हमरे बाद परे[3] बनि आइ।
ज्यों क्यों करि दें तुहि बडिआई शाह निकट गुन बडे सुनाइ।
खरचें दरब आपनो मैं सभि जहां देनि कारज बनिजाइ।
झगरों मैं जहिं होइ अदालति तुम बैठे रहु सहिज सुभाइ' ॥ ९ ॥
सुनि करि महांदेव कर जोरे वडो भ्रात बिनती मम मान।
तजहु बिरोध मिलहु घर मांहु अपर नहीं इस बात समान।
पूरब पिता करी तिह सिमरहु, जियति आप ही कीनि महान।
हम तुम करति बिलोकनि[4] तबि हूं बैठायो गादी शुभ थान ॥ १० ॥
छल बल को करि आप न लीनी सेवा करत रह्यो पित पास।
तिन रजाइ महिं राजी रहिनो इत्यादिक जिस महिं गुनरास।
रहि अनुसारि न आप जनायहु बिनै करति सम दासनि दास।
अजर जरनि अर करनि भजन बहु सेवति करे प्रसंन पिता सु ॥ ११ ॥
बोलन बनहि तुमारो तबि हूं: अबि इसको नहिं बनहि उपाउ।
क्यों अवि बाद बाद बड बदते[5] शुभगन अनिनिज मन महि ल्याउ।
अपर सुजसु अर अपर प्रतापू सुनि करि सदा रिदे हरखाउ।
पर सुख संपद करहु बिलोकनि निज सुख सम तिस करि चित चाउ ॥ १२ ॥
परदुख देखि दया कहु ठानहुं मानहूं सभि को अपन समान।
इम गुरमुख संतन को मारग सो परलोक लहैं सनमान।
बेमुख साकत के मन अवगुण सो त्यागहु नहिं कबिहूं ठानि।
सुनहि अपर जस तपहि अधिक तिस, निस बासुर चिंता गलतान ॥ १३ ॥

1. सावधानी से मन में विचार कर। 2. देखकर आँखों में काँटे चुभते हैं। 3. झगड़ा पड़ने पर। 4. हमारे-तुम्हारे देखते देखते। 5. विरोध के वचन कहते हो।

अपरनि के संपद सुख देखहि नाहक दुख तिनके उपजाइ।
जे उजरहि बिगरहि किस कारज निज हित ते चौगुन हरखाइ।
शत्रु मित्र सम को हुइ आछो पिखति सुनति ही ज्वर चढि जाइ।
जतन करहि अर बाकन बोलहि जिसते किसको बिगर सु जाइ॥ १४॥

श्री अरजन को सुजस इश्वरज आदि आतमज सभि सुख हेरि।
जरहु न ज्वर सौं, जरहु रिदै अबि, अजर जरन गुन बड तिस केर।
करामात साहिब सभि रीतनि नहीं जनावति विघन बडेर[1]।
पुन हमरो शुभ भ्रात सहोदर तिस गुन ते गुन सभिनि घनेर[2]॥ १५॥

दोहरा

इम बिचार मेरो कह्यो मिलहु विरोध बिसार।
तिसते गुरता लेंहि किम को बल करहु उचार'॥ १६॥

सवैया छंद

सुनति श्रोन महिं प्रिथीआ उचरति 'बल बिसाल सुनि जस मुझ मांही।
इत ते चलि दिल्ली पुरि पहंचौं, सुलही संग मिलौं करि चाहि।
मित्र बिसाल बली सभि लायक मोहि कहे कहु उलंघति नांहि[3]।
करहि मनोरथ पूरन ततछिन जहांगीर के निकटि सु जाहि॥ १७॥

मोहि काज अपनो ही जानहिं, आयहु प्रिथमैं जबि इस थान।
इक मेरे ही कारन करि कै सरब ब्रितांत लीनि तुम जानि।
पुरि ते निकस्यो बस्यो बडाली, तबि मैं कह्यो गयो निज थान।
नहिं कुछ भाख्यो मैं तबि राख्यो, अब काख्यो वैरी मुझ ठानि[4]॥ १८॥

जहांगीर सों कहि इक बारी पकर मंगावहिगो ततकाल।
अपनी करौं कामना पूरन बहुर बसौं मैं सदन संभालि।
यांही ते तुझ को अबि भाखौं चलहु संग लिहु सु पद ब्रिसालि[1]।
करौं सपथ जे नहिं बिसास हुइ करि त्यारी मारग पद डालि॥ १९॥

तुझ घर लछमी बिनां जतन ते आवति है नहिं देहु किवार।
लाभ राज हुइ चक्रवरत को ग्रहन करति क्यों नहीं संभार।
चहुंदिशि की संगति चलि आवहि पूजहिं पाइन दें उपहार।
अपने मन महिं समुझति क्यों नहिं. चलनि संग मुझ होवहु त्यार'॥ २०॥

---

1. बड़े बिघ्नों के होते हुए भी। 2. इसी गुण के कारण वे बड़े हैं। 3. मेरे वचन नहीं मोड़ता। 4. अब मुझे शत्रु समझकर दुत्कारता है। 5. और उच्च पद भी प्राप्त करो (अर्थात् गुरु बनो)।

महांदेव कहि 'गुरता जग की मैं लैवौं, कै तुम लिहु पाइ।
सिख्यनि के मन की गति बूझनि कौन करहिगो ? देहु बताइ।
अज़मत अज़माइश बिन[1] संगति निवहिं नहीं किम करहू उपाइ।
फिर बैठहिं[2], नहिं पूजन आवहिं, गादी भ्रिषट होइ तबि जाइ ॥ २१ ॥
श्री नानक श्री अंगद पूरन श्री गुरु अमरदास जे जानि।
श्री मंति रामदास पित हमरे तिन महुं जोति एक ही मानि।
परमजोति सोइ अबि चीनहु श्री अरजन मैं दिपति[3] महान।
तिनहु छोर किम संगति आवहि जहिं अज़मत बिन लेहिं पछान ॥ २२ ॥
आप अछत ही थाप्यो गुर करि, सकल जोति पूरन तिस मांहि।
अजर जर्यो नहिं करति जनावन प्रान हान लौ नहीं दिखाहिं।
गुरु होनि की इहै बडाइ अनिक विघन ते चालहि नांहि[4]।
जे मतिवान पछान लेति से, नित सेवति पद पकज तांहि ॥ २३ ॥
इत्यादिक असमंजस लखि कै तजहु बिरोध लोभ मद काम।
सरल सुभाइ होइ करि मिलीऐ बैठहु कुशल सहत निज धाम।
बैर करे बिगरै तुझ कारज अपजस जग महिं कहिं नर बाम।
मत निदान बनि मत निदान करि[5], रिदा सुद्ध करि सिमरहु राम' ॥ २४ ॥

प्रिथीआ मनहि 'होहि किम ते किम इसके संग न करिहौं मेलि।
बिगर परे पुन निमहि नहीं किम[6], मुझ सों बैर नहीं कुछ खेल।
फल पैहै लखि लैहै सो तबि, अबितो गरब करै सभि पेलि[7]।
चलहु साथि नहिं बैठ रहो घर, हम नहिं करैं तोहि की गेल[8]' ॥ २५ ॥

महांदेव कहि 'मैं नहिं चाहौं नहिं हमरे पिखि होइ संताप।
गुरता की समरथता नांहिन, कूरो करति नहीं उर दाप[9]।
देखि देखि करि दहिन होति चित, रहो तुमारे ही इह पाप।
परको बुरा न हम को भावहि करहु तथा जिम जानहु आप' ॥ २६ ॥
सुनि प्रिथीए करि कुटिल भ्रिकुटि को निष्ठुर बोल्यो दुषट बिसाल।
होश भई फरमोश तोहि[10] सभि कहां लखहिं इन बातनि ख्याल।
जानि लई मन की गति तो सभि अरजन को हिमायती हाल[11]।
तिस के गुन गन, अवगुन हमरे बरनति रह्यो सरब ही काल' ॥ २७ ॥

---

1. प्रताप और मर्यादा का परीक्षण किए बिना। 2. संगत मुँह मोड़ लेगी। 3. ज्योतिर्मान। 4. विचलित नहीं होते (विघ्नों से भी)। 5. नादान बनकर अपना नाश न कर। 6. झगड़ा ही हो गया, तो अब मैं झुकूंगा नहीं। 7. सबको दबाकर। 8. पीछा, पीछे का ध्यान। 9. अहंकार, दर्प। 10. तुम्हारी होश मारी गई है। 11. इस समय।

महांदेव बोल्यो 'हस पत्रखी श्री अरजन के नित अनुसारि ।
बैस अलप है गुन महिं दीरघ अर पित आग्या कीनि उचार ।
श्री गुर रामदास जो दीनसि कौन मिटाइ सकै बलिभारि ।
भनति पूत मन[1] सो सपूत हुइ पिता बचन जो ले सिरधारि ।। २८ ।।

इह सभि काम कपूत कूर के पिता बाक को चहिं उलटाइ ।
क्रोधी, कुटिल, क्रितघनी, काइर, कुचिल, कठोर, कुमति, कुटलाइ ।
इसते परे दोष को गनीअहि जो तुम कर्‌यो चहति चित चाइ ।
इक दिशि पुंज पाप को धरीअहि, तब कुकरम को नहिं समुताइ ।। २९ ।।

श्री नानक को रूप जगत गुरु संत सुमति सम ब्रिती सुजान ।
जगतेशुर अवतार बिदति बहु, कर्‌यो हजारनि कौ कल्यान ।
गुन गन घरति, पितापुन हमरो तितहुं बिठायो अपन सथान ।
तिनके बाक चहति उलटाए नहि आग्या मानहिं, करि मान[2] ।। ३० ।।

पित सथान बैठ्यो तिस निंदहिं, बिंदहिं बडिआई कुछ नाहि ।
जथा हंस को बक डर पावै. मशक[3] गरुड को दाबनि चाहि ।
स्याल[4] शेर को कर्हि डरावनि, पटबीजनि जहि रवि सनताहि ।
तथा मनोरथ मन महिं ठानति श्री अरजन पर करि उतसाहि ।। ३१ ।।

करामाति साहिब सो पूरन, धीरज अजर जरन, छिमवान ।
अज़मति छूछा[5] रिदै अधीरज छिमा न रंचक तो महिं जानि ।
सो गौरा[6] तूं हौरा[7] अतिशै, सो ऊजल तूं मलिन महान ।
सरल म्रिदुल हरि रूप प्रगट सो, कुटिल कठोर जीव निज मान' ।। ३२ ।।

दोहरा

सुनि प्रिथीआ जर बर गयो, जर न सक्यो बच साच ।
रक्त नेत्र फरकति अधर, भ्रिकुटि कुटिल जिस नाचि ।। ३३ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रथे त्रितिय रासे 'महांदेव प्रिथीआ संवादि' बरननं नाम बिंसती अंशु ।। २० ।।

---

1. पवित्रात्मा लोग कहते हैं । 2. अभिमान के कारण । 3. मच्छर । 4. गीदड़ । 5. प्रताप हीन । 6. गौरववान । 7. हीन ।

अंशु २१

'प्रिथीआ सुलही सों मिलिनि' प्रसंग

दोहरा

प्रिथीआ सुनति कठोर[1] कहि 'कह्यो न बूझै बैन[2]।
भोरा मूरख को कहैं यांते तुझ मति है न ॥ १ ॥

सवैया छन्द

इन बातनि को तूं क्या जानहि बरहि सदन दुरि बैठि रहंति।
सुमतिवंत महिं बोल न आवहि तौ इह कारज कहां लखंति[3]।
जाहर जिनहु जवाहर दिखय न सो किम होवहि परखनिवंति[4]।
जिन अजान की संगति बरती सो किम भेद लखहि बुधिवंति ॥ २ ॥
तुझ सम ने करसतुति फुलायहु गरब धरति याते मनि चाहि।
तौ समेत ही पकर मंगावौं तबि तुमरी अजमति लखि जाहि।
लघु दीरघ तबि जानि परैगौ जबि होवहु तुरकनि बसि मांहि।
मानहिं कौन कह्यो कवि तेरो जिस महिं रंचक भी मति नांहि ॥ ३ ॥
उठि अबि जाहु निकट नहिं बैठहु सठ की बात सुनौं नहिं कान।
जस द्रोही अरजन है मेरो, तस तूं हैं अबि लीनि पछान।
मैं हित करौं, अजान न जानहि, जिमपसु कै पट भूखन ठानि।
उलटो स्रिगनि चहति चुभावनि, मैं तुझ जान्यो तिसै समान ॥ ४ ॥
महांदेव ने भन्यो बाक तभि 'श्री अरजन पक्खी इम जानि।
श्री गुर ने गुरता जबि दीनसि सभि संग आग्या कीनि बखान।
चरन परहु अनुसारि रहहु इन-हम ने तबि ही लीनसि मानि।
पित गुर हरि अवतार संत मन हम न हटावहिं तोहि समान ॥ ५ ॥
आसमान को बान प्रहारहि उलटि लगै तिस हूं के आइ।
सैलनि साथ माथ जो मारहि भगनि होहि सिरि, कछु न बसाइ।
शेर सरप के दसन गहै जो, पावक ज्वलत हाथ दे पाइ।
पाहन बांधे संग ग्रीव के तरवो चहै भुजन बल लाइ ॥ ६ ॥

---

1. कठोर वचन। 2. कही बात नहीं समझता। 3. क्या जानता है। 4. परखने वाला।

तिम तेरो बिरतांत सु जनियति यांते करि बिचार बच मानि ।
श्री गुर पित को बाक अटल रहि जित किन ते तूँ पावहिं हानि ।
अपनो हित लखि सुत बनिता जुति बसहु सु निज चित आनंद ठानि ।
मेल करहु नहि अपजस पावहु, हरखहु हेरि लखहु पित थानि ॥ ७ ॥
प्रिथीआ भनहि 'भयो मसताना जिम बालक पय तिम अनजान ।
जो मुझ दहै कहैं बच तैसो, चहैं रहौं तिस दास समान ।
मैं नहि मूरख करौं जतन अबि गुरता लैहौ छीनि महान ।
रहौं इकाकी तुम हुइ दोनहु करहु उपाउ होहुगे हान' ॥ ८ ॥
महादेव कहि 'निज हित कहु लहि, परहु पाइ मिलि बसहु सुखैन ।
काम, क्रोध, मद, मान, लोभ ते अबि जे नहि मानहिं मम बैन ।
दुख ते तर दुख[1] लहहिं अनिक बिधि, अपजासु ते अपजसु बिन चैन ।
दुहूं लोक बिगरहिं पछुतावहिं हाथ न आइ समो जुति ऐन' ॥ ९ ॥
प्रिथीआ जर्‌यो जर्‌यो नहि बच को 'किउं झखवाउ[2] करति उठि जाहु' ।
इम कहि मौन धरी रिसि उर भरि सनमुख नहिं देखति दुख मांहु ।
होनहार को रिदै बिचार्‌यो महाँदेव दिखि तिसके दाहु ।
'चिंता सर को मीन बनहु नित' स्राप दियो क्रुद्धति ह्वै तांहु ॥ १० ॥
तजि तिस को उठि सदन सिधार्‌यो बध्यो बखेरा मन अकुलाइ ।
नाम पिता गुरु रामदास को तुरकन सों मिलि क्या कहि जाइ ।
दिल्लीपति अकबर ते आदिक श्री गुरु अमर चरन सिर लाइ ।
अबै निलायक तिन्के आगे चले पुकारू बाहु उठाइ ॥ ११ ॥
मैं समुझाइ रह्यो बहुतेरा एक न मानी मनि मतिमंद ।
होनहार को जानहिं क्या हुइ, करि बिख दैंबो पाप बिलंद ।
चितवति सदा अनरथनि बीतहि[3] उर हंकार, न मोहि मनिंद ।
इस प्रकार बीचारति चित महिं गयो सदन महिं सदा अनंद ॥ १२ ॥
निज घर ते पुनि महाँदेव चलि श्री अरजन के पहुंच्यो तीर ।
देखि बिसाल भ्रात को ततछिन खरे भए सनमान गहीर ।
बंदन करि कै आपस मांही बैठे दोनहुं महद सधीर ।
सरल म्रिदुल रिद अदब जुकति बुधि मिले प्रमोदति पिखि द्वैबीर ॥ १३ ॥
गोदि प्रमोदति श्री हरिगोबिंद रक्ख्या शबद बनावति हेरि ।
श्री सतिगुर अरु श्री परमेशुर इनको जस जिनि बिखै बडेर ।

1. दुख से बढ़कर दुःख । 2. झखते हो, बकते हो । 3. मन में पाप विचारते ही बीतती है ।

'भए दास रखवारे आइ सु हाथ देइ राखे बहु बेर।
मात पिता जिमसुत को राखहिं अषट जाम चितवति फिर फेर' ॥ १४ ॥
इत्यादिक तिन बिखै अरथ रखि कीनसि अपनी बिनै बखान।
इस प्रकार के शबद बनाए जिन महिं प्रेम प्रवाह महान।
श्री ग्रिंथ साहिब्र के बिच लिखि, राखे सिक्खन हित कल्यान।
जाहर अरथ जिनहु कहु भाखहि लोक प्रलोक बिखै सुखदानि ॥ १५ ॥
निज सिक्खन सो महिमा प्रभु की करति सुनावनि प्रेम बिसाल।
'पाठ पठहि रच्छया जहिं चाहहिं, होइं सहाइ द्याल ततकाल'।
महांदेव इतने महिं आए सुधि को लेनि कुशल हित नालि।
श्री हरिगोबिंद को करि दरशन मन मान्यो हम भए निहाल ॥ १६ ॥

श्री गुरु रामदास कुल प्राची उद्यति चंद्र मनिंद अनंद।
उज्जल दिपहि जामनी सिक्खी ग्यानवानु सिख जुति उड ब्रिंद।
संगति देश बिदेशनि की गन कीननि कैरव को बिगसंद[1]।
दुषट प्रफुल्लित हुइ जितकति जो मुरझावहिं मुखमद अरबिंद[2] ॥ १७ ॥
जिम कशशप घर सूरज जनम्यो श्री अरजन के हरिगोबिंद।
निसा अबिद्या नाशनि कीनसि अंध उलूक जि निंदक निंद।
संत अनंत कमल बिकसंतहि चपे चोर द्रोहीदुख ब्रिंद।
तुरक तेज तमपति को ताड़ति त्रिसक्ति तारनि बीरनि दुंद[3] ॥ १८ ॥

इम अनुमानति महांदेव मन प्रेम करे बहु लीनि उछंग।
'मोहि सुनावहु द्रोहि दुषट को ध्रोहु कीनि जिम मिलि दिज संग।
रक्ख्यक पारब्रह्मगुरु नानक किम सहाइ कीनसि म्रिदु अंग।
प्रिथक कर्यो किम जननी दासनि, त्याग सरब ही भए निसंग ॥ १९ ॥

श्री अरजन कहि 'दिज इह बैठ्यो इसको बूझ लेहु सभि बात।
एकाकी सभिहिन ते कीनसि ऊपर ले गमन्यो दधि ख्वात।
सहिज सुभाइक रहे सकल नर लख्यो न किनहूं इह बिरतांत।
रोदति ऊच पुकारति जबिहूं अनवायो[4] हमने तिस भाँति ॥ २० ॥
दधी खुलाइ रहे नहिं खाई, कूकर खाई मर्यो तुरंत।
महांदेव सों दिजने भाखी डूबति प्रिथीआ पाप करंति।
मुझको भी गहि लग्यो डुबावनि अपने संग अधिक अघवंति।
करामात साहिब गुर नंदन अंतरजामी सरब लखंति ॥ २१ ॥

---

1. कवियों के उद्यानों का विकास करते हैं। 2. कमलवत् मुरझा जायेंगे। 3. वीर सितारों का तिरस्कार करते हैं। 4. बुलाया।

पाप जानिकै अच्यो न मुख महिं, मैं बच रह्यो सु नरक परंति ।
अधम उधारन बिरद संभार्‌यो, बखश्यो, क्रिपाकरी भगवंत ।
कौन कौन गुन इनके उचरौ, जाने परै अबै अघहंति ।
महांपुरख अवतार जुपूरन काज करन हित नर तनवंति ।। २२ ।।
बिसमै महांदेव पुनि भाखी मैं समुझाइ रह्यो अबि जाइ ।
अघ दीरघ नै तिसै दबायहु सुनि शुभ बात नहीं मन त्याइ ।
दिल्ली गमनहि तुरक अगारी दीन होहिगो बिन अलाइ ।
हमरे बडियन के पग परते अस वडिआई लखहि न काइ ।। २३ ।।
बडो बैसमहिं अलप बुधि जिस, पाप बाद बिन बोलति नांहि ।
कपट लपट घट, दपट ध्रोह नित[1], मतसर पावक महिं जर जाहि ।
कुटिल बडो नहिं समझहि कैसे इतने औगुन हुई जिस मांहि ।
मानुख की गिनती कहु क्या है, ब्रह्मा सकै न तिह समुझाहि' ।। २४ ।।
श्री अरजन कहि सुनहु भ्रात जी नाहक हम सों ठानहि द्वैष ।
तदपि करहि तौ हमसों क्रूरि है, बालक सों क्या कपट विशेष ।
कारस[2] मुख ते लज्जिति हुइ करि रहि न सकहि, कहि अजसु अशेष ।
अपनी खुशी जाति पुरि तजि कै हनहिं बुरा कह्यो तिस लेशु' ।। २५ ।।
इत्यादिक कुछ अपर बारता करिकै महांदेव ग्रिह आइ ।
हरिगोविंद निज नंद अनंद गोद बिठाइ गंग बलि जाइ ।
दीननि दान दीनि सुत कुशली[3] जानति नयो जनम इन पाइ ।
रंकन ते आशिख गन लीनसि अधिक सुधा ते माधुरताइ ।। २६ ।।
सरब गुरनि हित कीन तिहावल श्री अरजन जी धरिकरि पास ।
भए सहाइक आन दास के करिवावति भै तबि अरदासि ।
संगति सगरी करी हकारनि बरतायहु तिन महिं सुखरास ।
जै जै कार उचारनि करते महिमा महां सु प्रेम प्रकाश ।। २७ ।।

दोहरा

इस प्रकार उतसाह को सिख संगति गुर धाम ।
शबद कीरतन होति है सिमरति सभि सतिनाम् ।। २८ ।।
'धंन धंन' गुर को कहैं 'जहिं कहि करहि सहाइ ।
अंग संग निज दास के बिघन छुहनि नहि पाइ' ।। २९ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'महांदेव गुर को संबाद' बरननं नाम एक बिसती अंशु ।। २१ ।।

---

1. नित्य ही द्रोह करके आँखें दिखाता है । 2. कालिमा । 3. पुत्र की कुशलता के लिए ।

अंशु २२

'प्रिथीआ सुल्ही सों मिलिनि प्रसंग

दोहरा

इस प्रकार श्री गुर सदन अति उतसाह कीनि ।
अधिक तिहावल वरतही भई भीर सुख पीन ।। १ ।।

सवैया

लघु दुंदभि की धुनि वाजति हैं बहु नाद नफीरनि के संगि भारी ।
घरि पौर कुलाहल होइ रह्यो सभि आशिख देति मिले नर नारी ।
प्रिथीए कहु गार निकारति हैं 'नित पाप बिखै रति जो दुरचारी ।
हरिगोबिंद को विख दीनि अबै, परमेशुर हाथ दे लीनि उबारी ।। २ ।।
मुख कारख लागि गई तिस के, मरिबे लगि जाइ न कैसे पखारी[1] ।
शरम्यो घरि बीच दुर्‌यो मति मूरख बाद ही वैर करे हित टारी ।
गुर नानक की इह जोति विराजति, है गुन पूरन जे शुभ कारी ।
छल ब्रिंद करे न छले किस रीति, सदा सरबग्य, क्रित्तग्य उदारी' ।। ३ ।।
ऐ बतीआं सुनि कै सभि ही तिसके पख के सभि जाइ सुनावैं ।
'लोक हजारों ही गार निकारति कीनि महां अघ बाक अलावैं ।
यौं उतसाह करैं बहु भांतिनि वादित भांति अनेक बजावैं ।
भीर रही भरि, पूरनि मा घरि, भूर तिहावल को बरतावैं' ।। ४ ।।

कबित्त

प्रिथीआ सुनति मन गिनती गिनत बहु काज नहिं सिद्ध भयो सल्ल रह्यो छत्तीआं[2] ।
निफल उपाइ गए, ठानति अनेक भए उलटो कलंक लए, जान्यो जित कित्तीआ ।
बिप्र मतिहीन विख दाव ते न दीनि जिनि जामती मैं जानतो न तम भए अत्तीआ[3] ।
होति क्रित क्रित जबि बैरी म्रित देखि लेति, बच्यो निज भागनि ते भली भाल रत्तीआ[4] ।। ५ ।।

---

1. मृत्यु-पर्यंत भी यह (कालिमा) नहीं जायेगी, उसे कितना भी धो लिया जाये । 2. सीने में यह पीड़ा ही रह गई । 3. अत्यधिकता । 4. माथे की रत्ती अच्छी थी; भाव, भाग्यवान् था ।

कबित्त

निंदक बने हैं नर, घर घर कहैं पुरि, सुनिओ न जाइगो बिसाल बैर चीनिओ ।
ऐसे चिंता ठानि कै अधिक दुख मानिकै, कहति निज लोकन सों 'त्यारी सभि कीनिओ ।
लाद लेहु आज, नहीं रहै शेष काज कुछ, सगरे समाज की संभार करि लीनिओ ।
बड़ी भुनसार[1] ते सिधार परैं पंथ बीच, देखि हैं न बोल हैं सु रौल होइ हीनिओ[2]' ।। ६ ।।

सवैया

तिस बासुर मैं सभि त्यारी कराइ कह्यो तम भैं पुरि ते निकसैं हौं ।
नर हेरि के छेरि न कोइ करै सुनि बाक कठोर को हौं न सहैं हौं ।
बिगरे नर नारि जि गारि निकारति, पक्खय को धारति जे दिल पै हौं ।
सुनि लोक हमारे दुखैं तिन ते रिस धारि कैवार न ह्वै, चलि जै हौं ।। ७ ।।

सवैया

पैठ्यो निकेत मैं बैठि रह्यो सु प्रतीखति सांझ परो सहिसाइ[3] ।
चित महां, नहिं भोजन कीनि, अबोल इकांत भयी इक थाईं ।
दुंदभि आदिक बादित को सुनि सेल लगे जनु सूल उठाई ।
सो करकै उर मो सरकै, गरकै दुख मैं डर कै थरकाई ।। ८ ।।

सवैया

भानु अथयो. तम छाइ गयो, करमो कर मो गहि[4] भोजन ल्याई ।
धीरज दीनि प्रबोधन कीनि, 'प्रबीन महां तुम क्यों दुचिताइ ? ।
जानति है सभि लोक बिलोकति जे पतिशाह समीप सदाई ।
जाइ कै फेर निकासि दिहो पुरि, आप बसो हटि तूरन आई ।। ९ ।।

सवैया

चिंत निवारि करो पुरशारथ, होइ सकारथ जानि तुमारो ।
उद्दम ते बिन प्रापति ह्वै नहिं, सो अबि सल्ल्य समूल उखारो !
ले पतिशाहि कि सैन बड़ी, पकराइ दिजै, नतु दूर उजारो ।
पीवति जे दधि, जीवति ना इमि, थीवति ना पुरि रौर उदारो' ।। १० ।।

सवैया

या बिधि बाक अनेक कहे, सुनि हानी कछु दिल ते दलगीरी[5] ।
कीन अहार को, ब्रिद बिचारति—मेल करौं जु सभा जहागीरी ।
होहिं सहाइक मेरे सभै, कहि कै जु सुनावहिं गे मम पीरी ।
दे धन को अपने करि हौं इह बैठो रहै न पठै लिखि चीरी[6] ।। ११ ।।

---

1. पौ फटने पर । 2. शोर समाप्त हो जायगा । 3. संध्याकाल जल्दी आ जाती है । 4. हाथ में पकड़ कर । 5. मन की ग्लानि कुछ दूर हुई । 6. चिट्ठी, पत्र ।

सवैया

रैंन को नैंन मैं नींद नहीं विच ऐन के सैंन रह्यो पर कै।
पाप बिखै अनुरागति जागति लागति ना पलक थिरिकै।
शोकति[1] प्रात उडीकति ही निस चार घटी ते चल्यो चरि कै।
सेवक दासी लीए वनिता संगि और समाज सभै भरिकैं॥ १२॥
पंथ परे इक द्वै दिन मैं जबि होति भयो सुध काहु कई।
है सुलही इत और अवै, पतिशाह के पास न सो सुनई[2]।
होति भयो सों प्रसंन रिदै महि कारज मोहि बनै दुनई।
हेहरी ग्राम बिखै उतर्यो दिन केतिक को, कुछ कार लई॥ १३॥
यौं सुनि कै सुलही को तबै मन आनंद धारिकै पंथ पयानो।
भांति अनेक गिनै गिनती निज कारज सिद्ध भयो पहिचानो।
जाति भयो उतलावति ही उतपात सो हेत रिदै जिन ठानो।
आपने लोकनि सौ इम बोलति मोर मनोरथ पूरन जानो॥ १४॥

कवित्त

सुलही निकट, मेरो मीत है अमिट महां, मिलिकै बिकट रिपु छिप्प्र गहिवाइ हो।
पुत्र के समेत जाइ पकरे निकेत विखै, मोचन को हेतु कोऊ होइ न, सिखाइ हो।
काराग्रिह रहै, लेऊं सगरे मैं ग्रिहछीनि, जैसे लघु ग्रह पर ग्रह बली, जाइ हौं।
जतन बिहीन होइ, सभिनि ते दीन होइ. मेरे ही अधीन होइ, तबि सुख पाइ हौं॥ १५॥
ऐसे बात कहि किह 'होवौं गुरु लहि लहि[3] लोभ धन चहिचहि ठानति हंकार को।
देति है दिलासो निज लोक भरवासो हेतु करति निशा सो उर निशचै उदार को।
हेहरी पहूच्यो जाइ डेरा कीनि थाइं किस, निस विसराम कीनि उठ्यो भुनसार को।
मज्जन कै नीर चीर पहिरे सरीर शुभ, सुलही के तीर पठ्यो नर सुधि सार को[4]॥ १६॥
गयो पुन आप कह्यो अधिक प्रताप हेहु, शत्रुनि संताप परे बैठ्यो तिस तीर होइ।
सुलही ने बुझ्यो 'कौण कारज उरझ रह्यो कैसे चलि आए हो सुनावो वीर बात सोइ।
सेवक न पठ्यो तहां बैठे रहे हुते आप, कारज तुमारो करि देति सो कहति जोइ।
सदा अनुसार है, सो सखता बिचार है, बिलम नहीं धारिहैं. सुधारिहैं कहीजै कोइ॥ १७॥
प्रिथीआ कहति गुरु राखै तेरी पति नित, मेरै बिसवास चित थिति यौ हमेश को।
मेरो काज अपनो समान नीको जानि करि, छिप्प्र ही सुधारि देति प्रेम कै बिशेष को।
कपट बिहीन प्रेम निबहै तुमारो भारो, हिरदे हमारे तैसो भेद है न लेश को।
आगे तुम गए जबि छड्ड गयो पुरी तबि, जाइ बस्यो ग्राम मैं समाज लै अशेष को॥ १८॥

---

1. शोक करते हुए। 2. सुनता नहीं। 3. अत्यन्त विकसित। 4 कुशल-क्षेम जानने को।

आप संगि मिल्यो आइ तबि मैं रह्यो सु पुरि, संमत बिताइ तीन ग्राम तजि आयो है ।
हम सों सनेह ठानि पुरी बस्यो आनि करि, बीते हैं बरख दोइ महां सुख पायो है ।
बडो भ्रात मै हौं गुरु पद अधिकार मेरो पिता ने अजोग करि गादी सो बिठायो है ।
देति न दरब, आप राखति सरब, उर धारति गरब को, समाज अधिकायो है ।। १९ ।।
शाह को न जानै, नहीं हाकम को माने कबि, त्रास को न ठाने, मन मन बधाइ करि ।
आइ चार ओर ते उपाइन अनेक भांति देति सभि जाति बहु सीस को निवाइ करि ।
मो सों करै बाद उर धारि कै प्रमाद बडो. लोक पुरी आदि के सभिनि सिख राइ करि ।
निंदा को कराइ मेरी, सिक्ख्यन बिगार देति, पूजा हान दूजा ह्वै न आपि को बडाइ करि ।।२०।।
जोरि पाइ मेरे पै अवास ते निकासि दीनि, आपनो प्रकाश कीनि त्रास हीन होइ कै ।
निकस्यो निरास्र[1] मैं आसरो निहार्यो एक, सखा हो बडेरे तुम आयो इम जोइके ।
तेरे बिन कोऊ न सहाइक हमारो जग, तोही को असीस देति नीत अविलोइ के[2] ।
गादी है पिता की पद ऊचगुरता की शुभ, मोही को दिवाइ देहु दोइन ते खोइकै' ।। २१ ।।
सुलही पठान क्रोध धारि कै महान भनै, 'अबि लगि तेरे संगि बादि सो उठावही ? ।
समझ्यो न जोर, नबिलो क्यो हम ओर तिन, मालक मुलक को न जानि त्रास पावही ? ।
तेरे हेतु गयो तबि, सखा हैं लगति नीके, गयो पुरि छोर सो प्रसंग बिसरावही ? ।
देउं मैं सजाइ, इस बात की, समृत्थ मोहि तऊ पातशाहि पास जाइ कै सुनावही ।। २२ ।।
फेर गहि लै हैं, न संदेह उपजै है. सभि गुरता को दै हैं तुझ, कोई न मिटावई ।
अबि मोहि काज सौंप भेज्यो माझे देश पर, दरब सरब को मगावौं एक थांवई ।
करौं उगराही ब्रिद पैसे पातिशाही लेवौं. रहौं चिरकाल मैं बिसाल धन पावई ।
फेर दिल्ली जावई, प्रसंग को सुनावई. शिताब[3] बुलवावई सो न्याउ को चुकावई ।। २३ ।।
झगरे मिटाइ सिख सगरे शरनि पाइ, नगरी बिठाइ गुरु तोहि को बनावई ।
करौं उपकार निज सखा पै जगत जानै, सकल उपाइन को लेहु हरखावई ।
होइकै अशत्रु[4] फल लीजै मित्र होन हूं को, ऐश्वरज बचित्र पाइ मोद उपजावई ।
केतिक दिवस बास कीजीए समीप मोहि, काज फेर होहि तेरो दिल्ली जबि जावई ।। २४ ।।
हेहर जो ग्राम इह पातशाहि दीनो मोहि, देवौ सोई तोहि, बास सुख सों करीजीए ।
करो गुजरान सिक्ख संगतां महान होहिं, दूजा न समान पूजा निज करवीजीए' ।
प्रिथीआ सुनति मन आनंद उपायो बहु सुलही सों भाख्यो 'मेरे बाक को सुनीजीए ।
सुखी नित थीजीए, प्रताप मैं बधीजीए, मनरथ पुरीजीए[5], समेत जस जीजीए[6] ।। २५ ।।
गुरु अंग संग होइ संकट निवारै सोइ, बडो उपकार जोइ मेरे पर ठानिओ ।
दीनो शुभ ग्राम करौं बासबे को धाम इहां, आठोजाम तेरी श्रेय मुख ते बखानिओ ।
एक काम और सुनि ताल बनवायो तिन, आई सिख संगतां महान ही शनानिओ ।
तैसे मेरे मन है तड़ाग की बनाइ देऊं, भली इह बात है मनोरथ उठानिओ ।। २६ ।।

---

1. निराश्रित । 2. देख करके । 3. शीघ्र ही । 4. शत्रु-विहीन । 5. मनोरथ पूर्ण हों । 6. यशवंत जीवन बिताइए ।

होहु जे प्रसंन आप, आप[1] निरमल जां मैं ऐसो ताल सुंदर बिसाल बनि जाइ हैं'।
सुलही ने भन्यो 'इहु नीकी बाति ठानी चित, सभि को सुखद है अनेक नर न्हाइ है।
खगम्रिग नीर पान पुन ह्वै महान यांको, रचीए तड़ाग चारों भागते सुहाइ है।
जैसे बडी संगतां स प्रेम ते शनानैं तहां, तैसे तेरो होइ है सुजस पसराइ हैं'॥ २७॥
ऐसे कहि सुलही ने दीनसि दरब तबि, 'मेरो पुंन होइगो तड़ाग बनि जाइ हैं'।
प्रिथीए ने भाखि कै पटा सु लिखवायो ग्राम, रचे निज धाम कीनि बास सुख पाइए।
आवे[2] लगवाए नित ठानतो उपाइ बडो सामता कों चाहै सुधासर ज्यों सुहाइ है[3]।
आवैंगी उपाइन अनेक ही प्रकार करि, मेल होइ तीरथ को मिलैं समुदाइ है॥ २८॥

दोहरा

लग्यो करावनि ताल को धरि उतसाह बिसाल।
खरचहि दरब सु सरब को गुर की मतसर नाल॥ २९॥

श्री अरजन के सम बनौं करति पखंड अनेक।
अज़मत पावै कहां ते ग्यान बिहीन बिबेक[4]॥ ३०॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रथे त्रितिय रासे 'प्रिथीआ सुलही सों मिलिनि' प्रसंग बरननं नाम दुइ बिंसती अंशु॥ २२॥

---

1. जल। 2. ईंटों के भट्टे। 3. अमृतसर की समानता करना चाहता है।
4. ज्ञान-विवेक के बिना वह महानता कहाँ से पाएगा ?

अंशु २३

प्रिथीए ताल लगावन प्रसंग

दोहरा

श्री गुर सों मतसर धरति[1] रचति दंभ बहुं भांति ।
लागि तड़ाग बनावने कहि कहि महिमा बाति ॥ १ ॥

निसानी छंद

खरचति दरब विसाल को आवै लगवाए ।
ब्रिंद मिहनती लगि परे बहुकार कराए ।
खन्यो[2] तुरत बड ताल को म्रितका[3] निकसाई ।
चहुं दिशि ते इकसार करि चिनती[4] लगवाई ॥ २ ॥

दिन सगरे बैठयो रहै कहिकहि करिवावै ।
देति मजूरी संझ को भुनसार लगावै ।
गन कारीगर चिनति हैं सुंदरता संगा ।
देखि देखि हरखहि रिदै धरि वडी उमंगा ॥ ३ ॥

करति सुधासर रीस को[5] तिसही विधि कीनो ।
मदर तीरतड़ाग के शुभ रचना चीनो ।
हरि मंदर सम दर करे कहि आप बतावै ।
कहि कहि छिप्प्र[6] करावतो, धन दे हुलसावै ॥ ४ ॥

मान सरोवर विमल जल घर हसनि केरा ।
तिम अम्रित सर कीरतनि गत संत बसेरा ।
कमल प्रफुल्लति बहु बरन दिपतावति शोभा ।
सतिनामु हरि रामप्रभु अलि जन गन लोभा[7] ॥ ५ ॥

---

1. अभिमान धारण किए हुए । 2. खोद डाला । 3. मिट्टी । 4. निर्माण-कार्य । 5. अमृतसर की नकल करता है । 6. शीघ्रता । 7. दास रूपी भंवरे मोहित होते हैं ।

हेहर गाँव पुराने ज़िला लाहौर में है । यहाँ पृथीए का बनाया मन्दिर, तालाब और उसकी वीरान समाधि अब भी है ।

बिच सुंदर मकरंद है आनंद संदोहा[1]।
लघु दीरघ दल ब्रिद हैं सद गुन गन सोहा।
जहि पराग श्रद्धा सुभग चहुं दिशि पसरंती।
सुठ म्रिणाल[2] गुर चरन की प्रीती उपजंती ।। ६ ।।

मुकता मुकति अनेक ह्वी लै संत मराला।
मिलहिं बिनोद प्रमोद ते चहुं कोद बिसाला।
वक सम प्रिथीआ देखिकै चित चाउ उठावा।
पिखि छपड़ी ढिग ग्राम की चीकर[3] बिथरावा ।। ७ ।।

समता मानस की रचहि मानस हरिखावैं[4]।
मानस मूरख ब्रिंद के धन हित बिरमावैं।
भेक अनेक जि अवगना[5] तिन सों बहु छावा।
मतसर, त्रिशना, द्वेष, रिस समुदाइ रहावा ।। ८ ।।

इस प्रकार प्रिथीआ करहि हित ठगिबे मूढा।
वुद्धिवान किम भरम हैं जिन को रिद मूढा।
मंदरि चारु बनाइकै अंदरि तिह बैसे।
लखहि कि संगति आइ है अंम्रितसर जैसे ।। ९ ।।

सुलही अरु प्रिथीआ मिलहिं देखहिं हरखावें।
अधिक सराहैं तालको निज नरनि सुनावें।
'मज्जहिं लाखहुं नर इहां तीरथ हुइ भारी।
महिमां पसरहिगी अधिक हेरहिं नरु नारी ।। १० ।।

श्री अंम्रितसर ते बडो इह होइ प्रभाऊ।
भले देश महिं बन्यो बर मानव समुदाऊ'।
मूरख भावी नहिं लखहि सभि होइ खुआरू[6]।
सुकहि जल ढहि जाइगो मंदर सम बारू[7] ।। ११ ।।
बिन अज़मत जानहि कुतो[8] क्या होइ अगारी[9]।
ग्यान बिलोचन उर नहीं अंधे दुख भारी।
कोइ कोइ सिख तिसी को चलि करि तहिं आवै।
करि सनमान बखानतो 'जो नर सर न्हावै ।। १२ ।।

---

1. राशि-राशि। 2 सुन्दर कमल-नाल। 3. कीचड़। 4. मानसरोवर की समता में रचना कर मद में प्रसन्न होने हैं। 5. अवगुण रूपी मेंढक। 6. दुःखी होगा। 7. रेत के महल की भांति ढह जायगा। 8. क्योंकर। 9. आगे क्या होने वाला है।

मन बांछति फल पाइ है सभि पाप उतारैं।
इत्त्यादिक महिमा महां नर मिलहिं उचारैं।
जतन करति बहु भांति के हार्यो दुख पाए।
मेला लग्यो न ताल को नहिं भे समुदाए[1] ॥ १३ ॥

सुधासरोवर संगतां नितप्रति बहु आवैं।
करहिं शनान सभावनी मन बांछति पावैं।
शुभ दिन मेला नरनि को मिलि जाइं हज़ारो।
चारहुं दिश ते आवते बहु दे उपहारो ॥ १४ ॥

जरहि रिदे मैं जरहि नहिं सुनि चित रखंता।
पच हार्यो[2] महिमा कहति ओड़क[3] पछुतंता।
प्रिथीए के सिख रंक जे कबि कबि चलि जावैं।
आई बिना उतसाह ते बांछति नहिं पावैं ॥ १५ ॥

श्री अरजन की संगतां अम्रितसर जै हैं।
मिलहिं मेख शंक्रांत को धरि शरधा न्है हैं।
मन बांछति को पावते नित अति उतसाहू।
दुंदभि अलप नफीर गन बाजति धुनि तांहू ॥ १६ ॥

बजहिं रबाबम्रिदंग गन शंखनि के शोरा।
गावहिं रागनि महिं शबद फिरि करि चहुं ओरा।
जाम त्रिजामा रहे[4] ते मंगल नित होवै।
बरतहि बहुत कराह[5] सभि गुर दरशन जीवैं ॥ १७ ॥

जाम दिवस के चढे लौ मेला रहि भारी।
अरपहिं अनिक उपाइना होवति बलिहारी।
गाइं रबाबी शबद को रागनि चतुराई।
खरे करहिं अरदास को बांछति सभि पाई ॥ १८ ॥

होति कुलाहल मिलहिं नर सिमरन प्रभु केरा।
जै जैकार उचारते करि चहुंदिशि फेरा।
नई नई नित संगतां आवहिं चलि दूरी।
प्रेम परम पुलकावली हुइ मिलति हदूरी ॥ १९ ॥

केतिक उतसव देखि कै प्रिथीए ढिग जावैं।
मंगल सगल सुनावते बहु बिधि गुन गावैं।

---

1. अधिक भी दर्शनार्थ नहीं आए। 2. प्रयत्न करके हार गया। 3. अन्ततः।
4. एक पहर रात रहने पर। 5. हलुवा वितरित होता।

'अधिक दरव आवहि चल्यो गिनती कुछ नांही ।
देनि लेनि अति होति है श्री अरजन तांही ॥ २० ॥
तुम ढिग भाग हजारवों आइ न धन कोई ।
संगति देश विदेश ते भरि भीरहि सोई[1] ।
को को मंगल तिनहु के[2] तुम निकट सुनावैं ।
दिन प्रति लखमी बरखती सभि अनंद उपावैं ॥ २१ ॥

इक आवति, इक जाति है, इक कीनसि डेरा ।
इक दरशन कहु दरसते दे दरब घनेरा ।
एक सुमति रागन शबदि, इक आपे गावैं ।
एक प्रकरमां देति हैं, इक सीस निवावैं ॥ २२ ॥

इक करते इशनान को करि अदब उदारा ।
इक कीरति मुख ते करति गुरु अरजन भारा ।
एक टहिल[3] को करति हैं, इक बरको लेवैं ।
इक सुत बित को पावते पग पंकज सेवैं ॥ २३ ॥

गुरता भासहि बिदत तहिं जैकार उचारैं ।
कीरत अति बिसतरति[4] है बुधि ग्यान विचारैं ।
इत्त्यादिक नर आइ कै बिरतांत सुनावैं ।
सुनि सुनि प्रिथीआ बहु खिजहि मन महिं पछतावै ॥ २४ ॥

अपनो श्रम जेतो कर्यो सभि बाद पछानै ।
लाखहुं धन को खरच मा वेअरथ सुमानै ।
लघुता मो कहु इहु नई दुखदायक होई ।
सभि जानहिंगे गुर नहीं, सर बस्यो न कोइ ॥ २५ ॥

मेला लाग्यो न पुरब[5] को नर ब्रिंद न आवैं ।
महिमा नहीं बिसत्रिति मई नहिं शरधा ल्यावैं ।
बड उदारता मैं करी खरचयो धन भारी ।
अलप दिननि महिं ब्रिंद नर लगि कीनसि त्यारी ॥ २६ ॥

सुंदर बन्यो तड़ाग बड नहिं कीमति जानी ।
यति संगति आइ नहिं, नहिं शरधा ठानी ।
दरब लगायहु जितिक मैं लाखहुं लगि[6] या मैं ।
पूजा महिं नहिं तितिक हइ बीसक बरसा मैं[7] ॥ २७ ॥

1. वहाँ भीड़ एकत्रित रहती है। 2. उनके (गुरु अर्जुन के)। 3. सेवा। 4. विस्तृत। 5. पर्व, त्यौहार। 6. लाखों तक। 7. बीस वर्षों के चढ़ावे में भी इतना धन नहीं होगा।

इम प्रिथीआ नितप्रति चितहि चिंता चित मांही ।
कीरति सुनहि शरीक की निस दिन सुख नांही ।
सुलही सों कबि कबि मिलै दुख कहति सुनावै ।
'जब दिल्ली पुरि चलहुगे कारज बन जावै ।। २८ ।।

जावति[1] गादी गुरु की श्री अरजन पाही ।
तावति[2] मम कीरति कहां, पूजा हुइ नांही ।
अज़मति होइ न मोहि महिं, नहिं शरधा धारैं ।
आइ न बंदन करति हैं, नहिं दें उपहारें ।। २९ ।।

तोहि करे ते मोहि कहु बड़ बधहि प्रतापा ।
सिख संगति सभि आइ हैं फ़रि हैं मम जापा ।
जबि लौ दिल्ली जाइके गहि लेति न ताहीं ।
तबि लौ मेरो सुख कहां, चिंता दुख मांही ।। ३० ।।

तुझ प्रताप ते बन गयो इह सुन्दर ताला ।
सभि जग महि पसर्यो महाँ तुव सुजसु बिसाला ।
दूर दूर की संगता आवहिं दरसंती ।
कीरति तोहि उचारती आसीस दिवंती ।। ३१ ।।

बध्यो पुंन तेरो महाँ गुर के घर मांही ।
हलति पलति[3] सुधरे दुऊ जम को दुख नाही ।
तुव समान तुरकनि बिखै दिखियति नहि कोई ।
धंन मात पित जन्यो जिन उधरे से दोइ[3] ।। ३२ ।।

निज तरीफ सुलही सुनी फूलति चित मांही ।
कहनि लग्यो 'मैं करौं गो दिल्ली जबि जाहीं ।
केतिक दिन महिं चलहिंगे मिलि करि ढिग शाहू ।
खोलहिं सगरी बारता बिदतहि सभि काहू ।। ३३ ।।

गुरता तुझको देय हैं बहु करि बड़िआई ।
श्री अरजन को लेहिं गहि, नहिं सकहि छुराई ।
अलप रह्यो इस देश को धन संच्यो सारो[4] ।
कई लाख अरपन करहिं ढिग शाहु उदारो ।। ३४ ।।

---

1. जब तक. तब तक । 2. इहलोक-परलोक । 3. जन्म देने वाले माता-पिता भी धन्य हैं, उन दोनों का भी उद्धार होगा । 4. इन प्रदेश का लगभग सब धन संचित हो गया है, थोड़ा ही शेष है ।

चिंता मुझ तुझ काज की दिन रैन लगी है।
जब लौ करौं न जाइ कै बुधि मोर दगी है[1]।
इस प्रकार बहु बार ही मिलि करि कहिं दोऊं।
श्री अरजन कीरति सुनहिं दुख प्रापति सोऊ ।। ३५ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'प्रिथीए ताल लगावन' प्रसंग बरननं नाम त्रैबिंसती अंशु ।। २३ ।।

---

1. जलती है।

अंशु २४

भाई गुरदास प्रिथीआ संबाद

दोहरा

इस प्रकार सों दुषटता दोनहुं चित चितवंति ।
श्री अरजन अपने रिदै सरल सुभाव ब्रतंत ।। १ ।।

निसानी छंद

हमरे पित को पुत्र है पुन बैस बिसाला ।
निकस्यो पुरि ते उजर कैं तजि गयो, दुखाला[1] ।
अपजसु बिख के दैन को सुनि सहि न सक्यो है ।
अपर उपाव न कुछ वन्यो उठि जानि तक्यो है ।। २ ।।
हमरो राखा एक नित श्री प्रभू करतारा ।
बुरो कौण करि साक है हुइ बंक न बारा[2] ।
अबि हकार करि किसी कहु पुरि बिखै बसावैं ।
देहिं बडाई तांहि बहु कहि जस हरखावैं ।। ३ ।।
उजर्यो वहिर जु फिरति है हमरी भी निंदा[3] ।
नहीं भ्रात को पिखि सकें काढ्यो करि चिंदा[4] ।
गुरता दीनी पिता ने नगरी इन छीनी ।
देख सकहिं नहिं निकट भी कढि बाधा कीनी[5] ।। ४ ।।
त्रिसकार्यो वड भ्रात को कीनि न सनमाना ।
धन के लोभी गुर भए इस बिधि ते जाना ।
इत्तयादिक नर भनति हैं --श्री गुरू बिचारी ।
भल्ले बेदी तिहुण कुल इम करति उत्तारी ।। ५ ।।
हम पर अवगुन धरति हैं नहिं मेव लखंते ।
यांते ल्यावनि उचित है अपजसहिं मिटंते ।
दयासिंधु पुन दया महिं इस रीति बिचारैं ।
वहिर फिरति दुख पाइ है युत सभि परवारैं ।। ६ ।।

---

1. दु:खी है । 2. बाल भी बांका नहीं हुआ । 3. बाहर उजड़ा फिरता है, इसमें हमारी भी निंदा है । 4. चिन्तित । 5. दु:खी किया ।

बहुर विचारति गुरू जो तुरकनि ढिग जाना।
करहि पुकार सु न्याउं हित भा कपट महाना।
हम लगि आवहिंगे दुषट इह बात न नीकी।
बिद्रतहि बडो बिरोध तबि हुइ कीरति फीकी ॥ ७ ॥

इतने कारन रिदे महिं श्री गुरु विचारे।
निशचै कीनसि इह मतो अबि तिसै हकारै[1]।
निकट बुलावनि कीनि तबि भाई गुरदासू।
समुझाई सभि बारता बैठाइ सु पासू ॥ ८ ॥

'भ्राता प्रिथीआ हेहरी. तहिं तुम चलि जावो।
बचन कहहु सनमान सों नगरी निज ल्यावो।
आइं उपाइन अनिक विधि धन वसतू महाना।
सो सभि तुझ कउ अरप हैं बरतह हम साना[2] ॥ ९ ॥

तजहु बिरोध सु क्रोध को बड कलहा भूलं।
हम नहिं राखैं भेद को नित तव अनकूलं।
हुइ निष-कपट चलीजीए मातक सभि केरे।
चहहु भला सभि हूंनि को हरखहु सुख हेरे ॥ १० ॥

बड सथान. अबि हुजीए उर सरल सुभाऊ।
अवगुन अलपनि[3] के तजहु रच्छहू सभि काऊ।
तुव आइसु महिं सभि चलहिं हम आदिक जेते।
कलहि कुटब की भली नहिं कीजहि चित चेते[4] ॥ ११ ॥

हारे ते सुख होति है जीते दुख होई।
अपजसु पसरहि सकल महिं धिक जीवन सोई।
सतिगुर गादी बडी है इस लाइक हूजे।
सिख सेवक स्यानो सुमति जिह पिखि सभि पूजे ॥ १२ ॥

पुनि परलोक बिसाल सुख शुभ गुन ते होवै।
दोनहु थल मुख ऊजला दुख कबहुं न होवै।
इत्यादिक समुझाइ करि, भाई गुरदासू।
बडे भ्रात को आनीए गमनहु अबि पासू' ॥ १३ ॥

सुनि करि जुग कर जोर करि तबि बिनै बखानी।
'श्री गुर जी मैं जाइ हौं आइसु को मानी।

---

1. बुला लें। 2. हमारी तरह बर्ताव करो। 3. छोटों के। 4. मन में विचारिए।

लखहुं परंतु न आइ है गन अवगुन धारी ।
भला भनै[1] समुझहि बुरा सभि सुमति बिसारी ।। १४ ।।
इम कहि करि पग कमल परनिज सीस लगायो ।
प्रेम सहत बंदति भयो चलि बाहर आयो ।
कितिक दास निज साथ ले मग कीनि पिआना ।
कितिक देर महि गयो चलि हेहरि जिस थाना ।। १५ ।।
डेरा कीनसि ग्राम महिं तिस निस बिसरामा ।
अगले दिन इशनान करि गर पहिर्यो जामा ।
गमन्यो प्रिथीए निकट तबि कर बंदन बैसा ।
कह्यो ब्रितंत स बेनती गुर को मति जैसा ।। १६ ।।
'रामदास श्री सति गुरू शुभ गुन सभि धामू ।
जगत आन जिन मानही समता श्री रामू ।
जेठे तिन के पुत्र तुम उज्जल कुल केरे ।
गादी श्री नानक गुरू सम दुती न हेरे ।। १७ ।।
महां पुरख सतिगुर अमर अज़मत के पूरे ।
आन न समसर जिनहुं के ग्यानी गुन रूरे ।
सो तुम जननी के पिता गुरता जिन दीनि[2] ।
नानक दादक दुऊ कुल उज्जल जग चीनी ।। १८ ।।
उचित तिनहु के करम शुभ चहियति तुम ही को ।
जिन को जगत सराहि ही अस करीअहि नीको ।
सोढि बंस महिं जनम है छत्री बडबाहु ।
तुरकनि आगै बेनती हति हुइ उतसाहु ।। १९ ।।
यांते श्री अरजन गुरू बहु करि सनमाना ।
कर्यो हकारनि आप को बसीयहि निज थाना' ।
गुर की कहवत सकल ही गुरास सुनाई ।
'बीती गई सु जानि द्रिहु सुधिता अगुवाई[3] ।। २० ।।
मिलहु सकल निज सदन महिं करि लीजहि मेला ।
आन परहि बिपता बहुत फिर फुटहि 'इकेला ।
लेहु दरब सभि वसतू को मालिक तुम होए ।
अपने कर सों दीजीए हक नंम्र खरोए' ।। २१ ।।

---

1. भला कहने पर भी । 2. वे तुम्हारी ही जननी के (पुत्र) हैं, जिन्हें पिता ने गुरु-पद दिया है । 3. आगे के लिए बात शुद्ध समझो ।

जबि सभि कहि गुरदास जी गाथा समुझाई।
सुनति कुप्यो प्रिथीआ अधिक जुग भौंह चढ़ाई।
लाल आंख दिखरावतो ओठनि फरकावै।
बोलि न आवति क्रोध महिं बहु स्वास चढावै ॥ २२ ॥

लग्यो निकासनि गारि बहु कहि बाक कठोरा।
'पूरब कपट बिसाल करि अपमान सु मोरा।
तुहमत[1] झूठ लगाइ कै निंदा बिदताई।
सभि लोकन के पास ते बहु गारि दिवाई ॥ २३ ॥

अबहि मनावनि को पठ्यो छल और उठावा।
प्रिथम निकास्यो पुरी ते उतसाह वधावा।
अवि लौ तुम को नहिं लगी बायू कुछ ताती।
गरबति बैठ्यो सदन महिं करि सीतल छाती ॥ २४ ॥

प्रिथी अनादर प्रिथीआ सुलही मिलि बीजं।
लग्यो जु ताल प्रताप भा इह सीचन कीजं।
दिल्ली को जबि गमन ह्वै तरवर उगवै है।
जहांगीर सों मेल मम ऊचो वधि जैहै[2] ॥ २५ ॥

जबि मैं करौं पुकार तिस कुसमन जुत फूले।
रिसहि शाहि बड गंध हुइ मम पक्खय् सु झूलै।
अरजन को मंगवाइ गहि फल लागहि भारू।
मैं गुरता तबि हौं इह पाकहि चारू ॥ २६ ॥

चहुं दिश की संगति महां अरपहि धन आई।
पसरहि जसु सभि जगत महिं हुइ बड बडिआई।
इह फल लैबे हेतु मैं करि रह्यो उपाऊ।
तबि जानहुगे तुम रिदै जबि मैं कर पाऊं ॥ २७ ॥

---

1. लांछन। 2. यह पद सांग रूपक है—पृथीए का अनादर धरती है। पृथीए-सुलही का मिलन बीज है, नया तालाब सिंचन के समान है, दिल्ली को जाना पेड़ जमने के समान होगा और जहांगीर मिलन पेड़ की परिपक्वता बनेगा। मेरी पुकार (न्याय की मांग) से पेड़ में फूल लगेंगे, शाह की नाराजगी फूलों की गंध होगी, अर्जुन को पकड़ मंगवाना पेड़ के फलित होने के समान होगा और मेरे द्वारा गुरु-गद्दी पा जाना फल की परिपक्वता होगी।

अबि तेही लाग्यो डरनि, संग मिल्यो न शाहु ।
मिटहि बात मैं गुर रहौं यां ते पठि पाहू[1] ।
एव नहीं कुछ लेव हौं, छल तुम ने ठाना ।
सकट भोगहुंगे बडो तबि मैं सुख माना ।। २८ ।।

बिनां दीए तुम कषट को पैहौं जग राजू ।
होहि न मोहि प्रसंनता सो नहिं किछु काजू ।
कोटि जतन जे करहुगे, नहिं मिटहि उपाधा ।
गुरता लिऊं, परंतु सुनि, दे अरजन बाधा ।। २९ ।।

सुनि कै पुनि गुरदास ने कर जोरि बखाना ।
'रामदास गुर एक के नंदन मतिवाना ।
तीनहु भ्राता मिलहु अबि सुख सभि ही लैहो ।
नहीं पदारथ की कमी रलि मिलि के खैहो ।। ३० ।।

तीनहु महिं किह कषट हुइ सभि होहु दुखारे ।
भ्रात पने को मोह तबि बिदताइ तुमारे ।
जानि देहु रिस पाछली जिम किस बिधि होई ।
को जानै किन वुरा किय परहरीए सोई ।। ३१ ।।

चलहु आप हुइ सरल उर निज पुरी बसीजै ।
मिलि दिहु दरशन संगतां मेटा गन लीजै ।
श्री अरजन नित नंम्र हैं, छल झूठ बिहीना ।
दया छिमा जुति, ग्यान निधि, सभि गुननि प्रबीना' ।।३२।।

सुनि जसु कौ प्रिथीआ जर्‍यो बच ऊचे भाखा ।
चल्यो जाहु, बोलहु नहीं, मैं आदर राखा ।
नतु ऐसी करिवाइ हो, जरते कहू जारैं ।
भर्‍यो खुटाई सों सदा शुभ शील उचारैं ।। ३३ ।।

शत्रू महां मेरो बन्यो सुति जु कौ भारों ।
गुरता लैके बहुर मैं प्रसंनता धारों ।
तोहि कहे क्या होति है जस है तस जानों ।
रात दिवस चिंता विखै हति कै सुख ठानों[2] ।। ३४ ।।

1. (गुरु अर्जुन चाहते हैं) मैं गुरु बना रहूँ, इसीलिए तुम्हें (मेरे) पास भेजा है ।
2. मार कर (गुरु अर्जुन को) ही सुख पाऊंगा ।

तबि भाई गुरदास ने करि क्रोध बखान्यो ।
'श्री अरजन रवि जग दिखति खल पिचक[1] न जान्यो ।
संत तामरस[2] विकसते सभि नर सुख पावैं ।
तसकर निंदक दुखति कहिं नहिं सो घटि जावैं[3] ।। ३५ ।।
नाम प्रिथीआ चंद तूं फीको परि जै हैं ।
तुझ पक्खी उडगन छिपहिं, सो द्रिषटि न ऐहैं ।
अबि बच मोहि न मानि हैं पछुताइ घनेरा ।
बस न चलहि गो तोहि कछु बललाइ बडेरा ।। ३६ ।।

अजर जर्‌यो अज़मत महां नहिं कहूं दिखावे ।
नातुर बंक बिलोकवे सभि जग बिनसावैं ।
धंन रिदा तिनको महां बल इतनो पाए ।
अपर नरनि की सम रहति शकती गुपताए ।। ३७ ।।

कहति हुतो तुव हित महा, मानहि सुख पाई ।
तुरक अग्र बिनती करहि होइ न लघुताई[4] ।
घरि बैठे होवहिं गुरू मानहिं बहु देसा ।
करहिं बिनोद अनेक ही बन सभिनि विशेषा ।। ३८ ।।

नांहित तरुवरु तोहि कहि तिह कटनि कुठारा[5] ।
एक बाक मुख ते कहैं सभि हुइ जरि छारा ।
महिमा नहीं पछानतो भ्राता करि जानैं ।
क्यों लोक रु परलोक गति हठि ठान्यो हानैं' ।। ३९ ।।

दोहरा

इस प्रकार गुरदास ने कह्यो बाक सभि रीति ।
महां कषट को धारिही आवहि नहीं प्रतीति ।। ४० ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे व्रितिअ रासे 'भाई गुरदास प्रिथीआ संवाद' बरननं नाम चतुर बिंसती अंशु ।। २४ ।।

---

1. उल्लूक । 2. लाल कमल । 3. दुष्टों की इच्छानुसार सब घटित नहीं हो जाता । 4. कहीं तेरा छोटापन न प्रकट हो । 5. अन्यथा (जिस) वृक्ष की तू बात करता है, उसी को काटने के लिए (गुरु वचन) तेज कुल्हाड़ी समान हैं ।

अंशु २५

भाई गुरदास को आवन प्रसंग

निसानी छंद

बाक सुने गुरदास के प्रिथीआ तपतायो ।
ह्वै करि तूं उपदेषटा समुझावनि आयो ।
इन बातनि को क्या लखहिं बुधि कहां बिचारी ।
त्रास पाइ त्रिसकार को गहिबे डर भारी[1] ॥ ५ ॥

हेतु मनावनि दीन भे, पिखि तूरक बली है ।
ह्वै न पुकारु शाहि ढिग पति रहति भली है ।
करामात तिसकी कहैं जो डरति बिसाला ।
मैं न लखौ तूं बहु लखें संग जो लघुकाला ॥ २ ॥

मैं नहिं मानौं, नहिं चलौ नहिं मिलौं कदापी ।
प्रगट कर्‌यो सभि जगत महिं मो कहु बडपापी ।
काषट शुषक समान मैं नित इही सुभाऊ ।
टूट जाइ नहिं नम्र ह्वै इह ठीक सुनाऊं ॥ ३ ॥

क्यों बहु बात बनावतो, नहिं करिहौं मेला ।
सो भ्राता दोनों मिले मैं अहौं इकेला ।
अजमत मेरी देखीए शुभ तालखनावा ।
लाखहुं धन खरचनि कर्‌यो थल नवों बनावा ॥ ४ ॥

नित प्रति महिमा अधिक ह्वै मैला लगि भारे ।
सुलही आदिक नंम्र भे क्या अपर बिचारे ।
जहांगीर सों जबि मिलौं बल अजमत धारौं ।
नंम्र करौं निज अग्र मैं, पावन पर डारौं ॥ ५ ॥

---

1. पकड़े जाने का भारी डर है ।

जु कछु कहौं करवाइ हौं सभि काज बनावैं।
सुलही सम उमराव सभि निज सीस झुकावैं।
अपन प्रताप दिखाइकै पग पर जबि पावौं।
अज़मत इसको नाम है सभि करि दिखरावौं ॥ ६ ॥
अरजन की सम नांहि मैं, पित केर सथानं।
तिह बनाइ पुजवाइ पग क्या अचरज जानं।
अज़मति तिन किस थान महिं कहु कबहि लगाई।
हुइ प्रसंन पित सतिगुरू दीनसि वडिआई ॥ ७ ॥
सुनि भाखी गुरदास ने क्यों कहि बिन जाने[1]।
श्री नानक की जोति लै अंगद बरुसाने।
करि सेवा गुर अमर जी बैठे तिसु गादी।
जोति प्रकाशी तबि वही तिम कीनि अबादी ॥ ८ ॥
रामदास जी जबि टिके सो जोति प्रकाशी।
दास उधारे बिदत बहु तुम पिखि रहि पासी।
जोत जगहि सोई अबहि श्री अरजन मांही।
बिघन अनिक जे करि परहिं बिदतावति नांही[2] ॥ ९ ॥
सिर लगि हानी होइ भी नहिं शकति दिखावैं।
भावी ईशुर की लखहिं सभि विधि हरखावैं।
इम लखि क्रोध रु लोभ तजि हूजै मम संगा।
आगै आवैं लैनि को करि मान उतंगा ॥ १० ॥
बय लघु तऊ लखी जीये गादी पर सोई।
नमो उचित सभि के अहैं बड ते बड होई।
मैं आयहु हित कहनि को, सो कह्यो घनेरे।
कीजै क्रित्त बिचार कै ज्यों मन हुइ तेरे ॥ ११ ॥
हुइ न सकहि कुछ तोहि ते हलको पर जैहैं।
अबिके बिछुरे भ्रात ते नहिं बंस मिलैहैं।
नीकी नहीं उपाधि है ढिग तुरक पुकारा।
लगि नहिं जाइ कलंक कुछ, नहिं सकहु उतारा ॥ १२ ॥
सुनि प्रिथीआ चमक्यो पुनहि, क्यों बात बनावैं।
एका एकी कीए बिन[3] हम मिलहिं न जावैं।

1. अज्ञान-वार्ता क्यों कहता है। 2. (शक्ति को) प्रकट नहीं करते। 3. पूरी तरह विनाश किए बगैर।

मुझ सों मिलिबे आस को मन तांहन राखों।
गहिवावौं मरवाइ हौं उद्दम अस कांखो[1] ॥ १३ ॥
सहत पुत्र के कैद मों जबि परि हैं जाई।
तबि मैं हरखौं सुखकरौं उर चिंत मिटाई।
जान्यो तबि गुरदास ने इह अधिक कठोरा।
तुम्मा निंम न मधुर हुइ[2] जो उपजति कौरा ॥ १४ ॥
गुर घर जनम्यो तौ कहां संगति नित ठानी।
पाथर क्यों हु न भिज्जई चिर रहि विच पानी।
अपनी अगनि न त्याग ही, निषठुर मिदु नांही।
कोट जतन कोऊ करहु परक्रित्ति न जाही ॥ १५ ॥
भयो निरास बिचार इम उठि करि भा ठांढा[3]।
प्रथम कलंक जु लग्यो बडि अबि कीनसि गाढा।
दुख पावहु हुइ हान को नीकी नहिं मानी।
अपजस बिथर्यो जगत महिं इह नरक निशायी ॥ १६ ॥
गुरू कहायो चहित हैं बिन गुन अग्यानी।
स्याने पुरख न मानि हैं लिहु निशचै जानी।
उठति कह्यो, सुनि कै जर्यो, बहु काढति गारी।
आसन पर ते उछलतो उर सुमति बिसारी ॥ १७ ॥
कहति अनुच्चत बहुत ही, बोल्यो पुन भाई।
रामदास श्री सतिगुरू सरबग्ग सराई।
तुझ को शकती नहिं दई शुभ रिदै बिचारी।
अजर जरन जान्यो नहीं हौंरा ध्रित हारी[4] ॥ १८ ॥
इह कुछ ते कुछ करहिगो अज़मत को पाए।
याँते छूछा राखिओ निजथल न टिकाए।
अब तेरी प्रक्रिति लखि मन महिं द्रिढ जानी।
उचित करी श्री सतिगुरु सभि महिं बिदतानी ॥ १९ ॥
गारि निकारति को तज्यो इम कहि चलि आयो।
बडी दुषटता इस रिदे हित नहिं चित ल्यायो।
होइ त्यार मारग पर्यो रिस को बिसराये।
श्री अरजन के ब्रिद गुन सिमरति हरखाए ॥ २० ॥

---

1. ऐसा उद्यम चाहता हूँ। 2. तुम्बा और नीम कभी मीठे नहीं होते। 3. खड़ा हुआ। 4. धैर्य त्यागने वाला।

धंन रिदा गंभीर तिन रतनाकर जैसे ।
सीतल तपत न वधति कमि[1] इकरस ब्रिति तैसे ।
कास क्रोध, मद, लोभ, दुख इत्त्यादि विकारा ।
इन ते छुमति[2] न होति कब, रस अनद मझारा ॥ २१ ॥
पंथ चलति चित चितवतो वधि प्रेम बिसाला ।
नीर बिलोचन ते श्रव्यो गदगद तिस काला ।
श्री गुर पग पंकज म्रिदुल उर विखै बसाए ।
सुंदर दरशन देखिबे मन नहिं अकुलाए ॥ २२ ॥
पंथ चलनि भा शीघ्र ही दिशि अंम्रित ताला[3] ।
पहुंच्यो तूरन जाइकै श्री गुर की शाला ।
बंदन पद अरबिंद करि लोचन भरि हेरे ।
परम प्रेम पुलकावली आनंद उमगेरे ॥ २३ ॥
श्री अरजन जी देखि के सुधि वूझनि कीनी ।
कहकहु भ्रात की वारता कैसी गति चीनी ।
किस प्रकार को मति अहै आवनि इस थाना ।
दुषट सुभाव तिआगिओ मान्यो कि न माना ॥ २४ ॥
हाथ बंदि भाई कह्यो तुम परबल माया ।
जोगी मुनि जन आदि ते को को न भ्रमाया ।
जथा भविक्खय्त क्रित्त को करिबे को चाही ।
तिस प्रकार ही बन सकहि हुइ अनतै[4] नांही ॥ २५ ॥
जिम पर करुना निज करहु, दे हाथ बचावो ।
निंदक दुरजन सिंध भव तिस विखै डुबावो ।
किम उधार तिन हुइ सकै गोते नित खावैं ।
पोत[5] न प्रापति होति है किम नट पर आवैं ॥ २६ ॥
जथा क्रिआ बोलनि गती पाखंड करंता ।
जिस दुरजनता करति है, जिम लोभ धरंता ।
जिम प्रलोक महिं गती हुइ जिम मन को पापी ।
पर जस पर—ऐश्वरजु पिखि जिम ह्वै संतापी ॥ २७ ॥
वार करी परिथाइ तिस, है जथा बिकारी[6] ।
तिम बनाइ करि मग विखै आनी लिखि सारी ।

---

1. उनकी (प्रकृति में) शीतलता या ताप बढ़ते घटते नहीं । 2. क्षोभ-युक्त । 3. अमृतसर की दिशा में । 4. अन्य प्रकार से । 5. जहाज (संसार-सागर तिरने को) । 6. जैसा विकृत प्रकृति वाला (पृथीआ है) ।

सो सुनीअहि सभि जानीअहि मैं करौं उचारी।
शुभ गुण जिस महिं लेश नहिं, हंकार अफारी[1] ॥ २८ ॥

दोहरा

है छतीसवीं वार जो गिरा करी[2] गुरदास।
लग्यो सुनावनि खोट तिह श्री सतिगुर के पास ॥ २९ ॥

निसानी छंद

काले मुख मीणा भयो बड दंभ कमावै।
बेख बाक शुभ मोर के जीवनि चुनि खावै[3]।
ग्यान हीन गुर बनति है को नमो न ठाने।
खोटी संगति मीणिआ[4] गुर निंद बखानें ॥ ३० ॥

दुरमति जीवति करति है जबि गहि जम मारे।
कूडु कुपता होहिंगो दुख सहहिं करारै।
इत्यादिक जिस महिं कह्यो सभि वार सुनाई।
नहिं मानहिं श्री गुरु जी सो दुषट बडाई ॥ ३१ ॥

सिकता महिं ते जतन करि तेल जु निकसावै।
कमठ पीठ पर भांति किस बहु बार जमावै[5]।
सिर पर राशम[6] ससे के उगवाइ विखाना[7]।
तौ दुषटनि के रिदे महिं गुन करहि महाना ॥ ३२ ॥

जे सरपनि मन म्रिदुलता क्यों हूं हुइ जाई।
तउ दुषटनि के सरलता उर महिं उपजाई।
आवहि ब्रहमा आप भी कुटिलं समुझावै।
तऊ न तजि हैं मूढता नहिं गन मन ल्यावैं ॥ ३३ ॥

मैं बहु बारी बिनै करि बदे जुग पाना।
करहु मेल तजि बैर को इक कह्यो न माना।
उलटो गारि निकारतो पहु कहसि कठोरा।
अति अजोग बोलति भयो, तपत्यो नहिं थोरा ॥ ३४ ॥

---

1. अहंकार से फूल रहा है। 2. जिसको भाई गुरदास ने वाणी दी। 3. जैसे मोर के वेश और स्वर सुन्दर होते हैं, किन्तु जीवों को चुन-चुन कर खाना है (वैसे ही पृथीआ है)। 4. 'मोणा' राजस्थान की एक नीची जाति है, नीच-प्रवृति वाले के लिए रूढ़ शब्द। 5. कछुए की पीठ पर बाल जमाने के समान है। 6. गधा। 7. सींग।

शाम दाम की रीति सभि कहि बहुत सुनाई।
एक न मानी भली करि, ठानी कुटलाई।
इक सम बसुधा शुभ करिय म्रिदुता बहुभांती।
बक्र चलहि पंनग तहा इम कुटलनि बाती[1] ।। ३५ ।।
सुनहु गुरू जी वार इह लिखि तहां पठाई।
निज औगुन नहिं परख है, मुहि बुरा अलाई।
पठिकै जानहि गो भले जे दोष उचारे।
इही भेट तिह जोग थी मैं पठी बिचारे[2] ।। ३६ ।।
सुनि श्री गुर अरजन कह्यो कुटिल जु मति नीचा।
अग्र तिनहु के निमनि जो हुइ दोषनि सीचा[3]।
दुखद बुरो तिह जानीए अबि लिहु पति आई।
भली बात नहिं होति है, देवति बुरिआई।। ३७ ।।
निज पित को सुत जानिकै करि हेत हकारा।
डरपति मुझते दोष दिय हंकार अफारा।
अबि नहिं कछू कहीजीए सो करहु पुकारा।
श्री गुरु नानक जो करहिं सोई हुइ कारा ।। ३८ ।।
तुरकनि आगं दीन बनि बिनती नित ठानै।
बडियनि की बडता जु थी नहिं रिदै पछानै।
मति मूरख हौरा भयो निज धरम बिगारा।
हाथ कछू नहिं आवही मल छानहि छारा[4] ।। ३९ ।।

दोहरा

इम कहि श्री गुर मौन धरि कह्यो बाक नहिं फेर।
भाणा श्री करतार को जानहिं नीको हेरि ।। ४० ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रथे त्रितिय रासे 'भाई गुरदास को आवन' प्रसंग बरननं नाम पंचबिसती अंशु ।। २५ ।।

---

1. चाहे धरती को सम करके कोमल भी बना दिया जाए, तो भी सर्प तो वक्र ही चलता है, ऐसी ही (पृथीए की) कुटिलता है। 2. विचार कर। 3. उनके सामने नत होना दोषों को सींचने के समान है। 4. हाथ कुछ नहीं आएगा, बल्कि हाथ मलेगा और खाक छानेगा।

अंशु २६

जहांगीर सों प्रिथीआ मिलनि प्रसंग

दोहरा

प्रिथीआ पाछे दुखी हुई चितवति चित अति चिंत ।
नहीं सुहावति अपर कुछ गिनती गिनति अनंत ।। १ ।।

चौपई

नींद न आवति सोचति सोचनि । निस महिं मिलति न पलक बिलोचन ।
महद कषट अपनो महि कलपत । बिनां अरथ[1] मति मूरख जलपति ।। २ ।।
दिवस बिखै नहिं भोजन भावति । गटी उतारति एक चढ़ावति ।
दुरबल भयो क्रांति ते खाली । उर सुलगति लकरी जिम आली[2] ।। ३ ।।
श्री अरजन प्रभुता बहु भाँती । चुभति सेलू सम रडकति छाती ।
श्री हरि गोबिंद की सुंद्रताई । नित चितवति फिरगी जरदाई ।। ४ ।।
मतसर पावक पुंज प्रजुलती । पूजा अधिक होति नहिं भुलती ।
बध्यो गुरु कहि अधिक प्रतापू । नित जिम तेइआ ताप संतापू ।। ५ ।।
पुन पाछे भाई गुरदासू । करिके वार पठी ढिग तासू ।
घाइ लगे[3] अंग अंग बिसाला । तिन पर मनहुं लवन घसि डाला ।। ६ ।।
जनु पाके व्रिण[4] गाढी पीरा । पाइ मरच चूरन दे चीरा ।
राति दिवस चिंता गलताने । बैठ्यो निकट नहीं नर जाने ।। ७ ।।
उड्यो रहै मन गहै न थिरता । वह्यो जात नित चिंता सरिता ।
बहुत भांति करमो समझावै । रुचि सों भोजन क्यों नहिं खावैं ।। ८ ।।
हमरी भी होवति गुजराना । आनति सिक्ख उपाइन नाना ।
करते रहो महद उदयोगा । जिम शरीक हइ हाणति जोगा ।। ९ ।।
मिलहु सलाह करहु सुलही सों । दिल्ली पहुंचनि हुइ जलदी सौं ।
कब कब करमो धीरज देति । बातैं करति असन करि लेति ।। १० ।।

---

1. व्यर्थ । 2. कच्ची या गीली । 3. (जैसे) घाव लगे हों । 4. फोड़ा ।

सुलही साथ सु कबहि इकैठहि[1]। संकट करति निवेदनि बैठहि।
निस दिन दरब उपाइन नाना। अरपहिं अरजन के ढिग आना ॥ ११ ॥
धनी समाज प्रताप निधाना। बधति बधति बधि गयो महाना।
चलन शाहु ढिग ठटहु उपाऊ। करि लीजहि कारज रहि काऊ ॥ १२ ॥
मोर मनोरथ तहिं ते पूरे। शाहु संगि हुइ मिलिनि हदूरे।
तूं सम सखा रहति चित आसा। करहिं काज मुझ मन भरवासा ॥ १३ ॥
तोहि अलंब बिलंब बिहीना। आइ कदंब मोहि गुर कीना।
दीने सरब भांति सुख जैसे। लैं देवहु गुरता चलि तैसे ॥ १४ ॥
सुलही कह्यो राखि बिसवासा। दिल्ली चले पुरब[2] तुम आसा।
करि लीनसि कारज मैं सारे। अबहि प्रतीखति शाहु हकारे[3] ॥ १५ ॥
आवहि खत कुछ थोरनि दिन मैं। तूरन चलहिं अनंद करि मन मैं।
इस प्रकार दे धीरज राखे। देति दरब अर माधुर भाखे ॥ १६ ॥
केतिक दिन पुन जबहि बिताए। प्रिथीआ महित रहति अकुलाए।
सुलहि ने जो दूत पठायो। इतने महि चलि सो तहिं आयो ॥ १७ ॥
जहांगीर भेजा परवाना। जो पैसा उगराह महाना।
सो ले करि आयहु मुझ ओरा। खत देखति नहिं रहु थिति थोरा[4] ॥ १८ ॥
सुनि सुलही करि हरख बिसाला। सौज सकेलि[5] ललित ततकाला।
अपनी सभि त्यारी करिवाइस। दरब अधिक ही संग लदाइस ॥ १९ ॥
बली तुरंग मतंगनि लीनसि। बसत्र बिभूखन सुदर कीनसि।
नज़र देनि वसतू बहु मोला। संचन करी देश ढंढोला ॥ २० ॥
सुनि प्रिथीआ निज अंग न भावति[6]। भर्यो हरख हंकार बधावति।
सरब प्रकार कीनि निज त्यारी। सेवक सिक्ख ब्रिंद संगारी[7] ॥ २१ ॥
बहु मोले बसत्रनि बनवाइस। मिलनि शाहु हित बेस सजाइस।
चढि सुलही सों प्रिथीआ मिल्यो। दिल्ली समुख पंथ को चल्यो ॥ २२ ॥
सभि परवार हेहरी रह्यो। गुरता लेहिं चाऊ चित चह्यो।
बहु उतसाह करति सुख पाई। जनु गुरता लीनसि बडिआई ॥ २३ ॥
सुलही प्रिथीआ मारग परे। लोक हज़ार हुं संगी करे।
मज़ल करति मारग उलंघाए। दिल्ली नगर जाइ निकटाए ॥ २४ ॥

---

1. कभी कभी इकट्ठे होते हैं। 2. पूरी होगी। 3. बादशाह के बुलाने की प्रतीक्षा है। 4. थोड़ा भी न ठहरना। 5. सब कुछ इकट्ठा करके। 6. फूला नहीं समाता। 7. साथ लेकर।

डेरा कर्‌यो आपने थाना। प्रिथीया उतर्‌यो ढिग हित ठाना।
दिवस आगले हज़रत पास। मिल्यो जाइ लेकरि धन रास॥ २५॥
दीनसि नज़र तुरंग मतँगे। सुन्दर अपर वसतु दइ संगे।
कीनहु शाहु प्रसंन बिसाला। भेट दिखावति भा जिस काला॥ २६॥
दिवस दूसरे मिल्यो जु फेरी। करी सिपारस[1] प्रिथीए केरी।
सतिगुर रामदास को नंदन। बडो जु लोक करहि बहु बंदन॥ २७॥
सो मिलिबे कहु चलि करि आयो। जहांगीर ने सुनति बुलायो।
श्री नानक को घर बड ऊचा। जिसकी समसर को न पहूंचा॥ २८॥
भए अधीन जु बडे हमारे। करि निज मिहर काज गन सारे।
गयो पदर[2] मम गोइंदवाल। श्री गुर अमर हुते तिस काल॥ २९॥
मिलिकै तिनहु बंदगी कीन। केतिक भूमि उपाइन दीनि।
अलप आरबल[3] हुती हमारी। मुलाकात सो याद निहारी॥ ३०॥
इत्यादिक जस सतिगुर केरा। जहांगीर ने कहसि बडेरा।
इतने महिं प्रिथीया चलि गइऊ। मिल्यो शाह सो आशिख[4] दइऊ॥ ३१॥
सुलही ने पुन कीनि बडाई। पातशाहु ते भेट दिवाई।
बैठ्‌यो निकट होछता हेरी[5]। कहाँ गरुवता गुरता केरी[6]॥ ३२॥
हज़रत जबि मलाहजे[7] भइऊ। अपनि हवाल तबहि कहि दइऊ।
मैं बड नंदन हौं फरिआदी। उचित मोहि कउ बैठिबि गादी॥ ३३॥
सरब समाज अलप ने लीनसि। पुरि ते मुझ निकार करि दीनसि।
गुरु बन्यो निज चरन पुजाइसि। अन गन धन सिक्खय्‌नि ते पाइसि॥ ३४॥
मोहि न देति आप ही राखै। अपर कवन है गरवति भाखै।
मैं धरि त्रास आपको भारी। ठानी तिसके साथ न रारी॥ ३५॥
सो निरभै नहिं जानहि काहूं। बैठ्‌यो सदन गरव मन मांहू।
चित ते तुमरो त्रास बिसार्‌यो। कह्यो न मानहि, मैं कहि हार्‌यो॥ ३६॥
मैं रावरि की दिसि चलि आयो। तऊ न संकति कुछ डर पायो।
कीजहि हमरो न्याइं निबेरा। तुम को कीनि खुदाइ बडेरा॥ ३७॥
न्याउं करन ते तखत बिराजा। इही धरम तुम को उपराजा[8]।
सुनि हजरत अचरज उर धारा। इह अजोग क्या इनहु उचारा॥ ३८॥

1. सिफ़ारिश। 2. पिता। 3. छोटी आयु। 4. आशीर्वाद। 5. निकट बैठने पर (बादशाह ने पृथीए का) ओछापन देखा। 6. गुरुता का गौरव कहाँ था? 7. मिलते ही। 8. यही तुम्हारा धर्म बनता है।

शांति मती सतिगुर की गादी। तिन महुं रार कुतो फरिआदी[1]।
जेकरि कलहि आप महिं डारे। कहां अपर नर अहैं बिचारे॥ ३९॥
देखहु क्या अचरज इह माया। लघु दीरघ नर जांहि भ्रमाया।
रिदै बिचारति हज़रत ऐसे। कितिक देर रहि तूषनि[2] बैसे॥ ४०॥

दोहरा

गादी पावति एक ही अपर फिरादी होति।
किम शादी हुइ सभिनि के मतसर ह्रिदे उदोति॥ ४१॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'जहांगीर सों प्रिथीआ मिलिनि' प्रसंग बरननं नाम खषट बिंसती अंशु॥ २६॥

1. उनमें झगड़ा-फरियाद कहाँ ? 2. मौन।

अंशु २७

प्रिथीआ कोठा पावन प्रसंग

दोहरा

बहु बिचारि हजरत कर्यो सिमरी पूरब बात ।
सुन्यो हुतो किस पास ते श्री गुर केर ब्रितांत ।। १ ।।

सवैया छंद

रामदास श्री सतिगुर पूरन गादी पर लघु सुत बैठाइ ।
आप समाइ गए सचखंड सु बड सुत पर न प्रसंन रहाइ ।
सेवा करी न, यांते छूछो, गुरुता दई न सभि सुखदाइ ।
सो सिमरन करि जहांगीर उर बोल्यो सभि सों दीनि सुनाइ ।। २ ।।
श्री नानक घर के हम सेवक किस स्वामी को करिहैं न्याइ ।
श्री सतिगुर ही करहिं निबेरनि इही भावना रिदै बसाइ ।
घटि घटि महिं सभि अंतरजामी, सुनहि पुकार, न बिरथी जाइ ।
श्री गुर रामदास ने आपहि लखि लायक लघु सुत बैठाइ ।। ३ ।।
तिनकी करी न मेटहिं हम किम जिम जीवति ही गए निबेर[1] ।
गुरुता उचित तोहि को देखति देति भले, न हुतो कुछ बैर ।
करि संतोख नंम्रि चित होवहु उचित तुमहु तिह[2] लागहु पैर ।
गुन महिं बडो, बडो सो जान, लघु गुण महि तिह लघु ही हेरि ।। ४ ।
गजदीरघ लघु शेर हेरियति, म्रिगपति नाम अधिक गुन जानि ।
फटक बडो नहिं ग्रहन करहि को, हीरा उज्जल ले हित ठानि ।
संख असंख न पहिरहि कोऊ मुकता दिपति बिभूखनि थानि ।
पीतर परहरि होहि घनेरो कंचन थोर धरहिं निज पानि ।। ५ ।।
गुन ते बडो इसी ते जानहु पिता तुमारे परखनि कीनि ।
अपर न तिनहु समान जौहरी, अलप बिसाल लेति शुभ चीनि ।
करी तिनहु की हम किम मेटहिं महां पुरख गुन गन महिं पीनि[3] ।
जिन को नमसकार नित करनी किम समता चाहै जु प्रवीनि ।। ६ ।।

---

1. क्योंकि वे स्वयं जीते जी निपटा गए हैं । 2. उसके (गुरु अर्जुन के) । 3. प्रवीण ।

प्रिथीआ सुनि हजरत के बाकनि तपत्यो चित महिं अति दुख पाइ।
कहनि लग्यो मैं लरकै निकस्यो अबि कैसे करि तिस थल जाइ।
को मुख ले करि तिस दिखरावो नहीं मिलौं मैं किसी उपाइ।
करो धकेलनि देति न्याउं नहिं तौ मेरो कुछु बस न बसाइ ॥ ७ ॥

जहांगीर प्रिथीए की सुनि करि पुन बोल्यो क्यों तूं तपताइ।
पित प्रसंन करि तिसने लीनसि क्यों तेरो उर दाह लगाइ।
सेवा करी न अपनि बडनि को अबि क्या हुइ, ठानें जिउ पाइ।
लगहु पाइ तिस, करहु गुजारा, मैं निज हुकम न तहां अलाइ ॥ ८ ॥

इम करि क्रोध शाहु ने भाखी अपर ख्याल पुनि द्रिषटि लगाइ।
तिसकी दिशि नहिं मुख को कीनसि बैठ्यो तब ही ग्रीव निवाइ।
किसकी दिशि देखति नहिं, रिस उर, व्रीड़ा[1] बडी बहुर उपजाइ।
चित महिं चितवति चिता अतिषै पशचाताप अधिक ही पाइ ॥ ९ ॥

अवनी खनति नखनि सों, झूरति, दुख पावति कुछ बोल सकै न।
कितिक काल बैठ्यो मुरझावति पुनि गमने सभि निज निज ऐन[2] ॥
डेरे महिं प्रिथीआ चलि आयहु पर्‌यो आइ नहि बोलति बैन।
बदन छादि[3] करि ले बड स्वासनि भरिभरि जल आवति जुग नैन ॥१०॥

खान पान नहिं भावति कैसे चितामहिं दिन रैन बिहाइ।
इक द्वै मास भए इस रीति सु नहीं शाह ने याद कराइ।
कबहुं नहीं बुलाइ पठायो नहिं सनमान्यो पुनि किस भाइ।
यांते अधिक चिंत मन ठानति चितवति चित महिं अनिक उपाइ ॥ ११ ॥

इक दिन सुलही के संगि मिलकै अपनो कषट कह्यो तबि रोइ।
पातशाह ने कछू न कीनसि जिसकी आस सदा थित होइ।
अबि क्या करहिं उपाव बतावहु जिसते रहिआवै पत जोइ।
किस मिस करि दिल्ली ते निकसहिं. रह्यो लाभ, आगल ही खोइ[4] ॥ १२ ॥

सुलही कह्यो न बस कुछ मेरे, पातिशाह समझहि पखवान[5]।
मिलहु दोइ उमराव हेरिकरि इक को नाम सु अबदुल खान।
दुतिय मुहंमद खान जानी अहि कुछ रिशवत दीजहि तिन पान।
करहिं सिपारश दोनों इह जबि, सिद्ध काज अपनी तबि जानि ॥ १३ ॥

---

1. लाज। 2. घर। 3. विषाद। 4. लाभ मिला नहीं, गाँठ की पूँजी भी खो बैठे। 5. पक्षपाती।

सुनि प्रिथीए ने जतन सु ठान्यो मुलाकात तिन सों ठहिराइ ।
मुहर तीन शत रिशवति दीनसि, दीन बदन हुइ विनती गाइ ।
दोइ मास को अरसा गुजर्यो शाहि नहीं सिमर्यो न बुलाइ ।
आयो न्याउं लेनि गुरिआई, सो तो रही, प्रथम पति जोइ[1] ।। १४ ।।
अबि तुम कहि सनमान करावहु बड़ी बात गुरता खुसवाइ[2] ।
आप शाहु कहि मोहि बिठावहि, इम तो कारज सिध हुइ जाइ ।
नांहि त ग्राम देहि करि आदर तहां बसौ जहिं शाहि बसाइ ।
इम भी रहि आवति है मेरी, इह उपकार करहु चित लाइ ।। १५ ।।
फेरि सदा मैं तुम को देवौं गुरघर को जसहुइ सिरुपाइ ।
करहु खुदाइ राह[3] इह कारज, बडो सबाब[4] होइ सुखदाइ ।
चातुरता जुत हजरत फेरहु लखि न जिसते, लेहु मनाइ ।
सुभति वंति इह पक्खी परखहि सुलही को परख्यो जिस भाइ ।। १६ ।।
उमरावनि सुनि खातर कीनसि हम हजरत को लखहिं सुभाइ ।
इस बिधि कहहिं न जानहि मन मैं अरु तेरो कारज बन जाइ ।
न्याउं बिचारति बहुत बेर लगि देश विखै होइ न कुनि आइ ।
रंक धनी नर नारि नीच उच सभि की आप सुनहि चित लाइ ।। १७ ।।
ग्राम देनि तो भानि लेहिगो गादी देनि बिखै संदेहि ।
निरने नीके न्याउं निबेरहि तिसते तुझे न पहुंचहि केह[5] ।
पिता प्रबीन प्रसंन होइ करि लघुसुत को दीनसि करि नेह ।
न्याउ करति नहिं सुनहिं सिपारश, जथा जोग महि प्रीति करेहि[6] ।। १८ ।।
न्याउं करनि की बात सुनावहिं, गुर नंदन ! सुनि देकर कानि ।
घंटा सिर पर लरकति निसदिन रहि बजार महिं रजू महान ।
इकदिन जल पखार[7] कउ लादे खभ[8] अगारी करति पयान ।
जल दानी तिह पीछे हांकति चलति चलति आए तिसथानि ।। १९ ।।
ब्रिखभ चरन सों रज्जू लागी ऐंची गई सु घंटा हालि ।
बाजति नाद भयो तिसकेरा हज़रत बैठ्यो तरे क्रिपाल[9] ।
सुनति शबद को कह्यो लेहु सुधि दौरे मानव गन ततकाल ।
खोजनि लगे बिलोक्यो नहिं सो, इत उत बूझति भे नर जाल ।। २० ।।

---

1. पहली इज्जत भी नहीं रही । 2. गुरुता छिनवा लो, यही बड़ी बात है । 3. ईश्वर की राह पर । 4. पुण्य । 5. यदि निर्णय करके न्याय किया तो तुझे कुछ नहीं मिलेगा । 6. अनुकूल (यथायोग्य) को ही चाहता है । 7. जल की मश्कें । 8. बैल । 9. कृपालु बादशाह नीचे बैठा ।

इक ने कह्यो ब्रिखभ पग लाग्यो रज्जू चलि घंटा ठणकार।
सुनि हजरत को सुधि करि दीनसि नहिं किस नर ने कीनि पुकार।
जल दानी के बैल चरन लगि हाल गयो उठि नादि उदार।
जथा जोग तुम प्रजा बसहि सुखनि बल सत्रल सभि हुइ इकसार ।। २१ ।।

जहांगीर नै पुनहि पठाए आनहु ब्रिखभ लद्यो तिसु भांति।
जिम गमनति पग रजू ऐंचली[1] दुखति पुकार करी जिम जाति[2]।
बिन दुख मम घंटा न हिलावति करहुं न्याउ तिह पिखि बिरतांत।
मति बिसमति नर गए दौर करि जहां बैल अर थो जलदात[3] ।। २२ ।।

तिसी रीति सो ब्रिखभ लदायो हांकहिं पाछे गमन्यो सोइ।
आन्यो पातशाह जहिं बैठ्यो, सभा लगी देखति सभि कोई।
हजरत कह्यो बैल को हक है लई उठाइ पखालै दोइ[4]।
बहुर तीसरी लादनि कीनसि इह अन्याइ इसी संगि होइ ।। २३ ।।

यांते मम घंटा ठणकार्यो, होइ दुखी इम कीनि पुकार।
अबि ते आगे सभि ब्रिखभनि को लादहु दोइ पखाले भार।
बहुर तीसरी धरहि जु ऊपरि होहि गुनाही कैद मझार।
सभिहिनि कहु इम सुधि करि दीजै शाहु कीनि तबि हुकम उचार ।। २४ ।।

बड धरमग्य न्याऊं जहिं पशूयनि मानुख की तौ क्या है बात।
इम सुनि प्रिथीआ दुखति भयो उर गुरता आस त्याग पछुताति।
इस ढिग जतन होइ नहिं सकियति मति सूखम निरनै अवदाति।
तऊ ग्राम दै आदर ठानहिं इस महिं भी मम पति रहि जाति ।। २५ ।।

ले रिशवत हजरत ढिग गमने सुलही अपने संगि मिलाइ।
कहि करि प्रिथीआ निकट हकार्यो लगे तरीफ करनि समुदाइ।
प्रथम भए श्री नानक इनके हिंदू तुरक मुरीद बनाइ।
रामदास गुर तिन गादी पर बैठे सुजसु जगत परछाइ ।। २६ ।।

गुर घर सागर समसर डरहरि[5] प्रिथीचंद मा चंद मनिंद।
देश बिदेशनि के नर मानैं सीस निवाइ चरन अरबिंद।
अजमत करि तिन होति सहाइक सुजस बिलंद करहिं नर ब्रिंद।
श्री नानक की जोति इनहु महुं जानी परहि गुनहि बखशिद[6] ।। २७ ।।

---

1. खींच ली। 2. जाते हुए। 3. जहाँ बैल और माश्की थे। 4. दो मश्कें। 5. (यम के) डर को दूर करने के लिए गुरु-घर सागर के समान है। 6. पाप-विनाशिनी।

सनमानति पतिशाह रहे सभि. इह चलि करि आयहु तुम द्वार ।
न्याउं निबेरनि कीजहि नीके करो बिदा देकरि उपहार ।
नांहि त महिमा इस घटि जावहि, सिक्ख तजहिं नहिं करहिं जुहार ।
इह भी पुंन आपके घर को करहि खुदाइ बंदगी चारु ।। २८ ।।
जथा जोग बैठावनि करियाहि मानव लाखहुं मानहिं यांहि ।
परंपरा इह गुर के घर की निशचल राखहु मिटहि जु नांहि ।
रावरि की कीरति जग बिथरहि अधिक भला होवै दरगाहि ।
जहांगीर ने सुनि पहिचानी रिशवत लई इनहु इस पाहि ।। २९ ।।
प्रथम न प्रिथीए की कुछ भाखी आज तरीफ करति छल संगि ।
दे करि दरब विगारति लोकनि भर्यो खुटाई संग कुढंग ।
गुरता को अधिकार न इस को ग्यान आदि गुन नहिं शुभ अंग ।
तऊ गुरू को नंदन होयहु इम बिचार चहि मान उतंग[1] ।। ३० ।।
बोल्यो जहांगीर लिहु ग्रामहि मैं अपनी दिशि ते इह दीनि ।
करहु धाम तहिं बैठि कुटंब जुतश्री अरजन ढिग जाहु न, चीन ।
लवपुरि को हम जबि चलि आवहिं जुग भ्रातनि ते सुनहिं जु कीनि ।
अबि ते द्वैष न ठानहुं तिन संग, निज गुजरान हमहु ते लीन्नि ।। ३१ ।।
इम कहि पटा लखाइ विदा किय मिलहु हमैं जबि लवपुरि[2] आइ ।
कुछक हरख करि प्रिथीआ आयहु दिल्ली नगरी ते निकसाइ ।
गमनति देश मालवे प्रापति, तहां ग्राम लीनसि हरिखाइ ।
सीस निवावति आदिक प्रिथीआ सुंदर कोठा लीनि बनाइ ।। ३२ ।।
तिसकी संग्या तेसो कहीअहि सोढ़ी कोठे के बिदताइ[3] ।
इसत्री पुत्र बसाइ हरख जुति अपनी पूजा बैठि कराइ ।
थोरी संगति आवति चलि करि देति उपाइन कुछक चढाइ ।
करि गुज़रानिं बिताइ समो निज पट-बीजन[4] सम चमक दिखाइ ।। ३३ ।।

दोहरा

जतन ठानि बिधि अनिक के हार पच्यो दुख पाइ ।
समुता चहि जगनाथ सों क्यों करि पहुंच्यो जाइ ।। ३४ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'प्रिथीआ कोठा पावन' प्रसंग बरननं नाम सपत बिसती अंशु ।। २७ ।।

---

1. मान ऊँचा रखना चाहता है । 2. लाहौर । 3. कोठे वाले सोढी के नाम से जाने गए । 4. जुगनू ।

अंशु २८

बिप्र प्रसंग

दोहरा

इम प्रसंग रिस ढंग को[1] प्रिथीए कियो निसंग ।
रंग रंग की कथा अबि गुर की सुनि हित संग ।। १ ।।

हाकल छंद

श्री सतिगुर अरजन पाछे । बहु करे उछाह सु आछे ।
सुत जनम नवो जनु होवा । दुख बिघन ब्रिंद को खोवा ।। २ ।।
बहु दान दीनि करि प्रेमा । अभिलाखि पुत्र की छेमा[2] ।
मुखमंडल सुंदर चंदू । पिखि हरखति आनंद कंदू ।। ३ ।।
द्रिगदल त्रिलंद अरबिंदू[3] । दुति कलिका रदन मनिंदू[4] ।
हरखंति दास पिखि ब्रिंदू । करि प्रेम तुरक अरु हिंदू ।। ४ ।।
दिन रैन नैन के आगे । रखि जननी आन न त्यागे ।
करि भली भांति तकराई । निज हाथ अहार खुवाई ।। ५ ।।
बिसवास न करती कैसे । रखि पलक बिलोचन जैसे[5] ।
रहि राखि बिखै रखवारी । नर जागति खरो निहारी ।। ६ ।।
उर त्रास धारि करि गंगा । सुत पालति दीरघ अंगा ।
हरिगोबिंद छैल छबीला । करि बालपने की लीला ।। ७ ।।
पद पंकज अंगण दौरे । गहिबालक ले भरि कौरे[6] ।
बहु करे मेर तर ढाहै । जुग बाहैं ओज निवाहै[7] ।। ८ ।।
बहु खेलि खेल रस राते । कर चरन कमल जनु राते ।
इम खेलति पित ढिग आवैं । सभि सभा मोद उपजावैं ।। ९ ।।

---

1. क्रोध के ढंग का ऐसा प्रसंग । 2. कुशल, क्षेम । 3. नेत्र कमल-पत्र सरीखे चौड़े (बड़े) हैं । 4. समान, मानिंद । 5. जैसे पलकें आँखों की रक्षा करती हैं । 6. बालकों को क्रोड़ में लेकर पकड़ता है । 7. दो भुजाओं के बल से झुका देता है ।

पिखि लच्छन अंग बिसाला । गुर भारो होहि क्रिपाला ।
को कहै सूर बड होवै । गन दुषटनि की जर खोवै ।। १० ।।
को कहै डील बलवाना । किस नर को अस नहिं जाना ।
भुज होइं प्रलंबति भारी । उर आयुत[1] युत बिसतारी ।। ११ ।।
सभि देखि देखि सुख पावैं । इम श्री गुर द्योस बितावें ।
नित बरघति डील बिसाला । बड आयुत सुंदर माला ।। १२ ।।
श्री अरजन सभि दिन मांही । तजि आलस जाम निसा ही ।
सुच क्रिया प्रात हितकारी । पुन बैठहिं आसन मारी ।। १३ ।।
थिति अपन सरूप मझारा । मन राखहिं रोकि उदारा ।
इक द्योस प्रापत जबि होई । उठि क्रिआ करति मे सोई ।। १४ ।।
जल कूप प्रथम इशनाने । श्री अंम्रितसर पुन प्याने[2] ।
सिख ग्यानी केतिक संगे । को सत्यनाम रति रंगे ।। ।१५ ।।
निसद्योस लगी लिवजीहा[3] । प्रभु दरशन की उर इहा[4] ।
सभि सुधा सरोवर मज्जे[5] । बहु जनमनि के अघ भज्जे[6] ।। १६ ।।
पुनि श्री गुर कीनि शनाना । गर सूखम बसत्र महाना ।
पग पंकज गमने सुंदर । हित दरशन श्री हरि मंदर ।। १७ ।।
निज पित को कलपि सथाना । हुई नंम्र प्रनाम सु ठाना ।
श्री रामदास धरि ध्याना । पुलकावलि देहि महाना ।। १८ ।।
जल भर्यो बिलोचन बीचा । बहि आँसू आनन सीचा ।
रुकि कंठि न बोल्यो जाई[7] । बडप्रेम देहि बिसराई[8] ।। १९ ।।
चिर कितिक बिखै धरि धीरा । परकरमा फिरे गहीरा ।
करि चतुर बार हरि मंदरि । बर बैठ बिराजे अंदर ।। २० ।।
थिति[9] कितिक काल दरसाए । पुनि उठि करि बाहरि आए ।
कर नमो सेत पुर[10] चाले । दरशनी जु पौर बिसाले ।। २१ ।।
तहिं फिर करि ठांठे ह्वैके । हरि मंदरि दिशा चितै कै ।
करि बंदन प्रेम समेता । पुन सर परकरमा हेता ।। २२ ।।
गुर गमनैं मंदहिं मंदे[11] । दे दरशन दास अनंदे ।
जहिं झूलति दीह निशाना । करि नमो चले अगवाना ।। २३ ।।

1. छाती चौड़ी । 2. गए । 3. जिह्वा, जिनकी जिह्वा रात-दिन प्रभु-कीर्ति करती है) । 4. इच्छा 5. स्नान किया । 6. भाग कर । 7. गला भर आया । 8. अगाध प्रेम में शरीर की भी सुधि न रही । 9. स्थिरतापूर्वक । 10. पुल पर । 11. धीरे-धीरे ।

मुख उत्तर दिश करि जाए। सिर वाइव कौन[1] निवाए।
पुनि पूरब मूख करि चाले। सिख ब्रिंदगमन करि नाले ॥ २४ ॥
तहिं इकदिज देख्यो ऐसा। सर सुधा तीर पर बैसा।
धरि आगै सालगरामू। वहुभांति करति परणामू ॥ २५ ॥
घसि चंदन को चरचाना। इक घंटा धर्यो महाना।
पाटंबर ऊपर पीता। दिज बैठ्यो थिति नहिं चीता ॥ २६ ॥
घर कारज चितवि अनेका। उर त्रिशना धन की एका।
वड रच्यो पखंड मझारी[2]। बक ध्यान लगावति तारी ॥ २७ ॥
तिह पिखि गुर गए अगारी। दिज उर महिं तवि रिस धारी।
नहिं ठाकुर दिशि करबंदे। नहिं मुहि निमि कीनि अनंदे[3] ॥ २८ ॥
हुइ निकटि गए पुनि आगे। तिम सिक्ख सकल संग लागे।
सनमान न राख्यो मोरा। नहिं देख्यो ठाकुर ओरा ॥ २९ ॥
इम चितवति विप्र बिसाला। तपयो रिस मतसर ज्वाला।
परकरमा करि गुर स्वामी। दिज उर लखि[4] अंतरजामी ॥ ३० ॥
फिर सरुवर के चहुं ओरा। पुन आइ दरशनी पौरा।
करि बंदन बहुरो आए। जहिं दिज ने दंभ रचाए ॥ ३१ ॥
सभि सिक्ख दास समुदाया। अविलोक्यो विप्र समाया[5]।
गिनि तिलकसु द्वादश लाए[6]। बिच गोमुखि हाथ उठाए ॥ ३२ ॥
वडि आसन तरे डसायो। जुति संख समाज[7] टिकायो।
गुर बोले पिखि तिस ओरी। कहु बिप्र कहां मति तोरी ॥ ३३ ॥
क्या कलपति मनि महिं आई। किम रिश की दशा बसाई ?।
सुनि बिप्र मन्यो अभिमानी। हम ठाकुर सेवा ठानी ॥ ३४ ॥
पुन दिज वर जनम हमारा। तिम छत्री बंस तुमारा।
चलि गए समीप अगारे। नहिं हमको बंदन धारे ॥ ३५ ॥
नहिं सालगराम सुमाना। परणाम न निव करि ठाना।
गुर गादी पर तुम बैसे। अभिमान भयो मनि तैसे ॥ ३६ ॥
सुनि बोले गुरू प्रबीनू। शुभ करमन ते तुम हीनू ॥
करि दंभ दिखावा सारो। नहिं समझें सार असारो ॥ ३७ ॥

---

1. उत्तर-पश्चिम की कोण। 2. बड़े पाखण्ड में रचा। 3. न मेरी ओर वदन कर मुझे प्रसन्न किया। 4. ब्राह्मण के अन्तर में झांककर। 5. माया रहित। 6. बारह अंगों पर गिनकर तिलक किया था। 7. ठाकुर-पूजन की सामग्री।

घर कारज कूर पसारा। मन तहाँ फसाइ जंजारा।
इह ठाकुर सेवा साची। तजि दई. न मति महिं राची ॥ ३८ ॥
मन होति जि ठाकुर माही। हम करति नमो लखि तांही।
सभि जानि पखंड बिसाला। हम चले गए तिसकाला ॥ ३९ ॥
सुनि दिज ने मन में जानी। गुर पूरन अज़मत वानी।
सभि अंतरि की लखि लीनी। अभिबंदन तौ नहिं कीनि ॥ ४० ॥
इह करहि मोहि कल्याना। सिख बनौं गुरू अगवाना।
लखिभले तऊ चित चाही। इन संग करौं चरचा ही ॥ ४१ ॥
पुन पीछै बन हौं दासा। इम लखिकैं बाक प्रकासा।
मुझ बिखै त अवगुन जाना। किम ठाकुर को नहिं माना ? ॥ ४२ ॥
इम महिं क्या दोष पछाना ?। सुनि सतिगुर शबद बखाना।
जिह बिखैं दंभ को नाशा। बड ठाकुर रूप प्रकाशा ॥ ४३ ॥

श्री मुखवाक ॥

रामकली महला ॥ ५ ॥

मुख ते पड़ता टीका सहित।
हिरदै रामु नहीं पूरन रहत।
उपदेस करे करि लोक द्रिड़ावै।
अपना कहिआ आपि न कमावै ॥ १ ॥
पंडित बेदु बीचारि पंडित।
मन का क्रोधु निवारि पंडित ॥ १ ॥ रहाउ ॥
आगै राखिओ सालगिरामु।
मनु कीनो दहदिस बिस्रामु।
तिलकु चरावै पाई पाइ।
लोकु पचारा अंधु कमाइ ॥ २ ॥
खटु करमा अरु आसण धोती।
भागठि ग्रिहि पड़ै नित पोथी।
माला फेरै मंगै बिभूत।
इह बिधि कोइ न तरिओ मीत ॥ ३ ॥
सो पंडितु गुर सबद कमाइ।
त्रै गुण की ओसु उतरी माइ।
चतुर बेद पूरन हरि नाइ।
नानक तिसकी सरणी पाइ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १७ ॥

हाकल छंद

पठि कथा सुनाइ सु टीका। उर राम न प्रेम नजीका।
जग दंभ दिखाइ ठगंता। इम दुशतर[1] नहीं तरंता ॥ ४४ ॥
तुम सिला रूप प्रभु चीना। जो घट घट व्याप प्रवीना।
ब्रह्मंड कोट आधारा। सभि संगति को दातारा ॥ ४५ ॥
वडशेष सारदा नीता[2]। ब्रह्मादिक सभि जो कीता।
सभि ध्यावति गुननि बिसाला। नहि अंत लखहि त्रई काला ॥ ४६ ॥
सत सुहिद सहिद महीआना[3]। जहिं पारावार न जाना।
जो सभि सैं रिजक[4] पुचावै। गज कीटी आदिक खावै ॥ ४७ ॥
जिह लाखहुं सुरपति देवं। ससि सूरज शंकर सेवं।
छित पावक पौन रु पानी। ब्रह्मादिक लाखहुं ग्यानी ॥ ४८ ॥
थल तीन लोक महिं पूरा। को नहीं तिसी बिन ऊरा[5]।
सो ऐसे वडि महांराजा। जिह निमख बिखैं जग साजा ॥ ४९ ॥
तिह कलप्यो पाहन मांही। जढ़ अलप शकति कुछ नांही।
कुछ लेय न देय न खाही। अस प्रभु को अस बडिआही ॥ ५० ॥
दिज जातिमहां अभिमाना। लखि दभी तोहि न माना।
उर कितिक क्रोध तुझ होवा। जो बड ते लघु करि जोवा ॥ ५१ ॥
प्रभु सभि ते वडो वडेरो। सो पाहन इह मति तेरो।
सभिहूं ते लघु करि दीना। किम होवहि प्रभु प्रसीना[6] ॥ ५२ ॥
जगि पातशाह बड जोई। तिह मीआं कहि कै कोई।
मन लखैं करौं बडिआई। किम रीझहि ? देहु बुझाई ॥ ५३ ॥
असि मेरो ठाकुर जोई। सभिहिनि ते ऊपरि सोई।
तिह रूप सुनहु दिज काना। तबि श्री गुर शबद बखाना ॥ ५४ ॥

आसा महला ॥ ५ ॥

आठ पहर उदक इसनानी।
सद ही भोगु लागइ सु गिआनी।
बिरथा काहू छोडै नाही।
बहुरि बहुरि तिसु लगाह पाई ॥ १ ॥

---

1. कठिन प्रपंच। 2. शेष नाग तथा सरस्वती नित्य ही। 3. सत्य महान से भी महान है। 4. भोजन। 5. खाली। 6. तो प्रभु क्योंकर प्रसन्न हो सकता है ?

सालगिरामु हमारै सेवा ।
पूजा अरचा बंदन देवा ।। १ ।। रहाउ ।।
घटा जाका सुनीऐ चहुंकुंट ।
आसनु जाका सदा बैकुंठ ।
जाका चवरु सभि ऊपरि झलै ।
ताका धूपु सदा परफुलै ।। २ ।।
घटि घटि संपटु है रे जांका ।
अभग सभा संगि है साधा ।
आरती कीरतनु सदा अनंद ।
महिमा सुंदर सदा बेअंत ।। ३ ।।
जिसहि परापति तिसही लहना ।
संत चरन ओहु आइओ सरना ।
हाथ चड़िओ हरि सालगिरामु ।
कहु नानक गुरि कीनो दानु ।। ४ ।। ३९ ।। ९० ।।

हाकल छंद

इह ठाकर हमरो भारा । जो सभि को सदा संभारा[1] ।
प्रभि ऊचहि ऊचहि ऊचा । जिह समसर को न पहूचा ।। ५५ ।।
हम रिद महिं सदा बसायो । निस दयोस न कबहि भुलायो ।
गन दीन बंधु जगनाथा । निज सेवक के नित साथा ।। ५६ ।।
करि प्रगट अपनपौ रूपा[2] । हुइ भगतनि के अनुरूपा ।
जबि मीर परहि किह आई । दे आपनि हाथ बचाई ।। ५७ ।।
है भगति वछल तिस नामू । गन दीन बंधु अभिरामू ।
सो सदा गरीब निवाजा । बहु अधम उधारन काजा ।। ५८ ।।

कवित्त

प्रभु मधुसूदन गोबिंद, दया निधि, हरि, माधव, मुकद, दुख दुंद के कटैया है ।
स्रीपति अखिल पति महद, जगतपति, सीता पति, रमापति, सेवक सहैया है ।
ईशर, अनंद रूप, अच्चुत, अनूप गुर, भूपन को भूपत हंकार कहो रैया है ।
पार ब्रह्म पूरन अनेक रिपु चूरन, अनंत करतार, सभि जीवन दिवैया है ।। ५९ ।।

दोहरा

इस प्रकार ठाकुर प्रभु सालिगराम बिसाल ।
श्री गुर अरजन बरनिओ सुनति बिप्र तिस काल ।। ६० ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'बिप्र प्रसंग' बरननं नाम अषटबिसती अंशु ।। २८ ।।

---

1. जो सबकी सदैव सम्भाल करता है । 2. जो अपना रूप स्वयं प्रकट करता है ।

अंशु २९
'बिप्र-ब्रनिक प्रसंग बरनन'

दोहरा

सुनि करि बोल्यो बिप्र तबि भाखा बानी एहि।
संसक्रित हम कहु रुचहि पठहिं सुनहि धरि नेहि ॥ १ ॥

हाकल छंद

परमाण[1] करहिं तिस केरा। कल्याण सुदेति उचेरा।
सुर बानी जानहुं सोई। पठि विद्या ले सभि कोई ॥ २ ॥
क्या भाखा ते हुइ जावै। जिह लोक नहीं मन ल्यावैं।
जिस करि है शुभि गति एही ? जिस बिखैं जुगति नहिं केही ॥ ३ ॥
सुनि बोले गुरू प्रबीना। बिन भाखा संसक्रित हीना[2]।
जग्यासू नहिन उधारै। किम भगत ग्यान सिख[3] धारै ॥ ४ ॥
जबि पठहु शलोक उचारी। नहिं समझै को नर नारी।
बिच भाखा अरथ बखाने। तबि सभि अजान भी जाने ॥ ५ ॥
बिन भाखा सर्यो न कामू। उपदेश न भा अभिरामू।
कल्ल्यान न सिख को कीना। जिस बिना भई फल हीना ॥ ६ ॥
लखि मूल सु भाखा यांते। जिह पठे सकल बरुसाते।
बिन संसक्रित्त जो भाखा। बिचु भगति ग्यानु जिस राखा ॥ ७ ॥
सभि समझ लेहि नह नारी। गति कारज लेंहि सधारी।
इह इकली दे कल्याना। जो सुनहि कमाइ सु जाना ॥ ८ ॥
पठि करहि बिचार सुखैना। शुभ पठनि कठनि कुछ है ना[4]।
दिन थोरनि लहि कल्याना। सुनि पठहिं कमावहि नाना ॥ ९ ॥

दोहरा

चाहति नही सहाइता संसक्रित की एहु।
कटक मोह को बिकट जो काटहि लेहा देहु ॥ १० ॥

---

1. उसी को प्रमाण मानते हैं। 2. भाखा के बिना संस्कृत अधूरी है। 3. शिक्षा।
4. भाखा का पढ़ना शुभ है और कुछ कठिन नहीं।

जथा सुभट अतिरथी हुइ लरति न चहति सहाइ[1]।
अनगिन शत्रु सैंन को नासहि जुद्ध मचाइ ॥ ११ ॥
ससक्रित्ति तुमरी जो है रथी महांरथि देइ[2]।
चहि सहाइ रन महिं लरहि इक महि शकति न होइ ॥ १२ ॥
भाखा को ले संग निज सिक्खयून को समुझाइ।
मोह कटक तबि जीत है गति दे जौन कमाइ ॥ १३ ॥
जे करि सुरबानी कहैं इसको फल अधिकाइ।
तां परि पंडति कान सुनि, देहिं संदेहि मिटाइ ॥ १४ ॥
सतिगुर प्रभु प्रिय भगत जे तिन के बाक समान।
सुरबानी नहिं होति है, इह तो बिदत जहान ॥ १५ ॥
करम कांड मैं सुर चहैं नर को दे उपदेश।
सुरगन नरक फिर फिर जनम सुख दुख लहै बिशेष ॥ १६ ॥
सतिगुर ग्यान द्रिड़ाइ करि बंधन काटहि जीव।
यांते जानहु मिसर जू को घटि, को बधि थीव ॥ १७ ॥
शुभ उपदेश जु श्रेय दे संसक्रित भाखा कोइ।
कहे क्रुरीति जु दुहनि महिं माने अधुगति होइ ॥ १८ ॥
पात्र मझार अहार शुभ खैबे त्रिपती जांहि।
जे बिख पाइ अचाईए म्रितक नरक कौ पांहि[3] ॥ १९ ॥
किम संसक्रित्ति को अधिकता कहैं, लहै नहिं रीति।
पठिबे ते हंकार ह्वै नहीं नंम्रता चीत । २० ॥
बिना गरीबी[4] भगति नहिं जिसते कलि महि श्रेय।
टिब्बहि ऊच न जामई[5] क्रिषी बीज जो देय ॥ २१ ॥
संसक्रित्त की वारता अपर सुनहु मन लाइ।
मुनसब[6] होइ बिचारीए करिवे पक्ख्य बिहाइ[7] ॥ २२ ॥
किह किह को अधिकार ह्वै सभिनि सुनावहु नांहि।
बिच अधिकारनि बुधि बड तौ समझहि कछु तांहि ॥ २३ ॥

---

1. जैसे शूर-वीर लड़ते हुए सहायता नहीं चाहता। 2. यदि संस्कृत रथी है तो दूसरी (भाखा) महारथी है। 3. पात्र में शुभ अहार डालकर खाने से तृप्ति होती है, यदि उसी में विष डाल कर खाया जाये तो मर कर नरक में ही जाना होगा। (इसमें पात्र का क्या दोष ?) 4. नम्रता। 5. ऊँचे टीले पर नहीं जमती। 6. न्याय कर्त्ता। 7. पक्षपात छोड़ कर।

सुमतिवंत अभ्यासही तौ पठि जानै सोइ ।
करि अभ्यास कमाइ को तिसको फल तबि होइ ॥ २४ ॥
लाखहुं महिं नर पाइ को जे सभि बिधि बनि जाइ[1] ।
अपनि श्रेय से करि सकहि अपरनि को क्या पाइ[2] ॥ २५ ॥
जथा कूप को नीर ले इक नर बोवै खेत ।
सिंचति श्रमकरि निताप्रति तौ कुछ निज कर लेत ॥ २६ ॥
अबि भाखा की बात सुनि सरब जाति अधिकार ।
लघु दीरघ बुधि सभि सुनै समझैं सार असार ॥ २७ ॥
बहुत नहीं अभ्यास चहिं थोरनि दिन महिं जानि ।
ऊच नीच पठि किधौं सुनि भगति करहिं हित ठानि ॥ २८ ॥
सभि पावहि कल्यान को जानि सनाति[3] अनेक ।
सिमरन करि सतिनाम को सार असार बिबेक ॥ २९ ॥
जैसे जलधर उमडि कै बरखा करि इक सार ।
सुद्धि मलिन उचनीच थल जल प्रापति पर धार[4] ॥ ३० ॥
पसु पंछी सभि थल बिखै सुख पायो सभि जीव ।
बन त्रिण हरीआवलि भए, तपत मिटी हित थीव[5] ॥ ३१ ॥
पुरि ग्रामनि खेतनि बिखै सभि प्रमुदति इकसार ।
त्रिपति भए इक बारही जहिं कहिं कहिं जैकार ॥ ३२ ॥
श्री गुर की बाणी तथा सभि जातिनि इक सार ।
ऊच नीच पठि किधौं सुनि भए श्रेय अधिकार[6] ॥ ३३ ॥
मलिन किधौं सुच होइ करि सिमरहि श्री सतिनाम ।
प्रापति होवहि मुकति तिनि बिधि सुखेन अभिराम ॥ ३४ ॥
जलधर बरखा अधिक ह्वै किधौं कूप जल होइ ? ।
पंडित कहहु बिचार कै, पख्य न कीजै कोइ ॥ ३५ ॥
इत्त्यादिक सुनि वाक को बोल न दिज ते आइ ।
मुनसब हुइ पख त्याग करि करि बिचारि सुख पाइ ॥ ३६ ॥
बादि छोरि गुर ओर पिख, जुग कर जोरि बखान ।
तुम दाता सभि जगत के हमरो बाद गुमान ॥ ३७ ॥

---

1. यदि सब विधि पूर्ण हो भी जायें तो लाखों में से कोई नर परमात्मा को पा सकता है । 2. वह अपना श्रेय कठिनाई से करता है, औरों को उससे क्या प्राप्त होगा । 3. चारों वर्ण । उन चारों से भी नीच । 4. धारा पड़कर । 5. सुख होता है । 6. अधिक श्रेयस्कर ठहरती है ।

सिक्ख्य करहु. दुरमति हरहु, मोकहु लखिकरि दास ।
क्रिपा सिंधु मैं बूंद सम कया करिहौं समतासु[1] ॥ ३८ ॥
बडे भाग जागे अबहि मेल भयो तुम साथ ।
दे आपनि उपदेश को कीजहि मोहि सनाथ ॥ ३९ ॥
इम कहि पग पंकज गहे त्याग जाति हंकार ।
संकटि बसि निज जीव लखि गुर पूरन अवतार ॥ ४० ॥
करहि उधारनि कषट ते बंधन काटहि मोर ।
महां क्रिपाल सुशील हैं हरहिं आपदा घोर ॥ ४१ ॥
दीन भयो बिनती भनति भाउ भगति चित मीन ।
भाग भूर जिस भाल के जागे कलमल हीन ॥ ४२ ॥
श्री सतिगुर अरजन भन्यो तुम उत्तम दिज जाति ।
सिमरहु श्री सतिनाम को लिव लगाइ दिन रात ॥ ४३ ॥
बिप्प्र कह्यो त्रिसकार मैं तुमरो कीनि महान ।
बखशहु मेरी भूल को दाता सकल जहान ॥ ४४ ॥
सुंदर पद अरबिंद म्रिदु जल सों इनहु पखारि ।
दीजै मैं मुख पान करि बनौं सिक्ख हित धारि ॥ ४५ ॥
श्री गुर अरजन देव ने जान्यो शरधा मांहि ।
चरणांम्रित दे दास किय समि बिकार हरि तांहि ॥ ४६ ॥
लिव लागी सतिनाम सों रसना ने रस पाइ ।
अधिकारी भा ग्यान को श्री गुर करुना पाइ ॥ ४७ ॥
चार पदारथ पाइ कै दिजबर भयो निहाल ।
सुजसु करति गुर को सदा महिमा लखी बिसाल ॥ ४८ ॥
बिप्प्र संग परसंग इम होयो गुरू क्रिपाल ।
अबि आगल इतिहास को श्रोता सुनो रसाल ॥ ४९ ॥
कितिक समां बीत्यो तहां रहे गुरू इस रीति ।
सिक्ख्य होइं बहु आन करि पग पंकज करि प्रीति ॥ ५० ॥
श्री अम्रितसर को नगर बहुत बसावनि कीनि ।
सेवहिं श्री गुर देव को अहंमेव ते हीन ॥ ५१ ॥
सुधा सरोवर एक दिसि दूजी दिश निज धाम ।
रच्यो बजार दुकान करि होति बनज को काम ॥ ५२ ॥
धनी बनक बहु बसे तहिं गुर के वाकनि मानि ।
सौदा ले सभि भांति को पूरन करहिं दुकान ॥ ५३ ॥

1. मैं आपकी क्या बराबरी कर सकता हूँ ?

इक दिन इकठे बनक हुइ सभि आए गुरपासि ।
प्रथम नमो करि कहति मैं हाथ जोरि अरदास ।। ५४ ।।
श्री गुर तुमरे मानि बच बैठे रच्यो बजार ।
नही बनज कुछ होति है खावहिं कुतो अहार ।। ५५ ।।
नहिं गाहक आवहिं कबहुं बिकहि बसतु नहिं काहि ।
बिन लेवा देवी करे दरब कहां ते पांहि ।। ५६ ।।
सुनि श्री अरजन नाथ जी बनकनि संग बखान ।
नित प्रति श्री दरबार महिं मसतक टेकहु आनि ।। ५७ ।।
इक बिराटिका[1] दोइ त्रै चहु पंचम ले हाथ ।
यथा शकति धन मेट दिहु भाउ भगति के साथ ।। ५८ ।।
बहुर करहु बिवहार को सगरे बासुर मांहि ।
संध्या पुनि बंदन करहु देहु प्रदच्छन[2] जाइ ।। ५९ ।।
होहि बनज निज अधिक ही धनी बनहु सुखु पाइ ।
पुत्र पौत्र जुत फलहुगे संसे देहु मिटाइ ।। ६० ।।
सुनि के सभि कर जोरि कै मानि तिसी बिधि कीनि ।
चल्यो बनज धन गन भयो प्रापति भे सुख पनि ।। ६१ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'बिप्प्र-बनिक' बरननं नाम एक ऊन त्रिसती अंशु ।। २९ ।।

---

1. कौडी । 2. प्रदक्षिणा ।

अंशु ३०

श्री हरिगोबिंद ताप प्रसंग

दोहरा

श्री गुरु हरि गोबिंद जी खेलति लरकनि संग।
अजर बिहारति दौरते[1] देखति जननी गंग।। १।।

तोटक छंद

तन भूखन चारु अदूखन के। पिखि नाशक ब्रिंद कलूखनि के।
सुख देति महां सिख दासनि को। रहिं संग अग्यान बिनाशन को।। २।।
दरसंति भले परसंति पगं। हरखंति रिदैहरि पंथ लगं।
फल देखनि को बड पावत हैं। तजि ब्रिंद बिकार सुहावति हैं।। ३।।
इम केतिक द्योस बितीत गए। बड डील शरीर सु होति भए।
तन धारनि को जिन स्वांग लयो। निरबाहति तैसिय रीति कयो।। ४।।
इक द्योस चढ्यो तनु ताप महां। बहु कंपति अंग संताप लहा।
बहु बारहि बारि सु पानि करैं[2]। मुख सूकति जाति न होति थिरे[3]।। ५।।
पिखि गंग सु व्याकुल नंदन को। सुधि भेज दई जगबंदन को।
ढिग बैठि रही दुख पावति है। प्रिय पुत्र पिखै तपतावत है।। ६।।
निज हाथ लगाइ रही तन को। सुधि बूझति, पीर बड़ी मनको।
इतने मैं श्री गुर आप अए। निज नंदन देख समीप भए।। ७।।
मन व्याकुल गंग बिशाल लखी[4]। द्रिग ढोरति[5] हेरति नंद दुखी।
तजि खान रु पान बिसूरति है। चित चिंत मनो इह मूरति है।। ८।।
नहिं आन बिखै मन कारज को। इम संकट देखि सु आरज[6] को।
ढिग बैठि गए करुना करि कै। मुति देह सु ताप रह्यो चहि कै।। ९।।
गन दास पिखे दुख पावति हैं। मुरझाइ कछू न सुहावति है।
सभिहूनि मनो जर जीवन की[7]। मन आनंद दीरघ थीवन की[8]।। १०।।

---

1. आँगन में विहार करते हैं। 2. बार-बार जल माँगते। 3. चैन न पड़ती। 4. गंगा (माता) का मन अत्यंत व्याकुल देखा। 5. अश्रु झरते। 6. पत्नी। 7. मानो (वे) सबके जीवन की जड़ हैं। 8. होने की।

इम श्री गुर देखि बिशेख दुखी। परवार अधार सभी बिलखी।
तजि आन उपाव बडे जग के। परमेशुर प्रीत रही लगके ॥ ११ ॥

सतिनाम सु मंत्र महाँ जपिकै। बड दारुन कारन जे तपिकै।
कर श्री गुर फेरनि कीनि जबै। मुख पै, तन पै, हति ताप तबै[1] ॥ १२ ॥

न रह्यो तब यों ततकाल हयो। उठि श्री हरि गोबिंद बैठि गयो।
जिम पूरब खेलति मोद धरे। तिस रीति महां हरखंति फिरे ॥ १३ ॥

परबार निहारि अनंद भयो। समुदाइ मिले उतसाह कयो।
सभि श्री गुर को कर जोर कहैं। दुख ब्रिंद तुमारि अधीन रहैं ॥ १४ ॥

जिम रावर की लखते मरजी। तिम होति समैं, मनते अरजी।
नहिं आप कछू करि साकति हैं। पदधूल जमादिक ताकति हैं[2] ॥ १५ ॥

सुनि श्री गुर नाम बिशेषति हैं। सिख संगति को उपदेशति हैं।
इह मंत्र महां सतिनाम अहै। निज जीह जपै जु अरोग चहै ॥ १६ ॥

तन ताप कहां इसते जु रहै। जग तीनहु तापनि खापद है[3]।
मुखिधंन, जपै सतिनाम सदा। किह संकट होनि न देति कदा ॥ १७ ॥

बड भाग भरे लिव लावति हैं। दुख लोक प्रलोक नसावति हैं।
कहिं सिक्खन साथ बिकार तजो। सतिनाम भजो, सतिनाम भजो ॥ १८ ॥

दोहरा

इम कहि श्री अरजन गुरू शबद बनावनि की।
सतिगुर अरु सतिनाम की महिमा जिन महिं पीन ॥ १९ ॥

श्री मुखवाक

सोरठि महला। 5 ॥

मेरा सतिगुरु रखवाला होआ।
धारि क्रिपा प्रभ हाथ दे राखिआ हरि गोविंदु नवा निरोआ[4] ॥ रहाउ ॥
तापु गइआ प्रभि आपि मिटाइआ जन की लाज रखाई।
साध संगति ते सभ फल पाए सतिगुरु कै बलिजांई ॥ १ ॥
हलतु पलत प्रभ दोवै सवारे हमरा गुणु अवगुणु न बीचारिआ।
अटल बचनु नानक गुर तेरा सफल करु मसतकि धारिआ ॥ २ ॥ २१ ॥ ४९ ॥

---

1. तभी ज्वर का नाश हो गया। 2. यमादि भी चरण-धूलि के अभिलाषी हैं। 3. संसार के तीनों तापों का विनाश है। 4. पूर्णत: नीरोग।

सोरठि महला ॥ 5 ॥

तापु गवाइआ गुरि पूरे ।
बाजे अनहद तूरे ।
सरब कलिआण प्रभि कीने ।
करि किरपा आपि दीने ॥ १ ॥

बेदन सतिगुरि आपि गवाई ।
सिख संतसभि सरसे होए हरि हरि नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
जो मंगहि सो लेवहि ।
प्रभ अपणिआ संता देवहि ।
हरि गोविंदु प्रभि राखिआ ।
जन नानक साच सुभाखिआ ॥ २ ॥ ६ ॥

सोरठ म० ॥ 5 ॥

ठंढि पाई करतारे ।
तापु छोडि गइआ परवारे ।
गुरि पूरे है राखी ।
सरणि सचै की ताकी ॥ १ ॥

परमेसरु आपि होआ रखवाला ।
सांति सहज सुख खिन महि उपजे मनु होआ सदा सुखाला । रहाउ ॥
हरि हरि नामु दीओ दारू ।
तिनि सगला रोग बिदारू ।
अपणी किरपा धारी ।
तिन सगली बात सवारी ॥ २ ॥

प्रभि अपना बिरदु समारिआ ।
हमरा गुण अवगुण न बीचारिआ ।
गुर का सबदु भइओ साखी ।
तिनि सगली लाज राखी ॥ ३ ॥

बोलाइआ बोली तेरा ।
तूं साहिबु गुणी गहेरा ।
जपि नानक नामु सचु साखी ।
अपुने दास की पैज राखी ॥ ४ ॥ ६ ॥ ५६ ॥

दोहरा

इत्यादिक बहु शबद शुभ करे अपर गतिदाइ ।
राग बिलावल आदि जे दिये ग्रंथ महि पाइ ॥ २० ॥

जो जिस संकट पर कह्यो पढहि जि सिख मन लाइ ।
शरधा ते दुख खै[1] करहि इही मनोरथ गाइ ॥ २१ ॥

सरब इहां हम नहि लिखे अरथ प्रगट तिन केर ।
श्री ग्रिथ साहिब पठे जाने जाहि घनेर ॥ २२ ॥

तोटक छंद

पुन श्री गुरु जग्ग[2] अरंभ कर्यो । मिषटान मंगाइ . महान धर्यो ।
सिख जाइ चहूं दिश घ्रित लयो । पुनि गोधूम सूखम चून[3] कियो ॥ २३ ॥

पकवान पकावनि पुंज लगे । सभि द्योस पक्यो पुनि रैन जगे ।
गन मोदक मोदक ओघ करै[4] । बहु पूप[5] पके करि रास धरे ॥ २४ ॥

दधि संगि पकौरनि मेलि भले । मरचादि मिसाल बिसाल रले ।
कर रास तिहावल त्यार धर्यो । बहु भांतिन मेव अमेज कर्यो ॥ २५ ॥

निवता कहि दीन चहूं बरना । सभिहूंनि अहार इहां करना ।
दरवेश अशेष बुलाइ लए । ग्रिहसती उच नीच हजूर अए ॥ २६ ॥

बड मेल भयो गिनती न रही । सुधि जाति भई जिस ग्राम लही[6] ।
सुनि साध फकीर सु ब्रिंद चले । घर श्री गुर के सभि आइ मिले ॥ २७ ॥

गन जाति ग्रिही सुनि आइ गए । चहुं कोद प्रमोदति टोल भए ।
करि पंकत रीति अनेकनि की । बिंच थाउं सु भोजन टेकन की[7] ॥ २८ ॥

इक जाति करी इक थान सबै । करि पांति जुदी सु जुदी सु तबै ।
सभि पंथनि संत तथा करि कै । थिति न्यारिय न्यारियता धरि कै ॥ २९ ॥

बहु भांतिनि के पकवान दए । शुभ स्वाद हुते रुचि साथ खए ।
मुख धंनहि धंन भनैं गुर को । बड भोजन दीनि, न भा थुर को ॥ ३० ॥

जिस नाम भनै दुख जाति घने । तिन को अभिबंदन देखि बने ।
सभि आशिख देति अनंद लवो । हरिगोविंद बैस बिसाल हुवो ॥ ३१ ॥

गुरबंस चलो तबि लो अवनी । जबिलौ उडमाल[8] फिरै रवनी ।
ससि सूरज जावत जोति धरैं । सलिता जल सागर बीच भरै ॥ ३२ ॥

---

1. क्षय, अन्त । 2. यज्ञ । 3. गेहूँ का बारीक आटा बनाया । 4. अधिक आनन्द-दायी लड्डू बनाए । 5. पुए । 6. जिस गाँव ने यह समाचार सुना । 7. भोजन रखने की । 8. सितारे ।

जुगकी मिरजाद जबै लगि है। कमलासन की रचना जग है।
तबि लौ गुरबंस रहो थिर कै। जग मैं जसु दीरघ बीथिरकै[1] ॥ ३३ ॥
गुर नंदन होहि अरोग सदा। बिधना नहिं व्याप सकाहि कदा।
मन बांछति भोजन खांहि घने। उर मोदति ब्रिंद असीस भने ॥ ३४ ॥
पुन दीननि दान दयो धन को। गन होति भए न करी गन को[2]।
सभिहूंनि दयो हरखंति भए। जैकार उचारति नाद थए। ३५ ॥
बहुरो गुर होइ तयार चले। हरिमंदिर है जिस थान भले।
उचवाइ प्रसादि संबूह लयो। हरिगोविद नंदन संग थयो ॥ ३६ ॥
पित केर सथान महान महां। हित पूजनि के चलि जाति तहां।
पहुंचे गर अंचर डारि खरे। पित ध्यान करे उर प्रेम भरे ॥ ३७ ॥
करि बंदन दोष निकंदन को। पुन श्री हरिगोबिंद नंदन को।
शरधा धरि माथ टिकाइ दयो। वय दीरघ को बर जाच लयो ॥ ३८ ॥
कर जोरि खरे अरदास भई। धरि भाउ प्रदच्छन फेर दई।
बहु नंम्र भए गुर पूजि फिरे। जुत मंगल के उतसाह करे ॥ ३९ ॥
निज धाम बिखै पुन आइ गए। बहु गावति गीत अनंद भए।
बहु भांति सु बादित बाजति हैं। बहु भांति सु मंगल साजति हैं ॥ ४० ॥
बहु भांति प्रमोदति होवति हैं। नर नारि खुशी उर जोवति हैं।
लघु दुंदभि की धुनि बाज रही। नहिं कान परै कुछ बात कही ॥ ४१ ॥
शहनाइ नफीरनि होति धुनी। गन भाट कलावत गाइ गुनी।
कबि छंद बनाइ सुनावति हैं। गुर ते मन बांछति पावति हैं ॥ ४२ ॥
बड पौर कुलाहल होवति है। गुर हेरि कलूखनि[3] खोवति हैं।
बडभीर भरी नर नारिनि की। बहु मंगल रीति उचारनि की ॥ ४३ ॥
निज नंदन गंग निहारति है। धन ले सिर पै बहु वारति है।
गन मंगत को पिखि देवति है। गन आशिख माधुर लेवति है ॥ ४४ ॥
हरिगोविंद चंद मनिंद महां। उछल्यो जल ब्रिंद अनंद तहां[4]।
नर नारि भए जलजंतु सभै। इम होति कुलाहल भूर तबै ॥ ४५ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'श्री हरिगोविंद ताप प्रसंग' बरननं नाम त्रिसती अंशु ॥ ३० ॥

---

1. यश फैला कर। 2. कोई गिनती नहीं कर सकता था। 3. पाप आदि।
4. वहाँ आनन्द रूपी जल का प्रभूत स्रोत उछल पड़ा।

अंशु ३१

श्री हरिगोविंद पढ़नि प्रसंग

दोहरा

इस प्रकार श्री सतिगुरु कीनसि द्योस बितीत ।
नंदन हरि गोविंद जी तन विलंद मुद चीत ॥ १ ॥

हाकल छंद

प्रिय पुत्र बिलोकि बिचारैं । श्री अरजन इम उरधारैं ।
चटसाल[1] बिसाल बिठावैं । तहिं बैठति बिद्या पावैं ॥ २ ॥

किस थान पठैं सु बिचारी । पुनमन मैं बैसे धारी ।
जो हमरो भ्रात वडेरो । उर सरल सुशील घनेरो ॥ ३ ॥

शुभ महादेव जिस नामू । चलि गए तिसी के धामू ।
करि बंदन सादर बैसे । बलदेव अग्रहरि जैसे[2] ॥ ४ ॥

म्रिदु बिनै सप्रेम वखाने । तुम भ्राता अहो महाने ।
सम पिता सदीव हमारे । गुन अउगन को न चितारे ॥ ५ ॥

हरि गोविंद दास तुमारा । गन बिघन विदार उबारा ।
अबि लायक पठिवे सोऊ । जो विद्या लेवहि कोऊ ॥ ६ ॥

तुम आप देहु फुरमाई । हित बिद्या जहां पठाई ।
सुनि महांदेव मति दीहा[3] । कहि करहु न अनतै ईहा[4] ॥ ७ ॥

जिन दीनसि पुत्र तुमारा । जट बुड्ढा बुद्धि उदारा ।
समरत्थ महां जिस मांही । कहि बाक अंनथा[5] नांही ॥ ८ ॥

बड करामात महिं पूरा । गन हतनि विकारनि सूरा ।
तिस बिना न कहूं बिठावहु । जिम चाहहु तथा पढावहु ॥ ९ ॥
सुनि महांदेव की बानी । श्री अरजन सादर मानी ।
सिख पंच समीप हकारे । तिन संग सु बाक उचारे ॥ १० ॥

---

1. पाठशाला । 2. जैसे बलराम के सम्मुख श्री कृष्ण । 3. मतिवान् । 4. और की इच्छा । 5. व्यर्थ ।

जहिं बुड्ढा शुभ मति बासा । चलि जाहु तिनहु के पासा ।
कर जोरि निहोरहु[1] तांही । करि नमो कमल पग पाही ॥ ११ ॥
पुन लीजै नाम हमारा । तुम कौ निज पास हकारा ।
सनमान सहत ले आवो । अबि तूरन तहिं चलि जावो ॥ १२ ॥
सुनि सिक्खन सीस निवावा । चलि गए हुतो जिस थावा ।
मिलि तिसे बंदना कीनी । गुर आइसु पुनि कहि दीनी ॥ १३ ॥
सुनि बुड्ढा बिकस्यो अंगा । उठि भयो तिनहु के संगा ।
श्री अरजन जहां बिराजे । जिन गिरा सुने अघ भाजे[2] ॥ १४ ॥
तहिं बुड्ढा चलि करि आयो । पद पंकज सीस निवायो ।
गुर देखि तबै हुइ ठांढे । सनभानति आनंद बाढे ॥ १५ ॥
तन कुशल अनंद तुमारे । चित प्रभु सों रच्यो उदारे ।
उपकार हेतु तुम देहा । उर आतम ग्यान अछेहा ॥ १६ ॥
सुनि बुड्ढे बाक बखाना । तन मानुख तुम ने ठाना ।
जग जाति नरक दुख पाए । तिन हेतु उधारन आए ॥ १७ ॥
छपि रहे अलप मति हीते[3] । बुधिवंत लखै सभि चीते ।
गुर तबहि प्रसाद मंगायो । मन पंच तोल करि ल्यायो ॥ १८ ॥
रखि बुड्ढे प्रात[4] अगेरे । शुभ बाक भने तिस बेरे ।
इह सकल प्रसादि ब्रताओ । हरि गोविंद आपि पढाओ ॥ १९ ॥
गुरमुखी सु बिद्या दीजै । सिस ऊपर करुना कीजै ।
पट्टी लिख पैंती सारी । सिखरावहु मुखहुं उचारी ॥ २० ॥
पुनि साहिब बुड्ढे भाखा । मैं जाट. घास को राखा[5] ।
मुझ पढनो कछू न आवै । क्या जानौ, कहां पढावैं ॥ २१ ॥
जो आप पढ़हि सु पढ़ाई[6] । अनपढ क्या देहि सिखाई ।
श्री अरजन सुनि करि भाखें । तुम सकल शकति को राखे ॥ २२ ॥
अस वसतु कौन जग मांही । जो तुम कहु आवति नाही ।
नहिं आइ जु रिदै तुमारे । सो भई न जगत मझारे ॥ २३ ॥
जो भई प्रपंचहि मद्धे । सो तुमहि बिदति सभि सुद्धे ।
नहिं कीजहि अपर वलाऊ[7] । सरबग्गय् ततग्य[8] सदाऊ ॥ २४ ॥

---

1. प्रार्थना करो। 2. जिनकी वाणी सुनने से पाप नाश हो जाते हैं। 3. थोड़ी बुद्धि वालों से ही छिपे हो। 4. बड़ा और खुला बरतन, जिसमें आटा आदि गूंधते हैं। 5. घसियारा। 6. जिसने स्वयं पढ़ा हो, वह तो पढ़ाए। 7. टालमटोल। 8. सर्वज्ञ एवं तत्त्वज्ञ।

शुभ द्योस महूरत आजू। जो करिय सु पुरवै काजू।
कहि श्री गुर नानक नामू। दिहु विद्या अबि अभिरामू ॥ २५ ॥
जसु सतिगुर जबहि बखान्यो। तबि बुड्ढे साहिब मान्यो।
उर हुइ प्रसादि[1] ततकाला। वरताइ प्रसादि बिसाला ॥ २६ ॥
गुर अग्र निवायो माथा। गहि पटीआ अपनै हाथा।
सभि पैंती लिखि करि दीनी। हरि गोविंद जी करि लीनी ॥ २७ ॥
कहि प्रिथमै, ओ अंकारा। सतिगुरू प्रसादि उचारा।
सभि अक्खयर आदि उकारा[2]। पठि लीने अंत ड़कारा[3] ॥ २८ ॥
दिन प्रथम पठति भए ऐता। पुन द्योस दुती करि चेता।
पठि लीनि मुहारनि[4] सारी। लग लागे जथा उचारी[5] ॥ २९ ॥
दिन त्रितीए पावति नावें। जिम बुड्ढा बाक अलावै।
पटीआ लिखि नावनि पूरी। मुख बानी उचरति रूरी ॥ ३० ॥
सभि विद्या कारन जोई[6]। लगि पढनि गुरमुखी सोई।
तनु मानुख धार्यो जैसे। निरबाह स्वांग कहु तैसे ॥ ३१ ॥
पुन पोथी पढनि सु लागे। सभि देखति अचरज पागे।
नहिं महिमा जिनहुं पछानी। तिन भई बुद्धि बिसमानी ॥ ३२ ॥
कुछ देर न लागी ऐसे। जनु पढे प्रथम, पढि तैसे[7]।
श्री अरजन सुनति अनंदे। सुत वाचक भयो बिलंदे ॥ ३३ ॥
जो लेकरि हाथ पढावैं। ततकाल सु बाच सुनावें।
पुन बहुत प्रशाद मंगायो। सभि बुड्ढे अग्र रखायो ॥ ३४ ॥
हरिगोविंद पद पर डारा। गुर कीनसि बुद्धि उदारा।
सभ बिद्या रिदै बसाई। भे नंम्र तिसे अगुवाई ॥ ३५ ॥
सभि संगति महि बरतावा। पकवान महां मन भावा।
श्री अरजन पुनि धन लीना। गन दीननि दान सु दीना ॥ ३६ ॥
उतसाह कीनि तिसकाला। लघु दुंदभि बजे बिसाला।
शहनाइ सु झांझ नफीरं। बड बज्जी धौंसि गहीरं ॥ ३७ ॥
हरगोबिंद जी प्रिय लागे। अवलोकति नर बडभागे।
तबि बुड्ढा जी अनुरागे। उर बिसर्यो सभि बैरागे ॥ ३८ ॥

---

1. प्रसन्न। 2. 'उ' आदि सब अक्षर। 3. अंत में 'ड़' तक पढ़ लिया। 4. वर्णमाला। 5. जैसे मात्राएँ आदि लगाकर उच्चरित होती है। 6. जो सम्पूर्ण विद्या का कारण है (भाव, गुरु हरिगोविंद जी)। 7. ऐसे पढ़ ली जैसे पहले ही पढ़ रखी थी।

भरि अंक बदन अविलोके । मन प्रेम रुकति नहिं रोके ।
उर हित करि सूंघति माथा । बर देति भयो हित साथा ॥ ३९ ॥
बड बीर, कसहु कटि माथा । गर खडग, धनुख द्रिढ़ हाथा ।
रिपु मारहु करि घमसाना । नहिं प्रति भट होवहि आना[1] ॥ ४० ॥
करि संघर शत्रुनि मारो[2] । जसु पसरहि ब्रिजै तुमारो ।
बल अतुलत बाहु बिसाला । हुइ दीरघ डील क्रिपाला ॥ ४१ ॥

कवित्त

जैसे रामचंद परकौसक[3] मुनिंद्र बर होइ कै प्रसंन मन बिद्या सिखराइ कै ।
दीने बर और सभि मंत्र सिरमौर जेते अखिल पढाए तातकाल चित चाइ कै ।
तैसे हरि गोबिंद बिलंद बिद्या दई सभि और बर कहे उर प्रेम उमगाइ कै ।
बूड्ढे ह्वै प्रसंन सुभि आशिख बखानी धन, भयो उतसाह चहूं दिशि रह्यो छाइकै ॥ ४२ ॥

दोहरा

बिद्या दई सिखाइ शुभ बानी पढ़िवे केर ।
बाचक होए सकल के पढति न लावति देर ॥ ४३ ॥
शसत्रन की बिद्या महां तिसको बर दे दीनि ।
बान प्रहारनि अनिक बिधि ऐंचनि धनुख प्रबीन ॥ ४४ ॥
खड़ग प्रहारनि सिपर गहि तन बचाइ करि दावा ।
इत उत होवनि समुख पुनि गन शत्रुनि करि घाव ॥ ४५ ॥

सवैया

होनि महां असवार तुरंगम दीरघ छाल कुदाइ भजावैं ।
फेरन, मंडलकार भ्रमावनि, लै बरछा अरि ओर चलावैं[4] ।
हाथ तुफंग[5] गहैं करि त्यार, पलावति जाति छूटे रिपु घावैं[6] ।
और जिते इत्तयादिक जो बर, देति भयोसु करे बिन आवै[7] ॥ ४६ ॥
द्योस प्रती हरिगोबिंद चंद, बिलंद सरीर अनंद ब्रिधावै ।
नंदन को पिखि गंग उमंगति, आप सुनै निज पास पढावै ।
गोद बिठाइ प्रमोदति है अति प्रेम वध्यो सुनि कै बलि जावै ।
चाहति है कुशली सुत की, गुर नानक नाम लै सीस झुकावे ॥ ४७ ॥

दोहरा

इम दिन प्रति उतसाह जुत बधति सरीर बिलंद ।
माता पिता चकोर सम श्री हरिगोबिंद चंद ॥ ४८ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'श्री हरिगोबिंद पढ़नि' प्रसंग बरननं नाम इक त्रिसती अंशु ॥ ३१ ॥

---

1. तुम सरीखा कोई अन्य वीर नहीं होगा । 2. युद्ध करके शत्रुओं को मारो । 3. विश्वामित्र । 4. बर्छा गोलाकार घुमा कर भ्रमाते हुए शत्रु । 5. बंदूक । 6. दौड़ते हुए बदूक चलाकर शत्रु का नाश करना । 7. वर दिया कि (ये विद्याएँ) बिना अभ्यास के ही आ जायेगी ।

अंशु ३२

पंडत अर पैडे को प्राण संगलो लिआवन प्रसंग

दोहरा

पैड़ा मोखा सिख हुतो श्री सतिगुर के पास ।
सेवे निसदिन गुरनि को सिक्खी रिदै प्रकाश ।। १ ।।

चौपई

पंडित कांशी ते इक आवा । श्री अरजन सो पास टिकावा ।
करहि कामना बिप्र बिसाला । करौं सुनावनि कथा रसाला ।। २ ।।
पाछे दछना लेवौं मोख । दै हैं ग्यान रु सति संतोख ।
दिज मन की सगरी गुर जानी । राख्यो निकट रह्यो सुख मानी ।। ३ ।।
केतिक मास बिते जबि पासा । तिसी मनोरथ की धरि आसा ।
पुन श्री गुर कहिं कथा अनावहु । बेदनि की उपनिषध सुनावहु ।। ४ ।।
दिज सुनि हरख्यो लाग्यो करने । ब्रहम रूप को जिस महिं निरने ।
कथा होति नित नेम धराई[1] । इक दिन आयो सालो भाई ।। ५ ।।
अनंन होइ गुर पग लपटाना । अति आदर तिह श्री गुर ठाना ।
'सालो है मुझ परम पिआरा । अनंन भगत' गुर मुखों उचारा ।। ६ ।।
सुनि 'अनंन' बच गुरते पंडित । हमहिं अनंनता क्यों नहिं मंडत[2] ।
वेद सिधांत कथा जु सुनावैं । हम को नहिं अनंन मुख गावैं ।। ७ ।।
पंडित मन महिं ऐस बिचारी । किम परतावा लिहुं मन धारी ।
पंडित मन की श्री गुर जानैं । सुननि कथा नित उद्दम ठानैं ।। ८ ।।
हुती समीप सु अखिल सुनाइ । गुर बुझ्यो आगे समुदाई ।
सो भी कीजै हमहु सुनावनि । बिप्र मन्यो पुसतक इस थाव न ।। ९ ।।
सदन हमारे सभि लिखवाई[3] । दिहु आइस तौ लेहुं मंगाई ।
सतिगुर कह्यो अनावहु सारी । उपनिषधनि पुन करहु उचारी ।। १० ।।

---

1. नियम पूर्वक । 2. हमें क्यों अनन्यता से सुशोभित नहीं करते । 3. लिखी हुई रखी है ।

सुनि दिज निज सुत लग्यो पठावनि। भलो महूरत पिखि मन भावन।
पूजा करि गणेश की पाछे। सभि बिधि शुभ करि गमन्यो आछे॥११॥
ले करि गुर ते खरच सु पंथ। चल्यो बिप्प्र सुत लैवे ग्रंथ।
खर[1] सनमुखि हुइ दाएं बाएं। शबद कर्‌यो अपशगन दिखाए॥ १२ ॥
हटि आयो तबि श्री गुर सुन्यो। बिप्प्र बुलाइ बाक बर भन्यो।
भगत अनंन कहावति पडित। खर ते जात्रा कीनसि खंडति॥ १३ ॥
गणपति आदि पंचांग मनाए। तिनपर निह्चा नहीं टिकाए।
सिक्ख अनंन भगत हैं मेरे। जे न प्रतीत, लेहु अविहेरे॥ १४ ॥
पैडे को बुलाइ करि भनिओ। देश संगलादीप जि सुनिओ।
प्रांन संगली पोथी तहां। ले आवहु गमनहु मग महां॥ १५ ॥
श्री नानक सतिगुर तहि गए। गुरमति महां द्रिड़ावति भए।
न्रिपति सहत नर देश तिसी के। सिक्खी धारन कीनसि नीके॥ १६ ॥
श्री नानक की क्रिपा बिसाला। सत्तिनाम दे करे निहाला।
जिम तहि गए करी जिम लीला। जिम उपदेश्यो न्रिपति सुशीला॥ १७ ॥
तहां[2] प्रसंग सरल इह जानो। प्रान संगली रचनि महानो।
हमरो सिख आवै तिस दीजै। तबि लगि इहां राखिबो कीजै॥ १८ ॥
सिमरि बात इह अरजन नाथा। पैड़े को कहि दई सु गाथा।
लिख्यो हुकमनामा जिम भायो। गुर प्रसंन ह्वै कर पकरायो॥ १९ ॥
श्री नानक पोथी तिस थाईं। राह हकीकत सकल सुनाई[3]।
पोथी देहि सु खोलहु नांही। हटहु, लेहु आवहु हम पाही[4]॥ २० ॥
इक सिख राखे पैसे पांच। सो खरची दीनी गुरसाच।
सगर बात समुझाइ पठायो। सुनि आइसु ततकालु सिधायो। २१ ॥
पंडित को दिखाइ तबि कह्यो। गमन्यो सिक्ख भले तें लह्यो।
बार महूरत तिथि नहि पूछा। बिना खरच ते मन नहि छूछा॥ २२ ॥
निशचा एक करनि अरदास। नित जानहि जहिं कहिं गुर पास।
भगत अनंन कहावति ऐसे। गुर बिन अपर न मानहि कैसे॥ २३ ॥
गन देवनि पर निशचा तेरा। तज्यो सोपि सुनि रव खर केरा।
प्रभु गुरदास भई प्रति गाइ। यहि प्रसंग के कबित बनाइ॥ २४ ॥
सुनि भाई जुग कबित बनाए। अनंन भगत परथाइ सुहाए।
सो अबि इस थां लिखैं बनाई। पठि करि जानो गुर सिख भाई॥ २५ ॥

---

1. गर्दभ। 2. वहां का। 3. मार्ग की सब वास्तविकता समझा दी। 4. लेकर हमारे पास आओ।

भाई गुरदास जी वाच ।।

कवित्त

बैसनो अनंत ब्रह्मन सालग्राम सेवा गीता भागवत स्रोता एकाकी कहावई ।
तीरथ धरम देव जात्रा कउ, पंडित पूछ करत गवन सो महूरत सुधावई ।
बाहर निकस गरधब स्वान सगनि कै संका उपराजिकै बहुर घरि आवई ।
पतिब्रत गहि रहि सकल न एका टेक, दुबिधा अछत, न परम पद पावई ।।४४७।।
गुर सिक्ख संगति मिलाप को प्रताप ऐसो, पतिब्रत एक टेक, दुबिधा निवारी है ।
पूछत न जोतक[1] अउ वेद थितवार कछु ग्रिह अउ निछत्र की न संका उर धारी है ।
जानत न सगन, लगन, आन देव सेव, सवद सुरति लिव नेह निरंकारी है ।
सिख संत बालक स्री गुर प्रतिपालक[2] हुई जीवन मुकति गति ब्रहम बीचारी है ।।४४८।।

चौपई

निरनै करि दिज ने तबि जाने । बाक जथारथ आप बखाने ।
शांति भई सुनि गुरि रव दिज को । बहुर न संसा प्रापति रिदको ।। २६ ।।
मसतक टेक सिमरि गुर गयो[3] । सभि मग उलंघ पहूचति भयो ।
पुरि शिवनाम[4] प्रवेशनि कीना । न्रिपति प्रसंग बूझि सभि लीना ।। २७ ।।
मया मेदनी तिसको नाम । चलति पंथ शुभ गुन गन धाम ।
पुंन वान राजा धरमग्ग्य । गुर को सिक्ख बिसालत तग्य ।। २८ ।।
श्री नानक सिख न्रिप शिवनाम । तिसको इह पोता जसु लाभ ।
सुनि सभि पौर दार ढिग जाइ । गुरू निकटि ते मैं चलि आइ ।। २९ ।।
लिख्यो हुकम नामा मैं ल्यायो । सुधि भूपति को देहु सुनायो ।
जबि न्रिप सो सभिकही हकीकत । पिता पितामे ते जु उडीकति[5] ।। ३० ।।
ततछिन उठ्यो अगाऊ आयो । करि आदर अंतरि प्रविशायो ।
शुभ आसन पर निकट बिठाइ । न्रिप जुत सभिहिंनि बंदे पाइ ।। ३१ ।।
जबै हुकमनामा इन दीना । भयो हरख सिर पर धरि लीना ।
कहि न्रिप निज दासनि कै संगि । करो सकल मंगल छबि रंगि[6] ।। ३२ ।।
नगर बिखै सभि को कहि दीजै । बहुत भांति के उतसव कीजै ।
लघु दुंदभि आदिक बजि बाजे । बंदन वार फूल दरवाजे ।। ३३ ।।
सभि पुरि के नर लए अकोर[7] । आए न्रिप ढिग तबिकर जोरि ।
कर्यो तिहावल ब्रिंद अनायो । बहु सुगंधि फूलनि बरसायो ।। ३४ ।।

---

1. ज्योतिषी । 2. सिक्ख बालकवत् हैं और गुरु प्रतिपालक है । 3. गया (पैड़ा) । 4. सिंहल द्वीप का राजा । 5. प्रतीक्षा में हैं । 6. रंग-रंग की शोभा । 7. एकत्रित किए ।

नरन हजारन महिं न्रिप लैके। पठ्यो हुकमनामा सुख पै कै।
धूप धुखावति संख बजाए। बहु सुगंधि चंदन चरचाए ॥ ३५ ॥
पैंड़े सिख को देखनि कीजै। प्रान संगली इसको दीजै।
पठि सुनि कै सभि ही हरखाए। भांति भांति की भेट चढ़ाए ॥ ३६ ॥
कहिं लग कहौं उछाह सु कर्यो। दरशन जनु सतिगुरू निहर्यो।
सिक्खी रीति देखि करि तहां। अचरज सहत सु पैंड़ा रहा ॥ ३७ ॥
धंन गुरु नानक निरधार्यो। अवनी मंडल सगल उधार्यो।
केतिक दिन रहि सभि सुखपाए। पुन चलिबे हित वाक अलाए[1] ॥ ३८ ॥
बहुमोली वथु[2] न्रिप नै दीनि। प्रान संगली सौंपनि कीनि।
अपनी बिनै लिखी अरदास। मम मसतक तुम चरननि पासि ॥ ३९ ॥
मंजी पर बैठे न्रिप जोई। गुरु जानि पूजे सभि कोइ।
ले पोथी हुइ बिदा पधारा। सतिगुर महिमा महां-बिचारा ॥ ४० ॥
बड प्रताप पूरन सभि भू पर। जहिं कहिं छाइ रह्यो सभि ऊपर।
मग महिं आवति संगति हेरे। इसकी पूजा होति बडेरे ॥ ४१ ॥
क्रमकरि[3] लंघ्यो पंथ बिसाला। गंगा तीर आइ जिह काला।
एक साध तांको तबि देखा। सिर पोथी लखि अचरज पेखा ॥ ४२ ॥
निराधार पोथी सिरि आवै[4]। देखी साध न किसि द्रिषटावै।
दिखि अजमत भा आवति साथ। करि डेरा पूछी सभि गाथ ॥ ४३ ॥
कौन अहो तुम कहिंते आए। कैसी पोथी देहु दिखाए।
करो क्रिपा मुहि साधू जानि। मैं आयो दरशन इछ ठानि ॥ ४४ ॥
सुणि करि पैंड़े बिनती ठानी। सिंगल दीप ते पोथी आनी।
अंम्रितसर गुर अरजन धीर। चलि देखहु तुम तिन के तीर[5] ॥ ४५ ॥
गुर आग्या मुझ खोलहु नांही। यांते तुम पहि बिनती प्राही।
सुनि बच साध रिदे अस ठानी। चलि देखौं गुर के निकटानी ॥ ४६ ॥
निस बितीत करि प्राति शनाने। गंग मातपद बद सिधाने।
पैंड़ा साथ जुगम चलि आवैं। मग मैं चरचा करि बिगसावैं ॥ ४७ ॥
पैंड़े उपज्यो कुछ हंकारा। गुर किरपा बड कारज सारा[6]।
आनि सुधासर डेरा ठाना। पैंड़ा अपने धाम सिधाना ॥ ४८ ॥

---

1. चलने के सम्बन्ध में चर्चा की। 2. वस्तुएँ, उपहार। 3. क्रमानुसार, धीरे धीरे। 4. पोथी सिर पर बिना सहारे आती है। 5. उनके समीप चल कर देख लें। 6. पूर्ण किया।

पोथी खोलि पठी तिन सारी। कला जोग की सकल उचारी।
दुलभ बात अदभुत गति देखि। साधे जिस अज़मत जु विशेखि[1] ॥ ४९ ॥
प्रभु माइआ तिह चित भरमाइसि। कछु प्रसंग निज सदन दुराइसि[2]।
गुर पद आन बंदना कीनि। पोथी भेटा पाती दीनि ॥ ५० ॥
अंतरजामी गुरु प्रबीन। तिनहि करी[3] जो सभि लखि लीनि।
खोलि बिलोकी पठि करि सोइ। अधिक बिधिनि सिधि दाइक जोइ ॥ ५१ ॥
आदि अंत लौ पठि करि सारी। जिसते अज़मत लहि कर भारी।
श्री अरजन तबि रिदै बिचारी। जीव मंद मति हुई कलि भारी ॥ ५२ ॥
पोथी पढ़हि बुद्धि फिर जाइ। ग्यान हीन जग सिद्ध कहाइं।
यांते उचित न पोथी राखन। रिस करि पैंड़े को किय भाखनि ॥ ५३ ॥
जो प्रसंग इसते निकसायो। सो भी चहीए इहां मिलायो।
सो मंगाइ जल कर्यो प्रवाहि। अचरज देखि भए सभि तांहि ॥ ५४ ॥
देखि साध बिसमत हुइ भारी। गुर पद निकट सु बिनै उचारी।
महांराज! मुझ सुनि अरदास। दूरहुं ते आवा धरि आस ॥ ५५ ॥
पढ़ों लिखो पोथी गुर जोई[4]। लाभ अधिक यांते मुहि होइ।
देखि साध धीरज मन खोए। सीस चरन धरि नम्री होए ॥ ५६ ॥
साध दशा दिखि गुरु क्रिपाल। जउ इच्छा कढि लिहु ततकाल।
शीघ्र प्रविश जल कढि कर लीनी। हुइ प्रसंन गुर तांको दीनी ॥ ५७ ॥
केतिक समैं सेव पुन करी। उर शरधा अति गुर महि धरी।
पैंड़ा खरो अग्ग्र कर जोरि। खिमा करी सतिगुरु बहोरि ॥ ५८ ॥
भूल चूक अपनी बखशाई। राह हकीकत सकल सनाई।
सो बंनो सिख लिखी गिरंथ। जानति तांको सगलो पंथ ॥ ५९ ॥

दोहरा

श्री गुर हरगोबिंद के निकट रहिओ चिरकाल।
आग्याकारी होइ करि पैंड़ा भयो निहाल ॥ ६० ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'पंडत अर पैंड़े को प्राण संगली लिआवन' प्रसंग बरननं नाम बत्तीसमों अंशु ॥ ३२ ॥

---

1. जिसकी साधना से करामात प्राप्त होती है। 2. छिपा लिए। 3. जो उन्होंने की थी। 4. गुरु की लिखी पोथी को पढ़ूंगा।

अंशु ३३
बुड्ढे को पोथीआ लैण भेजण अरु गोइंदवाल आगवन प्रसंग

दोहरा

आगे सतिगुर की कथा कहौं जथा मति होइ।
तथा सुनहु श्रोता निपुन मथा सार है जोइ ॥ १ ॥
श्री ग्रिंथ साहिब शबद करहिं बीड़ को एक[1]।
गिरा पंच पतिशाहि की पूरन आदि बिबेक[2] ॥ २ ॥

निसानी छंद

इम श्री अरजन सति गुरु तहिं समा बितायो।
ग्यान शिरोमणि धीर बड बच मधुर सुहायो।
उपमा रतनाकर दिपहि गंभीर बिसाला।
सिख सेवक जल जंतु गन आकुलता उजाला[3] ॥ ३ ॥
सति, संतोख, सुशीलता, सच सुंदरताई।
दया, छिमा, मुदता, महां कोमल, सरलाई।
अनसूयू[4] धीरज, धरम, गुन आदिक ग्याना।
रतन बिसाल प्रकाशते जाती इह नाना ॥ ४ ॥
सार असार बिचारिबो गंभीर सु नीरा।
प्रेम छोभ ते भगति निति बीची सुख सीरा।
संत हंस बिलसति सदा जम ताप बिहाए।
छेम अनेकनि को करैं इम सिंधु सुहाए ॥ ५ ॥
शबद करति चित चितवते इक थान लिखीजै।
पठहिं सुनहिं सिख सुख लहहिं सिक्खी थिर थीजै।
इक दिन बैठे गुरु जी बहु सभा लगाए।
उपदेशति सतिनाम को चख करुना छाए[5] ॥ ६ ॥

---

1. वचन किया कि वे गुरु ग्रंथ साहिब की एक बीड़ (ग्रंथ) तैयार करेंगे। 2. (जिसमें) पाँचों गुरुओं की वाणी का ज्ञान एकत्रित होगा। 3. (उनकी) व्याकुलता उजाला है। 4. ईर्ष्या-रहित। 5. नेत्रों में करुणा छाई थी।

इक सिख बोल्यो जोरि कर गुर जी सुनि लीजै ।
प्रिथीआ आदिक अपर वहु तिन करम लखीजै ।
आप बनावति शबद को निज बुधि अनुसारी ।
श्री नानक को नाम शुभ धरि देति मझारी ॥ ७ ॥

कोई सकै पछान करि को सकहि न जानी ।
अलप मती आशै गुरु किम सकहिं बखानी[1] ।
रल जैहैं इम सकल ही गुरमति बिगरै है ।
को किस बिधि को किसू बिधिबाणी उचरै है ॥ ८ ॥
करहु जतन अस मिलै नहिं सुंदर गुरबानी ।
सुणि इक सिख बोल्यो बहुर दिहु संसै हानी[2] ।
बाणी कच्ची गुरु बिना गुर अमर बखानी ।
किम समझहिं सिख तिसी को सुनि पठहिं सुजानी ॥ ९ ॥

सिख गुरदास जि आदि हैं जिन गिरा बनाई ।
सतिगुर को जसु जिस बिखै गुरमती द्रिड़ाई ।
परमेशुर संबंधनी अरु जे अवतारा ।
करी इनहु की[3] जिन कथा संग्राम अखारा[4] ॥ १० ॥
पढ़हिं सुनहिं सिख कै नहीं दीजहि उपदेशा ।
बोले क्रिपा निधान गुर पिखि कटति कलेशा ।
गुरबाणी सरबोतमा नितप्रति अभ्यासै ।
अरथ विचारै द्रिढ़ै मन अग्यानहिं ग्रासै[5] ॥ ११ ॥
अंम्रित वेला[6] उठि पठहि करि कंठ घनेरे ।
महां महातम प्रापती मन प्रेम बडेरे ।
बाणी अपर कवीन की मध्यम सो जानो ।
अवतारनि प्रभु को कथन गुण आदिक ग्यानो ॥ १२ ॥
गुरबाणी सों मत मिलहि कै जसु गुरकेरा ।
पठहि सुनहि सो भी सुखद सिमरहि सभि बेरा ।
वाणी अपर अनेक हैं बहु भांति कहाणी ।
सतिगुर मत ते वाहरी गण अवगुण साणी ॥ १३ ॥

---

1. अल्प बुद्धि के लोग गुरु के आशय को कैसे समझ सकते हैं ? 2. संशय का अन्त करें । 3. इन (अवतारों) की । 4. युद्धों और अखाड़ों की कथा । 5. अज्ञान को ग्रस लेती है । 6. पौ फटने पर ।

सनहु न पठहु न प्रेम करि अवगती पुचावै ।
परचा करहु सु छेम को जो दुख बिनसावै ।
जो बाणी गुरदास की गुरमहिमा भारी ।
सिक्खी प्रापति पठे ते इम लेहु ब्रिचारी ।। १४ ।।

इम कहि लगे बिचारने जग की कल्याना ।
पिखी भविक्खत बारता हम हुइं दस थाना[1] ।
पाछे सिक्खी किम रहै किह टेकैं माथा ।
शबद निराले किम रहैं मिलहिं न किह साथा ।। १५ ।।

इम बिचार बोले गुरू तट नदी बिपासा[2] ।
नगरी गोइंदवाल हैं श्री सतिगुर बासा !
तिस महिं मोहन अबि बसहि बड मसत सुभाऊ !
बाणी चहु पतिशाह की कीनसि इक थाऊ ।। १६ ।।

बडो पुत्र गुर अमर को किस कान न ठाने ।
सकल शबद तिस पासि ते को किस बिधि आनै ।
को उपाइ करि पाइं हम सगरी गुरबाणी ।
बीड़ करहिं पुन एक थल हित जग कल्याणी ।। १७ ।।

सभाबीच बैठ्यो हुत भाई गुरदासू ।
सुनति कह्यो कर जोड़ करि हौं पहुंचौं पासू ।
पोथी सगरी आनिहौं आइसु निज दीजै ।
मोहन मिलि औ मोहरी मोकहु समझीजै ।। १८ ।।

श्री अरजन सुनि बाक को उर गरबति जाना ।
बिना नाम इसके लिए 'मैं ल्याउं' बखाना ।
'जाहु' कह्यो तिस काल महिं गुर रिदै बिचारी ।
बाणी हाथ न आइ है हुइ निरहंकारी ।। १९ ।।

तबि भाई हुइ त्यार को मारग सा लीना ।
दोइ द्योस गमन्यो गयो दक्खण मुख कीना ।
पहुंच्यो गोइंदवाल तबि तहिं पिखी सु बापी ।
मज्जन करि कै सिमरि गुर पिखी निरमल आपी[3] ।। २० ।।

---

1. भविष्य को साक्षात् कर देखा कि हम तो दस स्थान (पातशाहियाँ) होंगे ।
2. ब्यास नदी । 3. निर्मल जल वाली ।

पुनहु चुबारे चल गयो जहिं भिरे किवारा।
लगि समाधि आसन करे नहिं देहि संभारा।
जाम दिवस के रहे ते पहुंच्यो तहिं भाई।
बहु प्रकार की बेनती करि ऊच सुनाई ॥ २१ ॥

सुधा सरोवर नगर ते मैं चलि करि आयो।
श्री अरजन किस काज को तुम निकट पठायो।
दरशन मोकहु दीजीए उघराइ किवारो[1]।
भूखनि कुल श्री अमर के[2] गुन ग्यान उदारो ॥ २२ ॥

गुर नदन वंदन उचित कंदन दुख दोषा।
दरशन ते अघ कटति हैं सभि दास भरोसा।
लखि हसतामल[3] आतमा द्रिड़ ग्यान सदीवा।
रहै जोग आरूढ़ ब्रिति इक रस नित थीवा ॥ २३ ॥

दरशन दिहु अरजिनि सुनहु श्री अरजन कामू।
अरजन जसु बिसत्रित्त जो गुन गन को धामू।
इस प्रकार सभि जामनी बिनती बहु ठानी।
नंदन श्री गुर अमर को नहिं बोल्यो बानी ॥ २४ ॥

भई भोर लखि और ने भाई समझायो।
इह मन मसत सदीव हैं नहिं बुलति बुलायो।
मरज़ी अपनी करति हैं नहिं गरज़ी[4] काहू।
अरज़ी सुनहिं न कहे ते हरि जी मन मांहू[5] ॥ २५ ॥

दर खुलावने हेतु को बहु करे उपाऊ।
पचि हार्यो गुरदास तबि बस चल्यो न काऊ।
उर उदास बहु होइ कै ब्रीडा[6] उपजाई।
कछु न काज भा मैं अयो अबि क्या मुख जाई[7] ॥ २६ ॥

सुधा सरोवर मग पर्यो पहुंचयो पुन आई।
श्री अरजन राजहिं जहां निज ग्रीव निवाई।
कही जोर करि बारता मैं करे उपाऊ।
दर किवार खोले नहीं, बस चल्यो न काऊ ॥ २७ ॥

1. द्वार खोल कर। 2. श्री अमर दास-कुल के आभूषण। 3. हाथ में रखे आँवले के समान अर्थात् साक्षात् उपलब्ध। 4. स्वार्थी। 5. कहने पर सुनते नहीं हैं, मन में प्रभु को बसाए रहते हैं। 6. लज्जा। 7. क्या मुँह लेकर जाऊँ।

रह्यो पुकारति सभि निसा कुछ बाक न बोला ।
लियो आपको नाम भी दर तऊ न खोला ।
अमर अंस जे अपर[1] थे तिन मुझ समुझायो ।
मसत रहैं इह तां सदा कहि मोहि हटायो ।। २८ ।।

तबि साहिब बुड्ढे सुन्यो कारज नहिं होवा
को अबि गमनहि पास तिस नहिं दूसर जोवा ।
आप जाइं श्री गुर किधौं तबि काज बनै है ।
इम बिचार उर, सभा महिं निज अरज़ भनै हैं ।। २९ ।।

मैं गमनौ भनीए हुकम श्री गुर मुसकाए ।
भली बात, तुम जाहु जे कारज बनि जाए ।
सुनि श्री सतिगुर बाक को बुडढा गमनायो ।
सने सने[2] मारग चल्यो तिस पुरि महिं आयो ।। ३० ।।

करि शनान जल बावली हरख्यो मन मांही ।
गयो चुबारे को बहुर मोहन के पाही ।
भिरे[3] कपाट बिलोक कै पुन ऊच उचारा ।
गुरू अमर के सुत बड़े ! दिहु दरस उदारा ।। ३१ ।।

श्री अरजन भेज्यो मुझे बुड्ढा मम नामू ।
क्रिपा करहु सुनि लीजीए कीजे पुन कामू ।
रह्यो पुकार न सुन्यो किछु न किवार उघार्यो ।
नहिं बोल्यो किस भांति करि भाई पचि हार्यो ।। ३२ ।।

कर सों दुहूं कपाट को खरकावनि कीनो ।
जोर लाइ जोहन[4] करे बहु द्रिढ करि दीनो ।
जतन रह्यो करि खुले नहिं, अंतर नहिं बोला ।
बुड्ढा रिदै बिचारतो किम ले दर खोला ।। ३३ ।।

बल ते चूथी[5] खैंच के बहु बार हलाई ।
इत उत करि कै ज़ोर ते बाहर निकसाई ।
इंटां कछुक उखेरके लिए खोलि किवारा ।
अंतर जाइ प्रवेसिओ बिन शंक उदारा ।। ३४ ।।

---

1. अन्य (अमरदास जी के परिवार के अन्य लोग) । 2. शनै: शनै: । 3. बंद । 4. बल लगाकर देखे । 5. द्वार का वह भाग जो दीवार में गड़ा होता है ।

श्री मोहन बैठे जहां पदमासन धारी।
लगी समाधि अखंड रसु नहिं देहि संभारी।
काषट केर समान द्रिढ़ रिजु[1] ह्वै करि वैसा।
अचल अंग सगरे करे थिति काषट जैसा ॥ ३५ ॥

लघु सिर पर शुभ केश हैं चहुं दिशनि बखेरे।
सदा रहै जो नगन ही मन मसत वडेरे।
बुड्ढा विसमय हुइ रह्यो अविलोकनि कीना।
रह्यो हिलाइ सरीर को आसन आसीन।[2] ॥ ३६ ॥

लगी समाधि अगाधि ही नहिं पौन उतारा[3]।
इतउत रह्यो हिलाइ बहु नहिं भई संभारा।
शबद सुन्यो जबि अपर ने दर खोलनि फेरा।
सुधि दीनसि तिन मोहरी, आयो तिस वेरा ॥ ३७ ॥

नमो करति बुड्ढा पिख्यो पद गहति हिलावै।
दौरति आए मोहरी कहि बाक सुनावैं।
क्यों छेरति हो इनहु को नित मसत सभाऊ।
बडलघु नहीं बिचारतो नहिं देखहिं काऊ ॥ ३८ ॥

स्राप आदि निषठुर भनहि हेरति रिस धारै[4]।
कर न सपरसहु अंग इन[5], नहिं नयन उधारै।
निज सुभाउ महिं मसत रहि किह संग न बोलै।
बैठ्यो अंतरि इम रहै कबि कबि दर खोलै ॥ ३९ ॥

जुग हाथनि भोजन करै जबि तजहि समाधा।
नांहि त बैठे इसी बिधि अनगाध अगाधा[6]।
सुनि बुड्ढे तिस दिशा को वंदन पुन कीनी।
नमो मोहरी को करी महिमा बड चीनी ॥ ४० ॥

गुरबाणी हाथ न लगहि उर बिखै बिचारा।
चल्यो सुधासर को बहुर गुर के दरबारा।
श्री अरजन सों मिल्यो तबि पद वंदन ठानी।
कहीं बारता सकल ही पाइ न गुरबानी ॥ ४१ ॥

नहिं समाधि तिसकी खुलहि जाचहि किस पासी।
को देवहि सभि पोथीआं किस करहि हुलासी।
तोरि किवार प्रवेशिओ बहु भांति हिलायो।
ध्यान खुल्यो नहिं तिसी कहु मैं हटि करि आयो ॥ ४२ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'बुड्ढे को पोथीआं लैण भेजण अरु गोइंदवाल आगवन प्रसंग बरननं नाम तेतीसमो अंशु ॥ ३३ ॥

---

1. सीधा। 2. आसन पर बैठे हुए को। 3. श्वास नीचे नहीं लाते। 4. देखते ही क्रोध करते हैं, भीषण शाप देते हैं। 5. इनके अंगों को हाथ से न छुओ। 6. अगाध परमेश्वर में लीन।

अंशु ३४

मोहन पोथीआं देनि

दोहरा

सुनि बुड्ढे के बचन को मिलहि न खुलहि धिआन ।
तिस पर बस कैसे चलहि कह्यो सुनहिं नहिं कान ।।१।।

अड़िल

दर के भेरि किवार समाधि लगावतो ।
नित ही मसत सुभाव न कोइ बुलावतो ।
रहैं दूर लहि त्रास समीप न जाति को ।
ह्वै क्रोधति उचरै स्राप, सु चहति इकांत को ।।२।।
हमरे पित के साथ रिसावति ही रह्यो ।
गुरता प्रापति नांहि द्वैष याते चह्यो ।
श्री गुर तिन के पिता बिरध तन बय महां ।
हो कह्यो न मान्यो बाक प्रेम ते बहु कहा ।।३।।
इन कारण ते दुलभ शबद सभि गुरनि के ।
श्री अरजन चितवंत काज निज पुरन के[1] ।
आप जाइ चलि पास सू कीरति को कहैं ।
हो सुने जि होइ प्रसंन पोथीआं सभि लहैं ।।४।।
बिन हमरे तहिं गए हाथ नहिं आवई ।
अपर न किसहूं पास जि तहां लिखावई ।
उचरहिं सुजसु बिसाल प्रसंन जि होवई ।
हो सादर देहिं बुलाइ क्रोध उर खोवई ।।५।।
बडिअनि इहै सुभाव सरलता जानि कै ।
सुजसु सुनति रिस हानि[2], कह्यो लें मानि कै ।
धरैं सु उर बिसवास काज हुइ जावई ।
हो याते चलिबो बनहि न संसै आवई ।६।।

1. अपने कार्य को पूरा करने के लिए । 2. क्रोध त्याग कर ।

श्री गुर अरजन नाथ बिसाल बिचार कै ।
करिबो बनहिं जरूर आलसो टालि कै[1] ।
सभि जग पर उपकार बीड़ श्री ग्रिथ की ।
हो बिदतहि कलि महिं अधिक रीति शुभ पंथ की ॥७॥
जियत जीवका बनहि सु लाखहुं नरन की[2] ।
सुनि करि पठहिं कमाहिं प्रीत प्रभु चरन की ।
अंत मुकति को लेहिं न संसे होइ है ।
हो राव रंक उच नीच जपावहि कोइ है ॥८॥
इम बिचार करि गुरू सु बाक बखानिओ ।
त्यारी हमरी करहु प्रात प्रसथानिओ ।
जानि लई सभिहूंनि सु निसा बिताइकै ।
हो प्रात कीनि इशनान सुधासर जाइ कै ॥९॥
सभि गुरु आदि मनाइ अरूढे पालकी[3] ।
जिन की क्रिपा सु द्रिषटि पीर नहिं काल की ।
सिक्ख संग समुदाइ दास शोभति चले ।
हो मनहु चंद्रमा साथ तारका गन भले ॥१०॥
सने सने चलि आइ सु गोइंदवाल को ।
जहां बिपासा नदी प्रवाहु बिसाल को ।
बापी मज्जन कीनि ध्यान सतिगुर धरे ।
हो तिस छिन श्री गुर अमर आनि आगै खरे ॥११॥
श्री अरजन अविलोकि चरन अरबिंद को ।
बंदन ठानि सप्रेम अनंद विलंद को ।
गद गद गिरा रुमंच विलोचन जल भरे[4] ।
हो बिनती बहुर बखान नंम्र जुति हुइ खरे ॥१२॥
सिर पर धरि करि हाथ हरख उर धारि कै ।
श्री अरजन सो भन्यो काज · लिहू सारिकै ।
कीरति मोहन करहु पोथीआं लीजीए ।
हो स्रेषट उद्दम अहै बीड़ सभि कीजिए ॥१३॥

---

1. आलस्य छोड़ कर इसे करना ज़रूरी है । 2. (गुरुवाणी) लाखों जनों के जीवन का आधार बनेगी । 3. पालकी में चढ़े । 4. रोमाँच हो आया, वाणी गद् गद् हुई और नेत्रों में जल भर आया ।

रहो नंम्रता संग जि मोहन कुछ कहै।
सहि करि बाक कठोर लेहु जो चित चहै।
कहि निषठुर पछुताइ नंम्र हुइ जाइ है[1]।
हो मानहि तुमरो कह्यो, न बहूर हटाइ है ॥१४॥
इम कहि श्री गुर अमर सु अन्तर-ध्यानिये।
श्री अरजन सुनि कान अनन्द महानिये।
डेरा दीनि उतार सकल इक थान मैं।
हो गमने पुरि में आप तंबूरा पान मैं[2] ॥१५॥
गुरसुत मोहन जहां चुबारे मैं रहै।
तिस नीचे जो गरी[3] जांइ तिह ठां लहै[4]।
भूतल बैठे आपि सिक्ख तबि देखि कै।
हो दौरे आसन लेनि सू बिसम ब्रिसेख कै ॥१६॥
सफैं गलीचे आदि जु ल्याइ बिछावने।
म्रदुल बाक कहि सभिनि करे सु हटावने[5]।
तंबूरा सुर ठानि लगे पुनि गावने।
हो गौड़ी राग अलाप मधुर सुर भावने[6] ॥१७॥

दोहा

शबद बनावति जाति हैं गावति गौड़ी राग।
कबि ऊची धुनि होति है कबि धुनि सहिजे लागि ॥१८॥

॥श्री मुख वाक। गउड़ी महला ५॥

मोहन तेरे ऊचे मन्दर महल अपारा ॥
मोहन तेरे मोहनि दुआर जीउ संत धरमसाला ॥
धरमसाल अपार दैआर[7] ठाकुर सदा कीरतनु गावहे ॥
जह साध संत इकत्र होवहि तहा तुझहि धिआवहे ॥
करि दइआ मइआ दइआल सुआमी होहु दीन क्रिपारा ॥
बिनवंति नानक दरस पिआसे मिलि दरसन सुखु सारा ॥१॥

अड़िल

मोहन धुनि सुनि कान जानि बिरतांत को।
चौवारे के बिखे जु ताकी बातको[8]।

1. कठोर बचन कसकर वह (मोहन) पछताएगा और फिर नम्र हो जायेगा। 2. हाथ में। 3. गली। 4. स्थान देखकर। 5. कोमल वचनों से सबको हटा दिया। 6. मीठी सुर में। 7. दयालु। 8. हवा के लिए रखी खिड़की।

सो खोली ततकाल गरी दिसि मुख कर्यो ।
हो श्री अरजन दिशि देखि बाक को उचर्यो ।।१९।।
प्रथम हमारी वसतु लई पित पास ते ।।
कुल भल्ल्यन की हुती गुरूता जास ते[1] ।
लीनसि सोढी सेव न हम ढिग सो रही ।
हो हुते तीन तुम भ्रात न समता मन लही ।।२०।।
पिता गए वैकुंठ बिरोध उठाइओ ।
पाटक[2] घरि महिं पाइ जु कपट कमाइओ ।
भ्राता हुतो बिसाल निकास्यो धाम ते ।
हो बैठ्यो गुर बनि आप न लीनसि शामते[3] ।।२१।।
लाज न धारिहू आप अबै चलि आइओ ।
सभि गुरूअनि के शबद लैनि हित धाइओ ।
अपर जतन करि रह्यो न बस कुछ चालिओ ।
हो भूतल बैठि गलीनि पाखंड बिसालिओ ।।२२।।
त्रिगुन बिहीनो लाज निशंक समाइआ[4] ।
जहिं कहिं ढीठ करंम करे न श्रमाइआ[5] ।
भेउ न जानहिं तोहि ठगति है जगत को ।
हो सदा दिखाइ अधीन अपनपौ भगति कौ ।।२३।।
निन्दा उसतति व्याज[6] बचन मोहन कहै ।
गुर अरजन ही जानि अपर नहिं किस लहै ।
सुनति तंबूरा हाथ बहुर गावनि कर्यो ।
हो जिस मैं कीरति दीह श्रवनि मैं रव पर्यो ।।२४।।

।।श्री मुखवाक।।

मोहन तेरे बचन अनूप चाल निराली ।।
मोहन तूं मानहि एकु जी अवर सभ राली ।।
मानहि त एकु अलेखु ठाकुर जिनहि सभ कल धारीआ ।।
तुधु बचनि गुर कै वसि कीआ आदि पुरखु बनवारीआ ।।
तूं आपि चलिआ अपि रहिआ आपि सभ कल धारीआ ।।
बिनवंति नानक पैज राखहु सभ सेवक सरन तुमारीआ ।।२।।

---

1. जिससे भल्ला कुल का गौरव था । 2. फूट 3. शान्ति से । 4. माया सहित । 5. शर्म नहीं करते । 6. व्याज स्तुति अर्थात् ऐसे वचन जो प्रत्यक्ष में निन्दा के हों और लाक्षणिक रूप से स्तुति का आशय रखते हों ।

चौपई

इम सुनि करि जसु आपन केरा ।
भयो प्रसनं क्रिपाल घनेरा ।
मन महिं लागि विचारन मोहन ।
चतुर गुरू मूरति इह सोहन ।।२५।।
क्रोध ईरखा आद बिकारा ।
इन महिं को नहिं परै निहारा ।
करे शत्रुता सो पछुतावहि ।
सेवहि प्रीति सकल सुख पावहि ।।२६।।
कटक बाक सुनि कै अबि मेरे ।
रहे अछोभ[1] सिंधु सम हेरे ।
शांति रिदा समता मुझ साथ ।
गाइ शबद श्री अरजन नाथ ।।२७।।
श्री गुर अमर पिता के बैन ।
कीनि बिगार जि माने मै न[2] ।
अबि नहिं उचित बिगारनि बाती ।
करों सुधारनि हुइ सुख शांति ।।२८।।
जग महिं निंदा पूरब लई ।
अबि सुधरैं गुरबाणी दई ।
इम बिचार करले करि पोथी ।
मति तजि दीनि प्रेम ते थोथी[3] ।।२९।
निज चौबारे बाहर आयो ।
श्री अरजन को तबि दरसायो ।
चतर गुरू की जोति क्रिपाला ।
इन मझार सो बसहि बिसाला ।।३०।।
देखि सरूप सु होइ प्रसंन ।
कह्यो कि श्री अरजन तुन धंन ।
सतिगुर देख्यो मोहन आयो ।
पुन तीजो पद शबद अलायो ।।३१।।

---

1. अक्षोभ । 2. मैंने गुरु पिता के वचन न मानकर बिगाड़ किया था ।
3. प्रेम-हीन बुद्धि का त्याग कर दिया ।

।।श्री मुख वाक।।

मोहन तुध सत-संगति धिआवै दरस धिआना ।
मोहन जमु नेड़ि न आवे तुधु जपहि निदाना ।।
जम कालु तिन कउ लगै नाही जो इक मनि धिआवहे ।
मनि वचनि करमि जि तुधु अर धहि से सभै फल पावहे ।।
मूल भूत मुड जि मुगध होते सि देखि दरसु सु गिआना ।
बिनवंति नानक रजु निहचलु पूरन पुरख भगवाना ।।३१।।

दोहरा

सुनति गाइबो प्रेम समेता ।
तालनि अरु माधुरय निकेता ।
गावति रुक्यो कंठ जल नैना ।
भए प्रेम ते गदगद बैना ।।३२।।
मोहन देखि दशा इस भांती ।
भगनी सुत[1] ते लहि सुख छाती ।
अति प्रसंन मोहन मन भइऊ ।
शवद ब्रिंद आगे धरि दइऊ ।।३३।।
पद अरविंदन पर सिर धर्यो ।
नहीं उठावनी को पुन कर्यो ।
अपन क्रूरता चहि बखशावन ।
आगै वाकै कीनि अभावनि[2] ।।३४।।
श्री अरजन अविलोकनि कीना ।
निरहंकार सु नंम्रि अधीना ।
कह्यो बाक अनुचित नहिं करीअहि ।
बड सथान हो आप बिचरीअहि[3] ।।३५।।
हमरी जननी के बड भ्राता ।
लागति हो मातुल सुखदाता ।
पिता तुमारो गुरू गंभीर ।
निज सेवक की काटति पीर ।।३६।।
तिन के नंदन तुम बडभागे ।
जोग बिराम ग्यान अनुरागे ।

1. बहिन के पुत्र अर्थात् गुरु अर्जुन । 2. सामने अथवा पीठ-पीछे किया अनादर ।
3. विचार कीजिए ।

नमो उचित यांते हम जाने ।
विषय बाशना मन ते हाने ॥३७॥
जे मातुल सनबंध बिचारें ।
बंदन ठानहिं उचित हमारे ।
यांते अनुचित नहीं करीजहि ।
पद पर हमरी बंदन लीजहि ॥३८॥
सुनि गुर नंदन मोहन काना ।
धरे नंम्रता बाक बखाना ।
श्री अरजन भगनी सुत मेरे ।
परसौं चरन कमल अबि तेरे ॥३९॥
भूल परी मुझ ते वहु पहिले ।
बखशहु अबि कीजहि नित सहिले[1] ।
समां उडीकति[2] सो अबि आवा ।
क्रिपा करहू दुख बन तुम दावा[3] ॥४०॥

दोहरा

इस प्रकार मोहन जबहि कही गिरा मन नीव ।
सभिनि सुनन हित बूझिओ श्री अरजन सुख सीव[4] ॥४१॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'मोहन पोथीआं देनि' प्रसंग बरननं नाम चतरत्रिंसती अंशु ॥३४॥

---

1. सुखी । 2. जिस समय की प्रतीक्षा थी । 3. दुःख रूपी वन के लिए तुम दावाग्नि समान हो । 4. सुख की सीमा ।

अंशु ३५
पोथिआं लैनि प्रसंग

दोहरा

श्री मातुल तुम आप हो बखशन जोग विसाल ।
को औगुन तुम बिखै रहि पूरन गुन सभि काल ॥१॥

॥ चौपई ॥

श्री अरजन ते सुनि इम कह्यो ।
प्रथम प्रसंग सरब तुम लह्यो ।
तऊ सुनहु सभि तुमै सुनावौं ।
पुनहि ढीठता[1] निज बखशावौं ॥२॥
महां पुरखु पूरन गुन ग्यानी ।
हमरे पिता भए सुखदानी ।
श्री गुर रामदास बडभागे ।
परम प्रेम ते सेवा लागे ॥३॥
आपा नहीं जनावनि कीनसि ।
निरहंकार गरीबी लीनसि ।
सभि गुन पूरन श्री गुर जाने ।
सभि औगुन अपने महिं माने ॥४॥
जे दिन को कहिं आधी रात ।
तिउं मानहिं भाखी सति बात ।
निस दिन सेवा महुं अनुरागे ।
सरब भांति जग कारज त्यागे ॥५॥
अपनो पित हम जानति रहे ।
ईशुर आप, भेव नहिं लहे ।

1. ढिठाई, अनादर ।

जे कुछ जानति भे बडिआई ।
तऊ पिता लखि हम सुखदाई ॥६॥
सेव न कीनसि, कह्यो न मान्यो ।
हमरो पिता गरब इम ठान्यो ।
श्री गुर रामदास परयांते ।
भए प्रसंन रिदै हरखाते ॥७॥
जबि गुरता देवनि तिन लागे ।
सभि ते अधिक जानि अनुरागे ।
प्रिथम हकारनि कीनसि मोही ।
कहि इन पग लगि, सभि सुख होही ॥८॥
गुरता उचित जानि हम दीनसि ।
अजर जरन इन उर लखि लीनसि ।
अधिक सभिनि ते इन बडिआई ।
पुरहि कामना लगहि जु पाई[1] ॥९॥
मैं गरबति ने एक न मानी ।
हम पित के सुत यौं करि जानी ।
गयो समीप न लाग्यो पाई ।
हम घर गुरता लखि बडिआई ॥१०॥
सोढी रहति अलंब हमारे ।
लघु अपने ते तांहि बिचारे ।
पुनहि मोहरी लघु सुत जोऊ ।
पित ने कर्यो हकारनि सोऊ ॥११॥
कह्योसु रामदास के चरनी ।
बंदन करहु परहु इन शरनीं ।
सुनि कै पित आइसु नहिं फेरी[2] ।
धर्यो चरन पर सिर तिस बेरी ॥१२॥
पिख्यो पुत्र लघु पाइन लागा ।
हुइ प्रसंन कहि भा वडभागा ।
रिद्धि सिद्धि नव निद्धि अनंद ।
पुत्र मोहरी पाइं बिलंद[3] ॥१३॥

---

1. यदि चरणों में लगोगे, कामना पूर्ण होगी । 2. आज्ञा नहीं टाली । 3. पुत्र मोहरी, (तू) रिद्धि, सिद्धि तथा नव-निधियों को पाएगा ।

राखि लई भल्लयन कुल केरी ।
संतति तेरी फलहि घनेरी ।
सभि सुख पावहि जावद जीवहिं ।
अंत हमारे निकटी थीवहिं ॥१४॥

इम वर दे करि कर्यो निहाल ।
पाइ सकल सुख पित बच नाल ।
राम दास को दे करि टीका ।
कर्यो पधान आपनो नीका ॥१५॥

श्री गुर राम दास तिन पाछे ।
बैठि सुहावति गादी आछे ।
सरब रीति गुरता बिदताई ।
रीझ खीझ होहि न निफलाई[1] ॥१६॥

चहुं दिशि ते आवन लगि पूजा ।
बढ्यो प्रताप न समसर दूजा ।
करे हजारहुं दास निहालू ।
दुषटनि दीनसि कषट करालू ॥१७॥

देखि तिनहु चित ब्यापी चिंता ।
हम छूछे इहि भे भगवंता[2] ।
भयो दीन मैं गमन्यो तहिंवा ।
पित बैठक चवबारो जहिंवा ॥१८॥

भाखी हाथ जोरि तब अरज़ी ।
हो पित ! मैं न चल्यो तुम मरजी ।
तपत रहौं मैं दिन अरुराती ।
जिम मलीह[3] नित सुलगति छाती ॥१९॥

लखे न सरब कला समरत्थ ।
करहु निहाल धरहु सिर हत्थ ।
राई मेरु मेरु को राई ।
ततछिन तुम करि देहु गुसाईं ॥२०॥

---

1. उनकी रीझ-खीझ (वर और अभिशाप) कभी निष्फल न थी । 2. हम खाली और ये भाग्यशाली हो गए । 3. सूखे उपलों का चूर्ण ।

भुजंग छन्द

गुरु रूप सारे जगं बीच ब्यापे।
निजं सिक्ख्य दासानि के ताप खापे।
प्रभू, ईश, ग्यानं, गुनंकेर धामं।
निरीहं[1], न्रिबाणं[2], सदा हीन कामं[3] ॥२१॥
दयो नाम दानं महां मूढ तारे।
इसी लोक पूजा प्रलोकं उबारे।
सदा दुन्द हीना ग्रिही ह्वै उदासी।
करो जोग भोगं, अलेपं, अनाशी ॥२२॥
जनं दीनबंधू सदा सिक्ख्य प्यारे।
मुकंदं ! नमो पाद कंजं तुमारे।
दया सिंधु ! दासानि होवै सहाई।
रिदै की लखैं, कामना दें पुजाई ॥२३॥
अनंदं कि कंदं, निकंदं बिकारा।
महां मोह कुंभी[4] बली शेर भारा[5]।
अहंकार नागं बिहंगे सु तांहीं।
महां लोभ वंन्ही[6] भए नीर वाही ॥२४॥
गुरु सेव ठानै प्रसंनं करे हैं।
निजं जोति थापावतारं[7] धरे है।
भए मौर बेदीनि[8] दंभं बिनाशी।
वही जोति जागी इहां तेज रासी ॥२५॥
प्रसीदो प्रभो ! नाम की लाज राखो।
छिमो दोष मेरे निजं दास लाखो[9]।
नमो शांति चीतं, नमो ग्यान नीतं।
नमो दास मीतं, नमो सुभ्भ्र गीतं ॥२६॥
बिनती सुनीजै क्रिपा आप कीजै।
भई भूल मो ते रिदे न धरीजै।
बिगारै सदा, काज पुत्रानि केरा।
सुधारै पिता, पै दुलारै घनेरा ॥२७॥

---

1. इच्छा रहित। 2. मुक्त। 3. कामना विहीन। 4. मोह रूपी हस्ति। 5. भारी शेर के समान हो। 6. अग्नि। 7. अवतार स्थापित कर। 8. बेदी जाति में शिरमौर हो। 9. जानों।

लखै आपन, नीक पंथै चलावै।
सदा जै, सदा जै सदा तोहि गावै।
नमो लेहु मेरी, गुरू रूप सोहे।
समानं न आनं अनंदं संदोहे[1] ॥२८॥

दोहरा

इम अषटक जबि मैं कह्यो भए प्रसन बिसाल।
बीच चुबारे ते शबद निकसति भा तिस काल ॥२९॥

चौपई

सुनो पुत्र में भयो प्रसंने।
कहौं बाक लीजै मनमंने।
सभि सतिगुरनि शबद जे रासी।
सो संभारि राखि निज पासी ॥३०॥
रामदास को नंदन ग्यानी॥
चहै बीड़ करिबों एक बानी॥
गुरबानी को खोजहि सोई॥
तुझ बिन अपर थान नहिं होई ॥३१॥
अपर लेनि आवहिं नहिं दीजहि।
बहुर सु मिलहिं प्रेम को कीजहि।
रामदास को नमो न धारी।
बनि तिन सुत के नंम्र अगारी ॥३२॥
चरन परहु ह्वैं निरहंकारा।
सो तबि रक्ख्यक बनहि तुमारा।
अपर न गिनती गिनीअहि कोई।
सतिगुर रूप जानीअहि सोई ॥३३॥
रह्यो प्रतीखनि करति बिसाला।
प्रापति भयो आनि सो काला।
कह्यौ कठोर हेतु पतीआवनि[2]।
लखि लीन तुम सो मन भावन[3] ॥३४॥
चरन कमल की शरन परन दिहु।
पोथी सांभति रह्यो इसहि लिहु।

---

1. आनन्द सहित। 2. परीक्षार्थ कठोर वचन कहे। 3. अब देख लिया कि तुम्हीं वे 'मन-भावन' हो।

परी भूल बखशावनि करिहौं ।
तपत रिदै चिर की अबि हरिहौं[1] ॥३५॥
श्री अरजन सुनि करि सभि कारन ।
मातुल साथहि कीनि उचारन ।
हम गरज़ी कहिनोचित अरज़ी ।
अग्ग्र करो जिम ह्वै तुम मरज़ी ॥३६॥
हम हैं अलप सरब ही रीती ।
तुम बिसाल चित धारति प्रीती ।
रावरि बाक न जाइ हटायो ।
हम बालिक, करि जिम मन भायो ॥३७॥
सुनि मोहन परमुदति बिसाला ।
गुर के चरन पर्यो तिस काला ।
हाथ जोरि नंम्री अति भइऊ ।
बखशहु गुनहि[2] भूल जो गइऊ ॥३८॥
नंम्र भयो मातुल को हेरा ।
श्री अरजन बर दे तिस बेरा ।
चतरथ पद को पूरन करिओ ।
मोहन खेद सरब परहरिओ ॥३९॥

॥ श्री मुखवाक ॥

मोहन तूं सुफलु फलिआ सणु परवारे ।
मोहन पुत्र मीत भाई कुटंब सभितारे ।
तारिआ जहानु लहिआ अभिमानु जिनी दरसनु पाइआ ।
जिनी तुध नो धंनु कहिआ तिन जमु नेड़ि न आइआ ।
बेअंत गुण तेरे कथे न जाही सतिगुर पुरख मरारे ।
बिनवंत नानक टेक राखी जितु लगि तरिआ संसारे ॥४॥२॥

॥ चौपई ॥

आइ प्रथम भाई गुरदासू ।
साहिब बुड्ढा तुमरे पासू ।
तिन को मान हर्यो नहिं दीनि ।
सो पोथी सभि हम ने लीनि ॥४०॥

---

1. हृदय की देर की तप्त स्थिति को अब शान्त करो । 2. (मेरा) अपराध क्षमा हो ।

जिस लगि जगत सिमरि सतिनामू ।
होइ उधार पाइ सुखधामू ।
श्री मोहन तुम धंन महाना ।
गुरबाणी कीनसि इक थाना ॥४१॥
लोक हज़ारनि पर उपकारी ।
पठहिं सुनहिं उतरहिं भव पारी ।
महां पुरख को जग महि होवन ।
पर उपकार हेतु दुख खोवनि[1] ॥४२॥
सुनि मोहन हइ सरल उचारि ।
अबि मैं आइसु चहौं तुमारी ।
होइ दास अबि संग चलै हौं ।
अपरनि सम तहिं सेव कमै हौं ॥४३॥
रहौं समीप चरन अरबिंदा ।
इम कहि बाढ्यो प्रेम बिलंदा ।
सागर सम उछर्यो उर मांही ।
पूरन चंद गुरू पखि तांही[2] ॥४४॥
गदगद गिरा नेत्र जल छावा ।
देहि रोम हरखण हुइ आवा[3] ।
लख्यो प्रेम ते बिहबल भारी ।
श्री अरजन तबि गिरा उचारी ॥४५॥
मोहन मातुल जी तुम स्याने ।
पूरन गुननि महान सु ग्याने ।
बीच चुबारे धरहु समाधि ।
साधहु दिन प्रति अगम अगाधि ॥४६॥
श्री नानक को मंत्र जपीजहि ।
उधरहु आप वंस उधरीजहि ।
हम दिशि दया करति नित रहीयहिं ।
इसही थल हमरी सुधि लहीयहि ॥४७॥
आग्या मानी मोहनि सोई ।
श्री अरजन गुर उचरी जोई ।

---

1. परोपकार द्वारा दु:ख के हेतु का नाश कर देने वाले । 2. गुरु रूपी पूर्णिमा के चन्द्र को देखकर । 3. रोमाँच हो आया ।

परकरमा चहुं दिशि फिरि दीनी ।
परम प्रेम ते बंदन कीनी ॥४८॥
अपन चुबारे पहुंच्यो जाई ।
प्रथम समान समाधि लगाई ।
बाणी मघमा[1] साथ पठंता ।
श्री नानक को मंत्र कमंता[2] ॥४९॥

दोहरा

इस प्रकार श्री सतिगुरू सबद पोथीआं लीनि ।
हरखति श्री गुरू अमर को नमो ध्यान करि कीनि ॥५०॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'पोथीआं लैनि' प्रसंग बरननं नाम पंचत्रिसती अंशु ॥३५॥

1. अन्तःकरण से । 2. मंत्र जाप करता ।

अंशु ३६
श्री अरजन पोथीआं लैनि प्रसंग

दोहरा

करि कारज अरजन गुरू परम प्रसंनता पाइ ।
कर्यो चहति बड बीड़ को सभि वानी इक थाइं[1] ॥१॥

॥ चौपई ॥

चलनि सुधासर की करि त्यारी ।
सुनी मोहरी ने सुधि सारी ।
अति प्रसंन मोहन हुई गइऊ ।
पर्यो चरन पुसतक सभि दइऊ ॥२॥
महां मसत जो किसहि न मानहि ।
सभि सों अनरस बाक बखानहि[2] ।
किम इन के होयहु अनुसारी ? ।
करी नमो पुन चरन अगारी ॥३॥
जो गुर रामदास के आगे ।
निम्यो नहीं पित बाकनि त्यागे ।
यांते गुर अरजन बडिआई ।
आदि निंम्रता कुछ लखिपाई[3] ॥४॥
जो चारहुं सतिगुर मैं जोति ।
सो गुर अरजन विखै उदोत ।
इम बीचार मोहरी आयो ।
देखि दूर ही ते हरखायो ॥५॥
जाइ प्रदछना दीनसि गुर की ।
वंदति भयो प्रीति करि उर की ।
श्री अरजन गुर ग्यान उदारे ।
क्रिपा करहु घर चलहु हमारे ॥६॥

---

1. सारी वाणी एक स्थान पर एकत्रित करके एक बड़ा ग्रंथ बनाना चाहते हैं। 2. सबके साथ कठोर वचन कहता था। 3. या तो इसने गुरु अर्जुन की नम्रता और गौरवता को परख लिया है।

जथा बिदर के गए निकेत ।
दई बडाई प्रीति समेत ।
प्रेम रिदे को देखनि करो ।
यांते दीन धाम पग धरो ।।७।।

इस प्रकार करि बहु वडिआई ।
पर्‌यो अगारी पद लपटाई ।
भयो प्रेम ते विहवल भारी ।
श्री अरजन अस दशा निहारी ।।८।।

कीनि उठावन बाक बखाना ।
हमरे मातुल अहो महाना ।
श्री गुर अमरदास के नंदन ।
जिन देखति हुइ पाप निकंदन ।।९।।

हमरी कुल सभि तिन के दास ।
जिनहुं क्रिपा ते भए प्रकाश ।
निस दिन तिन को नाम जपीजहि ।
जग गुर महिद महान लखीजहि ।।१०।।

यांते नमो उचित तुम अहो ।
मम पद गहन अनुचता लहो ।
सेवौं रज पग कमल तुमारी ।
क्रिपा करहू लखि कै अनुसारीं ।।११।।

सुनति मोहरी जुग कर जोरे ।
मोहि उचित तुम चरन निहोरे ।
पाछल जनम हुतो अक्रूर ।
तबि भी रावरि के रहदूर ।।१२।।

क्रिशन चंद तुम अंतरजामी ।
रच्छक सेवक के सद स्वामी ।
मणि[1] कारण मुझ ते भई भूल ।
कितिक काल बरत्यो प्रतिकूल ।।१३।।

---

1. पौराणिक कथा है कि अक्रूर ने एक मणि रखने में श्रीकृष्ण के साथ कुछ छल करना चाहा और उनसे दूर हटता गया। यहाँ कवि ने बाबा मोहरी को अक्रूर तथा श्री अर्जुन जी को श्रीकृष्ण की उपमा दी है।

सो अबि छिमा धारि बखशीजै ।
चलहु सदन मम इच्छ पुरीजै ।
अबि के बिछुरे होइ न मेला ।
करहु क्रिपा मुझ लेहु सकेला[1] ॥१४॥

अंत समै परलोक मझारी ।
निज समीप राखो हित धारी ।
श्री अरजन सुनि कै तिह समै ।
कह्यो अंत को मिलि हैं हमैं ॥१५॥

श्री गुर अमरदास अनुसारी ।
मान्यो वाक रह्यो हित धारी ।
तबि हूं बखशे सरब प्रकारा ।
सदा समीपी रहैं हमारा ॥१६॥

इम कहि भे प्रसंन जगनाथ ।
गमने सदन मोहरी साथ ।
मातुल की पतनी संग मिले ।
तूरन उठी हरख करि भले ॥१७॥

नमो करति को आशिख दीनि ।
पुनहि निछावर कर ते कीन ।
बसत्र बिभूखन दरब बिसाला ।
वार वार करि दे तिस काला ॥१८॥

बूझी कुशल मधुर बच संगा ।
सुख के सहत अहै शुभ गंगा ।
पुत्र तुमारो हरिगोबिंद ।
बाल अवसथा, अहै अनंद ॥१९॥

कुशली सकल अपर परवारा ।
सभि सुख साथ शरीर तुमारा ।
श्री अरजन सुनि कै सभि श्रौन ।
कह्यो क्रिपा तुमरी सुख भौन[2] ॥२०॥

तुम हो बड़े आशिखा देहू ।।
यां ते सभि सुख हमरे ग्रेहू ।

1. मिला लीजिए । 2. घर में सब सकुशल है (तुम्हारी कृपा से)

इम सुनि मातुल पतनी फेर ।
कहि करुना जुति बाक बडेर ।।२१।।
रामदास अर बीबी भानी ।
गमने जुग वैकुंठ सथानी ।
तबि ते तुम ने हमें भुलायो ।
कबहुं न कछु संदेश पठायो ।।२२।।
मिले न प्रेम धारि कबि आई[1] ।
मनहु त्याग कीनहु किस थाईं ।
इम बोलति रोदनि को ठाना ।।
सिमरि सिमरि पाछल सुख नाना ।।२३।।
सभि परवार मिल्यो तबि रह्यो ।
अबहि बिछोहा कितनक लह्यो ।
भल्ल्यन कुल[2] के भूखन पास ।
सभि इकठे रहिं एक अवास ।।२४।।
अबि अस समां मिलनि कबि होवा ।
बहु दिन महि तुम दरशन जोवा ।
मातुल पतनी रोदति हेरी ।
श्री गुर नेत्र अश्रु तबि गेरी ।।२५।।
फसे मोह नर रोदति जैसे ।
छायो नीर बिलोचन तैसे ।
दीरघ स्वास लेति बहु बारी ।
मुख पर पुलत अश्रु को बारी[3] ।।२६।।
निज पतनी अर गुर को हेरा ।
बाक मोहरी कहि तिस बेरा ।
रोदन ऐसे क्यों तुम ठाना ।
जगत मेलि नदि तरी समाना[4] ।।२७।।
मिलनि अंत महिं होति बियोगा ।
परारबध के बसि सभि लोगा ।।
प्रभु सरूप जो पिता हमारे ।
तिम श्री अरजन पिता उदारे ।।२८।।

---

1. कभी प्रेम-पूर्वक आकर मिले भी नहीं । 2. भल्ला कुल । 3. अश्रु-जल से मुख भीग गया । 4. नदी-नाव के समान ।

अपने सदन बिकुंठ सिधारे।
सोचनि जोग न सो सुख भारे।
मनमति उरझे[1] भगति बिहीने।
कबहुं न प्रभु को सिमरनि कीने ॥२९॥

सो सोचनि के जोग महाना।
धरम त्याग जिन किय अघ नाना।
नहिं सतिगुर की सेव कमाई।
सतिगुर गिरा[2] न रिदै बसाई ॥३०॥

निस दिन पची कुटंब मझारे।
कूड़ बोलि संचहिं धन भारे।
तप तीरथ जिन कीनि न कोऊ।
सोचनि जोग[3] जानीयहि सोऊ ॥३१॥

सुपनहि कवि सतिसंग न सेवा।
गुन बिहीन अफरे अहंमेवा।
रिदे दया नहिं दीनहु दाना।
से सोचनि के जोग महाना ॥३२॥

मिले कुसंग कमाइ विकारा।
रिदे सदा सतिनामु बिसारा।
तजे सु पंथ कुमारग चाला।
सो सोचनि के जोग बिसाला ॥३३।

इत्तयादिक कहि कोमल बानी।
समुझाई निज पतनि महानी।
जल प्रवाह मिलि त्रिण बिछुरै है।
तथा थूल तन की गति ऐहै ॥३४॥

परारबध को बेग सु पाइ।
मिलि बिछुरति देही इस भाइ।
सुनहु सुब्रिते[4] इम उर जानि।
रोदनि शोक करहु सभि हानि ॥३५॥

---

1. मनः प्रेरणाओं में उलझे हुए। 2. गुरु-वाणी। 3. चिन्ता करने योग्य।
4. श्रेष्ठ वृत्ति वाली।

बचन मोहरी के सम भानू ।
शोक तिमर को कीनसि हानू[1] ।
धरि धीरज समि बैठे पास ।
बहु बिधि को किय बाक बिलास ।।३६।।

नंद मोहरी को जु अनंदु ।
आइ करी बंदन कर बंदि ।
श्री गुर अरजन बहु सतिकारा ।
पास बिठाओ आनन्द धारा ।।३७।।

अति हरखति चित सभि परवारू ।
करिवावति भे त्यार अहारू ।
सादर चौंकी चारु डसाई ।
तिस पर सतिगुर दीनि बिठाई ।।३८।।

नाना रस के भोजन पाए ।
थाल बिसाल धर्‌यो अगुवाए ।
बानी मधुर मोहरी कहै ।
असन अचावति दरशन लहै[2] ।।३९।।

सकल कुटुम्ब अच्यो मिलि फेरी ।
रात्रि बिखै सुठ[3] सेज बड़ेरी ।।
सुपति हेतु श्री गुर को दई।
इम सुख सों प्राती[4] पुन भई ।।४०।।

जाइ बावली कीनि शनाना ।
पठि जपुजी श्री नानक ध्याना ।
लीनि मोहरी अपने साथ ।
गमने श्री गुर अरजन नाथ ।।४१।।

अपर लोक गन संग सिधाए ।
पास बिपासा पिखि हरखाए ।
सुन्दर है परवाह जिस केरे ।
नादति[5] खग चकवादि घनेरे ।।४२।।

---

1. मोहरी के सूर्य समान (प्रकाशवान्) वचनों से शोकान्धकार का नाश हो गया । 2. भोजन करवाते हुए दर्शन लाभ कर रहा था । 3. सुन्दर । 4. अगली प्रात: । 5. चहकते हैं ।

दुऊ देहुरे देखनि करे।
कमल कली सम सुंदर खरे।
पिखे दूर ते उज्जल ऐसे।
भादौं मास खूंब जुग जैसे[1] ॥४३॥

जननी पित अर पित निज जोऊ।
नेत्र भर्यो जल सिमरे दोऊ।
भरे प्रेम पुलकावलि होई।
गए समीप संग सभि कोई ॥४४॥

पूरब श्री गुर अमर सथानी।
बंदन कीनि जोर जुग पानी।
वहुर प्रकरमा दीनसि फिरि कै।
मसतक धूल लगावनि करि कै ॥४५॥

वैठे पुनहि कराहु मंगायो।
करि अरदास तहां वरतायो।
निकटि देखि सुन्दर को कह्यो।
हे शुभ मति तुम सभि किछ लह्यो ॥४६॥

स्री गुरु अमरदास जिस भांती।
गुरता तिलक दीनि सुख शांती।
गुरू भए जिम पिता हमारे।
सो बनाइ अबि करहु उचारे ॥४७॥

सुनि सुन्दर ने सद्द[2] बनावा।
श्री अरजन को सकल सुनावा।
हुए प्रसन सो लीनि लिखाई।
कह्यो ग्रिंथ मैं धरहिं बनाई ॥४८॥

अंत समै इस पाठ जु करिही।
अंतक पीर[3] तिनहुं की टरिही।
इम कहि तहिं ते गमने आगे।
पिख्यो देहुरा पित दुति जागे ॥४९॥

---

1. जैसे भाद्र मास में उगे दो श्वेत कुकुरमुत्ते। 2. बुलावा। बाबा सुन्दर ने इस नाम से बाणी लिखी है जोकि आदि ग्रंथ में संगृहीत है। 3. यम की पीड़ा।

नमहि करति परकरमां दीनसि ।
तहां प्रशादि ब्रतावन[1] कीनसि ।
पित को धर्‌यो ध्यान सुख पाए ।
आनंद ते लोचन जल छाए ।।५०।।

सरब रीति शुभ करकै फिरे ।
मदमंद आवति भे घरे ।
बैठि कर्‌यो संग अहारा ।
श्री गुर अरजन परम उदारा ।।५१।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'श्री अरजन पोथीआं लैनि' प्रसंग वरननं खषटत्रिंसती अंशु ।।३६।।

1. प्रसाद-वितरण ।

अंशु ३७

दातू मिलनि प्रसंग

दोहरा

निकट मोहरी आदि नर बैठे सभि सुख पाइ ।
श्री अरजन तिस छिन बिखै बोले मुख मुसकाइ ।।१।।

सवैया छंद

मातुल जी आग्या अबि दीजहि सुधा सरोवर करहिं पयान ।
कारज भयो हमारी पूरन क्रिया तुमारी ते हित ठानि ।
चुतुर गुरनि की बानी प्रापति सभि को करि हैं एक सथान ।
जिस को पठि सुनि अरथ बिचारनि रिदै बसाइ पाइं कल्यान ।।२।।
पुनि मातुल जेषट को दरशन प्रेम संग मिलिबो करि लीनि ।
बहुर क्रिपा करि मेलि आप को महां लाभ होवा मन चीनि ।
सकल कुटुम्ब अलंब हमारो[1] हरख परसपर दरशन कीनि ।
द्वै सतिगुर के पूजि देहुरे[2] मज्जन बापी आनंद दीनि ।।३।।
सुनति मोहरी जुग कर जोरे गुरता गादी पर थिति आप ।
यांते तुम सभि ते हो दीरघ वंदनीय बड़ दिपहिं प्रताप ।
इह ठां बास करो सुख पावहु हम दरसहिं गन दोखन खाप[3] ।
संगति आइ उपाइन अरपैं सभ देशनि की मिलहि कलाप[4] ।।४।।
श्री अरजन कहि मातुल जी ! सुनि हम तुमरी आइसु अनुसारि ।
इक परंतु कारन लखि लीजहि ब्रिद्ध गुरु जो पिता तुमार ।
हमरे पित को आग्या दीनसि सर की जाइ करावहु कार
अंदर हरि मंदरि रचि सुन्दर सेव संभारहु सरब प्रकार ।।५।।
ब्रिद्ध गुरु के हम सभि सेवक करि न सकहिं तिन आग्या भंग ।
पित पाछे हम टहिल संभारी करति सुधासर की हित संग ।
यांते बास उचित है तिह ठां मानि गुरू के बाक निसंग ।
इहठां उहठां भेद न कोऊ दोनहु गुरसथान इक रंग ।।६।।

---

1. हमारे सारे परिवार का सहारा है । 2. समाधियाँ । 3. दोषों और दुःखों का अन्त होगा । 4. समूह ।

आगे जिम आग्या हुइ तुमरी तिम हम करिहैं हरख उपाइ।
सुनति मोहरी लखीसु नीके जथा जोग तुम कहा बनाइ।
तद्दपि जामनि तीन बसीजहि[1]। दरसहिं, दिहु दरशन समुदाइ।
पुन प्रसथानहु, मनसुख मानहुं, ठानहुं सेव, शनानहु जाइ ॥७॥
मानि मोहरी मातुल के बच श्री अरजन पुनि कीनि निवास।
सेवा के बसि ह्वै करि बासे मिलि सभि बैठहिं धरहिं हुलास।
भगति विराग ग्यान की चरचा करहिं मधुर शुभ बाक प्रकाश।
जथा जोग उत्तर दे सभि कौ अनिक भांति के मुदित बिलास ॥८॥
तीन दिवस श्री अरजन बसि करि जथा जोग सभि को हरखाइ।
जाची बिदा नंम्रता अतिकरि मातुल जी ! अबिदेहु रजाइ[2]।
सुधा सरोवर पहुंच्यो चाहति कहे आपके रहि इह थाईं।
कहति मोहरी ज्यों निज इच्छा, बहुर मिलहु कबि देहु बताइ ॥९॥
श्री गुर कह्यो करो जबि सिमरनि तबि तुमरी आइसु अनुसार।
होहि मेल दरशन हम करि हैं सदा निहाल सु बुद्धि उदार !।
मातुल पतनी दीनि संदेसा मो दिश ते अस करहु उचार।
रामसत्ति गंगा को कहिनी, हरिगोबिन्द को दीजै प्यार ॥१०॥
सभि की कुशल बूझनी नीके हम को सिमरो[3] अपने जानि।
निज सुत को जबि ब्याहु रचावहु हमहि हकारहु, चाहि महान[4]।
आछी बात कही, करि बंदन बिदा होइ किय वहिर पयान।
श्री गुर अमर चुबारे गमने तपे जहां[5], तिस दरशन ठानि ॥११॥
कह्यो मोहरी सों इक खासा[6] हित पोथिनि के देहु मंगाइ।
मानि बाक ततकाल अनायहु[7] तिस पर पुसतक धरे बनाइ।
सिक्खयनि हरख सिकंध उठायहु धुनि संखनि की अधिक उठाइ।
तुरही लघु दुंदभि बजवाए जै जै शबद भयो चहुं धाइ ॥१२॥
पद अरबिंद नगन ही गमने श्री अरजन खासे पिछवाइ।
आदि मोहरी अपर सकल ही कहैं चढहु सिवका[8] सुख पाइ।
भन्यो गुरू इन रूप चतुर गुर इन को आदर जितो कराइ।
लोक प्रलोक अनंद तितिक लहि, बिघन बिनाशन हुई समुदाइ ॥१३॥

---

1. तो भी तीन रात और रहिए। 2. आज्ञा। 3. (अपने समझकर) हमें भी याद कर लिया करो। 4. बड़ी चाह है (कि हमें अपने पुत्र के विवाह पर बुलाना)। 5. जहां तप किया था। 6. पालकी। 7. मंगवाई। 8. पालकी।

एक कोस लगि सकल गए संगि पुन श्री अरजन थिति तिस थानु ।
चरन मोहरी के सिर धरि कै भांति भांति की विनै बखानि ।
कहि बहु वारि हटाए पुरिको पुन सभि को करिकै सनभानु ।
मोरनि करे[1], आप पग गमने संखनि अरु जै शबद बखानि ॥१४॥
मंद मंद चलि उतसव करते ग्राम खडूर पहूचे जाइ ।
श्री अंगद जी जहां देहुरा प्रेम सहत तहिं सीस निवाइ ।
चार प्रदच्छन दे प्रसाद बहु करि अरदास सभिनि बरताइ ।
ध्यान धारि करि विनै भाखि करि महां सुजसके कथ्यो वनाइ ॥१५॥
पुन करीर को दरशन कीनसि बंदति चतुर प्रदछना दीनि ।
श्री अंगद को नंदन दातू सुनि सुधि श्री गुर अरजन चीन ।
होइ अनंद बिलंद रिदे महिं आइ मिल्यो मन प्रेम नवीन ।
हित सनमान अग्र ते उठि करि मिले[2] परसपर नमता कीनि ॥१६॥
जबि दातू ने धर्यो चरन सिर निज कर पर श्री गुर ने लीनि ।
आप नमो करि पास बिठाए कह्यो वाक क्यों अनुचित कीनि ।
गुर के गुर गुर नंदन हो तुम[3] हम हैं आप दास मन चीन ।
सेवनि उचित चरन रज रावरि सदा तुमारे अहैं अधीन ॥१७॥
सुनि दातू कर जोरि कहति भा 'आपि सुनहु मेरो बिरतंत ।
हति हंकार भयो मैं जैसो अर तुमरो आगम चितवंत ।
श्री गुर अमर लीनि जबि गुरता भई ईरखा मुझ अतयंति ।
तिनकी महिमा पावक समसर शुषक त्रिणन ज्यों रिदा जरंति[4] ॥१८॥
देश बिदेशनि की बड संगति नर नारी आवहिं समुदाइ ।
अनिक उपाइन पाइन अरपहिं मन बांछति सभि ही फल पाइ ।
मो कहु दुखति देखी करि गमने, गोइंदवाल बसे पुन जाइ ।
तहिं भी अधिक भीर हुइ नित प्रति महिमा पूरन भी चहुंधाइ[5] ॥१९॥
इक खत्री मम मित्र हुतो बहु इक दिन आइ कह्यो इम बैन ।
तुमतो पुत्र कहावति गुर के कुछ रचना तुमरे ढिग है न ।
संगति आइ न अरपहि धन को, नमो न करति आइ को ऐन ।
रहे रंक सम बैठि दारिदी बिन उद्दम आलस दिन रैन ॥२०॥

---

1. पीछे लौटा दिए। 2. आगे बढ़कर। 3. आप मेरे गुरु के दादा-गुरु के सुपुत्र हो। 4. (मुझे ऐसी ईर्ष्या हुई) कि मैं मेरा शुष्क तृण समान हृदय उनकी महिमा रूपी अग्नि में जलने लगा। 5. चतुर्दिक।

किसी थान को खत्री कोऊ गुरू बन्यो निज पद पुजवाइ ।
हुतो टहिलीआ[1] तुमरे घर को अबि समाज अधिकै बिरधाइ[2] ।
भए म्रितक जीवति ही जग तुम जिनको नाम नहीं बिदताइ ।
अहो निलायक! लेति न तिस ते जो अबि बैठ्यो बहु धन पाइ ॥२१॥

सरप समान हुतो मन पूरब तिस के बाकनि छेरन कीनि[3] ।
गुरू अमर को डसनि हेतु मैं कषट देनि को उद्दम लीनि ।
बाक बान से गड़े रिदे मम दुख को धारति धीरज छीनि ।
त्रिण मन जरति क्रोध बड अगनी मनहु घ्रित तिन ऊपर दीनि ॥२२॥

होति सुशील संग लहि खोटे बिगर जाति शुभ मति बिसराइ ।
रिसते[4] गोइंदवाल पहूच्यो सभा बिखै देखे तबि जाइ ।
मनो ग्यान को भानु प्रकाशै चहुं दिशि सद गुन जन समुदाइ ।
अवगुन उडगन निसा अविद्द्या नहिं पय्यति सभि गए पलाइ ॥२३॥

इक कर जोरि बंदना करिहीं, एक उपाइन अरपहि आनि ।
इक बर जाचति बांछति चित को, इक बूझति अपनी कल्यान ।
एक शब्द को पठै विचारैं गाइं रबाबी रागनि तान ।
इक अरदास करति हैं ठांढे मंगल होति अनेक बिधान ॥२४॥

अधिक प्रताप बिलोकि जर्यो नहिं[5], जर्यो क्रोध की अगनि मझार ।
तूरन करति उलंघ्यो सभिको जाइ गुरू के लात प्रहारि ।
कही कठोर गिरा बहु बिधि की दई अनेक प्रकारनि गारि ।
निबल शरीर अवस्था ब्रिध बड सह्यो न गयो घात[6] तिस बार ॥२५॥

वक्ख्यसथल महिं[7] घात लात को लगति गिरे प्रिथवी पर जाइ ।
हाहाकार सभा महिं होवा सिक्ख्यनि गहि भुज दए बिठाइ ।
उठति भई सुधि मम पग पकरे सने सने भलि म्रिद्दुलताइ[8] ।
कहिन लगे—मम अंग निठुर बड करति कार को बैस बिताइ ॥२६॥

तुम नित बैठे म्रिदु पद पंकज पीड़ति हुए लागि मम अंग ।
करी अवग्या तुम को देखे उठ्यो न मैं आदर के संग ।
जथा जोग ताड़न किय मुझ को गुर के नंदन बुद्धि उतंग ।
आप करो फुरमावनि को अबि, सेवा ठानहुं रिदै उमंग ॥२७॥

---

1. सेवक। 2. संगति बढ़ा रहा है। 3. उसके वचनों ने मेरे सर्प समान मन को छेड़ दिया। 4. क्रोध से। 5. सहन नहीं कर सका। 6. चोट सही नहीं गई। 7. छाती में। 8. कोमलतापूर्वक।

मैं गुर-दास गुरू सुत हो तुम गुर सम लखौं आपको नीत।
क्रोध निवारि छिमहु अपराधू उर साधू सेवक मम चीत।
दासनि दास पछानहु मोकौ कीनि क्रिपाल बिसाल सु नीत।
अपनि जानि के ताड़ति भे मुझ देखि बिकारनि मति बपिरीत ॥२८॥

मैं सुनि क्रोधति बाक कह्यो तबि भलौ आपनो इस महिं जानि।
नरनि अचंभ दिखाय दंभ किय मोकहु नहीं सुहाइ महान।
इह सभि त्याग अपर थल गमनहु टिकहु न, मेरो भन्यो पछान।
छल सो मम पित की करि सेवा गुरता लीनि गरीबी ठानि[1] ॥२९॥

मोहि पिता को मोर सुभाऊ छल चातुरता लखी न तोहि।
अजमत आदिक ठग करि ल्यायहु रच्यो पखंड अधिक धन होहि।
वसतु हमारी तैं किम धारी, यांते आवति मन रोहि[2]।
भलो चहै तौ रहो नहीं अबि, लहैं कपट बचन मनैं न मोहिं ॥३०॥

सुनि कठोर बानी अस मेरी सरल रिदै बोले हित ठानि।
अबिते आगे करौं तथा मैं जथा रजाइ आपकी जानि।
दास तुमारो क्रोध निवारो मुझ पर होहु प्रसंन महान।
हम कहि नमो करी कर जोरे कवि संतोख सिंह करति बखानि ॥३१॥

॥ दोहरा ॥

निसा परी आसन अपन गुरू बिराजे जाइ।
बिसमति गमने अपर नर श्री गुरु धंन सुहाइ ॥३२॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'दातू मिलनि' प्रसंग बरननं **नाम** सपत त्रिसती अंशु ॥३७॥

1. विनम्रता पूर्वक । 2. क्रोध ।

अंशु ३८

खडूर प्रसंग

निसानी छंद

अरध निसा महिं श्री गुरु घर त्याग चले हैं।
ग्रहन करी नहिं वसतु कुछ नहिं किसू मिले हैं।
पनही बिन पग कमल ते मारग प्रसथाने।
रिदै बिचारति कित चलहिं, बैठहिं किस थाने ।।१।।

मानव मिलहिं न आनिजहिं नहिं छूटै ध्याना।
नहिं बोलहिं, नहिं कलहि करि, कुछ बिघन न ठाना।
एकाकी बैठहिं कहूं प्रभु को सिमरै हैं।
वहिर उपाधि अनेक ह्वै इक रसु बिसरै हैं ।।२।।

एक बिचारति चलति मग, बासर के ग्रामू।
आइ पहूचे छिनक महिं देख्यो इक धामू।
कोठा हुतो गुपाल[1] को तहिं केतिक दूरी।
तिसको दर मुंदनि कर्यो लिखि के विधि रूरी ।।३।।

जो दर खोलहि आनि के तिस दोष लगै है।
नहीं सिक्ख, तिस के न गुर, नहिं श्रेय पगै है[2]।
बिगरै लोक प्रलोक तिस हम ह्वै न सहाए।
हम लिखिके दर ऊपरे अंतर प्रविशाए ।।४।।

तिस कोठे महिं छपि गए पदमासन कीना।
लगी समाधि अगाधि ही एक हि रस भीना।
गोइंदवाल प्रभाति भी तहिं गुरू न पायो।
खोजति सिक्ख्य अनेक ही कितहुं न दरसायो ।।५।।

श्री अरजन गुर! श्रोन सुनि मैं भयो अनंदे।
सभि वसतु धन आदि जे, करि अपनि बिलंदे।

1. ग्वाले का। 2. भला नहीं होगा अर्थात् वह मुक्ति नहीं पाएगा।

बसत्र विभूखन पहिर के करि उर हंकारा ।
गादी पर बैठति भयो धन लोभ सु धारा ।।६।।
करति रह्यो परतीखना[1] को आइ न पासा ।
नहीं उपाइन किन दई, नहिं पूजी आसा ।
भूल्यो औचक आइ जो अवलोक पधारे[2] ।
रुख मिलिबे को नहिं करै नहिं गुरू निहारें ।।७।।
गुण बिहीन पूजा कहां, बिद्या बिन माना ।
जीत कहां बिन सूरता, मन थित बिन ध्याना ।
बिन संतोख उर सुख कहां, तप बिनां न राजू ।
ग्यान कहां बिन सतिगुरू, शोभा बिन लाजू ।।८।।
बिन जहाज तरिबो कहां सागर असगाहू ।
भगति कहां बिन प्रेम के पग पंकज माहू ।
कविता बिन कीरति कहां, जसु बिना न दाना ।
मुकती कहां बिन प्रभु के, सुर विना न गाना ।।६।।
सद गुण बिना न श्रेय है, शरधा बिन सेवा ।
मंत्र सिद्धि बिन जपु कहां, बर बिना न देवा ।
बिन सिक्खी तरिबो कहां जग सागर भारा ।
द्योस कहां सूरज बिना, मैं एव बिचारा ।।१०।।
नमो न कीनी सिक्ख किह[3], कित रह्यो सु दैबो ।
सुनति खिझहिं सभि मन बिखै क्या तिन ते लैवो ।
गुरता गादी जिसहि ढिग तिस ही की पूजा ।
बिन अज़मत कैसे पूजहि[4] बैठे जे दूजा ।।११।।
गुरु अमर के सदन ते मैं सभि कुछ लीना ।
दरब सरब ले, गरब हति[5], चलिबो मग कीना[6] ।
लोभ धारि मैं ले चल्यो वेसर बहु लादी[7] ।
दुइ त्रै सेवकसंग थे अति भा अहिलादी ।।१२।।
दोइ घटी जबि दिन रह्यो मारग प्रसथाने ।
अपने सदन खडूर को चित चाहति जाने ।
बहू धन लै गमन्यो जबै दिनमणि असतायो[8] ।
अंधकार भा जगत मैं दसहूं दिशि छायो ।।१३।।

---

1. प्रतीक्षा । 2. भूल-चूक से जो आता भी, (वह मुझे) देखकर लौट जाता । 3. किसी भी शिष्य ने । 4. गौरव के विना सम्मान कहाँ ? 5. (मेरा) अहंकार नष्ट हो गया । 6. मैंने चलने की ठानी । 7. खच्चरों पर लाद कर । 8. सूर्यास्त हुआ ।

पहुंच्यो नहीं खडूर मैं रहि दूर कितेका ।
तसकर[1] भै दायक मिले तिह समै अनेका ।
देखति शसत्र उठाइ कै मारनि को आए ।
त्रास पाइ तिन पास ते मम दास पलाए[2] ॥१४॥

मैं डर धरि बोल्यो तबै क्यों मारो मोही ।
धन कारन मारन करहु लिहु जेतिक[3] होही ।
छीन लीनि वसतू सकल नहिं बोलनि दीनो ।
पुन सरीर के चीर[4] सभि किय तिन ते हीनो ॥१५॥

अतिशै संकट पाइ कै निज आइ निकेता ।
चिंता सलिता चित वह्यो मन शोक समेता ।
करनि अवग्या बडनि की कैसे सुख पावै ।
कटहि तरोवर को जबै पुनि फल किम खावै ॥१६॥

तोरहि तरी जु तोइ महिं[5] किम तरहि सुखारो ।
सदन ढाहि वन बसन चहि मतिमंद गवारो ।
इम चितवति चिंता महां सभि पुसतु गवाए ।
बहुत बिसूरति बैठि करि नहीं किसू बताए ॥१७॥

तवि ते मेरी लात महिं हुइ पीड़ घनेरी ।
असथी को चीरहि मनहुं[6] दुख देति बडेरी ।
कितिक काल बीतति भयो गुर खोज्यो सारे ।
बुड्ढे आदिक सिक्ख सभि ल्याए तिस बारे ॥१८॥

तिसी रीति वैठै बहुर बर गुरता गादी ।
मिलि सभिहिनि बहु भांति की कीनी शुभ शादी ।
जदपि लात महिं पीर बहु अतिशै दुख पाऊं ।
लाज भार ते दब रह्यो नहिं निकट सिधाऊं ॥१९॥

करनि खुटाइ दुख लहै[7] जग बिखै लजावहि ।
महां पुरख के तीर पुन किम नहीं सिधावहि ।
चिरंकाल पीरा सही, पर गयो न पासू ।
चलनि लगे श्री अमर जबि बैकुंठ अवासू ॥२०॥

---

1. लुटेरे । 2. मेरे दास भाग गए । 3. जितना है । 4. शरीर के वस्त्र । 5. जो जलधारा में ही नौका को तोड़ दे । 6. मानो हड्डी को चीरती हो । 7. खोटे कर्मों से ही दुःख लिया ।

हुइ निलाज दुख बडे ते मैं निकट सिधारा।
खरो अगारी होइ करि कर जोरि उचारा।
अपराधी मैं आपको अबि चलि करि आवा।
छमो अवग्या करी जो बहु संकट पावा ॥२१॥
महां पुरख उर बैर इम जिउं नीर लकीरा[1]।
पाहन रेखा प्रीत द्रिढ[2] अस भाखहिं धीरा।
मंदमती मैं शरण हौं तुम दीन दयाला।
इम बिनति सुनि श्री गुरू बोले तिस काला ॥२२॥
होवहि श्री गुर रामदास सोढी कुल टीका।
श्री अरजन सुत तिनहु को गुन गन ते नीका।
सो खड़ूर प्रविशहि जबहि होवहि तुम मेला।
चरन दुहेला[3] देखि कै सो करहि सुहेला[4] ॥२३॥
सुनि कै तिन ते आइ घर नित करति उडीका।
कवि दरशन निज देहिगे करिहैं पद नीका।
आनि क्रितारथ अबि किओ, काटहु मम पीरा।
श्री नानक अंगद अमर तुम ही प्रभु धीरा ॥२४॥
चरन शरन परने दिहो पूरहु उर आसा।
नहिन हटावनि कीजीए जैसे निज दासा।
श्री अरजन सुनि पुन भन्यो जिम चाह तुमारी।
करहु तथा थल वडे हो हम सिक्ख अगारी[5] ॥२५॥
सकैं हटाइ न तुम क्रिती कर वंदति आगे।
गुर गुर गुर के पुत्र सुभ बड बुद्धि सुभागे।
तबि दातू कर जोर कै चरनी लपटायो।
श्री अरजन कर फेरिकै दुख लात हटायो ॥२६॥
चिरंकाल की पीर बड छिन बिखैं निवारी।
मन प्रसंन दातू भयो महिमा उर धारी।
कहिते सूनति प्रसंग को सूरज असतायो!
नाना बिंजनू[6] त्यारि करि श्री गुरु अचवायो[7] ॥२७॥

---

1. महापुरुषों का वैर भी जल की लकीर के समान होता है। 2. और प्रेम पत्थर की लकीर समान दृढ़ होता है। 3. दु:खी, पीड़ित। 4. सुखी। 5. वैसा ही करो, किन्तु आप बड़ी जगह हैं और हम (आपके घर के) सिक्ख हैं। 6. खाद्य-पदार्थ। 7. खिलाए।

भगति बिबेक बिग्यान की चरचा बहु कीनी।
नाशवंत द्रिशमान सभि, सत्ता सति चीनी[1]।
सार असार बिचार करि निशचै ठहिरायो।
पारब्रहम परमातमा परपंच सुहायो ॥२८॥

सुठप्रयंक पुन सुपति भे श्री अरजन नाथा।
जाम जामनी ते जगे सुचि करि जल साथा।
पुनि दासू के दरस को गमने तिस डेरे।
लगी समाधि अगाधि ही बिनबाध[2] बडेरे ॥२९॥

ब्रिति अखंड निशचल टिकी कोठे शुभ मांही।
कीनि उथान हिलाइ कै करि जतनु सु तांही।
बिकसे कमल बिलोचनै हाली मुख जीहा।
श्री अरजन चरनी परे बिनती करि दीहा ॥३०॥

दासू ने देखे जबै कर बंदि अगारी।
बंदे पद अरबिंद म्रिदु मुख गिरा उचारी।
बिच समाधि के ध्यान जिह मैं नित प्रति ठाना।
सो सरूप तुम ही अहो महिदे महोआना ॥३१॥

श्री नानक अवतार हो इक जोति बिराजे।
कलि महिं नरनि उधार हित निज तन उपराजे।
श्री गुर कहिं तुम बहु वडे हम बाल तिहारे।
क्रिपा द्रिषटि देखति रहहु दुख काटनि हारे ॥३२॥

इक रस ब्रिती अखंड शुभ चिरकाल टिकाई।
सरब भांति समरथ बड़े सभि शकती पाइ।
चहहु सु करहू न देर लगि बिच चउदहि लोका।
नहिं आग्या को फेरही चहिं दरस बिलोका ॥३३॥

तबि दासू ने बच कह्यो पूरहु मम आसा।
चिरंकाल को तन तजौं[3] इस चहौं न बासा।
श्री नानक के पास मैं चाहति अबि जायो।
अपनो वाक भनीजीए हुइ मुझ मन भायो[4] ॥३४॥

---

1. सत्ता ही वास्तव में सत्य है। 2. विघ्न-रहित। 3. पुराना शरीर छोड़ दूँ। 4. मेरा मनोवांछित हो जाए।

श्री गुर बोले होहि इम केतिक दिन मांही
तन तजि गमनहू वेग सौं श्री नानक पाही ।
अजर जरन धीरज धरन श्री अंगद रूपा ।
तुम तिन के बड़ पुत्र हो चित शांति अनूपा ।।३५।।
दास जानि किरपा करो अपने नित जानो ।
सीख सिखावो शुभ मती जिम पंथ महानो ।
इम कहि ठानी नमो पद परकरमा दीनी ।
अपर भनी बहु बेनती महिमा बड चीनी ।।३६।।
आइसु ले निकसे सदन भे चलिबे त्यारु ।
तबि दातू कर जोरि कै इम बाक उचारू ।
श्री अंम्रितसर सम लखहु बसियहि इस थानू ।
मिले रहैं हरखैं दरस गुन ग्यान निधानू ।।३७।।
सुनि धीरज सतिगुर दई हुई त्यार चले हैं ।
खासे पर पुसतक शुभति शुभ चमर[1] ढुले है ।
रागी करते कीरतन बहु साज बजाए ।
तबि संखनि की धुनि भई सुमन स बरसाए ।।३८।।
लघु दुंदभि म्रिदु बाजते तुरही सु नफीरी ।
जै जै कार उचारते चहुंदिशि महिं भीरी ।
करति मंगलाचार को बहु धूप धुखावैं ।
मंद मंद श्री सतिगुरू पाछे तिस जावैं ।।३९।।
एक कोस चलि कै टिके दातू संग भाखी ।
हटहु आप करुना करहु, पूरी अभिलाखी[2] ।
सिमरहु अपने जानि कै हम दास तिहारे ।
करी परसपर बंदना उर प्रेम उदारे ।।४०।।
श्री दातू घर को हट्यो मन आनंद होवा ।
चतुर गुरू को रूप अबि श्री अरजन जोवा ।
महिमा महां बिचारतो बड अज़मत वाना ।
बहुर गरीबी के सहत नित क्रिपा निधाना ।।४१।।
श्री सतिगुर पग नगन ते पाछे प्रसथाने ।
आगे खासा पोथीअनि सिख कंध पयाने[3] ।

---

1. चँवर । 2. अब आपकी अभिलाषा पूर्ण हो गई है । 3. सिक्खों के कंधों पर पोथियों की पालकी चली ।

चमर चारु दुह दिशि ढुरति बहु संख बजावैं ।
इम मंगल को करति ही उत्तर दिशि जावैं ॥४२॥

सने सने सभि ही चलति मन नंम्र करंते ।
श्री अरजन उर भाउ पिखि बलिहार हुवते ।
सुधा सरोवर कोस दुइ जबि रह्यो अगारे ।
सौचि[1] करनि हित सभ टिके खासा सु उतारे ॥४३॥

जाम दिवस बाकी रह्यो थित भे जिस काला ।
करी सौचि सभिहूँ तहां उर हरख बिसाला ।
प्रविशे चाहति निज पुरी करि कारज आए ।
संखन बादित शबद को धुनि ऊच उठाए ॥४४॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'खडूर प्रसंग' बरननं नाम अषट त्रिसति अंशु ॥३८॥

1. शुद्धि ।

अंशु ३९

पोथीनि लेनि, सुधासर प्रवेश प्रसंग

दोहरा

दोइ कोस पर टिक गुरू थके पंथ प्रसथान ।
कीनि भले बिसराम को ह्वै सुखि थित तिस थान ॥१॥

चौपई

द्रिग मुद्दति[1] करि ठान्यो ध्यानू ।
बैठे निशचल ग्यान निधानू ।
सुधा सरोवर पुरि सुधि होई ।
गुर आगमनि सुन्यो सभि कोई ॥२॥

श्री हरिगोबिंद चंद अनंदे ।
बदन सदन छबि खिर्‌यो बिलंदे ।
पाइ किरन सुधि प्रात मनिंदा[2] ।
भए प्रफुल्लति द्रिग अरबिंदा ॥३॥

सुनि साहिब बुड्ढा हरखाए ।
सिख गुरदास आदि समुदाए ।
जिस कारज गमने करि आए ।
सुनि गंगा मन आनंद पाए ॥४॥

पुसतक सभि खासे पर ल्यावति ।
आप गुरू पनही बिन आवति ।
इम सुनि बड उतसाह बधावा ।
सुमनस चंदन धूप धुखावा[3] ॥५॥

---

1. नेत्र बंद करके । 2. शुभ समाचार रूपी किरण को प्राप्त कर होने वाली प्रातः के समान । 3. धूप जलाना ।

ले संग श्री गुर हरि गोबिंद ।
चले अगाऊ जुत सिख ब्रिंद ।
मधुर प्रशादि अधिक संग लीना ।
श्री गुर समुख पयानो कीना ॥६॥
परम प्रेम के जाल फसाए ।
मनहु मीन गन ऐंचति आए ।
पुरि के नर गन सुनि समुदाए ।
देखनि दरस गुरू कहू धाए ॥७॥
जो नितप्रति हित करि दरसै हैं ।[1]
सो वहू दिन मैं दरशन पै हैं ।
गए धाइ करि चौंप[2] उमंगे ।
रुचिर उपाइन ले करि संगे ॥८॥
सभि नर श्री हरिगोबिंद साथ ।
दरसे सतिगुर अरजन नाथ ।
पाइन जाइ उताइल[3] परे ।
निज निज सभिनि अकोरें[4] धरे ॥९॥
सभिनि बिलोचन कमल सरीखे ।
भए प्रफुल्लयति रवि गुर दीखे ।
श्री हरिगोबिंद अंक बिठाए ।
पिखति अनंद बिलंद बधाए ॥१०॥
साहिब बुड्ढा अरु गुरदास ।
बूझी कुशल तिनहूं के पास ।
हाथ जोरि तबि सकल बखानें ।
क्रिपा आपकी ते सुख ठानें ॥११॥
घर रावर के अरु सभि थाईं ।
कुशल अनंद रहैं सभुदाई ।
पुषप प्रसादि सिक्ख गन ल्याए ।
कहि पुसतक पर सो चढ़िवाए ॥१२॥
धूप धुखावति संख बजाए ।
जै जै मंगल शबद उठाए ।

---

1. जो नित्य श्रद्धापूर्वक दर्शन करते थे। 2. चाव । 3. शीघ्रतापूर्वक 4. भेंट ।

इम सभि ही जबि मिले अगाऊ ।
हरखे दुहि दिशि हेरति भाऊ ॥१३॥
किरतन करति सिक्ख अगुवाई ।
समुख सुधासर गमने जाई ।
चौर ढुरति उतसाह वधावति ।
संगति संग गुरू छवि पावति ॥१४॥
चतुर घटी दिन रह्यो चले हैं ।
सिक्ख्य आइ समुदाइ मिले हैं ।
इक दिश संख नफीरी वाजति ।
लघु दुंदभि मधुरी घन लाजति ॥१५॥
श्री अरजन श्री हरिगोबिंद ।
शोभति पोथीनि जुत सिख ब्रिंद ।
ब्रहमा विशन अमर[1] इंद्रादि ।
मनहु बेद की करनि म्रिजादि ॥१६॥
इकठे हुइ उतसाहित चाले ।
नगर सुधासर वैकुंठ आले ।[2]
खासा फूल भाल जुति आगे ।
श्री गुर जुति सिख पाछहि लागे ॥१७॥
जै जै शबद करति चलि जाहीं ।
पहुंचति भए जाइ करि पाही ।
सुधा सरोवर पूरब पासे ।
थड़ा नाम अबि लगहु प्रकाशे[3] ॥१८॥
तहां सथापति करि पोथीन ।
टिके निकट गुर आनंद मीन ।
मंगति जन[4] सुनि करि चलि आए ।
मन बांछति सभिहिनि तबि पाए ॥१९॥
अधिक भीर सतिगुर ढिग होई ।
दरशन करि गमनति सभि कोई ।
बहुत प्रसादि ल्याइ बरतावा ।
सभिहिनि के मन आनंद छावा ॥२०॥

---

1. देवतागण । 2. आलय, बैकुंठ-धर । 3. अब उसे 'थड़ा' (चबूतरा) कहते हैं ।
4. भिखारी ।

संध्या करि[1] सतिगुर मिस थानू ।
ब्रिद्ध साथ तबि बाक बखानू ।
आप रहहु पुसतक के पास ।
लेकरि अपद साथि गन दास ।।२१।।
जाग्रन करहू सिमर सतिनाम ।
किरतन होइ सु चारहुं जाम ।
श्री हरिगोबिंद कउ ले साथ ।
नमो कीनि श्री अरजन नाथ ।।२२।।
उठति प्रदछणा दिशि कहु आए ।
पौर दरशनी[2] सीस निवाए ।
अंदर वर[3] हरि मंदर गए ।
चतुर प्रदछना फिर तहिं दए ।।२३।।
खरे होइ करि श्री दरबार ।
हाथ जोरि करि बिनै उचार ।
नमसकार करिकै बहु भाऊ ।
हटे बहुर जिन प्रेम सुभाऊ ।।२४।।
श्री हरिगोबिंद संग सुहाए ।
मंद मंद अपने घर आए ।
दासी दास आनि पग लागे ।
बूझी कुशल गुरू रस पागे ।।२५।।
अंतर प्रविशे उठि श्री गंगा ।
आनि लगी पाइन के संगा ।
सुत को ले प्रयंक पर बैसे ।
रामचंद को दसरथ जैसे ।।२६।।
मातुल पतनी के संदेश ।
अपर[4] बारता बिती अशेष ।
सने सने गंगा के श्रौन[5] ।
कीनि सुनावनि गुर सुख भौन ।।२७।।
तबि गंगा मन आनंद पाए ।
निकटि बैठि भोजन अचवाए ।

---

1. साँझ हो जाने के कारण । 2. दर्शनी ड्योढ़ी । 3. अन्दर प्रवेश कर । 4. अन्य सब । 5. कानों में (कहीं) ।

निज कर ते ठाठति बहु सेवा । महिमा जानहि श्री गुर देवा ॥ २८ ॥
सुपति हेतु परयंक आढ़े[1] । इक पर हरि गोबिंद गुन गाढ़े ।
सुख सों सैन करी निस मांही । रही जाम जागे गुन ग्राही ॥ २९ ॥
समिचेतन आनंद सरूपा । तिस महिं निशबल ब्रिती अनूपा ।
प्रथम सौच करि कै मन पावनि । पुनहू कीनि जल ले रद धावन[2] ॥ ३० ॥
कूप नीर ते मज्जन ठानि । पुन दुख मंजनि कीनि शनान ।
थड़े जाइ बैठे सुख भौन[3] । अजपा जाप जप्यो करि मौन ॥ ३१ ॥
पुन प्राची दिशि भी[4] अरुनाई । तिमर नस्यो चटिका चुहकाई[5] ।
कमल बिलोचन बिकसे दोई । उठे प्रभु प्रभाति लखि होई ॥ ३२ ॥
बडी प्रकरमां फिर करि आए । पौर दरशनी सीस निवाए ।
पुनह जाइ दरबार सु बंदे । चतुर प्रदछना कीनि अनंदे ॥ ३३ ॥
इम दरशन करि फिर पुन आए । बैठि थड़े पर गुरु सुहाए ।
मनहु शंभु थित गिर कैलाशा । सुर जिम सिख बैसे चहुं पासा ॥ ३४ ॥
संगति आइ लग्यो दीवान । बीच बिराजहिं क्रिपा निधान ।
श्री मुख ते बोले बच ऐसे । निकसे कमल खिरे अलि जैसे[6] ॥ ३५ ॥
चित दै सुनि भाई गुरदास । पर उपकार बडो सुखरासि ।
देखि देखि करि सभि पोथीन । करहु ग्रिंथ साहिब रस भीन ॥ ३६ ॥
सुमति बिलोचन जिनके नांहि न । सम दम सबल सु बाहनि जांहि न[7] ।
तप, मख पग ते[8] जे नर हीने । तिन हितु सेतु रचहु हित दीने[9] ॥ ३७ ॥
सागर अगनि संसार अगाहू । जिस पुल आश्रै इह तरजाहू ।
सो चितलाइ बनावनि कीजहि । नर असंख को हित करि दीजहि ॥ ३८ ॥
महां पुरख को जग तन धारनि । अन गन नरन श्रेय के कारन[10] ।
यांते अबि को थान निहारो । होइ इकाकी सुंदर सारो ॥ ३९ ॥
जिह हेरति हुइ हरख बिसाला । हरिआवलि अवनी तरु जाला ।
जल समीप हुइ सुंदर छाया । सघन हरित दल हुइ समुदाया ॥ ४० ॥
सुनि भाई गुरदास अलावहि । जो थल क्रिपा सिंधु को भावहि ।
सो आछो हुइ बैठनि जोग । जहां न पहुँच सकहिं सभि लोग ॥ ४१ ॥

---

1. निद्रार्थ पलंग पर चढ़े (लेटे) । 2. दाँतों की सफ़ाई । 3. सुखों के घर । 4. भई, हुई । 5. चिड़ियाँ चहकने लगीं । 6. गुरु जी ने इस प्रकार वचन कहे, जैसे कमल खिलने से भंवर मुक्त होते हैं । 7. जिनके पास साम, दाम आदि बलवान भुजाएँ नहीं । 8. तपस्या और यज्ञ रूपी पैरों से (जो विहीन हैं) । 9. उनके लिए प्यारपूर्वक पुल की रचना करो (गुरु ग्रंथ से आशय है) । 10. असंख्य मनुष्यों के कल्याणार्थ ।

सुनि श्री अरजन आपहि चले। खोजनि थान बैठिबे भले।
संग चले बुड्ढा गुरदास। कितिक सिक्ख जे ग्यान निवास ॥ ४२ ॥
चले सुधासर ते दिशि प्राची[1]। मति उपकार बिखै जिन राची।
इत उत फिर करि सथल निहारे। जहिं तरु संघने[2] तहां पधारे ॥ ४३ ॥
कितिक काल बिचरति तित ओरा। नहिं पाई बैठबि की ठौरा।
चलदल[3] खरे हरे दिखि दूरे। गमनति पहुंचे श्री गुर पूरे ॥ ४४ ॥

कबित्त

बदरी[4] अनेक खरी हरी हरी शोभ खरी, घाम की तपत हरी, हेरी एक ढाल की।
जंड हैं अखंड गन, ठांढी है करीर भीर चलदल चलादल दल कल जाल की।
सुदर सुखद छाए मुदत करति मन, चारों ओर दिखै हरिआई थोरे काल की[5]।
धरा जल नाल की[6], बिटप जुत डाल की, पसिंद मैं क्रिपाल की, प्रभुदत बिसाल की ॥४५॥

स्वैया

श्री गुर देखि कह्यो गुरदास को, पंचबटी सम थान निहारा।
बीच धरा इक सार जहां, तहिं बैठनि चाहति चित्त हमारा।
तंबू कनात इहां लगवावहु भाखि मंगावहु दास हकारा।
हे सुखवंत इकंत महां, चहुं ओर खरे तरु चारु हज़ारा ॥ ४६ ॥
यौं सुनि कै गुरदास भन्यो सोई थान भलो जहिं आपको भावै।
मो मन भी हरखावति है, जल है, थल नीवे सु भूम सुहावै।
पंच वटी सम आप कहो अति होइ महातम जो दरसावैं।
यौं कहि तंबू कनात मंगाइ लगावति भेद को आप बतावैं ॥ ४७ ॥
श्री गुर फेर कह्यो हम जाति, संवारि सथान सु त्यार करो।
जावद फेर सु आवैं इहां तबि लौ करि तंबू कनात खरो।
देय निदेश अशेष तिसे तबि आप हटे चलि आइ घरो।
देति सदा निज सिक्ख्यन को सुख देव गुरू नित ध्यान धरो ॥ ४८ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिथे द्वितिय.रासे **'पोथीनि लेन, सुधासर प्रवेश''** प्रसंग बरननं नाम एकऊन चत्वारिंसती अंशु ॥ ३६ ॥

---

1. पूर्व दिशा। 2. सघन तरु-राशि। 3. पीपल के पेड़। 4. बेर के पेड़। 5. ताज़ी उत्पादित। 6. धरती के साथ जल भी है।

अंशु ४०

रामसर होन प्रसंग

दोहरा

तवि भाई गुरदास ने दास वुलाए पास।
श्री गुर की आइसु[1] कही सुनति हुलास प्रकाश ।। १ ।।

चौपई

मिलि ब्रिदन सम कीनसि अवनी। चहुं दिशि हरिआवल थिति रवनी[2]।
डोरनि तान[3] खरो किय तंबू। नंम्र सथान निकट कछु अंबू[4] ।। २ ।।
करि कनात ठाढी तहिं गाढी। चहुं कोद सुंदर दुति वाढी।
जल को वहु छिरकाव करावा। पुन गुलाव बूंदन वरसावा ।। ३ ।।
चहुं दिशि चंदन चरच्यो चारू। वहु खुशबोइ उठति महिकारू[5]।
आनि बाग ते सुंदर बूटे। करे लगावनि सुमन सु जूटे[6] ।। ४ ।।
वरन बरन के फूल प्रफुल्लयति। बायु वहति शाखा जिन झुल्ल्यति।
सकल सथल ते रेण[7] दबाई। कंटक, शुषक सु त्रिणनि हटाई ।। ५ ।।
थल कनात अंतर बर जेता[8]। छायो रुचिर फरश ते तेता।
तंबू के अंतर चंदोवा। झालरदार झलकतो होवा ।। ६ ।।
रेशम डोर वंधि करि ताना। जरी चित्र चित्रति जिह नाना।
रंगदार अंबर ले और। तंबू के अन्तर चहुं ओर ।। ७ ।।
गोल सरल सुंदर शुभ रंग। खरी खरी द्वै चोब उतंग[9]।
ऊपर कलस सुनहिरी शोभा। जनु जुग कमल कली छवि लोभा ।। ८ ।।
ऐसो थान कीनि रमनीको। जिह देखति हुइ आनंद जी को।
राखे केतिक दास बिठाए। गुर ढिग तवि गुरदास सिधाए ।। ९ ।।
उत श्री अरजन ढिग पोथीन। वसहिं प्रेम करि भाउ प्रबीन।
वैठि थड़े दीवान लगावै। सभि संगति को दरस दिखावें ।। १० ।।

---

1. आज्ञा। 2. आकर्षक। 3. रस्सियां बाँधकर। 4. वहाँ नीची धरती पर जल भी था। 5. सुगंधि की लपटें। 6. फूलों से लदे। 7. धूलि। 8. कनात के अन्तर का क्षेत्र। 9. दो ऊँची चोबें खड़ी कीं।

जाइ कीनि अरदास अगारी। श्री गुर भयो सथान तयारी।
चहुं दिशि ते रमणीक बनावा। ब्रिद तरोवरु जहिं द्रिषटावा ॥ ११ ॥
सुनि श्री अरजन सभि पोथीन। ले गमने उतसाहु सु कीनि।
खासे को उचवाइ चलै हैं। दुहिं दिशि सुंदर चमर व ढुले हैं ॥ १२ ॥
मुकता गन पर मनहुं मराल। उडति भ्रमति निकट न डर नाल।
सिख संगति लै फूलनि माला। लरकाई चहुं दिशनि बिसाला ॥ १३ ॥
धूप धुखावति जाति अगारी। धुनि मिलि जै जै कार उचारी।
होति भयो संखन को शोरा। करहिं कीरतन मिलि मिलि जोरा ॥ १४ ॥
लघु दुंदभि मिलि संग नफीरा। करति बजावनि भी बड भीरा।
इम उतसाह करति गुर चाले। गमने सिक्ख्य सु प्रेम बिसाले ॥ १५ ॥
सने सने तिस थान पहूचे। चलदल सदल झूलति जहिं ऊचे।
सुंदर चहुं दिशि बन्यो निहारा। लपटैं छूटति अधिक महिकारा ॥ १६ ॥
अधिक प्रसंन भए पिखि सारे। अंतर खासा दीनि उतारे।
खुशी करी ऊपर गुरदास। बैठे सतिगुर धरे हुलास ॥ १७ ॥
सिख संगति बैठे तिस थानि। गुर के चहुं दिशि लग्यो दिवान।
समुख सथान नंम्र कुछ नीरा। तिस पिखि बोले सतिगुर धीरा ॥ १८ ॥
निज दासनि के हित कल्लयान। अलप रचहु सर सुंदर थान।
जितिक निकासहिं कार इहां की। तितिक मलिनता नासहिं तांकी[1] ॥ १९ ॥
सेवा करहि तीरथनि केरी। दुहि लोकनि लहि श्रेय घनेरी।
श्री अरजन को सुनि फुरमावनि। संगति उठी कार निकसावनि ॥ २० ॥
एक जाम लौ करी निकासनि। रच्यो अलप सर मिलि बहु दासनि।
पिखि संध्या सभि गुरु हटाए। संगति तिथि हुइ बाक अलाए ॥ २१ ॥
श्री गुर जी तीरथ इस केरा। धरहु नाम हुइ बिदत बडेरा।
सुनि बुड्ढे को बूझन ठाना। कौन नाम इस करहिं बखाना ?॥ २२ ॥
हुइ सारथ[2] फलदायक भारी। मज्जति अघ की मैल उतारी।
श्री गुर तुम सरबग्य बिसाला। लखहु ब्रितांत जु हुइ त्रै काला ॥ २३ ॥
रावरि अछति न समरथ काहू। धरहु नाम जिम हुई मांहूं।
श्री अरजन सभि सुनति उचारा। पंचबटी थित राम उदारा ॥ २४ ॥
इहां राम की नांम सु बासा। रचहिं ग्रिथ साहिब सुख रासा।
नाम सु नामी भेद न कोई। एक रूप जानति सभि लोई[3] ॥ २५ ॥

---

1. जितनी कोई इस (सरोवर) की सेवा करेगा, उतनी उसकी पाप रूपी मैल दूर हो जायेगी 2 सार्थक। 3. लोक में।

रामनाम की महिमा महां। रचहिं ग्रिंथ साहिब जी इहां।
यांते नाम रामसर होवा। पातक घातक मज्जति जोवा[1] ॥ २६ ॥
सुनि संगति सगरी हरखाई। हाथ जोरि करि ग्रीव निवाई।
तिस परथाइ सबद गुर कीना। नाम महातम को धरि दीना ॥ २७ ॥

॥ स्री मुखवाक गउड़ी ॥ महला ५ ॥

नित प्रति नावणु रामसरि कीजै।
झोलि महा रसु हरि अंम्रितु पीजै ॥ १ ॥
निरमल उदकु गोविंद का नाम।
भजनु करत पूरन सभि काम।
संत संगि तह गोसटि होइ।
कोटि जनम के किलविख खोई ॥ २ ॥
सिमरहि साध करहि आनंदु।
मनि तनि रविआ परम नंदु ॥ ३ ॥
जिसहि परापति हरि चरन निधान।
नानक दास तिसहि कुरबान ॥ ४ ॥

चौपई

मज्जति जल इह शब्द पठंता। तिस तीरथ को फल सु लहंता।
सुनिकै संगति बाक बिलासे। मसतक टेकति मरम हुलासे ॥ २८ ॥
सतिगुर आग्या सभि को दई। दिनमणि अथ्यो निसा अबि भई।
श्री हरि गोबिंद के संग जावहु। गमनहु नगर बिखै सुख पावहु ॥ २९ ॥
बिदा करे सभि सों इम कह्यो। ढिग गुरदास रु बुड्ढा रह्यो।
श्री हरिगोबिंदु चंद निकेत। सदन प्रवेशे सभिनि समेत ॥ ३० ॥
करि बंदन सभि अपने धाम। गए सिक्ख्य कीनसि बिसराम।
श्री अरजन डेरे महिं रहे। जिन दरशन दुख दारिद दहे ॥ ३१ ॥
सेवक कितिक रहे हित सेवा। अहैं समीपी जे गुरदेवा।
सूपकार करि त्यार अहारे। कीनि सुनावनि खरो अगारे ॥ ३२ ॥
आइसु ले करि थार मझारा। कीनि परोसनि रुचिर अहारा।
श्री गुर को तबि जाइ अचायो। पाछे सभि सिक्ख्यनि मुख पायो ॥ ३३ ॥
बीती जामनि घटिका चारी। निकटि होइ गुरदास उचारी।
सुनहु क्रिपाल सघन बन महां। ससिकर भी नहिं प्रविशहि इहां ॥ ३४ ॥

1. श्नान और दर्शन द्वारा पापों का नाश करता है।

रामचंद जिम कानन सेवा। भई जामनी तुम गति एवा।
बांछति जथा इकांकी होवनी। तथा सथल इह कीनसि जोवनि ॥ ३५ ॥
कमलासन[1] तुमरो हित जानि। प्रथम रच्यो इह रुचिर सथान।
कहति गृरु सुन हे गुरदास। महिमा इस थल महां प्रकाश[2] ॥ ३६ ॥
रचना अनिक भाँति की होवै। प्रगटै गुर प्रताप, रिपु खोवै।
इस प्रकार कहि बच अकलंक। भए अरूढनि रुचिर प्रयंक ॥ ३७ ॥
आसतरन[3] बर बिसद बिसाले। सेज बंद सुंदर दुतिवाले।
चमकति तथा चाँदनी अंबर। तथा लीनि ऊपर सुभ अंबर ॥ ३८ ॥
पौढि जथा सुख सुपति क्रिपाला। जाम जामनी रहि जिस काला।
सौच शनान कीनि पुन ध्याना। श्री नानक को सुमरनि ठाना ॥ ३९ ॥
अरनोदय होयहु लखि तासू। ढिग हकारि बुड्ढा गुरदासू।
कह्यो मनोरथ आपनि जी का। जिस ते होई सभिनि को नीका ॥ ४० ॥
होन इकाकी हम अबि चाहति। हित दरशन सभि सिक्ख्य उमाहति।
यांते साहिब बुड्ढा जावउ। सभि संगति को तहां टिकावउ ॥ ४१ ॥
सुधा सरोवर बर हरि मंदिर। पठहु सुनहु सुंदर तिस अंदर।
हमरे दरशन समसर जानहु। नहिं संसे इस मैं कुछ ठानहु ॥ ४२ ॥
आप रहहु तुम तिह ठां जाइ। सभि संगति राखु अटकाइ।
मन बांछति सिक्खनि को दीजहि। हमरे समसर सकल कीरजहि ॥ ४३ ॥
कार समसत तोरबो[4] करनी। सभि संगति को धीरज धरनी।
आइसु मानि जोर करि हाथ। सीस चरन धरि प्रेम कि साथ ॥ ४४ ॥
बुड्ढा तबि चलि करि पुरि आयो। सिख संगति को हुकम सुनायो।
जिम श्री अरजन आग्या दई। तिसी रीति निस दिन क्रित कई ॥ ४५ ॥
सभि संगति अंम्रितसर नावै। दरसन श्री हरिमंदर जावै।
मेलि[5] कीरतन होति बिसाला। बैठहि बुड्ढा विच सभि काला ॥ ४६ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथ त्रितिय रासे **'रामसर होन' प्रसंग** बरननं नाम चत्वारिंसती अंशु ॥ ४० ॥

---

1. ब्रह्मा। 2. इस स्थान की महत् महिमा प्रकट होगी। 3. बिछौना। 4. तुम्हें ही। 5. मिलकर।

अंशु ४१

भगतन आगवन प्रसंग

दोहरा

निकट रह्यो गुरदास इक लिखनि सुननि के हेतु ।
केतिक सेवक अपर जे बैठहिं होहि सुचेत ॥ १ ॥

चौपई

निकट न पहुंचहिं बिना बुलाए । चहुंदिशि बैठे करि चुकसाए ।
जो मानव आवहिं अनजाने । बरजहिं[1] तिनहिं न ढिग दें जाने ॥ २ ॥
इम एकाकी ह्वै गुर पूरे । तबि गुरदास हकारि हदूरे ।
निकट बिठाइ मनोरथ भाखा । सुनिभाई हमरी अभिलाखा ॥ ३ ॥
रचहु ग्रिंथकी बीड़ उदारी । लिखि अक्खर गुरमुखी मझारी ।
श्री नानक पट्टी जु बनाई । पैंती अक्खर करे सुहाई ॥ ४ ॥
तिन महिं लिखहु सरब गुरबानी । पठिबे बिखे सुखैन महानी ।
जिनकी बुद्धि महिद अधिकाई । बहु अभ्यासहिं विद्या पाई ॥ ५ ॥
बहुत बरखलगि पठहिं बिचारहिं । सो तब जानहिं सार असारहि ।
तिस तत को गुरमुखी मझारी । लिखहिं सुगम शरधा उरधारी ॥ ६ ॥
सहसक्रित अर तुरकनि भाषा । इस महि लिखि लै हैं बुधिरासा ।
सभि ऊपर पसरहि इह धाई[2] । जिम जल पर सु चिकनता पाई ॥ ७ ॥
किरत करति ग्रिहसती मति थोरी । सुगम पठहिं बिद्या जिन लोरी[3] ।
प्रगटहि गाडी राहु बिसाला । चलहि जु, नहिं भूलहि किस काला ॥ ८ ॥
लिखहु गुरमुखी अक्खर यांते । सगल जगत महिं हुइ बक्ख्याते ।
शरधावंते पठहिं सुखैन । जानहिं हरि सिमरन गति दैन[4] ॥ ९ ॥
इन की महिमा महांभिरामू । बिदतहि जग गुरमुखी सु नामू ।
देखसि पठहिं लिखहिं सनमानहिं । निज पातक घातक हित ठानहि ॥ १० ॥

---

1. वर्जित करते थे । 1. दौड़ कर फैल जायगी । 2. जिसे विद्या की अपेक्षा है । 3. मुक्तिदाता ।

चतुर गुरू के शब्द मुकंदे। पिखि पोथी तुम लिखहु अनंदे।
सभि वेदनि को सार निकारा। मथ सागर जिम रतन उदारा ॥ ११ ॥
श्री नानक श्री अंगद नामू। श्री गुर अमर अपर श्री रामू।
प्रिथक प्रिथक लिखि इनकी बानी। पठि करि आप लेहु पहिचानी ॥ १२ ॥
सुनि भाई गुरदास उचारी। कहां बुद्धि प्रभु इती हमारी।
मैं अलपग्य जीव किम जानौं। गुर की गिरा अगम गति मानौं ॥ १३ ॥

रिदा अगाध अबाध गंभीरा। गिरा रूप सोई गुर धीरा।
ब्रह्मादिक लखि सकैं न कोऊ। मो महिं कहां इती मति होऊ ॥ १४ ॥
जेकरि होवहु आप सहाई। लखहुं तितिक जो देहु लखाई।
सुनि प्रसंन हुइ बर को दीना। श्री गुर परम क्रिपाल प्रबीना ॥ १५ ॥

जथा पुत्र होवै घर बाहर। अंतर माता पिता अजाहरि।
अपर कुटंब जु वोलहि बाती। जान लेहि बालक बक्ख्याती ॥ १६ ॥
को नर बूझहि अंतर मौन। कौन कौन बोलहिं कहि तौन।
तबि बालक सुनि जौन अलावै। प्रिथक प्रिथक करि तांहि बतावै ॥ १७ ॥

इह मम पिता बाक, इह माता। इह भगनी बच, इह कहि भ्राता।
इम समझहिं गो हुइ सवधाना। लिखि गुरबानी सफल महाना ॥ १८ ॥
इम सुनि कै भाई गुरदासू। धर्‍यो सीस पग पंकज पासू।
क्रिपा द्रिषटि गुर की तबि पाई। तीन काल ग्याता हुइ आई ॥ १६ ॥

कागद के सुधार करि पतरे[1]। रुचर प्रमान कीनि तबि कतरे[2]।
पाइ नीर स्याही करि त्यारी। गुरु सिमर लेखण[3] कर धारी ॥ २० ॥
श्री अरजन पोथी तबि खोली। हेत लिखावनि गिरा अमोली।
प्रथम सिमर श्री नानक नामू। नमो कीनि धरि ध्यान भिरामू ॥ २१ ॥

पूरब श्री जपुजी लिखवाई। रुचिर मंगलाचरन सुहाई।
पौड़ी साढे चार उचारी। पार ब्रह्म बरनन सुखकारी ॥ २२ ॥
डेढ बिखै गुर महिमा कही। कीनि मंगला चरनै सही।
जे जुग चारे लिखी सु फेरे। इस महिं भन्यो विराग बडेरे ॥ ५३ ॥
श्रवन महातम चार मझारी। पुनहि मनन भाख्यो बिच चारी।
निद्धयासन पंचे परवान। इस महिं नीके कीनि बखान ॥ २४ ॥
तूं सदा सलामति निरंकार। साखयात पर इह तुक चार।
इह क्रम प्रिथमै बरनन कर्‍यो। जप अरु बेद अरथ इक धर्‍यो ॥ २५ ॥

1. पन्ने। 2. काटकर समान परिमाण के बनाए। 3. कलम।

ब्रह्म जानिवे के इह नामू। दोनहुं पद समसर अभिरामू।
यांते प्रथम नाम 'जपु' राख्यो। सभि गुरबाणी को इह भाख्यो ॥ २६ ॥
कहिं लग कहों महातम बानी। जो सभि की सिरमौर बखानी।
अपर न उत्तम जिसते कोई। अरु सुखेन ही प्रापति होई ॥ २७ ॥
प्रथम राग श्री राग लिखावा। घर अनेक महिं जाइ जु गावा।
कितिक लिखे जबि बूझति भए[1]। कहु गुरदास जानि भी लए ? ॥ २८ ॥
हाथ जोरि कै बाक बखान्यो। रावर की करना ते जान्यो।
पति को बच वहु नरन मझारी। लेति पछान दूरी जिम नारी[2] ॥ २९ ॥
तिम पोथी पर ते गुर वैन। लिखे पछान चतुर गुर जैन[3]।
अपरन के जो शबद बनाए। परखि परखि करि सरब हटाए ॥ ३० ॥
कहि इम गयो, इकाकी भए। भगत जु, आनि दिखाई दए।
जिन देखनि ते होति उधारा। सतिगुर दीनन करि प्रतिपारा ॥ ३१ ॥
पद अरबिंद बंदना कीनसि। दरस बिलोकि प्रेम चित भीनसि।
सभि ठांढे हुइ सतुति उचारी। पारब्रह्म तुम नर तन धारी ॥ ३२ ॥
घोर जानि कलिजुग का काला। आप अवतरे प्रभु क्रिपाला।
भगत वछल बसि प्रेम गुसाईं। श्री अरजन पंचम तन पाई ॥ ३३ ॥

भुजंग छंद

महाराज राजानि राजा बिराजो।
सभै लोक जाचैं सु दाता समाजो[4]।
कली काल मैं नाम को दान दै हो।
अनेकानि दासानि को तार लैहो ॥ ३४ ॥
महांसिंधु बंन्ही[5] दझैं मूढ़ मानी।
तुही एक राखा क्रिपा जांहि ठानी।
सुपंथं सुखेनं दिखावो संदोहा।
बिकारं बिदारो जपे नाश मोहा ॥ ३५ ॥
तुही ब्रह्म ग्यानी, ब्रह्मं रूप तेरो।
तुही एक ईशं सभै लोक चेरो।
तुही एक रूपं, तुही रूप नाना।
तुही जीवका दें, करैं जीव खाना ॥ ३६ ॥

---

1. जब (गुरु जी ने) पूछा कि कितने लिखे जा चुके ? 2. जैसे बहुत से नरों में पति के वचन को छिपा होने पर भी नारी पहचान लेती है। 3. जो थे। 4. सब के दाता। 5. अग्नि।

करी सेव हेरो करामात दानी।
गुनग्गयं सरब्बयं, क्रितग्ग्यं प्रमानी।
अमानं समानं समानं ब्रिती है[1]।
उदारं अपारं न कैसे मिती है।। ३७।।
तुही दीन बंधू, दयावान, दाता।
भए बंस बेदीनि बीचै बख्याता।
पुनं 'अंगदं' रूप होए गुसाईं।
पिता मोहरी के व्रिती देह गाईं।। ३८।।
गुरू रामदासं प्रकाशे बहोरी।
मए पंचमे आप रूपं बहोरी।
सदा शांति चितं, छिमावंति, धीरं।
रसं एक ब्रित्ती, अबैरं, अभीरं[2]।। ३९।।
जनं सत्ति-नामं क्रिपा ठानि दीनं।
दुऊ लोक को त्रास कीनं सु हीनं।
लखैं नांहि तोको भ्रमंधारि मूढा।
महां सूखमं रूप गूढान गूढा।। ४०।।
सदा जै, सदा जै, सदा जै, अनंदो।
नमसतं, नमसत, नमसतं, बिलंदो।
सुधा बाक बकत्रं सु चंदे मनिंदो।
रिदं नाम बासे वरं दे[3] गुबिंदो।। ४१।।

दोहरा

इम अषटक भगतनि भन्यो पढहि जु नित करि प्रेम।
सुत बितादि मन बांछते पावहि जन जुति खेम।। ४२।।

चौपई

सुनि श्री अरजन ठांढे ह्वै के। मधुर बाक ते आदर कै कै।
सकल बिठाए निकट अनंदे। बूझनि करे भगत तुम ब्रिंदे।। ४३।।
सगरे अपनो नाम सुनावो। पुनि आगम को हेतु बतावो।
किस प्रकार तुम करुना करी। महां सुफल मिलिबे तुम घरी।। ४४।।
कह्यो कबीर जोरि जुग हाथ। सुनहु सकल श्री अरजन नाथ।
बेणी, नामु देव, रविदास। पीपा, सधना, सैण प्रकाश।। ४५।।

---

1. जिसकी वृत्ति आदर-निरादर में समान है। 2. निर्भय। 3. वर-दाता।

भीखन, धंना अरुजे देव। बिप्प्र त्रिलोचन, श्री गुरदेव।
परमानंद, रामानंद जानो। मैं जु कबीर, फरीद प्रमानो ॥ ४६ ॥
सूरदास, जुत पंद्रहि कहीऐ। चार अपर इन नाम सु लहीऐ।
भूसन, मसकन, संमन एहो। चौथो दास जमाल लखै हो ॥ ४७ ॥
अबि आगमन काज सुनि लीजहि। उरबिचार पुन पूरन कीजहि।
बेद कहै नाराइन स्वास। कमलासन शुभ कीनि प्रकाश ॥ ४८ ॥
बहुर ब्यास बिसतार बनावा। नरन उधारन हेतु उपावा।
तिन महिं बाम देव ते आदि। साखी लिखी मुनीन बिबाद ॥ ४९ ॥
तिन वेदनि को दूसर रूप। रचन लगे मतु ग्रिंथ अनूप।
लिखहुं इहां साखी भगतनि की। भई वारता जिम प्रभु जन की ॥ ५० ॥
कलिजुग घोर मंद मति जाने। तिन हित रचहु सुखेन महाने।
इस महिं शब्द लिखाइ हमारे। उपदेशन हित दिहु बिसतारे ॥ ५१ ॥
श्री अरजन सुनि भगतनि बिनती। हेतु लिखावनि कीनसि गिनती।
सभिहिनि सों श्री गुर फुरमायो। प्रथम जु तुमने कछु बनायो ॥ ५२ ॥
सो न चढावहिं ग्रिंथ मझारी। रचहु अबहि इसके अनुसारी।
जथा क्रम्म बानी सु बनाओ। प्रथक प्रथक बिच राग लिखाओ ॥ ५३ ॥
सुनि हरखे सभि भगत बिसाला। 'धंन धंन' उचरहिं तिस काला।
लगे बनावनि गिरा नवीन। बैठि समीपी गुरु प्रवीन ॥ ५४ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे त्रितिय रासे '**भगतन आगवन' प्रसंग** बरननं नाम एक चतवारिंसती अंशु ॥ ४१ ॥

अंशु ४२

भगतन को आगमन प्रसंग

दोहरा

श्री अरजन अरजिन सुनहिं, अरजुन जसु उपजाइ।
समै दुपहिरी लगि गुरु बैठि ग्रिंथ लिखवाई॥ १॥

चौपई

सुधा सरोवर पुन चलि आवहिं। करहिं प्रदच्छन सीस निवावहिं।
बैठहिं जबहिं संगतां ब्रिंद। दरसहिं सतिगुर चंद मनिंद॥ २॥
हरिमंदर महिं हुइ दरबारे। थिति मसंद अरदास उचारें।
आई उपाइन पाइन अरपहिं। सुर समुदाइ जाइं जिम हरि पहि[1]॥ ३॥
दया धारि दरशन को देति। सिख देखति मन बांछति लेति।
एक जाम तहिं बैठि बितावहिं। पुन तंबू दिशि को चलि आवहिं॥ ४॥
राति दिवस बीतहि बिच डेरे। शबद बनाइ लिखाई घनेरे।
भगति बिराग ग्यान गुन सानी[2]। नाना बिधिनि बनावहिं बानी॥ ५॥
इस प्रकार नित प्रति विवहारे। किंतिक दिवस सतिगुरु गुज़ारे।
लिखे शबद भगतनिके जबै। कहि गुरदास बिसम उर[3] तबै॥ ६॥
पंचों पातिशाहि की गिरा। अंत नाम श्री नानक धरा।
अबहि आप भगतनि के नामू। अंत शबद के धरहु भिरामू॥ ७॥
दीखति इहां भगत नहिं कोई। श्री गुर जी संसे दिहु खोई।
श्री अरजन तबि बाक बखाने। जे चित चाहति इस कहु जाने॥ ८॥
जो तव समैं आगमन केरो[4]। प्रात दु घटिका[5] आउ अगेरो।
तबि संसे तुव होहि बिनाशी। सुनि गुरदास लह्यो सुखरासी॥ ९॥
वहिर कनात किंतिक थल त्यागा। तहिं भाई को तंबू लागा।
लिखनि समै हज़ूर चलि आवहि। नातुर तिस महिं दिवस बितावहि॥ १०॥

---

1. यथा सब देवता विष्णु के पास जाएँ। 2. वैराग्य-ज्ञान से सिंचित भक्ति। 3. मन में विस्मित होकर। 4. जो तुम्हारे आने का समय है। 5. काल-वाचक—घड़ी।

सुनि सतिगुर के वाक अछेरे। तबि भाई गमन्यो निज डेरे।
सुपति जथा सुख निसा बिताई। रही जाम किय सौच बनाई॥ ११॥
गुर ढिग पहुंचनि समै लखायो। द्वै घटिका आगै चलि आयो।
तिस छिन सतिगुर के चहु दिश मैं। चरचा करति भगत प्रभु रस मैं॥ १२॥
सहिम रह्यो ठांढो तिस थाईं। जहिं दर हुतो आइबे जाई[1]।
उठे भगत निज सदन सिधैबे। तबि गुरदास सरब दरसैबे[2]॥ १३॥
भगत कबीर आदि जे सगरे। देखति जाने अबि इह डगरे[3]।
धाइ पर्‌यो चरननि सभिही के। जोरि हाथ बंदन करि नीके॥ १४॥
तबि सभि भगतनि इस को बंद्‌यो। कुशल प्रशन ते अधिक अनद्‌यो।
निज निज नाम सुनावनि कर्‌यो। मिले सकल उर संसे हर्‌यो॥ १५॥
बहुर आपने धाम सिधारे। डर धरि करि गुरदास बिचारे।
हम ढिग पहुंचहु, गुर फुरमायो। मैं नहिं गयो न दरशन पायो॥ १६॥
तबि तूरन ही निकट पयाना। बंदन कीनि बंदि जुग पाना।
महिमा लखी महिद महीयाना[4]। खरो होइ गुर सुजसु बखाना॥ १७॥
निरंकार के तुम आकारा। सरगुन रूप बिशनु तन धारा[5]।
सतिजुग महिं बावन बपु पावनि। मापे तीन लोक त्रै पावनि[6]॥ १८॥
त्रेतै रघुवर रूप सुहावन। घाइ अगिन राखश युत रावन[7]।
द्वापुर होए क्रिशन मुरारी। शत्रुन सैन असंख संघारी॥ १९॥
अबि कलिजुग को काल निहारा। गुरु रूप आपनि को धारा।
हम नर संदमती नहिं जानैं। तुमरी महिमा महिद महानैं॥ २०॥
बखशहु भूल दया सिंधु मेरी। दास जानि रखि लाज बडेरी।
श्री अरजन सुनि के तिस काला। बोले होइ प्रसंन बिसाला॥ २१॥
तुझ पर खुशी सुनहु बडभागे। मन वांछति लीजहि अबि मांगे।
तुझ ते नहीं अदेय हमारे। सेवक प्रेमी हमहुं पिआरे॥ २२॥
तबि कर जोरि कह्यो गुरु दास। भगत जु आवति हैं तुम पास।
श्री गुर आप जथा तिन दरसहु। चरचा करहु सरीर सपरशहु॥ २३॥
तथा दरस मैं तिन को पाऊं। ग्यान वाक को कहौं कहाऊं।
सुनति तथासतु श्री गुर कह्यो। सुनि गुर वाक अनद उर लह्यो॥ २४॥

---

1. जहाँ आने-जाने का मार्ग था। 2. सबका दर्शन किया। 3. उस मार्ग पर जाते। 4. उच्च से उच्चतर अर्थात् गुरु अर्जुन देव। 5. सशरीर परमात्मा। 6 तीनों लोकों को तीन कदमों से माप लिया था (सतियुग में बावनावतार ने)। 7. रावण सहित अनगिनत राक्षसों का हनन् किया था।

बहुर लिखावनि लगे मुकंद। भरे प्रेम सों शब्द सु ब्रिंद।
जबहि राग को भोग सु आवै। तबहि भगत निज शबद लिखावैं ॥ २५ ॥
दास सिक्ख को अपर न जाइ। गुर, गुर दास, भगत समुदाइ।
जिस भवजल महिं जीव दुहेले। करहिं तिनहु हित तरन सुहेले ॥ २६ ॥
श्री मुख ते जिम उचर सुनावहिं। भाई लिखति बायु सम जावहि।
तूरन लिखहि अटक नहिं परै। थोरे काल काज बहु करै ॥ २७ ॥
आशै शबदनि को जबि जानहि। नांहि त गुर को बूझन ठानहि।
तबहि लिखहि ततकाल लिखारी[1]। श्री मुख ते शुभ जथा उचारी ॥ २८ ॥
इक दिन भानु आइ मध्याना। श्री गुर गए सुधासर थाना।
दे दरशन बहुरो मुरि आए। जाम दिवस दैठे हरखाए ॥ २९ ॥
बावन अखरी करी बनावनि। उचरति मुख ते हेत लिखावनि।
आदि अंत मरि एक शलोक। महिमा सतिगुर की सुख ओक[2] ॥ ३० ॥
लिखि पाठिकै प्रसंन भा भाई। कहिनि लग्यो बहू रुचिर बनाई।
सुंदर पाठ अरथ जहिं राखा। सुनि श्री अरजन पुन बच भाखा ॥ ३१ ॥
श्री परमेसुर कीरति ठानी। रुचिर बिभूखन तिसु गुरबानी।
जो इहु बावन बरनी[3] बनी। शुभति जराऊ हीरनिमनि[4] ॥ ३२ ॥
जेब जवाहर जर्‍यो जराऊ। तिह जेवर के सम छवि पाऊ।
पाठक भुगति मुकति की दाता। हलति पलति[5] सुख जिन रस जाता ॥ ३३ ॥
कहति सुनति बच इसी प्रकारे। भई जामनी तम घन सारे।
भाई गयो आपने डेरे। गुरु बिचारनि कीनि बडेरे ॥ ३४ ॥
जिसको पठहिं सिक्ख करि नेम। कंठ करैं नितप्रति जुति प्रेम।
जिम गीता सभि शासत्रनि सार। बेद सार तिम लेहिं निकार ॥ ३५ ॥
नरक उधारन हित अस बानी। चहियहि रची महिद सुख दानी।
जाम जामनी जागहिं जावत। इही बचार करति रहिं तावत ॥ ३६ ॥
बहुर जथा सुख श्री गुर सोए। जिन बहु दासनि के दुख खोए।
जाम निसा ते जागति स्वामी। करी सौच सभि अंतर जामी ॥ ३७ ॥
दंत धावनी[6] कीनि बनाइ। पुन गमने गुर सहिज सुभाइ।
तंबू भाई के तबि आए। चले ताहि को साथ रलाए ॥ ३८ ॥
राम सरोवर तीरथ तीर। कीनि शनान गुरु गंभीर।
पुन तिह ठां गुरदास शनाना। बसत्र पहिर करि थिति तिस थाना ॥ ३९ ॥

---

1. लिपिक, भाई गुरदास। 2. सुख का घर। 3. बावन अक्खरी (अक्षरी)। 4. जड़ाऊ हीरे-मणियों जैसी सुशोभित होती है। 5. इहलोक-परलोक। 6. दातून।

राम ताल की कोन इसान[1]। इक बदरी[2] सुभ खरी सथान।
क्रिपा सिंधु अविलोकनि कीने। तिस तरु के तर तबि आसीने ॥ ४० ॥
सनमुख बैठि गयो गुरदास। श्री गुर कीनसि बाक प्रकाश।
समां घोर कलिजुग को आयो। कटक बिकारनि को जग छायो[3] ॥ ४१ ॥
तिन को पाइ पाप नर करिईं। अंत काल त्रिच नरक सुपरिईं।
भोग महां दुख संमत घने। तहां सहाइक कोइ न बने ॥ ४२ ॥
जिन हित पापनि करति अनेक। तिन महिं तहाँ न पहुंच्यो एक[4]।
बहु दूतनि ते लहैं सजाई। भोग पाप फल पुन निकसाई ॥ ४३ ॥
शशिकर[5] सों मिलि त्रिणनि मझारी। आइ परति दुख पावति भारी।
अंन त्रिणानि महि मिलि सो जाई। पुन देही तिसको मुख खाइ ॥ ४४ ॥
दंतन तरे कषट को पावहि। पुनह उदर महिं जाइ समावहि।
तहिं जठरागनि ते तपताइ। प्रथक होइ रस तहिं मिलि जाइ ॥ ४५ ॥
जाइ नसा[6] महि रुधिर बनै है। इमही सपत धात महिं जै है।
पुनह रेत[7] सों मिलि निकसावहि। छिद्र जोनि के तबि प्रविशावहि ॥ ४६ ॥
गरम ब्रिखै दुख गिने न जांही। विषटा मूत्र मिल्यो बस तांही[8]।
जबि निकसति पुनि जोनी द्वारा। छिद्र छोटि दुख लहति अपारा ॥ ४७ ॥
इम जनमै तन पाइ बहोरी। मरहि फेरि करि करि अघ घोरी।
तनक मात्र संकट इह कहे। गिने न जाइं जितक इह लहे ॥ ४८ ॥
यांते रचहिं एक अस बानी। नित जिस पठति होहिं अघ हानी।
रिदे बसाई कमावै जोई। बहुर न जनम मरन तिस होई ॥ ४९ ॥
इत्त्यादिक बहु बाक बिलासे। उपकारी गुर कीनि प्रकाशे।
इतने महिं प्रभाति हुंई आई। भयो प्रकाश चिरी चुहकाई ॥ ५० ॥

इति स्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे त्रितिय रासे **'भगतन को आगमन' प्रसंग** बरनं नाम द्वै चत्वारिंसती अंशु ॥ ४२ ॥

---

1. पूर्वोत्तर कोण। 2. बेर का पेड़। 3. विकारों की सेना संसार में छा गई है। 4. जिनके लिए इतने पाप करते हैं, उनमें से एक भी वहां नहीं पहुँचता (अर्थात् हमारा साथ नहीं देता)। 5. चन्द्र की रश्मियां। 6. नसें, नाड़ियें। 7. वीर्य। 8. (जहाँ) मल-मूत्र मिला है, वहाँ बसता है।

अंशु ४३
सत्ते बलवंड प्रसंग

दोहरा

रामताल ईसान दिश बैठे गुरू क्रिपाल।
रचनि लगे तब सुखमनी दे सुख करति निहाल ॥ १ ॥

चौपई

प्रथम शलोक गुरू पग बंदे। कीनि मंगलाचरन बिलंदे।
प्रभु सिमरन की महिमा फेर। अष्टपदी महिं रची बडेर ॥ २ ॥
नाम महातम महिद महाना। बहू बिधि सों सतिगुरू बखाना।
ब्रह्म ग्यानी उर भगत विरागी। साध संगति जिन की लिव लागी ॥ ३ ॥
कह्यो महातम अति तिन केरा। संतनि रिपु को कष्ट बडेरा।
निरगुन आप सरगुन भी ओही। कलाधार जिन सगली मोही[1] ॥ ४ ॥
तत्त्वंमसी बाक इह भाखा। इम श्रुति सार आनि सभि राखा।
करि सुखमनी अंत महिं आपू। कह्यो महातम अधिक प्रतापू ॥ ५ ॥
सभि ते ऊच पाइ असथान। नित पाठक मिटि आवनि जानि[2]।
मैं महिमा क्या करव बखानी। गुर सरबग्ग कही सु महानी ॥ ६ ॥
प्रात समें इक मन करि पाठ। मिटहि पाप क्रित जाम जु आठ।
जनम मरन तिनको कटि जाइ। पठि प्रभु चरननि रहे समाइ ॥ ७ ॥
जहां बैठि सुखमनी उचारी। तिसके दरशन हुइ फल भारी।
सभि लिखवाइ उठे गुर पूरे। परउपकार चरित जिन रूरे ॥ ८ ॥
इसी प्रकार निता प्रति बानी। लिखवावहिं रचि रचि गुनखानी।
बहुर कथा औरे इक होई। बरनी बनै इहां अबि सोई ॥ ९ ॥
रामकली शुभ राग मझार। डोम[1] बनाई लिखी सु वार।
लद्धा सिक्ख तिनहुं ले आवा। श्री गुर को दरशन करिवावा ॥ १० ॥

---

1. संपूर्ण भौतिक सृष्टि भ्रमित कर रखी है। 2. नित्य पाठ करने वाले का आवागमन मिट जाता है। 1. 'डोम' एक नीची जाति है। गुरु के भाटों ढाढियों में सत्ता और बलवंड दो डोम भाई भी थे।

सुनि सिक्खनि बूझी सभि गाथा। सरब ब्रितांत कहहु हम साथा।
सुनि श्रोतनि ते सकल प्रसंग। कीनि उचारन हित के संग ॥ ११ ॥
हुतो डूम बलवंड महाना। सत्ता तिसको अनुज सुजाना।
दारिद ते दुहुंअनि दुख पायो। करे यतन धन हाथ न आयो ॥ १२ ॥
तबि बलवंड देश कित गयो। फिर्यो बहुत कुछ दरब न पयो।
सत्ता सतिगुर पास रह्यो है। करहि कीरतन अनंद लह्यो है ॥ १३ ॥
सुख सों कीनसि निज गुजरान। पाइ दरब करि पहिरन खान।
कितिक सिक्ख्य अरदास करावहिं। सतिगुर घर ते सभिकुछ पावहिं ॥ १४ ॥
फिरि बलवंड बिदेश मझारे। निरधन ही आयो गुरद्वारे।
दुखी होइ करि बहु अकुलायो। श्री अरजन जस कवित बनायो ॥ १५ ॥

कबित्त

आयो निज द्वारे, दया कलपतर थारे मारे बिरद बिलंद, दीन दरद बिदारो हो।
द्रोपती उधारी, गज ग्राह ते छुटारी, भीर राखशनि मारी वैरी देवनि निहारे हो[1]।
प्रह्लाद मोचन, बिलोचन सु पुंडरीक[2], पोच बलमीक जस सोच कीयो चारो हो॥
गनका गिनी है कौन तीरथ परस आई, जैसे ए उधारे तैसे मोहि को उधारो हो ॥ १६ ॥

चौपई

क्रिपा सिंधु के निकट उचारा। अबि अलंब मैं लीनि तुमारा।
सुनि श्री गुर ने धीरज दीनसि। पूरन हुइ जु मनोरथ कीनसि ॥ १७ ॥
रहु हम निकट कीरतन करो। अनुज सहत रागनि सुर भरो।
चलहि इहां गुजरान तुमारी। लहहु पदारथ हुइ अनुसारी ॥ १८ ॥
इम कहि गुर धन दीनि बिसाल। ले आइसु घर गा तिस काल।
पुनह समीप गुरू के आवा। मिल्यो अनुज युत किरतन गावा ॥ १९ ॥
सुनि सतिगुरू प्रसंन उदारा। नाम राइ बलवंड उचारा।
हरखति हुइ हुइ रुचि सों गावैं। दोनहुं भ्रात सुरस अधिकावैं ॥ २० ॥
राग रागनी करि अनुरागे। गावहिं सुंदर सभि शुभ लागे।
सिक्ख सराहन करहिं सुनंते। त्यों त्यों अहंकार करंते ॥ २१ ॥
इस बिधि केतिक काल बितायो। दिनप्रति उर हंकार बधायो।
क्रिपा सिंधु ने तिन गति जानी। होछे डूम जाति, भए मानी ॥ २२ ॥
आदि अंत की दशा बिसारी। हम बिछ्या वड, भे हंकारी[3]।
गुरू गरीब निवाज न जाना। गाइ नीक हम भए महाना ॥ २३ ॥

---

1. राक्षस-समूह को देवताओं का वैरी देखकर मार दिया। 2. जिनके नेत्र कमल समान हैं। 3. हमारे पासी ऊँची विद्या है, (यह सोचकर) उन्हें अहंकार हुआ।

हंकारति कुछ समैं बितावा। भगनी को सु व्याह तबि आवा।
युग भ्राता सतिगुर ढिग गए। मुख ते करति सुजसु को भए ॥ २४ ॥
दास जानि हम कारज कीजहि। दरब बिसाल आप अबि दीजहि।
जिसते करहिं ब्याहु हम भारा। पिखहिं सुनहिं हुइ सुजसु तुमारा ॥ २५ ॥
गुरू कह्यो चिंता दिहु टारा। श्री नानक को अतुट भंडारा।
प्रातकाल जेतिक धन आवहि। सिख संगति हम आनि चढावहि[1] ॥ २६ ॥
सो सभि ही तुम लेहु संभारी। सतिगुर कारज सरब सुधारी।
दुहुं सुनति मन आनंद पाए। गुर जस उचरति सदन सिधाए ॥ २७ ॥
जामनि बिती प्राति जब होई। दरशन करनि आइ सभि कोई।
सिख संगति दे मिलहिं अकोर। बंदैं चरन कमल कर जोरि ॥ २८ ॥
सभि दिन की पूजा गिनि जबै। भयो रजतपन इक सौ तबै।
दुहुं भ्रात को सगरे दीनि। गरबे मूढ़ नहीं तबि लीनि ॥ २९ ॥
दिए बगाइ[2] गुरू के आगे। हम सों करनि मशकरी[3] लागे।
क्या हम लैके ब्याह रचावहिं। धन बहु घर ते क्यों न दिवावहिं ॥ ३० ॥
सुनति सतिगुरू धीरज दीनि। पूरहिं श्री नानक इछ कीनि।
लिहु धन इतो, निबाहहु कार। करति कीरतन लहहु उदार ॥ ३१ ॥
सतिगुर घर ते नित तुम लेना। एक बार नहिं कीनसि देना।
सदा तुमारी सांझ हमारे। नहिं फेरहु लीजहु इहु प्यारे ॥ ३२ ॥
बहुत नंम्रता करि गुर कह्यो। तबि सभि दरब हाथ निज गह्यो।
ले गमने मतिमंद निकेत। बोलति भे गुर निंद समेत ॥ ३३ ॥
नहीं आज ते निकट पधारहिं। नहीं कीरतन कबहुं उचारहिं।
हमरो कारज सर्‌यो न कोई। गुर समीप रहि क्या पुनि होई ॥ ३४ ॥
हम कहि करि द्वै रहैं अवास। नहिं गमने श्री सतिगुर पास।
दिवस आगले जबि ही जाने। सिक्ख्यनि सों तबि वाक बखाने ॥ ३५ ॥
नहीं रबाबी चलि करि आए। जाहु सदन ते ल्याउ बुलाए।
गुर आग्या सुनि सिक्ख सिधारे। जाइ घरो तिन साथ उचारे ॥ ३६ ॥
उठहू चलहु वडभाग तुमारा। सतिगुर सिमरति तुमहु हकारा।
परम प्रसंन बिराजति जहिंवा। तुरन लिहु दरशन अबि तहिंवा ॥ ३७ ॥
सुनि सत्ते बलवंडहि कह्यो। गुर ढिग जाइ कहां हम लह्यो।
जबि हम किरतन करहिं बनाइ। आइ दीवान सरब लग जाइ ॥ ३८ ॥

---

1. सिक्ख संगत जो हमें चढ़ावा देगी। 2. फेंक दिए। 3. उपहास।

श्री अरजन विच बैठहिं आई। गुरु गुरु कहिं सभि लगि पाई।
अनिक उपाइन आनि चढावहिं। हेरि हेरि करि सुजसु अलावहिं ॥ ३९ ॥
गुरता गादी के हम मूल। नहिं जवि जाइं होइ प्रतिकूल।
तिनको गुरू न कहि है कोई। धन की पूजा कित ते होई ॥ ४० ॥
हम बिन बैठ्यो रहे इकांकी। महिमा सकल जाइ है तांकी[1]।
सुनति सिक्ख ने पुन समझाए। सुमति विसारि कहां गरबाए ॥ ४१ ॥
क्या अनबन बोलेहु मुख बानी। कहि बावर, कै जिम मदपानी[2]।
तुम सतिगुर ते शोभहु भले। करहु कीरतन तिन को मिले ॥ ४२ ॥
जगत बिखै तुमरी वडिआई। वहुरो दरब लेहु समुदाई।
उठहु चलहू मानहु बच मेरा। तुम पर गुरू प्रसंन घनेरा ॥ ४३ ॥
इस प्रकार सिख कहि वहु हार्यो। नहीं चलनि को मूढ उचार्यो।
जाइ गुरू के निकट उचारे। नहिं आवति बिनमति[3] हंकारे ॥ ४४ ॥
सुनि सतिगुर सिख और पठावा। लेनि हेत तिन सदन सिधावा।
चलहु रवावी गुरू हकारति। ढिग चलि निज दुख क्यों न उचारति ॥ ४५ ॥
नौ निध रिधि सिधि रमा[4] वडेरी। श्री गुर को रुख नितप्रति हेरी।
जिस दिशि शारति आप उसारति[5]। तिस ढिग जाति बिलम नहिं धारति ॥ ४६ ॥
अस प्रभु को तुम त्यागति कैसे। समझ सु मिलहु प्रतीखति बैसे[6]।
दोनहु भ्रात गरब धरि कह्यो। तिन ढिग हमहु कछु नहिं लह्यो ॥ ४७ ॥
नहीं जाइं अबि कैसे पास। तिन को तजि हम रहैं अवास।
केते जतन बनावहु कोई। गुर संग हमरो मेल न होई ॥ ४८ ॥
सुनि कठोर बानी तिन केरी। कह्यो जाइ गुर को तिस बेरी।
प्रभु जी नहिं मानैं किम मूढे। रह्यो गरब मदे रिदे अरूढे ॥ ४९ ॥
सुनि श्री अरजन छिमा निधाना। झूठे तिन को करनि महाना।
आप चलनि को ब्योंत बिचारा। तिनके बिछ्या को अहंकारा ॥ ५० ॥
सादर आन हैं तिनको जाइ। वहुरो दरब देहिं समुदाइ।
करहिं कीरतन गुर जस गावहिं। सिख संगति के रिदै बसावहिं ॥ ५१ ॥
चहीअहि रुचिर रवाबी हमैं। करहिं कीरतन दोनहु समैं।
इम विचार करि भे गुर त्यारी। जिन सुभाव पर कवि बलिहारी ॥ ५२ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिथे त्रितिय रासे '**सत्ते नलवंड**' **प्रसंग** बरननं नाम तीन चत्वारिंसति अंशु ॥ ४३ ॥

---

1. उसकी (गुरु की) समूची महिमा नष्ट हो जायेगी। 2. ऐसे कहते हो, जैसे पगले या मद-पान करने वाले (बोलते हैं)। 3. मति-विहीन, मूर्ख। 4. लक्ष्मी। 5. जिस ओर (वे) स्वयं इशारा करते हैं। 6. (तुम्हारी) प्रतीक्षा में बैठे हैं।

अंशु ४४

लद्धे आवन प्रसंग

दोहरा

धरमसाल सालो जहां तिसके निकट निकेत ।
आप जाइ आनहिं तिनहि गमने गुर इस हेतु ।। १ ।।

निसानी छंद

गमने श्री अरजन तबहि तिन सदन मझारे ।
करनि हेतु आदर शब्द, सो गावन हारे ।
श्री नानक ते आदि गुर सभिहिनि इह[1] राखे ।
गाइ गुरू के सबद को सिख सुनहिं भिलाखे[2] ।। २ ।।

बहुतनि को कल्लयान है सुनिबे अरु गाए ।
बहुरो आदर शबद को बीचारति जाए ।
पौर प्रवेशे सदन महिं श्री अरजन ठांढे ।
देखि न आदर उठि कर्यो उर गरब जु वाढे ।। ३ ।।

बैठि रहे दोनहु मुगध मुख धरि करि मौना ।
महिमा लखहिं न गुरू की चलि आए भौना ।
सत्ते अरु बलवंड को श्री अरजन भाखी ।
को कारन ऐसो भयो जिसते रिस राखी ।। ४ ।।

आवन जानो दरब है नहिं थिरता पै है ।
इसते रिस तुम क्यों करी पुन बहुतो दैं हैं ।
श्री नानक को कोष है कमती कछु नांही ।
शरधा धरि किरतन करहु आवहि तुम पाही[3] ।। ५ ।।

सुनि बोल्यो बलवंड तबि हम पिख्यो न कोई ।
कहां खजानो है धर्यो तुम भाखति जोई ।

---

1. इनको (रबाबियों को) । 2. चाव सहित । 3. (धन) तुम्हारे पास आ जायेगा ।

इक सहंस में ब्याहु हुइ, मो हम ने पाए।
नहिं गमनहिं तुम निकट अबि क्या लेहिं कमाए ॥ ६ ॥
अपरथान[1] राहे करि कहू निज राग सुनावैं।
लेहिं दरब उर भावतो, कहि तान रिझावैं।
जिते बरख तुम ढिग रहे बिद्या निज खोई।
सुनि रीझति जानति गुननि पै मौज न कोई[2] ॥ ७ ॥
श्री नानक पूरब भए जग किनहुं न जान्यो।
मरदाना जबि राखिओ सभि महिं प्रगटान्यो।
श्री अंगद गुरू अमर जी तुमरो पित जोई।
प्रगट रबाबी करति भे इम लखै न कोई ॥ ८ ॥
तुम ढिग हम किरतन करैं गुर महिमा गावैं।
सुनि सुनि सिख बहु देश के बसतू गन ल्यावैं।
गुरू गुरू उचरहिं तुमै पूजहिं धन आनैं।
सुनि करि हमरे राग को संगति सम मानै ॥ ९ ॥
इतनो गुन हमरो महां कुछ जान्यो नांही।
नांहि त आधी भेट को दिहु हम घर मांही।
अबि जानी परि है भले किम गुरू कहावो।
वसतु हजारहुं दरब बहु कैसे तुम पावो ॥ १० ॥
हम अबि रहि के अपर ढिग लें गुरू बनाई।
पूजा होवहि तिसि की मानहिं समुदाई।
हम अधीन करिबो गुरू नहिं तुमने जाना[3]।
अबि पीछे पछुताइ हो मनता हुइ हाना[4] ॥ ११ ॥
जहां राग हम करहिंगे गुरू तिसै बनावहिं।
तुमरे निकट न जाहिंगे एकल रहि जावहिं।
श्री अरजन चित शांति अति बहु छिमानिधाना।
निज निंदा ते छुभति[5] नहिं सुनि कछु न बखाना ॥ १२ ॥
श्री नानक ते आदि की जबि निंद सुनाई।
करि धिकार निकसे सदन रिस उर मैं छाई।

1. अन्य स्थान पर। 2. किन्तु (तुमने) (उदारता की) मौज नहीं दिखाई। 3. गुरु बनाना हमारे अधीन है, तुमने यह नहीं जाना। 4. मान्यता की हानि होगी अर्थात् जब कोई तुम्हें गुरु नहीं मानेगा। 5. क्षोभित।

बेदी कुल के तिलक की निंदा तुम कीनी।
फिट जावहिगी देहि तुम रुज ते हुइ हीनी[1] ॥ १३ ॥

इम कहि सतिगुरू आइ करि थल थड़े सुहाए।
सभि संगति इकठी भई दीवान लगाए।
सिक्खनि को आइसु दई तुम राग सुनावहु।
गावहु शबद सु तान जुति विद्या इह पावहु ॥ १४ ॥

गह्यो दुतारा सिक्ख किह, किन गही रबावं।
हुइ निशंक गावनि लगे सभ भए अजावं[2]।
बचन मानिवे गुरू को विद्या सभि पाई।
जानति हुते न राग को गावति बिसमाई ॥ १५ ॥

सुनि सिक्खनि के राग को गुर भए प्रसंना।
बर दीनो तुम प्रेम जुति हमरो बच मंना।
अबि ते बिद्दया राग की सिक्खनि महिं आई।
गावहि सुनहिं सु प्रीत धरि लें शुभ गति पाई ॥ १६ ॥

डोम जाति पछुताइ हैं त्रिशना डहिकाए।
लीए सबद घर घर फिरहिं नहिं हुई त्रिपताए।
पाइं अनादर जित किती बिन कहे सु जावें।
तऊ न सिख मुख लाइ हैं दुख लहि अकुलावें ॥ १७ ॥

गुर सिक्खनि को बर दियो बिद्दया शुभ पाई।
स्राप डूम मूढनि लह्यो भावी करिवाई।
नितप्रति किरतन सिख करहिं त्यों त्यों शुभ गावें।
संगति को बड प्रेम हुई मन शबद टिकावें ॥ १८ ॥

पटने की संगति महां दरशन हित आई।
करि वंदन सतिगुरू को बहु भेट चढ़ाई।
सत्ते अरु बलवंड को तिन बूझनि ठाना।
कहां गए प्रभु जी अबै नहिं करते गाना ॥ १९ ॥

गुर बोले सो फिटि गए नहिं पच्यो हंकारा।
गरबंति मूरख निंद कहिं, लहिं कषट उदारा।
तिन के मसतक जो लगहि सो सिख दुख पावहि !
निकट हमारे तिनहु की नहिं अरज करावै ॥ २० ॥

---

1. निकृष्ट। 2. आश्चर्यचकित।

करहि सिपारश जबहि को हम देहिं सजाई ।
तिसको मुख काला करहिं सिर को मुंडवाई ।
बहुर चढावहिं गधै पर पुरि फेरहि सारे ।
ढोल वजहि तिह संग तबि नर नारि निहारे ।। २१ ।।

सुनि श्री अरजन के बचन संगति बिसमाई ।
सीस धुनहि होइ बुरी पुन पुन पछुताई ।
गुर आइसु इस भांत की सभि महिं बिदतानी ।
तिनके मुख को लगहि नहिं बोलहि नहिं बानी ।। २२ ।।

उपज्यो रोग शरीर महिं थोरन दिन मांही ।
दुख दारिद ते ग्रसति मे मुख कितहूं नांही ।
जहिं कहिं जाचनि जाति जबि, इर दिशि नहिं देखैं ।
क्रोध होइ गारी कढहिं दैबो किस लेखै[1] ।। २३ ।।

करहिं अनादर स्वान सम घर ते निकसावैं ।
वहिर जाइ, तहिं भी तथा, नहिं आदर पावैं ।
परमेशुर अरु सतिगुरू इन ते हंकारे ।
दुहि लोकन दुख पाइं सो, को नहीं उबारे ।। २४ ।।

इन हूँ की शरनीं परे बिनती भनि दीना[2] ।
मन भावहि बखशहिं तिसहि नतु दुख महिं लीना ।
सगरे जग त्यागे जबहि नहिं बैठनि पावैं ।
भीख सरीखी नहिं परहि त्रिसक्रित जित जावैं[3] ।। २५ ।।

पछुताए दुख पाइकै, गुर महिमा जानी ।
सिक्ख्यनि पहि बिनति भनति किनहुँ नहिं भानी ।
कारो मुख करिवाइ जो सो करहि बखाने ।
तुम स्रापे श्री सतिगुरू हंकार जि ठाने ।। २६ ।।

बैठ बिसूरति घर बिखै हमने क्या कीना ।
अए आप श्री सतिगुरू नहिं आदर दीना ।
कहि कठोर निंदा करि क्या थे हम कीरे[4] ।
झूठे धारि गुमान को नहिं लख्यो गहीरे ।। २७ ।।

---

1. देना तो दर-किनार लोग क्रोध से गाली निकालते । 2. दीनता-पूर्वक प्रार्थना करे । 3. भिक्षा भी नहीं पड़ती, जहां जाते हैं, तिरस्कार होता है । 4. तुच्छ, कीड़े ।

पातिशाहि पंचे गुरू सम भानु प्रकाशे।
जग महिं अर्‌यो न अग्र को रिपु स्राप बिनासे।
मूरति इही खुदाइ की जिस को अपमाना।
हम को सुख किस होइ है गुर स्राप बखाना ॥ २८ ॥

भावी ने प्रेरनि कर्‌यो उर भयो हंकारा।
हम हैं सभि ही ते बडे, इम भा मदभारा।
गुरू सभा सनमान ह्वै हम जर्‌यो न सोई।
घोर आपदा मैं परे नहिं रक्ख्यक कोई ॥ २९ ॥

इक दिन बैठ झुरते मन महिं इम आई।
लद्धा सिक्ख लहौर मैं तिह बड बडिआई।
कई बार गुरदास ने शुभ स्तुति उचारी।
तिसके सम दूसर नहीं अस परउपकारी ॥ ३० ॥

सो बखशावहिगो हमैं निशचै अस ठानी।
लवपुरि को गमने जुगल सभि करि मदहानी[1]।
एक निसा बसि पंथ महिं पहुंचे तिस थाई।
फिरति मिलहिं सिख गरी महिं इत उत टरि जांई ॥३१॥

को सिख बदन दुराइ निज अंचर को डारै[2]।
नहिं दिखाइ मुख आपनो, नहिं तिनहुं निहारै।
महां अघी सम जानिकै बोलै नहिं कोई।
इह गुर ते स्रापति महां कित मिलै न ढोई ॥३२॥

पहुंचे लद्धे के सदन किन जाइ सुनावा।
सत्ते जुत बलवंड जो तेरे ग्रिह आवा।
दौरि पौर पट भेरिकै अंतर हुइ बैसा[3]।
फिटके[4] श्रीअरजन गुरु दुख बाढ्यो तैसा ॥३३॥

पौर खरे हुइ कौर लगि[5] बहु बिनै बखानी।
त्राहि त्राहि शरनीं परे सुनि सिफत महानी[6]।
गुर सिक्ख्यनि महिं नाम तुव कहिं पर उपकारीं।
करि सहाइता दीन लखि कटि ब्रिथा[7] हमारी ॥३४॥

---

1. सारा अहंकार छोड़कर। 2. कोई आँचल डालकर मुख छिपा लेता। 3. दौड़कर ड्योढ़ी का द्वार बंद कर अन्दर बैठ गया। 4. तिरस्कृत। 5. कोने में लगकर। 6. तुम्हरी महान गुणवत्ता सुनकर। 7. व्यथा।

लाज नाम की राखीए अरदास सुनीजै ।
एक वेर श्री गुर निकटि हमरी सुधि दीजै ।
आन थान तुझ बिना नहिं जिसके ढिग जावै ।
दर तेरे हम पर रहे[1] करि ज्यों उर भावै ।।३५।।

मारहु किधों जिवाइ दिहु हम तोहि अधीना ।
घर निकसे तक[2] शरन तुव की जहि दुख हीना ।
इस प्रकार बहु बेनती करि केतिक काला ।
बैठि रहे दर पर तबहि, हुई लजति बिसाला ।।३६।।

लद्धा चितवति चित बिखै मैं किय उपकारा ।
सभि तजि मेरे दर परे इन कारज भारा ।
कहनि बनहि नहिं निकट गुर मुख करि हैं कारो ।
किम कारज इन को बनहि नहिं को उपचारो ।।३७।।

बहुर बिचार्‌यो आपही करिहौं मुख कारा ।
चढ़ि गरधब पर जाइ हौं गुर के दरबारा ।
तौ कहिबो नीको अहै बनि है इन काजू ।
देखहिं प्रथम सजाइ को गुर देंहि निवाजू[3] ।।३८।।

करि निशचै दर खोलि कै अंतर प्रविशाए ।
धीर दीनि करि हौं जतन गुर इच्छ पुराए ।
तिस दिन राखे पास निज पुन उठ्यो सकारा ।
पुरब मुंड मुंडाइकै मुख कीनसि कारा ।। ३९ ।।

गरधब करि भारा लियो[4] हुइ तिस असवारो ।
संग ढोल बजवाइओ नर पिखहिं हजारो ।
मग निस बसि गुर को पुरी आगल दिन आयो ।
प्रथम प्रकरमां नगर की करि के प्रविशायो ।। ४० ।।

कौतक हेतु बिलोकिबे नर भे समुदाया ।
गरी गरी फिर नगर महिं निज वेख[5] दिखाया ।
नर नारी बालक तरुन ब्रिध सकल निहारा ।
जसु पस्‌रयो सभि 'धंन' कहिं किय बड उपकारा ।। ४१ ।।

---

1. हम तुम्हारे द्वार आन पड़े हैं । 2. जानकर, देखकर । 3. पहले दण्ड भुगतान देखकर गुरु निवाज़ेंगे अर्थात् क्षमा कर देंगे । 4. गधा भाड़े पर लिया । 5. वेष ।

कौन सकै करि इस बिधि पर हेतु बिसाला ।
धंन गुरु के सिक्ख हैं जो परम क्रिपाला ।
हान लाभ पति आपनी नहिं नैंक बिचारा ।
पूरन श्री गुर बाक को इन बेख सुधारा ॥ ४२ ॥
ढोल बजै सुनि शबद को हेरहिं नर नारी ।
गरी गरी फिरि सभि पुरी सिख पर उपकारी ।
थड़े सुहावति गुरु जी इम सुनि कै काना ।
तित को गरधब प्रेरि कै आयो समुहाना[1] ॥ ४३ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिथे त्रितिय रासे **'लद्धे आवन' प्रसंग** बरननं नाम चतर चत्वारिसती अंशु ॥ ४४ ॥

1. सामने ।

अंशु ४५
सत्ते बलवंड प्रसंग

दोहरा

लद्धा परउपकार हित शंक नहीं मन कीनि ।
इनको बखशहिं श्री गुरु क्या मेरो हुइ हीन ॥ १ ॥

स्वैया छंद

सीस मुंडाइ बाल पुन बिरधहिं, मुख कारो लिउं नीर पखार ।
पर कारज कांयां जे आवहि[1] सफल जनम होवहि तिस बार ।
रिदै बिखै चितवहि उपकारहि सतिगुर चरन प्रेम को धारि ।
अधिक भीर संग ढोल बजति बड शोर होति बोलति नर नारि ॥ २ ॥

आयो निकट सुनी धुनि श्री गुर बूझनि लगे लोक जे तीर ।
को आवति बड शोर मचावति ढोल बजावति लखियति भीर ।
कौन देश की संगति है इह सभि लखि पूछति गुनी गहीर ।
हाथ जोरि सिख कही बारता' सिक्खी धंन सिदक प्रभु धीर ॥ ३ ॥

लद्धा गुरमुख पर उपकारी बाक गुरु ते वेख बनाइ ।
गधे अरूढ्यो, करि मुख कारो, सीस मुंडाइ ढोल बजवाइ ।
फिर्यो नगर तिस के हित हेरनि आवति लोक ब्रिंद बिसमाई ।
इतने महिं सनमुख भा गुर के, दरशन देखति प्रेम बधाइ ॥ ४ ॥

हाथ बंदि करि बंदन कीनसि पद अरबिंदहि द्रिषटि लगाइ ।
गरधब चढ्यो सतुति को उचरति क्रिपा निधान नाम तुम गाइ ।
पतितनि पावन, अधम उधारन, गुरू गरीब निवाज अलाइ ।
दास ब्रिंद बखशिंद बिलंदे चंद मनिंद अनंद उपाइ ॥ ५ ॥

रिस प्रसंनता[2] सफल तुमारी, छिमहु भूल निज दास पछानि ।
आग्या मानि प्रथम की इम किय, अपर सजाइ उचित कुछ जानि ।

---

1. पराए कार्य के लिए जो शरीर (काम) आए । 2. क्रोध और कृपा ।

सो दीजहि नहिं देरि करीजहि, पुन मैं अरज गुजारनि ठानि ।
दीन बंधु प्रभु दयासिंधु गुर बुधि अंधे कहु[1] दे द्रिग ग्यान ।। ६ ।।
श्री अरजन अवलोकनि कीनसि लोचन जल पूरन हुइ आइ ।
गुर मारे कउ सिक्ख्य बचावहिं, सिख मारहि तिस नहिं कित थाइं ।
तपत हतहि तरु जल मिलि जीवैं, जल ते हति होइ[2] तबि सुसकाइ[3] ।
घाव सुगम लागे हुइ जीवन[4], छल ते बचहि न प्रान नसाइ[5] ।। ७ ।।
सिख संगति को इम सुनाइ करि भए प्रेम बसि कह्यो न जाइ ।
पठे दास खर ते उतरायहु पुन शनान नीके करिवाइ ।
पट पहिराइ निकट तबि आयो गुर पगि पंकज रहि लपटाइ ।
बूझ्यो कहु लद्धा किस कारन इह अनबन तन बेख बनाइ ।। ८ ।।
तुम अंतरयामी सभि जानों छपीं बारता जग नहिं कोइ ।
आग्या मानि तऊ मैं भाखौं हुते आपके बच किय सोइ[6] ।
करहि अरज तिस गधे चढ़ावहिं, मुख कारो ठानहिं, पिखि लोइ[7] ।
मुंड मुंडाइ सजाइ देहि अस, यांते इन संगी नहिं होइ ।। ९ ।।
मैं रावर के बचन कमाए पूरब करि कुबेख[8] फिरि आइ ।
अरज करौं पशचात क्रिपा निधि सुनहु गुरू बखशिंद सुभाइ ।
सत्ता अरु बलवंड दुखित अति चित को गरब गयो बिनसाइ ।
भए रंक रोगी बहु आतुर होति दीन जिस किस पहि जाइ ।। १० ।।
मूल छिमापन करहु गुरू जी ! निज पग पंकज लेहु मिलाइ ।
श्री अरजन सभि सभा सहत तबि उपकारी बड लख्यो सुभाइ ।
इतो खेद क्यों प्रापति होवा, जे हम को तूं कहति बनाइ ।
बखश देति तुव बाकनि ते हम बिन हंकार भए लखि पाइ ।। ११ ।।
बिद्दया मद ते मूरख अंधे उचित सजाइ दुहनि को चीन ।
करे निकासनि गरब हरनि को अबि तैं तिन की रच्छ्या कीनि ।
लेहु बुलाइ उबारो दुख ते जे हंकार भयो उर हीन ।
लोह पाइ करि तपत अगनि की म्रिदुता गहहि[9], सु लखहु प्रबीन ।। १२ ।।

---

1. विवेक-शून्य को । 2. जल का मारा । 3 सूख जाता है । 4. स्वाभाविक चोट खाकर व्यक्ति बच जाता है । 5. किन्तु छल से मारा मृत्यु को प्राप्त होता हैं । 6. आपके ही वचनानुसार किया है । 7. लोग देखेंगे । 8. बुरा वेष । 9. लोहा भी अग्नि-ताप से नरम हो जाता है ।

तबि लद्धे हरखति नर भेज्यो श्री सतिगुर ढिग लए बुलाइ।
गुर अंचर कर जोरि दीन कहि शरन शरन राखहु सुखदाइ।
परे अगारी गहि पग पंकज द्रिग ते निकरति जल घिघिआइ।
छिमहु छिमहु प्रभु हमहु आप अबि करी उचित इह दई सजाइ ॥ १३ ॥

श्री अरजन तबि कह्यो तिनहु कहु सिख लद्धे को भा उपकार।
इसके कहे बखश तुम दीने, बहुर बिकार न करहु हंकार।
अधिक हुते अपराधी दोनों श्री नानक गुर निंद उचारि।
तऊ छिमा इसने करिवाई नतु दुह लोकनि कपट हजार ॥ १४ ॥

पुन लद्धे बहु बिनती कीनसि तन अरोग इनके करि देहु।
गावनि उचित सभा महिं तबि हुइं पूरब समसर जबहि बनेहु।
श्री अरजन भाख्यो इन दोइन गुर निंदा किय भा दुख देहु।
सो अपराध निवारनि हुइ जबि, मिटहि रोग तबि निरसंदेहु ॥ १५ ॥

जिस मुख ते निंदा इन भाखी तिसते गुर जसु करहिं बखान।
इह उपकार रोग तन बिनसैं, होहि शरीर सु प्रथम समान।
तब लद्धे दोनहु संग भाख्यो अबि दुख भंजनि[1] करहु शनान।
ब्रह्म रूप श्री नानक बरनहु गुर बनि तार्‌यो जिनहु जहान ॥ १६ ॥

भिन भिन पुन पंचहुं गुर की निज बानी ते कीरति गाउ।
हुइ निषकपट गरब को परहरि सति संगति महिं बहुत समाउ।
सुनि हरखे जनु अम्रित बरखे, दुख दारिद उर सरब बिलाउ।
श्री दुखभंजन मज्जन कीनहु सिमरि नाम श्री गुर करि भाउ ॥ १७ ॥

श्री अरजन कै पुन हुइ सनमुख ठांढे भए सु दरप निकंद[2]।
रुचिर रागनी रामकली विच करी वार उर धारि अनंद।
पौड़ी चार मझार कह्यो शुभ श्री नानक को सुजस बिलंद।
हुती जथा मति तथा कथ्यो तबि होनि क्रितारथ स्वारथवंद[3] ॥ १८ ॥

इक इक पौड़ी चतुर गुरू की सुंदर कीरति कही बनाइ।
श्री अरजन परतक्ख अग्र थित हाथ जोरि सभि दई सुनाइ।
भए प्रसंन वार को सुनि कै तबि श्री ग्रिंथ विखे लिखवाइ।
रोग छीन भा तन नवीन, शुभ, लोक बिलोकि रहे बिसमाइ ॥ १९ ॥

---

1. 'दु:ख-भंजनी' एक स्थान है, जहाँ पर स्नान करने वाले के रोग-मुक्त होने का वरदान प्राप्त है। 2. अहंकार दूर करके। 3. क्रतार्थ होने का स्वार्थ रखने वाले।

पठहि सुनहि जो वार, प्रेमकरि तन के रुज[1] तिसके हुइं हान ।
नितप्रति नेम करहि मुख उचरहि गुर की शरधा वधहि महान ।
मन बांछति को देति गुरू जसु धरहि प्रेम करि रूप जु ध्यान ।
अस को वसतु जो हाथ न आवै पाठ करै श्री ग्रिंथ महान ।। २० ।।

सभा लगी श्री अरजन जी तबि लद्धे की उपमा बड कीनि ।
धंन सिक्ख्य पुन परउपकारी पर हित जिनहु लाज तजि दीन ।
कर न सकहि को कर्यो सु ऐसे, जाने भए रबाबी दीन ।
द्वै पुरि बिखै कुबेख दिखायो अरज गुजार कीए दुख हीन[2] ।। २१ ।।

सार महा सिमरनि सतिनामू कार महां करिबे उपकार ।
इन दोनहु बिन मानुख तन धिक समो बितावहि लखहि न सार ।
पूछ सींग बिन पसू जनम तिन, आए बाद बीच संसार ।
अंत समें जमदूत गहै द्रिढ़, झूरति गमनहिं द्वै कर झारि ।। २२ ।।

पुन दान, तप, मख[3] को करिबो, हेति न परउपकार समान ।
कलमल करनि अनेकनि गंती क्रितघण के सम कोइ न जानि ।
रहनि अहिंस, धरम सभि कीने, हिंसा करे पाप पहिचान ।
यांते नित चितवहि उपकारू धन ते तन ते मन ते ठानि ।। २३ ।।

नर शुभ सभा सभै सुनि श्रौननि[4] गुर बाकनि पर निशचा कीनि ।
सत्तिनाम को सिमरन ठानैं उर उपकार करनि हित चीन ।
पुन लद्धा दिन केतिक रहि करि जाची बिदा होइ करि दीन ।
दासनि दास दयानिधि जानहु औगुन के समेता गुन हीन ।। २४ ।।

सिक्ख्य तुमारो कहै जगत मुझ लाज बिरद की राखनहार ।
सुनि प्रसंन श्री अरजन होए कीनसि बिदा सु म्रिदुल उचार ।
पद अरबिंद बंदना ठानी कीनि प्रदच्छन फिरि चहुं बार[5] ।
पुन हरिमंदिर अंदर गमन्यो तहिं बंदन कीनसि हित धारि ।। २५ ।।

लवपुरि को गमन्यो उर हरखति गुर जसु दीरघ करति बखान ।
सगरे नगर उचारति जित कित निज सिक्खनि पर करुना ठानि ।
इत श्री अरजन रचति ग्रिंथ नित लिखति जाति गुरदास सुजान ।
राग बसंत बनाइ शबद सभि लगे वार करिबे सुखदान ।। २६ ।।

---

1. रोग । 2. दु:ख दूर किए । 3. यज्ञ । 4. शुभ सभा में सब मनुष्यों ने कानों सुनकर । 5. चार बार परिक्रमा की ।

पौड़ी तीन उचारनि कीनी सूपकार तबि हुं चलिआइ।
प्रभु जी भोजन अबि तयार है रावर की जिम होइ रजाइ।
हित अहार के आदर करिवे श्री गुर हटे, न बहुर बनाइ[1]।
अच्यो अनाइ त्रिपत तबि ह्वै करि निज संगति महिं इहु विदताइ ॥ २७ ॥
तितनी रही न बहुर बनाई अपर ख्याल महिं गे बिरमाइ[2]।
सत्ते अर बलवंड कथा को केतिक सिक्ख कहै इस भाइ।
श्री गुर अमर हदूर भए हैं तिनहु निकासे पुनहु मिलाइ।
सो मिथ्या इम लखी जाति है नीके निरनै कीनि बनाइ ॥ २८ ॥
रची वार गुर कीरति की तिन लिखे बीच पंचे पतिशाहु।
प्रथम हुते जे कहति कुतो इम[3], यांते श्री अरजन के पाहि।
नहीं संदेह कीजीए कोई सिक्ख बिचारहु निज मन मांहि।
कवि संतोख सिंह सिमरहु सतिगुर कथा सुनो चित उचटहु नांहि ॥ २९ ॥

दोहरा

नितप्रति श्री अरजन गुरू बानी रचहिं नवीन।
परमेशुर को सुजसु बहु के सुभ संत प्रवीन ॥ ३० ॥
सिमरन करि सतिनाम को नर तन वाद न खोइ।
करो सफल लगि कै अचल तुम को सभि सुख होइ ॥ ३१ ॥
बहुत भांति के सुजस जुति लिखवावहिं उपदेश।
अपने मन पर कितिक कहिं सिक्ख्यनि हरनि कलेश ॥ ३२ ॥
लाखहुं नर पठि सुननि करि गुरमति को उर धारि।
छोडि सकल जंजाल को होए भवजल पार ॥ ३३ ॥

चौपई

श्री अरजन सम पर उपकारी। हुयो न है, होहि न हितधारी।
दोनो बडे जहाज बनाए। भरिभरि पूर सु पार लंघाए ॥ ३४ ॥
श्री अंम्रतसर विच हरिमंदिर। रचना बहु बनाइ करि सुंदर।
श्री ग्रिंथे साहिब रचि दूजा। निज थल थित करि ठानी पूजा ॥ ३५ ॥
इन दोनहु को आश्रित ह्वै कै। करति जीवका[4] बहु सुख पै कै।
इम इस लोक भला बहु केरा। कर्‌यो गुरू अरजन हित हेरा ॥ ३६ ॥

---

1. पुनः रचना नहीं की (आगे 'वार' नहीं लिखी)। 2. रम गए। 3. जो हम पहले हुए होते, तो कैसे कहते (इस भाव से)। 4. जीवन-निर्वाह करते हैं (सिक्ख इनके आश्रय)।

शरधा धरहिं सुधासर मज्जहिं। पाप कमाते सभि ही भजहिं।
हरि मंदिर महिं हरि जसु गाए। कैधौं बैठि सुनहिं मन लाए ॥ ३७ ॥
अघ को तजि करि शुभ गति लीना। इम परलोक भला गुर कीना।
यांते इन समसर उपकारी। अपर न सुन्यो न कबहुं निहारी ॥ ३८ ॥
धंन गुरू अरजन गुन खानी। परउपकार रैन दिन ठानी।
बार बार तिन के पग नमो। करहु सहाइ अंत के समो ॥ ३९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे द्वितीअा रासे '**सत्ते बलवंड प्रसंग**' बरनंन नाम पंच चत्वारिंसती अंशु ॥ ४५ ॥

अंशु ४६
कान्हा आदिक भगति आवन प्रसंग

दोहरा

बिदा होइ लद्धा गयो पुरि लहौर की ओर।
सदन प्रवेश्यो जाइ करि मिले सिक्ख कर जोरि ॥ १ ॥

सवैयाछंद

करहिं परसपर नमो भाउ, धरि बूझहिं कुशल बहुर गुर गाथ।
किम परचति सिक्ख्यनि दे दरशन, किस थल बैठति हैं जग नाथ।
तुम चलि गए प्रसंग भयो किम, कह्यो कहां तबि श्री मुख साथ।
कौन बेस ते मिले प्रथम गुर हाथ जोरि जबि टेक्यो माथ ॥ २ ॥
लद्धे कह्यो कहां लगि कहि हौं श्री अरजन के गुन बिसथारि।
एक जीह क्या बपुरी समरथ उचरे जाइं न, धरौं हजार[1]।
नीरध से गंभीर धीर धरि सदा सुशील छबीले चारू।
करति उधारनि नरनि हजारनि इह तो सदाबरत बिवहार[2] ॥ ३ ॥
गुन अनगिन, क्या गिनती भनि हौं, इक गुन पिखि मैं हुइ बलिहार।
धन ते तन ते मन ते दिन प्रति करुना कलित करति उपकार।
प्रथम सुधासर सिरज्यो सुंदर शोभति चहुं दिशि ते इकसार।
कलमल टारहिं मज्जन धारहिं नाम उचारहिं संझ सकार[3] ॥ ४ ॥
अबि श्री नानक आदि जि बानी अनिक जतन ते करि इक थाइं।
तिसहि मिलाइ शब्द समुदाइ जि रचति रुचिर नितप्रति सुखदाइ।
ठट्यो चहति हैं बीड़ बडेरी बनहि ग्रिंथ साहिब छबि पाइ।
आप अछत[4] अरु पाछे कलि महिं जिसको पठि सुनि मोह नसाइ ॥ ५ ॥
गाडीमग[5] सिक्खी बिसतारी मनो निशान तुंग छबि धार।
पठति सुनति मन द्रवति सुचित हुइ शुभ कलयान बताइ सुखारि।

---

1. बेचारी एक जीभ से क्या उचारू, हज़ार (जिह्वाएँ) भी हों, (तो भी) कहे नहीं जा सकते। 2. सदैव (उनका) यही व्यवहार है। 3. साँझ-सवेरे। 4. अपने रहते। 5. प्रशस्त-पथ।

सिक्ख सिमरि सतिनाम सुखारे सकल सुखनि लहि श्रेय उदार ।
करामात जाहर जिस महिं नित करति गुरू अबि इह उपकार ॥ ६ ॥

भगत ब्रिंद आवति नितप्रति ढिग, सो बानी निज नई बनाइ ।
प्रथम शबद बिच राग गुरनि के पीछे भगत अपनि लिखवाइं ।
लिख्यो गयो बहु, तनक रह्यो[1] अबि इसी ख्याल महिं गुरबिरमाइ ।
पुरि महिं लद्धे सकल सुनाई सुनि सुनि जहिं कहिं भी बिदताइ ॥ ७ ॥

लवपुरि तिसी समें महिं होतो चतुरभगत शुभ पंथ मझार ।
इक कान्हा छज्जु कहिं दूजो, शाहि हुसैन, सु पीलो चार ।
बिथर्यो[2] गुर बिरतांत नगर महिं, इनहिं सुन्यो तबि सरब प्रकार ।
भगतनि बानी लिखीं ग्रिंथ महिं इम सुनि इन के छोभ उदार ॥ ८ ॥

श्री नानक गादी पर बैठे श्री अरजन परताप महान ।
सुमतिवंत, सरबग्य, सधीरज, सद गुन कहिं लगि करैं बखान ।
अपर भगत जे सरब हकारे, हमहिं हकारनि क्यों नहिं ठानि ।
इह क्या कीनि-बिचारति चित मैं भए संदेह कुछक रिसवान ॥ ९ ॥

इक दिन चारों मिले परसपर इस ब्रितांत हित करति उचार ।
बन्यो ग्रिंथ साहिब परमारथ गिने गए जे भगत उदार ।
सगल जगत महिं इहु बिसतीरहि जिम सिक्खी जहिं कहिं बिसतार ।
हमरो नाम लिख्यो नहिं जे तहिं बिदतहि नहिं पाछे संसार ॥ १० ॥

इसको जतन करहु जिम होवहि, अपने शबद लिखावो तांहि ।
कान्हे भन्यो कौन सुधि ल्यायो प्रथमै निरनै करि लिहु तांहि ।
कहि पीलो लद्धा सिख इक है, गा उपकार हेतु गुर पाहि ।
तिसने देखति सुन्यो प्रसंग इह निशचै कीनसि, मिथ्या नाँहि ॥ ११ ॥

शाहु हुसैन भन्यो तिह सिक्ख को बूझहु अपनि हदूर बुलाइ ।
बहुर उपाव करहिं जिम होवहि सरब प्रसंग सु देय सुनाइ ।
तबि छज्जु ने दास पठायों लद्धा कर्यो अवाहनि[3] जाइ ।
गमन्यो भगतनि के ढिग हरखति, मिल्यो चरन पर सीस निवाइ ॥ १२ ॥

कहु लद्धा सतिगुरू बारता किस परचे महिं दिवस बिहाइं ।
क्या देख्यो तैं तहां जाइ करि सो हम को सभि देहु सुनाइ ।
हाथ जोरि करि कही सरब तिन अबि बानी को रहे बनाइ ।
रैन दिवस हुइ इसके ततपर नाना भांतिनि शबद लिखाइं ॥ १३ ॥

---

1. थोड़ी रह गई है । 2. फैल गया । 3. आह्वान ।

पंच गुरनि की प्रथम लिखनि हैं तिन पीछे सभि भगत लिखाइं।
आदि कवीर प्रतच्छ होइ करि नवें शबद निज देति वनाइ।
गन रागनि महिं लिखति जाति बहु है भाई गुरदास जिनाइ।
बन्यो ग्रिंथ बड जनु जहाज है भउजल ते पार जु उतराइ ॥ १४ ॥
बहुत बन्यो, कुछ रह्यो तनक अवि, केतिक दिवस बिखैं हुइ त्यार।
सुनि कान्हा पूछनि पुन लाग्यो भगत आगवन किसू प्रकार ?।
गरू अवाहन ते सो आए, किधौं अवाहन बिन तिथवार।
को दरसति है तिन सरूप को, कित वैठे इह सकल उचार ॥ १५ ॥
लद्धे भन्यो इकंत भए गुर बन महिं वहिर सु डेरा लाइ।
प्रथम राग श्री राग बखान्यो तवहि भगत आए समुदाइ।
श्री अरजन सों करि संवाद शुभ पुन गुरदास सरूप दिखाइ।
तिस ढिग कहति लिखति सो जावहि इस प्रकार अवि लौं लिखवाइ ॥ १६ ॥
इम कहि लद्धा गयो सदन को पुनहि परसपर करति विचार।
बिना हकारनि ते सो पहुंचे, तुम भी चलहु सु इसी प्रकार।
निजबानी श्री ग्रिंथ चढावो रहै नाम थिर जगत मझार।
मन आशै को सभि ही जानहिं लिखवावहु कहि सबद मझार ॥ १७ ॥
इम सलाह करि निसा बिताई भई प्रात कान्हा असवार।
तीनहुं अपर गमन को ठान्यो, जिन के उर कुछ कुछ हंकार।
पंथ जामनी एक बिताई अगले दि गुर पुरी मझार।
आइ प्रवेशे, मान विशेषे[1], पहुंचे श्री गुर के दरबार ॥ १८ ॥
हरिमंदिर सुंदर के अंदर श्री गुर शोभति बहु तिसकाल।
लखे मान जुत भगत आगवन आगै ठांढे भए क्रिपाल।
बंदन ठानि परसपर हरखति, कहि बैठारे सभि हित नाल।
श्री अरजन सादर कहि माधुर सभिहिनि करुना कीनि बिसाल ॥ १९ ॥
दरशन दीनि क्रितारथ कीनसि, परमारथ मन भीनसि नीति।
बिचरहु नरनि उधारनि कारन, करे निहारनि हुइ सुख चीत।
मिलहु सधारन मोहु बिदारन[2], दारुन दुख टारनि की रीति।
तारन तारनि शरन प्रतिपारन, जीत बिकारनि ते विप्रीत ॥ २० ॥
कारन कवन आप आगवनू गुर भवनू मिलि करि समुदाइ ?।
सभि महिं अधिक हंकारी कान्हा कानि सुनति जसु मन उमगाइ।

---

1. विशेष अभिमान सहित। 2. साधारण मिलन द्वारा भी मोह नाश करते हैं।

आवनि हेतु निकेत बिखै तुम हमरो भयो लखहु इस भाइ ।
सुन्यो तहां बड रच्यो ग्रिंथ जी बानी पंच गुरूनि बनाइ ।। २१ ।।
गन भगतनि के शबद लिखाए सभि रागन के बिखै बनाइ ।
तिन सभि के नहिं देह ग्रेह अबि, जग महिं बिदत नहीं बहु थाइं ।
बाद रहैं ठानति बहु हिंदू तुरक न चीनि सकहिं समुदाइ ।
कहां भए नर लखहिं न तिनको हुते कौन, किम भए सुभाइ ।। २२ ।।
हम जीवति आनंद रस पीवति बिदत सु थीवति जगत मझार ।
जानहिं राउ रंक महि सगरे मानहिं बचन चरन सिर धारि ।
आग्या लखैं बेद सम हमरी, करि नहिं सकहै को हटकार[1] ।
इम बिसतरति सुजसु सभि दिशि महिं, तुम क्या नहिं जानति इह सार ।। २३ ।।
बानी लिखी म्रितक जे हुइगे, हम जीवति की सुधि नहिं लीनि ।
जे हमरे तुम शबद लिखहु नहिं, किम प्रमान हुइ ग्रंथ नवीन[2] ।
सुनहिं न, पढहिं न, कह्यो न मानहिं, लिखहिं न जे नर अधिक प्रबीन ।
यांते नीकी बाति न कीनसि तुमहो जग गुर, लीजहु चीनि ।। २४ ।।
बोले श्री अरजन हम बानी जित कित हुती करी इक थाइं ।
ब्रिंद भगत सो लखि करि आए तिन सों कह्यो सु हम समुझाइ ।
गुरबानी अनुसार बनाई देखि मिलति को दई लिखाइ ।
तुम अबि आए करहु शबद निज सुनैं उचित तबि लेहि चढ़ाइ ।। २५ ।।
ब्रह्मग्यान को मन अभिमाना सुनि कान्हा उर हरखति होइ ।
जान्यो गुरु अनुसारि हमारे, मैं क्या लघु हों लखहिं न जोइ ।
बानी करौं बनावन अपनी ब्रह्मग्यान के बिखै परोइ ।
बिदतहि जित कित चित इम चितवति बोल्यो सबद अहंब्रह्म सोइ ।। २६ ।।

कान्हउ वाच

ओही रे मैं ओही रे

जांकउ बेद पुरान सभि गावैं खोजति खोज न कोई रे ।
जाको नारद सारद सेवैं, सेवैं देवी देवा रे ।
ब्रह्मा बिसनु महेस अराधहिं सभि करदे जाकी सेवा रे ।
कहे कान्हा अस मम सरूप है अपरंपर अलख अभेवा रे ।

---

1. टालना, हटाना । 2. यह नवीन ग्रंथ क्योंकर प्रमाणित माना जाएगा (हमारी वाणी के बिना) ।

सवैया छन्द

इम आशै जबि अपन जनायहु श्री अरजन सुनि दीनि हटाई ।
हमरे इहु परमाण न हुइ है, पठै सिक्ख हंकार वढाइं ।
है तो सही, तऊ नर कलिके बिगरहिं लगहिं बिकारन धाई ।
गति कित रही नरक हुई प्रापत, यांते हम नहिं इसै चढाइं ॥ २७ ॥

इस पर सुनि द्रिषटांत हमारे, ब्रह्म ग्यान अरु घ्रित समान ।
कफी[1] हंकारी खाइ ग्रहन करि छाती बोझ बधहि, बड भान ।
पित्ती सहत बिकारी[2] जे नर लिखै लगै अतिसार महान ।
पुषट होन गति प्रापति होइ न रोगी कषट नरक पहिचान ॥ २८ ॥

सुखतो रह्यो महांदुख पावहि यांते हमरे नहीं प्रमान ।
सो ब्रह्म ग्यान घ्रित को ले करि मिशरी भगति मिलावन ठानि ।
सुखदायक सभि नर को जानहु इस प्रकार करि ले कल्यान ।
अहंब्रह्म तउ उर महिं बासे मुख ते कहै दास दासानि[3] ॥ २९ ॥

इह मत हमरो मिलै न तुम सों ग्रिथ बिखै किम देहिं लिखाइ ।
शबद बिरोधी मिलहिं न इक थल, राखहु आप लिखहु कित थाइं ।
गुर घरु नंम्र थान महिं जागहु नंम्र होहि सो मिलि करि जाइ ।
ऊचो सदा त्रास को पावहि, वायु आदि ते संकट पाइ ॥ ३० ॥

बचन विलास सुने जबि गुर के उत्तर फुर्यो न, रह्यो बिचार ।
सभा बिखै खिझ करि रिसधारी लाल बिलोचन करि तिस बार ।
सभि महिं कर्यो निरादर मेरो, आयो लखि न कर्यो सतिकार ।
जुकति उकति करि[4] सबद हटायहु सभि बेदनि को जिस महिं सार ॥ ३१ ॥

कहति भयो अवि सहहु स्राप मम त्रिसकारनि को लिहु फल पाइ ।
तुमरो होइ निरादर अतिशै तुरकनि घर तो मिलहि सज़ाइ ।
जिह सज़ाइ ते प्रान बिनाशहिं परहु रिपुन बसि जे दुखदाइ ।
बनिता सों मिलनि न होवहि अंत समो ऐसो बनि जाइ ॥ ३२ ॥

सुनि श्री अरजन रिदै बिचारी इसने दीनहुं स्राप उदार ।
प्रथम मान घरि आवनि कीनो भगत आपते अलप बिचारि ।

---

1. कफ़-युक्त (रोग) । 2. पित्ती बढ़ने के साथ-साथ विकारोत्पत्ति (रोग) । 3. (हमारा लक्ष्य तो यह है कि सिक्ख) अहम् ब्रह्म को मन में रखे और मुंह से दासानुदास कहलाए । 4. टालमटोल करके ।

शबद मन्यो अहंकार महां जुति पढहि सुनहि सु करहि हंकार ।
अमिल जान करि दयो हटाइ सु इस ने कर्यो क्रोध दुखकार ।। ३३ ।।

हम जे स्राप देहिं नहि इसको अफर जाइगो दीरघ मान[1] ।
गन भगतनि को अलप जानिबे जे न मिलै फल इसे महान ।
इम बिचारि उर, बोले श्री गुर. हम लहौर तुझ देहिं न जानि ।
राखहिं वहिर म्रितु को पावहिं अवगति मरहिं होइ हैरान ।। ३४ ।।

सुनिकै पुन कान्हा भनि बैननि बरख पंच सै उमर बिसाल ।
बिघन अनेक समीप न आवहिं जोग अभ्यास करों सभिकाल ।
काल जाल जहिं पोहि[2] न साकहि अस मठ महि बासों निसचालि ।
मैं न भरौं, तुम स्राप विफल ह्वै, दसमद्वार की करों संभाल ।। ३५ ।।

श्री अरजन कहि जौन मठीली बस करि धारति बड अभिमान ।
सो फूटहिगी, बसहिं कहां फुन, करहु अबहि परलोक पयान ।
जियबो आस न धरि, निरास बनि, हाड पिंजरे प्रेम न ठानि ।
जीवति रह्यो समै बहुतेरो जिस ते उर हंकार महांन ।। ३६ ।।

दोहरा

कितिक काल तूषनि भए सभा बखै सभि कोइ ।
बिसमे सुनि कै स्राप बडि होनी होइसु होइ ।। ३७ ।।

रिदा गिरा हित मेलिबे मिले हुते इक थान ।
भावी ने ऐसी करी वध्यो बियोग महान ।। ३८ ।।

इति श्री प्रताप सूरज ग्रिंथे 'कान्हा आदिक भगति आवन' प्रसंग बरननं नाम खषट चत्वारिंसती अंशु ।। ४६ ।।

---

1. अहंकार से अधिक ऐंठ जायेगा । 2. पहुंच ।

अंशु ४७

कान्हा आदि भगत प्रसंग

दोहरा

कितिक काल तूषन रहे सभा न बोल्यो कोइ ।
स्री अरजन पीलो दिशा कीनि बिलोचन जोइ ।। १ ।।

सवैया छंद

पीलो भगत आपनो मत कहु हमहि सुनावो शब्द बनाइ ।
जिसते गुरमति हुइ उपदेशनि सिमरहिं परमेशुर लिवलाई ।
होइ श्रेय मग लहहिं सुगम ही भाउ भगति के संग मिलाइ ।
सुनति सभा महिं शबद बखान्यो पीलो अपनो मतो सुनाइ ।। २ ।।

पीलो वाचु

पीलो असां नालों से भले जंमदिआं जु मुए ।
ओनां चिक्कड़ पाव न बोड़िआ न आलूद[1] भए ।।

सवैया छंद

इह भी नहिं प्रमान हम करि हैं जिस महिं नहीं भगति उपदेश ।
श्री करतार केर इह भाणा जंमण मरणा सीस असेस[2] ।
पाइ जनम नर लाभ लेय शुभ, भजहि सदा सतिनामु विशेष ।
मानहि हुकम खसम को नीको त्यागहि हउमैं सहत कलेश ।। ३ ।।

दोहरा

छज्जू कहु मत आपनो जस निशचा मन कीनि ।
गुर आइसु को मानि करि बोल्यो शब्द नवीन ।। ४ ।।

---

1. उन्होंने कीचड़ में पाँव नहीं डुबाया और न ही वे मलिन हुए । 2. सब के साथ सम्बद्ध है ।

छज्जु वाच

कागद संदी पूतली तऊ न त्रिया निहार।
यौं ही मार लिजावही जथा बलोचनि धार[1]।। १ ।।

सवैया छंद

छज्जू भगत सुनो मति हमरो पंथ रच्यो करिबे सतिसंग।
सिमरहिं मिलि करि श्री परमेसुर ग्रिहसत बिखै लिव साइं अभंग।
कार धरम की करि गुज़रानहिं, सेवहिं संतनि सहत उमंग।
भाउ भगति करि जगत सु तरि हैं, सत्तिनाम को चढ़िबो रंग ।। ५ ।।
ग्रिहसत बिनां नहिं अपर जतन अबि बन मैं छुधित रह्यो नहिं जाइ।
नगर निकट जबि रहनि लगै इहु नर नारी मिलि हैं समुदाइ।
मिले बीच मन नहिं बिकार हुइ अस बिरलो जग महिं को आइ।
किम नहिं त्रिय को पिखहिं त्याग करि, यांते ग्रिहसत बिखै प्रभु पाइं ।। ६ ।।
निज तन ते श्रम करें खाट घन बहुर बांट करि भोजन खांइ।
बिन हंकार करहि सतिसंगति पंगति बैठि भगति करि भाइ।
श्री प्रभु की इक शरनि बिनां अबि अपर जतन को समो न काइ।
यांते ग्रिहसत बिखै उपदेशन करति किरत हरि नहिं बिसराइ ।। ७ ।।

दोहरा

आयसु गुर की पाइ करि बोल्यो शाहु हुसैन।
सभा बिखै सभि ही सुनहिं तिसकी दिश करि नैन ।। ८ ।।

शाहु हुसैनो वाच

चुप्प वे अड़िआ[2] चुप्प वे अड़िआ।
बोलण दी नहीं जाइ[3] वे अड़िआ।
सज्जणा बोलण दी जाइ नाहीं।
अंदर बाहर हिक्का[4] साईं।
किसनूं आख सुणाईं।
इको दिलबर सभि घट रविआ दूजी नहीं कदाईं।
कहे हुसैन फकीर निमाणा सतिगुर थों बलि-बलि जांही ।। १ ।।

सवैया छंद

श्री अरजन मुसकावत बोले करुना भरे रसीले नैन।

1. बलोचों का धावा। 2. अरे! 3. जगह। 4. एक ही।

भला कह्यो चुप करहु रिदै रखि, रहहु अबोले शाह हुसैन ।
इह तीनहु श्री गुर के सनमुख प्रति उत्तर को कह्यो न बैन ।
भए प्रथम ही स्राप घोर बहु यांते शांति कीनि मन चैन ॥ ९ ॥
अनरस भयो संग श्री गुर के उठि करि गमने लवपुरि ओर ।
श्री अंम्रितसर नहीं बास किय, बस न चल्यो कुछ लखि गुर जोर ।
निज आवनि को कहि पछुतावनि लह्यो अनादर स्राप जु घोर ।
रहति सदन अपने चित हरखति किम आवति इम हुइ इस ठौर[1] ॥ १० ॥
तबि स्यंदन महिं कान्हा चढि करि बैठ्यो पदमासन कउ भारि ।
महां योग अभ्भयासी बल ते पौन चढ़ाइ दसमें द्वार ।
श्री अरजन के स्राप कहे ते चितवति चित महिं बहु डर धारि ।
नहिं सरीर सुधि टिके स्वास जबि गमने मारग भगत सु चार ॥ ११ ॥
चलति कुसौन[2] मानि करि तीनहु जानी मन हुइ बिघन महान ।
सगरे बासुर गमने मारग केतिक घटी रह्यो दिन आन ।
लवपुरि लगे बिलोकनि तबि हूं त्रास छोर करि भी सुख मान ।
सूत जाति स्यंदन को प्रेरति अदि तूरनता चलिवे ठानि ॥ १२ ॥
तिस छिन महां प्रभंजन गमनी[3], भंजन ब्रिच्छ अनेकनि केर[4] ।
कंकर सहत धूल बहु उडकरि पसरी जित कित गगन बडेर ।
लोकनि पसुनि बिलोचन मूंदे, आगे पाछे जाइ न हेर ।
व्याकुल करे जीव बहु जिसने बडी अंधेरी कीनि अंधेर ॥ १३ ॥
त्रास करे वाहन तिह बिदके इत उत फिरे भ्रमत तजि राहु ।
जोर जतन करि हाथ डोर धरि[5] बहुत सारथी रोकहि तांहु ।
बिखम थान तबि उलट्यो रथ, गिर कान्हा, पर्‌यो भूम के मांहु ।
नहिं सुधि लई गई किसहूं ते करहिं उचावनि जे तिस पांहु ॥ १४ ॥
वाहन दौरति रथ को ऐंचति कान्हे के सिर पर सो जाइ ।
फूट्यो निकसी मिज्झ सीस ते ततछिन गए प्रान बिनसाइ ।
आप नहीं तन की सुधि मांहू जिसते उठि इत उतहि बचाई ।
सुनो स्यंदन हेरि सारथी टिक सो रह्यो नहीं सुधि पाइ ॥ १५ ॥
बायु बिसाल बहुर ततकालहि हटी धूल जुति, बिमल अकाश ।
खोलि बिलोचन लगे बिलोकन मारतंड को भयो प्रकाश ।

---

1. यदि जानते कि यहाँ ऐसी होगी, तो क्यों आते । 2. अपशकुन । 3. तेज आँधी चली । 4. अनेक वृक्षों को तोड़ने वाली । 5. लगाम पकड़ कर, रस्सी पकड़ कर ।

देख्यो पर्यो सीस जिस फूट्यो श्री गुर बच ते प्रान बिनाश।
हाहाकार सु करति उठायो ले पुरि गमने तन बिन स्वास ।। १६ ।।

ससकार्यो[1] मिलि नरनि उचार्यो कहां भयो इस बैंस महान[2]।
सकल प्रसंग सुनायहु लवपुरि तीनहु भगत सु बाक बखानि।
सुनि सभि सतिगुर लख्यो प्रतापी कहिबो रामचंद के वान।
निश फल होहिं न सुख दुख दाइक, अचरज भयो बडो सभि जानि ।। १७ ।।

कौन अरै सतिगुर के आगै, अमर मरै अचल जु चलि जाइ।
बड अथाहि को थाहि देति करि, महांबली ततछिन निबलाइ।
मेरू बडाई राई ठानति, पातिशाह को रंक बनाइ।
महां सूरमा काइर होवहि गुर रिस तनक जि द्रिपटि चलाइ ।। १८ ।।

इम ब्रितांत भा चारुन भगतनि इते श्री गुरू ग्रिंथ लिखाइ।
राग प्रभाती लगि जु सबद शुभ गावनि रीती दए बनाइ।
बहुर शलोक जु सहंसक्रित्त के सो गुरूदास लिखे हरखाइ।
जिम इहु बने प्रसंग सु उचरों श्रोतनि के संदेह मिटाइ ।। १९ ।।

कांशी ते इकदिन द्वै पंडित चलि आए श्री अरजन पास।
क्रिशन लाल हरिलाल नाम तिनि भगत गुरू के गुननि निवास।
सतिगुर को बहु भाउ धरति उर दरशन करिबे की जिन प्यास।
चित चाहति परलोक सुखनि को जग के त्यागे बिखे बिलास ।। २० ।।

आनि मिले पग बंदन करिकै वैठि निकट दरशन दरसंति।
श्री अरजन जी बहु सनमाने बुझनि कीनसि तिनहु तुरंत।
दिजबर कहां सदन हैं तुमरे किह सथान गमने हितवंत।
कौन काज अर नाम कौन है, वेस बेस दीखति मतिवंत[3] ।। २१ ।।

हाथ जोरि करि दुऊ सहोदर बोले बाक सु बिननी संग।
आप अहो तुम अंतर्ज़ामी बिना भने सभि लखहू प्रसंग।
तदपि कहैं तुम बूझनि कीनसि, कांशी बसहिं तीर पुरि गंग।
सुजसु सुन्यो रावर को दीरघ दरशन हित आए दुख भंग ।। २२ ।।

एक समैं श्री नानक पहुंचे कांशी बिखे बिराजे जाइ।
बहू दिजबर तबि चरचा कीनी सुनि कै सकल रहे हरखाइ।

---

1. (दाह) संस्कार किया। 2. लम्बी आयु (के दावा का) क्या हुआ ? 3 सुन्दर स्वरूप और मतिवान दीख पड़ते हैं।

हुतो पितामा हमरो तिस छिन भाउ भगति बहु कीनि बनाइ ।
तबि उपदेश गुरु जी दीनसि सत्तिनाम लिव दई लगाई ।। २३ ।।
अपने करे शलोक चार तबि करि कागदि पर दिए लिखाइ ।
लिखे पितामे के सो घर महिं हेर हमों सो कंठ कराइ ।
जिन महिंदंभ निकंदन कीनसि, उर को साच सु लेखो पाइ ।
'पढ़ पुसतक अर संध्या बादं' इत्यादिक पठि दए सुनाइ ।। २४ ।।
तुमने करे सु हमैं लिखावहु नांहि त दीजै अबहि बनाइ ।
जिस ते गुर मति को हम धरि के सत्तिनाम भजि प्रभु गुन गाइ ।
सार करहु उपदेशनि श्री गुर उर उज्जल जिसते हुइ जाइ ।
निज मुख संग शलोक रचहु बर सहंसक्रिती की रीती पाइ ।। २५ ।।

सुनि दिजवर ते प्रीति हेरि करि श्री अरजन जी तबहि बनाइ ।
सभि शलोक किय सहंसक्रिती महिं बहुरो गाथा रुचिर सुहाइ ।
सुनि द्वै भ्रात अनंदति ह्वै करि गुर के चरन रहे लपटाइ ।
प्रभू प्रेम को रस जिन आग्रहु सत्तिनाम सिमरन मन भाइ ।। २६ ।।

जबहि बंदना कीनसि गुर पग मन महिं बध्यो अनंद बिलंद ।
उसतति करति भए श्री अरजन रामचंद तुम रूप मुकंद ।
कंस विनाशक क्रिशन आप हो श्री नानक की जोति सुछंद ।
तुही त्रिअंबक[1] काशी पुरि महिं, तारक मंत्र देति सुखकंद ।। २७ ।।

दुरे रहहु नहिं जानि सकहिं सभि जिस पर आप होति अनुकूल ।
सो रावरि को रूप पछानहिं एक तुही सभि जग को मूल ।
अज, अबिनाशी, लछमी दासी, करहु बिनाशी जे प्रतिकूल ।
बिध हुइ रचो, बिशन हुइ पोखहु, रुद्र होइ जग हरहु अभूल[2] ।। २८ ।।

सुनि प्रसंन उर सतिगुर ह्वै करि कह्यो जाचीये निज अभिलाख ।
आसा धरे दूर ते आए पूरन करो न गुपती राख ।
दौन सहोदर तबि कर जोरे परम प्रेम कर बिनती भाखि ।
दरशन ते कारज भे पूरन, नहीं रही क्यों हूं उर कांख[3] ।। २९ ।।

अपनो सिदक सदा उर देवहु जगत कुबंधनि सरब मिटाइ ।
चरन आपके मन महिं बासहिं, निसदिन सिमरहिं हरि गुन गाइ ।

---

1. शिव । 2. ब्रह्मा के रूप में रचयिता, विष्णु रूप में पोषक तथा **शिव रूप** में संहारक (तुम्हीं तो) हो । 3. मनोवांछा ।

सुनति सति गुरू कह्यो तथासतु बर को पाइ रहे हरिखाइ ।
केतिक दिन बसिकरि अंम्रितसर हुइ पुन बिदा गए निजथाइं ।। ३० ।।
सो सलोक लिखवावनि कीने श्री अरजन रागनि के अंत ।
बहुर पिख्यो गुर दास लिखारी बोले श्री गुर बदन सुमंति ।
निज बानी तैं कीनि बनावनि आन दिखावो गुर जसुवंत ।
तिस छिन भगत समीप हुते सभि चरचा करति अलेख बिअंत ।। ३१ ।।
मानि बचन गुरदास गयो तबि निज डेरे ते ल्यावन कीनि ।
बैंठि पाठ करि तबहि सुनाइ जिस महिं महिमा गुरू प्रबीन ।
भगत ब्रिंद जुति सतिगुर सुनिकै भए प्रसंन सलाहति चीनि ।
श्री मुख ते तबिहुं फुरमायहु लिखहु ग्रंथ महिं रची जु बीन[1] ।। ३२ ।।
सुनि गुरदास हाथ को जोरति मैं रावरि दासन को दास ।
सेवक अवनी तल महिं बैंसहि, साहिब उचितै तखत बिलास ।
तिम अंतर बानी महिं होवत, कित पटबीजन कित सपतासु[2] ।
किम समता हुइ तुच्छ कीट मैं, आप महिद ते महिद प्रकाश ।। ३३ ।।
तीन वेर फुरमायहु सतिगुर बिनै सहत भाई कर वंदि ।
अलप आप को लखि करि उर महिं नहिं समता चाहति जग बंद ।
अति प्रसंन हुइ बर गुर दीनहु तुव बानी फल होइ बिलंद ।
पढति सुनति गुर सिक्खी प्रापति शरधा सतिगुर बधहि मुकंद ।। ३४ ।।

दोहरा

हाथ जोरि चरनी पर्यो तबि भाई गुरदास ।
बरबानीको गुर दयो अनद बिलंद प्रकाश ।। ३५ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे त्रितिय रासे 'कान्हा आदि भगत' प्रसंग बरननं नामु सपत चत्वारिंसती अंशु ।। ४७ ।।

1. चुनी हुई । 2. सप्ताश्य, सूर्य ।

अंशु ४९

वेद भटनि को प्रसंग

दोहरा

भगत बिराजति निकट गुर दरशन ते सुख पाइ।
मनहुं शांति चित शिव थिर्यो बीच मुनिनि समुदाई ।। १ ।।

सवैया छंद

मनहु ग्यान निज तन धरि बैठ्यो सद गुन निकट भगत इस भाइ[1]।
श्री अरजन दरशन जनु अंम्रित पुटनि बिलोचन पीवति जाइ।
नहिं त्रिपतहिं हित करि ढिग बैठहिं सुनहिं बचन त्यों त्यों हरखाइ।
महां सुशील प्रेमि परि पूरण प्रभु सिमरन उपदेश बताइ ।। २ ।।
लख्यो समां तबि बिदा भगत हुइ अपने अपने थान पयान।
पुन आए सभि वेद देहधरि स्री अरजन को बंदन ठानि।
चाहति भे गुर कयों सु चित मैं[2] अनिक भांति की उसतति ठानि।
जिस कारन अवतरे जगत महिं तिसकी उर अभिलाख महांन ।। ३ ।।

दोहरा

सुनि श्रोतनि सुख पाइ करि बूझी कथा बिचार।
वेद धर्यो नर देह को इह कही यहि बिसतार ।। ४ ।।

सवैया छंद

सुनहु सिक्ख सतिगुर की महिमा जिस ते मन बांछित फल पाइ।
सभि बेदनि अवतार धर्यो जिम सो प्रसंग सभि देउं सुनाइ।
कांशी बास श्रुति सभि ठानति सभि बिद्या को जहिं समुदाइ।
निरने होति ब्रह्म को नितप्रति पढहिं बिचारहिं बुधि बिरधाइ ।। ५ ।।
बास करति इक समै बेद तहिं अतिशै रिदे कीनि हंकार।
निरनो हम ते होति ब्रह्म को करहिं बिचारन सार असार।

---

1. इस प्रकार। 2. चित्त में गुरु धारण करना चाहा।

नातुर अंधकार बिसतरि है, हम ते जगत प्रकाश उदार[1]।
अग्गयानी मन लहहि ग्यान को, पाइ मुकति को, बंधन टारि ॥ ६ ॥

पारब्रह्म ने लखि बेदनि गति जिन के भयो हंकार बिकार।
इही जनम दे जग महिं फिरि फिरि सकल विकारनि मूल उदार।
इन उर ते अबि करो उखारनि क्रिपा सिंधु इस बिधि उरधारि।
भई गगन बानि तबि इन को नर सरीर को लिहु अवतार ॥ ७ ॥

तुमरे उर हंकार बिकार जु, निषफल करहु[2], जानि इम लेहु।
गुर बिन रिदै प्रकाश न होवति यांते मूल सतिगुरू देहु[3]।
तुमरो खेद बिनस करि जावहि करहु गुरू जित कित द्रिशटेहु[4]।
सतिगुर बिना न शांति पय्यति यांते बनह सिक्ख हित देहु[5] ॥ ८ ॥

इक इक बेद चतुर बपु धारहु ब्रह्मा तुम संग नर तन पाइ।
रच्छक सदा होति जित कित इह तुमरो बिघन सकल बिनसाइ।
गगन गिरा इम कह्यो, मौन पुनि, सुनि सभि बेद रहे बिसमाइ।
कमलज सहत विचारनि करि कै छित अवतरे[6] सरूप बनाइ ॥ ९ ॥

इक इक बेद चतुर बपु धारे प्रकट नाम तिन कहौ असंस।
पूरन श्याम बेद के इह भे: मथरा, जालप, बल्ल, हरबंस।
पुन रिगबेद : कल्य, जल्ल, नल्ल त्रै, कलसंहार चौथो गिनी अस।
भए जुजर के : टल्लय, सल्लय, पुन, जल्लय, भल्लय उपचे दिज वंस ॥ १० ॥

बहुर अथरबण : दास रू कीरति, गिनि गइंद, सदरंग सुचार।
कमलासन को भिक्खा नाम सु इन सभि ते भा अधिक उदार।
बिप्प्र सरीर भाट भई संग्या, बड़े बंस महिं भे इकसार।
होइ इकत्र लगे गुर खोजनि देश बिदेशनि महिं हित धारि ॥ ११ ॥

पंथ जिते जग बिखै प्रबिरते सभि के निकट करति प्रसथान।
गिरी पुरी आदिक संन्यासी तिन ते सुनहिं बैन हित ठानि।
जोग अभ्यासी अरु कंनपाटे दोनों ढिग किय संग महान।
ब्रह्मचारी, तपसी, बैरागी अपर कितिक को करै बखानि ॥ १२ ॥

---

1. हमारे द्वारा संसार में श्रेष्ठ प्रकाश होता है। 2 तुम बेकार ही मन में अहंकार का विकार पोषित कर रहे हो। 3. (प्रकाश का) मूल सतिगुरु की देह है। 4. देख कर। 5. हित पूर्वक सिक्ख बनो। 6. धरती पर अवतरित हुए।

संमत एक फिरे जगखोजति जे साधिक परलोक उदार[1]।
कहि निज वचन, शांति दे चित को ऐसो कतहूं नहीं निहार।
देश बिदेशनि सगरे फिर करि भए उदास गए जबि हार।
उतर्यो गरव, अहैं हम जग महि तऊ न देख्यो बिना बिकार॥ १३॥

यांते सतिगुर सभि ते दीरघ जिनके मिलति शांति चित पाइ।
बिनां गरव ते सरब भए जबि सुधा सरोवर की दिशि आइ।
महिमा सुनति अनेक लोक ते श्री अरजन सतिगुर सुखदाइ।
भिक्खे सहत सकल ही मिलि कै दरशन हित चित चौंप बढाइ॥ १४॥

गुन को सुनति शांति हुइ आई, श्री अरजन को सिमरति नाम।
सभि पहुंचे हरि मंदिर मैं जबि दरशन पिख्यो अजब अभिराम।
श्याम सरूप अनूप चतुरभुज सुंदर बदन सुछबि को धाम।
महां जोति जागति चहुं दिशि महिं करति अनेक सु नंम्रि प्रणाम॥ १५॥

कमला कर-कमलनि पद-कमल जि म्रिदुल पलोसति प्रीत बिसाल[2]।
शुभति सेख साई[3] वड शोभा, द्रिग बिसत्तरति कोर जुग लाल।
पीतंबर सभि अंग विभूखन बडे बिभूखति गर बनमाल।
सीस किरीट, केस म्रिदु मेचक घुंघरिआरे शोभति भाल॥ १६॥

दोहरा

वेद सरूप जि विप्र बर हरि सरूप तिन दीखि।
अपर नहीं काहूं लख्यो देनि हुती तिन सीख[4]॥ १७॥

सवैया छंद

अस सरूप देखति बिसमाए हरि मंदिर महि सुंदर शोभ।
महां विशनु को रूप मनोहर जिसहि ध्यान धरि जोगी लोभ।
उसतति करनि लगे हइ ठांढे जिनि कै भयो प्रेम को छोभ।
नमसकार पुनि पुनि पग पंकज रिदा परम गंभीर अछोभ॥ १८॥

भुजंग छंद

दया सिंधु दीनानि बंधू क्रिपाला।
नमो पाद कंजं अभंजं[5] उजाला[6]।

---

1. परलोक के लिए श्रेष्ठ साधना करने वाले। 2. लक्ष्मी स्वयं अपने कर-कमलों से मृदुल चरण-कमलों की प्रीति-पूर्वक सेवा करती है। 3. शेषनाग-शायी, विष्णु। 4. उनको शिक्षा देनी थी। 5. नाश-रहित। 6. प्रकाशवान्।

अजै हो, अनाशी, अनादी, अनूपं ।
महांराज राजान के राज रूपं ।। १९ ।।

सभै बीच बासो, अलेपं सदा हो ।
अजोनी अछै एक रूपं अजा हो[1] ।
कथे मो न आवै, कथै कौन तोही ।
निरालं, बचित्रं निरालंब होही ।। २० ।।

सभी तोहि में, तू सभे मैं बिराजै ।
अकाशं जथा एक सारे सु छाजैं[2] ।
ब्रह्मंडं अखंडं तुमी देहिधारी ।
दुऊ नैन भानू ससी जोति भारी ।। २१ ।।

दिशा श्रौन तेरे नभं सीस गावैं ।
महां पुनं अग्रं प्रिष्टी पाप थावैं[3] ।
महां सिंधु कुक्खी, तरु रोम ब्रिंदं ।
अहै पाइ पाताल, तोही मुकंदं ।। २२ ।।
गुरू नानकं बंस बेदीनि मांही ।
नरं देहि धारी जपैं जाप जांही ।
कली मैं दया धारि नामं जपायो ।
कर्यो पंथ सिक्खी तरे जांहि पायो ।। २३ ।।

गुरू अंगदं रूप होए क्रिपाला ।
करामात काहूं न दीनी बिसाला ।
जर्यो जोर दीहं[4] रिदे मैं गहीरं ।
उधारे महां सिक्ख दे नाम धीरं ।। २४ ।।

पिता मोहरी के धरी देहि फेरी ।
महां पंथ सिक्खी बिथारी घनेरी ।
चहूं चक्क मैं कीरती चारू होई ।
दई ब्रिंद मंजी गुरू कीनि सोई ।। २५ ।।
गुरू रामदासं प्रकाशे बिसाला ।
कली घोर अंधेर कीनो उजाला ।

---

1. अजन्मा । 2. शोभायमान है । 3. (आपका) अग्र भाग पुण्य और पृष्ठ भाग पाप है । 4. भारी बल ।

तिनो के भए नंद रूपं तुमारा।
नमसतं नमसतं नमसतं उदारा ॥ ३६ ॥

दोहरा

इम अषटक उसतति करी पठि मन बांछति पाई।
दीन होइ पुन सकल ही रहे चरन लपटाइ ॥ २७ ॥

सवैया छंद

श्री अरजन तबि निज सरूप को सभि ही दिजनि दिखावनि कीनि।
बूझति भए, कौन तुम कारज उर बांछति लिहु जाचि प्रवीन।
कहां बसति, गमने अबि कित को, हम ढिग आए क्या चित चीनि।
मुक्ख्य हुतो सभिहिनि महिं भिक्खा बोल्यो बाक होइ करि दीन ॥ २८ ॥

भिक्खो वाच

रहिओ संत हउ टोलि साध बहुतेरे डिठे ॥
संनिआसी तपसीअह मुखहु ए पंडित मिठे।
बरसु एकु हउ फिरिओ किनै नह परचउ लायउ ॥
कहति अहु कहती सुणी[1] रहत को खुसी न आयउ ॥
हरि नामु छोडि दूजै लगे तिन के गुण[2] हउ किया कहउ ॥
गुर दयि मिलायउ भिखिआ जिव तू रखहि तिव रहउ ॥ २ ॥ २०

सवैया छंद

आंप गुरू बनि दीख्या दीजहि सिक्ख्य करहु उचरहु उपदेश।
खोजति फिरै जगत महि जित कित लेनि शांति हित पंथ विशेष।
श्रमत भए नहिं प्रापति होवा, बासी हम काशी पुरि देश।
अपर बाशना चित महिं कोई न क्या जाचहिं मिथिआ जु अशेष ॥ २९ ॥
श्री अरजन सुनि मन्यो बेद तुम नर तन धारि आइ हम पास।
तुम सभि करहु ब्रह्म को निरनै पारब्रह्म को सुजसु प्रकाश।
अबि सरीर मानव को पायहु कुछ हंकार भयो फल तास।
ब्रह्म रूप श्री नानक कल महिं नर सरूप हुइ तारे दास ॥ ३० ॥
नर तन तुमरो, नर तन सोई, नर भाखा को रचहु सुधारि।
जिस महिं जसु गुर नानक केरा करहु अबै निज बदन उचारि।
बहुर सिक्ख्य हम तुम को करि हैं पावहु चित शांती सुख सार।
रहहि सथिर जग बिखै नाम तुम लिखहिं ग्रिंथ महिं बन्यो उदार ॥ ३१ ॥

---

1. कहने वालों की बातें सुनी। 2. अवगुण, व्यंग्य से 'गुण' कहा गया है।

सुनि करि उर हरखति सभि ह्वै करि हाथ जोरि कै बूझनि कीनि।
क्रिपा सिंधु किसु चाल रचहिं सो प्रथम बतावहु हम लें चीनि।
तिसी रीति सभि करैं बनावनि श्री गुर कीरति रुचिर नवीन।
महां लाभ हम को इह हुइ है रावर क्रिपा धारि कै दीन[1] ॥ ३२ ॥
श्री अरजन सुनि आप बनाए प्रथम सवय्ये सो लिखवाइ।
बहुर समसत भाट गुर सिमरे करति भए मन को उमगाइ।
श्री नानक को सुजसु आदि महिं बहु प्रकार तिन बिखैं बनाइ।
ब्रह्म रूप करि बरनन कीने शिव ब्रह्मादिक जिसको गाई ॥ ३६ ॥
बहुत चाल के करे सवय्ये देशनि की भाखा बिच सोइ।
महां महातम कीनि उचारन पठे सुने फल दीरघ होइ।
जिस को नेति नेति नित श्रुति कहि तिसको बरन सकहि कहु कोइ।
शेख[2] शारदा अंत न पावहिं सदा सु खोजहिं जोगी जोइ ॥ ३४ ॥
श्री अंगद को जसु बरन्यो बहु प्रकार के गुन बिदताइ।
कीरति श्री गुरू अमरदास की निज बानी महिं रुचिर बनाइ।
कुसम बसंत तरंग गंग के गुण बिअंत इत्यादि जनाइ।
जिनके समसर अपर नहीं को तिन की उपमा तिन बनि आइ ॥ ३५ ॥
श्री गुरू रामदास गुन रासी तिन की कीरति रची बिसाल।
धंन धंन सतिगुर जग स्वामी जिन देख्यो अघ ओघ सु टालि।
पुन श्री अरजन सुजसु बनायो एको जोति पंच गुर नाल।
धरम धुजा धरनी सम धीरज पर उपकारी परम क्रिपाल ॥ ३६ ॥
इक सौ बाई रचे सवैये पंचहुं गुर को सुजस बनाइ।
श्री अरजन को कीनि सुनावनि परम प्रेम मन महिं उपजाइ।
पद अरबिंद करी पुन बंदन दीन भए भाट जु समुदाइ।
चित महि चाहति सिख बनिवे कउ जाचति शांति सु चित महिं आइ ॥ ३७ ॥
भए प्रसंन बहुत श्री अरजन तिन की क्रित्त ग्रिंथ लिखवाइ।
मन बांछति बर दीनि सभिनि को सिक्ख्य करे शांती उपजाइ।
भ्रम परहर्यो, भए सभि निरमल, श्री गुर जसु ते इहु फल पाइ।
केतिक दिन मैं निज तन तजिकै बेद रूप होए तिस भाइ ॥ ३८ ॥
लिखे समसत सवैये सोऊ श्री ग्रिंथ साहिब के माहि।
अंत सरब के लिखि मुंदावणी मुंद्रति[3] मुहर लगी जनु वाहि[4]।

1. दीन जानकर कृपा करें। 2. शेषनाग। 3. अन्त करने के लिए। 4. जैसे उस पर मोहर लगी हो।

भोग सकल बाणी को पायहु महिमा जिस की कही न जाइ।
भवजल भैरव को जहाज बड प्रभू क्रिपा ते पार पराइ॥ ३९॥

राग माल श्री गुर की क्रित नहिं है मुंदावणी लगि गुर बैन।
इस महिं नहि संसे कुछ करीग्रहि जे संसे अविलोकहु नैन।
माधव नल आलम कवि कीनसि तिस महिं ग्रितकारी कहि तैन॥
राग रागनी नाम गिने तहिं यांते श्री अरजन क्रित है न॥ ४०॥

इह सुधि नहीं लिखी इह गुर ने किधौ सिक्ख काहू लिखि दीनि।
राग नाम सभि जानहिं रागी इह कारन लिख दई प्रबीन।
श्री गुर गिरा नाम हरि के बिन संतन महिमा बिन नहिं कीनि।
भयो महद फल पठिवे सुनिबे लिखिवे गुनिबे, चहैं सु लीन॥ ४१॥

धंन जनम जिन लिख्यो भाउ धरि सफल हाथ अपने करि तांहि।
पठहिं प्रेम ते हरखहिं उर महिं पुलकहिं झलकहिं जल द्रिग मांहि।
हरखहिं जनु, अम्रित को बरखहिं, तरकहिं बिषय,[1] गुननि अविगाहि[2]।
से नर परे पार, नहिं जनमहिं सुनहिं एक मन थिरता पाहिं॥ ४२॥

इति स्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे त्रितिय रासे 'भटनि को प्रसंग' बरननं नाम अठतालीसमो अंशु॥ ४८॥

---

1. विषय-विकारों को त्यागते हैं। 2. गुणों को विचारते हैं।

अंशु ४६

श्री ग्रिंथ साहिब बीड़

दोहरा

भयो ग्रिंथ साहिब रुचिर भोग पाइबे हेत।
अनिक भांति उतसाह की त्यारी करी सुचेत ।। १ ।।

तोटक छंद

बहु कीनि तिहावल मेलि भयो।
सभि संगति श्रौन सुनाइ दयो।
अबि ग्रंथ सपूरन होइ गयो।
दर सैं सभि आनि उछाह कयो ।। २ ।।
नर नारि अनंद बिलंद करे।
सर राम जहां तहिं आन थिरे।
लघु दुंदभि बाजि नफीरन सों।
बड होति कुलाहल भीरनि सों ।। ३ ।।
उतसाहति संगति आवति है।
बहु भाँति प्रसादनि ल्यावति है।
फल फूलनि को निज हाथ धरे।
शुभि चीर शरीर सभे पहिरे ।। ४ ।।
लखि श्री गुर एकल बैठि रहे।
तबि आइ कली[1] इम वाक कहे।
करि कीरति को कर जोरि रह्यो।
गुरजी अवतार उदार लह्यो ।। ५ ।।
अवि मोहि समों जग मों बरत्यो।
गन औगुन मानव के करत्यो[2]।

---

1. कलियुग ने। 2. मनुष्यों द्वारा अधिक पाप करते हुए।

सठ क्रूर कलूखन प्रीत महा[1]।
शुभ मारग त्याग जहां रू कहां ॥ ६ ॥
तुम ग्रिंथ रच्यो गुन पूरन है।
उर व्रिंद बिकारनि चूरन है।
जग मैं मग श्रेय दिखावनि को।
सत्तिनाम मुकंद जपावनि को ॥ ७ ॥
सति संगति को बिसतार महां।
पसरैं गुर सिक्ख्य जहां रू कहां।
अबि मोहि सथान बताइ दिजै।
जहिं बास करौं, तुम मेलि लिजै ॥ ८ ॥
बिन आइसु रावर की करिवे।
बल ना मुझ पाइ कहूं धरिवे।
इस कारन ते तुम पास अयो।
हित बासिब के बिनती सु कियो ॥ ९ ॥
जहिं ग्रंथ सु पाठ करैं धुनि को।
बलहीन बनौ तबि ही सुनि को।
तुम संगति बीच बसौं जबि हूं।
असकाल बताइ दिजै अबि हूं ॥ १० ॥
शरनी तुम आनि पर्यो लखियो।
मम दीन अनाथ दिशा पिखियो।
इम बाक कली जबि दीन लहे।
तबि श्री गुर होइ प्रसंन कहे ॥ ११ ॥
सतिनाम उचारनि होति जहां।
कबि पाइ न धारो जाइ तहां।
जबि आइ कराहु सभा धरिये।
अरदास खरे हुइ कै करिये ॥ १२ ॥
बरतावनि लागि सु आपस मैं।
जुति रौर प्रवेशहु तांहि समैं।
बरतावति जावत संगति मैं।
रहु तावत बासहु पंगति मैं ॥ १३ ॥

---

3. मूर्खों और निर्दय लोगों की प्रीति पापों में ही है।

इम आइसु पाइ कली हरख्यो ।
अबि लौ तिह काल बिखै[1] परख्यो ।
जबि होइ तिहावल[2] आवति है ।
बड रौर करे बरतावति हैं ।। १४ ।।

पुन श्री गुर बैठि दिवान लग्यो ।
गन सिक्ख्य पिखै मन प्रेम पग्यो ।
सभि बीच सुहावति ग्रिंथ धर्यो ।
करि सेवक सुंदर चौर फिर्यो ।। १५ ।।

लगि ढेर प्रशादि गयो सु तहां ।
बहु ल्यावति सिक्ख अनंद महां ।
शुभ फूलनि माल बिसाल करे ।
बहु रंगनि के बिच गुंफ धरे ।। १६ ।।

गर श्री गुर के सिख पावति हैं ।
बहु भांतिन फूल चढावति हैं ।
शुभ माल सु फूल बिसाल लए ।
गुर ग्रिंथ समीप चढाइ दए ।। १७ ।।

बहु धूप सु आगि धुखावति हैं ।
घसि चंदन केसर पावति हैं ।
चरचैं अरचैं सिख प्रीत धरैं ।
गन संख बजावति फूक भरैं ।। १८ ।।

अरदास प्रसादनि ब्रिंद करैं ।
जयकार सभै इक बार ररैं ।
करधारि रबाब सतार बजै ।
सबदानि सु गाइ सुराग सजै ।। १९ ।।

बहु भार भई दिशि चारहुं मैं ।
हुइ मंगलता उतसाहु समै ।
बरत्यो सु प्रसादि कली प्रविश्यो ।
बड रौर पर्यो सभि बीच धस्यो ।। २० ।।

---

1. उस समय में (अर्थात् हलवे का प्रसाद बाँटते समय) । 2. हलवे का प्रसाद, जिसमें तीनों (घी, चीनी और मैदा) समान हों ।

तबि श्री गुर जानि गए कलि को ।
निज हेरि समां किय है बल को ।
बड होति कुलाहल मंगल को ।
तिह काल कियो कलिदंगल को[1] ॥ २१ ॥

सभि संगति ने दरशंन कर्यो ।
पग पंकज पै निज सीस धर्यो ।
पुन जाति भए निज धामनि को ।
हरखंति लगे निज कामनि को ॥ २२ ॥

गन मंगत[2] को गुर देखि तबै ।
धन देति भए कर लीनि सभै ।
नहि छूछ[3] गयो गुर के दर ते ।
पट दीनि किसू इछ जो धरते ॥ २३ ॥

नर ब्रिंद जु बादि बजावति हैं ।
गन रागनि को मुख गावति हैं ।
सभि कौ धन दीनि प्रसंन करे ।
सुत जीवहु आशिखता[4] उचरे ॥ २४ ॥

इम ग्रिंथ समापति आप कर्यो ।
बहु भांति महातम को उचर्यो ।
सर राम शनानहिं आनि नरं ।
दरसैं इस थान जु भाउ धरं ॥ २५ ॥

गन पापनि खापति[5] सो छिन मैं ।
गुर की शरधा बरधै मन मैं ।
उठि श्री गुर आवति भे पुरि को ।
गुरदास समेत सुधी उर को ॥ २६ ॥

लिय संग सु ग्रिंथहि आपनि कै ।
हरि मंदरि मैं बर थापनि कै ।
हुइ पूज सदा इस थान बिखैं ।
बहुरो समुदाइ पठैं सु लिखैं ॥ २७ ॥

---

1. कलियुग ने दंगा-सफाद (करवाया है) । 2. भिखारियों को । 3. खाली । 4. आशीर्वचन । 5. पाप नाश होंगे ।

इस भांति कर्यो घर फेर गए।
पद बंदति गंग अनंदु किए।
निस बासु करैं घर फेर सदा।
हरि मंदरि आवहिं प्रात जदा[1] ॥ २८ ॥
तहिं बैठहिं द्योस बितावति हैं।
गुरदास ति[2] पाठ करावति हैं।
तबि आप सुनै सिख होइं घने।
धरि प्रेम महां सतिनाम भनें ॥ २९ ॥
नित रीति इसी सुबितीत करैं।
दरसैं गन संगति भेद मरैं।
बहु देश बिदेशनि ते चलि कै।
अरपैं धन आनि गुरू मिलिकै ॥ ३० ॥
परसी इहु बात जहां रू कहां।
गुर ग्रिंथ रच्यो फल जांह महां।
करि चाउ धरैं उर भाउ नरं।
सभि आइं बिलोकनि पास गुरं ॥ ३१ ॥
करि प्रीति सुनैं सतिनाम जपैं।
तिन पाप कलापनि ताप खपैं[3]।
निज धामनि जाइ सुनाइं तबै।
दरसैं हम भी उमंगति सभै ॥ ३२ ॥

दोहरा

मांगट वासी सिक्ख्य जो बंनो जिसको नाम।
बहु संगति लै संग निज दरसै गुर अभिराम ॥ ३३ ॥

चौपई

सुनो बंनो सगरी गुर कथा। कर्यो ग्रिंथ सभि बेदनि मथा।
गन संगत ले करि तबि आयो। धरी उपाइन पग लपटायो ॥ ३४ ॥
सभि संगति ने दरशन कीनसि। सुनहिं ग्रिंथ साहिब हित[4] दीनसि।
केतिक दिन बासे गुर तीर[5]। लिय संग संगति की भीर ॥ ३५ ॥

---

1. जब प्रातःकाल होता है। 2. से। 3. समूह दुःख नाश होते हैं। 4. अनन्य प्रेम। 5. गुरु के निकट।

भयो त्यार गर अंचर डारी। बिनती श्री गुर अग्र उचारी।
नाम गरीब निवाज तुमारा। निस बासुर ठानति उपकारा ॥ ३६ ॥
कलि के नरनि उधारनि कारन। सम जहाज किय ग्रिंथ सुधारनि।
सभि दासनि कहु राखति मानू। मन बांछति दिहु क्रिपा निधानू ॥ ३७ ॥
दीजहि ग्रिंथ साहिब हम मांगा[1]। सभि सिक्खनि को मन अनुरागा।
देश विखैं संगति समुदाई। दरशन कर्यो चहति हित लाई ॥ ३८ ॥
अबिलौ लिख्यो गयो नहीं दूजा। जिस ले जाहिं करहिं तिह पूजा।
सभि संगति की है इह बिनती। घर ते चलति कीनि इम गिनती ॥ ३९ ॥
सुनि श्री अरजन रिदे बिचारी। इस जाचन इन कीनसि भारी।
किम हम देय सकहिं इक होवा। नहिं दें सिक्ख्य मान को खोवा ॥ ४० ॥
दूजो लिख्यो जाइ इस जैसे। तौ सुखैंन दैंबो इह लैंसे[2]।
अबि तौ त्यार एक ही अहै। किस प्रकार इह सिख सों कहैं ॥ ४१ ॥
इक तो संगति को मुहरेली। आइ संग बहु होइ सकेली।
दूजै प्रेमी अहै महानां। नहीं देहिं तौ हति हुइ माना ॥ ४२ ॥
कितिक काल तूषनि[3] भगवंते। देहिं कि नहीं रिदै चितवंते।
पुन बोले श्री गुरू गुसाईं। बिखम बात इह बनो भाई ॥ ४३ ॥
बिनती करति रह्यो हुइ ठांढो। लैंबे ग्रिंथ प्रेम उर बाढो।
अहै एक किम दियो न जाई। तबि तेरो मान सु घट जाई ॥ ४४ ॥
अनबन बनी कहैं क्या तोही। अबि सुनि लेहु नीक जिम होही।
अपनी पुरी राखि इक राती। लेकरि हटहु होइ जबि प्राती ॥ ४५ ॥
दुतिय राति राखहु नहिं कैसे। अबि ले जाहु ल्याइ पुन तैसे।
अदब साथ राखहु चुकसाई[4]। संगति अलिबालहि[5] समुदाई ॥ ४६ ॥
इम कहि दयो ग्रिंथ ले चाला। संगति जिस के संग बिसाला।
निकसि गुरू पुरि रिदै बिचारा। किम इह लिख्यो जाइ अबि सारा ॥ ४७ ॥
एक निसा गुर आइसु भनी। लिख्यो जाइ किम है अनबनी[6]।
तबि बिचार उर महिं हुइ आवा। डेरा करहिं कोस इक ठावा ॥ ४८ ॥
तबहि लिखारी दीए लगाइ। लिखहु शिताबी[7] अरु समुदाइ।
अपन पुरी लगि इक इक कोस। डेरा करति लिख्यो आधोसु[8] ॥ ४९ ॥

---

1. मंगनी पर। 2. तब देना और इनका लेना (अधिक) सुखप्रद होता। 3. मौन। 4. चौकसी पूर्वक। 5. चारों ओर से। 6. असम्भाव्य। 7. शीघ्र। 8. आधा ग्रंथ।

इक निस बसि करि निज घर मांहूं। हटे कोस इक डेरा राहू[1]।
तिसी प्रकार सुधासर आए। आवति जाते सरब लिखाए।। ५० ।।

केतिक शबद लिखे अधिकाई। आए पुन श्री गुर अगवाई।
जुगल ग्रिंथ साहिब धरि दीने। अधिक जु हुते सुनावनि कीने।। ५१ ।।

पिखि अरु सुनि श्री मुखि फुरमायो। लिखि करि अधिक जितो तुम पायो।
तिसी बीड़ महिं रखहु लिखाव्रो। नहिं इसग्रिंथ बिखै सो पावो।। ५२ ।।

यांते भई बीड़ द्वै ग्रिंथ। लिखति पढ़ति श्री सतिगुर पंथ।
सुनति पठति जिन रिदै बसाई। तिन पर कवि पुन पुन बलि जाई।। ५३ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे त्रितिय रासे 'श्री ग्रिंथ साहिब बीड़' प्रसंग बरननं उनपंचासती अंशु ।। ४९ ।।

1. मार्ग में पड़ाव किया।

अंशु ५०

सतिगुरू महातम प्रकाश श्री ग्रिंथ साहिब

दोहरा

कितिक कहति हैं ग्रिंथ को जिलत बंधावनि काज।
भेज्यो लवपुरि नगर को गुरू गरीब निवाज ॥ १ ॥
तहिं आवति जाते लिख्यो बंनो ग्रिंथ दुतीय।
महिमा श्री सतिगुरू की सभि बिधि उत्तम थीय ॥ २ ॥

सवैया

संमत सोलहि सै इक साठहि भादव की सुदि एकम जानो।
ग्रिंथ समापति श्री गुर कीनि महां उतसाह गुरू घर ठानो।
संगति देश बिदेशनि की सुनि कै मन आनंद दीरघ मानो।
देखनि आवति भाउ बधावतिको लिखवावनि को हितवानो ॥ ३ ॥

बंनो आदिक है सिख संगति श्री गुर बैठि दिवान लगायो।
श्री हरि गोबिंद पास बिराजति चंद मनो परवारि सुहायो।
सीख लगे सभि को तबि देवनि श्रेय भर्यो बच यौ फुरमायो।
ग्रिंथ जहाज सु भौजल को तर जाति सुखेन जिनी चित लायो ॥ ४ ॥

श्री गुर केर सरीर जुऊ सभि थान समै सभि ना दरसै हैं।
ग्रिंथ रिदा गुर को इह जानहु उत्तम है सभि काल रहै हैं।
मेरे सरूप ते यांते है दीरघ साहिब जानि अदाइब कै है।
पूजहु चंदन केसर को घसि धूप धुखाइ कै फूल चढ़ै है ॥ ५ ॥

जो लिखि लेहि भले तबि सोधहिं अखर सों लग की चुकसाई।
पाठ समसत करै बुधि सों पिखि पूर बके सम लेहि बनाई।
आप ते घाट न बाध करै, जि करै, हुइ मूरख सो पछुताई।
और बनाइ नवों न लिखै बिच काव्य, रचै, सु रचौ प्रिथकाई ॥ ६ ॥

चौदहि लोक ते होइ बली, बल को जर[1] जाइ रिदे महिं जोई ।
सौ उपकार के कारन को सिर दे हुइ संमुख धीर धरोई ।
आपनी बांनी चढ़ावहि सो इक, होइ इसो[2] नहिं दूसर कोई ।
पूजहि जो इछ धारि[3] सु पूजहि[4] श्रेय लहै जम पीर न होई ।। ७ ।।

बेद पुरान महान महातम जांहि बखान करैं समुदाए ।
अंत न पावति शेष न शारद नेति ही नेति अशेष बताए ।
जो सरबोतम जो सरबाश्रय तांही के नाम इसी महिं गाए ।
नाम सु नामी को भेद नहीं इह मूरति श्री करतार सुहाए ।। ८ ।।

जेतिक ग्रिंथ अदाइब[5] राखहि तेतिक ही फल पावहिगो ।
धूप धुखाइ घसाइकै चंदन केसर को अरचावहिगो ।
भावनी धारि कै चाहि उमाहति[6] द्योस प्रती दरसावहिगो ।
पाठ करै कि सुनै मन इक ह्वै ही[7] उपदेश बसावहिगो ।। ९ ।।

देखति ही कर जोरि दुऊ मन नंम्रि ह्वै सीस निवावहिगो ।
औरनि को उपदेश करै लिखि आप इसे को लिखावहिगो ।
प्रेम करै घर मैं असथापहि पाठ सुने हरखावहिगो ।
सो जग बंधन छेदन कै नर अंत गति शुभ पावहिगो ।। १० ।।

कारज होइ संपूरन बांछति पाठ करै कि करवाहिगो ।
भोग परे करिवाइ तिहावल आप खरो हुइ जावहिगो ।
हाथ को जोरि करै अरदास मनोरथ को मन ल्यावहिगो ।
क्यों न कहो तिह पूरन ह्वै चित चाहति सो नर पावहिगो ।। ११ ।।

सिक्ख सरीर तजै तिस पीछहि ग्रिंथ को पाठ करावहिगो ।
पोशश[8] को अरपै तबि पाठक भोजन चारू खुलवाहिगो ।
और जथा शकती तिह सेवहि ल्याइ कराहु ब्रतावैगो ।
सो सिख होइ सुखेन महां. परलोक बिखै हरखावहिगो ।। १२ ।।

और कहां लगि जे जग कारज पाठ करे सिध होवहिंगे ।
संत महंग चहै नहिं यों पठि प्रेम करे प्रभ जोवहिंगे[9] ।
द्योस निसा सिमरैं सतिनाम कि ग्रिंथ पठैं अघ खोवहिंगे ।
अंत समै जम को न पिखैं मिलि आइ मैं सु अलोवहिंगे ।। १३ ।।

---

1. सहना । 2. ऐसा । 3. इच्छा धारण कर । 4. पूर्ण होगी । 5. आदर । 6. प्रसन्नतापूर्वक । 7. हृदय में । 8. पोशाक । 9. प्रेमपूर्वक प्रभु-दर्शन करेंगे ।

दोहरा

बैठे श्री गुर राम सर वंनो आन्यो ग्रिंथ ।
तहां महातम इह कह्यो देनि सीख निज पंथ ॥ १४ ॥

चौपई

त्यार भयो जबि जिलत बंधाई । बुड्ढे सों गुर गिरा अलाई ।
कहो ग्रिंथ साहिब किस थाना । नित शोभहि जहिं महिद महाना ॥ १५ ॥
हाथ जोरि तिन तवहि बखानो । श्री गुर तुम ते कौन सिआनो ।
तऊ सुनहु सर सुधा मझारा । हरि मंदरि सुंदर दरबारा ॥ १६ ॥
सदा सथापनि ग्रिंथ सु लाइक । शोभहिगे इम तहां सुभाइक ।
सिहजा शेष समुंद्र मझारे । जथा शेख सांई छवि धारे ॥ १७ ॥
मनहु बीच बैकुंठ सु मंदिर । बिशनु बिराजहि छबि सों अंदर ।
सुनति प्रसंन गुरू बहु भए । जथा जोग इन बरनन कए ॥ १८ ॥
बन्यो सुधासर बिच हरि मंदिर । इह सम नहीं त्रिलोकि अंदरि ।
तथा ग्रिंथ साहिब शुभ रच्यो । सरबोत्तम हरि नामनि खच्यो[1] ॥ १९ ॥
उचित मेल दोनहु को बनै । निस बासुर हरि किरतन भनें ।
सुनि गुरदास ! सु बाक हमारे । श्री गुर रामदास दरबारे ॥ २० ॥
दिन प्रति बर्धाहिं समाज बडेरे । दुख दारिद को आइ न नेरे ।
हरि मंदिर हरि रूप त्रिलंदा । सेवहिं सेवक ब्रिंद मुकंदा ॥ २१ ॥
लछमी निस बासुर इस सेवहि । शरधा धरहिं दास फल लेवहिं ।
आज वास इस थल ही कीजहि । होति प्रात को तहिं गमनीजहि ॥ २२ ॥
सभिनि अहार कर्यो शुभ खाना । भूम सैन कीनसि तिस थाना ।
ग्रिंथ साहिब आदर के हेतु । भूतल सैने[2] गुरू समेत ॥ २३ ॥
रिदै बिचारनि श्री गुर करैं । टहिल[3] ग्रिंथ की कौन सुधरै ।
बेदी तेहण भल्ले बंस । सोढी जे कुल के अवतंश ॥ २४ ॥
निज कुल को इनको हंकारा । करि न सकहिंगे सेव उदारा ।
इह सेवक की वसतु सदीवा । निरहंकार जिनहु मन नीवा ॥ २५ ॥
सेवा बिखै निपुन जो होइ । करिअहि इहां सथापनि सोइ ।
श्री नानक को दरशन कीनि । अस बुड्ढा बिच सेव प्रबीन ॥ २६ ॥
इम बिचार करि निंद्रा पाई । जागे जामनि जाम रहाई ।
बुड्ढा पुन गुरदास सु जागे । श्री गुर चरन महिं पागे ॥ २७ ॥

---

1. हरिनाम द्वारा खचित, जुड़ाउ । 2. पृथ्वी पर सोए । 3. सेवा ।

सौच[1] रामसर कीनि शनाना। बद्री तर बैठे करि ध्याना।
द्वै घटिका लखि अंम्रत काला। श्री अरजन वच कह्यो रसाला॥ २८॥
बुड्ढा निज सिर पर धरि ग्रिंथ। आगे चलहु सुधासर पंथ।
मानि बाक ले भयो अगारे। चमर गुरू अरजन कर धारे॥ २९॥
संख अनिक लघु दुंदभि बाजे। जै जै करि ऊच सुर गाजे।
सुंदर श्री हरि गोविंद चंद। संग चलति हुइ शोभ बिलंद॥ ३०॥
हरि मंदिर महिं जाइ पहुंचे। रागी राग करति सुर ऊचे।
मंजी सहत ग्रिंथ तहिं थापि। बैठे निकट गुरू तबि आपि॥ ३१॥
वार भोग को सुनि मन लाई। श्री अरजन पुन गिरा अलाई[2]।
बुड्ढा साहिब खोलहु ग्रिंथ। लेहु अवाज़ सुनहि सभि पंथ॥ ३२॥
सुनि गुर वचन रुचिर मन लायक। सत्त वाक मुख जलज अलाइक[3]।
अदब संग तबि ग्रिंथ सु खोला। ले अवाज़ बुड्ढा मुख बोला॥ ३३॥

॥ **सूही महला ५** ॥

संता को कारजि आपि खलोइआ हरि कंमु करावणि आइआ राम।
धरति सुहावी तालु सुहावा विचि अंम्रित जलु छाइआ राम॥
अंम्रित जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ सगल मनोरथ पूरे।
जै जै कारु भइआ जग अंतरि लाथे सगल विसूरे॥
पूरन पुरख अचत[4] अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ।
अपना बिरदु रखिआ परमेसरि नानक नामु धिआइआ॥ १॥

चौपई

सुनि सभिहुं तबि सीस निवायो। दीन बंधु प्रभु तिन लखि पायो।
श्री गुर करते चमर फिरंता। बुड्ढा जपुजी पाठ करंता॥ ३४॥
संगति धंन धन सुनि कहै। अधिक अनंद प्रेम ते लहै।
जपुजी भोग पाइ जैकारा। सीस निवावति सभिनि उचारा॥ ३५॥
अति अनंद श्री अरजन नाथ। भए क्रितारथ मानि सनाथ।
अधिक प्रेम ते गद गद होए। गुन गन श्री परमेशुर जोए॥ ३६॥
हरि मंदिर ते निकसि अगारी। हरि कीरति बहुभांति उचारी।
सिहजा शेष बिकुंठ महाना। ब्रह्म लोक शिवलोक सथाना॥ ३७॥

---

1. शौचोपरांत। 2. वाणी उच्चारी। 3. मुख-कमल से कहा। 4. अच्युत।

स्वेत दीप तजि लोका लोक। पुरी अजुध्या आदि अशोक।
पुन दुआरिका आदिक थान। सभि को तजि करि श्री भगवान ।। ३८ ।।
श्री गुर रामदास दरबारा। आनि बसे इस थान उदारा।
कली काल महिं इसी समान। नांहि न आन सथान महान ।। ३९ ।।
तीन लोक पति जहां बिराजे। भोगवती[1] सुर पुरि पिखि लाजे।
सभि सथान की श्री चलि आई। आनि बसी स्री गुर शरनाई ।। ४० ।।
धंन धंन श्री गुर दरबारा। पईयति[2] जहां पदारथचारा।
इम उतमाहित दिवस बितायो। संध्या भई तरनि असतायो ।। ४१ ।।
बुड्ढे बूझनि कीनसि तबै। ग्रंथ रहै कित निस महिं अबै।
जहां आपकी आइसु होइ। करहिं सिक्ख मिरजादा सोइ ।। ४२ ।।
श्री गुर कह्यो प्रभू दरबारा। ग्रिंथ प्रमेशुर को अवतारा।
डेढ जाम जामनि जबि जाइ। पठहिं सोहिला किरतन गाइ ।। ४३ ।।
बहुरो ले जावहु असवारा। जिसी कोठरी रहनि हमारा।
तहां निवास करहु जुत मान। जाम डेढ जामनि रहि आन ।। ४४ ।।
श्री हरि मंदिर तबहि शनानहु। फरश अनेक भांति के ठानहु।
दीपक सदा घ्रित को बारो। जाम निसा जबि रही निहारो ।। ४५ ।।
रागी आसा वार सु गावहिं। अनिक राग के शब्द सुनावहिं।
द्वै घटिका जामनि रहि जबै। आनहु श्री ग्रिंथ साहिब तबै ।। ४६ ।।
वार भोग ते खोलि पढीजै। इसी प्रकार कार नित कीजहि।
इम कहि श्री गुर बैठि रहाए। चौंकी सुनी कानड़ा गाए ।। ४७ ।।
बहुर सोहिला पठि करि पासि। उठि तबि सभि कीनसि अरदास।
बुड्ढे ग्रिंथ लीन सिर धारी। चवर करहिं गुर वारंवारीं ।। ४८ ।।
संखनि की धुनि कीनी बिसाला। बादित अपर बजे तिसकाला।
रहैं कोठरी महिं गुर सदा। गमनहिं सदन आपने कदा ।। ४९ ।।
तिह सथान ले करि जबि गए। सुठ प्रयंक तबि डासति भए[3]।
सेज बंद गुंफे बड ज़री। सुंदर फूलनि माला धरी ।। ५० ।।
तहां निवास ग्रिंथ कौ कीनो। श्री गुर भूतल निकट असीनो।
कबि कबि सदन आपने जाहिं। नांहि ते रहैं ग्रिंथ के पाहि[4] ।। ५१ ।।
श्री ग्रिंथ साहिब की कथा। भई जथा उचरी मैं तथा।
सुनति पठति चित बांछति दाता। गुर पग रति ते आतम ग्याता ।। ५२ ।।

इति स्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे सतिगुरू महातम प्रकाश श्री ग्रिंथ साहिब बरनन नाम पचासमो अंशु ।। ५० ।।

---

1. नागलोक की राजधानी। 2. प्राप्य हैं। 3. तब सुंदर पलंग बिछाया गया। 4. निकट।

अंशु ५१

सिक्खनि प्रसंग

दोहरा

श्री सतिगुर इक दिन थिरे संगति दरसति आइ।
सिक्ख तिलोका नाम जिस चरन कमल सिर लाइ ॥ १ ॥

चौपई

हाथ जोरि तिन अरज गुजारी। मैं आयो प्रभु शरन तुमारी।
जिस ते मेरो हुइ कल्याना। जुग लोकन महिं अनंद महाना ॥ २ ॥

अस मुझ कउ दीजहि उपदेश। सुनति कमावति नसहि कलेश।
सुनि सतिगुर करि दया सुनाई। सत्तिनाम सों रहु लिवलाई ॥ ३ ॥

ऊठति बैठति आवति जाते। नहिं सिमरन त्यागहु दिन राते।
परमेशुर भाणे को मानि। हरखहु भली करहि इम जानि ॥ ४ ॥

दोष अरोपहु कोइ न प्रभु मैं। जो व्यापक नम की सम सभि मैं।
तन हंता को तजि अभ्यास। सनै सनै लखि रूप प्रकाश ॥ ५ ॥

रहु अहिंस करि सभि पर दया। किसको नहीं दुखावहु हिया।
जथा लाभ कीजहि संतोषा। तजहु बिकार आदि जे रोसा ॥ ६ ॥

इम सति गुर ते ले उपदेश। गमन्यो गज़नी अपनो देश।
मुगल चाकरी तहां करंता। वहिर अरूढै संग रहंता ॥ ७ ॥

लेति रजतपण नित पंचास। आयुध धरे रहति तिस पासि।
चढ्यो मुगल इक द्योस शिकार। संग तिलोका असु[1] असवार ॥ ८ ॥

मुगल अगारी म्रिगनि पलाई[2]। पीछे लागे तुरंग धवाई[3]।
जवहि तिलोके कीनसि नेर। घोरा मिल्यो निकटि तबि हेरि ॥ ९ ॥

---

1. अश्व। 2. मुग़ल के आगे-आगे हिरणी दौड़ी। 3. तेज़ दौड़ा कर।

खैंच खड़ग को तां पर झारा। म्रिगनी गरभ दुधा करि डारा[1]।
जुग अरभक[2] बिच ते गिर परे। कितिक काल महिं तरफति मरे॥ १० ॥
देखि तिलोके करुना ठानी। धिक धिक अपने करम बखानी।
ऐसो पाप अचानक लए। इक के हते तीन मरि गए॥ ११ ॥
गुर उपदेश कर्यो तबि सिमरन। दया करहु नहिं हनो जीव गन।
सो मुझते नहिं गयो कमायो। यांते दोष अधिक मैं पायो॥ १२ ॥

शसत्र पास ते अ्रघ हुइ आवै। त्यागनि करौं न पुन को घावै।
चित बिचार तरवार हटाई। तेग काठ की करि गर पाई॥ १३ ॥

कितिक दिवस गर राखी सोई। हुतो तिलोके को रिपु कोई।
तिसने सकल भेद को पाइ। चारी[3] करी मुगल ढिग जाइ॥ १४ ॥
कहै तिलोका बडो सिपाही। तेग काठ की राखति पाही।
लोह मूठ ऊपर दिखराई। लहै दरब को करि चतुराई॥ १५ ॥
सुनति मुगल नहिं मानी बानी। सूर तिलोका महां गुमानी।
मैं सादर राखों दे धन को। जानों काज करहि बड रन को॥ १६ ॥
पुनहि मुगल संग चुगल उचारै। आप सभा लावहु इक बारै।
तबहि अचानक लिहु निकसाई। देखी परै होइ जसु पाई[4]॥ १७ ॥
जे करि तेग काठ की होइ। देहु न दरब बिनौकर सोइ[5]।
होइ जि लोहा खडग प्रकाश। तौ लिहु दंड जि हुइ मम पास॥ १८ ॥
सुनति मुगल कै संसा भयो। सकल दिवान लाइ निज लयो।
खड़ग सिपर धरि ब्रिंद सिपाही। बैठे सहत तिलोके पाही॥ १९ ॥
नहीं निरादर इसको होइ। रिदै बिचार मुगल किय सोइ।
प्रथम खड़ग निज खैंचि दिखाओ। पून दूसर को कहि निकसायो॥ २० ॥
पुनह कही सभि सुभट! क्रिपान। करहु दिखावनि अलप महान[6]।
सुनति मुगल ते डरति तिलोके। कहै कहां मम खड़ग बिलोके[7]॥ २१ ॥

---

1. मृगी का गर्भ (काट कर) दो टुकड़े कर दिया। 2. दोनों शावक। 3. चुग़ली। 4. जैसे पहनी होगी, दीख पड़ेगी। 5. उसे पद-च्युत करदें। 6. छोटे-बड़े। 7. मेरी तलवार देखकर क्या कहेगा।

तबि सतिगुर उर सिमरनि करे। मैं उपदेश आपको धरे।
रहौं अहिंस तजी तरवार। उधरहि परदा सभा मझार ॥ २२ ॥

अबि मेरी तुम करहु सहाई। जथा द्रोपती लाज बचाई।
परदा सभा बिखै तिस राखा। पुरी न दुषटनि की अभिलाखा ॥ २३ ॥

तिम मेरी अबि लाज रखीजै। सभा बिखै करि खड़ग दिखीजै।
नांहि त हेरहि काठ क्रिपान। करहि मुगल मेरी तबि हानि ॥ २४ ॥

मन ही मनहि मनावति गुर को। दहल रह्यो नहिं धीरज उर को।
तबि सतिगुर निज दास बिचारा। भए सहायक लाइ न बारा ॥ २५ ॥

जबि सभि के इम खड़ग बिलोके। कह्यो कि तूं भि दिखाउ तिलोके।
किस प्रकार को राखति पास। को तकमा करि हैं नर जास[1] ॥ २६ ॥

कह्यो बिलोकि तकमा[2] गुर को। मोर खड़ग पर नहीं अपर को।
जस सतिगुर ने दीनसि मोही। बहिर निकासि दिखावों तोही ॥ २७ ॥

वाहिगुरू कहि खैंच निकारा। निकसे भयो प्रकाश उदारा।
अस तीखन धारा असि केरी। नहीं अपर को इस बिधि हेरी ॥ २८ ॥

हेरति हरख्यो मुगल बिसाला। दुगना रोज़ कर्यो तिसकाला।
दंड दयो तिस चुगल उदारा। मुख कारा करि बहिर निकारा ॥ २९ ॥

अति शरधा धरि सतिगुर मांही। केतिक दिन महिं आयो पाही।
धंन धंन कहि चरनी पर्यो। पुनह प्रसंग सनावनि कर्यो ॥ ३० ॥

सुनति सभा महिं सतिगुर कह्यो। दया करनि प्रण तैं निरबह्यो।
क्यों न होहिं तबि गुरू सहाई। गुरबानी मनमानि[3] कमाई ॥ ३१ ॥

सगरे सिक्खनि सुन्यो प्रसंग। धंन गुरू कहि शरधा संग।
केतिक दिन रहि गयो तिलोका। सिक्ख कटारू दरस बिलोका ॥ ३२ ॥

वंदन करी चरन अरबिंद। ठांढे हुइ जसु कर्यो बिलंद।
बनो सहाइक तुम जगनायक। सिक्खनि के गन बिघन नसाइक ॥ ३३ ॥

बूझति भयो, देहु उपदेश। जिस करि सगरे मिटैं कलेश।
सूवा काबल बिखै रहाई। हेत जीवका मैं घड़वाई[4] ॥ ३४ ॥

---

1. ताकि उसकी छाप (मुहर) का निर्णय कर सकें। 2. मुहर। 3. मन में श्रद्धापूर्वक मानकर। 4. तौलने वाला।

सतिगुर कह्यो घाट नहिं दीजै[1]। सत्तिनाम को सिमरन कीजै।
देहु दसौंध गुरू हित सदा। दारिद सदन होहिं नहिं कदा॥ ३५॥
सुनि करि अपने धाम सिधारा। करहिं सदा अपनी तहिं कारा।
गुर गुर जपहि न तोलहि घाट। एक बनक ने दीनसि बाट॥ ३६॥
पैसे पंच घाट सो अहा। नहीं कटारू उर मैं लहा।
नित तोलति तिस के संग देई। जाइ घाट जो ग्राइ सु लेई[2]॥ ३७॥
इकने तोल्यो होइसि घाट। लख्यो कटारू को घट बाट।
चारी जाइ उचारी तांहि। तोलति घाट सभिनि के पाहि॥ ३८॥
सुनि सूबे रिस करि बुलवायो। पुन कहि बाट धरा अनवायो[3]।
अपर संग इस तोलनि कीजै। मोहि रूबरो इस विधि लीजै॥ ३९॥
तबहि कटारू उर डरपायो। सतिगुर ध्यान धर्यो जसु गायो।
नहिं सहाइ इस थल किस केरी। ग्रबि रावर की आस बडेरी॥ ४०॥
अब ग्रनजान पले महिं कीनि। सो न बिचारहु मैं जन दीन।
एक भरोसा मोकहु भारी। आस न दूजी शरन तिहारी॥ ४१॥
इत सतिगुर बड सभा मझारी। बैठे दम्पति हैं नर नारी।
इक सिख पैसे पंज चढाए। धरि कर पर तोलति ले दाएं[4]॥ ४२॥
पुनहु बाम कर पर धरि तोले। देखि दास ढिग तबिहूं बोले।
श्री सतिगुर पाया नित आवति। हेम रजत कर कबि न छुहावति[5]॥ ४३॥
पैसे पंच आज कर लीए। दाहनि बाम धरहु हित कीए।
इह कारन क्या उचरहु स्वामी। इत उत धरति न हम कुछ जामी[6]॥ ४४॥
श्री गुर कह्यो सिक्ख को बाट। पूरा करहिं इतो सो घाट।
पलरो दोन तराजू केर। तोलति है इत उत नर फेरि॥ ४५॥
यांते हम दोनहु कर धरैं। सिख को बाट सु पुरा करैं।
नाम कटारू काबल मांहि। बाट घट अनजाने तांहि॥ ४६॥

---

1. कम नहीं देना (तोलना)। 2 आकर लेने वाले को कम जाता है (बाट कम होने से कम तुलता है)। 3. पुन: कह कर उसका बाट भी मंगवाया। 4. हाथ में लेकर कभी दायें (कभी बाएँ) तोलते हैं। 5. सोना-चाँदी भी कभी हाथ से नहीं छूते। 6. कुछ नहीं जान पाते।

इम सतिगुर सिक्खनि महिं कह्यो। पूरा बाट जु सूबे लह्यो।
भयो कटारू पर सु प्रसंन। दुषट चुगल झूठा, तूं धंन ॥ ४७ ॥

कर्यो कोष पति सौंप्यो कोष। लख्यो मातबर[1] इहु बिन दोष।
कितिक मास बीते तबि आयो। गुर दरशन करि सीस निवायो ॥ ४८ ॥

बिखम थान महिं भए सहाई। जहां न पहुंचहि बाप न माई।
बूझयो सिक्खन कह्यो प्रसंग। जान्यो सभिनि गुरू नित संग ॥ ४९ ॥

जिम पैसे कर बाएं दाए। सतिगुर धारे सभिनि बताए।
सुजसु बिसद गुर पसर्यो सारे[2]। सिक्ख होति हैं आनि हजारे ॥ ५० ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' वरननं नाम इकपंचासमो अंशु ॥ ५१ ॥

---

1. दायित्व-पूर्ण । 2. गुरु का विषद् यश चतुर्दिक प्रसारित हुआ ।

अंशु ५२

सिक्खनि प्रसंग

दोहरा

पुरीआ चूहड़ चौधरी हुतो ग्राम के दोइ।
श्री अरजन को सुजसु सुनि कांखी[1] गति के होई ।। १ ।।

चौपई

शरधा धरि आए गुरद्वारे। कर जोरे शुभ दरसु निहारे।
पद अरबिंद बंदना करी। जथा शकति भेट सु ढिग धरी ।। २ ।।

बैठे आग्या पाइ अगारी। हित बूझन अरदास उचारी।
सुनहु गरीब निवाज क्रिपाला। बित्यो प्रतीखति हम चिरकाला ।। ३ ।।
आवनि को चाहति चित रहे। कारज अनिक प्रकारनि अहे।
हम पर अबि करुना तुम होई। शरन परे शरधा धरि दोई ।। ४ ।।

ग्राम चौधरता कार जु पावैं। तिन महं हम बहु झूठ कमावैं।
श्री गुर जी किम होइ उधारा। सुन्यो चहति उपदेश तुमारा ।। ५ ।।

श्री अरजन सुनिकै सिख अरजिनि[2]। क्रिपा करी जिन को जसु अरजुन[3]।
श्री मुखते शुभ बाक उचारा। त्यागहु झूठ, क्रोध, अहंकारा ।। ६ ।।
झूठ समान पाप नहिं कोई। नहीं झूठ ते शुभ गति होई।
कलि को कूर कहैं अगवानी[4]। कूर बिकारनि की रजधानी[5] ।। ७ ।।

जो करि नेम कूर नहिं कहैं। तिन को मुकति सुगम ही अहै।
भूल न कूर भने गुर सिक्ख। कषट सहत नहिं भवहि भविक्ख ।। ८ ।।
गुर ते सुनि पुरीआ पुन भनै। कूर बिना नहिं चौधर बनै।
झूठ बिना न होइ गुजरान। झगरे परहिं अनिक ही आनि ।। ९ ।।

---

1. कांक्षी, चाहने वाली गति। 2. प्रार्थना। 3. उज्ज्वल। 4. यह झूठ कलियुग का अगुआ है। 5. झूठ विकारों की राजधानी है।

श्री अरजन सुनि तबहिं क्रिपाला। कह्यो करहु निज पुरि ध्रमसाला[1]।
कथा कीरतन रीति चलाओ। गुर को शबद सुनहु अरु गाओ॥ १० ॥
दोनहु समैं जाहु तिस थाना। चतुर चतुर घटिका हित ठानि[2]।
गुरबानी की कथा सुनीजै। इक चित हुइ करि प्रेम रखीजै॥ ११ ॥
सगरे दिन जो झूठ कमाओ। धरमसाल महिं आनि लिखाओ।
एक मास लगि कागद सारो। करहु इकतर भले निरधारो॥ १२ ॥
जबहु अमस्स्या को तुम आवो। सो कागद अपने संग ल्यावो।
झूठ महीने बोलहु जेते। हमहि सुनावहु मिलि करि तेते॥ १३ ॥
करहु पुंन सो भी लिखि करि कै। आनि सुनावहु सकल उचरिकै।
सुनि उपदेश नमो करि गुर को। कितिक दिवस महिं गमने पुरि को॥ १४ ॥
जिम गुर कह्यो रची ध्रमसाल। कथा कीरतन हुइ जुगकाल[3]।
कह्यो झूठ सो करहिं लिखावनि। सति संगति महिं हुई शरमावनि॥ १५ ॥
पुन जबि कूर बोलिबे लगैं। रिदै बिचारहि क्या कहि अगैं॥
कबि हट जाइ कबहि कहि कूर। पुन चलि आवहिं गुरू हजूर॥ १६ ॥
लगहिं सुनावनि लज्जित होइ। तऊ हुकम बसि गुर के दोइ।
सभि कागद को देहिं सुनाइ। पीछे रहैं अधिक पछुताइ॥ १७ ॥
खषट महीने बीतै जबै। त्याग्यो गयो झूठ तबि सभै।
इक तो नरनि बिखै बडिआई। सभा मझार गुरु अगुवाई॥ १८ ॥
लज्जित होइ बिसूरनि[4] फेर। यांते त्याग दीनि इक वेर।
भले करम करिवे रुचि जागी। गुर उपदेश नाम लिवलागी॥ १९ ॥
नीके पंथ परे बुधि आई[5]। प्रभु डर ते त्यागी बुरिआई।
सति संगति मिलि जनम सुधारे। थिरहिं बहुत सतिगुर के द्वारे॥ २० ॥
सेवा बिखै लगे करि प्रेम। प्रापति भई अंत को छेम[6]।
इक पैड़ा पुन दुरगा आयो। श्री अरजन को सीस निवायो॥ २१ ॥
बैठे सनमुख अरज गुज़ारी। करहु प्रभू कल्लयान हमारी।
सिक्ख हज़ारों सेव कमाई। हमने सुनी परमगतिपाई॥ २२ ॥
जिस बिधि हमरे मिटहिं कलेश। श्री मुख तै कीजहि उपदेश।
उर शरधा तिन के द्रिढ जानी। सतिगुर गति-दा गिरा बखानी[7]॥ २३ ॥

---

1. अपने नगर में गुरुद्वारा बनाओ। 2. हित पूर्वक (वहाँ) चार-चार घड़ी के लिए जाया करो। 3. दोनों समय। 4. पश्चाताप। 5. सुमार्ग अपनाया, अनुकूल बुद्धि मिली। 6. मुक्ति। 7. सतिगुरु मुक्ति-दाता है, ऐसी वाणी कही।

पुरब जनम दान जिन कीने। तन धरि तिनहुं पदारथ लीने।
देह अरोग, सुशीला नारी। पुत्र उपंनहि आइ सुकारी ॥ २४ ॥

पसु महिखी धेनू समुदाए। दरब अंन सभि सुख जुत पाए।
फल पूरबले पुंननि केरा। जनम धारि भोगहिं इस वेरा ॥ २५ ॥

जो नर गुरमुख पाइ पदारथ। जनम सहत निज करहि सकारथ।
जहिं सति संगति को हुइ मेलि। कथा कीरतन को रसु झेल ॥ २६ ॥

तिन कहु भोजन चार प्रकारा। स्वाद, सनिगध, मधुर, रसवारा।
पंकति महिं कर सो बरताइ। मुदत होइ सादर अचवाइ[1] ॥ २७ ॥

म्रिदुल गिरा कहि बारंबारा। त्रिपतावहु दे भले अहारा।
कर अरु चरन पखारि बिठावै। घाम स्वेद[2] ते वायु झुलावैं ॥ २८ ॥

जबि लौं धन चलि आइ वधेरे। नित त्रिपतावैं संत घनेरे।
पाछल बच्यो अहार सु खावैं। महां पुनीत पुनीत बनावैं ॥ १९ ॥

गन पातक को घातक होइ। पुंन बिसाल बधावै सोइ।
इस बिधि जे नित नहिं बनि आवैं। तौ दिन पुरब[3] मास महिं पावै ॥ ३० ॥

पूरण मासि, दरस[4], संक्रांति। इत्यादिक जे नाना भांति।
गुर सिक्खनि को करहि अहारै। पठहिं चुरो[5] जबि पान पखारै ॥ ३१ ॥

तबि सतिगुर को धारहि ध्यान। बिनै बखानहि बनि बिन मान।
कर जोरै उर महिं इम कहै। इह प्रसादि प्रभु तेरो अहै ॥ ३२ ॥

सभि सिक्खन को बंदन करै। अच्यो गुरनि इम शरधा धरै।
परब सरब जे मास मझार। नहिं बनि आवहि देनि अहार ॥ ३३ ॥

दरस किधौं संक्रांति सु दिन मैं। त्रिपतावहि गुर सिक्ख सदन मैं।
बहुर वसत्र आछे बनिवावैं। संत कि सिक्ख कषट को पावै ॥ ३४ ॥

सीतकाल महिं करि पहिराइ। लेफ निहाली[6] तूल डलाइ।
कं कंबर[7] दे हेरि नगन को। छादनि करहि गरीबनि तनको ॥ ३५ ॥

करनि दान इस बिधि के दोइ[8]। सरब करै इह अति हित होइ।
जथा शकति इह सभि के जोग। ग्रिहसत धरम धार्यो जिस लोग ॥ ३६ ॥

बचन कह्यो श्री नानक धीर। पुन दान का करै सरीर।

1. खिलाते हैं। 2. धूप और पसीना। 3. पर्व। 4. अमावस। 5. कुल्ला करना। 6. दुलाई, गद्दा। 7. कंबल। 8. दोनों—अन्न और वस्त्र।

सो गिरही गंगा का नीर। धरम ग्रिहसत कौ दान गहीर[1] ॥ ३७ ॥
ज्यों क्यों करि दिन रैन मझारा। वसत्र नगन को, छुधति अहारा[2]।
पुंन अपर बहु बिधि के अहैं। तऊ न समता इसकौ लहैं ॥ ३८ ॥
दान शांत की इह सुखदाई। भगति उपावहि, कषट मिटाई।
इम सतिगुर उचर्यो उपदेश। पैड़े दुरगे सुन्यो अशेष ॥ ३९ ॥
बंदन कीनि सदन को गए। गुर को कह्यो कमावति भए।
बहु सिख आवैं, देहिं अहारा। सादर कहैं भाउ बड धारा ॥ ४० ॥
केतिक द्योस बिते इम करते। परब दिवस गुर जाइ निहरते।
खरच बडे घर आमद थोरी। यांते कढ्यो करज धन औरी[3] ॥ ४१ ॥
इक दिन बहु संगति चलि आई। नहिं कुछ घर महिं दे जु खुवाई।
दयो न करज़ बनक ने जबै। कुछक बिभूखन त्रिय के तबै ॥ ४२ ॥
बेच तांहि को असन बनावा। सभि संगति को घर अचवावा।
अगले दिवस हेत नहिं रह्यो। नहिं उर डोले, धीरज लह्यो ॥ ४३ ॥
वहिर भूमिका[4] जबिही गयो। कर सो थान खन्यो लखि लयो।
इक बासन दीनारनि भर्यो। तिह निकास घरि ल्यावनि कर्यो ॥ ४४ ॥
करज़ उतारि बिभूखन सारे। धरिवाए शुभ, करति अहारे।
दयो दरब प्रभु ने इम जाना। बसत्र अहार दीनि गनदाना ॥ ४५ ॥
गुरबाणी पठि भगति करंते। श्री अरजन को आइ दिखंते।
सुनि सतिगुर ने धन बिरतांत। बचन कर्यो जो बंडति खात[5] ॥ ४६ ॥
वाहिगुरू तिस थूड़नि न देति[6]। सरब पदारथ होति निकेत।
सत्तिनाम सिमरति गति पाई। अंत समै गुर भए सहाई ॥ ४७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खनि प्रसंग' बरननं नाम दुइ पंचासम अंशु ॥ ५२ ॥

---

1 गृहस्थी का बड़ा धर्म दान देना ही है। 2. नंगे को वस्त्र, भूखे को भोजन। 3. और धन कर्ज़ लेकर। 4. शौचादि के लिए। 5. बाँट कर खाता है। 6. कमी नहीं पड़ने देता।

अंशु ५३
सिक्खन प्रसंग

दोहरा

झिग्रण हुते सु जात के बाला किशना नाम ।
संसक्रित्त बिद्या बिखै पंडित बड अभिराम ।। १ ।।

चौपई

सो जबि कथा करति नर मांही । सुनहिं ब्रिंद उर हरखु उपाहीं ।
आछी रीति सुनावनि करिहीं । रीझहिं सगरे सुजसु उचरिहीं ।। २ ।।
तिनहूं पिखे सिखजाति घनेरे । बांछति पाईं गुरू मुख हेरे ।
सुनि उपदेश त्याग लब रोस । धरहिं रिदै महिं सति संतोष ।। ३ ।।
इत्यादिक गुन रिदै बिचारे । गुर दरशन के हेतु सिधारे ।
श्री अरजन के ढिग चलि आए । नमो ठानि बैठे समुहाए ।। ४ ।।
बोले बहुर आप सतिगुर हो । उपदेशो गुन सिक्खन उर हो[1] ।
खषट शासत्रनि मतको जानहिं[2] । कथा पुरान महान बखानहिं ।। ५ ।।

श्रोता को हम देति रिझाइं । सरब प्रसंनहिं सुजसु अलाइं ।
तऊ हमारे मन महि शांति । नहिं उपजति, हुइ मत अवदाति[3] ।। ६ ।।
सिक्ख आपके शांती पाइं । अज़मत जुति लहिं गुन समुदाइ ।
क्रिपा करहु इह भेद बतावो । रिदै हमारे शांति उपावो ।। ७ ।।

सुनि श्री मुख ते बाक बखाना । मन कारन गुन अवगुन जाना[4] ।
बिद्या पठनि लगे तुम जबते । मन त्रिशना उपजाइसि तबि ते ।। ८ ।।
बहु बिद्या हम पठहिं बनाइ । दरब समूह लेहिं उपजाइ ।
दिढ संकलप तथा ही रह्यो । करि करि कथा दरब ही लह्यो ।। ९ ।।

---

1. सिक्खों के हृदय में गुणों (को धारण करने का) उपदेश देते हैं । 2. छः दर्शनों के स्वरूप को (हम) जानते हैं । 3. उज्ज्वल बुद्धि द्वारा शाँति पैदा नहीं होती । 4. गुण-अवगुण का कारण मन को जानो ।

निज मन के समझावनि कारन। पठी न बिद्या किय न बिचारनि।
कथा करति धन मँहि मन रहे। किम शांति गुनगन को लहै॥ १०॥
अबि ते करहू अगारी ऐसे। समझावनि हित लोकनि जैसे।
अनिक भांति की करि चतुराई। करहु रिझावनि ठानि उपाई॥ ११॥
तैसे मन समझावनि कारन। पठि वेदांत सु करहु बिचारनि।
इस उद्म मँहि बहु जबि लागो। सिमरहु सत्तिनाम अनुरागो॥ १२॥
मास मास मँहि दरसहु गुर को। आइ ब्रितंत बतावहु उर को।
सुख दुख जो पईयै परलोक। तिसको लखहू लेहु मन रोक॥ १३॥
बसहि रिदे मन की सभि जानहि। सो परमेशुर लखि सभि थानहि।
श्री मुख से सुनि पंडित दोऊ। माने वाक बिचारति सोऊ॥ १४॥
मन को समुझावनि पुनि लागे। सनै सनै त्रिशनादिक त्यागे।
सतिगुर संग करति भे नीत। सत्तिनाम संग लागी प्रीति॥ १५॥
होति भयो तिन को कल्लयाने। गुर के सिक्ख होइ मन माने।
नाम समुंदा इक चलि आयो। श्री अरजन को सीस निवायो॥ १६॥
बैठि निकट मुख वाक बखाने। गुरू गरीब निवाज सुजाने।
सनमुख वेमुख कहीअहि कौन। आप वखानहु लच्छन दौन[1]॥ १७॥
जिसते मैं जानौं मन मांही। सनमुख बनौं, ब्रिमुख हुई नांही।
सुनि गुर कह्यो होति बड शाहू। कारज करनि पठावहि काहू॥ १८॥
बुधि ते बल ते प्रेम लगाइ। जो कारज को लेति बनाइ।
सो सनमुख आवति चलि शाहू। नहीं करहि वेमुख लखि तांहू॥ १९॥
वाहिगुरू तिस पठ्यो तरनि को। नाम दान इशनान करनि को।
पाछल राति नींद को त्यागे। करहि सौच मज्जन अनुरागे॥ २०॥
अम्रित वेले नित सत्तिनामु। सिमरहि प्रीति धरहि निशकामु।
गुरबानी पठि रिदे बिचारहि। तरनि उदे[2] निज काज संभारहि॥ २१॥
मुख मँहि किधौं रिदे सत्तिनाम्। सदा संभारहि करते कामू।
जिनहुं न मन ते प्रभु बिसार्यो। सतिसंगति मिलिवे हित धार्यो॥ २२॥
जथा शकति नित देते दान। नगनि छुधति को देखि सुजान।
जिन जग मँहि इम काज बनायो। लगि बिषियनि नहि जनम गवायो॥ २३॥
वाहिगुरू के सनमुख सोइ। हरखहिं तन तजि दरशन होइ।
काज सुधार जाइ प्रभु मिलें। लहिं आनंद मुकति से भले॥ २४॥

1. दोनों के लक्षण (सन्मुख और विमुख के)। 2. सूर्योदय।

जिनहू न जग महिं काज सुधारा। सो वेमुख नित रहै दुखारा।
सुनति समुंदे जुग कर जोरे। करहु दया श्री गुरू निहोरे[1] ॥ २५ ॥
मुझ को सनमुख आप बनावहु। दिहु तीनहु गुन को बखशावहु[2]।
गुर कहि सनमुखि सिख हुइं जबै। हुइ आवहि गुर करुणा तबै ॥ २६ ॥
तबहि समुंदे गुर बच माना। तिमही करनि लग्यो शुभ जाना।
केतिक दिन महिं प्रापति ग्याना। सुनहि सदा जिम गुरू बखाना ॥ २७ ॥
कुल्ला मुल्ला झंझु[3] दोइ। सोइनी[4] हुतो भगीरथ जोइ।
तीनहु प्रापति भे गुर शरनी। बंदन कीनि अरज निज बरनी ॥ २८ ॥
गुरू गरीब निवाज सुनीजै। हम को दुखी बिसाल जनीजै।
बहु जूननि महिं जनमति आए। होति म्रितक बहु संकट पाए ॥ २९ ॥
जबि प्रानी के निकसहिं प्रान। बड दुख पाइ, न अपर समान।
अबि आए हम शरन तुमारी। महां कषट ते लेहु उबारी ॥ ३० ॥
क्रिपा करहु हम हर अबि ऐसे। जनम मरन पुन पाइं न कैसे।
श्री मुख ते उचर्यो बनि गुरमुखि। त्यागहु करम जु करते मनमुख ॥ ३१ ॥
पुन पूछ्यो सभि भेद बतावो। गुरमुख मनमुख कहि समझावो।
जबि हम लच्छन लेहिं पछानि। तबि हम धरहिं गुरू बचि मानि ॥ ३२ ॥
श्री मुख ते फुरमावनि कीनि। गुरमुख मनमुख द्वै बिधि तीन[5]।
इक गुरमुख, गुरमुख तर दूजो। गुरमुख तम, नीको लखि तीजो ॥ ३३ ॥
पीठ कुकरमनि को जिन दीनि। गुरू बचन सनमुख मुख कीनि।
को तिन सों जि करहि चंग्याई। सद जानहिं तिसकी भलिआई ॥ ३४ ॥
चित न बिसारहिं, चहिं उपकारा। सभि को भलौ करैं इक सारा।
इहु गुरमुख के लखीयहि लच्छन। सुनि गुरमुख तर जथा, बिचच्छन[6] ! ॥ ३५ ॥
त्याग कुकरमनि को उर धारा। ब्रिंद सुकरमनि अंगीकारा।
जो कारज किस को हुइ साकहि। करहिं भलो खोटो नहिं ताकहि ॥ ३६ ॥
जो नर अपनि करहि अपकारा। तिस पर इह ठानहि उपकारा।
रिदै बिसारहि सकल खुटाई। सहिज सुभाइक होहि भलाई ॥ ३७ ॥
अबि गुरमुख तम के सुनि लच्छन। ग्यान सपंन बिसाल बिचच्छन।
आतम रूप जथावत जाना। जिस प्रकार सतिगुरू बखाना ॥ ३८ ॥

---

1. विनती करी। 2. नाम, दान, स्नान (तीनों) देकर कृपा करो। 3. विभिन्न जातियों के नाम। 4....... 5. गुरमुख और मनमुख दोनों तीन-तीन प्रकार के हैं। 6. विचक्षुण, चतुर।

जग बचित्रता निशचै नांही। एक रूप लखीयति सभि मांही।
अबि सुनि मनमुख की बिधि तीन। किन जे तिन संग नीकी कीनि॥ ३९॥
सो बिसारि ठानहि बुरिआई। किह संग भलो न करहि कदाई[1]।
जिस ने मन ही को मुख कीनि। मन को कह्यो करहि मति हीन॥ ४०॥
धरम न राखहि निंदहि-क्या है[2]। कपट कूर करि लपट त्रिया है।
अस मनमुख के लच्छन जानि। अबि मनमुख तर को सुनि कान॥ ४१॥
पर को भला होति दुख पावहि। किम बिगरहि अस जतन बनावहि।
देखति सुनति तपत अति छाती। चितवहि को होवहि इस घाती॥ ४२॥
अपर भला को कहां सुहाइ। सखा भले को सुनि तपताइ।
मुख ते मीठी कहै सुनावै। नहिं उर जरहि[3] सु जर जर जावै[4]॥ ४३॥
हित अनहित सम एक बिचारहि। सभि को बुरो होइ सुख धारहि।
सभि जग को बैरी सम जानै। बहुतनि संग द्रैश ही ठानै॥ ४४॥
अबि मनमुख तम को सुनि कान। सभि को बुरा अपन हित जानि[5]।
सतिगुर शब्द श्रवन नहिं करै। कथा पुरान कान नहिं धरै॥ ४५॥
दान पुंन इशनान बिहीन। कूरो कहै[6] जीवकाधीन।
इम भाखहि जहिं नर समुदाई। हमहिं न फलति करी भलिआई॥ ४६॥
करति बुराई ही सुख पावैं। अस मनमुखि तम नरक सिधावैं।
घोर शजाइनि[7] सहै सरीर। जनम मरन की पुन पुन पीर॥ ४७॥
सुनि तीनहु गुर को उपदेश। गुरमुख लच्छन धरे अशेष।
श्री सतिगुर को सेवति रहे। निज सरूप महिं थिरता लहे॥ ४८॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नाम तीन पंचासत अंशु॥ ५३॥

---

1. कभी भी। 2. क्या (वस्तु) है, कह कर धर्म की निंदा करता है। 3. सहन नहीं करता। 4. ईर्ष्या में जलता है। 5. सबकी बुराई में ही अपना हित मानता है। 6. मिथ्या कहता है। 7. दण्ड को।

अंशु ५४
सिखनि प्रसंग

दोहरा

लालू बालू विज्ज है तीसर प्रिय हरि दास।
मिलि आए दरशन करनि श्री अरजन के पास ॥ १ ॥

चौपई

बंदि हाथ बंदन करि बैसे। अरज़ बखानी तीनहु ऐसे।
हम को निज उपदेश सुनवाहु। निज सिक्खनि के साथ मिलावहु ॥ २ ॥
जिस बिधि होइ उधार हमारा। करहु आप उपदेश उचारा।
सुनि श्री मुख ते बाक बखाने। मान मोह मतसर करि हाने ॥ ३ ॥
पर का बुरा न राखहु चीत। तुम को दुख न होइ किस रीति।
मिलहु बिकस गुर सिक्खनि साथ। बंदहु भाउ संग जुग हाथ ॥ ४ ॥
मिट्ठा बोलनि अर निव चलना। वंड खावणा हित धरि मिलना।
धरम किरत ते करनि अहारा। पंचहु करम देति सुख सारा ॥ ५ ॥
इह सभि करहु बिसारहु नांही। हुइ कल्लयान ग्रिहसत के मांही।
सुनि करि सतिगुर को उपदेश। कर्‌यो कमावनि कटे कलेश ॥ ६ ॥

दोहरा

धीर निहालू तुलसीआ बूला चंडीआ आइ।
श्री गुर अरजन शरन को जानी मन सुख दाइ ॥ ७ ॥

चौपई

बैठि निकट सतिगुर के सोइ। किरतन होति श्रवन हुइ जोइ।
श्री नानक की उपमा महां। सुनति बिचारति बैठे तहां ॥ ८ ॥
सभि के उर संसै हुइ आवा। नर गन प्रथम झगर जिम पावा[1]।
हाथ जोरि सो बूझनि लागे। सिक्ख बननि महिं मन अनुरागे ॥ ९ ॥

---

1. जैसे पहले अनेक लोगों ने झगड़ा खड़ा किया।

सुनहु गुरू जी लोक अनेक। मिलि करि झगरति हीन बिबेक।
तिन महुं बैठति भयो संदेहू। तुम सरबग्य सु उत्तर देहू॥ १० ॥
केतिक गुर नानक अवतार। जनकादिक के करहिं उचार।
केतिक कहैं बिशनु को रूप। धरि करि कीने चलित[1] अनूप॥ ११ ॥
इत्यादिक बहु कहैं बनाइ। निरनै बात नहीं हम पाइं।
क्रिपा करहु अबि आप बतावहु। किह अवतार भेद समझावहु॥ १२ ॥
सुनि करि उपजहि सिदक हमारे। परहिं पंथ सुख प्रापति सारे।
चिरंकाल को इह संदेहू। बहुत नरनि कै मेटहु एहू॥ १३ ॥
श्री अरजन सुनि गिरा बखानी। श्री सतिगुर नानक गुनखानी।
नेति नेति जिसको कहि वेद। सभि थकि रहे न पायहु भेद॥ १४ ॥
ब्रह्मां शिव सनकादिक सारे। बुधि करि बल करि खोजति हारे।
नाम सहंस्र शेष नित कहै। जिसको गुन के अंत न लहै॥ १५ ॥
पापनि भार अधीरज धरनी[2]। बहु गिनती बिनती करि करनी।
जोग जग्ग तप शकति न रही। शुभ करमनि बिन नर गति लही[3]॥ १६ ॥
मुहि अलंब अबि दीजै कोई। जिसते थिरौं धीर उर होई।
पारब्रह्म अचरज जिस चरिता। सभि जग करता भरता हरता॥ १७ ॥
धर्यो आनि श्री नानक रूप। गुर सिक्खी उपजाइ अनूप।
शकति बिहीन हेरि नर सारे। जोग न जग्ग न तप कुछ धारे॥ १८ ॥
यांते गुर सिक्खी की रीति। जग बिसतरी वधति बड नीत[4]।
सत्तिनाम को जाप बतायो। दान शनान भाउ चित लायो॥ १९ ॥
चारहुं बेदनि को तत लीनि। देशनि भाखा महिं कहि दीनि।
संसक्रित महिं दुरलभ जोइ। लाखहुं महि प्रापत हुइ कोइ॥ २० ॥
सो तत गुर सिक्खनि महिं ऐसे। धर्यो वदर[5] किन कर पर जैसे।
सिमरति नाम भगत को करते। सनै सनै ब्रह्म रूप बिचरिते॥ २१ ॥
उर महिं बिदत सु तत[6] हुइ आवति। जिसके लखे न पुन दुख पावति।
वेद सार की भाखा कीनि[7]। गुरू क्रिपाल क्रिपा रस भीन॥ २२ ॥
तुम भी करहु बिचारनि बानी। रिदा टिकावहु दुबिधा हानी।
सिदक धरहु सिक्खी निरबाहो। नहिं दुख ते जम के संग जाहो॥ २३ ॥

---

1. चरित। 2. पाप-बोझ से अधीर हुई धरती। 3. देखी। 4. नित्य बढ़ती जाती है। 5 बेर, (जैसे किसी ने हाथ पर बेर रख दिया है)। 6. तत्त्व, ब्रह्म। 7. वेदों के सिद्धान्तों को सरल भाषा में कहा।

श्री अरजन ते सुनि हुलसाए। भए सिक्ख संदेहि मिटाए।
गुरबानी को लगे बिचारनि। भगति ग्यान की जो बड कारन ॥ २४ ॥

इस बिधि भयो तिनहुं कल्लयान। गुर को सेवति रहे महान।
तोता अर मद्दू हित धारे। गोखू टोडा महिता[1] चारे ॥ २५ ॥

मिलि करि श्री अरजन ढिग आए। पद अरबिंदनि सीस लगाए।
बैठे हाथ जोरि करि पास। पिखि अवसर कीनसि अरदास ॥ २६ ॥

गुरू गरीब निवाज़! हमारा। जनम मरन ते करहु उधारा।
रावर की शोभा सुनि आए। उचित उधारनि के लखि पाए ॥ २७ ॥

सुनि बोले श्री अरजन ग्यानी। पाठहु सुनहु तुम मिलि गुरबानी।
आपस महिं पुन करहु बिचारा। क्या आशै गुरू देव उचारा ॥ २८ ॥

त्यागनि कह्यो सु त्याग करीजै। ग्रहण जोग सो ग्रहण धरीजै।
पुन बूझति भे कीनि उचारनि। बानी पढनि सु और बिचारनि ॥ २९ ॥

केतिक पुंन दुहनि को होइ। अधिक देति फल कहीं अहि सोइ।
सुनहिं महातम रावरि मुख ते। सो हम करहिं मिलहि जिस सुख ते ॥ ३० ॥

कह्यो गुरू इन को फल जानो। सुनि कीजहि, शरधा उर ठानो।
जो गुरबानी पाठ करंता। महां पाप को होवति हंता[2] ॥ ३१ ॥

अंतहिकरन बिमल नित करै। प्रीति सहत नितप्रति जो रटै।
करहि कंठ पठि अंम्रित वेले[3]। इक चित ह्वै करि मन को मेले ॥ ३२ ॥

अधिक पुंन उपजहिं सुख पावै। पठहि सुनहि नर ब्रिंद सुनावै।
घरहि जु कामन पूरन सोइ। जे निषकाम रिदा सुध होइ ॥ ३३ ॥

जे गुरबानी रहैं बिचारति। बांछा जस आदिक नहिं धारति।
केवल चहैं रिदै कल्लयान। तिन पुरखनि हुइ प्रापति ग्यान ॥ ३४ ॥

जिम काषट महिं पावक रहै। बिना जतन ते नर नहिं लहै।
करि उपाउ जे लेति निकास। कारज करहि संपूरन रास ॥ ३५ ॥

अगनि रूप काषट हुइ जाइ। तेज प्रकाश सकल ही पाइ।
तथा बिचारति जे गुर बानी। तन अभिमान होहि तबि हानी ॥ ३६ ॥

निज सरूप को खोजनि लागे। सने सने प्रापति बड भागे।
आतम ग्यान पाइ ब्रह्म होए। रिदै बिनाशी दुबिधा दोए[4] ॥ ३७ ॥

---

1. चौधरी। 2. नाश करने वाला। 3. प्रात:काल। 4. द्वैत-भाव की दुविधा।

तन हंता बिनसी जिस काल। अहं ब्रह्म ह्वै भए निहाल।
यांते तुम सतिसंगति करि कै। गुर बानी पढि रिदै बिचरि कै।। ३८ ।।
करहु आपनी शुभ कल्लयान। जग बंधन ह्वै हैं सभि हान[1]।
गुर बच सुनि करि चारों भले। लगे बिचारनि सतिसंग मिले।। ३९ ।।
झांझ मुकंदा अपर किदारा। हित कल्लयान आइ गुरद्वारा।
तीनों नमो कीनि थिति पास। कर जोरति कीनी अरदास।। ४० ।।
क्यों करि होइ उधार हमारो। आप मुकंद उपाइ उचारो।
सुनि श्री अरजन तबहि बखाना। तुम जानति हो राग महाना।। ४१ ।।
गुरबानी रागनि महिं गाओ। नीके प्रभु को सुजसु बसाओ।
ज्यों ज्यों अनंद राग ते पाओ। त्यों त्यों प्रेम अधिक उपजाओ।। ४२ ।।
कलिजुग महिं किरतन मानिंद। नहीं अपर को इही बिलंद।
कठन महां तप जेको करै। किरतन समता क्यों हू न धरै।। ४३ ।।
अपर सुकरम करनि जे सारे। होइ जि धन तन बल धरि भारे।
किरतन के समान नहिं कोई। सभि ते अधिक इही इक होई।। ४४ ।।
यांते तुम किरतन नित करो। अपर सुनाइ तारि गन तरो।
सुनि तीनो गुर बूझे फेरी। महिमा किरतन कही बडेरी।। ४५ ।।
पाठ करनि अरु कथा करंन। फल बरनहु इनके भिंनं भिंन।
श्री मुख ते पुन लगे सुनावनि। बाणी पाठ करहि जे पावन।। ४६ ।।
जथा कूप की खेती होइ। सींचति नीर हरी करि सोइ।
शीघ्र पकाइ सदन महिं आनहि। सभि बिधि के सुख भोगन ठानहि।। ४७ ।।
खेत समीप अपर जे होइ। तहिं भी पहुंचि सकहि जल सोइ।
दूर खेत को पहुंचति नांहि। तिम फल सुनहि श्रवन के मांहि।। ४८ ।।
किरतन करनि मेघ की बरखा। बरखे जल हुइ जीवन हरखा।
खेती जहिं कहिं हरीअल होवै। सावत दानो तिन महिं जोवै।। ४९ ।।
सुनहु बिसाल कथा को फल है। झरी लागि जिम बरखत जल है।
थिमक थिमक बुंदैं जे परिहीं। सभि अपने महिं धरनी धरिही।। ५० ।।
बाद[2] न जाति परहि जल जोइ। खेती को सुखदायक सोइ।
तैसे समझावन सिख जेई। कथा कीरतन करते सेई।। ५१ ।।

---

1. संसार के सभी बंधनों का अंत होगा। 2. व्यर्थ।

सुनहि ममोछी[1] हिरदै धारहि। गुननि बधाइ बिकार निकारहि।
रिदे बिचारहि निरनो करै। आतम ग्यान भले उरधरै ॥ ५२ ॥

कथा कीरतन दोनहु मिले। शोभा पावति अति ही भले।
कथा बधावै महा महातम। किरतन सुनते सुधि हुइ आतम ॥ ५३ ॥

जबहि कीरतन करहि भलेरा। हरख बधावहि बहु मन केरा।
जथा मात पुत्रनि ते छाजै[2]। तथा कथा किरतन ते राजै ॥ ५४ ॥

जिम पुत्रनि को पालहि माता। तथा कथा किरतन हरखाता।
सुनि बोले सिख हमै बतावहु। सुत जननी द्रिषटांत जनावहु ॥ ५५ ॥

किरतन पिता कथापति कौन। सो भी करनो होयहु जौन।
कह्यो गुरु सो प्रेम पछानहु। कथा कीरतन प्रेम जि ठानहु ॥ ५६ ॥

प्रेम हुए शोभति हैं दोइ। जिसते महां महातम होइ।
सुनि सतिगुर को द्वै उपदेश। किरतन लागे करनि हमेश ॥ ५७ ॥

महां प्रेम ते शबद सु गावैं। नहीं कामना कोइ उठावैं।
परालबध करि जो किछु पाइं। क्रिया देहि की सो निबहाइं[3] ॥ ५८ ॥

करहि भाउ सिख संगति देति। करि गुज़रान आपनी लेति।
किरतन करति रहैं निषकाम। गुर सेवा लहि पद अभिराम ॥ ५९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिखनि प्रसंग' बरननं नाम चतर पंचासती अंशु ॥ ५४ ॥

---

1. मुमुक्षु, मोक्ष की इच्छा करने वाला। 2. सुशोभित होती है। 3. निर्वाह की गई।

अंशु ५५

सिक्खनि प्रसंग

दोहरा

गंगु नाऊ सहिगला रामा धरमा और ।
पंचम उद्दा जानीए मिलि कै हुइ इक ठौर ।। १ ।।

चौपई

स्री अरजन की पर करि शरनी । बंदन करि कै बिनती बरनी ।
हुइ करि सिक्ख रहे गुर पास । इक दिन करति भए अरदास ।। २ ।।
बेद कतेव मुनी अवतार । पंडित ग्यानी भए हज़ार ।
सभिहिनि भाख्यो ब्रह्म अनंत । खोजि रहे नहिं पायहु अंत ।। ३ ।।
ब्रह्म जु कहै सच्चिदानंद । श्री नानक सो रूप मुकंद ।
ब्रह्म अवतार करै बक्ख्यात[1] । जाने परे सभिनि साख्यात ।। ४ ।।
सो तौ अंत जानते होइं[2] । अपनो अंत लखै सभि कोइ ।
श्री अरजन सुनि संसै ऐसे । उत्तर दियो तिनो कहू तैसे ।। ५ ।।
आदि अंत ब्रह्म की जे होइ । श्री नानक जी उचरति सोइ ।
जिसकै कबहूं आदि न अंत । कहिब्रो तिसको बनहि बिअंत ।। ६ ।।
जैसे बेद नराइन स्वास । बरनन कर्यो ब्रह्म कुछ तास[3] ।
मधुसूदन सो ब्रह्म सरूप । भयो निगुन ते सगुन अनूप ।। ७ ।।
तिनहुं बेद महिं कह्यो बिअंत । हुति जि कहिते आदि रू अंत ।
कहिन बिअंतु अंत इह जानहू । अपर न संसै कैसे आनहु ।। ८ ।।
तुम अब ब्रह्म लखहु सभि मांहि । नभ सम सारे खंडित नांहि ।
सिक्खनि सों अबि भाउ करीजै । वाहिगुरू मुख जाप जपीजै ।। ९ ।।
किह सों द्रोह नहीं मन ठानहु । एक ब्रह्म को रूप पछानहु ।
इसते हुइ तुमरो कल्लयान । जनम मरन दा बंधन हानि ।। १० ।।

---

1. प्रकट । 2. सो अर्थात् गुरु नानक तो अंत (उस ब्रह्म का) जानते होंगे ।
3. उन्होंने अर्थात् वेदों ने ।

श्री गुर ते सुनि कै उपदेश। लागे सिमरनि नाम हमेश।
सेवति रहे गुरू भगवंत। प्रापति भयो परमपद अंत ॥ ११ ॥
फिरणा सूदर भोलू जट्टू। वेता[1] अपर मिल्यो संग भट्टू।
पंडित हुतो तिवाड़ी सारे। मिलि आए श्री अरजन द्वारे ॥ १२ ॥
पिखि करि नमो करी तक शरनी। पुन अरदास आपनी बरनी।
गुरू गरीब निवाज महान। हम गमने गंगा इशनान ॥ १३ ॥
तहां समाज पंडितनि मिल्यो। एवि प्रसंग सभिनि महिं चल्यो।
कहनि लगे भे गन अवतार। सूर सिधि, सादिक भए हजार ॥ १४ ॥
भए असंख सु कहैं पुरान। सभिहिनि करे गुरू सुखदानि।
श्री नानक जग भए बिसाला। कर्यो आपनो पंथ निराला ॥ १५ ॥
तिन को गुरू भयो है कौन। जिह उपदेश लीयो कहु तौन।
जग मैं प्रगट भए अवतार। तिनके मति महिं शोक अपार ॥ १६ ॥
सभि पडित ते सुनि करि कान। हम सिक्खनि तवि कीनि वखान।
इह सुध नहिं किसको हम मांही। सतिगुर कर्यो गुरू कै नांही ॥ १७ ॥
अबि गुर अरजन हैं तिस गादी। जहिं कहिं सिक्खी कीनि अबादी।
तिन ते सुनि करि नीके निरनै। पुन समीप तुमरे हम बरनैं ॥ १८ ॥
श्री मुख ते शुभ बाक उचारा। श्री नानक गुर एकंकारा[2]।
सुर नर की गमता नहिं जहां। सतिगुर को गुर समझहि कहां ॥ १९ ॥
तन धारनि को धरम जि कहीअहि। श्री नानक गुर अंगद लहीअहि।
जिस आगे निज सीस निवायहु। पैसे पंच नलेर चढायहु ॥ २० ॥
सुनि करि तिन पुनि संसै कीना। गुर हुइ सो उपदेशि जि दीना।
नाम कहैं गो को तम नाश। रू को अरथ जु करहि प्रकाश[3] ॥ २१ ॥
जिस उपदेशे ते हुइ जाइ। गुरू कहैं तिह नर समुदाइ।
श्री नानक भे सुते प्रकाश। जनमति ते अजमत जिनि पास ॥ २२ ॥
लघु बय महिं उपदेशनि लागे। मानि कमायहु नर वड भागे।
इम जे बूझहिं क्या हम कहैं। इह भी तुम ते उत्तर लहैं ॥ २३ ॥
सुनिकै श्री अरजन वच भाखा। इस पर सुनहु तीन की साखा[4]।
माया सबल[5] जु एकंकारा। सिरजन हित कहि-ओ अंकारा ॥ २४ ॥

---

1. वेत्ता, जानने का इच्छुक। 2. गुरु नानक के गुरु स्वय परब्रह्म थे। 3. 'गो' का अर्थ अंधकार-नाशक एवं 'रू' का अर्थ प्रकाश-दाता। 4. साखी, दृष्टांत। 5. माया-सहित।

प्रकट भए तबि देव जु तीन। ब्रह्मा बिशनु महेश प्रबीन।
तिन तीनहु को, को गुर भयो। सुनी तिवाड़ी उत्तर दयो॥ २५॥
ब्रह्मा शिव दोनहु मिलि जाइ। कर्यो बिशनु को गुर हरखाइ।
बहुर बिशनु उर बिखैं बिचारा। महांदेव को गुर निज धारा॥ २६॥
शिवजी घरहि बिशनु को ध्याना। बिशनु करैं शिव को सुख मानि।
यांते सति गुन तप गुन रंग। भए बिपरजै दोनहुं अंग॥ २७॥
सति गुन उज्जल शिव ने धर्यो। तम गुन स्याम बिशनु जी कर्यो।
सुनि बोले श्री गुरू प्रबीन। जबहि बिशनु शिव को गुर कीनि॥ २८॥
तबि ही होयो ग्यान सरूप। कै आगे ही हुतो अनूप ?।
कह्यो तिवाड़ी प्रभु भगवान। हुतो प्रथम ही ग्यान निधान॥ २९॥
जग की करनि म्रिजादा कारन। बिशनु कर्यो शिव को गुर धारनि।
श्री अरजन कहि तिम तुम जानो। श्री नानक जग गुरू महानो॥ ३०॥
सुयं प्रकाश[1] प्रथम ही थिए। तन मिरजादा धारति भए।
श्री अंगद को गुरू सथापि। जोति जगाई अपनी आप॥ ३१॥
यांते निशचा गुर महिं धरो। सिक्खी धरम न्रिबाहिन करो।
हलत पलत महिं लहो अनंद। जीतहु सकल बिकार बिलंद॥ ३२॥
सुनि गुर बाक हरख को धारा। उर संसै गन को निरवारा।
सेवा करति रहै सतिगुर की। हरी अबिद्या दुखदा उर की॥ ३३॥
डल्ला अपर भगीरथ जापू। चौथे निवला मिलि करि आपू।
श्री अरजन की शरनी आए। कर जोरति पद सीस निवाए॥ ३४॥
बहुरो करी अग्ग्र अरदासि। हम उर संसे देहु बिनाश।
श्री नानक पूरन अवतार। भगत सरूप धयों करतार!॥ ३५॥
को उपासना मुख्य बताइ ? निरगुन कै[2] सरगुन की गाई।
किम निशचा अपनो प्रगटायो। बहु सिक्खनि को पंथ बतायो॥ ३६॥
श्री अरजन सुनि सुमति बताई। निषफल अस संदेहि उठाई।
निरगुण सरगुण तौ दुइ कहीअहि। जौ इन बिखै भेद कुछ लहीअहि॥ ३७॥

श्री मुख वाक। सलोकु॥

सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि॥
आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि॥ १॥ (गउड़ी सुखमनी)।

---

1. स्वयं-प्रकाश। 2. ग्रथवा।

चौपई

पारब्रह्म निज इच्छा करिकै। सगुन सरूप आपनो धरिकै।
जग की सकल म्रिजाद करावहि। सभि की पालनि करि जीवावहि ।। ३८ ।।
धरि अवतारनि दुष्ट बिनासहि। सुख संतनि के रिदै प्रकाशहि।
पुन सोई निरइच्छतहोइ। निरगुण बनहि अकार सु खोइ ।। ३९ ।।
जथा होइ महिपालक एक। जबि इच्छा को धरहि बिबेक।
वसत्र शसत्र को पहिरहि तन मैं। बैठहि सभा बिखैं मुदि मन मैं ।। ४० ।।
निज इच्छा जबि तजिबे धरै। शसत्र बसत्र तन ते पर हरै।
होइ इकाकी सिहजा सोवै। तबि तिस को न बिलोचन जोवै[1] ।। ४१ ।।
जो राजा ढिग करहि पुकारनि। लेहि नाम बहू सुजसु उचारनि।
जे न्रिप सभा मांहि कै अंतर[2]। सुनहि पुकारनि सुजसु निरंतर ।। ४२ ।।
दोनहु थल ते करहि सहाइ। सगरे संकट को बिनसाइ।
तिम श्री नानक पंथ बतायो। सिमरनि नाम दुहनि दिशि भायो ।। ४३ ।।
अपनो नाम सगुन जे सुनहि। होहि सहाइक संकट हनहि।
सत्तिनाम जापक नर जानि। निरगुन को प्रापति हुइ ग्यान ।। ४४ ।।

दोहरा

निरगुण सगुण उपासना द्वै ते जानि महान।
निसि दिन करनि उपासना सत्तिनाम की मानि ।। ४५ ।।

चौपई

जैसे रामचंद समरत्थ। उतरनि चहि सागर के पत्थ।
जेकरि चहै सुकावहि जल को[3]। उलंघहि पार लग कपि दल को ।। ४६ ।।
तऊ बिचारनि ऐसे करै। हम को मिलि थोरे निसतरैं।
नाम जपे बहु को कल्लयान। नाम महातम कीन महान ।। ४७ ।।
सरवर पर गिरवर धरि भारे। तरूवर के पातनि सम तारे[4]।
लिख्यो नाम तिन पर सु जनायो। सरगुन ते बड नाम सुहायो ।। ४८ ।।
निरगुण सरब शरीरनि मांही। सति चेतनि आनंद बिन नांही।
अंतर बहिर निरंतर व्याप्यो। जाहि नरक जे नाम न जाप्यो ।। ४९ ।।

---

1. आँख से भी देखा नहीं जा सकता। 2. यदि राजा सभा में या अकेले में अन्दर। 3. चाहे तो जल को सुखा दे। 4. पेड़ के पत्तों के समान उद्धार किया।

जिन सत्तिनाम जप्यो करि प्रेम। अंतह्किरण बिमल तिन छेम।
सिमरति प्रापति आतम ग्यान। जनम मरन को बंधन हान॥ ५० ॥
यांते निरगुण ते सत्तिनाम। ह्वैं विशेख, भजि आठो जाम।
सुनि सिक्खिनि गुर संग बखाना। सागर फांध गयो हनुमाना॥ ५१ ॥
नाम अलंब्र अपर ने लीनि। पुल पर कपि दल उलंघनि कीनि।
सो निज बल ते कुद गयो है। सुधि दे राम प्रसंन कयो है॥ ५२ ॥
श्री अरजन पुनि सुनति बखाना। सिमरति राम नाम हनुमाना।
बहुर मुद्रका लई पयाना। तिस पर राम नाम सभि जाना॥ ५३ ॥
नाम प्रताप पार परि गयो। कुछ ब्रिखाद तन होति न भयो।
यांते नाम महातम भारो। सिमरि तरै जग सिंधु सुखारो॥ ५४ ॥
तिम जानहु जो हैं ब्रह्म ग्यानी। जग सागर उलंघहिं बल ठानी।
बिरले नर होवति हैं ऐसे। हनुमान कपि दल महिं जैसे॥ ५५ ॥
नाम सेतु पर निरबल बली। रुजी, लंगरे, सभि ब्रिधि भली।
सने सने[1] परि पार सुखारे। बिना जतन, आनंद उर धारे॥ ५६ ॥
निरस बिषै सभि ते मन होइ। ब्रह्म ग्यान अभयासी कोइ।
यांते लखहु भगति प्रभु शरनी। सिमरहिं नाम सुगम सुख करनी॥ ५७ ॥
पापी पुंनी मूढ सुजान। पार परहिं करि भगति महान।
यांते तुम सिमरहु सत्तिनाम। रहीअहि सति संगत की शाम[2]॥ ५८ ॥
सुनि सिक्खनि उपदेश कमायो। गुर की शरनि रहे सुख पायो।
कथा कीरतन इक चित सुनै। हुइं इकंत तबि हरि हरि भनै॥ ५९ ॥
श्री अरजन को सेवति रहैं। अंत काल महिं शुभ पद लहैं।
सतिगुर सेवा सभि सुखदानी। बडे भाग जिन तिनहु कमानी॥ ६० ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे '**सिक्खनि प्रसंग**' बरननं नाम पंच पचासमो अंशु॥ ५५ ॥

---

1. शनै: शनै:। 2. शरण।

अंशु ५६
सिक्खनि प्रसंग

दोहरा

मूला[1], सूजा[1] धावणे[2], चंदू[1] चौझड़[2] आस ।
रामदास[1] भंडारीआ[2], बाला[1], सांईदास[1] ॥ १ ॥

चौपई

खषट मिले श्री अरजन पास । पग वंदन कीनी अरदास ।
गुरू गरीब निवाज जि प्रानी । करम करति द्वै बिधि[3] सभि जानी ॥ २ ॥
धरम राइ के ढिग सभि कोइ । पाप पुंन को लेखा होइ ।
फल दुनहनि के न्यारे न्यारे । किधौं शेख रहिंदे फल ज्यारे[4] ॥ ३ ॥
श्री अरजन सुनि बाक बखाने । चार प्रकारनि के सिख जाने ।
इक सहिकाम करम के करता । बिय निषकाम करम को धरता ॥ ४ ॥
करि उपासना त्रिती पछानो । चतुरथ ब्रह्म ग्यानी सिख जानो ।
तुम चारनि मैं बूझहु कौन । करहिं सुनावनि जसगति तौन ॥ ५ ॥
सुनि सिक्खनि भाख्यो जे चारहु । जिम ब्रितांत हुइ तथा उचारहु ।
गुरू कहनि लागे तिस काल । जिम इक होति महां महिपाल ॥ ६ ॥
चार प्रकार प्रजा तिस केरी । इकतो खेती करहि घनेरी ।
न्रिप को नर तिन ऊपर रहै । करहि भावली[5] अंन जि लहै ॥ ७ ॥
सदा मुहस्सिल[6] बंटहि दाना । जे ख्यानत[7] को करै अजाना ।
दंड देहि राखहि चुकसाई । हुयो अंन सभि लेहि बंटाई ॥ ८ ॥
दुतीए पटा लिखाइ चुकावे । खषट मास महिं न्रिप नर जावे ।
कर्यो जु होति देति तिस तांई । अपर चित चित धरहि न काई ॥ ९ ॥

---

1. व्यक्तियों के नाम हैं । 2. जातियों के नाम हैं । 3. दो प्रकार की : निष्काम, सकाम । 4. भुगतान के उपराँत शेष बचे (कर्मों के) फल । 5. बँटाई । 6. समाहर्ता । 7. अमानत में छल-कपट ।

त्रितीए नर सौगाती[1] जानि। न्रिप की हद पर बासा थान[2]।
बाजी बाज आदि सौगात। भेजहि न्रिप ढिग नित हरखाति ॥ १० ॥
बहु ग्रामनि के राज करंते। दरब लेहिं सभि सुखि भोगंते।
चौथे माफी केतिक होइ। अपनो राज करति हैं सोइ ॥ ११ ॥
न्रिप के संग चढहिं जहिं जाइ। सभि पर अपनो हुकम चलाइं।
खाणा अरु दाणा हुइ जोइ। लेते महिपालक ते सोइ ॥ १२ ॥

लखहु प्रजा प्रभु की इम चार। इक तो सहिकामी ब्रिति धारि[3]।
काम रु क्रोध कूर कहु लागे। नहिं कबहुं हरि के रस पागे ॥ १३ ॥

तीरथ दान ब्रत्त जे करिहीं। फल हुइ अमुक कामना धरहीं।
तिन पर धरमराइ को डंड। नरक सजाई लहैं प्रचंड ॥ १४ ॥

पुंन पाप फल भोगहिं न्यारे। कबि सुख कबि दुख लहैं बिचारे।
इक निषकाम करम सुभकरैं। धरम करति प्रसंनता धरैं ॥ १५ ॥

पाप अचानक जे हुइ जाइ। तिन को लेखा करि इक थाइं।
अघु विआड़ करि पुंन जु शेख[4]। तिनको भोगति अनंद विशेष ॥ १६ ॥

जे अघ अधिक होइं तिस केरे। पुंन व्याड़ अघ ते दुख हेरे।
तिन के पुंन होहिं बलवान। पाप निबल ह्वै अस नर जानि ॥ १७ ॥

त्रितीए अहैं उपासक जोइ। भगति परायन मन हुइ सोइ।
पाप नहीं ठानै सो जानि। ह्वै जि कदाचित्त अघ अनजानि ॥ १८ ॥

रुचि करि धरम करहिं हरखाइ। अघ को व्याड़ सदा सुख पाइं।
रहैं निकटवरती प्रभु केरे। जनम मरन के परहरि फेरे। १९ ॥

परालबधि बसि ते जे जनमैं। भगति करति ग्यानी हुइ मन मैं।
जनम मरन के बंधन हानैं। पद निरबाण मिलहि तत जानैं[5] ॥ २० ॥
इक सहिकामी भगत जि होइं। तन तजि सुरग भोग करि सोइ।
बहुर धनी के ग्रिह तन धारैं। सतिसंगति मिलि जनम सुधारैं ॥ २१ ॥
मुकति लहैं बंधन को त्यागैं। इक निषकाम भगत अनुरागैं।
परालबध बसि जनम जि धरते। संतनि के घरि महिं अवतरिते ॥ २२ ॥
करति भगति लहिं आतम ग्यान। प्रापति होति पुनहु निरबान।

---

1. भेंट देने वाला। 2. राजा की सीमा पर निवास करता है। 3. कामना-पूर्ण वृत्ति वाले। 4. पापोपरांँत जो पुण्य शेष रहते हैं। 5. सिद्धान्त को जाना।

जिम सौगात वाज कै वाजी। इक पठि देति रहति पुन राजी[1] ॥ २३ ॥
तथा भजन करि सुखी रहंते। जे ग्यानी जग कूर लखंते।
तन अरु करम झूठ सभि जानैं। हंता ममता कबहुं न ठानैं ॥ २४ ॥
ज्यों सूरज ढिग तम नहिं जाइ। तथा करम तिन को न लिपाइ।
जीवन मुकति बिसाल अनंद। नहिं ब्यापै कवि मन तन दुंद[2] ॥ २५ ॥
सिख बूझै तिन करम महाने। किम भोगे विन होवति हाने।
गुरू कह्यो सेवक ले पुंन[3]। निंदक अ्रघ लें जे दुख जंन[4] ॥ २६ ॥
ब्रह्म ग्यानी निर लेप सदीव। नहिं फल करम तिनहु को थीव।
ऐसे सुनि करि गुर के बैन। सिक्खनि पाई हिरदे चैन ॥ २७ ॥
बिशनू हुतो दीवड़ा[5] जोइ। सुंदर माछी मिलि करि दोइ।
श्री अरजन की शरनी आए। होइ दीन चरनी लपटाए ॥ २८ ॥
कह्यो कि हमरो करहु उधारा। जहिं कहिं तुमरो सुजसु उदारा।
श्री मुख ते फुरमावनि कीनि। सेवा करहु होइ मन दीन ॥ २९ ॥
सुंदर बन ते काषट आनै। जल ल्यावहि भरि देग सथानै।
बिशनू पिछली निस महिं जागै। उठि सिक्खनि की सेवा लागै ॥ ३० ॥
करिवावै जल तपत शनान। पग की मैल करहि सभि हान।
गुर उपदेश सुन्यो मन लाइ। लागे सेव करनि समुदाइ ॥ ३१ ॥
प्रापति अंत समै कल्लयान। जनम मरन के बंधन हानि।
जट्टू भानू त्रितिय निहालू। चतुरथ आइ तीरथा नालू ॥ ३२ ॥
चड्ढे[5] हुते जाति के चारों। चलि आए गुर के दरबारों।
नमों करी गुर अरजन पास। हाथ जोरि बोले अरदास ॥ ३३ ॥
श्री सतिगुर शुभ वचन तुहारे। बहु विधि के हम अरथ बिचारे।
करे करावै आपे आपि। मानुख के किछ नांही हाथ ॥ ३४ ॥

पुना :—

जैसा बीजै सो लुणै करम इहु खेतु ॥
अकिरतघणा हरि विसरिआ जोनी भरमेतु ॥ ४ ॥ (जैत: वार म: ५)

---

1. (एक ऐसे हैं) जो बाज या घोड़े का उपहार एक बार भेज कर राजा को सदा प्रसन्न रखते हैं। 2. दु:ख। 3. सेवक पुण्य कमाते हैं। 4. दु:खोत्पादक लोग पाप लेते हैं। 5. एक जाति विशेष।

चौपई

जो प्रभु आपे करहि करावै। तौ हम करहिं जथा मन भावै।
क्यों तबि दोष लगहि इस प्रानी। जे करमनि फल भुगतहि जानी ॥ ३५ ॥
तौ विचार करि करम करीजै। शुभ को धरहि अशुभ तजि दीजै।
करी आपकी सगरी बानी! किस को धरहि श्रेय लहि प्रानी ॥ ३५ ॥
श्री अरजन तबि उत्तर दयो। श्री ग्रिंथ साहिब गुर कियो।
कारन करनि केर कल्लयान[1]। पठहि कमावहि सुनहि सुजान ॥ ३७ ॥
अधिकारनि पर शबद बनाई। जस अधिकारी तथा कमाइ।
सभि अधिकारनि के गुर सिख हैं[2]। ग्रहण करैं जिम निज मति पिखि हैं ॥ ३८ ॥
सति संगति महिं जो नहिं राते। ग्रिहसत फसहिं कै राज कमाते।
पाप रू पुंन करहिं बहु वेर। सो अधिकारी इस तुक[3] केर ॥ ३९ ॥
जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥ (म० झ० म: ५)

चौपई

इक उपासना पर ललचाए। सत्तिनाम सिमरहिं मनलाए।
सभि प्रानी महिं प्रभु सु बिचारें। इन सम तुक के सो अधिकारे ॥ ४० ॥
करै करावै आपे आप। मानुख के किछु नांही हाथ।
इम निशचा जन हिरदे धरे। सभि महिं बरत प्रमेशुर करे[5] ॥ ४१ ॥
त्रितीए सत्तासत्ति बिचारहि। सदा ब्रह्म को निरनै धारहि।
इन सम तुक के सो अधिकारी। सुनि मानहिं समझहिं उरधारी ॥ ४२ ॥
ब्रह्मु दीसै ब्रह्म सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ। (बिल वल म: ५)

दोहरा

इत्त्यादिक बहुते अधिकार।
मुख्य तीन हम करे उचार।
जैसे बेद महां बुधिवान।
रोगी आइ बिनै बहु ठानि ॥ ४३ ॥
नाड़ी, मूत्र हेरि रुज जानै।
तिस पर बहुर औखधी ठानै।
तैसे गुर ढिग सिख चलि आवै।
बचन क्रिया ते तिह लखि पावै ॥ ४४ ॥

---

1. कल्याणार्थ। 2. सब प्रकार के अधिकारों वाले गुरु-सिक्ख हैं। 3. पद, चरण। कविता की पंक्ति। 4. सबमें परमेश्वर व्याप्त है।

जथा पिखहिं अधिकार बिशेष ।
तथा करहिं सतिगुर उपदेश[1] ।
जे हकीम लघु बिद्या मति में ।
परख्यो गयो न रुज कुछु चित में ॥ ४५ ॥

रोग आन औखधि दे आन[2] ।
रुज नहिं जाइ प्रान ह्वै हान ।
तैसे गुर काचो अनजाना ।
सिख अधिकार न करहि पछाना ॥ ४६ ॥

तिस उपदेश अयोग बतावै ।
रही श्रेय मरि नरक सिधावै[3] ।
याते तुम उर लेहु बिचारी ।
भगति करनि के इहु अधिकारी ॥ ४७ ॥

सत्तिनाम सिमरहु दिन राती ।
सति संगति सेवहु भलिभांती ।
गुर सिक्खनि की टहिल करीजै ।
उर हंकार बिदारि सु दीजै ॥ ४८ ॥

सुनिकै सतिगुर ते उपदेश ।
लागे सेवा करनि हमेश ।
सिमरति नाम परमगति पाई ।
सतिगुर सेवे भए सहाई ॥ ४९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खनि प्रसंग' बरननं नाम खषट पंचासमो अंशु ॥ ४६ ॥

---

1. अधिकारी पात्र को जानकर ही सतिगुरु उपदेश देते हैं—अर्थात् 'अधिकारी भेद सिद्धान्त' को स्वीकार करते हैं । 2. रोग और तथा औषधि और देते हैं। 3. मोक्ष तो रहा (वे) मर कर नरक जाते हैं ।

अंशु ५७
सिक्खनि प्रसंग

दोहरा

नऊ भोलू जाति के सेखड़ साध सुजान।
जट्टू भीवा जाति का मूला पुरख महान ॥ १ ॥

चौपई

चारहु मिलि श्री अरजन द्वारे। आइ नमो कीनी हित धारे।
गुरू गरीब निवाज कि पास। कर जोरति भाखी अरदास ॥ २ ॥

बानी तुमरी अनिक प्रकार। उचरहु जुदो जुदो अधिकार।
जस अधिकार आपनो जाने। कह्यो शबद को आशैं माने ॥ ३ ॥

हम तो अपनो जिम अधिकार। नहीं पछान सकहिं निरधारि।
करम करनि के हैं अधिकारी। कै उपासना करहिं बिचारी ॥ ४ ॥

ग्यान काण्ड के कै अधिकारि। सतिगुर! हम सों करहु उचार।
श्री अरजन सुनि बाक बखाने। अपनि परखना इस बिधि ठाने ॥ ५ ॥

गुर बच सुनि जबि उर महिं धरे। करम शुभा शुभ निरनै करे।
चाहनि लग्यो करम शुभ करनि। तऊ जि बुरे करम को व्यशन[1] ॥ ६ ॥

मिटित नहीं मन ते नित चाहे। तौं अधिकार करम को ताहै[2]।
गुर सिक्खनि की सेवा लागे। गुरबाणी सुनिबे अनुरागे ॥ ७ ॥

सने सने मन खोट निवारे। अभिलाखति प्रभु दिशि चित धारे।
जे गुर बाक सुनहि निज कान। करम अशुभ की हुइ तबि हानि ॥ ८ ॥

कोइ कदाचित जे बनि आवै। तऊ न आछो मन महिं भावै।
लखहि उपासन को अधिकारी। गुरबाणी अभ्यास बिचारी ॥ ९ ॥

---

1. कर्म का स्वभाव। 2. उसका है।

पठनि सुननि अरू अरथ बिचारनि । होइ अशुभ सो करहि निवारनि ।
जे गुर शबद सुननि ते सारे । खोटे करम रिदे निरवारे ।। १० ।।
विषयनि के रस ते मन फिर्यो । करम अशुभ महिं हित नहिं धर्यो ।
जग दुख रूप जानि करि नीको । सभि बिवहार लगहि उर फीको ।। ११ ।।
तबि निज लखहि ग्यान अधिकारी । करनि लगहि सति असति बिचारी ।
हम अधिकार अपन जस जानैं । तस बिधि आप करनि को ठानैं ।। १२ ।।
सभि अधिकारनि पर गुरबानी । सिख भी सभि अधिकारनि जानी ।
निज अधिकार सुमति ते लखैं । करम उपासन ग्यान कि विखैं ।। १३ ।।
निज अधिकार जानि करि लागैं । गुरू शबद सों नित अनुरागैं ।
सुनि गुर बाक समझ तिन आई । निज अधिकार लगे गति पाई ।। १४ ।।
चतुरदास अरू मूला दोइ । हुते कपूर जाति के सोइ ।
हाड़ू गाड़ू विज्झ सु चार । चलि आए सतिगुर के द्वार ।। १५ ।।
करि वंदन सो बूझनि लागे । ह्वै उपदेश सिक्ख वहु जागे ।
शुभ करमनि के उद्दम करैं । सत्तिनाम सिमरनि मन धरैं ।। १६ ।।
सरव संत भी ऐसे कहै । रावरि को मत तौ इह अहै ।
इक सलोक श्री वार मझारे[1] । इस बिधि श्री मुख कीनि उचारे ।। १७ ।।

सलोक म: १ ।।
दाती साहिब संदीआ किया चलै तिसु नालि ।
इक जागंदे ना लहंन इकना सुतिआ देइ उठालि ।। १ ।।

चौपई

इसते विधि ऐसे लखि लई । सुपत्यो दाति प्रभु ने दई ।
जाग्रति जे छूछे सो लहीअहिं । यांते सुपत्यो ही नित चहीअहिं ।। १८ ।।
तबि बोले सोढी सिरमौर । इसको आशै है बिधि और ।
इक तौ पढि करि पंडित होए । मन हंकार बिसाल परोए ।। १९ ।।
नहिं संतनि की सेवा करिहीं । हम बुधि अधिक मान हम धरिही ।
करहिं बाद उर निशचै नांहि न । शुभ उपदेश जु मानहिं काहि न ।। २० ।।
इक अनपढ नहिं मन हंकारी । गुर संतनि की सेव सुधारी ।
पठ्यो सु जागति, छूछा रह्यो । अनपढ सुपति सेव सुख लह्यो ।। २१ ।।
अथवा और अरथ सुनि कान । इक गमन्यो सतिसंग सथान ।
तहां नींद बसि ह्वै पर रह्यो । बरतावे तबि तिसको लहयो ।। २२ ।।

---

1. राग सिरी की वार में आया एक श्लोक ।

दयो जगाइ तांहि वरतारा। छूछो जाग्यो सदन मझारा।
इस पर सुनि उचरहिं द्रिषटांत। जुग सौदागर सुनि करि बात ॥ २३ ॥
प्रात होति चलि परहि जहाजू[1]। सुनि[2] बड मजल करी हित काजू।
संध्या समैं पहूचे जाई। इक तौ चढि जहाज सुपताई ॥ २४ ॥
दूसर चढ्यो न ऐसे जानि। चलनि समैं हम चढिहैं आनि।
जागति रह्यो सरब निस मांही। निकट जहाज सु पहुंच्यो नाहीं ॥ २५ ॥
ढोल बजायो चढिबे कालि। जाग्रति पर्यो अपर किस ख्याल।
सुन्यो न गयो अरुढ्यो नांही। दूर जहाज गयो छिन मांही ॥ २६ ॥
जो जहाज महिं सुपत्यो नर है। तांहि जगायो गहि करि कर है।
बनकनि बनज कर्यो तिह साथ। लियो लाभ तिन अपने हाथ ॥ २७ ॥
जाग्रति रह्यो चढ्यो नहिं जोइ। रह्यो इकाकी बन महिं सोइ।
चोर धारवी[3] पहुंचे आइ। निज सौदा सभि गयो लुटाइ ॥ २८ ॥
सति संगति महिं जानहु तैसे। उद्दम धरि करि आइ जु बैसे।
सुपत्यो होइ जि तांहि जगावैं। संत क्रिपा करि शबद सुनावैं ॥ २९ ॥
जे प्रसादि कुछ बरतणि लागे। सुपति जगावहिं[4] प्रथम जु जागे।
जागति रह्यो जि घर के मांही। सुनहि न शबद, प्रसादि न खाही ॥ ३० ॥
अनपढ सुपत करहि सतिसंग। मन नांवां करि शरधा संग।
तिसकी नींद अबिद्या जोइ। ग्यान सुनाइ सकल दे खोइ ॥ ३१ ॥
निज सरूप को लाभ सु पावहि। जथा बनक लाहा बड ल्यावहि।
पढे सु जागति आप कहावैं[5]। भूल कबहि सतिसंग न जावैं ॥ ३२ ॥
निरभै हुइ करि बुरो कमावहिं। सो बिन ग्यान छूछ रहि जावहिं।
सुनि गुर ते करि के मन नीवा। सतिसंगति को सेव सदीवा ॥ ३३ ॥
चारहु सिक्खनि शुभ गति पाई। श्री अरजन जी भए सहाई।
फिरणा बहिल नाम इक चंगा। त्रितीओ जेठा मिलि करि संगा ॥ ३४ ॥
श्री गुर पग को बंदन धारी। जोरि हाथ निज अरज़ गुज़ारी।
गुरू गरीब निवाज बतावो। हमरे उर संदेह मिटावो ॥ ३५ ॥
केतिक सिमरहिं राम सु नाम। केतिक क्रिशन हरे घनश्याम।
केचित ओअं केचित सोहं। सिमरैं नाम परमगति होहं ॥ ३६ ॥

---

1. प्रात: होते ही जहाज़ ने चल देना है। 2. सुन कर (यह)। 3. लुटेरे।
4. सोते को जगाते हैं। 5. पढ़े-लिखे अपने को जागृत कहलवाते हैं।

हम को उचित कौन मुख जापनि । उपदेसहु सतिगुर अघ खापन[1] ।
सुनि श्री मुख ते हुकम बखाना । सिमरहु वाहिगुरू दुख हाना ।। ३७ ।।
तरी नीर के तीर उतारै । इस बिधि की शकती सभि धारै[2] ।
तऊ बिचारो जिस जो चर्यो । तिसी अलंब नदी को तर्यो ।। ३८ ।।
तिम परमेशुर के सभि नाम । करहिं पार सिमरे उरधाम ।
जो सतिगुर उपदेशनि कर्यो । तिसको सिमरि सिक्ख भव तर्यो ।। ३९ ।।
एक बार जुग खट अरु तीस[3] । धुंधूकार न परजा ईश ।
एकंकार रच्यो नहिं कोई । सुंनि समाधि रहै सभि कोई ।। ४० ।।
नहीं अकार कछु प्रगटायो । रह्यो गुबार ईश इम भायो ।
नौ नौ जुगमहिं इक इक बरनं । श्री नानक चहुं को इक करनं ।। ४१ ।।
वाहिगुरू इक नाम बनायो । सुनि सभि संतनि के मन भायो ।
निज सिक्खन को करि उपदेश । सिमरति काटे वंध कलेश ।। ४२ ।।
अबि जो इक मन सिमरहि नामू । वाहिगुरू पूरहि उर कामू ।
अंत समैं गति लहै सुखारे । जनम मरन के वंध निवारे ।। ४३ ।।
यांते वाहिगुरू तुम सिमरो । निस दिन रिदै बदन ते ररो[4] ।
सतिगुर तुमरे होइं सहाइ । दुबिधा सगरी देति मिटाइ ।। ४४ ।।
अंत समैं सभि बंध निकंदि । होवहु लीनि सच्चिदानंद ।
सुनि सिक्खन भ्रम को निरवारि । वाहिगुरू सिमर्यो करतार ।। ४५ ।।
श्री अरजन को सेवति रहे । अंत समैं नीके सुख लहे ।
तिन को मिले सु गुरमति पाई । जहिं कहिं सिक्खी जग बिदताई ।। ४६ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नाम सपत पंचासमो अंशु ।। ५७ ।।

---

1. पाप-नाशक । 2. (नदी पार करने की) शक्ति सब में (नावों) है । 3. छत्तीस युग । 4. रात-दिन हृदय में (स्मरण करो) मुख से पाठ करो ।

अंशु ५८

सिक्खनि प्रसंग

दोहरा

विस्सा गोर्प तुलसीआ भारदुआजी बिप्र ।
गोइंद घेई भाईअड़ा आए मिलि करि छिप्र ।। १ ।।

चौपई

बंदन करि बैठे सभि पारा । हाथ जोरि कीनी अरदास ।
गुरू गरीब निवाज सुनाइए । द्वै शबदनि महिं संसै पाईए ।। २ ।।
नामदेव जन सबद सुनाए । द्वै थल रागनि बिखै टिकाए ।
दोनहु मैं बिरोध दिखि पाए । एक भगत के दुऊ सुहाए ।। ३ ।।

पांडे तुमरा रामचंदु सो भी आवतु देखिआ था ।
रावण सेती सरबर होई घर की जोइ[1] गवाई थी ।। १ ।।

पुना :—जसरथ राइ नंदू राजा मेरा रामचंदु, प्रणवै नामा ततु रसु अंम्रितु पीजै ।। ४ ।। ४ ।।

चौपई

प्रथम शबद महिं जानी परै । तरक ईश अवतारनि करै ।
दुतीए महिं महिमा अवतार । नामदेव ने कीनि उचारि ।। ४ ।।
अरथ बिवसथा कैसे होइ । हम किम समझहिं ? उचरहु सोइ ।
सुनि श्री अरजन वाक उचारा । निरगुण सरगुन द्वै पख धारा ।। ५ ।।
दोनहु की उपासना न्यारी । किनहु धरी निज रिदै मझारी ।
जैसे सागर जाइ निहारे । जिसते उठहिं तरंग हज़ारे ।। ६ ।।
नदी जाइ करि जबहि निहारी । सोई सागर तांहि बिचारी ।
जल सरूप सभि एक निहारा । तिम श्री प्रभु के गन अवतारा ।। ७ ।।
सत चित आनंद रूप जि लह्यो । सभि को सत्ता दे सो रह्यो ।
जे पंडित पठि बिद्या घनी । ग्यान बिहूने मुख ते भनी ।। ८ ।।

---

1. जोरू, पत्नी ।

सरगुन पूजा धरहिं विशेख। संतनि संग कमावति द्वैख[1]।
कह्यो शवद तिनके परथाइ। सगुण निगुण जे पक्ख बंधाइ ॥ ९ ॥

धरम शरीर धरनि को एही[2]। दुख सुख प्रापति होनि अछेही।
ग्यानी तन को झूठ लखंते। तिह सम दुख सुख कूर जनंते ॥ १० ॥

इक उपासकी लक्ख के होइ[3]। वाच उपासक लखियति कोइ[4]।
जिनहु लक्ख की कीनि उपासन। इक सम सत्ता सभि महिं भासनि ॥ ११ ॥

रम्यो अकालपुरख सभि मांही। सो किह संग वैर धरि नांही।
वाच उपासक जे नर अहैं। सिमरहिं क्रिशन राम घट कहैं[5] ॥ १२ ॥

राम उपासन करनै हारे। क्रिशन विखै सो दोष उचारे।
इत्त्यादिक बहु तरक उठावैं। लक्ख रूप को भेद न पावैं ॥ १३ ॥

यांते लक्ख उपासक बनहु। हुइ निरवैर बिकारनि हनहु।
सुनि सतिगुर ते संसै खोइ। लख्यो सरूप आपनो जोइ ॥ १४ ॥

दोहरा

कालू चाऊ ब्रमीआ गोइंद घेई[6] आन।
मूला हेम कपाहीआ धारो सूर महान ॥ १५ ॥

चौपई

छजू निहालू दोनो भले। हुतो कोहली रामू मिले।
तुलसा वहुरा सांई दित्ता। आकुल अरु दामोदर मित्ता ॥ १६ ॥

विगहिमल्ल अरु आवल भाना। वुद्धू छींवा आइ सुजाना।
भिक्खा टोडा जुग भट अहे। तिन संग मिले जु खोड़स कहे[7] ॥ १७ ॥

सभि सुलतान पुरे के वासी। चलि आए श्री अरजन पासी।
वंदन कीनि कमल सम पाइनि। यथा शकति धरि अग्र उपाइन[8] ॥ १८ ॥

हाथ जोरि अरदास उचारी। हम सिख सभि गुर अमर अगारी।
उपदेश्यो हमको बिधि एवा। धरम किरत करि सिक्खन सेवा ॥ १९ ॥

मिट्ठा बोलन अरु मन नीवा। पाछल निस इशनान सदीवा।
भोर होति लगि पठि गुरबानी। वहुर किरत कीजै हित ठानी ॥ २० ॥

---

1. वैर। 2. शरीर धारण करने का यही धर्म है। 3. एक तो (भगवान् के) दर्शनीय रूपों की उपासना करते हैं। 4. कोई वाच्य रूप के उपासक दीख पड़ते हैं। 5. राम को कम समझते हैं। 6. क्षत्रियों का एक गोत्र। 7. उनसे आ मिले जो पीछे सोलह कहे। 8. भेंट।

तिसी प्रकार करति हम रहे। तऊ शांति नहिं मन को लहे।
क्रिपा करहु अबि दिहु उपदेश। जिसते मन हुइ शांति विशेष ॥ २१ ॥
श्री अरजन सुनि बाक बखाना। रज तम गुण जि त्याग नहिं ठाना।
रिदै शांति की गुन नहिं धारो। तौ लगि शांति न भले बिचारो ॥ २२ ॥
सुनि सिक्खनि गुर बूझन करे। गुणनि प्रीख्या हम किम धरें ?।
श्री मुख ते कहिं सुनि दे मन है। हिंसा क्रोध तामसी गुन है ॥ २३ ॥
करनो लोभ रिदै अभिमान। इही राजसी गुणनि पछानि।
मिट्ठा बोलनि अर निव चाले। इही शांति की हैं सुख वाले ॥ २४ ॥
जिस अहार ते उतपति होइ। श्रवण करहु मन दे करि सोइ।
निस बासी चरपरा जु खावै[1]। बहु सुपतहि परि निंदा अलावै ॥ २५ ॥
राखहि अपनो बेस मलीन। बोलहि कूर संग बुधि हीन।
इसते तामसि गुण उपजंते। मधुर सलवण अहार करंते ॥ २६ ॥
इसत्री रमण, सुजस को चहै। गुण सु राजसि इसते लहै।
उज्जल बसत्र करनि इशनान। चावर दाल अलप करि खान ॥ २७ ॥
होइ शांत की गुण[2] इन करे। इनहु परीख्या को इम धरे।
सनमुख शबद बदन द्रिग करीअहि। अरथ वासतव[3] समझ सु धरीअहि ॥ २८ ॥
मन टिक रहे न डोलहि जाइ। तौ गुण शांतिक को लखि पाइ।
कबि मन टिकै डोल कबि धावै। इही राजसी गुन अधिकावै ॥ २९ ॥
जे नहि ठहिरै समझ न आवै। इही तामसी गुण बरतावै।
सतिगुण ते ब्रिति होइ इकागर। प्रापति आतम ग्यान उजागर[4] ॥ ३० ॥
धारहु सूर! सुनहु करि प्रीति। वहिर वैरीअनि ले इक जीत[5]।
तिन को जसु ढाढी[6] बहु गावैं। केतिक दिन लो जग प्रगटावै ॥ ३१ ॥
इक मन रिपु को जीतनि करैं। तिन जसु वेद संत नित ररैं[7]।
सुनि सांईदित्ता ! से साध। मन जुति लेहिं रिखीकिन[8] साधि ॥ ३२ ॥
तुलसा! सुनहु: भगत से दास। राम नाम बिन बादन स्वास[9]।
रिदै शांत की गुण बिरधावो। शांति ग्यान-दा तब्रि तुम पावो ॥ ३३ ॥
पाछलि राति मोह को जालि[10]। सिख जागति हैं नाम संभाल।
छुधिति नगन को देखहिं नांहि। करहिं कामना पूरन तांहि ॥ ३४ ॥

---

1. (जो) रात का वासी और मिर्च-मसालेदार (भोजन) खाता है। 2. सतगुण। 3. शुद्ध भाव। 4. उज्जवल। 5. बाहर के शत्रुओं को जीत लेता है। 6. प्रशस्ति-गायक। 7. गाते हैं। 8. इन्द्रियों को। 9. श्वास व्यर्थ है। 10. जला कर।

इक ते जे न कामना पुरै। सभि मिलि करि तिस दैवो करें।
सति संगति मघवा[1] सम होइ। नीवे हुइ करि बरखति सोइ॥ ३५॥
दोइ समै ध्रमसाला जावहु। परब दिवस गुर देखनि आवहु।
दीपमाल वैसाखी जानि। आनि सुधासर करहु शनान॥ ३६॥
पुरि सुलतान मेलि सिख भारा। कर्यो गुरू ने भगति भंडारा।
दीपा हुतो कासरा[2] रूर। श्री अरजन के रहति हजूर॥ ३७॥
सेवा करहि सरब परकार। जो सिख आइ गुरू दरबार।
उत्तम भोजन करि अचवावै। तिन की जूठि आप ले खावै[3]॥ ३८॥
सिक्खनि के पग धोवनि करै। थकति होइ तिस चांपी भरै[4]।
नगन देखि करि बसत्र उढावै। चरचा गुरू शबद नित भावै॥ ३९॥
श्री अरजन प्रसंन ह्वै कह्यो। दीप प्रकाश दीप ते लह्यो[5]।
अंधकार को होति बिनाश। तिम दीपे को ग्यान प्रकाश॥ ४०॥
हमने इह दीपक सम कर्यो। जो इस मिलै सुनिसचै तर्यो।
इस प्रकार जिन सेव कमाई। सो निसतरे गुरू शरनाई॥ ४१॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खनि प्रसंग' बरननं नाम अषट पंचासती अंशु॥ ५८॥

---

1. मेघ। 2. कसेरा जाति। 3. यहाँ सिक्खों को भोजन करवा कर फिर स्वयं भोजन करने का ही आशय है। 4. सेवा करना, मुट्ठियाँ भरना। 5. दीप से दीप जलता है।

अंशु ५६
सिक्खन प्रसंग

दोहरा

इस प्रकार श्री सतिगुरू करति सुधासर बास ।
संगति आवै दरस को श्री गुर अरजन पास ।। १ ।।

चौपई

एक कपूर[1] देउ सिख भारी । सुत बनिता जुत सिक्खी धारी ।
सेवा करि प्रसंन सिख करै । बडो प्रेम मिलिबो जबि घरै ।। २ ।।
इक दिन श्री अरजन को पूछा । सिख प्यारो तुमरो उर सूछा ।
तिनको दरशन मोहि करावहु । इस थल अहै कि अपर बतावहु ।। ३ ।।
श्री मुख ते फुरमावनि किय तिह । संमन है शहिबाज पुरे महिं ।
सुनति कपूर देव तहिं गयो । संमण संग मेल तिन कियो ।। ४ ।।
सेवा करि निज सदन उतारा । आप करनि लाग्यो अस कारा ।
इंधन अधिक मोल को आना । सफ़ शतरंजी[2] त्यार सु ठाना ।। ५ ।।
अपर समिग्री बसतर आदि । ल्यावति भयो सु मन अहिलाद ।
करि करि त्यार सदन महिं धरै । वाहिगुरू मुख नाम उचरै ।। ६ ।।
कपूर देउ सभि पेखति रह्यो । जिह परकार करति वहु लह्यो ।
जबि करि कार अयो ढिग सोइ । कपूर देव पिखि बिसमैं होइ ।। ७ ।।
बैठि निकट तिन[3] पूछी फेर । धंन भाग तुम दरशन हेरि ।
दया करी दरशन दिये आनो । कौन काज मुख करो बखानो ।। ८ ।।
कह्यो कपूर देउ क्या करें ? । मुहि गुर पठ्यो, न ढिग कुछ थिरें[4] ।
कहति भयो इह काज जरूर । रहौं निसा सभि तौर हदूर ।। ९ ।।
सभि दिन महिं धंधा करि लीनि । निस महिं सुत पित किरतन कीन ।
कर्यो प्रसंन रहे तिस पास । भई प्रात जबि उद्यो प्रकाश ।। १० ।।

---

1. कपूर देव । 2. चटाई, दरी । 3. उसने (संमण ने) । 4. मेरे पास कुछ नहीं बैठते ।

तहां धारवी लीनसि माल। पीछे परी गुहार[1] बिसाल।
बिच संमण को सुत चलि गयो। गोरी लगी म्रितक को भयो।। ११ ।।
करि राख्यो बहु काष्ट त्यारी। सो ले करि सुत चिखा[2] सुवारी।
तिह उचवाइ जबहि ले चाले। संमण किरतन करति बिसाले।। १२ ।।
सुति म्रितु के आगे चलि गयो। काष्ट संग दाह करि दयो।
नर बतरावनि को जबि आए। सफ सतरंजी दीनि डसाए[3]।। १३ ।।
पिखति कपूर देउ बिसमायो। कह्यो जितें पूरव लखि पायो।
गुर ते जाचि लेति सुत वैस। जीवति रहति सु वर ते जैस[4]।। १४ ।।
संमन कह्यो सरीर अनित्त। इन बिनसनि अचरज नहिं, मित्त।
तन बिनसे जो शोक करंते। तिन सम मूरख अपर न जंते।। १५ ।।
गुर ते मंगीअहि नाम सहाइ। जो प्रलोक महिं संग सिधाइ।
पित सुत चार दिवस की खेल। तन तत पंच बिरोधी मेल।। १६ ।।
निज फल भोगे ते हुइं भिंन। कोई मरहि नहीं को जंन[5]।
अपन सरूप बिसारि लहे दुख। गुर के वाक बिचारनि ते सुख।। १७ ।।
नहिं किछु जनमैं नहिं किछु मरै। आपनि चलित आप ही करै।
इहु गुरबाक बिचारहु तास। घट मट ते न बिकार आकाश[6]।। १८ ।।
तिम तन जनमे मरन मझारो। आतम रहे दुहनि ते न्यारो।
सुनति कपूर देउ करि बंदन। धंन गुरू सिख मोह निकंदन।। १९ ।।
गोइंद, गोला, मोहन तीन। कुक्क जात के तिनको चीन।
श्री अरजन के ढिग चलि आए। करि बंदन को अरज अलाए।। २० ।।
जिस बिधि होइ उधार हमारो। सो रावरि उपदेश उचारो।
श्री मुख ते फुरमावनि कीनि। राम नाम नित जपहु प्रवीन।। २१ ।।
राखहु मरण याद निस दिन मैं। पाप न होइ लखहु गुनि मन मैं।
अघ करिबे ते जबि हटि गए। पिछले राम नाम ते छए[7]।। २२ ।।
होइ पुनीत महां सुख पावो। निरमल अंतहिकरण बनावो।
बहुर ग्यान की उतपति होइ। जनम मरन को दुख सभि खोइ।। २३ ।।
श्री मुख ते सुनि शुभ उपदेश। लागे सिमरनि करनि हमेश।
निकट गुरू के सेवति रहे। अंत परमपद तीनहुं लहे।। १४ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नामु एक ऊनसशटी अंशु।। ५९ ।।

---

1. पुकार। मार-पीट। 2. चिता। 3. बिछा दीं। 4. जैसे वरदान प्राप्त कर जीवित रहता। 5. न कोई जन्मता है। 6. घट और माट न्याय से आकाश विकारी नहीं हो जाता। 7. पिछले (अतीत) के (पाप) राम-नाम से नाश हो जाएँगे।

अंशु ६०

सिक्खन प्रसंग

दोहरा

गंज[1] बसैं लवपुरी के मोहण आलम चंद।
जोधा जल्लहु[2] तुलसपुरि चारहुं बडे मसंद ॥ १ ॥

चौपई

श्री अरजन की सेवा करिहीं। आनहिं धन सिक्खन महिं फिरिहीं।
गुरु बिराटका[3] खाहिं न आपि। जानहिं इह बिसाल है पाप ॥ २ ॥
मिलहि अहार बिखैं जिम माखी। वमन करावहि रहहि न राखी[4]।
त्यों गुर के धन करे दुरावनि। सरब पदारथ करैं नसावनि ॥ ३ ॥
अरु सरीर को दे करि छीन। यांते नहीं छपाइ प्रबीन।
सो चारहुं इक दिन रथ चढे। आइ दरस हित आनंद बढे ॥ ४ ॥
केतिक पंथ जबहि चलि आए। निकस्यो एक सरप अगवाए।
फण बिलंद को करि कैं ऊचा। सनमुख रथ के आइ पहूचा ॥ ५ ॥
करी अपर दिशि रथ तिस हेरि। तित को समुख भयो अहि फेर।
मोहण देखि उतर तबि पर्‌यो। इक घट ले अहि आगे धर्‌यो ॥ ६ ॥
कह्यो, दरस गुर को जे चाहे। तौ प्रवेश करि इस घट मांहे।
पंनग बर्‌यो बीच ततकाल। मुख आछाद कटोरे नालि[5] ॥ ७ ॥
रथ महिं धरि करि आइ सुधासर। प्रथमै डेरा कीनि उतर करि।
पुनि श्री अरजन के ढिग आए। हाथ वंदि करि माथ निवाए ॥ ८ ॥
कह्यो गुरू तुम केतिक अहो[6]। दरशन हित आए सो कहो।
सुनि के कह्यो गरीब निवाज। हम चारहुं प्रापति भे[7] आज ॥ ९ ॥
गुर बोले सिख पंचो एहु। पंचनि को प्रसादि इन देहु।
घट महिं मेलि सरप जो आना। पूरब जनम मसंद महाना ॥ १० ॥

---

1. लाहौर के एक बाज़ार का नाम। 2. भाई जल्लो। 3. कौड़ी। 4. वमन (उल्टी) हो जाती है, अन्दर नहीं रखी जाती। 5. कटोरे के साथ मुँह ढक दिया। 6. तुम कितने (सिक्ख) हो। 7. पहुँचे हैं।

रिदा हंकार बिखै रहि पागे। नहीं निम्यो इह सिक्खनि आगे।
यांते फण ऊचो गति[1] पाई। अर इन गुर की कार छपाई॥ ११ ॥
यांते बन्यो सरप बिखभूर। अबि ल्यावहु हमरे सु हजूर।
सुनि गुर बाक उठाइ सु ल्याए। धरि दिवानि महि मुख उघराए॥ १२ ॥
फण उठाइ करि निकस्यो बाहर। खरो सभिनि महि हेर्यो जाहर।
गुरु कह्यो सर अंम्रित आनो[2]। सभि तन पर छिरकावनि ठानो॥ १३ ॥
ततछिन अहि तन त्याग दयो है। रूप प्रकाश आकश गयो है।
श्री अंम्रितसर दरशन करे। अनिक अघनि को सो नर हरे॥ १४ ॥
जे शरधा संग करहिं शनान। तिन को क्यों न होहि कल्लयान।
ढेसी जोध बिप्प्र संग जाती[3]। गुर की शरन जानि सुखदाती॥ १५ ॥
आए चलि श्री अरजन पास। नमो कीनि ठानी अरदासि।
बिप्र जि पंडित दीरघ आहिं। हमको लेति न पंगति मांहि॥ १६ ॥
बैठि सभिनि मैं हमहु सुनायो। जगत गुरु तुम दिज तन पायो।
खत्री के सिख होए जाइ। गंगा अपर जि कांशी थाई॥ १७ ॥
बिशनु सु महादेव पुरि[4] इही। सो त्यागे तुम सेवहु नहीं।
तीरथ क्रितम[5] अंम्रितसर है। सेवहु तांहि लख्यो बहु बर है॥ १८ ॥
बेदनि ब्रह्म बाणी को त्यागे। गुरबाणी भाखा संग लागे।
जनम अषटमा अरु शिवराति। ब्रत इकादसी तजि तुम खाति॥ १९ ॥
गाइत्री, त्रै संध्या, तरपन। पिंड पतल किरिआ करि बरजन[6]।
मिरतक पाछै करि अरदास। करहु कराहु लेहु मुख ग्रास॥ २० ॥
यांतें तुम भ्रिषटि अबि होए। पंगति उचत नहीं किम जोए।
श्री गुर तुम शरनी हम परे। जगत गरत ते काढनि करे॥ २१ ॥
जाति मान श्रिंखल ते निकसे[7]। सीत प्रसादि खाइ मन बिगसे।
प्रापति भयो हमहि सत्तिनामू। जम सो रह्यो न कैसे कामू॥ २२ ॥
तऊ जि पंडित करि अपमाने। किम हम तिन के संगि बखाने।
श्री अरजन सुनि बाक बखाना। तीरथ अंम्रित ताल महाना॥ २३ ॥
नगर भयो इह एकांकारा[8]। बिधि हरि शिव पुरि[9] जितिकि उदारा।
छित मंडल के तीरथ सारे। बसहिं आइ पावनता धारे॥ २४ ॥

---

1. ऊँचे फण वाली दशा। 2. सरोवर से अमृत लाओ। 3. ब्रह्म तेज से पूर्ण ढेसी। 4 काशी, शिवपुरी। 5. बना लिया है। 6. हटाना। 7. जातिवाद की अहंकार-पूर्ण शृंखला से निकले। 8. परमेश्वर का नगर है। 9. ब्रह्मा, विष्णु और शिव की पुरियाँ।

इक तौ जल को तीरथ महां। दुतिय नाम को तीरथ इहां।
ब्रह्म गिआनी आदिक बड संत। इस के तट पर ब्रिंद बसंति ॥ २५ ॥

श्री मुख वाक

गंगा जमना गोदावरी सरसुती ते करहि उदमु धूरि साधू की ताई।
किलविख मैल भरे परे हमरै विचि हमरी मैलु साधू की धूरि गवाई ॥ २ ॥

चौपई

गन अघ करि प्रानी जे मज्जति। तीरथ महां बिखें सभि तज्जति[1]।
पापनि ते आकुल हुइ आवति। इहां धूर संतन की पावति ॥ २६ ॥
कथा कीरतन सुनि करि तबि ही। तीरथ गन पावन हुई सभि ही।
सिखनि बूझ्यो जग महिं जोवै[2]। जल सों मलि करि मल को खोवै ॥ २७ ॥
चरन धूर ते मल किम जावै। सुनि सतिगुर दिषटांत बतावै।
सज्जी साबण मल ही होवैं। तिन ते मल बसत्रनि की धोवैं ॥ २८ ॥
तिम संतनि पद रज अति पावन। है समरथ गन पाप नसावनि।
तिम गुर शबद श्रवन धुनि परे। प्रेमा भगति उपावनि करे ॥ २९ ॥
सभि थल जल को तीरथ अहा। अधिक नाम को तीरथ इहां।
बिच जहाज सम श्रीं हरि मंदिर। जिसमो नाम मुहाणा[3] सुंदर ॥ ३० ॥
शिव सिर ते गिरि गंग प्रवाहू। मिले पुचावति[4] सागर मांहू।
तिम गुर मुख ते निकसी बानी। पठहि बिचारि कमाइ जु प्रानी ॥ ३१ ॥
सो प्रभु के पग संग मिलावति। बहुर बह्म महिं मिलिबो पावति।
दोनहु तीरथ इहां बिसाले। जन को करहिं निहाल सुखाले ॥ ३२ ॥
बिशनु रूप बनि पुरख अकाल। करे स्वास ते बेद बिसाल।
द्वादश महा वाक को पाइ। कमलासन बिसतार उपाइ ॥ ३३ ॥
बहुर व्यास ने बहु बिसतारे। जो परिविरति भए जग सारे।
तिसी अकाल पुरख तन थिए। संत रूप श्री नानक भए ॥ ३४ ॥
कलि के जीव उधारनि कारनि। करे बेद ते शबद उचारनि।
समझहिं नर मतिमंद सुखारे। करि उपदेश करोरहुं तारे ॥ ३५ ॥
संजम सों अहार नित करिवे। इहु इकादशो सिख ब्रति धरिवे।
पंद्रहि दिवसनि महिं सो आवै। सो सिक्खनि को नितप्रति भावै ॥ ३६ ॥

---

1. सब विषय-विकारों का त्याग होता है। 2. दिखाई पड़ता है। 3. मल्लाह।
4. अपने में मिलने वाले को (सागर तक) पहुँचाती है।

श्री नामदेव वाक

राम संगि नाम देव जन कउ प्रतगिआ आई ।
एकादसि व्रतु रहै काहे कउ तीरथि जांई ॥ १ ॥

चौपई

बिप्र जाति तन के अभिमानी[1] । गुरसिक्ख होवति आतम ग्यानी ।
धरहिं अहं तन से चंडाल । प्रीति चरम चरबी के नाल ॥ ३७ ॥
सो ब्रह्मन जिन ब्रह्म पछान्यो । सभि घट महिं इक पूरन जान्यो ।
"कहु कबीर जो ब्रह्म बीचारै । सो ब्राह्मणु कहीअतु है हमारै" ॥ ३८ ॥
हाड चरम मिज श्रोनत मास[2] । धरहि प्रीति, चंडाल अवास ।
तुम ब्रह्मण हो ब्रह्म पछाता । निज सरूप के नित रंग राता ॥ ३९ ॥
तरपन पिंड पतल गाइत्री । पितर लोक प्रापति पावित्री ।
तुम सत्तिनाम जपहु सुख रास । पहुंचहु वाहिगुरू पग पास ॥ ४० ॥
पितरलोक सिख बांछति नांही । अबिनाशी निज रूप समाही[3] ।
जिम सभि छित को निपति प्रपंना । एक ग्राम ते ह्वै न प्रसंना[4] ॥ ४१ ॥
जे गरीब ले बहु हरखावै । तिम नरकी पितरन पुरि पावै ।
गुर के सिक्ख स्वरग नहि बांछे । ब्रह्म रूप प्रापति जे आछे ॥ ४२ ॥
श्री अरजन ते निरने सुनि करि । भए प्रसंन त्रिसंसे दिजबर ।
गुर निशचे ते लहि ब्रह्म ग्यान । जाति पाति की त्यागी आन ॥ ४३ ॥
जाति कान गाढी पग वेरी । बंधे दुख प्रापति बहुबेरी ।
बिन गुर करुना छूटति नांही । पचे परहि परवारनि मांही ॥ ४४ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' वरननं नाम सपटी: अंशु ॥ ६० ॥

---

1. ब्राह्मणों की जाति ही अभिमानी होती है । 2. हड्डी, चर्म, मज्जा, रक्त और माँस । 3. सिक्ख स्वर्ग की कामना नहीं करता, वह तो अपने अविनाशी रूप में समा जाता है । 4. (उसकी दशा ऐसी होती है) जैसे सम्पूर्ण धरती के राज्य को प्राप्त करने वाला राजा, एक गाँव से प्रसन्न नहीं होता ।

अंशु ६१
सिक्खन प्रसंग

दोहरा

घुट्टे जोधा जाम द्वें श्री अरजन ढिग आइ।
करि बंदन बैठे तबै बूझे सहिज सुभाइ ॥ १ ॥

चौपई

श्री गुर ! इम है हुकम तुमारो। मन इकाग्र करि भजन सुधारो।
करि हारे हम अनिक उपाइ। नहीं इकागरता मन पाइ ॥ २ ॥
सुनि सतिगुर कहिं उत्तर तिन को। प्रथम न लखहु सुभाव जि मन को।
लगे पछाननि अबि गति अंतरि। इसी जतन महिं रहो निरंतर ॥ ३ ॥
निकसहि मन पुर जोरहु[1] आनि। पुन पुन रोकहु बनि सवधान।
सहिज सुभाइक थिरता होइ। पावहु श्रेय कषट गनखोइ ॥ ४ ॥
सुनि उपदेश जतन तिम ठाना। सो प्रापति होए कल्लयाना।
मंज के संग पिराणा आयो। सतिगुर आगे सीस निवायो ॥ ५ ॥
दिहु उपदेश होहि कल्याने। श्री मुख ते शुभ वाक बखाने।
सरवर के मुरीद तुम दोऊ। सिक्खी कठन कमाइ न सोऊ[2] ॥ ६ ॥
कहनि लगे दरशन भयो। तबि ते हमरो मन फिरि गयो।
हिंदु जनम हम तुरक मनावें। गयो धरम परलोक गवावें ॥ ७ ॥
सुनि गुर कह्यो जाहु निज धाम। प्रथम ढाहु सुलतान मुकाम।
पुन आवहु हम सिक्ख बनावें। शुभ अपनो उपदेश बतावें ॥ ८ ॥
सुनति जाइ तिस थान बिदारा[3]। गुर ढिग आइ प्रसंग उचारा।
श्री मुख ते सेवा फुरमाई। मंज वहिर ते ईंधन ल्याई ॥ ९ ॥
तूं चूल्हे झोकनि पर रहो। इह सिक्खनि की सेवा लहो।
अंतहिकरन शुद्ध हुइ जबै। हम उपदेश बतावहिं तबै ॥ १० ॥

---

1. जोड़ो (नाम के साथ)। 2. सिक्खी कठिन है, निभेगी नहीं। 3. स्थान तोड़ दिया।

नित गुर शबद सुनहु मन लाइ। कथा कीरतन हुइ जिस थाइं।
सिक्खनि जूठे बासन जोइ। करहु पखारनि माजनि सोइ[1] ॥ ११ ॥

सुनि करि सेव लगे हरखाइ। चिरंकाल गुर संगति पाइ।
भयो पिराणा सिद्ध बिसाला। ब्रह्म ग्यान लहि सदा सुखाला ॥ १२ ॥

अंत प्रयंत रह्यो गुर तीर। सेवे श्री हरिगोबिंद धीर।
कथा मंज की अपर सथान। बरननि करी सुनहु सिख कान ॥ १३ ॥

हमज़ा[2] जज्जा[2] मिलि जुग भ्रात। वाला[2] मरवाहा वक्ख्यात।
अपर ओहरी[3] नानो[3] आयो। सूरी[3] हुतो चौधरी[3] गायो ॥ १४ ॥

श्री अरजन के पहुंचे पास। बंदन करि भाखी अरदास।
गुरू गरीब निवाज महाना। वीच पुरान सुन्यो हम काना ॥ १५ ॥

काशी केर महातम भारे। मरे तहां मुकती ले सारे।
शिव के निकट वास को पावै। जनम मरन को कषट मिटावै ॥ १६ ॥

आप सुधासर महिमा भाखी। स्री ग्रिंथ साहिब महिं राखी।
कहो महातम, है इस जैसे। निरने करहु लहैं सिख तैसे ॥ १७ ॥

श्री अरजन जी सुनति वखाना। तीरथ रचनि सुधासर ठाना।
इसके गिरदे द्वादश कोस। तीरथ तीन लोक के जो सु[4] ॥ १८ ॥

कलियुग ते धरि करि उर त्रास। सगरे आवहि करहि निवास।
सभि को फल इस थल ते होइ। बास करहिं इह ठां नर जोइ ॥ १९ ॥

बीच बन्यो सुंदर हरिमंदिर। निस दिन सत्तिनाम जिस अंदर।
श्री गुर की बाणी शुभ ररैं। जिस महिं नाम महातम धरैं ॥ २० ॥

नाम रु नामी भेद न कोई। यांते बास प्रमेशुर होई।
जिम गंगा महिं मुख हरिद्वार। तिम हरि पौर[5] इहां निरधार ॥ २१ ॥

निरगुण रूप नाम ब्रह्म ग्यान[6]। सगुण सरूप आप भगवान।
दोनहुं बास करहिं जबि इसमै। मज्जित दरसति अघ रहि किस मैं ॥ २२ ॥

दिनप्रति बसहि बधहि अधिकाइ। लछमी शरन बसहि इस आइ।
जहिं श्री करता पुरख अकाल। विधि शिव बसहिं प्रभू के नाल ॥ २३ ॥

पुन सुर ऐसो कोइ न अहै। आनि इहां नहिं बासो लहै।
हरि के निकट अधिक फल सारे। अपर न को समता इस धारे ॥ २४ ॥

---

1. सिक्खों के जूठे बरतनों को मांजो-धोओ। 2. नाम हैं। 3. गोत्र हैं। 4. जो हैं। 5. हरि की पौड़ी। 6. ब्रह्म-ज्ञान (की प्राप्ति का माध्यम) निर्गुण रूप नाम।

हरि मंदिर महिं नित सतिनामु । सिमरहि सुनहि सु मन बिसराम[1] ।
करति प्रेम को छेम लहेंगे । ब्रह्म ग्यान ते कषट दहैंगे ॥ २५ ॥

तीनहुं ताप निवारनि करैं । अंतहकरन महां मल हरैं ।
ब्रह्म ग्यान को लहिं निषकाम । पुरहिं कामना जो सहिकाम ॥ २६ ॥

अंम्रितसर परकरमां मांहि । पग पग महिं सौ तीरथ आंहि ।
सूखम रूप धारि तट रहैं । निज निज पावनता को चहैं ॥ २७ ॥

काला सिक्ख मेहरा और । सणे निहालू रहिं गिर ठौर[2] ।
सो बंदन करि बैठे पास । सुनि प्रसंग को बाक प्रकाश ॥ २८ ॥

कहो प्रभू करि संसे हानी । बसहिं तामसी इहां जि प्रानी ।
करहिं पाप, नहिं अदब रखंते । सो किस बिधि की गति लहंते ॥ २९ ॥

श्री मुख ते फुरमावनि कीनि । बसहिं जि महिमा नहिं मन चीनि ।
ठानहिं पाप, न जानहिं मूढ । सुनहिं न सत्तिनाम बहुरूढ़ ॥ ३० ॥

त्रिगध जोनि[3] मरि इहठां पावैं । कूकर, काक, भूंड, बनि जावैं ।
मूखक, सरप बनहिं अघ भोगहिं । पुन नर इस थल बनहिं अरोगहि[4] ॥ ३१ ॥

पुन भगती को प्रापत सोइ । छुटहि चुरासी, गौन न होइ ।
सुनि सभि सिक्खनि सीस निवायो । धंन गुरू तीरथ प्रगटायो ॥ ३२ ॥

दोहरा

कालौ सी बड सूरमां कक्का जिसकी जाति ।
श्री अरजन कों नमौ करि बूझति भयो ब्रितांत ॥ ३३ ॥

चौपई

मरहि जुद्ध महिं जोधा जोइ । को पद तिसको प्रापति होइ ।
कहां जाइ सुख केतिक पावै । सुनि श्री मुख ते तांहि बतावै ॥ ३४ ॥

धरम बीरता जिसने धारा । न्रिभै रहिन संग्राम मझारा ।
जीत्यो शत्रु चहति चित मर्यो । मरति जि सत्तिनाम उर धर्यो ॥ ३५ ॥

प्रापति होति परमगति सोइ । जनम जनम के पापनि खोइ ।
बिन सिमरन रिसु रिपु पर धारि । मारि मारि मुख करति उचारि ॥ ३६ ॥

बिनां त्रास ते तन तजि देति । हति हति शसत्र परहि रणखेत ।
जोगी सम भेदे रवि मंडल । पुन पहुंचहि जहिं बसहि अखंडल[5] ॥ ३७ ॥

---

1. एकाग्रता आती है । 2. पहाड़ में रहते थे । 3. विषम योनियाँ । 4. अरोग मनुष्य बनेंगे । 5. इन्द्र ।

गन बिरंगना[1] सेवति आइ। बिबध विधिनि[2] के बिबध जि थाइं।
चामीकर[3] के मंद बीच। राग सुनावहिं वहु सुख सीच॥ ३८॥
इत्यादिक सुख अनिक प्रकार। सुरतन ह्वै रहिं स्वरग मझार।
धरम वडो इह आयुध धारी[4]। नहिं शत्रुन दिखाइ पिछारी॥ ३९॥
दोनहु लोक सूर भुजतरै। जीतहि, प्रिथवी राज सु करै।
मरै, स्वरग के सुख को पावहि। चामीकर के सदन बसावहि॥ ४०॥
रुचिर प्रयंकनि सेज सुखाले। भोगै भोग अनंद बिसाले।
इम जानहु जोधा गति भलै। समुख रहे ते शुभ पद मिलै॥ ४१॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नाम एक सषटी अंशु॥ ६१॥

---

1. अप्सराएँ। 2. देवता-गण। 3. स्वर्ण। 4. शस्त्रधारी होना बड़ा धर्म है।

अंशु ६२

सिक्खन प्रसंग

दोहरा

सेठा उगवंदा दुऊ अपर सभागा तीन।
चूहणीए पुरि महिं बसहिं जाति अरोड़े तीन ॥ १ ॥

चौपई

सिक्खनि की सेवा नित करें। निस महि जाग गुरू उर धरें।
छुधिति सिक्ख को देति अहारा। हेरि नगन को बसत्र उदारा ॥ २ ॥
श्री अरजन के बंदन ठानी। हाथ जोरि अरदास बखानी।
भोजन इहां देति घर मांही। पितरन को पहुंचति कै नांही ? ॥ ३ ॥
श्री मुख ते तिन साथ बखाना। पहुचति पितरन हित जो दाना।
श्री नानक को कह्यो प्रमान। सो शलोक समझहु तिम जानि ॥ ४ ॥

श्री मुखवाक

"नानक अगै सो मिलै जि खटे घाले देइ।"

चौपई

सुनि सिक्खनि पुन कीनि संदेह। प्रानी इहां अहार सु देहि।
पितर सुरग कै नरक मझारी। किधौं जून कैसे को धारी[1] ॥ ५ ॥
तहिं पहुंचहि किम संसै इही। पुन सतिगुर उत्तर दिय सही।
जबि पितरन को दिन चलि आवै। तिन हित करि भोजन जो खवावै ॥ ६ ॥
पितर बरन चारन समुदाइ। विप्रनि विखै प्रवेशहिं आइ।
सिक्खन के गन पितर जु अहैं। सो सिक्खनि महिं बासो लहैं ॥ ७ ॥
जथा चंग[2] बंधी संग डोर। डोलत जहिं कहिं नभ की ओर।
डोरबंधि दीपक पहुंचावै। तिम पितरनि की बिधि बनि आवै ॥ ८ ॥
मोह डोर निज संतति संग। बंधे रहति दूर सम चंग।
पितर देवता जे सभि केरे। लेले सो अहार तिस वेरे ॥ ९ ॥

---

1. किस योनि में हैं, कैसे पता चले। 2. पतंग।

सुरग कि नरक जून के मांही। सुर जे पितर पुचावहिं तांही।
सुनि तीनहु निशचै मन कीना। जिम श्री सतिगुर ते सुनि लीना ॥ १० ॥

दोहरा

पैंड़ा जाति चंडालीआ, जेठा सेठी आन।
श्री अरजन की शरन तक वंदन कीनसि जान ॥ ११ ॥

चौपई

इम अपनी अरदास बखानी। रावरि की वानी हम मानी।
धरम किरत ते करहिं कमाई। सिक्खनि साथ बांटि हम खाई ॥ १२ ॥
मिलि दिज हम सों तरक करंते। कहिं हिंसा नित पंच करंते।
उखली, कूटण, पीसण चाकी। बढनी फेरनि[1] लेपनता की ॥ १३ ॥
चूल्हे महिं पावक जो जारनि। अरु जलु ते होवहि अघ कारन।
अगनि अहूति पंच हम देति। दोष निवारनि सो करि लेति ॥ १४ ॥
पीछ पावन भोजन करैं। तुम नहिं करहु करहु पंच अघ धरैं।
श्री अरजन सुनि तिन समुझायो। जो अहार तुम सिक्खनि ख्वायो ॥ १५ ॥
वाहिगुरू को नाम भनंते। पीछे आप वैठि अचवंते।
इसते पावन होति अहारा। अगनि देवता वदन मझारा[2] ॥ १६ ॥
नारायण चेतन सभि मांही। सूरज सभि के द्रिग महिं आही।
बीच नाशका अस्वनिकुमार। दिशपालक हैं श्रवण मझार ॥ १७ ॥
रसना विखैं बरन को बास। रोम बनासपति लखि रास।
हाथनि महिं सुरपति थिति अहै। गुदा देवता जम को कहै ॥ १८ ॥
परजापती लिंग को जानहु। चरननि महिं प्रभु विशनु पछानहु।
पौन तुचा महिं इम सुर सारे। बास करंति शरीर मझारै[3] ॥ १९ ॥
वाहिगुरु कहि जबि मुख पावै। सरब सुरनि को तबि त्रिपतावै।
सिक्खनि को गुर हित करि देय। पुंन्य महां फल सो नर लेय ॥ २० ॥
करि अरदास प्रसादि व्रतावै। तिनते अघु अरु विघन नसावै।
प्रभु सभि सुर को मूल महाना। तिस त्रिपते सभि सुर त्रिपताना ॥ २१ ॥
जथा मूल तरु[4] सिंचन करे। पत्र पुषप शाखा हुइं हरे।
सुनि सिक्खनि निशचै उर पायो। सतिगुर आगे सीस झुकायो ॥ २२ ॥
गुरदित्ता सिख, लटकण घूरा। हुतो सराफ कटारा रूरा।
मिलि भगवाना चारहु आए। श्री अरजन पग सीस झुकाए ॥ २३ ॥

1. झाड़ू लगाना। 2. मुख में। 3. उपर्युक्त सभी छंद सूक्ष्म सृष्टिक सिद्धान्त (Microcosmic theory) का संकेत करते हैं। 4. पेड़ की जड़ को।

बूझ्यो नाम जपहिं हम कौन। जिस ते प्रापति हुइ सुख भौन।
श्री मुख कह्यो नाम प्रभु सारे। भउजल पार उतारन हारे॥ २४॥
श्री नानक निज सिक्खनि हेतु। वाहिगुरु सिरज्यो नित चेत[1]।
चतुर व्यूह जिम प्रभु के रूप[2]। तिम इह चारहुं बरन अनूप॥ २५॥
जथा चमू[3] के चारहुं अंग। इम इह बरन शत्रु अघ भंग।
चारहुं बेदनि को मथि सार। सुंदर बरन रचै गुर चार॥ २६॥
चहुं दिशि ते दिढ मनहुं जहाज। कलि महिं सिक्ख उबारनि काज।
जपहिं निरंतर महिमा जानि। तिनको करतब रह्यो न आन॥ २७॥
वाहिगुरू जिन रिदै बसायो। चार पदारथ करतल पायो।
कहै कहा लगि एह महातम। सिमरति प्रापति ग्यान सु आतम॥ २८॥
सुनि महिमा सिख सिमरनि लागे। सतिगुर मिले भाग जिन जागे।
धौण मुरारी रहि रवितास[4]। आयो श्रीअरजन के पास॥ २९॥
करि तिह समो नमो ढिग बैसा। हाथ जोरि बूझ्यो कहि ऐसा।
आप जु बानी कीनि उचारनि। पठैं सुनैं हम करहिं बिचारनि॥ ३०॥
तऊ न दुरमति मन तें हानी। इह क्या कारन? सकहिं न जानी।
श्री मुख ते बोले भल भांति। उज्जल बसत्र रंग चढि जाति॥ ३१॥
नहिं मलीन को रंग चढ़ति है। जे पखार करि मैल कढति है।
पुन तिस को रंग चढहि सुनीको। सुनि सिख पुन बूझति गुर जी को॥ ३२॥
मन सूखम को धोवहिं कैसे। हम अनजान, बतावहु तैसे।
श्री मुख ते कहि प्रथम बतायो। श्री नानक जप पाठ बनायो॥ ३३॥

श्री मुखवाक

भरीऐ हथु पैरु तनु देह।
पाणी धोतै उतर सु खेह।
मूत पलीती कपड़ु होइ।
दे साबूण लईऐ ओहु धोइ।
भरीऐ मति पापा के संगि।
ओह धोपै नावै के रंगि।

---

1. नित्य स्मरण के लिए। 2 विष्णु (प्रभु) के चार रूपों के समान : शरीर पुरुष, छंद पुरुष, देव पुरुष एवं परम पुरुष। 3. सेना। 4. नगर का नाम—रोहतास।

चौपई

तन अरु बसत्र सथूल जु होइ। जल सावुन लईऐ धोइ।
मति अर अघ सूखम इह जानि। मन को करहिं मलीन महान ॥ ३४ ॥
सत्तिनाम भी सूखम अहै। सिमरनि ते सगरी मन लहै।
प्रभु महिं प्रेम रंग चढि जाइ। एक रूप हुई बहुर मिलाइ ॥ ३५ ॥
शरधा अरु धीरज उर धरो। गुरबानी पठि सुनि, गुनि धरो[1]।
सिमरहु नाम पाप मल जाइ। सनै सनै गुरमति लिहु पाइ ॥ ३६ ॥
जनम अनेकनि के अघ ब्रिंद। करहु भजन, सभ होई निकंद[2]।
सुनि सिक्खनि शरधा धरि धीर। लागे सिमरनि करन गहीर ॥ ३७ ॥
आडित सुइनी[3] सिख चलि आयो। सतिगुर आगे सीस निवायो।
हाथ जोरि अरदास उचारी। ब्रित्ति हमारी शसत्रन धारी ॥ ३८ ॥
जिम उधार हमरो हुई जाई। क्रिपा करहु उपदेश बताइ।
श्री अरजन तबि सुमति बताई। धरम जुद्ध कीजहि घ्रित पाई ॥ ३९ ॥
रण करते प्रभु सों रखि ध्यान। लरे बिशनु जिम सारंगपानि।
असुरनि गन को कीनि संघार। गदा पाणि[4] को तबि उर धारि ॥ ४० ॥
संकट देहि गरीबनि जोइ। तिंह सो लरहु धरम बहु होइ।
जिसको लूण खाइ तिस हेतु। पीठ न दीजहि जबि रण खेत ॥ ४१ ॥
स्वामी कारज हित दे प्रान। दोनहु लोकनि सुजसु महान।
परमेशुर को सिमरन धरे। बिजै लहै मुख उज्जल करे ॥ ४२ ॥
सुनि सिख्या तैसे उरधारी। लाग्यो गुर की सेव मझारी।
लाला सेठी, चूहड़, साई। संग निहालू गुरमति पाई ॥ ४३ ॥
लिव लगाइ करि शबद सु गावैं। इक मन हुइ करि अरथ सुनावैं।
करहिं बिचार म्रिदुल मन होइ। प्रभु को राखहिं रिदै परोइ ॥ ४४ ॥
तिन के बचन सुनहि जो आया। सभि पर परैं तिनहु की छाया।
मन खोटे भी हुई तबि खरे। भले करम करिबे हित धरे ॥ ४५ ॥
श्री मुख ते बोले बच पूत[5]। जो नर करहि भली करतूत।
जिम अपरनि उपदेश उचारे। तिम निशचै अपने उर धारे ॥ ४६ ॥
तिन की छाया सभि पर जाइ। सुनहिं बाक जे रिदै बसाइ।
बहुतिनि को उधार सो करे। तिस पर तुक श्री मुखहुं उचरे ॥ ४७ ॥

---

1. सोच-समझ कर धारण करो। 2. नाश। 3. आडत नाम का सोनी (गोत्रका)। 4. जिसके हाथ मैं गदा हो—विष्णु। 5. पवित्र वचन।

"पहिलो दे जड़ अंदरि जंमै तां उपरि होवै छांउ ॥

चौपई

जो पढ़ि करि उपदेश बतावै। आप नहीं शुभ करम कमावै।
तिस की छाया परहि न किस पै। श्रवन करे, कुछ होइ न[1] तिस पै ॥ ४८ ॥
इम सति गुर सो सिक्ख सराहे। जिन के प्रेम गुरु पग मांहे।
सुनि अपरनि शुभ उरधारे। चहुं दिशि महिं गुर को जैकारे ॥ ४९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नामु दुइ सषटी अंशु ॥ ६२ ॥

---

1. नहीं होता (प्रभाव)।

अंशु ३
सिक्खन प्रसंग

दोहरा

इक रामा झंझी हुतो हेमू सुइनी दोइ।
जट्टू भंडारी[1] त्रिती शहदरे रहि सोइ ॥ १ ॥

चौपई

श्री अरजन की शरनी आए। पद अरविंदनि सीस निवाए।
प्रशन कर्यो हम सुनति हमेश। किरतन कथा रुचिर उपदेश ॥ २ ॥
उर महिं नहिं ठहिरहि ठहिराए। किम कल्लयान अंत को पाएं।
श्री मुख ते शुभ बाक बखाना। पूरब सुनहि प्रेम करि काना[2] ॥ ३ ॥
करहि मनन, निद्धयासन फेर। तीनो जबि इकत्र इन हेति।
तब ठहिरहि सिख के उर मांहि। रहै बिचारति बिसरहि नांहि ॥ ४ ॥
श्रवनि करनि है दोइ प्रकार। सुनहि सथित सतिसंग मझार।
मन दहिदिशि महिं दोरति फिरे। कहां कहहि कुछ रिदै न धरै ॥ ५ ॥
तनक पुंन इस श्रवन बखानि। जानहु भूतन अगनि समान[3]।
पाप दगध नहिं इस ते होइ। इक मन होइ सुनहि सिख जोइ ॥ ६ ॥
सो चूल्ल्हे की अगनि बिचार। सभि कारज को देति सवार।
जेकरि तिस पर जल दें पाइ। बूझहिं तुरत नहिं तपत रहाइ ॥ ७ ॥
तिम घर के कारज पर जाइं[4]। सत्तिनाम को दें बिसराइ।
श्रवन पिछारी मनन जि होइ। पावक तड़िता की सम सोइ ॥ ८ ॥
जल असंख महिं वासो तांहि। तेज हान करि बूझहि सु नाहि[5]।
करिकैं श्रवण जु धरहि बिचारे। काज करति सो नहीं बिसारे ॥ ९ ॥
राखहि सिमरनि सो सभि काल। जे निद्धयासन करहि संभाल।
सुनहि बिचारहि लग्यो कमावनि। तन मन ते होवहि बहु पावन ॥ १० ॥

---

1. जाति-गोत्रों के नाम। 2. श्रवण करे। 3. भूताग्निके समान जानो। 4. (जब) पड़ते हैं। 5. न तेज नाश होता है, न बुझति है।

सो बडवानल भई प्रकाश। रहै सिंधु जल करहि बिनाश।
जल ब्रिंदनि ते बूझहि सु नांहि। जल पापनि नित करती दाहि ॥ ११ ॥
तथा सथिर होवहि नित ग्यान। श्री सतिगुर ते सुनि करि कान।
उर साख्यातकार जिन कीना। नभ सम सभि महिं ब्रह्म सु चीना ॥ १२ ॥
यांते प्रथम श्रवण तुम करो। मनन बहुर निद्धयासन धरो।
उर सकख्यातकार हुइ जाइ। जनम मरन दुख अखिल बिलाइ ॥ १३ ॥
जीवन मुकति होइ बिचरै हो। प्रलै काल की अगनि जिमै हो[1]।
सरब भसम करि आपे रहै। ब्रह्म रूप महिं इकता[2] लहै ॥ १४ ॥
श्री गुर को ताया संहारी। जिसके गमने सदन मझारी।
रामदास सतिगुरू पठाए। ब्याह भतीजे जंञ[3] चढ़ाए ॥ १५ ॥
सो बहु ब्रिद्ध होइ करि आवा। चहति श्रेय जग दुख लखि पावा।
मिलि करि रह्यो सुधासर मांही। करनि सेव सतिगुर की चाही ॥ १६ ॥
बडो जानि करि देति हटाइ। सिक्खनि सेवा करहि बनाइ।
चरन पखारहि, हांकहि पौन। बासन मांजहि जूठे भौन[4] ॥ १७ ॥
भगति रिदै अक्रूर समाना। जथा क्रिशन महिं निशचै ठाना।
तिम श्री अरजन को मन जानै। प्रथम जनम की ग्यातै पछानै ॥ १८ ॥
इस बिधि देखि दया को ठानी। निकटि हकार्यो गुरू बखानी।
तुम हो बडे लगति हो ताए। हम को चहियति सेव कमाए ॥ १९ ॥
सुनि कर जोरे अरज़ गुजारी। मच्छ कच्छ बावन तन धारी।
श्री नरसिंघ राम अवतारा। क्रिशन रूप तुमने धारा ॥ २० ॥
इक दिन अरजन बिनै सुनाई। मम तुम नाम एक हुइ जाई।
है प्रभु कबि इम भी बनि आवै। मोर नाम करि तुमै बुलावैं ॥ २१ ॥
मन भी मिल्यो, मिले तन रहे। नाम भिंन ही सभि जग कहे।
इक मेरे चित चाउ महाने। तुमरो अरजन नाम बखानें ॥ २२ ॥
सुनि रावर ते होइ प्रसंन। कह्यो-मोहि ते नहिं तूं भिंन।
तव संकलप होइ है साचा, मोहि भावनी महिं नित राचा ॥ २३ ॥
कलीकाल महिं जबि तन धरैं। अरजन नाम हमारो परै।
सो तूं पुरख महिद महीआन[5]। नाना चलित[6] करहिं हित ठानि ॥ २४ ॥

---

1. जैसे हो। 2. एकत्व। 3. बारात। 4. घर। संहारी मल्ल गुरु-पिता का बड़ा भाई (ताया) था। 5. बड़ों से भी बड़ा। 6. चरित्।

निज माया करि वंचहु नांही। अपनी शरधा दिहु मन मांही।
गुर सिक्खी को दीजहिं दान। जिसकी महिमा सम नहिं आन।। २५ ।।
सुनि प्रसंन तबि साहिब होए। नीवों मन ताये कहु जोए।
दीनसि बर सिक्खी तुम पावो। ब्रह्म ग्यान ते कश्ट मिटावो।। २६ ।।
भयो निहाल तबहि संहारी। गति पाई ब्रह्म ग्यान सुखारी।
साइं दित्ता झंझी जोइ। सैंदो जाट लवपुरी सोइ।। २७ ।।
अपर सिक्ख लविपुरि के सारे। श्री गुर अमर सेव को धारे।
करे प्रसंन सरब ही रीति। श्री मुख ते बोले पिखि प्रीत।। २८ ।।
हम प्रसंन तुम जाचहु बर को। करहु मनोरथ पूरन उर को।
सभि सिक्खनि मिलि भले बिचारा। हाथ जोरि गुर निकट उचारा।। २९ ।।
प्रथम गुरू नानक पुरि आए। पिख्यो कसाब पुरा सु रिसाए।
लख्यो पाप हुइ घोर महाना। स्रापति कीनसि एव बखाना।। ३० ।।

'लाहौर सहरु जहरु कहरु सवा पहरु' ।।

चौपई

तबि के पुरि महिं नर दुख पावैं। सवा पहिर लगि बादि उठावैं।
लरहिं परसपर झगरहिं मानी। केतिक होइ प्रान लगि हानी।। ३१ ।।
महां संताप पाइ नर रहैं। ज़हिर समान आप महिं कहैं।
अबि सो स्राप मिटावनि करीअहि। सति संगति इस समैं निहरीअहि[1] ।। ३२ ।।
श्री गुर अमर सुनति बच भाखा। बर दुहसाध्य करी अभिलाखा।
तऊ देनि को प्रथम बखाना। बोले बहुर क्रिपाल सुजाना।। ३३ ।।

'लाहौर सहरु अम्रितसरु सिफती दा घरु' ।

इह सलोक कहि स्राप मिटायो। तबि ते सभि लोकनि सुख पायो।
तबि सैंदो अरु सांई दित्ता। श्री अरजन सों मिले पवित्ता।। ३४ ।।
इह प्रसंग कहि सकल सुनायो। लवपुरि के नर गन बर पायो।
हम आए तुमरी शरणाई। देहु श्रेय उपदेश बनाई।। ३५ ।।
सुनि श्री अरजन तिनहु उचारा। नित कीजहि गुर शबद बिचारा।
वाहिगुरू करि ग्यान पछानो। निरगुण सरगुण इक करि जानो।। ३६ ।।
तुमरी रसना ते जो सुनैं। तिस को भी मन द्रवहि सु गुनैं।
जनम मरन महिं बहु न आवो। भगति करहु ब्रह्म ग्यान सु पावो।। ६७ ।।

---

1. वर्तमान सतिसंगत की (प्रार्थना) देखते हुए।

सुनि दोनहुं पद वंदन करी। जनम सफल जान्यो तिस घरी।
नानू राज सु कालू आनि। हुतो कोहली हाड़ी जानि ॥ ३८ ॥
श्री अरजन पद करि कै नमो। बोले हाथ जोरि तिह समो।
इक पठि सुनि कै शबद तुमारा। भले करम करि जनम सुधारा ॥ ३९ ॥
इक ऐसे पठि के हुइं मानी। भोगैं बिषयनि नारि बिरानी[1]।
अपर बुरे करमन को करैं। पठि करि लोकनि ते धन हिरैं ॥ ४० ॥
तिन की दशा होति है कौन। सुनि बोले गुर करुणा भौन[2]।
पठहिं सुनहिं जे हित कल्लयान। शुभ करमी कि करैं गुज़रान[3] ॥ ४१ ॥
अरथ लखैं दुरमति को त्यागैं। सत्तिनाम सिमरनि अनुरागैं।
तिनको जनम मरन मिटि जाइ। गुर समीपता सो नर पाइ ॥ ४२ ॥
पठहिं लेनि धन को धरि लोभा। करहिं कुकरमनि प्रापति सोभा[4]।
जिम अहि मणि प्रकाश को पाइ। बीन बीन किरमनि[5] को खाइ ॥ ४३ ॥
तिम तिन नर की क्रित पछानो। पठि सुनाइ लें दरब महानो।
करहिं कुकरम भोग त्रिय पर को ! सिमरहिं नहिं सत्तिनाम सु बर को ॥ ४४ ॥
नरक सिधारहिं, गुर न सहाइ। बिन सहाइता बहु दुख पाइ।
सुनि सिक्खनि गुर बाक बिसाला। लगे सुकरमनि गन तिस काला ॥ ४५ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' वरननं नाम त्रै सषटी अंशु ॥ ६३ ॥

---

1. पराई स्त्री। 2. करुणाकर। 4. शुभ-कर्मियों की भांति गुजारा करते हैं। 4. शोभा-प्राप्तिहित कुकर्म करते हैं। 5. कीड़ों को।

अंशु ६४

सिक्खन प्रसंग

दोहरा

सूद[1] सूर कल्ल्यान इक आयो सतिगुत तीर।
पग पंकज पर नमो करि कही अरज़ उर धीर ॥ १ ॥

चौपई

सुनहु गुरू जी मैं रण खेत। न्रिभै रहों रिपु हतिवे हेत।
दोनहुं दल मुकाबले घरे। जवि हू शसत्र चलनि लगि परे ॥ २ ॥
तबि रिपु सैना महिं बर जावों। करि प्रहार बल ते रिपु घावों।
पुन निज दल महिं आनि प्रवेशों। करौं पलावनि शत्रु विशेषो ॥ ३ ॥
सुनि श्री मुख ते वाक उचारे। सुगम अहै दल रिपुदल मारे।
इसको सदा सत्ति अग्यान। काम क्रोध आदिक भट जानि ॥ ४ ॥
ले गुर शबद शसत्र बलधरि कै। इनहुं प्रहारहि रिदै बिचरिकै।
महां सूरमां कहीऐ सोइ। सुख अनाश इन नाशे होइ[2] ॥ ५ ॥
अस बिरले जोधा बलवैंत। मन रिपु को करि जतन गहंति।
इस पर एक शलोक बनायो। श्री मुख ते तबि भाखि सुनायो ॥ ६ ॥

श्री मुखवाक

सैना साध समुह सूर अजितं संनाहं[3] तीन निंम्रताह।
आवघह[4] गुणगोबिंद रमणं ओट गुर सबद कर चरमणह[5]।
आरूड़ ते अस्व रथ नागह[6] बुझंते प्रभ मारगह।
बिचरते निरभ्हं सत्रु सैना घायंते गोपाल कीरतनह।
जित ते बिस्व संसारह नानक वसं करेति पंच तसकरह[7] ॥ २९ ॥

चौपई

मन जीते सो सूर कहावै। प्रभु दरगाहि मान बहु पावै।
नर सुर तिसको सुजसु बखानें। सुख अबिनाशी मिलहि महानें ॥ ७ ॥

---

1. गोत्र। 2. इनके विनाश से स्थायी (अनाश) सुख होता है ! 3. कवच। 4. शस्त्र। 5. ढाल। 6. हाथी। 7. पाँच डाकुओं को वश में करते हैं।

हाथ जोरि तबि कहि कल्याना। क्रिपा आपकी जिस पर जाना।
सो अस जोधा मन को गहै। चरन कमल सों लपट्यो रहै॥ ८॥
कह्यो गुरु सिमरहु सतिनामु। सुभट बनहिं तैसो अभिराम।
सुनि करि गुर सेवा कहु लाग्यो। सतिसंगत मिलिबे अनुराग्यो॥ ९॥
भानू भगत गुरू सिख भारा। करहि शबद को सदा बिचारा।
जो बिच अरथ, सु आप कमावै। पुन अपरनि उपदेश सुनावै॥ १०॥
तिसकी रचना ते जो सुनै। भाउ भगति उपजहि मन गुनै[1]।
श्री अरजन ढिग किनहु बखाना। पुर मुहिजंग[2] बसहि अनजाना[3]॥ ११॥
महां दुष्ट गुर निंदा करे। सिक्खनि गन को तरकनि धरै।
श्री मुख ते भानू संग भाखा। मुहजंगी गमनहु धरि कांखा[4]॥ १२॥
नर गन को गुरमति सिखरावहु। नरक परनि ते जाइ बचावहु।
सुनि आग्या गुर की तबि गयो। शबद बिचार सुनावति भयो॥ १३॥
क्रिशना सेठी हुतो संगीणा। सुनि गुरमति को भयो प्रबीणा।
सुत बनिता जुति भाउ धरंते। भानू की सभि सेव करंते॥ १४॥
होति प्रभाति सबद की कथा। पुन संध्या को करिहीं तथा।
बहुर कीरतन मिलि सभि करैं। सतिगुर महिं पुन शरधा धरैं॥ १५॥
इक भानू के गमने तहां। सतिसंगति होई शुभ महां।
बांटि अथित्तनि[5] करहि अहारा। सत्तिनाम को सिमरनि धारा॥ १६॥
लवपुरि महिं लद्धा उपकारी। भाउ भगति जिन बहु उर धारी।
बुद्धू केर पचावा काचो। दर पर लक्खू स्राप उबाचो[6]॥ १७॥
स्री गुर प्रेर्यो लद्धा गयो। लक्खू को प्रसंन करि लयो।
कह्यो तिसै निज बाक हटावो। बुद्धू रिणी, आप लखि पावो॥ १८॥
पकहि पचावा[7] बरको दीजै। क्रिपाकरहु गुर सिख जानीजै।
सुनि लद्धे के बच उपकारी। सिख लक्खू लखि रिण दुख भारी॥ १९॥
कह्यो वाक सो पलटहि नांही। पिल्ली ईंट तांहि बिक जाहीं।
जिम पाकी ते धन को पावैं। तथा बिकहिं, रिण सभि उतरावैं॥ २०॥
लवपुरि महिं लद्धा इस भांति। परउपकार करहि बक्ख्यात।
लक्खू रहै पटोली तांहि। गुरू ध्यान निस दिन मन मांहि॥ २१॥

---

1. मन में बिचारने पर। 2. मजंग (लाहौर के निकट एक गाँव, जो बाद में लाहौर नगर का ही भाग बन गया था)। 3. अज्ञानी। 4. इच्छा। कांक्षा। 5. गरीब-मुहताजों को बाँट कर। 6. लक्खू ने जो अभिशाप दिया था। 7. इंटों का भट्टा।

इक तीरथ अरु मूला बेरी। सिक्ख मुकंदा मिलि तिस बेरी।
चौथ निहालू जो सुनिआरा। मिलि आए गुर के दरबारा ॥ २२ ॥
करि बंदन को बैठे पास। हाथ जोरि कीनी अरदास।
सिक्ख आपके अनिक प्रकारे। शबद कीरतन कथा उचारें ॥ २३ ॥
इकते सुनति सु मन द्रव जावै[1]। इक को कह्यो समीप न जावै।
श्री मुख ते शुभ जुगति बखानी। हीरा फटक दु एक समानी ॥ २४ ॥
हीरा निज प्रकाश दिखरावै। सरब रंग के ऊपर छावै।
फटक प्रकाश परहि नहिं काहू। अंतर इतो दुहनि के मांहू ॥ २५ ॥
तिम गुरमुख की करो पछान। जिस संगति महिं करहिं बखान।
तिनको तेज सभिनी पर छावै। क्यों कि सदा सो सचु कमावै ॥ २६ ॥
जो नर हौरे अरु कुरिआरे[2]। सो कसंग महिं बनहिं उदारे।
शुभ नर पर तिह छाइ न तेज। सति संगति को जिनहु मजेज[3] ॥ २७ ॥
जिसके रिदै शबद गुर केरा। भयो प्रवेश महां सुख हेरा।
सो रसना ते जबै बखानै। श्रोता सुनति शांति को ठानै ॥ २८ ॥
त्रिशना तपति तजैं, सुख पावैं। सतिसंगति सिमरनि मन भावैं।
लखहि जु मम ते बुद्धि उतंग। चहियहि कर्‌यो तांहि शुभ संग ॥ २९ ॥
गुर बाकनि को रिदै बसावै। जे अस नर कुसंग कबि पावै।
नहिं बिगरै निशचा द्रिड़ रहे। जथा अचल इक थल थिर अहे ॥ ३० ॥
जिम चंदन बावन तरु सीतल। चहुं दिशि महिं अहि लपटैं ही तल।
तउं न सीत तजि बिख को लेति। सरपन को सीतल करि देति[4] ॥ ३१ ॥
तिम गुरमुख जे धसहिं कुसंग। तहिं भी देति आपनो रंग।
तिनको अवगुन आप न करैं। शुभ गुन कहि कहि उर महुं धरैं ॥ ३२ ॥
सुनि सिक्खनि सभि सीस निवायो। जथा जोग श्री गुरू बतायो।
इस प्रकार नित होति उचार। श्री अरजन सिख करति उधार ॥ ३३ ॥
फैल्यो सुजसु विदेश अशेष। चहुं दिशि के नर आइ हमेश।
इक दिन बैठे सभा बिसाल। बडे बडे सिख भगत रसाल[5] ॥ ३४ ॥
चल्यो ज़िकर सिख बहु किस देश। कहिं सतिसगति भाउ विशेष।
जिस जिस जो जो देखनि कीना। कर्‌यो सुनावनि जस जस चीना ॥ ३५ ॥
कितिक सिक्खी श्री गुर सों कहै। देश गिरनि[6] कशमीर जु अहै।
तरकति पंडित तहां महानी। पढनि देति नहिं सतिगुर बानी ॥ ३६ ॥

---

1. द्रवित होता है। 2. हलके और झूठे। 3. मिज़ाज, अहंकार। 4. सर्पों को भी शीतल बनाता है। 5. रसिए। 6. पहाड़ी प्रदेश।

संसक्रित सुर बानी जानहु। मनुख गिरा भाखा इह मानहु।
क्यों तुम पठहु, कहां फल लागे[1]। नित्त नमित के करमनि त्यागे ।। ३७ ।।
इत्त्यादिक सभिहूंन सुनावैं। गुरमति सिक्खी ते सु हटावैं।
श्री अरजन सुनि सभा मझारा। माधो सोढी निकट हकारा ।। ३८ ।।
श्री मुख ते फुरमावनि कीनि। गुरमति महिं तूं अहै प्रबीन।
अबि हम तोहि बचन के मांही। पाई शकति मिटहि कबि नांही ।। ३९ ।।
परबत बिखै देश कशमीर। सिक्खी जाइ द्रिड़ावहु धीर।
गुरमति को कीजहि बिसतार। सिमरहिं सत्तिनाम सुखसार ।। ४० ।।
सुनि माधो पुन बाक बखाने। तहां भगति को बिप्प्रन जानें।
करम-कांड में सो लपटाए। नहिं उपासना मन महिं ल्याएं ।। ४१ ।।
कह्यो गुरू सो भगती जानैं[2]। नहीं कमावति जिम अनजानैं।
पहुंचहिं जबि, तुम दरशन पैहैं। रिदै उपासन को उपजैहैं ।। ४२ ।।
संसक्रित जिम बिप्प्रनि प्यारी। पठैं सुनैं मानहिं उर धारी।
तिम सिक्खनि को सतिगुर बानी। सुनति श्रोन जिहं मति हरखानी ।। ४३ ।।
ले गुर आइसु ह्वै करि त्यारी। गमन्यो गुरमति देनि पहारी[3]।
गुर शबदनि की पोथी लीनि। अरथ करनि महिं सुमति प्रबीन ।। ४४ ।।
पुरिमहिं कर्‍यो जाइ कित डेरा। उपदेशनि लाग्यो जिस बेरा।
मिलि पंडित माधो ढिग आए। भाखा की न कथा हम भाए ।। ४५ ।।
सुर बानी तजि किम इह धारैं। नहिं आवति इम रिदै हमारैं।
सुनि माधो तबि जुगति बखानी। जिस नर लागी खुधा[4] महांनी ।। ४६ ।।
सो जि प्रतीखहि कंचन बासन[5]। करहि जतन ते पूजहि आसन[6]।
पान हानि तबि लो हुइ जाति। बिन तिस मिले न भोजन खाति ।। ४७ ।।
दूसर छुधिति अहार निहारा। जिस किस बासन सुच महिं धारा[7]।
अचहि अनंद होइ करि जीवति। सरब भांति को समरथ थीवति ।। ४८ ।।
महा जतन ते लहि सुरबानी[8]। पुन हंकार होति उर आनी।
सोई भगति ग्यान बिच भाखा[9]। जिसको मुकति होनि अभिलाखा ।। ४९ ।।
गुरमति पाइ सु होइ निहाल। ब्रह्म ग्यानु अरु घ्रित सम चाल[10]।
जिस किस बासन रहै पुनीत। अंगीकारहिं सभि धरि प्रीति ।। ५० ।।

---

1. क्यों पढ़ते हो, क्या फल होगा ? 2. वे भक्ति को जान लेंगे। 3. पहाड़ियों को। 4. क्षुधा, भूख। 5. स्मर्ण-पात्र। 6. आशा पूरी नहीं होती। 7. किसी भी साफ़ बरतन में रखा हुआ। 8. संस्कृत। 9. वही भक्ति और ज्ञान भाषा में है। 10. ब्रह्म-ज्ञान और घी की रीति एक-समान है।

तिम किस जाति बरन किस होइ। ब्रह्म ग्यान लहि बुधि सभि कोइ।
सुर बानी तुम प्रथम बिचारो। पुन भाखा महिं अरथ उचारो ॥ ५१ ॥
भाखा बिन जो काम तुहारा। पूरन भयो न, लेहु बिचारा[1]।
सत्तिनाम फलदायक चार[2]। गुरमुख सिमरहि होइ उधार ॥ ५२ ॥
जाति मान धरि जनम न खोवहु। करहु भगति प्रभु सभि महिं जोवहु।
कहि पंडत हम भाखा कहैं। मूढनि समुझावनि को चहैं ॥ ५३ ॥
सुनि माधो ने फेर बखाना। पारब्रह्म करतार महाना।
जिसके स्वास वेद सभि जोवा। जो सरूप श्री नानक होवा ॥ ५४ ॥
कलि महिं मति विहीन नर जाने। भाखा विखै कह्यो कल्ल्याने।
गुरू शबद ते हुइ मन नीवा। संसक्रित ते मान बधीवा ॥ ५५ ॥
जिन मानी श्री सतिगुर बानी। सरब शकति जुति भे ब्रह्म ग्यानी।
देश बिदेशनि महिं बिदताए। छपे नहीं उबरे समुदाए ॥ ५६ ॥
इत्यादिक कहि बहु समुझाए। वचन प्रताप भए सिख आए।
कथा कीरतन दोनहुं काल। सुनहिं करहिं धरि प्रेम बिसाल ॥ ५७ ॥
धरमसाल पुरि विखै बनाइ। सेवहि सतिसंगति समुदाई।
सिक्खनि सेव होनि तबि लागी। भए गुरु पग के अनुरागी ॥ ५८ ॥
ले गुर कार दरस को आवैं। होति निहाल परम सुख पावैं।
इम सिक्खी बिथरी कशमीर। सिमरहिं सत्तिनाम धरि धीर ॥ ५९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नाम चतुर खषटी अंशु ॥ ६४ ॥

---

1. विचार कीजिए कि भाषा बिना तुम्हारा काम पूरा नहीं हो सकता। 2. चार फल: धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।

अंशु ६५

सिक्खन प्रसंग

दोहरा

रूपचंद भीवा जुगल बसहिं सिर्हंद मझार।
किरत करहिं सिक्खनि मिलहिं बांठति अचहिं अहार॥ १॥

चौपई

पुरब दिवस महिं असन[1] बनावहिं। सिक्खनि को धरि भाउ अचावहि।
एक मुगल तिनके ढिग आइ। सौंपी दीनार जु समुदाइ[2]॥ २॥
धरि दिल्ली को गमन्यो सोइ। लिख्यो वही पर नहिं इन दोइ[3]।
बिसर गए नहिं रिदै संभारी। धरी रही जहिं घरि इक बारी॥ ३॥
पंच मास महिं हटि सो आयो। दोनहुं को निज बदन दिखायो।
हित जाचनि धन बाक सुनावा। मैं तुमरे ढिग धरि गमनावा॥ ४॥
वही खोलि देखति निज लिख्यो। नहीं नाव मुगलहि को पिख्यो!
हमरे पास धरी नहिं तोही। वही नाम को पिख्यो न मोही॥ ५॥
झगरति झगरति करे शिताब। हित न्याउं ढिग गए नवाब।
तहां तेल को धर्यो कराहा। तपत कर्यो पावहु कर माहा[4]॥ ६॥
पंच मुहर को करनि प्रसादि। सिक्खनि गुर सुख सुक्खी आदि[5]।
मुगल शीरनी पीरनि मानी। बांटनि करों दरूद बखानी॥ ७॥
दोनहुं के कर पर्यो कराहे। सिख कर वच्यो, मुगल को दाहे।
करि कूरा सो वहिर निकारा। भीवा अपने सदन सिधारा॥ ८॥
रूपचंद भ्राता सों कह्यो। क्यों धन मुगल मांगबो चह्यो[6]।
तवि दोनों ने सकल दुकान। खोजनि करी सकल असथान॥ ९॥
किस वासन महिं ते सो पाई। मुहर वांसणी महिं समुदाई।
बहुत बिसूरति शीघ्र गए तहिं। मुगल सचित महादुख सों जहिं॥ १०॥

---

1. भोजन। 2. बहुत-से दीनार अमानत के रूप में रखने को कहा। 3. दोनों ने बही-खाते में नहीं चढ़ाया। 4. बीच में हाथ डालने को। 5. पहले सिक्खों ने मान्यता की (कि पाँच मुहर का प्रसाद करेंगे)। 6 मुगल ने हमसे धन क्यों माँगना चाहा ?।

बिसर गए हम खोजी आछे। भरी वांसणी प्रापति पाछे।
लिहु अपनी दुखदूर करीजै। छिमहु भूलहमरी, सुख लीजै ॥ ११ ॥
बिसमति मुगल कही मुख बानी। किसकी तुम मंनत तबि मानी ?।
भीवे कह्यो मुहर हम पांचे। सुक्खी सुक्ख[1] सतिगुरू साचे ॥ १२ ॥
कामल गुरू मुगल मन जानि। कह्यो चलहु ले मुझ गुर थानि।
दोनहु भ्रात संग ले तांही। आए शीघ्र गुरू के पाही ॥ १३ ॥
मसतक टेकि वैठि करि बूझे। इह बिप्रीति भई उर सूझे।
साचो झूठ झूठ भा साचो। सुनि श्री सतिगुर वचन उबाचो ॥ १४ ॥
इसको नहिं सुधि दरब तुहारे। पर्यो सिक्ख पुन शरन हमारे।
लियो उबार आपनो जाने। तुव बहु पीर न रच्छ्या ठाने[2] ॥ १५ ॥
सुनि करि मुगल पर्यो शरनाई। भयो सिक्ख गुरमति चित पाई।
धंन धंन कहि जहिं कहिं सारे। सतिगुर को बड सुजसु उचारे ॥ १६ ॥
इक परतापू सिख चलि आयो। सतिगुर आगे सीस निवायो।
हाथ जोड़ि अरजी इम कही। हमरी ब्रिति शसत्र की अही ॥ १७ ॥
जिस बिधि ह्वै प्रापति कल्ल्याना। आप करो उपदेश महाना।
श्री मुख ते तबि तिसको भाखा। आइ काल जबि कोइ न राखा[4] ॥ १८ ॥
जेकरि काल नहीं इस आवा। तौ राखो नित काल रहावा।
यांते घरै धरम निज जोधा। नहीं जुद्ध महिं त्यागहि क्रोधा ॥ १९ ॥
संत, अतिथ, दिज, धेनु, रंक। जो इनको दुख देहि अतंक।
तहां धरम को ज़ंग मचावै। घने कि थोरे नहिं मन ल्यावै ॥ २० ॥
जथा शकति करतो रहि दान। खान पान बसत्रनि धन जानि।
करिवे दान शसत्र के मांही। बरकत होति निफल हुइ नांही ॥ २१ ॥
सुजसु जगत कहि सुधा समान। बिख सम अपजसु करहि सु हान।
सुनि प्रसंन भा रिदै प्रतापू[5]। नमो करी गुर लख्यो प्रतापू[6] ॥ २२ ॥
नंदा विट्ठड़ स्वामी दास। बसहिं थनेसर करै अवास।
करहिं धरम के जुत विवहारा। कहैं जु मोल सु एको वारा ॥ २३ ॥
इक सुखनी[7] तिन को भा नाम। चलि आए सतिगुर की शाम।
करि बंदन बैठे हुइ पास। इक सुखनी भा ज़िकर प्रकाश ॥ २४ ॥

---

1. मानता। 2. तुम्हारे अनेक पीरों ने तुम्हारी रक्षा नहीं की। 3 जब मृत्यु आती है तो कोई रक्षा नहीं कर सकता। 4 युद्ध में भी क्रोधातुर होकर न त्यागे (अपने धर्म को) 5. नाम है। 6. प्रताप को देख कर। 7 एक ही वचन पर दृढ़।

श्री अरजन गुरदेव बखाना। इसते ही हुइ तुम कल्याना।
झूठ बराबर पाप न दूजा। साच समान पुंन नहिं पूजा[1] ॥ २५ ॥
सिक्खनि की सेवा नित करो। गुरमति सदा रिदै उर धरो।
सीत काल महिं दीजहि चीर। भले करम महिं कीजहि धीर[2] ॥ २६ ॥
गुर को बचन मानि घरि आए। सिक्खनि की सेवा मन लाए।
सुत बनिता सभि के उर भाउ। मिलहिं सिक्ख संग मधुर सुभाउ ॥ २७ ॥
गुरबानी संग प्यार करंते। पठैं सुनैं तिस पंथ चलंते।
चरन पखारहिं सिक्खनि केरे। भोजन बसत्रनि दान घनेरे ॥ २८ ॥
इम करते ही भयो उधार। पाइ परमपद गुर दरबार।
गोपी महिता नत्था और। भाऊ मोकल मिलि इक ठौर ॥ २९ ॥
ढिल्ली मंडल गुर ढिग आए। बंदन करि शुभ दरशन पाए।
हाथ जोरि परसंग बखाना। बाणी रची आप बिधि नाना ॥ ३० ॥
पढति सुनति मन को सुख देति। प्रेम बधावै दुख हरि लेति[3]।
बिषियनि ते शांती उपजावै। सत्तिनाम को सिमरनि भावै ॥ ३१ ॥
केतिक अपरनि कीनसि बानी। बहुविधि ते चातुरता सानी[4]।
तिन ते मन नहिं द्रवै सुनेते। प्रेम न उपजहि रिदै भने ते ॥ ३२ ॥
श्री मुख ते फुरमावनि कीना। गुरबानी महिं शकति प्रबीना।
जिन प्रानी चाह्यो कल्याना। सो जे पठहि सुनहिं शुभ काना ॥ ३३ ॥
फल बिसाल तिस प्रापति होइ। बहु अभ्यास करहि नर जोइ।
सो हुइ जाति मुकंद परायन[5]। सिमरन करहि कुसंगहि पाइ न ॥ ३४ ॥
जग महिं पाइ कामना सुखी। नहिं प्रलोक महिं कैसे दुखी।
तिन सिक्खनि सुनिकै सुख पायो। गुर बानी संग प्रेम बधायो ॥ ३५ ॥
महिता सकतू सिक्ख निहालू। बसहिं आगरे सुमति बिसालू।
दरशन श्री अरजन के आए। बंदन करि कै बैठि अलाए ॥ ३६ ॥
बिप्प्र करमकांडी इम कहैं। बिन शुभ करम न शुभ गति लहैं।
नित्त करम तरपण गाइत्री। संध्या, पूजा, देह पवित्री[6] ॥ ३७ ॥
करम नमित्त श्राध[7] अरुख्याहु[8]। पिंड पतल दसगात्र[9] जि आहु।
जो ग्यानी सो अपर बखानें। करम सहत तन मिथ्या माने ॥ ३८ ॥

---

1. पहुँचता। 2. भले कर्मों में स्थित होओ। 3. दुःखहरण करता है। 4. चातुर्य भरी। 5. ईश्वराश्रित। 6 'स्नान का आशय है। 7. पितरों के नमित्त अन्नादि का दान। 8. वार्षिक पर्व। 9. मृत-कर्म जो दस दिन तक चलता है।

ग्यान बिना गति पाइ न कोई। वेद नेम करि-उचरै सोई।
हम किस ग्रहन करैं हित धारि। श्री मुख ते तबि कीनि उचार ॥ ३९ ॥
जिम दुभाषीआ वीच जहाज। देति कराइ बनज को काज।
तिम सतिनाम महां अभिराम। दोनहु को गति दे सुख धाम ॥ ४० ॥
ग्यानी के नित होइ सहाइ। द्रिढ़ राखति है ग्यान बनाइ।
अहंब्रह्म इह ब्रित्ति सदीवा। बिसरि न देति प्रपक्कै थीवा[1] ॥ ४१ ॥
क्रम कांडी को करि निषकाम। अंतहिकरण बिमल अभिराम।
बंहुर ग्यान की प्रापति करै। शकति बिसाल नाम प्रभु घरै ॥ ४२ ॥
तांते तुमहु वाहिगुरू नाम। सिमरनि करहु लहहु सुखधाम।
सुनि तिन गुर ते नाम संभारा। अंत परमपद लह्यो सुखारा ॥ ४३ ॥
इक गड़ीअल अरु मथरा दास। आइ दरस कीनो गुर पास।
ढोवहिं पोट[2] किरति इहु घरैं। गुरसिक्खी को धारनि करैं ॥ ४४ ॥
सुत बनिता जुत सिक्खनि सेवैं। जथा शकति भोजन, पट देवैं।
निज कुटंव सों कह्यो दनाई। हम पीछे जे को सिख आई ॥ ४५ ॥
जिम हम सेवैं तिम तुम सेवौं। भोजन बसन देखि करि देवौ।
तबि सिक्खनिगन गुर के पास। दोनहुं को किय सुजसु प्रकाश ॥ ४६ ॥
सेवा के रंग महिं इह राते। तुम सम लखैं जु सिख घर जाते।
सुनि बहु खुशी कीनि तिसकाल। जनम मरन तजि भए निहाल ॥ ४७ ॥
सकल शकति जुत ततछिन भए। अंत परमपद सों मिलि गए।
गंगा सहगल जोधा महां। आयो श्री अरजन जी जहां ॥ ४८ ॥
वंदन करि बैठ्यो जबि पास। श्री मुख ते तब्रि कीन प्रकाश।
तुम मलेछ के चाकर अहो। इह कुछ भली बात नहिं लहो ॥ ४९ ॥
जे तुम कहो जीवका नांही। रहीयहि श्री हरिगोबिंद पाही।
हुइ सगरे परवार गुजारा। अरु सिमरहु सतिनाम संभारा ॥ ५० ॥
दुनीआं के कारज हुइ पूरे। दीन बिखै उज्जल मुख रूरे।
सुनि गंगासहगल हरखायो। दुहूलोक महिं गुर अपनायो ॥ ५१ ॥
इसते अपर न आछी बात। रहति भयो सूरा बख्यात।
जबि रण रचि श्री हरिगोबिंद। हते तुरक बहुबली बिलंद ॥ ५२ ॥
नहीं पीठ रिपु को दिखराई। इम करते ने शुभ गति पाई।
अपर अनेक सूरमा आए। पिखि गगे कहु मोद बढाए ॥ ५३ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रथ द्वितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नाम पंच शषटी अंशु ॥ ६५ ॥

---

1. पक्की होती है। 2. बोझ ढोने का (धंधा करते थे)।

अंशु ६६
सिक्खन प्रसंग

दोहरा

हुतो तपा हरिवंस इक सेव करहि ध्रमसाल ।
थकति जु सिख तिसके चरन धोइ तपत जल नाल[1] ॥ १ ॥

चौपई

देखि छुधिति भोजन अचवावैं[2] । निसा सुपति के पाइ दबावै ।
सीतकाल भूरे[3] तवि देति । घरमसाल लेपन करि लेति ॥ २ ॥
जागहि प्रथम जु पाछलि राती । जल करि तप नुल्हाइ प्रभाती[4] ।
पढति रहै पुन सतिगुर बानी । इम सेवा को ठानि महानी ॥ ३ ॥
कवि गुरदास कीनि जो बानी । इक दिन पढति हुतो रुचि ठानी ।
कितिक सिक्ख बोले तिस पाही । गुरबानी क्यों पढिहैं नांही ॥ ४ ॥
अपर कविनिकी सिख नहिं पढ़ै । सतिगुर सवद प्रीत ते रढ़ैं[5] ।
झगर परसपर गुर ढिग आए । बाद प्रसंग जु सकल सुनाए ॥ ५ ॥
इह सभि बरजति तरकति अही । पढ़नि गिरा, गुरदास जु कही ।
सुनि श्री अरजन बाक उचारा । जिसमहिं श्री गुर सुजसु उचारा ॥ ६ ॥
सत्तिनाम की महिमा कही । तिस कहु पढ़हु सु तरकहु नहीं ।
सतिगुर समता चहहि जि मूढ़ । किम लखि सकै जि आशै गूढ़ ॥ ७ ॥
सो नहिं पढहु करहु तिस तरक[6] । जो सिख पढ़हि परहि मति फरक[7] ।
अपर जि गुरबानी अनुसार । कै बरनन जिह प्रभु अवतार ॥ ८ ॥
सतिगुर हरि सबंधनी बानी । पढ़हु सुनहु निशचै उर ठानी ।
मतसर करि गुर सों जिन करी । कै बिषियनि कै नर कथ धरी[8] ॥ ९ ॥
तिनकौ पढनि बादि है ऐसे । बिन बरखा घन गरजति जैसे ।
जिस महिं गुर अरु हरि तरकंते[9] । नरक परहिं जे पढहिं सुनंते ॥ १० ॥

---

1. गर्म पानी के साथ । 2. भूखे को देखकर भोजन खिलाते । 3. कम्बल । 4. पानी गर्म करके नहलाते थे । 5. पढ़ें । 6. त्याग दो । 7. दुद्धि में भेद उपजेगा । 8. मनुष्यों की बनाई विषयविकारों की कथा । 9. तर्क-युत चर्चा की है ।

अरु कीनसि गुरदास जु बानी। गुरबानी के आशै सानी।
ऐसी पठवे गुरमति पावै। सतिगुर शरधा रिदै वधावै ॥ ११ ॥
सिक्खी को प्रापति नर होइ। हरि गुर जसु तरकहु नहिं कोइ।
रुचि सों पढ़हु सुनहु सुख पावहु। गुर की प्रभु की कथा सुनावहु ॥ १२ ॥
श्री अरजन ते सुनि सभि मानी। पठनि लगे गुर क्रित महानी।
अणद[1] मुरारी सुमति महानी। महांपुरख सिख आतमग्यानी ॥ १३ ॥
नानो लटकण जाति सुजाना। बिंदुराउ सिख मिलि कल्लयाना।
आलमचंदु हांडा जु उचारा। तालवाड़[1] बहुरो सैसारा[2] ॥ १४ ॥
सभि मिलि करि जिनि मनि जग्यासी। आए श्री अरजन के पासी।
करि वंदन को अरज़ गुज़ारी। गुरु गरीब निवाज मुरारी ॥ १५ ॥
दिहु उपदेश हरहु दुख भारा। शरन परे सभि करहु उधारा।
श्री सतिगुर जी बाक प्रकाशा। करहु शबद को नित अभ्यासा ॥ १६ ॥
सिख संतनि की सेवा धरीअहि। सत्तिनाम को सिमरनि करीअहि।
सुनति गुरु ते सभिनि बखाना। हम जबि सबद सुनहिं दे काना ॥ १७ ॥
तबि मन निंम्र सिमरि सतिनाम। पुन बिवहार करहिं जबि धाम।
बिसर जाति नहिं चित महिं रहै। सुनि सतिगुर तिन सों तबि कहैं ॥ १८ ॥
अजहुं तुमारे उर अभ्यास। नहिं द्रिढ भयो करहु निरजास।
अनिक जनम दुरमति बिवहारा। सो अभ्यास बली उरधारा ॥ १९ ॥
गुरू शबद महिं अबि अभ्यासा। भयो अलप ही नहीं प्रकाशा।
बहु दिन को द्रिढ़ तन अभिमान। सनै सनै कीजहि इस हानि ॥ २० ॥
पठनि श्रवनि नित करहु बिसाला। द्रिढ़ अभ्यास शबद जिस काला।
होइ बिसिमरन तन अभिमान। तबि तुमरी होवै कल्लयान ॥ २१ ॥
नीर प्रवाह होति है जैसे। सनै सनै उलटहि विधि कैसे[3]।
करे जतन बहु अन थल बहै[4]। नांहि त प्रथम थान ही रहै ॥ २२ ॥
पूरब करीअहि मन नीवाण। पावहु बंध ब्रित्ति ब्रह्म ग्यान।
सति संतोख आदि गुन धरे। इन जतनहु ते सो मुर परै ॥ २३ ॥
जबि प्रवाहि इति दिशि को भयो। बहुर उपाइ न कुछ रहि गयो।
प्रापत होइ सुखेन अनंद। नहीं सु व्यापहिं दुखदा दुंद ॥ २४ ॥
श्री गुर ते सुनि भगति सु ठानी। भयो मुरारी आतम ग्यानी।
भानू सुघड़ सु जगना नंद। आइ गुरु अरजन पद बंदि ॥ २५ ॥

---

1. गोत्र (आनंद)। 2. नाम है। 3. किसी प्रकार से। 4. दूसरे स्थान पर बहता है।

बैठति अपनि ब्रितंत बखाना। हम रोकहिं इंद्री अरु प्राना।
सिमरण करहिं समेत उपाइ। चहति रिदै प्रभु लिव लगि जाइ॥ २६॥

जबहि पदारथ कुछ द्रिषटावै। तबि हमरो मन तहिं चलि जावै।
वाशन छै,[1] अरु मन को नाश। तत्त्व ग्यान, तीनहु निरजास[2]॥ २७॥

वार वार अभ्यासहु इन को। करहु जतन नित गहीअहि मन को।
सुनि बिनती सतिगुर सों ठानी। दिहु उपदेश कहहु मुख बानी॥ २८॥

जिसते मन को ह्वव ठहिरावै। आतम ग्यान मुकति-दा पावैं।
श्री अरजन तबि जतन बखाना। मन को है तुरंग इहु प्राना[3]॥ २९॥

इनते चपल होति नहिं थिरै। प्रान प्रथम तौ अंतर बरै।
बहुर उथति ऊपर को आवै। उठति समें मन को चपलावै[4]॥ ३०॥

तांते त्रिकुटी प्राण टिकावो। मन को नाश रीति इस पावो।
सकल जगत को मिथ्या मानो। म्रिग त्रिशना मानिंद पछानो॥ ३१॥

अखल पदारथ झूठे जाने। तबिहूं होति वाशना हाने।
नितप्रति निरनै ब्रह्म करीजै। तन इंद्रै ते परे लखीजै॥ ३२॥

बुधि करि उचित जानिबे अहै। इंद्रै थूल न तिस कौ[5] लहैं।
सतिगुर सबद सार वेदांत। करहु बिचारनि इहु सक्ख्यात॥ ३३॥

छै हुइ वाशन मनहि बिनाश। तीरथ आतमग्यान प्रकाश।
इहै सहाइक आपस मांही। जीवन मुकति जु धारै पाही॥ ३४॥

जथा शाहु के सूबे तीन। तीनहु थल को पठवनि कीनि।
तब तिन को सिक्खया सिखराई। तीनहु मिलहु परसपर जाई॥ ३५॥

दुशमन बली अहैं समुदाई। प्रथम सिरंद करहु तकराई।
पुनि तीनहु लवपुरि को साधि। तसकर दुषट लेहु सभि बांधि॥ ३६॥

पुन तीनहु कशमीर सिधावो। तिसको साधो अपनि बनावो।
पुन तीनहु गमनहु हुइ जुदे। त्रै पुरि करहिं राज शुभ तदे[6]॥ ३७॥

जुदे जुदे जो प्रथम सिधारो। होहि न बिजै काज उर धारो।
तीनहु मिले[7] करहु सभि कार। लखि इहु तीनहु तिसी प्रकार॥ ३८॥

---

1. वासना को क्षय करो। 2. तीनों निष्कर्ष की बातें हैं। 3. प्राण मन का घोड़ा हैं। 4. चपल बनाता है। 5. आशय 'ब्रह्म' से है। 6. तीनों नगरों का राज्य भली भाँति सम्भालोगे। 7. भाव है—वासना-क्षय, मन नाश और ब्रह्म ज्ञान।

न्रिप अग्यान जु चमू विकार[1]। सभि थल लीनो गुननि बिदार[2]।
खै वाशन अर मन को नाश। तत्त्व ग्यान इन करि अभ्यास ।। ३९ ।।
सास सास सिमरहु सतिनाम। सबद बिचारि लहो बिसराम।
सुनि सगरे मन आनंद पाए। तिम कीनसि जिम गुरू बताए ।। ४० ।।
जैंत सिंगारु जुग सिख भारी। जोधा बड़े न्रिभै उपकारी।
श्री अरजन तिन संग उचारा। हम सरूप जो खषटम धारा ।। ४१ ।।
धरैं शसत्र दे दुषटन दंड। करैं तुरक गन को खंड खंड।
आयुध बिदया करि अभ्यास। मीरनि की मीरी ले पास ।। ४२ ।।
शबद प्रीति करि चित इम देईं। पीरनि की पीरी हरि लेईं।
न्रिप को लवण खाति है जोइ। निज सरीर को अरपहि सोइ ।। ४३ ।।
हलत पलत महिं हम सुख दै हैं। इहां भुगति उत मुकती पै है।
महां घोर कलिजुग को काल। निज सिक्खनि हम लेहि संभालि ।। ४४ ।।
तुम अबि हरिगोबिंद ढिग रहीए। आग्या मानि सरब सुख लहीए।
तिनके संग युद्ध को करि कै। तुरकनि हतो शसत्र कर धरि कै ।। ४५ ।।
हाथ जोरि सो मानति भए। श्री हरिगोबिंद ढिग चलि गए।
रहे समीप शसत्र धरि सूरे। विद्या अभ्यासहिं गुर पूरे ।। ४६ ।।
कितिक काल बीत्यो ढिग रहे। ले प्रवानगी[3] गुर के कहे।
अपने सदन रहे दुइ मास। इक जोगी मिलि करि तिन पास ।। ४७ ।।
भयो प्रसंन रसाइन दीनि। इक विल भर्यो हरख करि लीनि।
सो बिचारि करि ढिग लै आए। गुर खषटम को सो अरपाए ।। ४८ ।।
लगे सुनावनि गुन इह भारें। दयो सिक्ख ने पारद मारे[4]।
बावन तोले रत्ती पाउ[5]। सुंदर कंचन करति सुहाउ ।। ४९ ।।
इक चावर भर[6] नर जे खावै। छुधा सवा मण की हुइ जावै।
गज सम बल को धारनि करे। रोग सरब तन के परहरे ।। ५० ।।
श्री हरिगोबिंद उचर्यो तिन को। जिन मार्यो पारद सम मन को[7]।
पारे साथ न सो हित धरति। जो तांबे ते कंचन करति ।। ५१ ।।
मन मारे गुन पाइ अनूप। जीव बनहि परमेशुर रूप।
तऊ कामना पुरहिं तुमारी। इक चावर भर वहिर निकारी ।। ५२ ।।

---

1. अज्ञान रूपी राजा की विकारों की सेना। 2. गुणों का नाश करके (उसने सारे प्रदेश पर कब्जा कर लिया है)। 3. अनुज्ञा। 4. पारे की भस्म। 5. बावन तोले (तांबे में) एक रत्ती डालो। 6. चावल बराबर। 7. जिन्होंने मन को पारे के समान मारा है।

ऊपर तरे पान द्वै दैकैं। कर्यो खान सतिगुर कर लैकैं।
पुन बिल अंम्रितसर महिंगेरा। करि मुरातबा तिनहि उचेरा ।। ५३ ।।
अति समीप अपने करि लीनि। बखशी शकति महां बल कीनि।
परे जहां तुरकनि संग्रामू। तहिं तहिं करे बडे तिन कामू ।। ५४ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'सिक्खन प्रसंग' बरननं नाम खषट-षष्टी अंशु ।। ६६ ।।

अंशु ६७

तरन तारन प्रसंग

दोहरा

जैता नंदा सिक्ख द्वै संग पिरागा होइ।
श्री अरजन के चरन डिग आइ निवें त्रै सोइ ॥ १ ॥

चौपई

हाथ जोरि करि अरज गुजारी। कीजहि अस उपदेश उचारी।
जिस ते अपर न करतब रहै। धरहिं रिदै[1] आछो पद लहै[2] ॥ २ ॥
श्री मुख ते उपदेश बखाना। इंद्रै रोकहु बनि सवधाना[3]।
स्वास स्वास सिमरहु अठ जाम। सभि ते ऊच वाहिगुरू नाम ॥ ३ ॥
जबहि टिकहि नहिं ब्रिति निहारो[4]। आवहि बहर त शबद उचारो।
राखो परचा सतिगुर बानी। तिसही ते होवहु ब्रह्म ग्यानी ॥ ४ ॥
श्री सतिगुरु ते सुनि उपदेश। लगे करनि तिस रीति हमेश।
विप्प्रनि देखि कह्यो क्या कीना। करम कांड सगरो तजि दीना ॥ ५ ॥
नित्त नमित्त करम सभि त्यागे। भ्रिषट भए तुम किस मग लागे।
गन पंडित महिं तिनहुं बखाना। मिल्यो हमहिं सतिगुरू महाना ॥ ६ ॥
तबि ते म्रितक पिता अग्यान[5]। जनम्यो घर सपूत ब्रह्म ग्यान।
मरन जनम ते सूतक भयो। तबि ते करम कांड मिटि गयो ॥ ७ ॥
नहीं करम लेखे सु लगते। जिनके सूतक होति भनंते।
तुम ते ही हम सुनि इस भांति। त्यागे करम जानि बख्याति ॥ ८ ॥
कहहु जि सूतक थोरो रहै[6]। गुर की आग्या इस बिधि अहै।
नाभी ते जबि उपजहि स्वास। तबि तो जनम सु होति प्रकाश ॥ ९ ॥
वहिर नासका ते निकसाइ। तबि तिनको मरनो हुइ जाइ।
सूतक बिना करम को समै। रहे बिचार, न प्रापति हमैं ॥ १० ॥

---

1. हृदय स्थिर हो। 2. अच्छा पद (मुक्ति) मिले। 3. सावधानी पूर्वक इन्द्रिय-निग्रह करो। 4. जब वृत्ति अस्थिर दीख पड़े। 5. तब से अज्ञान रूपी पिता मर गया। 6. यदि थोड़ा सूतक (भ्राष्ट्य) रहे भी।

स्वास स्वास महिं नाम अधारा। राखति हैं सतिगुरू उचारा।
सुनति बिप्र तूषन हुइ रहे। रहे बिचार, न उत्तर लहे ॥ ११ ॥
हुतो पाठिका[1] नाम तिलोका। तोता महिता जिस मन रोका।
दरशन श्री अरजन के आए। पद सम पदमनि सीस निवाए ॥ १२ ॥
हाथ जोरि मुख बाक उचारा। श्री सतिगुर उपदेश तुमारा।
राम नाम सिमरो लिव लाई। इसते नहीं नरक महिं जाई ॥ १३ ॥
इम सुनि बिप्र तरकना[2] करै। जे सिमरनि ते नरक न परैं।
सभि जग राम नाम को लेति। क्यों पुन नरक पाइ करि देति ॥ १४ ॥
जे इह साचु होइ जिमि कहैं। क्यों प्रभु नरक बनावनि चहै।
सगरे मुकति पाइं जपि राम। निषफल करे सुरग के धाम ॥ १५ ॥
नरक सुरग दोनहुं नहीं चहीयहि। जे सिमरनि ते मुकती लहीयहि।
सुनि श्री मुख ते बाक उचारे। निशचै राम जपति हैं सारे ॥ १६ ॥
नहिं प्रतीत अरु मन न इकागर। किम कल्यानहिं पाइ उजागर।
कहहु दिजनि संग एहु ब्रितांत। राखश गह्यो[3] म्रदाना जाति ॥ १७ ॥
कर्‌यो तेल को तपत कराहा। तिसमैं कौडे पावनि चाहा।
श्री नानक उपदेशयो नाम[4]। सिमर्‌यो मरदाने सुख धाम ॥ १८ ॥
ततछिन सीतल भयो कराहा। नाम प्रताप बिदत जग मांहा।
कहहु दिजनि सो अबि के जाइ। जे तुम सिमर्‌यो राम बनाइ ॥ १९ ॥
करहु तपावनि तेल कराहा। हम तुम पावहिं कर[5] तिस मांहा।
इक सम सभिनि राम को सिमरनि। तौ अबि मिलिकै कीजहि परखनि ॥ २० ॥
जग त्रिशना महिं तपत कराह। दहीयति नित, नहिं निकसनि पाहे।
गुरमुखि को गुर बखशहि नाम। हरि त्रिशना, मन लहि बिसराम ॥ २१ ॥
सुनि करि श्री गुर ते सो गए। पंडित ब्रिंद मिलत जबि भए।
सकल प्रसंग सुनायहु जबै। संकमान[6] दिज ह्वैकरि तबै ॥ २२ ॥
कूरे भए हाथ नहिं घाला। इम सतिगुरू प्रताप बिसाला।
तरक करन ते कीनसि मौन। जानी महिमा बड गुर भौन ॥ २३ ॥
इक सिख जड़ीआ सांईदास। करि गुर नमो बैठि करि पास।
हाथ जोरि अरदास बखानी। मैं बहु सिक्खनि सेवा ठानी ॥ २४ ॥
धारन कर्‌यो रिदै उपदेश। सेवौं तुमरे चरन हमेश।
तऊ शबद सुनिबे के काल। नहि मन ठहिरति चपल बिसाल ॥ २५ ॥

---

2. पाठ करने वाला। 2. तर्क, अनाधारित बातें। 3. राक्षस ने पकड़ लिया था। 4. गुरु नानक द्वारा उपदेशित नाम। 5. हाथ। 6. शंकायमान।

आप कह्यो मन करहु इकागर। पठहु सुनहु गुर शबद उजागर।
सुनि श्री मुख ते जतन बतायो। मन गति को अबि तौ लखि पायो ।। २६ ।।
टिकै कि नहीं जान सभि लीनो। इस बिधि को पूरब नहिं चीनो।
जबि मन जाइ कितहि लखि पावहु। तबि तिस मिथ्या बसतु दिखावहु ।। २७ ।।
बहुर मोरि करि[1] शबद मिलावहु। जे चलि जावै फेर हटावहु।
जिम अरीअल असु को असवार। सनै सनै तिह अग्र दिखारि ।। २८ ।।
मोरि बहुर बागनि[2] को फेरहि। फेर फेरि निज मरज़ी प्रेरहि।
करहि सुधारनि हित को दैहै। अरहि जि, त्रास तांहि उपजै है ।। २९ ।।
इस विधि फेरि फेरि[3] मन जोरहु। सुद्ध होइ लहि स्वादि, न मोरहु[4]।
सुनि गुर ते कीनसि विधि तैसे। सने सने मन बसि हुइ जैसे ।। ३० ।।
आपा नहिं जनाइं गुर आगे। निस दिन रहे सेव महिं लागे।
इम श्री गुर अंम्रितसर माही। सिक्खनि को उपदेश कराहीं ।। ३१ ।।
गोइंदवाल जानि को चाहा। सतति गुरु अमर के पाहा।
करि त्यारी सिख संग बिसाल। जिन महिं ब्रह्म ग्यानी मुख जाल ।। ३२ ।।
ब्रिध ते आदि सेवगुर भीने। गमन हेतु सभिहिनि मन कीने।
श्री अरजन गुर गुननि उदार। नितप्रति चाहति पर उपकार ।। ३३ ।।
जिम सूरजकरि महां प्रकाश। सकल जगत को दे सुखरासि।
निंदक दुषट उलूक न जानहिं। अंध बनहिं निज बुरा सु ठानहिं ।। ३४ ।।
चढि खासे पर सतिगुर चले। माता जी करि बंदन मिले।
रहहु सदन दे धीरज तुरे। सनैं सनैं मग चलिबो करे ।। ३५ ।।
कितिक कोस गमने थित होए। उतरे सुंदर थल को जोए।
जहां तरन तारन इसथान। तीरथ देख्यो लाइ धिआन ।। ३६ ।।
नर नारी शनान ते पावन। शरधा करे कामना पावन[5]।
मारग चलहिं भाव ते पावन[6]। मिटहिं रोग गन, आनंद पावन[7] ।। ३७ ।।
इक ते पलासूर तहिं ग्राम। खानवाल दूसर को नाम।
इन ते आदिक ग्राम जि और। लरति परसपर रहिं तिस ठौर ।। ३८ ।।
बहु नर मरहिं परहि संग्राम। करते द्वैख जाहिं जमधाम।
तिनको महां बिलोक्यो झेरा। श्री गुर अरजन कीनसि डेरा ।। ३९ ।।

---

1. पुनः मोड़ कर। 2. लुगाम। 3. मोड़ मोड़ के। 4. शुद्ध भाव से जब वह रसलीन हो जाय, तब न मोड़ो (अर्थात् लगा रहने दो)। 5. कामना तृप्ति पाएँगे। 6. पैरों से, पैदल। 7. आनन्द को प्राप्त होंगे।

अगले दिन ग्रामीन हकारे। लरन बिखै बहु दोष उचारे।
इकतौ तुमरी मिटहि लराई। दुतीए धन लेवहु मन भाई ॥ ४० ॥
त्रितीए गुर को कारज इहां। चतुरथ नर प्रापति फल महां।
देहु भूमिका गुर घर को अबि। दरब मोल ते लिहु दुगुना लब[1] ॥ ४१ ॥
खान वाल के खत्री जाति। पलासूर रंघर बक्ख्यात।
मिटै कलहि सभि ने मन जान्यो। कहिबो श्री अरजन को मान्यो ॥ ४२ ॥
दीए रजत पण लच्छ प्रकाश। अधिक सहंस्र सपत पंचासि[2]।
लई भूमिका मोल घनेरी। दीनसि दरब ब्रिंद तिस वेरी ॥ ४३ ॥
रहिन लगे श्री गुर तिस थान। चितवहिं पर उपकार महान।
जिम सूरज सभिहिनि सुख देति। दुखद अंधेरा जग हरि लेति ॥ ४४ ॥
जथा चंद्रमा निज कर करि कैं[3]। सभि औषधि[4] महिं रसको भरिकैं।
जिसते जीव त्रिपत जग होइं। तथा करहिं गुर हित सभि कोइ[5] ॥ ४५ ॥
ताल तरन तारन चहि लायो। सकल मसंदनि साथ बतायो।
लगे करावनि बहु बिधि त्यारी। लगे मजूर करें गन कारी[6] ॥ ४६ ॥
चूना अधिक ईंटका हेतु। श्री अरजन जी गन धन देति।
पुनहि खनन हित करनि महूरत। भए त्यार सतिगुर हित पूरति ॥ ४७ ॥
पंचांम्रित घनो करवायो। सिख संगत तहिं ब्रिंद बुलायो।
अनिक प्रकारनि के उतसाह। होति प्रसंन सिक्ख्य मन मांहि ॥ ४८ ॥
लग्यो दिवान अधिक गुर पास। बोले बाक करहु अरदास।
भाई बुड्ढे कहु किय खर्‍यो। ब्रह्म सरूप बिखै चित जुर्‍यो ॥ ४९ ॥
महां शकति धरि सिक्ख्य महाना। करतल फल सम रूप सु जाना[7]।
राति द्योस जिस रहै समाधि। दात शांति जुति रिदा अगाधि ॥ ५० ॥
खरो भयो जबि गुरू अगारी। हित अरदास करनि सुखकारी।
खत्री इक देवीचंद नाम। गोइंदवाल हुतो जिस धाम ॥ ५१ ॥
दरशन हेतु गुरु के आवा। एक रुपय्यो तांहि तुरावा[8]।
आधे टके राखि निज पास। अरध लए हित गुर अरदास ॥ ५२ ॥
गुर कै जाइ अगारी धरे। हाथ बंदि करि बैठनि करे।
श्री अरजन अविलोकि उचारी। भाई बुड्ढा लेहे निहारी ॥ ५३ ॥

---

1. लोभ। 2. एक लाख सत्तावन हज़ार चाँदी के रुपये दिए। 3. अपनी किरणों के कारण। 4. वनस्पति। 5. वैसे गुरु सबका भला करते। 6. मज़दूर लगे एवं सेवक भी सेवा में संलग्न हुए। 7. हस्तामलक समान स्व-स्वरूप को जान लिया। 8. रुपये के छूटे पैसे लिए।

पूरन ताल मकल विधि होइ। रिदे हमारे आइ न कोइ।
आधी भेट प्रथम ही आई। आधो रहै इही लखि पाई ॥ ५४ ॥
पुरषोतम की जथा रजाइ। होइ तथा नहिं अपर उपाइ।
करि अरदास तिहावल केरी। सिमरे सभि सतिगुर तिस वेरी ॥ ५५ ॥
कर्‌यो महूरत खननि लगाए। सिक्ख्य मिहनती नर समुदाए।
तीरथ की सु होनि लगि कारी। कारीगर बुलाइ मतिभारी ॥ ५६ ॥
ईंटनि के आवे[1] लगवाए। चूना त्यार करहिं समुदाए[2]।
ताल बिसाल अरंभनि कीना। मनो मानसर होइ नवीना ॥ ५७ ॥
शिलपी लगे चिननि सोपानि। लावहिं चूनो ईट महान।
कह्यो मसंदनि सों गुर बैन। करवावहु कारज शुभ दैन[3] ॥ ५८ ॥
सतिगुर के घर तोटि न काई[4]। मिहनत देहु मजूर सवाई[5]।
जिसते होइ अखिल इहु ताल। तथा करहु तुम सुमति संभाल ॥ ५९ ॥
इस बिधि हुकम पाइ गुर केरा। कहि कहि को निकराई बडेरा।
शिलपनि ते सु करावति रहै। चूना ईट पचावहु कहै ॥ ६० ॥
कवि कवि श्री गुर देखहिं जाई। लगे कार जहिं सिख समुदाई।
निज कल्ल्यान चहैं करि सेवा। जिसते हुई प्रसंन गुरदेवा ॥ ६१ ॥
इस बिधि केते दिवस बिताए। श्री अरजन उपकार कराए।
पूरब दिशि की बनहि सुपान। नरनि भीर बहु हुइ तिस थान ॥ ६२ ॥
आवहि संगति कावल केरी। बलख बुखारे नगर घनेरी।
धंनींघेप पिशौर जि बासी। पुरि मुलतान, शिकार पुरा सी ॥ ६३ ॥
इत दक्खण अर पूरब केरी। संगति दरशै आइ बडेरी।
कितिक देश गिनीअहि जग केरे। जे आवति गुर दरशन हेरे ॥ ६४ ॥
तीरथ कार करहिं सो आइ। तिस पर होवति खुशी सिवाइ।
सतिगुर को रुख देखहिं ज्यों ज्यों। खनहि कार[6] करि हैं नर त्यों त्यों ॥ ६५ ॥
इस बिधि केते मास बिताए। पूरव दिशि सौपान बनाए।
केतिक खनी भूमका तहां। गुरू काम तीरथ हुइ महां[7] ॥ ६६ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे द्वितिय रास 'तरन तारन' प्रसंग बरननं नाम सपत सषटी अंशु ॥ ६७ ॥

---

1. भट्ठे। 2. बहुत-सा। 3. देकर (पदार्थ)। 4. कोई कभी नहीं। 5. मज़दूरों को सवाया पारिश्रमिक दें। 6. खोदने का काम। 7. गुरु की इच्छा है कि यह महान तीर्थ हो।

अंशु ६८

तरन तारन प्रसंग

दोहरा

दिन दिन प्रति तीरथ बनति सतिगुर करहिं तगीद ।
आप आपने काज करि संध्या होत रसीद[1] ।। १ ।।

चौपई

नित प्रति सति गुर सुधि सभ लहैं । करहू भले तूरन तिन कहैं ।
ईंटनि के समुदाइ पजावैं । बहु नर लागे तिनहि पकावैं ।। २ ।।
तहां नूरदीं तुरक हंकारी । सिफती परवदिगार बिसारी[2] ।
हुतो तहां ते कोस अढ़ाई । चिनवावति सो अपनि सराई ।। ३ ।।
रहितो हुतो दिलीशुर तीर[3] । यांते गरबति मूढ अधीर ।
तिसके चिनति ईट थुर गई[4] । कित ते हाथ न आवति भई ।। ४ ।।
अटक रही तिस कार उसारी[5] । खोजि रहे नहि निकटि निहारी ।
तवि किसहूं ने तिह सों कह्यो । सुनहु काज मैं तुमरो लह्यो ।। ५ ।।
श्री गुर रामदास के नंद । करिवावति हैं ताल बिलंद ।
तिनके आवे भए तयार । बडी ईंटका पाकी सार ।। ६ ।।
से अनवाइ लेहु[6] इस थान । सरै कार तुमरो हित ठानि ।
अपर निकटि द्रिषटी नहिं आवैं । दूरि होहि तौ कौन सु ल्यावैं ।। ७ ।।
खोजा नूर दीन सुनि रह्यो । नहीं बाक ल्यावनि तवि कह्यो ।
हुतो अमानत खान पठान । सो भी चिनवावति इक थान ।। ८ ।।
हुतो तरन तारन जी नेरे । चहति ईंटका चिननि घनेरे[6] ।
ग्राम नुरंगाबाद मझार । राहक बसति धनाढ उदार[7] ।। ९ ।।
तिसको बूझनि कीनि पठान । कित ते आइ ईंटका पान ।
मैं सराइ अबि लागि बनावनि । पातशाहि कीनसि फुरमावनि ।। १० ।।

---

1. पहुँचते हैं (घर) । 2. ईश्वर के गुण भुलाकर । 3. दिल्लीश्वर के निकट रहने के कारण । 4. कम पड़ गई । 5. निर्माण-कार्य । 6. मंगवा लो । 6. बहुत-सा । 7. मार्ग में एक उदार धनाढ्य रहता था ।

सभि उमरावनि कहु दिय थान। निज नामनि पर करहिं मकान।
नूरदीन खोजे ढिग जाइ। देहि ईंट, कै देहि बताइ ॥ ११ ॥
सुनति चौधरी करि अहिलाद। ग्राम जु वसै नुरंगाबाद।
इसकै आइ ईंटका हाथ। मैं भी लेऊं इच्छति साथ[1] ॥ १२ ॥
सुनिके नूरदीन ढिग गयो। जहां सराइ चिनावति[2] भयो।
कही अमानत खां की बात। सुनिकै बोल्यो सम मुसकात[3] ॥ १३ ॥
हम को तुम ते चाहि घनेरी। करहिं टोर[4] बहु थाननि होरी।
श्री अरजन गुर हिंदु बिसाल। सो करिबावति इह ठां ताल ॥ १४ ॥
आवे तिनहु ब्रिंद लगवाए। बडी ईंट अरु भले पकाए।
खान काज अरु होइ हमारो। मिलिकै लिहु नहिं करहि पुकारो ॥ १५ ॥
देहु उधारी कहिकै लेहु। जबरी तुमसों करैं न केहु।
इम मसलत[5] करि आपस मांही। फिरति[6] चौधरी ने ठहिराही ॥ १६ ॥
आइ बहिर ते लिए पजावे। निज निज ग्रामनि ईंट ढुवावे।
सिक्ख कुलाल आइ गुर पास। हाथ जोरि कीनसि अरदास ॥ १७ ॥
तुरक समूह बहिर चलि आए। हुकम करति हम साथ अलाए।
नूरो दीन अमानत खान। दोनहु निकट चिनाई मकान ॥ १८ ॥
चाहि ईंटका तिन कहु भई। करि उधार तुमते हम लई।
इह कहि बगे लदावनि गाडे। गिनती मिनती दीनसि छाडे ॥ १९ ॥
सुनि बोले श्री अरजन नाथ। हमको क्या है गिनती साथ।
जहां ईटका लगै हमारी। तहिं की ल्यावहिं जड़ा उखारी[7] ॥ २० ॥
सरब कोट चहुं गिरद बिसाला। ढहि आवहि इह ठां जिस काला।
तबि इह पूरन होइ तड़ाग। करहि सिक्ख मेरो बड भाग ॥ २१ ॥
तुरक सकल की ज़रां उखारहि। सनमुख लड़हि तांहि को मारहि।
ब्रधहि तेज हिंदनि को जोर। तबि इह ताल होइ चहूं ओर ॥ २२ ॥
मेला होइ अमस्या भारी। लहैं कामना लोक उदारी।
रोग ब्रिंद को बरजनि करिहीं। नाम तरनतारन सु उचरिहीं ॥ २३ ॥
दरस मास भाद्रों पद जोइ[8]। महां महातम इसको होइ।
सगरे पाप बिदारनि करै। शरधा धरि शनान जे धरै ॥ २४ ॥

---

1. मैं भी आवश्यकता- नुसार ले लूँगा। 2. निर्माण, वास्तु-निर्माण। 3. सम-भावी मुस्कान के साथ। 4. खोज। 5. परामर्श। 6. एक फेरे का पारिश्रमिक। 7. वहाँ की जड़ें उखाड़ लाएगी। 8. भाद्र-पद की अमावस।

इम कहि सतिगुर तूषन रहे। चलनि भोर को चित महिं चहे।
तिस दिन डेरो तहीं टिकाए। श्री अरजन चित शांति ब्रिधाए ॥ २५ ॥
नहीं स्राप तवि क्रूर उचारसि। जिसते दुपट दगध ह्वै छारसि।
छिमावान महिं श्रेषट रूप। महां शकति धरि धीर अनूप ॥ २६ ॥
सम दम के जुत रिदा उदार। धरम आतमा सहत बिचार।
मनहु धरम की धुजा सरीर। परउपकारी परम अभीर[1] ॥ २७ ॥
जम बसि जीव नरक मों परते। तिन्हो बिलोकति करुना करते।
भले पंथ पर सुख को पावैं। इस प्रकार के व्योंत बनावैं ॥ २८ ॥
तीरथ की तवि कार हटाइ। लख्यो भविख्यत जिम ह्वैजाइ।
अजर जरन निसठति[2] ब्रह्म ग्यानी। मोह बिदारनि उचरति बानी ॥ २९ ॥
नैन रसीले करुना रसे। जिन महिं प्रेम रहै नित बसे।
जग गुरता बर तखत बिराजे। दरसहिं सहि शरधा अघ भाजे ॥ ३० ॥
नूरो दीन अमानत खान। तिनहुं सुनि सुधि सगरी कान।
तीरथ करिबे ते हटि रहे। कूच करनि चलिबे चित चहे ॥ ३१ ॥
मिलि दोनो इक मनुज पठावा। शाहु सुने नहिं चित डर पावा।
आइ गुरू के कह्यो अगारी। तुम क्यों बरजी ताल उसारी ॥ ३२ ॥
जितिक पजावे पर लगि दरबा। कहि हम ते अबि लीजहि सरबा।
अपर ईटका देहु चढाइ। करति कार सगरी पक जाई ॥ ३३ ॥
आगै को हम लेहिं न कोई। बैठे रचहु अपनि सर जोई।
बनी जरूरत हम को भारी। शाहु निदेश जु शीघ्र उचारी ॥ ३४ ॥
करहु सराइ तुरत ही त्यारे। यांते आवे लए तुमारे।
तिसको लीजै मोल सवाया। दिहु आइसु पुन लगहिं पजाया[3] ॥ ३५ ॥
श्री अरजन पुन कीनि बखान। कर्यो मोल बल लाइ महान[4]।
सोई मोल देहिं हम तमै। जबि ही आइ जाइगो समै ॥ ३६ ॥
हमरे सिख ह्वै हैं बलिभारी। निज बल करि ले नींव उखारी।
ढहैं सदन जे पाक बनाए। इही ईटका लागहिं आए ॥ ३७ ॥
जिम बल मोल तुमहु ने दीनि। ईंट पजावनि की सभि लीनि।
सो बल मोल देहिंगे तुम को। तबै त्यार तीरथ हुइ हम को ॥ ३८ ॥
अबि ते जाइ कहहु इह बात। तीरथ बनहिं तुरक कर घाति[5]।
सुनि कै रिस जुति गुर के बैन। गमन्यो सो नर करि तर नैन ॥ ३९ ॥

---

1. शूरवीर। 2. दृढ़। 3. ईंटों का भट्ठा। 4. बल-प्रयोग रूपी मूल्य। 5. तुर्कों का नाश करके।

सभा बिखै सभिहूंनि सुनाई। सुनि करि नूरदीन रिस खाई।
क्या करि लेहिं कहै जे ऐसे। लग्यो चिनावनि मूरख तैसे ॥ ४० ॥
श्री गुर कर्यो कूच हटि आए। रामदास पुरि बिखै सुहाए।
श्री गुर हरिगुबिंद संग मिले। अंक बिठाइ प्रेम करि भले ॥ ४१ ॥
अपर सरब सिख करि करि बंदन। दरसहि दरशन दोष निकंदन।
भई रैन मंदर निज गए। भिले सकल आनंद मन भए ॥ ४२ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे 'तरन तारन' प्रसंग बरननं नाम अषट सषटी अंशु ॥ ६८ ॥

अंशु ६९
सिक्खन प्रसंग

दोहरा

एक सिक्ख सतिगुर निकट गुरमुख तिसको नाम ।
हाथ जोरि बिनती करी मैं रावर की साम ।। १ ।।

चौपई

गुर सनमुख सिख मानहिं भाना । मोहि दिखावहु दिखि दुख हाना ।
सुनि श्री अरजन गिरा उचारी । पुर गुजरात सुनाम भिखारी ।। २ ।।
तिह दरसहु अबि करहु पयाना । गुरमुख गुर बच मानि महाना ।
चल्यो बिचारति सिख बड होइ । सतिगुर आप बतायहु जोइ ।। ३ ।।
प्रभु भाणा किम मानति रहै । कहां क्रित करि ब्रित्त को लहै[1] ।
मग उलंघ पहुंच्यो गुजरात । नाम भिखारी पूछ्यो जाति ।। ४ ।।
ग्रिह मैं गयो सुमंगल हेरा । गावैं त्रिया व्याहु सुत केरा ।
किरत कमावति पिख्यो भिखारी । सीवति सतरंजी जे फारी[2] ।। ५ ।।
पैरी पैणा[3] कहि थिर गुरमुख । पठ्यो मोहि गुर ने भो सनमुख ।
सुनति भिखारी उठि सनमाना । नमहि कीनि बैठावनि ठाना ।। ६ ।।
निज कारज लाग्यो जिस काला । गुरमुख उर बिसमाइ बिसाला ।
लख्यो भिखारी ने मन ताहूं । उठ्यो पकर कै तिसकी वाहूं ।। ७ ।।
सौज[4] व्याह की लग्यो दिखावनि । इह सुत हित किय बसत्र सिवावनि ।
इह भूखन को गढै सुनारा[5] । पुत्र-सुनूखा[6] केर शिंगारा ।। ८ ।।
इहां परी पिखि अधिक मिठाई । अनेक प्रकार करहिं हलवाई ।
आगै म्रितक हेत की त्यारी । खफन रु सीढी घरी सुधारी ।। ९ ।।
गुरमुखि बिसमति पूछन कर्‌यो । इह समाज किस कारन धर्‌यो ।
कह्यो भिखारी फेर बतावैं । जबि समाज इहु कारज आवै[7] ।। १० ।।

---

1. कार्य करके जीविका चलाता है । 2. फटी हुई दरी सी रहा था । 3. चरण-वंदना । 4. सामग्री । 5. सुनार आभूषण गढ़ता है । 6. पुत्र-वधु । 7. जब यह सामग्री काम आएगी ।

इम कहि आयो प्रथम सथान। सतरंजी को सियति महान।
गुरमुख बिसमति उर मैं रह्यो। सतिगुर ने इसको जसु कह्यो ॥ ११ ॥
ग्रिह कै धंधै पची[1] महाना। करहि भगति किम मानहि भाना।
निसा भई किय सेव भिखारी। खान पान दिय सेज सुखारी ॥ १२ ॥
भई प्रात तबि चढी जनेत। आन्यो सुत करि नुखा समेत।
सभि विधि के बाजे बजवाए। ब्याह समाज सकल करि आए ॥ १३ ॥
सदन आइ दिन द्वैक बिते जबि। सूल उठे निस पुत्तर मर्‍यो तबि।
गावति हुती त्रिया सो रोई। खफन जु लीनि भिखारी सोई ॥ १४ ॥
तिस सीढी पर पायहु नंद। राहु कर्‍यो करि काठ बिलंद।
किरतन करि प्रसादि बरतायो। ब्रिति जिहि सम हटि करि घर आयो ॥ १५ ॥
सतरंजी जो सियति डसाई[2]। लोक आइ बैठे समुदाई।
दिन महिं गुरमुख रह्यो निहारति। भा अचरज इह रिदै बिचारति ॥ १६ ॥
पिखि निस बिखै इकाँत भिखारी। मिलि गुरमुख तबि गिरा उचारी।
सुत की म्रितु जानति जे उर में। नुखा ब्याहि क्यों आनी घर मैं ॥ १७ ॥
खरच्यो धन उतसव बहु करयो। दिन दो इक महिं सभि परहर्‍यो।
तुव महि शकति जि हुती इती न। सतिगुर ते जाचति हुइ दीन ॥ १८ ॥
क्रिपा निधान सिदक पिखि तेरा। पुत्र जियनि बर देति अछेरा।
संकट होति न एतो घर मैं। रुदति कुटब प्रीति करि उर मैं ॥ १९ ॥
इहु संसै मन मोहि बिसाला। शकति सहत सहि[3] कषट कराला।
सुनति भिखारी गिरा उचारी। इह मनमुख की रीति बिचारी ॥ २० ॥
जथा जोग परमेशुर करै। तिस महिं दुख संसै जो धरे।
जतन करहि भावी को मेटनि। तिसको प्रभू संग कबहुँ न भेटनि ॥ २१ ॥
जैसी इच्छा हुइ भगवान। तिस महिं कीजहि हरख महान।
सभि सों सम प्रभु बैर न प्रीति। करम हेरि फलदेहि सु नीत ॥ २२ ॥
कषट आइ अरि शकति हरावैं[4]। पाप करे सो फल भुगतावै।
होइ सुखी कहि संकट देति[5]। सो पिन दरगहि आदर लेति ॥ २३ ॥
न्रिप मायक जो करहि सुभावैं[6]। सो सेवक तिस ते सुख पावै।
जे महिपति क्रित महिं दे दोषू। रिसहि तांहि पर लबहि बिहोशू ॥ २४ ॥

---

1. संलग्न। 2. जो दरी सी रहा था, वही बिछाई। 3. सशक्त होकर भी सहन कर लिया है। 4. यदि कष्ट हो भी तो शक्ति-पूर्वक उसका अन्त करना चाहिए। 5. 'सुखी होओ' ऐसा कहकर संकट देता है। 6. मायिक नृप जो करे वही (सेवक को) पसंद हो।

इम अलपग्यनि[1] की क्रित मांही। प्रभु सरबग्ग जथोचित आही।
बिना करम सुख दुख नहिं देति। भुगतहि सोइ जि बीजहि खेत ॥ २५ ॥
इम बिचार जिसके उर होइ। प्रभु क्रित पर नित हरखहि सोइ।
तिसको सनमुख कहैं जु संत। तरकहिं मनमुख दुख लहिं अंत[2] ॥ २६ ॥
सतिगुर ते नित जाचिय ऐसे। प्रभु क्रित पर अनंद लहि जैसे।
नाशवंत द्रिशमान पदारथ। इन लगि जनम न खोइ अकारथ ॥ २७ ॥
मम सुत नुखा करम जिम कीनि। सोमि सुनहु करि संसै हीन।
तपसी हुतो प्रथम के जनमा। पुरि ते जाचि खाइ रहि बन मां ॥ २८ ॥
तप करि परमेशुर आराधे। महां जतन ते इंद्रिय साधे।
इक दिन पुरि ते चल्यो अघाई। बारबधू[3] लखि रूप लुभाई ॥ २९ ॥
तपसी देखति मन बिरमायो। हठकरि मिल्यो न, बन गमनायो।
काल क्रिया ऐसी तहिं भई। दुहूं देहि सिमरति छुटि गई ॥ ३० ॥
तप फल ते इह मम सुत होवा। सिमरि प्रभू को संकट खोवा।
बारमुखा[3] इह नुखा भई है। तपसी रति[4] ते सुमति लई है ॥ ३१ ॥
सिख संगति की सेव कमावै। अंत बिखै **उत्तम** पद पावै।
तांते भो गुरमुख ! सुनि लीजै। भाणा मानति मन थिर कीजै ॥ ३२ ॥
सत्तिनाम को सिमरन करनो। तनहंता को रिदै बिसरनो।
मुकती के साधन ए तीन। कहैं गुरू अरु संत प्रबीन ॥ ३३ ॥
सुनि गुरमुख ने बाक भिखारी। द्वै कर जोरि बंदना धारी।
धंन धंन बड बुद्धि बिचच्छन। नाम मोहि गुरमुख तव लच्छन[5] ॥ ३४ ॥
जस देख्यो मैं चहि मन पावन। तस सतिगुर मुझ कीनि दिखावनि।
तुझ दरशन ते पाप मिटावै। सुदागुरू के उर महिं भावै ॥ ३५ ॥
इम उसतति करि बारंबार। दीन होइ चरननि सिर धारि।
भयो बिसरजनि गुरपुरि आयो[6]। निशचै पिखि सिख को बिसमायो ॥ ३६ ॥
श्री अरजन बैठे जिस थाईं। पग पंकज पर ग्रीव निवाई।
मुसकावति श्री मुख सों कह्यो। कैसो सिख जाइ तैं लह्यो ॥ ३७ ॥
कैसी रहित रहै किम सेवहि। किम उर निशचै दुख सुख खेवहि[7]।
सुनि करि हाथ जोरि करि बोला। श्री प्रभु तुमरां सिक्ख अडोला ॥ ३८ ॥

---

1. अलपज्ञ, कम जानकार। 2. मनमुख तर्क करते और अन्त में दुख उठाते हैं। 3. वेश्या। 4. तपस्वी के साथ प्रेम। 5. नाम तो मेरा है, परन्तु वास्तव में गुरमुख के लक्षण तुम्हारे हैं। 6. विदा होकर श्री अमृतसर आया। 7. सहन करता है।

महिमा जिसकी कही न जाइ। दुख सुख मैं इक सम हरखाइ।
सकल प्रसंग कह्यो तिस केरा। जथा भिखारी को घर हेरा ॥ ३९ ॥
जिस पर आप प्रसंनता होइ। अस निसचा धारहि उर सोइ।
क्रिपा निधान सुनति हरखाए। सुजसु दास निज को सुनि पाए ॥ ४० ॥
सिक्खनि प्रिय नित बनहिं सहाई। लोक प्रलोकहिं लेहिं बचाई।
कवि संतोख सिंघ करि गुर बंदन। क्रिपा धारि गंन बिघन निकंदन ॥ ४१ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे त्रितिय रासे कवि संतोखसिंघ विरचतायां भाखायां 'सिक्खन' प्रसंग बरननं नाम एकोन सप्तती अंशु ॥ ६९ ॥

(तीसरी रास समापति होई)

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

अथ चतुरथ रासि बरननं

अंशु १

मंगलाचरण प्रसंग

१. कवि-संकेत मरयादा का मंगल ।

दोहरा

बीन दंउ[1] पाणीन महिं[2] सरबोतमा प्रवीन[3] ।
बीन बीन बिघननि हनहु[4] दाती[5] सुमति कवीन[6] ।। १ ।।

२. इष्ट-गुर—श्री गुरु नानक देव जी—मंगल ।

चौपई

करुना आकर[7], कलमल हरना । हरिनामा चित नीत सिमरना ।
मरना जनमन इव जगतरना । तरुनापन[8] बिरथा नहिं करना ।। २ ।।
बंदि हाथ सतिगुर सुखकंद । कंदल दासन देति अनंद ।
नंदन कालू केरि मुकंद[9] । कंदन बिघन[10], सदा जगबंद ।। ३ ।।

३. इष्ट गुरु—श्री गुरु अंगददेव जी – मंगल ।

चौपई

अंगद गुरु सहाइक संग । संगति सेवति सहत उमंग ।
मंगति सिक्ख मुकति हरि रंग[11] । रंगति ब्रहम ग्यान प्रभु अंग[12] ।। ४ ।।

४. इष्ट गुरु—श्री गुरु अमरदास जी - मंगल ।

चौपई

दीन द्याल सेवति जिन लीनि[13] । लीन प्रेम महिं, कबहुं दुखी न ।
खीन मोह भे ग्यान प्रबीन[14] । बीन सु अमर गुरु सुख दीनि ।। ५ ।।

---

1. वीणा का दण्ड । 2. हाथों में । 3. सबसे उत्तम और निपुण । 4. चुन-चुन कर विघ्नों का अन्त करो । 5. वर-दातृ । 6. कवियों को श्रेष्ठ मति (देने वाली-दाती) । 7. करुणा के कोष । 8. तरुणाई, जवानी । 9. महता कालू के सुपुत्र तथा मुक्तिदाता । 10. विघ्न-विनाशक । 11. सिक्ख हरि-रंग की मुक्ति माँगते हैं । 12. प्रभु का प्रेम । 13. लीन भाव से सेवा करने वाले । 14. वे मोह में क्षीण एवं ज्ञान में निपुण होते हैं ।

५. इष्ट गुरू—श्री गुरू रामदास जी—मंगल।

दोहरा

मानि[1] मानि[2] पद पदम को पान जोरि सनमान।
मानस मैं हरिदास सुत[3] वसहु सदा मम मान[4] ॥ ६ ॥

६. इष्ट गुरू—श्री गुरू अरजनदेव जी—मंगल।

सोरठा

हर हर[5] विघन बिकार हरि[6], हरि लिव उर दे अधिक।
धिक तिन जन वहु बार गुर अरजन बच परहरहिं[7] ॥ ७ ॥

७. इष्ट गुरू—श्री गुरू हरिगोबिंद जी—मंगल।

सुंदर शुभति बिलंद मद न रह्यो मन मदन के[8]।
श्री हरि गोविंद चंद वंदन पद दुति सदन के[9] ॥ ८ ॥

८. इष्ट गुरू—श्री गुरू हरिराइ जी—मंगल।

करे रंक ते राइ[10] सेवक सेवति पास जे।
श्री सतिगुर हरिराइ हती दुखद जम पास जे[11] ॥ ९ ॥

९. इष्ट गुरू—श्री गुरू हरि क्रिशन जी—मंगल।

देहि अवसथा बाल[12] बडे गुननि महिं अवतरे।
तरे सेव[13] नर बाल[14] श्री हरि क्रिशन सुजस करे ॥ १० ॥

१०. इष्ट गुरू—श्री गुरू तेग बहादर जी—मंगल।

धरम जगत रखि लीनि त्रिण सम अपनो दीनि सिर।
सिरर[15] न दीनि प्रबीन तेग बहादुर धीर गुर ॥ ११ ॥

११. इष्ट गुरू—श्री गुरू गोविंदसिंघ जी—मंगल।

सवैया

जो जग मैं तन हिंदु अहैं[16] सभि पैं उपकार बिसाल कर्‌यो।
मानहिं जे न[17], अघी नहिं को सम[18], जाइ निरैपद बीच पर्‌यो[19]।
बीर बली गुर गोबिंद सिंघ महां तुरकान को तेज हर्‌यो[20]।
हिंद थिर्‌यो, वड जंग जुर्‌यो, भटब्रिंद मर्‌यो, रसबीर भर्‌यो ॥ १२ ॥

---

1. मान देकर। 2. मन में। 3. हरिदास जी के सुपुत्र—गुरु रामदास जी। 4. मन में। 5. हर एक। 6 नष्ट करके। 7. (जो) बचन त्यागते हैं। 8. मन में काम देव का मान न रहा। 9. द्युति के घर, उनके चरणों पर वंदन। 10. रंक से राव बना दिए। 11. यम के दुखद फंदे से छुटा लिया। 12. बालक। 13. नारी। 14. सेवा करने से। 15. भेद। 16. जग में जितने भी हिंदू हैं। 17. यदि न मानें। 18. उनके बराबर कोई पापी नहीं। 19. नरक में जा पड़ेंगे। 20. तुर्कों का तेज हरण किया।

१२. समसत गुर मंगल ते बिनय।

दोहरा

आगे दश पतिशाह के सिख संगत गुर दास[1]।
नमसकार मेरी सभिनि सुनहु इही अरदास[2]॥ १३॥
सतिगुर चरन सरोज को मानस[3] मानस[4] होइ।
मानस जनम[5] सकारथा मानस[6] तर है सोइ॥ १४॥

चौपई

सभि संतन को करि करि बंदन। कहूं कथा सभि बिघन निकंदन।
तीन रासि में पूरन करी। कथा गुरनि की सुंदर घरी॥ १५॥
पूछ्यो सभि सिक्खन हित करिकै। कथा गुरनि की कहो बिचरिकै।
रास कुइर[7] सो सकल उचारी। सुँदर बिधि जुति बहु बिसतारी॥ १६॥
तिस प्रसंग ते सिक्खनि कथा। जथा हुती गन बरनी तथा[8]।
सभि सिखनि को अधिक रिझावा। उर संब्रूहनि चाव वधावा॥ १७॥
कथा सुननि पर मन रुचि जागी। गुर पग पंकज के अनुरागी।
सभिनि सुजसु को बरनन कीना। रामकुइर सरबग्ग्य प्रबीना॥ १८॥
भूत भविक्ख्यत केरि ब्रितांत। हसतामल सम जिस उर ग्यात।
कथा सुनाइ अनंद बिलंदे। ब्रिध को बंस उदधि तुंम चंदे॥ १९॥
जाति अखेर[9] निताप्रति बाहर। दरसो नित कलगीधर ज़ाहर।
अवचल नगर जाति गुर कह्यो। संग न त्यागति जवि चित लह्यो॥ २०॥
हमरे दरशन को नित चाहति। इस हित चलिवे साथ उमाहति[10]।
याते तौर मनोरथ जोई। सदन बसहु पूरहिं हम सोई॥ २१॥
बहिर अखेर चढहु तहिं दरसहु। जथा संग तेसे इत[11] परसहु।
यांते तुम को दरशन देति। श्री गोबिन्द सिंघ ग्यान निकेत॥ २२॥
सिंघ तुमारो दरशन करिहीं। जनम सकारथ के अनुसरहीं[12]।
दूसर गुन तुम कथा सुनावहु। सतिगुर गुन गन बरन रिझावहु॥ २३॥

---

1. गुरु के सेवक। 2. प्रार्थना, विनय। 3. मानसरोवर। 4. मन। 5. मनुष्य जन्म। 6. मान सहित। 7. भाई राम कुँवर ने जो कथा उचारी। 8. (उसी प्रसंग में) मैं ने जैसी की तैसी वर्णित कर दी। 9. आखेट, शिकार। 10. साथ चलने को उत्सुक रहता है। 11. यहीं। 12. जन्म सफल करते हैं।

तुम हो धंन सदा जुग लोक। हम भी धंन जि दरस बिलोकि।
इह रावर को वड उपकारा[1]। कथा सुनाई करि विसतारा ॥ २४ ॥
अबि आगल इतिहास बखानहु। हरिगुबिंद जिम उतसव ठानहु।
श्री अरजन जिम कीनि चलानो। करि चंदू को चलन वहानो ॥ २५ ॥
सकल कथा बिसतार सुनानहु। हमहि निहाल करहु हरखावहु।
इम सिंघनि की सुनि करि बिनै। राम कुइर गन आनंद सने ॥ २६ ॥
श्रोतनि को बहु भांति सराह्यो। जिन बहु सिक्खी धरम निबाह्यो।
जनम सफल अपनो करि लीनसि। कथा सुननि पर चित हित दीनसि ॥ २७ ॥
तुमरे उर को निशचा हेरे। अधिक अनंद उमगतो मेरे।
रुचि अनुसार कहों इतिहासा। सरब खालसा शुभ सभि पासा ॥ २८ ॥
श्री अरजन को सुनहु चलाना[2]। पुन श्री हरिगोबिंद अख्याना[3]।
पूरब व्याह होनि की कथा। बरनन करौं भई बिधि जथा ॥ २९ ॥
तुरकेशुर[4] के संग मिलापनि। चंदू पापी को पुनि खापन[5]।
दिल्लीपत के रहिबो संग। विगर परे तबि जूटे जंग[6] ॥ ३० ॥
सैना तुरकनि की गन घाई[7]। बचे सूर से गए पलाई।
देश मालवे महिं गुर गए। अनिक बिलास करति तहिं भए ॥ ३१ ॥
इत्यादिक सतिगुरू की कथा। भई जथा मैं बरनौ तथा।
महां महातम सुनिवे केरा। शरधा सहत, न हुइ जग फेरा ॥ ३२ ॥
सतिगुर को पद पंकज प्रेमू। वधहि, देति जो जोग सु छेमू[8]।
सुत बित आदि कामना जोई। श्रोतनि को सभि देवति सोइ ॥ ३३ ॥
देहि अरोग, रोग को घातक। अनिक भांति के पातक हातक।
म्रितक पिछारी बरनै जोइ[9]। तिह परलोक बिखै गति होइ ॥ ३४ ॥
संकट सकल नाश को करता। महां धरम को उर महिं धरता।
शरधा करि जो सुनै सुनावै। अंत समें गुरु ते गति पावै ॥ ३५ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'मंगलाचरण' प्रसंग वरननं नामु प्रथम अंशु ॥ १ ॥

---

1. यह आपका बड़ा उपकार होगा। 2. निधन। 3. प्रसंग। 4. बादशाह (मुगल)। 5. अन्त, नाश। 6. बिगड़ कर (अन्ततः) जंग में जुटे। 7. बहुत-सी मार दी। 8. योग-क्षेम, अप्राप्ति की प्राप्ति और प्राप्त की रक्षा। 9. जो मृत सिक्ख के पश्चात् (कथा) करेगा।

अंशु २

सगाई को प्रसंग

दोहरा

सुनहु कथा सवधान ह्वै श्रोता सिख समुदाइ ।
वधहि बखेरा जांहि ते मिलनि तुरक[1] बनिआइ ॥ १ ॥

सवैया

राज करै सगरी छित को जिन आइसु मेटि सकहि नहि कोऊ ।
दीरघ कोट चमू जिम पै, न मवासि रह्यो अस भाखहि जोऊ ।
भूपति पूरब दच्छन को पुन पच्छम के नृप सैल जि[2] होऊ ।
आन को मानि के, डानु[3] को देति, कि सेव करैं रहिं हाजर सोऊ ॥ २ ॥

कबित्त

दिल्लीपति भयो जहांगीर जिस नाम कहैं अधिक प्रताप तुरकेशर को जानिये ।
कोश मैं दरब महाँ, देति लेति जहां कहां, अपर समाज कहां गिनिबे मैं आनिये ।
चारों दिशि मांहि त्रास, जुद्ध ते निरास भए, हाथ बंदि आनि पासि जीवनि को ठानिये[4] ।
रंक देहिराजा करि, राजा को बनावै रंक ऐसो पातिशाहि भयो ऐश्वरज महानिये ॥ ३ ॥

कबित्त

ताको है दिवान एक चंदू नाम अविवेक, गुरू परमेश्वर महातम न जानई ।
माया मद मातो, मूढ़ कुमति अरूढि रहे, हुकम चलावति हंकार कै महानई ।
पातशाही लोक सभि मानै आन ठानै,नमो, चाहै जिम करै तिम देश जिस मानई ।
एक सुता भई तां को नाम राख्यो सदा कौर कलहावतरी[5] दोनों लोक पित हानई[6] ॥ ४ ॥

कबित्त

सातमे बरख बिखै सुता जबि निज करौं सनबंध कहूं ऐसे मन आनिओ ।
बिप्प्र को बलायो समझायो मिलि दंपति ने संपति हमारे सम सदन महांनिओ ।
ऊँची कुल होइ, लेहु ब्रिंद पुरि जोइ तुम, सुंदर सरूप बर खोजो सभि थानिओ ।
तीनो ह्वै इकत्र तौ बचित्र बाति जानो मन, आलस न कीजै फिरिबे को हित ठानिओ ॥ ५ ॥

---

1. तुर्क से मिलना । 2. पहाड़ी राजे । 3. दण्ड । 4. जीवन व्यतीत करते हैं । 5. कलह का अवतार थी । 6. दोनों लोकों में पिता का नाश करने वाली है ।

कबित्त

हम सम धनु होइ, ऊचो बंस शुद्ध होइ, सुंदर सरूप होइ वरु देखि लीजीए ।
देशनि विदेश बिखै बिचरो विशेष करि, हेरहु अशेष जे नरेश बेश कीजीए[1] ।
काहू कामदार होइ, वडो बिवहार होइ, जाहर उदार होइ, मिलिकै जनीजीए ।
ऐसे पै पतीजीए, न संसे को रखीजीए, मो लाज को पिखीजीए, सु नातौ तहां दीजीए[2] ॥६॥

कबित्त

चंदू के वचन सुनि बिप्र ने सु मानि मन भन्यो तेरे भाग धंन तैसी तुव जातिकी[3] ।
फिरैं देश देश मैं बिलोकैंगे अशेष हम, उत्तमता खोजेंगे समान तुव जाति की ।
मेरो जजमान, धन लैहौं सनबंध बनै, होइ जसु ब्रिंद गंधि जथा जलजाति की ।
कीजै बिदा मोहि, तोहि काज शुभ होहि, जोहि शगुन अनूठे, अब्रि समैं चलि जाति की[4] ॥७॥

कबित्त

नाऊ कीनि साथ नित सेवा करै हाथ निज, और दास करे संग अधिक समाज ते ।
नगर नगर प्रति खोजति फिरति बर, रैन को बसेरा करि हेरैं सभि साज ते ।
जहां आछी कुल तहां घन में न तुल्ल होति, जहाँ घन तुल्ल तहां कुल नहीं राजते ।
जहां घन कुल में सु तुल्यता मिलति आइ, बालक बिहीन रूप[5] हेरति कु काज ते ॥ ८ ॥

कबित्त

पुरि पुरि हेरति फिरति नर पूछि लेति छत्री ह्वै धनाढि धाम सुंदर सपूत होइ ।
शाह को सचिव तांकी सुता को सबंध चहै जांके बड़े भाग जग मिलै इसथान सोई ।
हुकम महान चारों दिशि मैं बखान करै अनगन संपता को प्रापति सदाई जोइ ।
हेरि हम रहे नहीं सुद्धि कहूं लहे अस, फिरे मन ढहे, नहीं पायो किति सम कोइ[6] ॥ ९ ॥

कबित्त

फिरे चार ओर मैं, लहौर पुरि गए पुन, कह्यो बहू लोकिन मैं दिल्ली हूंते आए हैं ।
चंदू के मनिंद हम खोजति बिलंद फिरे प्रापति न भयो बहु थान मैं सुनाए हैं ।
हूंते कुछ सिख तिनो गुरू की सिफति कीनि[7], धन अनगन नित संगति चढ़ाए हैं ।
उत्तम महान जिनै मानति जहांन बहु जाहर बिसाल जसु सभि ते सुहाए हैं ॥ १० ॥

कबित्त

धन अरु बंस तो बिदत जिम कह्यो तिम तिनि के सपुत्र भयो ताँकी सुनि गाथ को ।
राज चिन्ह अंग मैं, अनंग को सरूप मानो, बाहू हैं प्रलंब[8], मुक्ख चप निशनाथ को[9] ।

---

1. बढ़िया राजा ढूँढिए । 2. वहाँ सगाई कर देना । 3. वेटी । 4. अब चल देने का समय है । 5. असुन्दर । 6 कहीं कोई बराबर का (वर) नहीं मिला । 7. गुणगान किया । 8. लम्बी । 9 मुख चन्द्र समान है ।

लोचन बिसाल ते बिलोकति निहाल करै चारि ओरि संगती निवाबै [illegible] को ।
सुता के सहत चंदू भाग जे महत होइ बनै सनबंध तबि सतिगुरू साथ को ।। ११ ।।

कबित्त

सुनि दिजबर उर हरख अधिक धरि रूरो बर गुर पायो, बिचरति गए हारि[1] ।
रूपवती कंन्या हुती बालक सुन्यो सु तैसो, देरि न बनति अबि गमनैं तिनो को द्वारि ।
जानु पै अरूढ करि, आनंद अगूढ करि, पंथ मैं पयाने बात चित्त मैं बिचारि चारु ।
रामदास पुरी मैं प्रवेश भए आनि करि, सुधासर हेरि कै प्रसंनता विशेष धारि ।।१२ ।।

सवैया

अंदर श्री हरिमंदिर के गुरु सुंदर रूप बिराजति हैं ।
संगति आवति है इक जाति, निहारति ही अघ भाजति हैं ।
गावति राग रबाबी घने, थिर आगे सु बादित बाजति हैं ।
होति अनेकनि को अरदास मनोरथ सेवक साजत है[2] ।। १३ ।।

सवैया

देखि प्रताप बिसाल गुरू कहु बिप्प्र अनंद लह्यो उर भारी ।
चंदू मनिंद है कैधों बिलंद है, मानति बंदन के नर नारी ।।
श्री हरि गोबिंद एतने मैं तहिं आइ गए दुति दीरघ धारी ।
संगति देखति प्रेम बिशेख अशेख खरे हुइ आदर कारी[3] ।। १४ ।।

कबित्त

कोकनद पद म्रिदु रकत छबीले अति. हीरनि की पंगति ज्यों नख हैं अनंदकरि ।
चिकन अकार एकसार जुगजंघ नीके[4], गुलफ सुजानू ग्रिथ[5] निठुर बिलंद करि ।
त्रिवली उदर पर, नाभिका गंभीर शुभ, आयुत सुछाती द्वै उतंग हैं सिकंध करि ।
गाढे भुजदंड हैं प्रचंड बलवंड बड़े. कुंजर की सुंड जिम श्री हरिगोबिद कर ।। १५ ।।

कबित्त

हाथ द्वै पाथोज[6] सम पल्लव से पलवनि, तां पै नग सूचे खचि लखिन की पंगती[7] ।
चंद्रमा बदन शुभ सुखमा सदन, जां मैं उज्जल रदन ओठ सुंदर सुरंगती ।
पंकज की पांखुरी सरीखी आंखि तीखी तीखी, पिखनि तिरीछेते निहाल करैं संगती ।
चिबुक अमोल, गोल म्रिदुल कपोल जुग, कुंडल की डोल पै अतोल श्री उमंगती ।। १६ ।।

---

1. घूमते-फिरते थक गए हैं। 2. सेवकों के मनोरथ पूर्ण होते हैं। 3. सत्कारार्थ सभी खड़े हो गए। 4. सुपारी के पेड़ के समान दोनों जंघाएँ समान सुन्दर हैं। 5. टखनों और घुटनों के ग्रंथियाँ। 6. कमल। 7. उन पर (अगुलियों के नख) नगों की तरह जड़े हैं।

कबित्त

मंडित बिभूखनि, अद्खनि हैं अंग सारे, दीरघ सुडील[1], शुभ शील मैं प्रकाश ते ।
नीकी उशनीक[2] सोहै, जिगा की जलूस[3] जो है, हेरति ही मन मोहै सिक्ख आस पासि ते ।
मोतिनि की माल हीरे खचित बिसाल चीरे कोरदार रूर[4] चहूं ओरि बिखै भासते ।
तम को विनाशते, अनंद को उजासते सु ग्यान मैं बिलासते, उधार दास वासते ॥ १७ ॥

कबित्त

श्री हरि गोबिंद अंग सुंदर बिलंद सभि. देखिकै सु दिज्जन अनंद उर धारिओ ।
भाग बली चंदू है जमाता अस पायो जिनि, उज्जल सु बंस अवतंस को निहारिओ ।
धन की न गिनती, करति वहु बिनती चढ़ावैं चीर भूखन, गुरु सु जग सारिओ ।
हाथ बंदि बंदना पदारबिंद करैं ब्रिंद, सभि बिधि अधिक समाज बिसतारिओ ॥ १८ ॥

सवैया

श्री हरिगोबिंद पास पिता थिति सोहति हैं सिख सेवक मांहू ।
ज्यों कमलासन सों पदमापति देवनि ब्रिंद मैं शोभि उमाहू ।
संगति सों दिज बूझनि कीनि बतावहु जाति सु गोत जि तांहु ।
चाहति हैं सनबंध कर्‌यो हम, शाहू दिवान सुता हित याहू[5] ॥ १९ ॥

दोहरा

संगति सिक्खनि तबि कह्यो सोढि वंस सिर मौर ।
बडे भाग जागे जिसे तिस प्रापति अस ठौर ॥ २० ॥
जगत गुरु घर आइ जो जग माता बनि जाइ ।
पूजनीय इह सरब के अन गन भेट चढाई ॥ २१ ॥

चौपई

दिज नाई दोनहुं सुनि करिकै । महां प्रताप सु नैन निहरिकै ।
कहति परसपर ऐसो थान । प्रापति होइ न फिरिय महान ॥ २२ ॥
जिम चंदू ने हमहुं जनायो । सो तीनहु[6] शुभ इत द्रिषटायो ।
इम निशचै करिकै मन माहूं । वहुर जनायहु श्री गुर पाहू ॥ २३ ॥
शाहु दिवान सुता को नाता । कर्‌यो चहति हम तुमरे ताता ।
हेरि चले अबि दिल्ली जाइं । सभि ब्रितांत को तहां सुनाइ ॥ २४ ॥
देरि नहीं तूरनि हटि आवैं[7] । हम उत्तम सनबंध बनावैं ।
श्री अरजन दोनहु संग भाखा । होवहि सो जु राम रचि राखा ॥ २५ ॥
परमेशुर सभि बनत बनाई । भली जु होइ करति बिधि साई ।
इम कहि लागि देनि जबि लागे । लियो न तिनहु. कहति गुरु आगे ॥ २६ ॥
जबि ऐहैं हम दूसर बारी । तबि करि हैं जिम आप उचारी ।
मसतक टेकि बिसरजन होए । गमने तूरनि दिल्ली दोए ॥ २७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रथे चतरथ रासे 'सगाई' प्रसंग बरननं नाम दुतीओ अंशु ॥ २ ॥

---

1. लम्बा कद । 2. पगड़ी । 3. कलगी की चमक । 4. काट कर चमकदार बनाए हीरे । 5. यहाँ दीवान की पुत्री का सम्बन्ध करना चाहते हैं । 6. वे तीनों—धनाढ्य घर, उच्चकुल, सुन्दर वर । 7. शीघ्र लौटकर आएँगे ।

अंशु ३

सगाई को प्रसंग

दोहरा

दिज गमन्यो दिल्ली दिशा सनै सनै मग जाइ ।
पहुंचे चंद्र के सदन आशिख दई 'वधाइ' ।। १ ।।

सवैया छन्द

बैठि समीप सुनावनि कीनिसि बिचरे जहिं कहिं पुरि समुदाइ ।
नहिं पायहु सनबंध किसी थल लवपुरि ते सुधि को पुन पाइ ।
पिख्यो पहुंचि कै भलो ठिकानो सोढी वंस बिदति सभि थाइं ।
श्री रघुबरि की कुल अकलंक जु जगत पूज्य अबि गुरु सुखदाइ ।। २ ।।
कुल आछी, धन गन बर सुंदर, तोहिं कह्यो जस देख्यो जाइ ।
तव तनुजा के भाग बडे लखि बनहिं पूज्य जग मात कहाइ ।
सो घर ऊन न किस हूं बिधि करि हम तो हेरि रहे हरखाइ ।
इति तूं बडो दिवान शाह को उत जग गुर जिम चहैं बनाइ ।। ३ ।।
तिनु बिनु अपर खोज हम थाके नहिं पायहु बिचरे वहु देश ।
श्री नानक गादी पर थित है श्री अरजन गुर नाम कहे सु ।
महां प्रताप पूजते चहुं दिशि दरव बिभूखन चढहि विशेष ।
भीर हजारनि लोकनि की रहि, करहिं नमो धरि भाउ अशेषु ।। ४ ।।
बर की सूरत सुंदर अतिशै मनहुं क्रिशन के इह अवतार ।
अपर बिखै दुति ऐसी होइ न जिनहुं हेरि मोहति नर नारि ।
देखति रहे खरे इक टक सों बंदन करि होवति वलिहारि ।
बीच सभा उडगनि महिं दीपति चंद अमंद बिलंद उदारि[1] ।। ५ ।।

दोहरा

नव संमत[2] की बैस है सजहिं बिभूखनि ब्रिंद ।
सुंदर दीह सरीर सिस बर[3] श्री हरिगोबिंद ।। ६ ।।

---

1. सितारों की सभा में निर्मल चन्द्र के समान दीप्त होते हैं । 2. नौ वर्ष । 3. बालावस्था ।

सवैया छन्द

सुनि दिवान जी ! भाग आपने जग महुं सभि ते घंन निहारि ।
जिस को भयो जमाता ऐसो सेवहिं मिलिकै लोक हजारि ।
सुधा सरोवर महिं हरिमंदर धन लगाइ गन कीनसि त्यारि ।
तिस महिं बैठि सुहावत नितप्रति चहुं दिशि की संगत दे कार ।। ७ ।।
चंदू सुनति अनखदंको करि कै दरब जाति को उर हंकार ।
नीक न मानी कीनि बखानी नहिं जानी तुम ने निरधारि ।
सदन अढाई उत्तम खत्री[1] मैं तिन मों ऊत्री कुलि चारु ।
सोढी बंस श्रीण सो खत्री नीवें थल हम ते उरधारि ।। ८ ।।
हम उत्तम चौवारे सम हैं सभि घर ते ऊचो जिमि होइ ।
कहां स्रीण हम ते बहु नीच जथा सदन की मोरी जोइ ।
तनिया ईंट चुबारे की मम मोरी सम कुल महिं दी सोइ[2] ।
जथा जोग नहिं कछू बिचार्यो असमंजस जाने सभि कोइ ।। ९ ।।
ईट चुबारे की सभि सिर परि लगी जु सभि ते नीव ।
तीन वार तकरार कर्यो इम पुन बोल्यो धन क्या ढिग थीव[3] ।
गुजर फकीरनि जैसी तिस की पूजा लेहि अहार करीव ।
आनि चढावहिं तो घन पावहिं नांहि त बैठे रहैं सदीव ।। १० ।।
देश परगना नहीं अजारै[4] नहिं दिवान किसिही महिपाल ।
नहीं घनो बिवहार चलावहिं, जहिं ते आवहि दरब बिसाल ।
मैं दिवान ब्रड पातशाहि को जित कित मेरो हुकम अटाल ।
महां पिदाइशि घन की मेरै डरति लोक मुझ लखें कराल ।। ११ ।।
यांते भी मम सम को नांहिन, तुम ने कीनसि कहां विचार ?
जाति नहीं बिवहार पछान्यो नहिं जान्यो मुझ जथा उदार[5] ।
हुइ अनजान बखानहु महिमा क्या तिस को तुम लीनि निहार ।
सिख रंकनि की भीर रहै ढिग इह प्रभाव इक कीनि उचार ।। १२ ।।
कर्यो सु कर्यो मानि मैं लीनसि इसको हेतु सुनहु दे कान ।
सुता संबंध करनि के कारनि पठहिं बिप्र को अपनै थान ।
जहिं कर आइ उचित सो माननि कर्यो संबंध जि देय बखान[6] ।
नहिं मानहि तौ दोष लगहि तिह तनिया पति को दुतिआ ठानि ।। १३ ।।

---

1. ढाई घरिए क्षत्रिय । 2. मेरी पुत्री चौवारे की ईंट समान है, उसे (तुमने) मोरी समान कुल में दे दिया है । 3. पास में धन क्या होना है ? 4. ठीका । 5. मुझ सरीखा धनवान् । 6. जहाँ (ब्राह्मण पुत्री का नाता) उचित समझ कर आए वह मान ही लिया जाता है ।

प्रथम कह्यो जहिं पति सो होयहु यांते तुम ने कीनसि जोइ।
कुल हुइ हीन दरब ते हीन जु, भयो जमाता अबि मम सोइ।
जगत रीति बिगरहि अबि फेरे[1] भला न मानहिंगो सुनि कोइ।
अपनि थान करि नाते हित मैं पठ्यो बिप्प्र तव कर्यो सु होइ ॥ १४ ॥
इत्त्यादिक कुछ अपर बडाई अपनी कही धारि हंकार।
कह्यो सगन को अबि ले गमनहु जथा जोग जैसो बिवहार।
चंदू दारा ने सभिदीनसि चल्यो पंथ दिज आनंद धारि।
समधी मिले महातम जानैं[2] अबि दिवान इम करनि उचारि ॥ १५ ॥
जबि चंदू गुर निंद उचारी केतिक गुरु सिक्ख हुते सु पासि।
भई संझि सभि संगति इकठी ध्रमसाला महिं भजन प्रकाश।
सभि मैं बिदति कीनि बिरतंत सु शाहु सचिव जिह सुमति विनाश।
निज ते लघु कहि नाता भेज्यो सुता आपनी का निरजास ॥ १६ ॥
जरी न जाइ अजोग कही जिम[3]; सभि संगति सुनीयहि मन लाइ।
तुमहि उचित सुधि लिखिबे गुरु को खत्री पतित, न भगति, न भाइ।
धन मद ते अंधा बड दुरमति तुम महिं नहीं भावना ल्याइ।
करे अरोपनि दोष मूढ मति अपनो आपि जानि अधिकाइ ॥ १७ ॥
सुनि सिक्खनि सभि सहे न कैसे मसलति करिकै भए इकंत।
छपिकै लिखहु, न सुनहि दुषट किम, जैसे इहां भयों बिरतंत।
लगे लिखनि अरदास आपनी श्री श्री श्री सतिगुर भगवंत।
उपकारी जग तारन समरथ हरि अवतार सहाइक संत ॥ १८ ॥
लिखतुम[4] सभि दिल्ली की संगति सतगुर के सनमुख अरदासि।
शाहि दिवान सुता को नाता भेज्यो अहै तुमारे पासि।
आप हंकारी बन्यो चुबारा तुमहि कह्यो मोरी संकास[5]।
बिन शरधा ते मूरख बोल्यो इत्त्यादिक निंदा करि रास ॥ १९ ॥
हमको नहिं सुखाइ तिस कहिबो बसि नहिं चल्यो सु लिख्यो ब्रितंत।
सुता न साकत[6] की तुम लीजहु इह संगति को अहै मतंत[7]।
पठ्यो दूत तूरनि चलि पहुंचहु जबि लौ बिप्प्र न तिलक कढंति।
तबि लौ सुनि दिहु श्री सतिगुरु को जथा दुषट जानहिं भगवंत[8] ॥ २० ॥

---

1. मोड़ने से। 2. ब्राह्मण विचारता है (समधी से मिलने पर ही चंदू उनका महत्त्व समझेगा। 3. जो अयोग्य (बातें) कहीं, सही नहीं जाती। 4 लिखते हैं। 5. सदृश। 6. अश्रद्धा-युक्त, वैसे 'शाक्त' के लिए प्रयुक्त शब्द। 7. परामर्श। 8. जिस से भगवंत (उसकी) दुष्टता को जान लें।

पठे दिवान विप्र अरु नाऊ भई छींक चलते अगुवाइ।
बास अंग फरकति दिज जाने होइ विघन को लख्यो न जाइ।
बिन उतसाह गवन को ठानति नहीं नीकता कित लखि पाइ[1]।
रामदास पुरि आइ प्रवेशे सुधि सतिगुरु को दीनि सुनाइ।। २१।।
जबि ते प्रथम आनि सुधि दीनसि तबि ते श्री गंगा सुख मानि।
नितप्रति पोशिश[2] बरन बरन की सुत को पहिरावहि रुचि ठानि।
मुकता माल बिसाल गरे महिं कंचन जरे जवाहरि जानि।
अंगद महिं हीरे बहु मोले नवरतने दमकति दुति खानि।। २२।।
छाप छलायनि[3] कंचन के बहु खचे रतन सुंदर कर मांहि।
अंक बिठाइ बदन को देखति करति दुलार मोद उपजाहि।
रलीग्रां[4] करहि नवीं नित बहुती त्रिया वधाई आवति प्राहिं[5]।
देति आशिखा नंदन तेरो जुगु जुगु जीवहु दुख कबि नांहि।। २३।।
चंदू सुता सबंध प्रतीखति कबि आवै दिज बर इस थाइं।
तिस दिन पर बलिहार सखी री जबि मेरो सुत तिलक कढाइ।
उतसव रचें अनेक विधनि के ढोलक बजहि, नागरी गाइं।
जग गुरु बखशिश दीननि करि हैं, मचहि कुलाहल नर समुदाइ।। २४।।

दोहरा

आज काल दिज आइ है, उतसव रचहिं बिसाल।
इम सखीअनि महिं बैठि करि गंगा चहै उताल।। २५।।

सवैया छंद

दिज दिल्ली ते आइ सुधार श्री अरजन सुनि के कहि दीनि।
गमनहु दास जथोचित सेवा करह भलो जैसे चित चीनि।
मोदक आदिक दिहु पकवाना सुखम चावर घ्रित मल हीनि।
रुचिर प्रयंक दए पहुंचाई आसतरनि[6] सों छादनि कीनि।। २६।।

दोहरा

खरे करे ढिग दास गन सेवा सरब प्रकार।
करिवाई श्री सतिगुरू लखि लौकिक बिवहारि।। २७।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'सगाई को प्रसंग' बरननं नाम तीसरो अंशु।। ३।।

---

1. कोई अच्छाई नहीं देखी। 2. पोशाक। 3. अंगूठी-छल्ले। 4. खुशियाँ। 5. आकर वधाई कहती हैं। 6. चादरें।

अंशु ४

सगाई प्रसंग

दोहरा

गमनी सुधि गंगा निकट 'लागी सो अबि आइ'।
श्री जगगुरु सों बूझि के उतसव कीनि सुहाइ ॥ १ ॥

चौपई

नारि सुहागणि ब्रिंद हकारी[1]। बसन बिभूखन सुंदर धारी।
मंगल मूल धरायो ढोलि। बाजनि लग्यो गाइ सुठि बोलि ॥ २ ॥
लघु निशान अरु बजी नफीरैं[2]। पहिरैं चीर नवीन सरीरैं।
कोकिल कंठी मिलि मिलि टोली। उमग अनंद बधाई बोली ॥ ३ ॥
मानि सौ गुनी सीस चढावति। गंगा अनंद कह्यो नहिं जावति।
बादित बजति हरख भरपूरा। जहिं कहिं उतसव होवति रूरा ॥ ४ ॥
सूखम बसन कुसुंभी बरन। पहिरनि करे रुचिर आभरन।
मधुर बचन ते चंपक बरनी। गारी देति मिली गन तरुनी[3] ॥ ५ ॥
पूरन भगवन भयो मुद ठानति। सभिहिनि को गंगा सनमानति।
म्रिदुल गिरा ते निकटि बिठावति। उमग उमग सगरी त्रिय गावति ॥ ६ ॥
कहैं ब्रिंद नर नारी ऐसे। बितहि जामनी तूरन कैसे।
होति प्रात के उतसव नाना। मंगल कौतिक पिखहिं महाना ॥ ७ ॥
सभिते हैं बडिभाग हमारे। श्री हरिगोबिंद चंद निहारे।
शादी को निकसावहि टीका। मानुख जनम होइ हम नीका ॥ ८ ॥
लेनिहार त्रिय आवति केई। हरख धरति गंगा धन देई।
किसहूं बसन देति हित धरै। किसै बिभूखन दैबो करै ॥ ९ ॥
किसहूं देति अधिक मिषटान। किह सों माधुर करति बखान।
भई प्रथम शादी जग गुर के। देति चौगुनो धन मुदि करि कै ॥ १० ॥

---

1. सुहागिन स्त्रियों को बुलाया। 2. तूतियाँ 3. युवतियाँ मिलकर गालियाँ देती हैं।

बादित केरि बजावन हारे। अपर किते जो जाचिक द्वारे।
डूम भाट जुति देखि सरब को। लेति बधाई देति दरब को ॥ ११ ॥
दीपमाल तिसकाल बिसाला। होति भई सभि थान उजाला।
सुधा सरोवर श्री हरिमंदर। पुरि अरु बिपनी[1] के थल सुँदर ॥ १२ ॥
जनु उतसव धरि करि निज रूप। रामदास पुरि आवि अनूप।
मंगल रीति जितिक जग अहै। सभि ही करी जथा बिधि कहैं ॥ १३ ॥
खान पान करि कै नर नारी। गुरु घर मंगल ते मुद धारी।
नाना गीतनि गाइ सुनावैं। गारी देति अधिक मन भावैं ॥ १४ ॥
अरघ राति लगि गावति रही। प्रात प्रतीखति निंद्रा लही।
को हरखति बहु सुपत्यो नांही। देखहिं उतसव मुद उर मांही ॥ १५ ॥
जाम जामनी श्री गुर जागे। क्रिया सौच सभि करिबे लागे।
श्री हरि मंदिर को इशनाना। फ़रश फनूस[2] कए सवधाना ॥ १६ ॥
गावति रागी आसावार। रागरागनी शबद मझार।
श्री परमेशुर सिमरि बिसाला। सुखदायक गायक सभि काला ॥ १७ ॥
सतिगुरु बीच बिराजे जाइ। सिक्खनि को सरूप दिखलाइ।
करे निहाल अधिक फल दीनिसि। मनुख जनम लाभ सिख लीनिसि ॥ १८ ॥
प्रात होति लौ किरतन होयो। सिख संगति गुर दरशन जोयो।
दिवस चढे दिजबर कहि सोइ। लेहु बुलाइ जोतकी[3] जोइ ॥ १९ ॥
थित्ती वार महूरत आछो। तिसके साथ पूछबो बांछो[4]।
श्री अरजन तबि लौकिक रीति। सुनि दिज ते करि आनंद चीति ॥ २० ॥
ततछिन गनक[3] हकारनि कीना। जोतिश बिखै बिलंद प्रबीना।
चावर थाल[5] पूरि करि सारो। पुन तिस बिखै दरब किछु डारो ॥ २६ ॥
धरि दिज आगै बूझनि कीना। पिखो मुहूरत दोष बिहीना।
हरिगुविंद की होइ सगाई। लागी बैठे आइ इथाई[6] ॥ २२ ॥
सुनति गणक[7] हरखाइ विचारा। हे सतिगुरु सभि कुछ तुम धारा।
दिवस आज को उत्तम लहै। अगहन सुदी सपतमी अहै ॥ २३ ॥
सपत घरी दिन जबि चढि आवै। उत्तम समो लगनि तबि पावै।
सुनि सतिगुर तबि दास पठाए। सकल समग्री तूरन ल्याए ॥ २४ ॥
महांदेव को प्रथम बुलायो। सनमानति निज निकटि बिठायो।
समै उचित बोलति मुसकावति। कुल की रीति बिलंद बतावति ॥ २५ ॥

1. मार्किट। 2. बिछाई और झाड़-फानूस। 3. ज्योतिषी। 4. उससे पूछ लो। 5. चावलों से भरा थाल। 6. यहाँ आकर। 7. ज्योतिषी।

पुरि के पंच हकारनि कीने[1]। दिज बर अपर बुलाइ प्रबीने।
पुनि बजार ते बणक बुलाए। करि करि टोलि सकल चलि आए॥ ॥२६॥

सालो अरु बुड्ढा कलिआन। उम्मर शाहु महान दिवान।
हुते मसंद बिलंद सु ब्रिंद। आइ बंदना करि कर बंदि॥ २७॥

सिख संगति सुनि सुनि समुदाइ। लगी सभा सभि रही सुहाइ।
नौबति बाजति अनंद उपावति। मंगल शबद कलावति गावति॥ २८॥

बजहि नफीरी नाद उठावैं। ठांढे भाट कबित्त सुनावैं।
श्री अरजन बिच सभा बिराजे। जिम उडगनि महिं निसपति छाजै॥ २९॥

चमर ढुरति है बारंबारी। ले जनु बिसद मराल उडारी।
सेत बसत्र सतिगुर गरपाए। मनो समेट चंद्रिका ल्याए॥ ३०॥

शांति सरूप सुशील सधीर। बदन प्रफुल्लिति गुनी गहीर।
पठ्यो दास ताबि दिज पहि जावों। समों नीक अबि ले करि आवो॥ ३१॥

ग्यानवान सिख सभा मझारे। चहुंदिशि महिं गुरु के परवारे।
ब्रहम लोक महिं ब्रहमा जैसे। सुरगन सहत बिराजहिं तैसे॥ ३२॥

नारनागरी कोकिल बैनी। गावहिं गीति प्रफुल्लिति नैनी।
इक बैठी ढिग ढोल बजावैं। मंगल गीत बनाइ सुनावैं॥ ३३॥

इक नाचति हैं पाइ भवाली[2]। बिहसि बजावति हैं इक ताली।
रुण रुणाट भूखनि झुनकारे। भरी हरख निज अंग उसारें[3]॥ ३४॥

हम घर वहिर अनंद बिसाला। मिले लोक श्री गुरु ढिग जाला।
बैठे कितिक भीर बड होई। चहुंदिशि खरे भए थिर कोई॥ ३५॥

सभि ही करति मनोरथ जीका। हेरहिं हरि गोविंद हुइ टीका।
बासनि भरे मोदकनि केरे। ल्याई ल्याई करि धरहिं घनेरे॥ ३६॥

अस उतसव होवति समुदाए। दिज नाऊ तिस थल चलि आए[4]।
देखि सभा को हरख धरंते। आशिखबाद विलद भनंते॥ ३७॥

श्री सतिगुरु अरजन जी देखि। बैठारे सनमान विशेखि।
पूर्‍यो चौंक गणक ने तबै। गणपति ग्रह थापनि करि सबै॥ ३८॥

चंदन की चौंकी मंगवाइ। सभि महिं गुरु ढिगि दई डसाइ।
लौकिक बैदिक रीति बडेरी। दिजि कहि करिवाइसि तिस बेरी॥ ३९॥

---

1. नगर के पंचों को बुलाया। 2. फिरकियां लेती हुई। 3. उभारती हैं। 4. ब्राह्मण और नाई उस स्थान पर आ गए।

दोहरा

करिहु हकारनि इह समैं श्री हरिगोबिंद चंद ।
इम कहि करि दिज गणक तबि पठ्यो दास मतिवंद ।। ४० ।।
बसन विभूखन पहिरते करि शनान जिस थान ।
तहां जाइ करि कहति भा चलहु आपि सुखदानि ।। ४१ ।।

इति श्री गुरु प्रताप सूरज ग्रिथे चतुरथ रासे 'सगाई प्रसंग' नाम चतुरथो अंसू ।। ४ ।।

अंशु ५

संगति की अरदास पहुँची। सगाई मोड़ दी

दोहरा

गंगा रिदे अनंद करि नंदन हरि गोविंद।
बसन बिभूखन मोल बहु पहिरावति सुखकंद ।। १ ।।

स्वैया छन्द

सूखम बसत्र गरे मैं जामा जिसके बीच दिपति तन चारु।
चीरा[1] रकत सुहावति सिर परि जरीदारु है शोभ अपार।
पर्यो सिकंधनि पर दुकूल शुभ दमकति गोटा[2] जुति बिसतारु।
हीरे चीरे कोरदार बर जरे जवाहिर जिगा मझार ।। २ ।।
कुंडल डोल कपोलनि ऊपरि मुक्ता गोलि जि मौलि बिसाल।
तिम मोतिनि की माल गरे महिं उज्जल दमकति है दुति जाल।
कंचन के अंगद अर कंकन जेब जबर ते जटति उजाल।
छाप छलायनि ते छवि छाजति सरब सराहति हेरति बाल[3] ।। ३ ।।
निज कर ते ले जननी अंजन आंजै कमल पत्र सम नैन।
राई लवन वारती ऊपर डरति रिदे किस डीठ लगै न।
पिखत अनंद बिलंद रिदै लहि, इमि सु जाइ त्रिय जुत बिच ऐन।
करे संग दासनि ले गमने जहां सभा सतिगुरु सुख देन ।। ४ ।।
श्री अरजन बिन उठे सरब ही हेरि प्रताप न बैठ्यो जाइ।
हाथ जोरि करि बंदन ठानहि चहुंदिशि ते देखति हरखाइ।
पित को नमो कीनि के ठांढे दिजबर ने कहि लए बिठाइ।
चौंकी पर शोभति इम लखियति सुर समुदाइ सहत सुरराइ ।। ५ ।।
रूप बिलोकति देति आशिखा जुग जुग जिवहु गुरू को नंद।
इह उतसव हम हेरनि करिहैं बहुर ब्याह को होहि बिलंद।
शाहु दिवान घनी हुइ अतिशै, इत सतिगुर को घर धनवंद।
मंगल होहिं ब्रिंद नर सुख लहिं भयो मेलि सम के अबिद्वंद[4] ।। ६ ।।

---

1. पगड़ी (लाल)। 2. सुनहरी पट्टी । 3. बालरूप। 4. दोनों एक-से (परिवारों) का मेल हुआ है।

पांधे तबि अभिखेक[1] करायहु परब गनपति को करि मानि ।
अपर ग्रहनि को करि अभिसेचनि भरी भीर मानव गन आनि ।
सतिगुरु मुख दिशि नयन लगाए दरशन करति हरख उर ठानि ।
को बैठे को खरे तहां मिलि नर भे अनगन थोरिय थान[2] ॥ ७ ॥

इतने महिं दिल्ली ते संगत पठ्यो दूत आयो बहू चाल ।
श्री अरजन के निकट पहूंच्यो हाथ जोरि करि नंम्री भाल ।
महाराज अरदास एक है मैं ल्यायहु अबि लेहु संभालि ।
होइ इकंत ब्रितंत लखीजै पुन कीजहि जे काज बिसाल ॥ ८ ॥

तूरन हेरहु देरि न ठानहु. सगन बाति करीअहि पशचाति ।
सुनति उठे सतिगुर तिस छिन महिं, बैठ्यो सिक्ख एक, सभि ग्यात[3] ।
भूत भविख्यति बरतहि जानति वे परवाहु सदा चित शांति ।
मगन रहै गुरु शबद बिखै नित मन गुरु चरन बिखै दिन राति ॥ ९ ॥

उठति देखि करि बोल्यो गुरु सो, छपी न रहै प्रभो इह बाति ।
शरधा हीन हंकारि पातकी तिसकी सुता न लिहु हित तात ।
टक्कर हतहि चुबारे सों नित मोरी महि मरि है पछुताति[4] ।
जिसे छपायहु चाहति हो अबि सो बिदतहि सभि महिं भलि भांति ॥ १० ॥

कूकर कूकति की सम पापी गजराजनि गुरु कमी न होइ ।
साकति संग न बनि है तुम सो, इम बिचार करि त्यागहु सोइ ।
सुनति लोक रिस करि तिस हटकति[5] तुषनि[6] रहो कहु न बच कोइ ।
अति शादी महिं बिख सम कहिबो उचित न तोहि लेहु अविलोइ ॥ ११ ॥

अंतरिजामी श्री अरजन तबि ऊचो कर्यो हाथ अरबिंद ।
धीरज धरहु करहिं हम ऐसे बैठे गावहु गुन गोबिंद ।
हुइ इकंत बिरतंत पढ्यो सभि लखी खुटाई कीनि जु मंद ।
सभि संगति को इही मनोरथ नहीं नाता लीजहि जगबंद ॥ १२ ॥

पठी अरदास सभा महिं आए हेरि उठे मानव समुदाइ ।
निज गादी पर बैठि बिराजे जगत गुरू सिख्यनि सुखदाइ ।
महांदेव आदिक सो बूझयो खत्री दुषट हंकार बधाइ ।
बोल बिगार बिसाल भयो बहु नहिं नातो लेनो बनिआइ ॥ १३ ॥

---

1. तिलक । 2. स्थान कम पड़ने लगा । 3. जो सब जानता था । 4. (वह) नित्य चौबारे में टक्करें मार मार कर मरेगा और फिर पछता कर मोरी में गिरेगा । 5. रोकते हैं । 6. मौन रहो ।

महांदेव, ब्रिध[1], साल्हो आदिक सभिनि सलाह दई तिस भाइ।
रावर जानति मूढ गुमानी तिह संबंध नीको न सुहाइ।
ग्रैह अभिखेकति[2] बोल्यो पांधा सुन्दर समो न इह बित जाइ।
तिलक करावहु अबि निज सुत के बनहि सबंध बिघन बिनसाइ[3] ॥ १४ ॥

दिहु आइसु दिज करहि सगुन को सभि की लालसा पूरी होइ।
भए बिरुख[4] श्री अरजन बोले तिसकी समता हमैं न जोइ।
लैंबौ उचित नहीं इह नाता जाति दरब हंकारी सोइ।
ऊचो बन्यो चुबारा मद ते चहुं दिशि ते दुख दे सभि कोइ ॥ १५ ॥

जो ऊचो तिह गिरबे को डर परहि गाज जर रहै न जाइ[5]।
हम सम हम को आनि मिलहि को, बनहु चुबारा भाल भनाइ[6]।
सतिगुरु को घर माण निभाणिनि मानी जबि कबि लहै सजाइ।
नंम्रि होइ नंम्रनि सों मिलि है, दुहि दिशि रस रहि, प्रमुद उपाइ ॥ १६ ॥

सतिगुरु गिरा ज्वाल सी निकसी सफल सतेज प्रकाश बिसाल।
नर नारनि को हरख सु कानन[7] सुनति दियो इक छिन महि जाल।
रिदे बिसम इह भई कहां गति क्या करते क्या बरती चाल।
कमल बाटिका हुते लगावति उदै कंटका थिरी सडाल[8] ॥ १७ ॥

उगवनि लगी अनंद बेलि इह किस गज ने मरदी ततकाल।
सभि इसत्रिनि को भयो भंग मन, तजि गावनि चहि सुन्यो उताल।
बादित बजति थिरे इक बारी को बूझति को भाखत हाल।
शाहु दिवान दरप को उरधरि गुरु लघु कहि निज बन्यो बिसाल ॥ १८ ॥

अबि सुधि पाइ बिरुख[9] गुरु होए, नहिं नाता तिह सुता मनंति।
रहे बैठि लागी चित चिंता इम कुसूत[10] बरत्यो दुखवंति।
बिसमे नर नारी तजि हरखनि चंदू को सभि खोट भनंति।
कारण करण गुरू समरत्थं इनकी समता कुतो चहंति[11] ॥ १९ ॥

गरब कहां इन आगै तिसि को, कहैं बाक सुख दुख नर पाइ।
पातशाह को रंक करहिं द्रुति रंक शाह की पदवी पाइ।

---

1. भाई बुड्ढा। 2. ग्रह देखते हुए। 3. विघ्न नाश हो जायँगे। 4. बे परवाह। 5. बिजली गिरने से वह जलने से बचता नहीं। 6. प्रसन्नता रूपी बन। 8. कांटों वाली झाड़ियाँ उग पड़ीं। 9. विमुख। 10. बिगाड़। 11. कैसे चाहता है।

अज़मति अजर जरी उर अंतर नहिं काहू सों करहिं लखाइ ।
जिन को सेवक सकल शकति जुति जिम चाहै तिम लेति बनाइ ॥ २० ॥
श्री नानक को महां प्रताप जु सूरज सम जग बिदति प्रकाश ।
चंदू पेचक[1] सो नहिं जान्यो वुद्ध बिलोचन मंद महां सु ।
निस महिं चमक जींगना[2] जैसे रवि को निंदे धरहि हुलास ।
तैंसे जानि परै सो मूरख चाहिसि अपनो कर्‌यो बिनाश ॥ २१ ॥
इम चरचा लोकनि महिं बिथरी दिज लागी ने कह्‌यो सुनाइ ।
श्री गुरु तजहु क्रोध, तुम स्याने. जिसकी सुता आपके आइ ।
कहां हंकार करहिगो तुम सों कर जोरहि अरु सीस निवाइ ।
छिमा करावहि ऊचे जानहि पिता सुता[3] को हम बनिआइ ॥ २२ ॥
किती बडो हुइ तनीयां पित[6] जो, नंम्रि होनि ही जदकद जानि ।
नर रंकनि के कहे न हटिये नाता लेहु वड़े सो थानि ।
लछमी आइ किवार न दीजहि, रिदे अनंद धरि लिहू सनमान ।
शाह दिवान महान धनी सो उत्तम जाति इते गुन मानि ॥ २३ ॥
श्री अरजन कहिं तिस के धन ते हम नहिं धनी बनहिं किस भाइ ।
चंदू कै सम होइ सु लैहे खोजहु जग महिं देहु पठाइ ।
हमैं गरीब आन को मिलि है जिस महि होहि न गरब बलाइ[4] ।
मिलि सुख पावैं नित हरखावैं जहिं हंकार नहीं दुखदाइ ॥ २४ ॥

दोहरा

सतिगुरु को रुख देखि कै सभि संगति भई मौन ।
साकत सुता न लेहिंगे, नहिं शरधा गुरु मौन ॥ २५ ॥

इति श्री गुरप्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे 'सगाई को प्रसंग' बरननं नामु **पंचमो अंसू** ॥ ५ ॥

1. उल्लू । 2. जुगनू । 3. पुत्री के पिता को । 4. अहंकार रूपी बला ।

अंशु ६

दो सगाइआं इकट्ठी होना

दोहरा

कहनि सुननि बहु तबि भयो ठहिरयो अंति मतंत ।
नहिं नाता हम लेइ हैं हंकारी कुलवंत ।। १ ।।

चौपई

दिज नाई सुनि जुगल बिसूरति । जनु चिंता इह धारी मूरति ।
कहि बहु रहे नहीं गुरु मानी । कहिबे संगति को प्रिय जानी ।। २ ।।
जबि श्री अरजन एव उचारा । हमहि मिलहि को निरहंकारा ।
डल्ले की वासी सिख बैसे । सुन्यो बखान्यो सतिगुर जैसे ।। ३ ।।
श्री गुरु अमरदास के पासि । भाई पारो भयो प्रकाश ।
जनम्यो तिसक बंस मझारे । नाम नराइणदास उचारे ।। ४ ।।
क्रिपा द्रिषटि सिक्खनि दिश जानी । निज मन महिं गिनती तबि ठानी ।
सुता सपत संमत की मेरी । नाता देउं जि नहिं गुरु फेरी ।। ५ ।।
निरहंकार गरीब जि होइ । दे नाता हम लैहैं सोइ ।
इम श्री गुरु ने बाक बखाना । सफलहि सोइ होइ नहिं हाना ।। ६ ।।
कहौं अबहि बिच सकल समाजा । श्री सतिगुरु राखहिं मम लाजा ।
इस जग महिं तौ अहै सुहेली[1] । बिच प्रलोक के रखनि दुहेली ।। ७ ।।
राखहिं तहां सहायक होइं । बिदति बति कुछ छपी न सोइ ।
यां ते सतिगुरु पर भरवासा । पूरनि करहिं मोहि मन आसा ।। ८ ।।
भाई पारो को बरु भयो । श्री गुरु अमरदास जी दयो ।
गुरु घर सों तुव कुल को नाता । हुइ है आगै जग बख्याता ।। ९ ।।
सो अबि समा आनि करि होवा । औचक ही मंडल[2] महिं जोवा ।
इत्त्यादिक बहु रिदे बिचारा । सार असार कर्यो निरधारा ।। १० ।।
खरो भयो जोरे जुग हाथ । हे प्रभु मुझ को लखहु अनाथ ।
पारो बंस बिखै जनमयो । डल्ले की वासी मैं थियो ।। ११ ।।

---

1. प्रसन्न है । 2. सभा ।

शुभ खत्री हौं दास तुमारा। मुझ निकेत नहिं दरब उदारा।
वड्यो सहत हम गुर शरनाई। मम पुत्री की लेहु सगाई ॥ १२ ॥
संमत सपत आरबल[1] होइ। हरि गोबिन्द दासी बनि सोइ।
लाज बिनां मैं सभा मझारी। बिनती शरधा सहत उचारी ॥ १३ ॥
राखहु लाज मोहि भरवासा। यांते कही आपनी आसा।
श्री अरजन सुनि भए प्रसंन। भले समें बोल्यो सिख धनं ॥ १४ ॥
उतसव को समाज वर जुर्यो। सो तैं नांहिन बिरथा कर्यो।
मंगल नौका ज्यों बिचि धारि। डूबति हुती लगाई पारि ॥ १५ ॥
महिमा गुरु सिक्खनि की महां। को समता करि सकहि न तहां।
सतिगुरु को सिक्खनि सों मेला। सकल थान महिं होति सुहेला ॥ १६ ॥
हंकारी मनमुख नर जोइ। सतिगुरु संग मेल नहिं होइ।
जे करि मिलहि उठहि उतपात। ज्यों रवि राहु गगन मिलि जाति ॥ १७ ॥
यांते श्री नानक सुखदाई। सिक्खनि सों हम बणति बणाई।
दैवग सों[2] श्री अरजन भाखा। पूरन करहु सभिनि अभिलाखा ॥ १८ ॥
इह नाता लीजै हित साथ। दिहु टीका हरिगोविंद माथ।
चहिय समिग्री जो समुदाई। तुरत नराइण दास मंगाई ॥ १९ ॥
पाई हरि गुविंद की झोरी। भई सभिनि के खुशी न थोरी।
कर्यो निकासनि मसतक टीका। अच्छत[3] सहत बिराजति नीका ॥ २० ॥

दोहरा

केसर तिलक सु देव गुरु तिसके मंडल आइ।
अच्छत जनु ससि कला गन त्रास राहु ते पाइ[4] ॥ २१ ॥

चौपाई

धनं धनं सभी सभा बखाना। दास नरायण बहु सनमाना।
हरी चंद इक खत्री और। लंम गोत बैठ्यो तिसठौर ॥ २२ ॥
तिह बिलोकि तिन रिदै बिचारा। इसते आछी अपर न कारा[5]।
मम घर सुता सु अरपनि करौं। इसी समैं महिं उचित, न टरौं ॥ २३ ॥
खरे होइ सो बिनति कहै। द्वै संमति की दुहिता अहै।
सो मैं चहौं दियो तुम पासी। हरिगोविद की बनि है दासी ॥ २४ ॥

---

1. आयु। 2. ज्योतिषि से। 3. अक्षत, चावल। 4. केसर का तिलक मानों बृहस्पति है और उसमें चावल जैसे चन्द्रमा की कलाएँ राहु-भय से आ छिपी हैं। 5. इससे अच्छा और कोई कार्य नहीं।

आपि अनाथनि के हो नाथ। याते कहौं जोरि जुग हाथ ।
कीजहि अंगीकार सगाई। मन बच क्रम ते मैं शरनाई ॥ २५ ॥
श्री अरजन सुनिकै सिख बिनती। भए प्रेम वसि तजि सभि गिनती।
भन्यो बाक इह भी लै लेहु। आसा सिक्खनि की पूरेहु ॥ २६ ॥
लेना देना साथ हमारे। गुर सिक्खनि की सांझ उदारे।
हरीचंद तबि होद नजीका। दिया सगन अरु काढ्यो टीका ॥ २७ ॥
लोक हजारहुं अदभुत हेरे। सभि के उमग्यो अनंद वडेरे ।
कहैं परसपर चौंप[1] वधाई। इक त्यागे भई दोइ सगाई ॥ २८ ॥
सतिगुरु के घर कभी न कोई। क्या चंदू ते धनी सु होई[2] ।
लेनो देनि हज़ारनि केरा। सभि ते सतिगुरु सदन उचेरा ॥ २९ ॥
जे करि तिसके होवति नाता। कबहूं उठति महित उतपाता ।
शाहु दिवानी ते हंकारा। बोले ते कबि परति बिगारा ॥ ३० ॥
सहैं न गुरू बाक हंकारी । चंदू रिदे अशरधा धारी ।
यांते भलो भयो बख्याता। लियो न तिस तनुजा को नाता ॥ ३१ ॥
ततछिन जुग नाते हुइ गए। कहैं परसपर हरखति भए ।
जनु गन रंकनि सुरतरु लीओ। छीनि सभिनि ते पुन तिन दीओ ॥ ३२ ॥
बोई किधौं अनंद की बारी[3]। सूकति हुती सींचि वर बारी ।
इस प्रकार मंगल पुन होयो। सकल समाज अनंद करि जोयो ॥ ३३ ॥
हरखति चित गावति पिकबैनी। उमग उमग करि पंकज नैनी ।
नौबति बाजति सहत नफरीनि। बोलति भाट सुजसु बिसतीरनि ॥ ३४ ॥
तंबूरा मिरदग वजावति। गीत कलावति गावति भावति ।
डोम आदि मंगत जन सारे। सतिगुरु को जैकार उचारे ॥ ३५ ॥
ले आइसु तबि उठे मसंद। मोदक धरे पतासे ब्रिंद।
मिसरी के बहु थार सुधारे। मेवा गरी बदाम छुहारे ॥ ३६ ॥
सभि बरताए[4] सभा मझारे। भरि भरि अंजुलुदे जन सारे।
अधिक भीर हेरी गुर जबै। गन बरतावे लायसि तबै ॥ ३७ ॥
सभि को पहुंचहि कह्यो सुनाई। बरती तुरत समूह मिठाई ।
सभि ही धंन धंन गूरु कहैं। तुमरे सम तुम ही प्रभु अहैं ॥ ३८ ॥

---

1. चाव सहित। 2. चंदू ने क्या कर लेना था। 3. आनंद की वाटिका।
4. बाँटे।

श्री अरजन सभि लाग[1] दिवाए । दान मान देकरि हरखाए ।
अनंद उदधि जनु वध्यो अनंत । सिख संगति नर भे जल जंतु ॥ ३९ ॥
उद्यो अनंद चंद कै अबै । कुमद चकोर भए नर सभै ।
चंदू के लागी जे दोह । चकवा सम दुख प्रापति सोइ ॥ ४० ॥
लखि अनु चित गुरु रिदे बिचारा । तिन दोइन को निकटि हकारा ।
समै हरख को सभि हरखाए । तुम मन भंग सचित दिसाए ॥ ४१ ॥
लिहु धन गन मन अनंद करीजै । चंदू को ब्रितंत कहि दीजै ।
जो संजोग बिधाता जोरं[2] । सोई होइ, न किसको जोरं ॥ ४२ ॥
दिज ने कह्यो जोगता नांही । जे सबंध तुम सों हुइ जाही ।
तौ लैबो हम को बनि जाइ । इम नहिं, लेहिं देहु समुदाइ ॥ ४३ ॥
इस विधि जथा जोग सभि कीनि । श्री अरजन सतिगुरू प्रबीन ।
सुत को आइसु उठिबे दई । सभा सरब निज निज थल गई ॥ ४४ ॥

इति श्री गुर प्रताप ग्रिथे चतुरथ रासे 'सगाई को प्रसंग' बरनन नाम खषटमो अंसू ॥ ६ ॥

---

1. नाई-ब्राह्मण आदि को दिया जाने वाला धन । 2. जोड़ता है ।

अंशु ७

बिवाह की तिआरी

दोहरा

श्री हरि गोविंद चंद तबि बदन प्रफुल्ल्य बिलंद ।
रुख लखि पित सतिगुरू को उठे सु देति अनंद ।। १ ।।

तोटक छंद

जननी गन त्रीयनि बीच हुती । जिस भाल जगी बड भाग रती[1] ।
हित बंदन के तिस थान चले । उर धारि अनद बिलंद भले ।। २ ।।
पद मंदह मंद धरे धरनी । बड लोचन ते कुटलैं बरनी[2] ।
जुति सुंदरता बहु शोभ धरे । घर पौर[3] बिखै तबि जाइ बरे ।। ३ ।।
गन त्रीयनि देखि बिशेख सुखं । हरखाइ बिलोकति चारु मुखं ।
करि जोरि नमो सभि धारति हैं । गुरु नंद गुरु सु बिचारति हैं ।। ४ ।।
सुत गंग उमंगहि संग पिख्यो । गुर बंसहि को अतितंश लख्यो ।
पदबंदति को गहि अंक लयो । नहिं जाइ कह्यो जु अनंद भयो ।। ५ ।।
मुख सूंघति धारि दुलार घनो । किसि रंक लही निधि ब्रिंद मनो ।
सुत जीवहु पुंज बिघंन हनो । हम आशिख देति सु प्रीत सनो ।। ६ ।।
निज अंक बिठाइ सु नंदन को । सभि नारि पिख्यो जग बंदन को ।
बहु आशिख देति वधाइनि को । बय दीरघ संकट होइ न को ।। ७ ।।
मिलि को अबला पगकज छुवैं । अविलोकति के सिर नंम्र हुवैं ।
मन भावति गीतन गावत हैं । पट भूखन चारु सुहावति हैं ।। ८ ।।
इम होति भयो उतसाहु महां । गुर को पुरि मोद जहां सु कहां ।
नर नारि मिले अविलोकनि को । हरखाइ गए सभि ओकन को[4] ।। ९ ।।
गन मंगति[5] को धन दीन महां । सभि हूं जसु कीनि गए सु जहां ।
नरवाज बजावति जे गन को[6] । समुदाइ प्रमोदति ले धन को ।। १० ।।

---

1. भाग्य-मणि । 2. कुटिल बरौनियाँ । 3. घर की ड्योढ़ी । 4. सब सहर्ष घरों को गए । 5. भिखारियों को । 6. कौन गिने ?

इस भांति बिताइ भले दिन को। करि खान रु पान सु जामनि को।
सुपते सु साथ सभे तबिहूं। तजि नींद प्रभाति भई जबिहूं ॥ ११ ॥

दोहरा

दिल्ली को गमन्यो तवै दिज नाई ले संग।
महां दुखित चित महि चलति भयो जांहि[1] मन भंग ॥ १२ ॥

तोटक छंद

बिवहार मनो बड घाट पयो[2]। सम बानिक चिंत बिलंद लयो।
उदत्यो जनु बाग लगावनि को। छिति छीनि लई पछुतावनि को ॥ १३ ॥
कि जहाज भर्यो जल डूब गयो। न बच्यो कुछ, यौं दुख तांहि भयो।
मुरझाइ रह्यो कहि संगनि को। बिगरी बहु बाति निरंगनि को[3] ॥ १४ ॥
शुभ मेलि बिखैं बड भंग भयो। सम दोइनि बीचि[4] बिगार कियो।
जिम चंदु कह्यो तिम श्रौन सुन्यो। रिस ते नहिं लेहिं, कुवाक भन्यो ॥ १५ ॥
इम सोचति बोलति शोक धरे। पुनि चंदु जहां तहिं प्यानु करे।
जबि श्री गुरु बैठि दिवान कियो। तबि आइ नराइणदास गयो ॥ १६ ॥
कर जोरि कही बिनती गुरु को। प्रभु मोर मनोरथ यौं उर को।
दिज दैवग लेहु बुलाइ इहां। दिन ब्याह बिचारहि बैठिमहां ॥ १७ ॥
बिनु दोषनि द्योस बताइ जवै। हरिगोबिंद ब्याह उमाह तवै।
लिहु आपि प्रभु नहिं देरि करो। गन जे वसतू मंगवाइ धरो ॥ १८ ॥
उत मैं सुनि कै घरि जाइ अबै। इकठी गन सौज कराइ सवै।
सुनि पास नराइण दासहि ते। सिख संगति मोद प्रकाशहि ते ॥ १९ ॥
तबि श्री गुर बिप्प्र बुलाइ लियो। निज पास बिठाइ सु मान कियो।
भरि अच्छतथार धरयो घन को। कहि सोधहु ब्याहनि के दिन को ॥ २० ॥
इम चाहि नराइण दास घरै। सुधि द्योस बतावहु जानि परै।
बिन दोष बनै अस नीक अहै। दुह पासनि ते रस रीति रहै ॥ २१ ॥
सुनि बिप्प्र लयो पतरा कर मैं। दिन देखि बिचारति भा उर मैं।
ग्रैह वार निछत्रनि रासिनि को। दिन जानि सु ब्याह प्रकाशनि को ॥ २२ ॥
गुरु संग भन्यो जुग मास बिते। हुइ माघ सुदी दसमी सु हिते।
सुधि द्योस अहै तबि ब्याह करो। रुति सुंदर है निशचै सु घरो ॥ २३ ॥

---

1. जिनके। 2. मानो घाटा पड़ गया हो। 3. रंग-रहित हो गई। 4. बराबर के दो में (परिवारों में)।

दोहरा

इम साहा सुधवाइ करि सुन्यो नराइन दास।
करि निशचै हरखत भयो खरे करी अरदास ॥ २४ ॥

तोटक छंद

दिहु आइसु जाउं अवासि अबै। गन सौजनि त्यार कराउं सबै।
करि बंदन को ततकाल गयो। अपने घर प्रापति होति भयो ॥ २५ ॥
बिरतांत कुटंबहि संगि कह्यो। सुनिकै सभि ने मन मोद लह्यो।
निज भाग बिसालहि धंन लखै। घर श्री गुरु आदि सरूप पिखै ॥ २६ ॥
सभि संग्रहि सौज[1] करंति भए। हित ब्याह उछाह अनंद लए।
इति श्री गुरु संगहि संगति है। मिषटान मंगाई उमंगति हैं ॥ २७ ॥
पित थान थप्यो हरि मंदर को। हित पूजनि के चलि सुंदर को।
सिख सेवक भीर सु साथ महां; तट तीरथ पौर पहूंचि तहां ॥ २८ ॥
हरिगोविंद नारि अनेक मिली। निज संगि करे तहिं गंग चली।
गुरु अग्र भए पशचाति इही। गुरु नानक नाम उचारति ही ॥ २९ ॥
दरबार कि द्वारि नमो करिकै। परदच्छन दीनि सभी फिरि कै।
सभि होइ खरे अरदास करी। बर फूलनि की बरखा सु झरी ॥ ३० ॥
बहु धूप धुखावति देवति हैं। कर जोरति श्री गुरु सेवति हैं।
बरताइ प्रसादि समूह दियो। पिखि मंगल कौ हरखंति हियो ॥ ३१ ॥
कर बंदि करैं अभिबंदन को। गुरु नाम जपैं अभिनंदन को।
इम गंग लिए निज नंदन को। झुक बंदति हैं जग बंदन को ॥ ३२ ॥
पुन आइ निकेत अनंद भरी। कुल रीति हुती सभि ही सु करी।
मिषटानि दियो सभि के घर मैं। रहि ऊच जु नीच गुरू पुरि मैं[2] ॥ ३३ ॥
इम मंगल और कुल रीति जिती। हरखाइ करी तबि गंग तिती।
जसु फैलति भा तिस देश महां। धन ले उचरंति जहां सु कहाँ ॥ ३४ ॥
पुन श्री गुर सौज मंगावति हैं। हित व्याह अवास रखावति हैं।
बहु ग्रामनि ते घ्रित लेति भए। धन पास मसंदनि के सुदए ॥ ३५ ॥
पुरि भूरनि मैं धन भेजि दियो। मिषटान महांन मंगाई लयो।
बड बासनि ले करि पूरि धरे। गन मेवनि की सु खरीद करे ॥ ३६ ॥
पशमंबर[3] केतिक मोलि लियो। बहु सूखम अंबर ब्रिंद क्रिये।
गन जात पटंबर लीनि भले। जिन लागि जरी बहु भाव मिले ॥ ३७ ॥

---

1. सामग्री। 2. अमृतसर में रहने वाले सभी ऊँचे-नीचे घरों में मिष्टान्न भेजा।
3. पश्मीने के कपड़े।

सिख संगति और मसंदनि को। पुरि पैंच अनेक बिलंदनि को।
जिनि देनि बनै हित मानि घने। सु खरीद करे तिन कौन गिने ॥ ३८ ॥

दोहरा

साहा जानि समीप को सभि त्यारी करि लीनि।
अंन अधिक संचै कर्यो जहिं कहिं घन गन दीन ॥ ३९ ॥

रिदे अनंद बिलंद ते गंगा धारि उमंग।
प्रथम ब्याह लखि चौंप चिति करति अधिक गन रग ॥ ४० ॥

जाइ नराइण दास घर जथा शकति को धारि।
सरब वसतु संचै करी है जु अनेक प्रकार ॥ ४१ ॥

हित दाइज* के देनि को, करनि समूह अहार।
अंन बसन भूखन भले कीनिसि सगरे त्यार ॥ ४२ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिथे चतुरथ रासे 'सगाई को प्रसंग' बरननं नाम सपतमो अंसू ॥ ७ ॥

---

* दहेज

अंशु ८

चंदू का बैर बधिआ

दोहरा

दिज नाई छूछे हटे तिन को सुनो ब्रितंत ।
महां दुखित गमनति भए रिदे अधिक पछुतंत ।। १ ।।

चौपई

सनै सनै दिल्ली पुरि गए । मग महिं किन हूं लूटि जनु लए ।
घर खत्री के पहुंचे जाइ । जहां मूढ बैठ्यो गरबाइ ।। २ ।।
गिलमि गलीचे फरश बिसाला । बैठिक मैं बैठ्यो खुशहाला ।
बड उपधान[1] धर्‍यो जिह पाछे । सगरे सेत बसत्र तनु काछे[2] ।। ३ ।।
बैठे लिखिन हार ढिग ब्रिंद । कितिक खुशामद करति बिलंद ।
कारज अरथी मानव केई । जोरति हाथनि जाचति सेई ।। ४ ।।
बडी कचहिरी महिं सो बैसा । उत्तर देति जोग जिस जैसा ।
बिप्र अशीरबाद कहि जीवहु । चिरंकाल जसु जुति जग थीवहु ।। ५ ।।
मुख मुरझायो बहु दिज केरा । चंदू तबहि बिलोचन हेरा ।
पांइ लगहि, पांधा[3] कहु बाती । तुझ देखति धरकति मुझ छाती ।। ६ ।।
फरकति बांम अंग तन मेरे । नहीं शगुन कुछ आछे हेरे ।
बदन सचिंत देखि करि तोही । अति संसै होवति उर मोही ।। ७ ।।
पथ चलति वसतू चुरवाई । किधौं अपर कारज बिगराई ।
मुदि जुति मिलिबो चहीअहि तेरा । पठ्यो हुतो शादी हित मेरा ।। ८ ।।
जिस महिं तुझको लाभ बिसाला । अस कारज महिं तूं इस काला ।
समै हरख के मुख मुरझायो । देखति मोको अचरज आयो ।। ९ ।।
शुभ कारज सो बन्यो कि नांही ? । कहु पांधा सभि विधि मुझ पाही ।
सुनि चंदू ते बिप्र उचारा । सुनहु इकंत होइ करि सारा ।। १० ।।

---

1. तकिया । 2. सज्जित । 3. पुरोहित ।

संसै जुत उठि करि ततकाला। बैठ्यो सभि ते होइ निराला।
दिज ने ढिग हुइ सकल सुनायो। हे जजमान सु हुइ प्रभु भायो॥ ११॥

हम नाता जबि ले करि गए। शुभ दिन तबहि सुधावति भए।
सकल समाज मिल्यो ततकाला। लोक हजारहुं अनंद बिसाला॥ १२॥

बालक चौंकी आनि बिठायहु। गावनि बादित सकल रचायहु।
हमहिं बुलायो गमने तीर। जहिं गुरु अपर नरनि की भीर॥ १३॥

नौ ग्रिह गनपति हुतो मनायहु। तिलक करनि को जबि उदतायहु[1]।
दिल्ली ते तबि पठई पाती। चलति हमहि तुम कही जु बाती॥ १४॥

मोरी अरु द्रिषटांत चुबारा। निज बडता के हेतु उचारा।
किह सुनि कै लिखि भेज्यो सारो। सो पठि कै लखि तुव हंकारो॥ १५॥

जरी न बात, न लखी बडाई। तूरन हम सों गिरा अलाई।
रहै चुबारो सो दुख पावहि। मारहि टक्कर भाल भनावहि[2]॥ १६॥

केतिक सिक्ख कह्यो बख्याता। नहिं लिहु इस किराड[3] को नाता।
प्रथभ भयो तैं बोल बिगाड़। सही न तिनहु सु दीनि उघाड़[4]॥ १७॥

क्या कहीअहि बड काज बिगारा। नहिं सवर्‍यो मैं बहुत उचारा।
कहति भए, जो सम है मोरी। सम मोरी के मिलहि सु मोरी॥ १८॥

इम सुनि बहुत थानि की संगति। बैठी ब्रिंद बिलोक उमंगति।
तिन महिं ते इक उठि करि खत्री। हाथ जोरि कहि गिरा बचित्री॥ १९॥

सपत बरख की दुहिता मेरी। लिहु नाता गुर करहु न देरी।
बालक तिलक कर्‍यो ततकाला। तिम ही उतसव रह्यो बिसाला॥ २०॥

खत्री और उठ्यो इक पाछे। संग गोत निज कहि करि आछे।
तबि ही दूजी करी सगाई। देखति दुगनी बजी बधाई॥ २१॥

नाता तोहि सुता को फेरा। चल्यो उपाइ नहीं कुछ मेरा।
सुनि अनख्यो चंदू मति हीन। जपति रिदा तूषनि दुखभीन॥ २२॥

1. उठे। 2. टक्करें मारकर माथा फोड़ेगा। 3. वणिक, यहाँ आशय धन-लोभी से है। 4. प्रकट कर दी।

कहां भयो जे अपर सगाई। धनी पुरख कै बहु हुइ जाई[1]।
जे हमरो सनबंध तुमारे। कारज देउं अनेक सुधारे ॥ २९ ॥
नांहित जे करि लेहु न नाता। तौ मेरो बैरी बख्याता।
तुमरे सिक्खन कूकर कह्यो। सो सुनि मैं हिरदे दुख लह्यो ॥ ३० ॥
कूकर होइ लगौ तुम गैल[2]। तबि जानहु जबि हुइ फल फैल[3]।
अबि लौ रस है हम तुम मांहि। अधिक बिरोध बधावहु नाँहि ॥ ३१ ॥
मो सों द्वेष रचहि बिन जाने। सो आशा जीवनि किम ठाने[4]।
शाहु दिवान मरातब मोहि। कहौ बाक मानहिं तिम होहि[5] ॥ ३२ ॥
कनका अबहि हुतासन द्वैष[6]। समझहु कीजहु नहीं विशेष।
इत्त्यादिक लिखि के बिच पाती। लिखि अनीति को सुलगति छाती ॥ ३३ ॥
एक निसा दिल्ली दिज रह्यो। बड़ी प्रात चलि चंदू कह्यो।
पशचम मुख करि गमन्यो तबै। सनै सनै मग उलंघ्यो सबै ॥ ३४ ॥
गुरुपूरि बिखै प्रवेश्यो आइ। निस परि गई बस्यो इक थाई।
भई प्रात गुरु सभा लगाई। संगति सिख पसंद समुदाई ॥ ३५ ॥
बिप्र आइ करि आशिख दीनि। पाती बैठि अग्र को कीनि।
ले सिख गुरु के कर पकराई। खोलि पढ़ी चंदू चतुराई ॥ ३६ ॥
जानि कुटिलता मूरख केरी। उत्तर कहति भए तिस बेरी।
माननीय गुरु सिक्ख हमारे। करहिं तथा इह जथा उचारें[7] ॥ ३७ ॥
श्री नानक आदिक गुरु सारे। जानति रहे इनहु बहु प्यारे।
हम भी मानति हैं सिख बाक। कह्यो तिनहू नहि लीजहि साक ॥ ३८ ॥
सो किम फेरि सकहिं मन जानो। तूम क्यों अबि ऐसे हठ ठानो।
अपर थान नाता करि दीजहि। जो अपने समसर लखि लीजहि ॥ ३९ ॥

दोहरा

सुत, तिय, धन, तन आदि सभि तजिति न लावौं देरि।
सिक्ख वचन को त्यागबो तऊ न हमते हेरि ॥ ४० ॥

चौपई

होइ सिक्ख्य एतो पद पाए। सकल जगत के पूज बनाए।
सिख के समसर[8] अपर न प्यारो। सासि सासि[9] महिं सिक्ख संभारो ॥ ४१ ॥

---

1. धनी लोगों के अनेक (विवाह) होते ही हैं। 2. तुम्हारे पीछे। 3. फल फलेगा। 4. मुझसे वैर करने वाला जीवन की क्या आशा रख सकता है। 5. (बादशाह भी) मेरा कहा मानता है और वैसा करता है। 6. अब द्वेषाग्नि कण वत् है। 7. जैसा ये कहें, वैसा हम करें। 8. समान। 9. श्वास-श्वास।

पूजनीय हैं सिख्य महांन। तन धन मेरो हैं सिक्ख प्रान।
सिक्खनि की करुना मुख पय्यै। कह्यो तिनहु के किम हटकय्ये ॥ ४२ ॥
बिशनु भगत बतसल भगवान। जिम तिन के प्रिय भगत महांन।
तथा हमारे सिक्खनि केरी। श्री सतिगुरु सो प्रीति घनेरी ॥ ४३ ॥
हम ते लियो जाइ नहिं नाता। कहु दिज चंदू कहु बख्याता।
सुनति बिप्र ने गिरा बखानी। शाहु दिवान अधिक हठ मानी ॥ ४४ ॥
परहि बैर बहु काज बिगारे। चहै सु करै महा बल धारे।
हटी सगाई सम दुख औरि। नहीं होति मानहिं सभि ठौरि ॥ ४५ ॥
हित रावर को मैं शुभ कह्यो। जथा भविख्यति बरतहि लह्यो।
लिहु नाता हुइ शाँति बिखेरा। नांहि त इस फल कपट घनेरा ॥ ४६ ॥
सभा चुके पछुतावनि रहे। भलो न कर्यो आपि को कहें[1]।
यांते मानि लेहु मति मेरा। दुह दिशि बधहि प्रमोद बडेरा ॥ ४७ ॥
नतु संसै जीवनि महिं होइ। जेतो बल करि है सभि कोइ।
सुनि श्री अरजन दिज ते बाति। बोले श्री मुख ते मुसकाति ॥ ४८ ॥
हम किसहूँ सों बैर न करैं। किस को बुरो न हिरदै धरैं।
करहिं निरबैर संग जो बैर। तिस के जुग लोकनि क्या खैर ? ॥ ४९ ॥
सभि को पति परमेशुर अहै। सुखदुख की सुधि जग की लहै।
भला बुरा जो करम करंते। तिन ते सुख दुख जीव धरंते ॥ ५० ॥
चितवति बुरा, बुरा फल पावै। इही नेम प्रभु ते बनि आवै।
पर को खनहि कूप हित बुरे। झरे गिरै सु बहु दुख मरे[2] ॥ ५१ ॥
इम कहि तूपनि भए गुसाईं। दिज उठि गयो बहुत पछुताई।
दिल्ली पुरि को होई निरास। चंदू को सुधि दई अवास ॥ ५२ ॥

दोहरा

चंदू सुनि जर बर गयो नेक मान्यो त्रास।
करीजाति मैं हीनता हतौं जतन निरजास ॥ ५३ ॥
गुरु घर सों रुचि द्वैष को बुरी करनि तबि लागि।
घाति बिचारति पिखति नित चुगली उगल कुभाग ॥ ५४ ॥
बहुर कथा इह कहै गे दुषटी दुषट जु कीनि।
श्री हरि गोविंद ब्याहु को श्रोता सुनहु प्रबीन ॥ ५५ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'चंदू को प्रसंग' बरननं नाम अष्टमो अंशु ॥ ८ ॥

1. 'भला न किया' ऐसा अपने को कहेंगे। 2. जो दूसरे के लिए कुआं खोदता है, (वह) खड्डे में गिरकर दुःख पाता है।

अंशु ६

मेल आवण प्रसंग

दोहरा

बासर[1] कितिक बिताइ करि श्री गुर अरजन नाथ ।
चितवति नंदन ब्याह को बडि उतसव के साथ ।। १ ।।

निसानी छंद

अगहनि बीत्यो मास जबि पुन पूस सु आयो ।
समै महाँ उतसाह को जान्यो नियरायों[2] ।
महांदेव सों मिलि गुरु बैठे इक थाना ।
करी वारता बहुत ही परसंग जि नाना ।। २ ।।
बहुर ब्याह की बाति को सभि जिकर सुनायो ।
एक मास ही बिचि रह्यो दिन निकसु आयो ।
बड़ो भ्रात अबि दुरि है बड धरति बिरोधा ।
नम्र भए, नहिं मानही, राखहि उरक्रोधा ।। ३ ।।
चहियहि अबहि बलावनो इहु उचित महाना ।
सहत कुटंब सु आवनो होवहि इस थाना ।
महांदेव बोल्यो सुनति भेजहु लिखि पाती ।
को नर आछो जाइकै आनहि भलि भांती ।। ४ ।।
सनमानहु सभि रीति तै है भ्रात बडेरो ।
ज्यों क्यों करि तिस आनियै[3] आछी बिधि हेरो ।
परने मरने महिं सरब सनबंधि मिलंते[4] ।
इहि जगत की रीति है सभि नर वरतंते ।। ५ ।।
शादी तुमरै सदन है रूठे सु मनाओ ।
भ्राता करहु इकत्र सभि वडित जिम पाओ ।
शोभा है बहु मेलि की बंधुप समुदायो[5] ।
जाति बिखै सो बडा हुइ सभि सों बनि आया ।। ६ ।।

---

1. दिन । 2. निकट आया । 3. बुलाइए । 4. विवाह और मृत्यु पर तो सब सम्बन्धी मिलते ही हैं । 5. सब सम्बन्धियों के मिलाप की शोभा है ।

महांदेव के बाक को सतिगुरु ने माना ।
लिखी पत्रिका तबहि गुरु बडिआइ महाना ।
मिहरवान नंदन जथा हरि गोबिंद तैसे ।
ब्याह समां इनको अबहि भेज्यो लिखि जैसे ॥ ७ ॥
अपनि जानि आवहु इहाँ तुम काज रचावो ।
जिम आइसु दिहु करहिं तिम जिस ते जसु पावों ।
क्रोध बिरोध न कीजीए हम को लघु जानो ।
हान लाभ तुम को अहै जसु अपजसु सानो ॥ ८ ॥
हम लघु तुम भ्राता बडे सागरी विधि जानो ।
चतुर महाँ बिवहार महिं सभि ते नहिं छानो[1] ।
इत्यादिक लिखि सिख पठ्यो जंगल दिशि[2] जाही ।
ग्रामनाम कोठा अहै बासहि तिस मांही ॥ ९ ॥
कावरि[3] भरि पकवान की संग करे कहारा ।
गमने ले करि पंथ को गे सलिता पारा ।
उलंघि बिपासा सतुद्रवा[4] कोठे कहु आए ।
जहिं प्रिथीआ बैठ्यो सुन्यो तिस निकट सिधाए ॥ १० ॥
अग्र मिठाई को धर्‌यो पाती कर दीनी ।
गुरु दिशि ते बंदन करी बहु धरी अधीनी ।
पाती खोल्ही पठी जबि दुख रिदा परोयो ।
चितवति सभि बिधि भयो बड, सुत ब्याह संजोयो[5] ॥ ११ ॥
वधति गयो दिन प्रति अधिक, नहिं चल्यो उपाऊ ।
किम गहाइ मरवाइ हौं, को घात न पाऊं ।
इम मन महिं संकट लह्यों पठिकै पुन पाती ।
उतसव सुनि कै अनुज कौ जनु फाटति छाती ॥ १२ ॥
मुख ते कहि सिख साथि तबि को हमरो भाई ।
दुशमन जानति हौं महाँ, तिह साँझि न काई ।
घर दर मेरो लूटि कै पुरि वहिर निकासा ।
तुहमत लाइ तुफान की[6] सभि बिखै प्रकाशा ॥ १३ ॥
महां कठोर निलाज है, घट कपट बिसाला ।
मुख ते मीठा उज्जला अंतर ते काला ।

1. सब जानते हैं कि आप समझदार हैं । 2. मालवा की ओर । 3. बहंगी । 4. शतद्रु । 5. रचा हैं । 6. भारी लाइन लगाकर ।

पाइ पिता की वसतु को बड मालिक होवा ।
तिसको फल पायो नहीं संकट नहिं जोवा ॥ १४ ॥
मेल हमारो रहि चुकयो, नहिं बदन मिलै हैं[1] ।
शाहू पास गहिवाइ करि अविलोक सुलैहैं ।
उर गरूर गुरुता लहै नहिं जानै आना[2] ।
शाहू दिवान महान सों जिन बाद उठाना ॥ १५ ॥
कहाँ अलप हम, कहाँ सो जहिं बैर लगायो ।
निज जीवनि नहिं चाहतो दिल कुतो बंधायो[3] ।
मैं जावों जवि ब्याह मैं चंदू सुनि लै है ।
करहि बैर मो सों तवहि सभि किछु बिगरै है ॥ १६ ॥
यांते मैं किम जाइ हौं, पुन दुशमन मेरा ।
नहिं भ्राता मन जानतो, छल करति बडेरा ।
लै जावो मिषटान को मैं नांहि न जावौं ।
जीवति मिलौं न प्रीति किर, छाती तपतावौं ॥ १७ ॥
उठहु जाहु मम पास तै नहिं बिलम लगीजै ।
अनिक जतन ते नहिं मिलौं अवि जाइ कहीजै ।
इत्यादिक कहि क्रोध सों सिख दियो उठाई ।
कावर सभि मिषटान की हटि करि पुरि आई ॥ १८ ॥
आइ सिक्ख सतिगुरु को वंदन पद कीनी ।
प्रिथीए की सभि बारता थिति हुइ कहि दीनी ।
क्रोध बिसाल कराल तिस उर बैर धरंता ।
चाहति है गहिवाइबो प्रानन को हंता ॥ १९ ॥
सुनि श्री अरजन जानि करि तूषनि ही ठानी ।
बुरा भला किछू नहिं कह्यो भावी असमानी ।
महांदेव को फेर तवि निज निकट बुलायो ।
बड़े भ्रात बिरतंत को कहि सकल सुनायो ॥ २० ॥
तिह सो मेल न बनति है. टूट्यो नहिं थोरा ।
जो चाहति है रिस धरे हनि प्राननि मोरा ।
पुशतनि लौ किम मिलहि नहिं, ऐसी तिन कीनी ।
गयो पुकारू फिरि रह्यो रिस तजी न चीनी ॥ २१ ॥

---

1. मुँह नहीं लगेंगे । 2. गुरुआई लेकर मन में अहं आ गया है । 3. जाने मन कहाँ बंधा (लीन) हैं ।

महांदेव ने सुनि भन्यो क्रोधी सो मानी।
उचित रीति तुम ने करी, अनउचित न मानी।
हेरि हेरि ऐश्वरज को दुख पाइ घनेरे।
समता चाहति किम लहे नहिं भाग बडेरे ॥ २२ ॥
श्री अरजन जी पुन भन्यो समि मेल बुलावैं।
गोइंदवाल खडूर ते सुनि करि चलि आवै।
कावर भरे कहार गनि पठिए पकवाना।
लिखी पत्रिका सभिनि सो करि प्रेम महाना ॥ २३ ॥
सरब संगि परवार ले इति दिशि को आवो।
हरि गोविंद विवाहु लखि नहिं देर लगावो।
गोइंदवाल पठाइओ सिख दे करि पाती।
मिल्यो जाइ करि मोहरी सुनि सीतल छाती ॥ २४ ॥
सभि कुटंब हरखति भयो निज उतसव जाना।
तथा जाइ दातू निकट बिरतांत बखाना।
सुनति सुधासर को चह्यो करिबे प्रसथाना।
त्यार सरब परवार भा करि हरख महाना ॥ २५ ॥
पुन अपने ससुरार घर इक मनुज पठावा।
मउ[1] सु ग्राम को नाम तिह सुधि सकल सुनावा।
क्रिशन चंद[2] आनंद लहि धनवंती[3] दारा।
दोहित को उतसव सुन्यो, कीनिसि बड त्यारा ॥ २६ ॥
ब्रिंद मसंद हकारि गुरु आइसु फुरमाई।
त्यार समिग्री करहु सुभ चहिय जु समुदाई।
चंदोए[4] बहु मोल के झालर झमकंती।
खीनखाफ[5] लागहि जरी सुन्दर दुतिवंती ॥ २७ ॥
रेशम की डोरैं लगी बहु बरन बनावौ।
मखमल ने सभि फरश[6] कोगन दरब लगावौ।
करौ कनात बनात की तंबू जु बिसाला।
चाँदी की चोबैं रचिर कीजै दरहाला[7] ॥ २८ ॥
स्यंदन[8] सकटनि त्यार हुइ जो चहिय करावो।
आतशबाजी होहि बहु तिन दरब दिवावो।

---

1. गुरु अर्जुनदेव जी के ससुराल का गाँव, जो तहसील फलौर में है। 2—3. गुरु अर्जुन के ससुर-सास। 4. खैमे, तंबू। 5. कीमखाब (मूल्यवान वस्त्र)। 6. बिछाई। 7. शीघ्र। 8 रथादि।

ज़ीन तुरंगनि के नवें लीजहि बडि मोले।
अलंकार घरिवाइ करि साजहु सभि टोले ॥ २९ ॥
लघु नौबत आइसु दइ दिन रैंन बजावो।
तुती अपर नफीरींआं निज संगि मिलावों।
डफ बाजति जुत वंसरी बड घौंस गहीरं।
पटह पणव[1] की धुनि उठहि सुनि होवहि भीरं ॥ ३० ॥
वाजहि ढोल अरु बंसरी दिन प्रति गुरुद्वारे।
महाँ कुलाहल होंति है सुनि हरखति भारे।
अनिक कराहे धरि दए पकवान पकावैं।
भांति भाँति की स्वादि महिं मेवे सु मिलावैं ॥ ३१ ॥
मोदक, खुरमे, अरु बरे दधि लवनि रलाए।
चिरवे बडे जलेब जुति इत्यादि बनाए।
मेल लग्यो आवनि तबै हरखति नरनारी।
पहरि बिभूखन बसन शुभ बडि शोभा धारी ॥ ३२ ॥
गुइंदवाल ते मोहिरी इसत्री गन ल्लायो।
रिदे अनंद अनंद[2] मिलि संसराम सु आयो।
सुंदर जुति गमने सकल स्यंदन चढि चाले।
कितिक अरूढे सकट पर शिंगार बिसाले ॥ ३३ ॥
उतरे निकट खडूर मैं दातू घर जाए।
करी सेव सभि भांति की निस तहाँ बिताए।
उठे प्रात करिबै गमन रथ सकट सु जोरे।
आरूढे बड चौंप जुति चलि गुरु पुरि ओरे ॥ ३४ ॥
सभि कुटंब को संग ले दातू भा त्यारी।
चढि चढि अपने जानु[3] परि गमने हित धारी।
दोनहु थल ते चालि करि गुर नगरी अए।
कूप शनाने प्रथम पुन अंम्रितसर न्हाए ॥ ३५ ॥
हरि मंदिर सुंदर सभिनि बंदन को कीनी।
दरशन करि जसु उचरते परदछना दीनी।
पुनि सतिगुरु के सदन को गमने समुदाई।
मिलि मिलि करति प्रणाम को बहु भनै बडाई ॥ ३६ ॥

---

1. छोटे-बड़े ढोल। 2. बाबा आनंद जी हृदय में आनन्द भर (आए)। 3. यान सवारी।

जथा जोग अरजन गुरु सगरे सनमाने।
सुंदर सदन निवेस दे[1] बच मधुर बखाने।
महाँ देव सों मिले सभि धरि प्रेम उदारा।
करति परसपर बंदना निज कुशल उचारा ॥ ३७ ॥
वृड्ढा अरु गुरुदास जुत मिलि आनंद पाए।
साल्हो आदि मसंद गन सभि सीस निवाए।
जहा कहाँ की संगताँ सुनि सुनि चलिआई।
धरहिं अकोर[2] अनेक विधि गुरु निकटि रहाई ॥ ३८ ॥
अनगन नर की भीर भी उतसव हुइ भारी।
भोजन बनिह त्यार बहु जिन स्वाद उदारी।
दिनप्रति अधिक अनंद भा को कहै बनाई।
हरि गुविंद जी तबि अए निज ग्रीव निवाई ॥ ३९ ॥
तुरत अंक ले मोहरी निज गरे लगायो।
करि दुलार सिर सूंघके देखति हरखायो।
मिलि अनंद संसराम जुति दातू भरि अंका।
करहिं सराहनि रूप को बोलहिं सहि शंका ॥ ४० ॥

इति श्री गुर प्रताप सुरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'मेल आवण प्रसंग' बरननं नाम नवमो अंशु ॥ ९ ॥

1. स्थान दिया। 2. भेंट।

अंशु १०

ब्याह प्रसंग

दोहरा

नारि मोहरी की समुति मिलि गंगा के संग ।
नेहुं जनावति अधिक ही करि करि हिदै उमंग ॥ १ ॥

पाघड़ी छंद

गन अवला अपर मिलंति संग । सनमानति सभि कहि म्रिदुल गंग ।
दातू सु त्रिया मिलि अनंद कीनि । हित बैठनि चारु आसनि सुदीन ॥ २ ॥
पुन बुझनि लगी कित हरि गुविंद । दिखरावहु मुहि लालस विलंद ।
कहि गंग गयो अबि वहिर थान । आए ऐसुने सु जवि प्रीति ठानि ॥ ३ ॥
हित मिलनि करति बड चाव चीत । तिन निकट होहिंगे धरत प्रीत ।
इमि कहि सु दास भेज्यो तुरंत । घर बिखै आनि मिलिबो चहंति ॥ ४ ॥
श्री अमर पुत्र के निकट हेरि । लीन सि हकार जो गयहु चेर ।
निज साथ ग्रानि करि घर मझार । सभि त्रियनी हरख सूरति निहारि ॥ ५ ॥
त्रिय मोहरी जु, गहि कंठ लाइ । बहु चीत प्रीत गोद सु बिठाइ ।
सिर हाथ फेरि मुख हेरि हेरि । करती दुलार बहु फेर फेर ॥ ६ ॥
श्री हरि गुविंद कर बंदि बंदि । सभिहूनि बंदना करि अनंद ।
सगरीनि[1] गोद लेकरि दुलार । चिर जीव आशिखा देति प्यार ॥ ७ ॥
नर नारि मेलि होयहु बिसाल । करि जथा जोग सेवा संभालि ।
दिन प्रति उछाह बधतो बिलंद । जनु मीन होति सागर अनंद ॥ ८ ॥
इम बसे जामनी जबि बिताइ । सर मज्जति मंदिर दरस जाइ ।
श्री अरजन को ससुरार जोइ । गुर पुरी अयो पिखि हरख सोइ ॥ ९ ॥
तब क्रिशन चंद सुनिओ अवति[2] । उठि आगे श्री अरजन तुरंत ।
लखि जगत रीति बंदन सु कीनि । आसनि बिठाइ सनमान दीनि ॥ १० ॥

---

1. सबने हा । 2. आते हुए सुना ।

श्री हरिगुविंद सुनि आइ धाइ। करि नमो तुरत नाते सु पाइ।
धनवती सासु गुर की सुनीति। मिल सुता संगि धरि प्रीति चीति ।। ११ ।।
नर नारि अपर परवार केरि। मिलि मिलि अनंद सुख हेरि हेरि।
कीनसि निवेस सुन्दर अवास। तवि मात मात के आइ पासि ।। १२ ।।
मिलि हरि गुविंद बंदन सु कीनि। धरि हरख उर आशिख सु दीनि।
गन मेलि परसपर मिलहि चाइ। कौतक हुवंति शुभ थाइं थाईं ।। १३ ।।
संगति मसंद अरू मेलि आइ। बहु भई भीर बाजति बधाइ।
इम कितिक द्योस बीते मिलति। सभि करी त्यार वसतू तुरंत ।। १४ ।।
मंगवाइ सरब को गुर निहार। तंबू कनात कीने उदार।
रथ बहिल साजि सुन्दर शिंगारि। जिनि लगे घुंघरू बजति चारु ।। १५ ।।
श्री हरि गुविंद चौकी बिठाइ। त्रिय मिलि सुहाग न गीति गाइ।
मरदन करंत बटणा[1] सु अंग। सभि विखै अधिक आनंद गंग ।। १६ ।।
बलिहार हेति पिखि सुत सरूप। दिन प्रति उदोति सुन्दर अनूप।
कर बंधि कंगणा सगुन संगि। पट पीत पहिर करि सरब अगु ।। १७ ।।
कुल रीति करी जेतिक बताइ। दिन चढनि बरात समीप आइ।
श्री अरजन त्यारी समि कराइ। जनु करहि शीघ्रता लें बनाइ ।। १८ ।।

दोहरा

जेवर जरे जराइ जे जबर जवाहर ज्योति।
जाँबूनद[2] दमकति महिद, पहिरे शोभ उदोति ।। १९ ।।

पाधड़ी छंद

श्री हरिगुविंद तन करि शिंगार। सभि बसत्र विभूखन चारु डारि।
सिर पेच[3] सीस पर अति सुहाइ। जिस पर जिगा[4] सु हीरे जराइ ।। २० ।।
कलगी उतंग जिह जगति जोति। मुख मंडल शुभति अनंद होति।
कुंडल सु डोलि गोलैं कपोल[5]। शोभति अमोल जबि होत लोल[6] ।। २१ ।।
मुकता सु माल गर मैं बिसाल। भुजदंडनि अंगद दुति उजाल।
हाटक जड़ाव कर कटक पाइ[7]। छबि छाप छलायनि स्वछ छाइ ।। २२ ।।
कर बंध्यो कगणा शोभ देति। पट पीत पहिर दुति परम लेति।
झूलयंति छतर फिर फिर फिराइ। ढुरियंति चौर चारू सुहाइ ।। २३ ।।

---

1. हल्दी आटा आदि का लेप। 2 स्वर्ण। 3 पगड़ी। 4. पगड़ी पर लगाने का आभूषण। 5. गालों पर सुन्दर गोल बालियां लटकती है। 6. जब हिलते है। 7. स्वर्ण के जुड़ाऊ कड़े हाथों में डाले हैं।

तबिगई गंग ले गुरु सथान। इसत्री समूह मिलि करति गान।
तबि हने डंक धौंसा घुंकार। डफ पणाव पटहु धुनि भी उदार॥ २४॥
तुररी नफीर छैणे बजंति। गन ढोल बंसरी धुनि उठंति।
गन थार भरे मोदक बिलंद। थिर पौर दरशनी हाथ बंदि॥ २५॥
पुन अग्ग्र जाइ दरबार द्वार। करि नमो तहां बिनती उचारि।
इह दास आपको व्याह जाहि। तुम हुइ सहाइ दिहु विघन दाहि॥ २६॥
सभ थान करो कल्याण नाथ। निस दयोस दास के होइ साथ।
सुख संगि व्याह के सदन आइ। तुम ढिग कराहु बहु तबि चढ़ाइ॥ २७॥
हम पुत्र श्रेय हित गंग भाखि। गुरु दासनि की पुरवति भिलाख[1]।
पुन दीनि प्रदच्छन चार बारि। चहूं ओर निम्र ह्वे भाउ धारि॥ २८॥
सतिगुरु मनाइ ले तनुज संगि। हित ब्राति चढावनि गमनि गंग।
पुरि वहिर जाइ गन संग नारि। बादत बजंत धुनि एक सार॥ २९॥
वाहन अनेक निकसंति चारु। स्यंदन सुरंग ज़र सो उछार[2]।
किसहू तुरंग किस ब्रिखभ जोरि[3]। जिय केर पुषट तन महिद जोरि॥ ३०॥
घंटे ठणंक, घुंघर झणंक। प्रेरक सबिद्य तोरति निशंक[4]।
बहु बहिल वेग ते चलि बिलंद। सुन्दर शिंगार पिखि दे अनंद॥ ३१॥
निकसे कितेक चढिकरि तुरंग। जो चलति चाल बड बेग संगि।
बहु हेम रजति जुत सजति ज़ीन। पट अलंकार पहिरे नवीन॥ ३२॥
चढि छैल[5] कुदावति चलति गैलि। पुरि तजि बरात गई वहिर फैलि।
श्री अरजन तबि दरबार जाइ। पित ध्यान धारि करि सिर निवाइ॥ ३३॥
ले ब्रिद्ध संगि गुरदास आनि। अरु महांदेव बड भ्रात जानि।
स्यंदन चढाइ सनमान कीनि। पुन दातू मुहरी बोलि लीनि॥ ३४॥
जुत अनंद भ्रात संसराम जोइ। बच म्रिदुल सुनति रथ चढति सोइ।
पुन क्रिशन चंद नंदन समेत। हुइ करि अरूढ बड शोभ देति॥ ३५॥
जेठा पिराण अरु बिधियचंद। चढिकरि सु लंग[6] पैंड़ा बिलद।
गन भल्ले तेहण सहत दास। गुरु सिक्ख चले धरि कै हुलास॥ ३६॥
सगरे मसंद लहि लहि अनंद। सभि चढे जानु पिखि पिखि मुछंद।
साल्हो अरूढ़ि करि सु चालि। अरु उमर शाहु कल्यान लाल॥ ३७॥

---

1. अभिलाषा पूर्ण करो। 2. जरी के आवरणों सहित। 3. किसी को घोड़ा और किसी को बैल जुते थे। 4 रथवाही विद्यवान् उन्हें निःशंक चलाते हैं। 5. बांके जवान। 6. पूरा नाम-लंगाहा।

मोरनि मनिंद घोरनि चलाइ। जुत बसन बिभूखन दुति बढाइ।
अरु और नाम गिनीअहिं कितेक। चाले बराति साऊ[1] अनेक॥ ३८॥
श्री अरजन सिवका[2] पर अरूढि। जिह जरी लागि दुति है अगूढ।
बिच मुकर जरे मलहीन चारु। लटकंति जरी गुंफनि सु लारु[3]॥ ३९॥
श्री हरिगुबिंद पट पीत शोभ। चढ़ि हैं कुदाइ कवि चित्तलोभ।
जनु सझ समै घन अलप होइ। बर बरहिं[4] नचावति चलति सोइ॥ ४०॥
इक दिशा बजति बाजे उदार। इक दिशा गीत गन गाइं नारि।
छणकार रथनि उत अधिक होइ। इक दिशा कुदावति हयनि कोइ॥ ४१॥
बड शबद चक्करनि[5] भरी भीर। नर ब्रिंद कुलाहल अधिक भीर।
हुइ हयनि हिरेखा धुनि उठंति। शुतरंनि उपर सुथरी बजंति[6]॥ ४२॥
कुछ कही बात नहिं सुनिय जाइ। इम पणव पटह ढोलादि वाइ।
गुर पुरी छोटि उतसव बिसाल। जनु बिच न मेय बाहर उछालि॥ ४३॥
गमने सु पंथ दिन रहति जाम। जुग कोस जाइ ठान्यो बिस्राम।
चलि प्रथम सिवर किय थोरि दूरि। उतरी बरात शोभंति रूर॥ ४४॥
गन त्रीय संग ले गंग आइ। निज सदन प्रवेशति रुचिर गाइ।
सुख चहति पुत्र महिं अधिक प्यारि। बिछर्यो सु प्रथम जिस नित निहार॥ ४५॥
सुत सहत सनूखा पिखिव फेरि। उर सिमरि सिमरि कहि बेरि बेरि।
गुरु क्रिपा पाइ आवहि अनंद। सभि त्रीय कहति 'तुव नंद चंद'॥ ४६॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'ब्याह प्रसंग' बरननं नामु दशमो अंशु॥ १०॥

---

1. भले-उत्तम लोग। 2. पालकी। 3. ज़रीदरी लड़ियाँ। 4. सुन्दर मोर। 5. पहिये। 6. ऊँटों पर नगाड़े बज रहे थे।

अंशु ११

बिआह प्रसंग

दोहरा

खान पान उत्तम कर्‌यो निसा बिखै परि सोइ।
श्री सतिगुरु अरजन निकटि हरि गुविंद तबि होइ ॥ १ ॥

पाधड़ी छंद

जबि रही जामनी आनि जाम। सिमरनि लगे सु करतार नाम।
रागी रबाब सु म्रिदंग संगि। इनको बजाइ गावति उतंग ॥ २ ॥
श्रुति सुखद गाइं गुर शबद राग[1]। सिख सुनति प्रेम करि महिद भाग।
इशनान आदि सभि सौचि कीनि। नर उठे सकल मति नाम भीनि ॥ ३ ॥
धंन धंन सतिगुरू भनति बैन। सतिनाम श्रोनि सुनि होति चैन।
पुनि बजे बाज पिखि प्रातकाल। सभि थिए त्यारि उर मुद बिसाल ॥ ४ ॥
असवारु भए सभि सजति जानु[2]। बड उठयो शबद नहिं सुनिय कान।
दिन चढे चलति हिम रुत महान। नहिं लगहि सीत हुइ तेज भानु ॥ ५ ॥
स्यंदन तुरंग अरु बहिल जाल[3]। वादित बजंति, चालति उताल।
बड धूलि उठति वाहन चलंति। गन शुतर गमनि भारनि उठंति ॥ ६ ॥
गन आइ जु मंगति पंथ बीच। सभि लहैं दरब हुइ ऊचि नीच।
जसु भनति ग्राम जे राह मांहि। ढिग आइ जाचि हटि छूछ नांहि ॥ ७ ॥
जनु धनु गन घन बरखति जाति। इम देति गुरू अरजन सु दाति।
चलि सने सने पहुंचे खडूर। तबि आइ दातु गुरु के हदूर ॥ ८ ॥
बच कह्यो करहु डेरा सथान। मैं चहौं दियो सभि खान पान।
पुरि गोंदवाल जे चहहु जानि। सभि होहिं श्रमति वड खेद मानि ॥ ९ ॥
हित ब्याह आवनो नित न होइ। पहुनाई[4] प्रिय मुझ अधिक जोइ।
इम दातू ते सुनि श्रौन बात। श्री अरजन उलंघनि नहिं चहाति ॥ १० ॥

---

1. कानों को सुख देने वाले गुरुवाणी के 'शब्दों' को राग में गाएं। 2. यान।
3 सभी। 4. मेहमानी, आतिथ्य।

कहि करि निदेश कीनसि निवेस। सभि परे उतर करि मुद विशेष।
श्री हरि गुविंद को संग लीनि। गुर अंगद थल चहि दरस कीनि ॥ ११ ॥
धन पंच सहस गिन लीनि साथ। परसादि थारि भरि घरहि हाथि।
श्री अरजन गमने अनंद धारि। चलि पहुंचति भे दरबार द्वारि ॥ १२ ॥
अरदास खरे ह्वै करि कराइ[1]। बहु नमो कीनि धरि सिर निवाइ।
परदछन[2] दीनि पुषपनि चढाइ। उरभाउ धारि धूपनि धुखाइ[3] ॥ १३ ॥
जबि रह्यो दिवस घटिका सुचार। गुरु सभा लाइ दरबार द्वार।
सुनि चौकी सोदर संझि आइ। तबि विच निवेस प्रविशे सु आइ ॥ १४ ॥
सभि खानपान की सेव जोइ। हित लाइ सु दातू कीनि सोइ।
सुख के समेत जामनि बिताइ। उठ सौच क्रिआ कीनिसि नहाइ ॥ १५ ॥
चढिकै बरात गमनी सु राहु। जिस बिखै छैल करते उभाहु।
त्रै कोस हुती गोइंदवाल। तहिं गए जाइ पहुंचे उताल ॥ १६ ॥
सभि उतर बावली करि शनान। करि नमो जहां श्री अमरथान[4]।
पुन मिले जाइ मोहन सु पास। कर बंदि वंदना कीनि तासि ॥ १७ ॥
श्री हरिगुविंद सिरचरन धारि। बलिहार हेति तन दुति निहारि।
लहि सोढि बंस बडिता बिलंद। जिन शुभति रूप जनु उदय चंद ॥ १८ ॥
जिन अंक लीनि धारति दुलारि। पिखि वधो प्रीति लागंति प्यार।
अस कौन पुरख देखे सरूप। नहिं करहि प्रेम अस लहि अनूप ॥ १९ ॥
पुन ग्रिंथकरनि की बाति कीनि। श्री अरजन सुधि सभि उचरि दीनि।
इह क्रिपा आपकी भी बिसाल। नर मंद मति कलि काल जाल ॥ २० ॥
इसके अलंब होद सि उधार। उपकार सहां जग पर तुमार।
सुनि मोहन कहति सचरो बिचार। मम पिता करनि लागे उचार ॥ २१ ॥
नहिं लिखनहार ढिग उर विचारि। संसराम पुत्र मेरो हकार।
इसको सिखाइ दिन थोर माँहि। तबि लिखनि लगायसि शब्द ताँहि ॥ २२ ॥
सभि गुरनि केरि बानी महान। करि खोजि रोज लिखि करि सुजान।
सभि शबद सकल पोथी सु कीनि। इह पिता मोहि उपकार चीन ॥ २३ ॥
जबि देवलोक पहुंचे क्रिपाल। तबि संसराम राखी संभालि।
तुम करी जाचना बहुर आइ। हम दई तबहि सुत ते मगाई ॥ २४ ॥
श्री अरजन, कहि अबि चलहु संग। निज सेवक ब्याहनि को उमंग।
तुमं बडे सदा हमरे अलंब। निज शरनि हेरि हति दुख कुटंब ॥ २५ ॥

---

1. स्वयं खड़े रहकर अरदास कराई। 2. परिक्रमा। 3. धूप-बाती जलाई।
4. गुरु अमरदास जी का स्थान।

सुनि मोहन उतर बहुर दीनि। सभि कुटंब संग हमरो सु लीनि।
हम सदा साथ तुमरे रहंति। नित मोहि भावतो रहि इकंत।। २६।।
सुनि क्रिपा भरे मातूल सु बैन। करि नमौ उठे पुन तांहि ऐन।
उलंघी बरात सलिता सु पार। बादित बज्जंति गमने अगारि।। २७।।
श्री हरि गुविंद निज संग लीनि। हुइ नदी पारि प्रसथान कीनि।
सुलतानपुरे पहुंचे सु जाइ। धन देति जाचतो जौन आइ।। २८।।
श्री गुरु निदेश लेकरि निवेस। उतरे समूह पिखि थान वेश[1]।
स्यंदन तुरंग दीनिसि लगाइ[2]। लगि खानपान सभि थाइंथाइं।। २९।।
श्री हरि गुविंद निज संग लीनि। गुरु नानक थल तिन दरस कीनि।
जहिं लगी दंताधावनि[3] सु बेरि। तहिं घरी भेटि कर जोरि हेरि।। ३०।।
पुनि करी कार मोदी दुकान। तिस दरस कीनि निज जोरि पान।
निज संग संगतां सिख महान। तिन सौ प्रसंग करते बखान।। ३१।।
दिन तीन रहि सु वेई मझार[4]। पुन निकसि लुटाइ वसतू उदार।
बहु देश विदेशनि फिरि विशेष। बिसतार दीनि सिक्खी सु वेष।। ३२।।
कलिकाल घोर अंधेर भूर। कीनसि प्रकाश जिम चढति सूर।
इम कहति दरस करि सकल थान। पुन बसे निसा निज सिवर आनि।। ३३।।
करि खानपान मिषटान आदि। नर भए सुपति परि साहिलाद[5]।
उठि के प्रभाति सभि हरख धारि। पहिरे सु बिभूखन बसन चारु।। ३४।।
वाहनि सजाइ निज निज बडेर। हुइ है ढुकाउ[6] मुख कहति टेरि।
सभि चढे बजति बाजे उदात। तुररी नफीर धौंसा घुंकार।। ३५।।
डफ, पणव, पटह,[7] मुरली बजंति। बड शुतरनि पसि सुथरी[8] चलंति।
स्यंदनि धवाइ घोरनि कुदाइ। बहिलनि चलाइ घुंघरू बजाइ।। ३६।।
इम मच्यो कुलाहल धुनि बिलंद। गमनें सु पंथ घरि घरि अनंद।
तबि गए सरब पहुँचे सु जाइ। अध गोस ग्राम डल्ला रहाइ।। ३७।।
तहिं उतर परे सभि जानु छोरु। सुधि गई[9] तबहि डल्ले सु ओरि।
सुनि श्रुति नराइण दास सोई। सभि करी त्यारि हित पठनि जोइ।। ३८।।
पकवान अधिक मिषटान लीनि। भरि काबर जेतिक खरच चीनि।
सजि वाहन अपने हुइ सचेत। चढ़ि चले अगाऊ लैनि हेति।। ३९।।

---

1. सुन्दर, बढ़िया। 2. स्थान-स्थान पर बाँध दिये। 3. दातून। 4. बेइं नदी में तीन दिन तक रहने की चर्चा। 5. आह्लाद सहित। 6. पहुँच रही है। 7. ढोल। 8. नगाड़ा। 9. सूचना गई।

अगवान आइ अविलोक ब्रिंद। तबि हने डंक बादित बिलंद।
छूटे निशान अगवानि जाति। जिन ज़री लागि बहु रंग भांति ॥ ४० ॥
दुहिं दिशिनि मेल इस रीति कीनि। जनु धोखि धोचि घन मिलति पीन[1]।
वाहनि[2] मजाइ बाहन[3] उठाइ। मिलि आप मांहि आनंद उपाइ ॥ ४१ ॥
जनु नदी हरख की उमडि दोइ। हुइ संगम अंग उमंग जोइ।
गन वसतु अग्र गुरु के टिकाइ। सभि परे पांइ चित चाइ चाइ ॥ ४२ ॥
बहु बिनै भनी सभि हाथ बंदि। हम अलप, लघू, तुम बडि बिलंद।
निज दास जानि पति लेहु राखि। दे दरस करी पूरन भिलाख[4] ॥ ४३ ॥
सनमान जानि गुरु तिनहुं केरि। पकवान लीनि दिय बांटि फेरि।
सभि जथा जोग करि तिनहुं साथ। करिबे ढुकाउ पुन चहति नाथ ॥ ४४ ॥
इकि महांदेव को दरब दीनि। गुरुदास ब्रिद्ध, दोनो सु लीनि।
पुन क्रिशन चंद थाती सुधारि। बरखावत[5] गमनहु गुरु उचारि ॥ ४५ ॥
तबि चले ग्राम के समुख होइ। नर मिले हजारों दिसनि दोइ।
गन बजति बाज भई धूम धाम। बड उठी धूलि लिय छादि ग्राम ॥ ४६ ॥
घन को ब्रखाइ घन मनहुं चारु। बड भयो शोर इक बारि झारि।
चढि के उतंग नर नारि हेरि। कहि बच 'बरात आइ बडेरि' ॥ ४७ ॥
शुभ थान दीनि डेरो लगाइ। करि रंक त्रिपत, धन को ब्रखाइ।
तंबू शम्यान दीने सु तानि। बड जै उतंग बहु शोभ वान ॥ ४८ ॥

दोहरा

बीच चंदोआ चानणी ताने रेशम डोर।
लगी कनात बनात की चहुं गिरदे दुति बोर[6] ॥ ४९ ॥
श्री अरजन निज तनुज जुति बैठे ब्रिंद मझार।
मनहुं सुधरमा शोभती बसन बिभूखन चारु ॥ ५० ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'बिआह प्रसंग' बरननं नाम इका-दशमो अंशु ॥ ११ ॥

---

1. जैसे तीखे बादल गरज गरज कर मिलते हैं। 2. वाहन, घोड़े आदि। 3. भुजाएँ। 4. अभिलाषा। 5. बरसाते हुए, न्यौछावर में धन फेंकते हुए। 6. शोभा में डूबी।

अंशु ११

ब्याह प्रसंग

दोहरा

श्री अरजन के साथ तबि मिलनि हेतु हितु धारि ।
त्यार नराइणदास भा गन वसतुनि संभारि ॥ १ ॥

चौपई

जरे जीन बाजी चपलावति[1] । गरे बिभूखन शोभ बढावति ।
बसत्र रेशमी छादनि कीने । गहे लगाम न थिरता लीने ॥ २ ॥
ले बहुमोले ललित दुकूल । श्री सतिगुरु के हुइ अनुकूल ।
ऊपर धरि करि गन दीनारु । ले करि संग नरनि परवारु ॥ ३ ॥
बंधप सखा सहित समुदाऊ । चल्यो नराइणदास अगाऊ ।
श्री अरजन सनमुख तिह समो । आइ मिल्यो करिबे चहि नमो ॥ ४ ॥
हुतो परोहति तिह समुझाइव । भुजा पसारि मिलहु गर लाइव ।
सम समधी इस समै बनंते । राउ रंक कैसे सु हुवंते ॥ ५ ॥
लौकिक बैदक रीति जु दोऊ । ब्याह आदि महिं करि सभि कोऊ ।
लाज छोरि करीअहि बिवहारे । समधी सों मिलि भुजा पसारे ॥ ६ ॥
सुनति नराइणदास बखाना । मैं कैसे करि इनहुं समाना ।
लोक प्रलोक सहाइक स्वामी । तीन भवनि पति अतरिजामी ॥ ७ ॥
इनके दास दास को दासा । किम समता करिहौं, हुइ हासा[2] ।
इम कहि करी अकोर अगारी । पर्यो चरन पर निरहंकारी ॥ ८ ॥
श्री अरजन समधी लखि भाऊ । पकरि उठाइ लियो गर लाऊ ।
जथा जोग करि लौकिक रीति । सनमान्यो सभि महिं लखि प्रीति ॥ ९ ॥
हेरि हेरि सिख सभि बिसमावहिं । धंन नराइणदास अलावहिं ।
आदर अधिक गुरु किय जांही । लग्यो गरे, इह समकों नांही ॥ १० ॥

---

1. चंचल, चपला के समान । 2. मज़ाक होगा ।

इम मिलिनी[1] करि घरौं सिधारा। श्री गुरु ज़नवासे[2] पग धारा।
लावां[3] लेनि समै तबि आयहु। धेनु धूलि पावनि दरसायहु[4] ॥ ११ ॥
दिजगन प्रेर्यो बैठें पास। भेज्यो मनुज नराइण दास।
लावां हित करीअहि आगवनू। मैं त्यारी जुति इसथित भवनू ॥ १२ ॥
जबि जनवासु बिखैं सुधि आई। हने डंक सभि बाज बजाई।
लघु दुंदभि बडि घौंस घुंकारी। तुररी, मुरलि, नफीर संभारी ॥ १३ ॥
पटह पणव बड ढोल बजाए। सुनति उठें ततछिन समुदाए।
दूलह श्री हरिगोबिंद चंद। गुरु नंदन सुन्दर सुखकंद ॥ १४ ॥
महांदेव, ब्रिध अरु गुरुदास। उमर शाहु, साल्हो गुरु पास।
ले गमने सभिहिनि को संग। हित लावां के चले उमंग ॥ १५ ॥
बादित बाजति जाति अगारी। कीरति भाट नकीब[5] उचारी।
आतपत्र[6] दूलहु पर फिरिही। चमर चारु सतिगुरु पर ढुरही ॥ १६ ॥
महिद कुलाहल सभि महिं होवा। त्रिय गन चाहति दूलहु जोवा।
सुनि बादित की धुनि इक बारी। बिभ्रम[7] भयो सभिनि मन नारी ॥ १७ ॥
तजी कार घर की उठि धाई। छुद्र घंटिका[8] ले गरि पाई।
अंजन अंज कपोलनि लायो। कंठहार कट सों लपटायो[9] ॥ १८ ॥
करति शीघ्रता चढ़ी अटारी। खरी सु दूलहु बदन निहारी।
बादित धुनि बड छुटी हवाई[10]। चढी गगन पुन हटि करि आई ॥ १९ ॥
जनु तारे टूटति चमकंते। भयो प्रकाश अकाश दिखंते।
छूटति बरूद भरे गंज घोरे। इत उत जरति वेग ते दौरे ॥ २० ॥
चादर झार छूटति फुलवाई[11]। देखति लोक हसति हरखाई।
देव देवनी दारुन[12] बने। छूटति बिलोकत मानव घने ॥ २१ ॥
अधिककुलाहल हरखति होवा। जरैं मताबी अदभुत जोवा।
भयो प्रकाश सभिनि महिं ऐसे। बिना तेज ते बासुर जैसे ॥ २२ ॥

---

1. मिलनी—इस रीति में समधी परस्पर मिलते हैं और वधु पक्ष के नाते वाले वर-पक्ष के नातेदारों को धन, वस्त्र आदि भेंट भी देते हैं। 2 जहाँ बारात को ठहराया जाता है। 3. फेरे। 4. गोधूलि का पावन (समय) देखा। 5. चौबदार। 6. छत्र। 7. घबराहट (अतीव प्रसन्नता की) 8. करधनी। 9. अंजन कपोलों पर लगाया एवं कठहार कटि से लिपटा लिया। 10. आतिशबाज़ी। 11. चादरें, झाड़ और फुलझड़ियाँ छूटती हैं। 12. बारूद के।

मनहुं मताबी पाइ बहाना। गुरु प्रकाश दिखाइ महाना।
देखि भए बिसमै नरु नारी। अस प्रकाश नहिं कबहुं निहारी ॥ २३ ॥

तिस प्रकाश महिं दूलहु देखै। बारि बारि बलिहार विशेखै।
कोठनि चढी निहार्रहिं दारा। श्री अरजन को करहिं जुहारा ॥ २४ ॥

सनै सनै देखति दिखरावति। समधी सदन सतिगुरू जावति।
बड़वा पर श्री हरिगोबिंद। गए ससुर के सदन अनंद ॥ २५ ॥

आइ नराइण दास अगारे। लेति प्रवेश्यो अंतरि द्वारे।
जहिं बेदी सुन्दर रचि राखी। गन बंधुप थित देखनि कांखी[1] ॥ २६ ॥

खरो हेरि श्री गुरु अगवानू। सभि आगै दूलहु दुति रवनू[2]।
सादर सगरे करे बिठावनि। चहुदिश बेदी के थल पावन ॥ २७ ॥

बिप्प्र उचार करनि तबि लागे। पूजति नवग्रैह गणपति आगे।
बीच हुतासन कीनि प्रकाशनि। पावति सरनी करति उपासनि ॥ २८ ॥

तबि दुलहन ढिग आनि बिठाई। जथाजोग सभि बिधि करवाई।
बरबर[3] सगफेरि करि फेरे। पाणग्रहण कीनसि तिस बेरे ॥ २९ ॥

मिलि सुरवधू करे छल बेसा। आनि प्रवेशी रूप सु बेसा।
रलि नारिनि मैं गीतिनि गावैं। सतिगुरु मंगल अधिक वधावैं ॥ ३० ॥

करति अपनि पौ सफल बिसाला। गुरु को दरसहिं अनंद उछाला।
त्रिया नराइणदास सुजानी। बिन जाने सगरी सनमानी ॥ ३१ ॥

ब्रिंदमेल घर बिखै सकेला। तिन मैं ते जानसि हित मेला[4]।
सुरनर बेस धारि समुदाए। मिले आनि बहु सेव कमाए ॥ ३२ ॥

जथा जोग श्री अरजन तहां। दियो दरब हरखे जहिं कहां।
बिप्प्र प्रसंसति धन हित चाऊ। कितिक सराहहि घरि घरि भाऊ ॥ ३३ ॥

साखोचार[5] उचारनि कीनिसि। सुन्यो सभिनि पुनि धन गनदीनसि।
इम लावां ले करि जसु साजा। बीच बेदिका उठ्यो समाजा ॥ ३४ ॥

श्री अरजन गमने जनवासे। छुटति मताबी होति प्रकाशे।
ब्रिंद मसालैं ज्वलति अगारी। बाजे वर्जहिं उठति धुनि भारी ॥ ३५ ॥

आइ थिरे जनवास मझारे। हित अहार गुरु बहुर हकारे[6]।
सकल बराति जाति हरखंती। आतशबाजी ब्रिंद छुटंती ॥ ३६ ॥

---

1. इच्छुक। 2. सुन्दर द्युतिवाला। 3. सुन्दर दूल्हा। 4. उनको भी जाने-अनजाने मित्रों-सम्बन्धियों में से ही समझा। 5. गोत्रोच्चार। 6. भोजनार्थ पुन: बुलावा आया।

सुन्दर मंदिर अंदर सारे। सादर कहि कहि पंति बिठारे।
पुन चौकी पर आसन डासा[1]। सतिगुरु थिरे[2] बिसाल प्रकाशा ॥ ३७ ॥
परसनि हारि[3] आइ समुदाए। धरे थार सभिके अगुवाए।
मोदक, खुरमे नुगदी[4] घनी। घेवर ध्रितिसिता बहुसनी ॥ ३८ ॥
स्वादिल महाँ अंम्रिति दीनि। मेवे ब्रिंद मिलौनी कीनि।
तुरत परोस्यो चतुरनि चारु। खानि लगे बहु स्वादि अहारू ॥ ३९ ॥
गारि गेरि गीतनि को गावैं[5]। सुन्दर रीतनि सभिनि सुनावैं।
बैठि झरोखनि कहि कहि नामू। मिली मनोहर त्रिय अभिरामू ॥ ४० ॥
सुनति मुदति गुरु सहत समाजा। समैं उछाह बिसाल विराजा।
सुनि सुनि पिखि पिखि दुह दिश हरखहिं। मनहुं अनंद उनव करि बरखहिं[6] ॥ ४१ ॥
इम अहार को अचवनि कीनि। उठी बराति लागि घन दीनि।
पाइ उछिसट[8] विखै बहु दरबा। खान पान करि गमने सरबा ॥ ४२ ॥

दोहरा

जनवासे महिं जाइ गुरु, सुपते निज निज थान।
अति अनंद उर पाइ कर सकल बरात सु जान ॥ ४३ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'ब्याह प्रसंग' बरननं नाम द्वादशमो अंशु ॥ १२ ॥

---

1. बिछाया। 2. गुरु जी बैठे, स्थित हुए। 3. भोजन परसने वाले। 4. बूंदी। 5. गाली-युक्त गीत गाने लगीं। 6. मानो आनन्द (की घटाएं) उमड़ कर बरस पड़ी हों। 7. जूठन।

अंशु १२
ब्याह प्रसंग

दोहरा

सुख सों बीती जामनी जाम रही जबि आइ।
गावति आसा वार जुत रागनि के समुदाइ ॥ १ ॥

हाकल छंद

गुर उठि कर सौचि शनाने। पुन बैठे एकल थाने।
निज रूप बिखै लिवलाई। मन थिर्यो समाधि लगाई ॥ २ ॥
तबि प्रातकाल हुइ गइऊ। सभि सौचा चारी भइऊ[1]।
गन वादित बाज बिलंदे। तबि उठि श्री हरगोविंदे ॥ ३ ॥
करि सौच शनान महाना। तन बसत्र पहिर दुति नाना।
दिन चढे दिवान लगायो। सिख संगति बहु छबि पायो ॥ ४ ॥
थित ब्रिंद मसंद मझारे। गन घनी तहां परवारे।
ब्रिध सालो अरु गुरुदासू। कल्ल्यान आदि सभि पासू ॥ ५ ॥
थित महांदेव गुरू तीरा। जिम बूझति भाखति धीरा।
तबि डल्ले ग्राम मझारी। सिख संगति बसहि सु सारी ॥ ६ ॥
हुइ इकठी ले गुर कारी। करि अपर उपाइन धारी।
घरि भाउ दरस को आए। जो सिक्ख कदीमी गाए ॥ ७ ॥
गुरू अंगद अमर सधीरा। हित सेवा रहे जु तीरा।
गन धरी अकोर अगारी। करि बंदति बंदन धारी ॥ ८ ॥
सिख शरधावान अनेका। जिन रिदै बिसाल बिबेका।
अस जानि गुरु सनमाने। ढिग बैठे हरख महाने ॥ ९ ॥
जो भए प्रथम सिख धीरा। सो बूझे[2] गुनी गहीरा।
को भयो महद गुरु प्यारो। सो हमरे पास उचारो ॥ १० ॥
सुनि सिक्ख्यनि जोरे हाथा। इस ग्राम दास गन नाथा[3]।
भा लालो, भाई धीरा। गुन सिक्खी के भरपूरा ॥ ११ ॥

---

1. शौच-स्नानादि आचरण वाले बने। 2 उनके सम्बन्ध में पूछा (गुरु जी ने)।
3. स्वामिन्! इस गाँव में आपके अनेक दास हैं।

जो रावरि बखशिश कीनी। सिख बहिलो हित करि लीनी।
श्री अमरदास सभि सोई। ढिग लालो के दई जोई॥ १२॥
अस सिक्ख अपर गन होए। जोगि निवे ते बहु जोए।
इक भयो सु भाई पारो। गुरु अमर केरि बहु प्यारो॥ १३॥
तिस ऊपर अधिक प्रसंने। गुरु भाणा जिन मन मंने।
उर ग्यान महिद गंभीरं। नित निशचल मन, उर धीरं॥ १४॥
तिस गुरुत्ता देवनि लागे। नहिं मानी मन बडभागे।
कर जोरति बिनै बखाने। हम सिक्खी महिं मन माने॥ १५॥
इहतुम को ही बनि आवै। हम सेवक सेव कमावै।
सुनि अमरदास गुर भाखा। जँ तेरी अस अभिलाखा॥ १६॥
तौ तनु को त्याग समावो। गुर बिखै एकता पावो।
इम आग्या सुनि घर आयो। ततछिन तनु तज्यो समायो॥ १७॥
इक बडवा चपल बली है। जिह सम नहिं और, भली है।
सो अमर गुरू ढिग भेजी। नहिं अपर चढनि दे तेजी॥ १८॥
पिखी अपने ढिग रखि लीनी। गुरू रामदास को दीनी।
श्री अंम्रितसर के थाना। तिस चढिकै कीनसि प्याना॥ १९॥

दोहरा

सो भाई पारो भयो बडो नाराइण दास।
जिस की तनुजा निज तनुज ब्याही धरे हुलास॥ २०॥

हाकल छंद

अबि सभि सिक्खनि की बिनती। जिम आए मिलि करि गिनती।
सो सुनीअहि करि निरधारा। इति आवन भयो तुमारा॥ २१॥
कुछ कीजहि चिन्ह इथाईं। सिख हेरैं सीस निवाई।
श्री अरजन सुनति प्रसंने। गुरु सिक्ख्यनि महिमा धंने॥ २२॥
नित चाहति पर उपकारा। हम बचन मानिबो धारा[1]।
जबि जाम रहै दिन आई। तबि करैं जि तुमहु अलाई॥ २३॥
इम कह्यो गुरू अरु संगति। जहिं नरनि हज़ारहुं पंगति।
सिख गमने नमहु करंते। शरधा उर भाउ धरंते॥ २४॥
गन मंगति जन तबि आए। बहु ग्रामनि भे इक थाएं।
तिस काल बिखै जस जाचे[2]। तस देति तुरत गुरु साचे॥ २५॥

---

1. धारण किया है। 2. जैसी याचना की।

गन ढाढी, भाट, कलावति। बहु डूम, बिप्प्र धनु पावति।
हुइ हरखति देति असीसा। गुर नंद जिवहु जुग बीसा ॥ २६ ॥
गन रंकनि को धन दीना। जसु करति जाति सभि लीना।
इम देति ढर्‌यो दिन जाए। हित असन[1] हकारनि आए ॥ २७ ॥
करि दूलहु सभिनि अगारी। पुन चली बराति पिछारी।
घर गए नराइन दासै। बडि धूमधाम चहुं पासै। ॥ २८ ॥
हरि गोविंद रूप सुहंता। सिर ऊपरि छतर झुलंता।
गुरु अरजन पर दुतिवारु[2]। करि चमर दुरावतिचारू ॥ २९ ॥
सभि बसन बिभूखन आछे। नर सभि बरात मैं काछे।
तबि मंदर अंदर गमने। करि पंकति बैठे रवने ॥ ३० ॥
तबि अए परोसनिहारे। जल ले करि हाथ पखारे।
सभि केरि अगारी थारा। बहु स्वादलि पाइ अहारा ॥ ३१ ॥
जो सपति बिधिनि पकवाना। बिच मेवे मिले महाना।
दधि संग बिसाल मसाले। गन बरे पकौरे डाले ॥ ३२ ॥
सभि अचते साद सराहे। पुन सूखम चावर चाहे।
जुगरीतनि के[3] तबि ल्याए। इक मधुर, सलवन मिलाए ॥ ३३ ॥
बहुसावग[4], गरी, बदामं। किय चतुरनि अति अभिरामं।
पिखि बैठी नागरि नारी। गन भूखन बसन शिंगारी ॥ ३४ ॥
कल कोकल कंठी गावैं। द्रिग खंजन अंज नचावैं[5]।
नर जे बरात अभिरामू। दें गारी ले करि नामू ॥ ३५ ॥
सभि रिदै अनंद वधावैं। हैं गारि तऊ मन भावैं।
रस रंग समै तिस होवा। मुदं करहिं परसपर जोवा ॥ ३६ ॥
अचि सनै सनै अस असना[6]। मुसकाइ दिपै दुति बसना।
मन सभि कै तबि बिरमाए। नहिं उठनि किसू मनि भाए ॥ ३७ ॥
सुख पाइ भनैं सभि ऐसे। अस उतसव कितहुं न कैसे।
उर बिसर्‌यो देश रु काला। अस आनंद भयो बिसाला ॥ ३८ ॥
तबि नीठि नीठि लै पानी। सभि करै पखारनि पानी।
पुन दीनि गिलौरी खाने[7]। मुख रंग सुरंगी बाने ॥ ३९ ॥

---

1. भोजनार्थ। 2. शोभायमान। 3. दो प्रकार के। 4. किशमिश। 5. अंजन डालकर नयन मटकाती हैं। 6. धीरे धीरे भोजन खाते हैं। 7. इलायची-सुपारी युक्त पान।

धन जथा जोग तहिं दीना। उठि गमने गुरू प्रबीना।
सिख संगति संग लए हैं। दिशि पूरब ग्राम गए हैं ॥ ४० ॥
तहिं खरे होइ मुख भाखा। सभि सिक्खनि की अभिलाखा।
चित चहैं कर्यो इसथाना। बनि है गुर चिह्न महाना ॥ ४१ ॥
जो आइ दरस को लै है। करि बंदन शुभ फल पै है।
टक वापी[1] कौ हम लाई। पुन पीछे लेहु बनाई ॥ ४२ ॥
इम कहि करि कही[2] मंगाई। वहु दीनसि बांटि मिठाई।
निज कर सौं टक्क लगायो[3]। पुन खोदयो पाड़ बनायो ॥ ४३ ॥
ढिग साल्हो को गुर हेरा। श्री मुख ते कहि तिस वेरा।
तुम रहो कितिक चिर ग्रामू। हित वापी करिबे कामू ॥ ४४ ॥
जबि त्यार सरब बनि जावै। गुरु वापी संगति न्हावै।
सतिनाम जपै लिवलावै। मनि बांछति सौ फल पावै ॥ ४५ ॥
इम कहि करि गुरु क्रिपाले। जनवासे को पुन चाले।
जो मंगति जन जबि आवै। धन ले जसुउचरति जावै ॥ ४६ ॥
गुरु आनि बिराजे डेरे। सिख संगति संग घनेरे।
'धंन धंन' उचारति बानी। तहिं कीरति भई महानी ॥ ४७ ॥
इम रहै तहां गति दाई। सभि ब्याह रीति करवाई।
जे लागि देनि अरु लैना। सभि करे महां गुन ऐना ॥ ४८ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'ब्याह प्रसंग' बरननं नाम त्रयोदशमो अंशु ॥ १३ ॥

---

1. बावली की काट। 2. कस्सी। 3. खुदाई के लिए पहली काट स्वयं की।

अंशु १४

बरात आगवन प्रसंग

दोहरा

श्री हरिगोविंद चंद के ब्रिंद नागरी नारि।
बिच बरात ते ले गए करि जबि लीनि अहार॥ १ ।

सवैया

देखि सरूप विशेख ही दूलो आनंद ते बतरावति हैं[1]।
दीरघ अंग. प्रलंब भुजा, अरबिंद बिलोचन भावति हैं।
केत्रित जानि गुरू सुत हैं गुरू हेरति सीस झुकावति हैं[2]।
हास बिलास करैं मिलिकै इक प्रेम धरे बलि जावति हैं॥ २॥

रूप दमोदरी* को जिम सुंदर त्यों हरिगोविंद रूप बिसाला।
ऐरी सखी इह जोरी जुरी सम, जीवो भोग भुगो चिरकाला।
भाग नराइन दास बडे जिस केरि दमाद भयो दुति जाला।
सुंदर लच्छन अंग समूह मनिंद बिलंद दिपै महिपाला॥ ३॥

सासु तबै बड भाग भरी निज अंक बिठाइ सनेह महाना।
सीस पै हाथ को फेरि सराहति, डीठ लगे नहिं, भै उर माना।
सारीआं सारीआं[3] आइ पिख्यो बलिहारीआं ह्वै मन को बिरमाना।
बोलि महां मधुरे बचनां हरिगोबिंद आनंद को प्रगटाना॥ ४॥

यौं मिलिकै सभि सौं शुभि रीति बिलास के हास करे मन भाए।
जानि समै निकसे तबि ही जनवास विखै हरि गोविंद आए।

---

1. दूल्हे से बातें करती हैं, आनन्द पूर्वक। 2. कई गुरु-पुत्र को गुरु जानकर प्रणाम करती हैं। 3. सब सालियाँ। *गुरु गोविन्द की पत्नी, नारायणदास की पुत्री। यहाँ दुल्हिन।

श्री गुरु बीच सभा के सुहावति, होइ समीप ते सीस निवाए।
बैठि गए मुद देति भए, बहु शोभ लए सु तहां दिपताए ॥ ५ ॥

बासुर तीन रहे थिर कीनि गुरू सु प्रवीन महां जसु छायो।
फेर नराइणदास कह्यो, सभि दाइज को निकसाइ धरायो।
बोलि पठे[1] तबि हेत बिदा[2], सुनि बादित ब्रिंद बिसाल बजायो।
मंद ही मंद गए गुरु मंदर सुंदर साज समाज सुहायो ॥ ६ ॥

तेवर जेवर जेवर[3] हैं जिम जोति जवाहर की झमकावैं।
भूखन संग तुरंगम भूखति[4] चंचल अंगनि ते चपलावैं।
बासन ब्रिंद बिसाल धरे जुति दासनि के कहि भाट सुनावैं।
द्वै करि जोरि नराइण दास मनै बिनती गिनती न सुहावै ॥ ७ ॥

और कछू न बन्यो मुझ ते इक दासी दई हित सेव तुमारी।
आपको नाम अनाथ को नाथ है राखि लई पति आनि हमारी।
दोनहुं लोक सहाइ करो सु करोरनि की करते रखवारी।
मैं पकर्यो इक दामन आपको आयो शरंन लखे उपकारी ॥ ८ ॥

मैं समता को समरत्थ नहीं जिम रंचक मेरु अगारी कहां[5]।
आपने नाम की लाज रखी बडिआई दई घरि आइ इहां।
श्री गुरु श्रोन सुनी विनती मनि धीरज दीनि प्रबीन महां।
साधु ही साध अहै तुझ को बहु दीनिसि दीनि ही बाक कहाँ ॥ ९ ॥

श्री हरि गोबिंद संग दमोदरी दाइज[6] बीच धर्यो समुदाई।
पान ले पान मैं कीनि सभी बिधि, डोरा[7] मंगाई लियो तिस थाइं।
दीनी बिठाइ सुता तिस मैं घर ते निकसे त्रिय बाहिर आई।
रोदति है गर संग लगावति मात मिलै बडि नेहु जनाई ॥ १० ॥

देरि लगे, फिर फेर मिले, हटि जाहु नराइणदास कह्यो।
होइ बिदा गमने जबि ही, बरखाघन की बहु दीन लह्यो[8]
श्री हरिगोबिंद् दुलहु ते दूलही चलि आगे सु अश्व् बह्यो।
ऊपर को बरु डारति हैं बित, दारिद रंकन ब्रिंद दह्यो ॥ ११ ॥

---

1. भुला भेजा। 2. विदाई के लिए। 3. तिल्ले-किनारी वाली पोशाकें और गहने। 4. सुशोभित घोड़े। 5. जैसे कण की मेरु के सामने क्या सत्ता ? 6. दहेज। 7. डोली, पालकी। 8. धन की वर्षा की, जो गरीबों ने लिया।

भ्रातनि साथ नराइणदास गयो मग केतिक श्री गुरु जाना ।
आप खरे हुइ तीर बुलाइकै बाक कह्यो हटीए निज थानां ।
यौ सुनिकै बिनती बहु कीनि छिमो अपराध मैं कीनो महाना ।
आपने धाम बुलाइ पठे जग के गुर पूज न मान पछाना ।। १२ ।।

चार दिशा नर देखनि के हित पंथ उलंघति दूरि ते आवैं ।
देति अकोर थिरैं कर जोरि अनेक मनोरथ आप ते पावैं ।
राउ कै रंक तजैं सभि शंक धरे शरधा पद कंज मनावैं ।
मैं मतिहीन न जान्यो कछू लखि लोकिक रीति करे बनि आवैं ।। १३ ।।

श्री गुरु ने सुनि धीरजि दीनि इते हम आप ही आवनि ठाना ।
तोकहु दोष न राखि भरोस को जाप करो सतिनाम सुजाना ।
आपि हटो निज धामनि को, अब चाहति हैं हम भी प्रसथाना ।
लौकिक रीति सभै बनि आवति, क्यों मन तोहि संदेह उठाना ।। १४ ।।

बैनसने करुना[1] सुनि कै कर जोरि नराइणदास तवै ।
श्री गुरु के पग पंकज ऊपर सीस धर्यो बिच भ्रात सबे[2] ।
श्री हरि गोविंद वंदन कीनि लख्यो ससुरो बड थान जवै ।
और नमो सगरे करिकै हटि धाम चले मन प्रेम फबै ।। १५ ।।

यौं मिलि कै बिछुरै दिसि दोइ, गए निज धाम बडो मुद पाए ।
ग्राम के लोक कहै सभि ही बहु ब्याह पिखे हमने बडि थाए ।
हुयो न ऐसो अनंद बिलंद जथा इसमें गन मंगल छाए ।
श्री गुरु केर प्रताप बक्ख्यात है ग्राम बिखै सगरे हरखाए ।। ९६ ।।

ब्रिंद बरात लिये हरि गोविंद डोरे को अग्र करे मग चाले ।
लंघि गए सुलतान पुरे कौ बादि बजावति जाति बिसाले ।
भानु ढरे सलिता उलंघे[3] सभि पार परे थिति गोइंदवाल ।
केवट को धन दीनि महां हरखाइ रह्यो पिखि रूप क्रिपाले ।। १७ ।।

जाइ निवेस बरात कियो गन स्यंदन संगि तुरंग बिलंदे ।
डोरे को अंतर ले गमने बहु आदर सों उर धारि अनंदे ।
बाहर औरि थिरे सभि हूं सकटे उतरे ढिग भारनि ब्रिंदे ।
मोहरी सेव करी सगरी बहु खानु रु पान कियो मनचिंदे[4] ।। १८ ।।

---

1. करुणा-सिक्त वचन । 2. सब भाइयों की उपस्थिति में । 3. सूर्यास्त तक नदी पार कर ली । 4. मनानुकूल ।

श्री गुरु नंदन संग लिए चलि मोहन को पग वंदन कीनी।
देखति ही हरख्यो तबि हुं हरि गोविंद गोद लै आशिख दीनी।
व्याह प्रसंग जु बुझ्यो तबै जिम होयो कह्यो सुख मैं मति मीनी।
आइ निवेस प्रवेश भए, गुरु थान नमो करि जो पुन चीनी[1] ॥ १९ ॥

रैनि बिखै सभि सैन करी मन चैन धरी, मुद नैन लिए।
प्रात उठे करि मज्जन बावली नाने गुरू को प्रनाम किए।
होइ सु त्यारि बरात थिरी पुनि मोहनि पास गुरू जी गए।
आप क्रिपा करि संग चलो तहिं देखहु तीरथ जैसे थिए॥ २० ॥

वानी इकत्र कै बीड़ रची वड ग्रिंथ भयो अविलोकहु तांही।
श्री हरि मंदर सुंदर भा तिस अंदर सो असथाप किया ही[2]।
मंगल केरि समो अबि है सभि संग अहैं पिखि कै सुख पांही।
मातुल सों बिनती हम कीनी सु मानि लई हरखे उर मांही॥ २१ ॥

दीरघ मातुल संग भयो मन आनंद पाइकै लीनि चढाई।
मोहरी और संसराम[3] आनंद[4] चलें चढि कै बहु बाद बजाई।
छुटे निसाण चले अगुवाइ कुलाहल मारगि मांहि उठाई।
ग्राम खड्र पहुचति भे तबि दातू ने होए समीप अलाई॥ २२ ॥

डेरा करो गुरु, देग अचो[5], पुन प्रात को आप किजै प्रसथाना।
यौं सुनि श्री गुर बैन भने उतरैं अबि आगै, न रोक पयाना[6]।
जाति दयो तुम खान रु पान, अनंद करे बसि कै इस थाना।
तीन ही कोस चले अटकैं किम आगै रह्यो कल्ल पंथ महाना[7] ॥ २३ ॥

रैनि वसा नहिं जे तुम आप, अहारि है त्यार अचौ समुदाई।
यौं कहि कैं अटकाइ लिए सभि के हित ल्याइ सु दीनि अचाई।
श्री गुर अंगद मंदर को अभिबंदन कै गमने अगुवाई।
संग लिये निज दातू चल्यो अति मोद बढ्यो सभि मैं तिस थाइं॥ २४ ॥

दोहरा

उलंघि पंथ पहुंचति भए तारन तरन सथान।
उतरे जाइ समूह तहिं श्री अरजन गुन खान॥ २५ ॥

---

1. देखा। 2. स्थापित किया है। 3. बाबा मोहन जी का पुत्र। 4. बाबा मोहरी का पुत्र। 5. भोजन करो। 6. जाते हुओं को न रोको। 7. कल का मार्ग अधिक रह जायगा।

सवैया

दीनि सबै पकवान सु खान को वाहन को मन भाइ खुलायो ।
रैनि बिखै करि सैन परे सुख संग तहां सभि काल बितायो ।
प्रात उठे करि मज्जन तीरथ दान दियो जुऊ मांगनि आयो ।
ग्रामनि के, पुरि के, मग के नर रंकनि को धन दे हुलसायो ।। २६ ।।

दुंदभि दीरघ धौंस बजी सजि वाहन त्यारि भए सभ चाले ।
केतिक स्यंदन जाति पलावति, केतिक वाजी कुदाइ बिसाले ।
केतिक बैलन की बहिलैं बहु दौरति हैं तन प्राक्रम वाले ।
घुंघर की छनकार महाधुनि बादत की मिलि कै तिस नाले ।। २७ ।।

हास बिलास प्रकाशति हैं मिलि आपस महिं मन मोद उपाए ।
मारग दूरि उलंघ गए नहिं जान पर्‍यो पुरि के नियराए[1] ।
डोरे को आगे करे गमने हरि गोविंद दूलहु शोभ वधाए ।
आइ सुधासर तीर गए तबि बादित की धुनि ऊच उठाए ।। २८ ।।

कबित्त

महांदेव, मोहरी औ मोहन सु दातू साथ, ब्रिद्ध गुरदास तो मसंद ब्रिंद आवई ।
सेवक औ सिक्ख हरखाए देखि देखि पुरि आनंद बिलंद ते न अंगनि मैं मावई[2] ।
पटह, पणव, ढोल, दुदभि, नफीरी जुत धौंसा की घुंकार धुनि अधिक उठावई ।
डफ अरु बंसरी बजाई ऐलि गैलि[3] भयो सुथरी सु तुररी शबद को सुनावई ।। २९ ।।

सुनी धुनि गंग, भई आनद के संग उठी रिदे ते उमंग, साज मंगल बिसाल को ।
ब्रिंद कीनि अंगना सु अंगनि मैं अंग शुभ[4], अंगनि मैं मेवै नहिं देखि मोद जाल को ।
दातू दारा, मोहन और मोहरी की दारा संग और गिनौ कौन कौन मिली गन बाल को ।
देति हैं वधाई लेति सौ गुनी चढाई सीस, सभि उमहाई देखिबे को बधू लाल[5] को ।। ३० ।।

डारैं धन वारि वारि श्री गुरू उदार चित मिले नर नारि मोद धारि पुरि वरे हैं ।
सुजस पसारि कटि, जोरी गई द्वार निज, गंग ने निहारि सुन रीति गन करे हैं ।
सहत सनुखा लीनि जोखता[6] को पुंज संगि, वंदना के हेत हरि मंदिर को मुरे हैं ।
त्याग असवारी लए मोदक को थार भरि सगरी पधारी गीत गाइ प्रीति घरे हैं ।। ३१ ।।

सनै सनै गए संग बादित बजाइ गन. जाचक जो आए धन पाइ हरखाइ कै ।
तीरथ के तीर पर भई बहु भीर तहां, वंदना करति नर नारी सीस न्याइ कै ।

---

1. मार्ग की दूरी का पता ही न चला और वे अपने नगर के निकट आ गए । 2. अंगों में नहीं समाता । 3 रेल-पेल । चहल-पहल । 4. आंगन में सुंदर अंगों वाली अंगनाएं (स्त्रिएं) इकट्ठी थीं । 5. दुल्हिन-दुल्हा । 6. स्त्रियाँ ।

अंतरि प्रवेश होए सेतु[1] पै गमन करे, थिरे हरि मंदिर अगारी उर भाइ कै ।
देकरि दरब अरदास को कराइओ खरे जोरि जुग हाथनि को बंदै भाल लाइकै ।। ३२ ।।

बांटिकै प्रसादि अहिलादि कै, अगारी करि[2], दीनि है प्रदच्छना फिरे सुचारि बारि हैं ।
सतिगुरू रामदास चरन मनाइ चले आपने सदन की अनेक नर नारि हैं ।
बादित बजति आगे गावैं, तीय पाछे लागे, सभिनि मझार जोरी शोभति उदार हैं ।
चित्रा के समेत चंद[3] आनंद बिलंद करि पूजि देव गुरू[4] को चलति मनो चारु हैं ।। ३३ ।।

देवकी मनिंद श्याम घन सतिभामा जुति मानी कुल वडो जाति निंज द्वारि हैं ।
मंद मंद गमनति गए निज मंदिर को सुंदर फरश जहां आसन उदार है ।
सहत सनूखा-सुत हेरति हरख चित गंगा को अनंद किम करै को उचार है[5] ।
जथा जोग सगरी बिठाईं सनमान करि, हुती कुल रीति सभि कीनी निरधार है ।। ३४ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'बरात आगवन' प्रसंग बरननं चौदसमो अंशु ।। १४ ।।

---

1. अमृतसर हरिमन्दिर का पुल । 2. आगे करके (दम्पति को) । 3. चित्रा सहित चन्द्र (चन्द्र दम्पति) । 4. बृहस्पति । 5. क्योंकर उच्चारण किया जा सकता है ।

अंशु १५
विवाह प्रसंग

दोहरा

गंगा मंगल संग तबि करति निछावर नंद।
अपर सरब ने उठि करी, खरचहिं दरब बिलंद ।। १ ।।

चौपई

पिखिनि सनूखा मुख को लागी[1]। रिदा अनंद भर्‍यो बडि भागी।
पाइ ओलि महिं[2] धन की थाती। अविलोकति भई सीतल छाती ।। २ ।।
पुन उठि उठि करि सगरी दारा। जथा उचित झोरी धन डारा।
पिखति बधू को मुख हरखाई। कर्‍हिं सराहनि सुंदरताई ।। ३ ।।
हे अलि गंगा के बडि भागा। जिसको जग गुरु अहैं सुहागा।
बहुर पुत्र जनु चंद अमंदू। को अस त्रिय, पिखि ह्वै न अनंदू ।। ४ ।।
तिह सुतसंगि सुनूखा सोही। राम चंद जनु सीता होही।
इह जोरी[3] जीवहु चिरकाला। इक सम सुंदर रूप बिसाला ।। ५ ।।
उतसव जथा जोग करि गंगा। सभि को सनमानति हित संगा।
नाना भांतिनि बन्यो अहारा। सूखम चावर दौनि प्रकारा ।। ६ ।।
मधुरु सलवण सु मेवा डाले। गरी बदामनि छील[4] बिसाले।
पिसता स्वाद सावगी[5] पाए। पूरी करि कचौरि समुदाए ।। ७ ।।
बरे पकौरे दधि महिं डाले। धनीआ मिरच अनेक मसाले।
नर नारिनि को रुचिर अहारा। सादर कहि कहि सभिनि खुआरा ।। ८ ।।
त्रिपति होइ भी चाहति खाया। आसन[6] सु अस स्वादल मन भायो।
सभि के वाहन को दे दाना। त्रिणगन दई निहारी[7] खाना ।। ९ ।।
दास अनिक अरु सगल मसंद। सभि की सेवा कर्‍हिं बिलंद।
जो जिस चाहि दई तिह सोइ। रिदे काम पूरति सभि कोई ।। १० ।।

---

1. बधू की मुँह-दिखाई होने लगी। 2. झोली में। 3. युगल, दम्पति। 4. छिले हुए बादाम। 5. स्वादिष्ट पिस्ता, किशमिश। 6. भोजन। 7. घोड़ों को देने की घास और चने-गुड़ आदि।

खान पान सनमान महाना। परी रैन सुपते निज थाना।
श्री अरजन सुधि सभि की सुनि कैं। भई सेव त्रिपतेगन—गुनि कै ।। ११ ।।
सुपते सभिहिनि ते पशचाती[1]। तिम अंतरि गंगा हरखाती।
दासीगन को प्रेरनि करती। खान पान सभि की सुधि धरती ।। १२ ।।
बहु सनेह ते नुखा बिठावहि। कहि कहि वर भोजन को खावहि।
पुन अपने ढिग सिहजा[2] सुंदर। करी डसावनि अंदर मंदिर ।। १३ ।।
ले करि निकट आप तबि सोई। नुखा बिलोकति हरखति होइ।
हरि गुविंद वर इंद मनिंदा। पित असमीप पोढे सुखकंदा[3] ।। १४ ।।
महादेव निज घरहु सिधारा। सभि कुटंब हित पठ्यो अहारा।
मोहन अपर मोहरी दातू। खान पान सुपते हरखातू ।। १५ ।।
अपर सिक्ख संगति नर नारी। ब्रिंद मसंद करति जे कारी।
दासी दास सभिनि सुखपाए। निज निज थान सकल सुपताए ।। १६ ।।
जाम जामनी जागे नाथ। मोहन मातुल लीनसि साथ।
सोचाचार करे विधि सारी। प्रथम नहाइ कूप के वारी ।। १७ ।।
सुधा सरोवर जाइ शनाने। पुन पहुंचे हरि मंदिर थाने।
बैठनि भए सु सभा सुधारि। गावनि लगे सु आसावारि ।। १८ ।।
ब्रिद्ध जुत आइ गयो गुरदास। बैठे ब्रिंद मसंदे पास।
उमरशाहू, भाई कल्लयान। बहु सिख करहिं दरस को आनि ।। १९ ।।
नंद अनंद मोहरी संगि। संसराम जुति रिदे उमंगि।
आइ सभा दरबार लगाई[4]। हेरति सुनति सरब हरखाई ।। २० ।।
प्रात होति के पायो भोग। सिर निवाइ तबि सभिहूं लोग।
श्री गुरु ग्रिंथे साहिब जबि आइव। सगरे उठि सनमान वधाइव ।। २१ ।।
श्री मंजी पर खोलनि कीनि। पठनि हेतु गुरु आइसु दीनि।
ब्रिद्ध ने तबि बांची गुर बानी। जिस महिं हंता ममता हानी ।। २२ ।।

श्री मुखवाक छंतु।

तिन घोलि घुमाई जिन प्रभु स्रवणीं सुणिआ राम।
से सहजि सुहेले जिन हरि हरि रसना भणिआ राम।
से सहजि सुहेले गुणह अमोले जगत उधारण आए।
मै बोहिथ सागर प्रभ चरणा केते पारि लंघाए।

---

1. सबके पश्चात् सोए। 2. सेज। 3. (वे) सुखदायी पिता के निकट लेटे।
4. दरबार साहिब में सभा लगाई।

जिन कंउ क्रिपा करी मेरै ठाकुरि तिनका लेखा न गणिआ ।
कहु नानक तिसु घोलि घुमाई जिनि प्रभु स्वणी सुणिआ ।। १ ।

चौपई

परमेशुर को सुजसु महाना । कै संतनि को कीनि बखाना ।
अधिक नंम्रता तजिनि हंकार । सत्तिनाम सिमरन सुखसार ।। २३ ।।

काम क्रोध आदिक को त्यागनि । श्री भगवंत भगति को लागनि ।
बहु बैराग जगत ते करिबो । संतनि सेवनि शरधा धरिबो । २४ ।।

जिसते उधरहि जीवनि जाल । अस जहाज कीनसि कलि काल ।
सुनि मोहनि दातू तबि श्रौन । भरे हरख कुछ ठानी मोनि ।। २५ ।।

बहुर सराहनि लगे बिसाला । सोढी पथ सु कीनि उजाला ।
दोनो करे महां उपकारे । जिसते कलि महिं मंद उधारे ।। २६ ।।

धंन बैठिबो गुरता गादी । जिसते होहि अनिक अहिलादी ।
सरब गुरूनि को सुजसु प्रकाशा । बिसथार्यो सभि महिं चहूं पासा ।। २७ ।।

गुरबानी इक्ठी दरसावै । पढ़हिं लिखहिं सिख सुनैं सुनावैं ।
अवनी मंडल गिर लगि सागर । पुरि पुरि घर घर होइ उजागर ।। २८ ।।

हरि मंदिर तीरथ गुरू केरो । इन प्रताप नित वधहि वधेरो ।
चहुं दिशि के नर शरधा धरि धरि । निरमिल होहिं सु मज्जन करि करि ।। २९ ।।

श्री अरजन पुन भन्यो सुनायो । क्रिपा तुमारी ते वनि आयो ।
भई इकत्र सकल गुरु बानी । सिरज्यो तीरथ क्लमल हानी[1] ।। ३० ।।

गुरि सिक्खनि को भयो अधारा । होहिं भविख्यति बिखै अपारा ।
मिटहि न सिक्खी इनहु अलंब । गुरु को मानहिं सदा कदंब[2] ।। ३१ ।।

जो नर हित धरि सुनहिं सुनावें । जनम मरन तिनको छूटि जावै ।
महां महातम है गुरुबानी । तजहिं कपट को लाखहुं प्रानी ।। ३२ ।।

सुनि गुरु मुख ते हरखे सारे । करे सराहनि सुजसु उचारे ।
जाम दिवस तहिं बैठे आयो । पुत्र सभिहनि तहिं सीस निवायो ।। ३३ ।।

उठि गमने परदछना धारे । लीने संग आपने सारे ।
बहुरो वहिर प्रकरमा फिरे । पोर दरशनी बंदन करे ।। ३४ ।।

तहिं ते चलि निज घर को आए । मोहन आदि संग समुदाए ।
थान बैठिवे को तहि गए । सरब जथोचित थल थिर भए ।। ३५ ।।

---

1. कलियुग की मलिनता को नाश करने वाला । 2. सब के सब ।

बहु स्वादनि जुति बन्यो अहारा । धरि धरि थार सभिनि कहु ख्वारा ।
क्रिशन चंद आदिक त्रिपताए । महांदेव पुन चलि करि आए ।। ३६ ।।

मिल बैठे सगरे इक थाना । करहिं परसपर वाक वखाना ।
प्रिथीए कहां कर्यो नहिं आयो । क्यों दुखपाइ बिरोध उठायो ।। ३७ ।।

श्री गुरु रामदास कै हाथ[1] । दे गुरता को कर्यो सनाथ ।
अपर जतन ते क्यों हु न पावै । क्यों अबि लगि वड कपट कमावै ।। ३८ ।।

अबि के बिछर्यो मिलहि न कैसे । आगै संतति रहि है तैसे ।
नहि कुछ समझी भा मति मंद । मिल्यो न ऐसे काज बिलंद[2] ।। ३९ ।।

श्री अरजन सभि साथ बखानी । अघ को करति रह्यो छलसानी ।
हरि गुविंद के मारनि कारन । करे अनिक[3], किय गुरू उबारनि ।। ४० ।।

तऊ बेनती हमने कीनि । नहिं मान्यो मन महां मलीन ।
तुरकनि पासि पुकारु गयो । कुछ न बसाइ[4] त बैठति भयो ।। ४१ ।।

लिखि अरदास पठ्यो पकवान । पिखि कहि करौं प्रान तिन हानि ।
अबि ते हमने त्यागनि कर्यो । मिल्यो न, मरने मरने बर्यो ।। ४२ ।।

सुनि कुकरम को सगरे निंदहिं । कपटी क्रोधी कलही बिंदहिं[5] ।
इत्यादिक बहु बातनि करते । श्री अरजन को सुजसु उचरिते ।। ४३ ।।

पुन अहार सभिहिनि कहु दीनो । महाँदेव हित धारि प्रबीनो ।
श्री अरजन जुत मेलि जि सारो । जाइ करयो तिह सदन अहारो ।। ४४ ।।

दिन प्रति नई प्रीति उपजावै । बिन जाने निस दयोस बितावै[6] ।
बासुर पंच बिते[7] इस रीति । सम घटिका के जानिसि चीत[8] ।। ४५ ।।

निज निज सदन जानि को सारे । हुइ करि बहु बेबसे उचारे ।
बसि सनेह को गयो न जावति । निस दिन बसिमे पुरी उमाहति ।। ४६ ।।

बसत्र बिभूखनि दे करि सोहन[9] । करे बिसरजन मुहरी मोहन ।
संसराम के संग अनंद । सभि के उर उपजाइ अनंद ।। ४७ ।।

---

1. गुरू रामदास ने अपने हाथों । 2. ऐसे उत्तम कार्यों में भी मेल न किया । 3. अनेक (छल) किए । 4. वश नहीं चला । 5. मानते है । 6. रात-दिन का भी भास नहीं होता । 7. पांच दिन बीते । 8. एक घड़ी के समान महसूस हुए । 9. सुन्दर ।

तिम दातू को दीनसि दाति। दारा सहत हरख धरि गाति।
हरिगुविंद संगि करि करि प्यारि। मिलहिं तिया गन बारं बारि ॥ ४८ ॥

निज घर को गमने मग मांही। श्री अरजन को अधिक सराहीं।
म्रिदुल सुशील सनेह महाने। बड़े उदार ग्यान गुनवाने ॥ ४९ ॥

सभि खडूर महिं उतरे जाई। गोइंदवाल गए अगवाई।
क्रिशन चंद धनवंती दोऊ। पित्रति कुटंब हितू निज सोऊ ॥ ५० ॥

अषट दिवस पाछे सो रह्यो। बहुर चलनि को चित महि चह्यो।
ब्याहि दोहते को हरखाना। खरच्यो ढिग ते दरब महाना[1] ॥ ५१ ॥

कर्‌यो जथोचित तबहि बिसरजन। भयो सनेह अछेह दुहनि मन।
मिल पुत्री संग बारहि बारी। मौ[2] की ओर चले सुखधारी ॥ ५२ ॥

अपर सिक्ख संगति जे आए। जथा जोग सभि बिदा कराए।
उतसब एव ब्याह को होवा। पठहिं सुनहिं सिख तिन दुख खोवा ॥ ५३ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ चतुरथ रासे, 'विवाह प्रसंग' बरननं नाम पंचदशमो अंशु ॥ १५ ॥

---

1. बहुत-सा धन गाँठ से खर्च किया। 2. गाँव मऊ।

अंशु १६
सुलह्ी को प्रसंग

दोहरा

श्री गुरु इम सुत ब्याह कै लीनो सुजसु बिलंद ।
जाचक जहिं कहिं कहति भे देश बिदेशनि ब्रिंद ।। १ ।।

चौपई

लोक हजारहुं उतसव देखा । सभिहिनि कउ भा मोद विशेखा ।
जित जित देश गयो चलि जोई । ब्याह कथा कहु भाखति सोई ।। २ ।।
अपर प्रसंग हटी जु सगाईं । इसते भी कहि गुरु वडिआई ।
आज शाहु को महां दिवान । जिसकी मानहिं आन जहान ।। ३ ।।
फोर्यो तिसी सुता का नाता । कहि बहु रह्यो[3] न मानी बाता ।
इक द्वै बेर पठाए लागी । नहीं लीनि, चित चिंता जागी ।। ४ ।।
दरब देनि को कह्यो घनेरे । करौं काज मैं शाहु सु नेरे ।
तऊ न श्री अरजन मन मानी । जान्यो मूढि महां मनमानी ।। ५ ।।
करि हंकार जु बोलि बिगारी । सिक्खनि भने लखी गुरु गारी[1] ।
कर्यो अनादर नीच समाना । मान महान ठानतो माना ।। ६ ।।
कुल खत्रीनि जहां कहिं जोई । हान भई चंदू की सोई ।
दिल्ली लवपुरि आदिक सारे । कहैं बिचारें सार असारे ।। ७ ।।
सिख संगति भेजी अरदास । तिनहु कही मानी लखि दास ।
सो कहि रह्यो फिरे नहीं फेरे[2] । सुत के अपर थान किय फेरे ।। ८ ।।
प्रिथीए निकट जाइ नर जोई । कहै बहुत जैसे इत जोई ।
कीरति नहीं अनुज की जरै । विनां हुतासन हीयो जरै ।। ९ ।।
चितवहि जतन अनेक प्रकारा । कुछ न सरी दुशमन सों कारा ।
दिन प्रति वध्यो अनंद बिलंदू । ज्यों सागर पिखि पूरनि चंदू ।। १० ।।

---

1. बहुत कहता रहा । 2. सिक्खों ने कहा और लिखकर भेज दिया कि उसने गुरु को गाली दी है । 3. बात से नहीं फिरे ।

मैं नित निबल पर्यो. दुख पर्यो। सुतपित महिं ते एक न मर्यो।
गह्यो न गयो शाहु ढिग गयो[1]। सुलही आदि न कुछ करि लियो ॥ ११ ॥
जतन रचौं अब प्रापति घाति[2]। जिसते होइ शत्रु को घात।
सुलही सों लिखि कै इक वारी। मंगवावौं इस थल असुवारी ॥ १२ ॥
जे करि अपनो प्राक्रम धरै। आनि इहां अरजन को धरै[3]।
मिलि मसलति करि कै संग चंदू। गहै इसै राहू जिम इंदू ॥ १३ ॥
हम बिचारि लिखिबे लगि पाती। रिस ते निस दिन सुलगति छाती।
लिखितम प्रिथीआ मल सुनि मीत। चितवौं चीत नीत करि प्रीत ॥ १४ ॥
सकल काज कीनसि तैं मोरा। इह न भयो कबि रिपु मुख मोरा[4]।
तैं अरु मैं मिलि करे उपाया। नहीं अनुज ते गुरु पद पाया ॥ १५ ॥
मिहरबानगी[5] चाहति तोरी। कबहुं देहु रिपु धीरज तोरी[6]।
बध्यो जगति मैं अधिक प्रतापू। देखति सुनति मोहि उर तापू ॥ १६ ॥
आइ इतहु करि काज हमारे। दिहु गुरुता, अरजन को मारे।
तो पर मोहि बिसाल भरोसा। वध्यो शत्रु लखि कीजहि रोसा ॥ १७ ॥
इम लिखि दिल्ली पठि हलकारा[7]। देउं इनाम करहु इहु कारा।
सुनि तूरन गमन्यो मग मांहू। पहुंच्यो पुरी महान उमाहू ॥ १८ ॥
मिल्यो सलाम कीनि हुइ दीनि। पुन पाती सुलही कर दीनि।
खोलति पठी सखा के कर की। श्री अरजन कीरति उर करकी[8] ॥ १९ ॥
मेरो त्रास रिदे महिं धरि के। अबिलौ शत्रु न छाती धरके।
बडो होनि निषफल है मोरा। सुख न सखा रिपु तुंड न मोरा[9] ॥ २० ॥
चिंतति चीत चार[10] को बोला[11]। तिसके साथ वाक अस बोला।
मुझ दिश ते कहु सकल अनंद। कहां भयो जे व्याह्यो नंद ॥ २१ ॥
इत आवौं आग्या ले शाहू। गुर गहिवे को नित उतसाहू।
चंदू बिन मैं ही लिउं मारि। जैसे डसै अचानक मार[12] ॥ २२ ॥
धीर धरो, आयहु मुझ जानि। करों काज सुनि सखा सुजानि।
केचित दिन मैं देखौं आई। अरजन हति, दै हौं गुरिआई ॥ २३ ॥
तबि मेरे मन उपजहि शांती। जबि तेरे शत्रु हुइ शांती[13]।
इम लिखि करि दीनसि कर पाती। लखहि न मूरख अपनि निपाती[14] ॥ २४ ॥

---

1. (मेरे) शाह के निकट जाने पर भी (वह) पकड़ा नहीं गया। 2. अवसर। 3. पकड़े। 4. यदि यह न हुआ (तो समझूंगा) कभी (तुमने) शत्रु का मुँह नहीं मोड़ा। 5. कृपा। 6. कभी तो शत्रु का धैर्य भंग करो। 7. संदेश-वाहक। 8. हृदय में चुभी। 9. (यदि) शत्रु की गर्दन न मरोड़ी। 10. हरकारा, संदेश-वाहक। 11. बुलाया। 12. सर्प। 13. नाश। 14. अपना नाश।

ले करि चार चल्यो ततकाला। जहिं प्रिथीआ अंतर ते काला।
सखा लिखे को पठि हरखायो। छुधित अधिक जनु भोजन खायो।। २५।।

अबिके आए ज्यों क्यों करिके। हतौं अनुज को नित उर करके[1]।
गुरता गादी को ले करि मैं। तबि सबि किछु प्रापति ममकर मैं।। २६।।

वहुर चार ने बाक उचारा। कीजहि त्यारि तुरंगनि चारा।
अन्य ब्रित्त संचहु समुदाया। सुलही कह्यो बडी करि दाया।। २७।।

तोहि समीप आइ हैं पूरव। करहिं काज बल साथि अपूरव।
कागद लिख्यो सु खोलि पठावा[2]। तबि खातर करि मोहि पठावा[3]।। २८।।

आयो ही जानहु निज तीर[4]। नहिं अटकहि जिम छूट्यों तीर।
तुव हित ते निज सैन सकेले[5]। शत्रु हतहि करी जिम केले[6]।। २९।।

हलकारे ते सुनि सभि बाति। मनहुं स्वेदि तनु लागी बात[7]।
वीस रजत पणदीनी इनामू। करहि काज सुलही जिस नामू।। ३०।।

निशचे घरे प्रतीखनि करी। हतौं शेर, जिम चाहे करी[8]।
संचनि लग्यो त्रिणनि अरु अंनु। वसहिं समीप ग्राम जे अन[9]।। ३१।।

तिस आगवन चितहि दिन राती। जानै अनुज दुखद आराती[10]।
सुलही जबि दिल्ली महुं गाजा। परौं रिपुनि जिम गिर परगाजा।। ३२।।

संगति महिं बितने बिसतारा। बोल्यो तुरक बुरी ही तरा।
मिलि करि सभिनि लिखी अरदास। मसतक टेक्यो जे गन दास।। ३३।।

प्रिथीए के प्रेरे इति सुलही। जिम बोल्यो हमने सुधि लही।
केचित्त बासुर महिं इस देश। आइ गहावौं देउं निदेश।। ३४।।

रावर जतन करहु जिम बनि है। कै पुरि छोरि बसहु जित बन है।
कै मिलि जाहु साथि बड भ्राता। लिख्यो जु हम यां महिं नहिं भ्रांता[11]। ३५।

जहांगीर ते करहि बहाना। चहै तुमारे प्रानन हाना।
इम संगति लिखि पाती पठी। गुर ढिग पहुंची खोलति पठी।। ३६।।

हुते मसंद कितिक गुरु तीर। सुनति वाति जनु लाग्यो तीर।
सतिगुरु पठि रहिगे अरुगाई[12]। हुते समीप गिरा सभि गाई[13]।। ३७।।

---

1 सीने में चुभता है। 2. पढ़ा। 3. बुलाया। 4. निकट। 5. इकट्ठी करके। 6. शत्रु को इस प्रकार नष्ट कर देगा, जैसे हाथी केले को। 7. शीतल पवन। 8. जैसे हाथी सिंह को मारना चाहे। 9. अन्य। 10. बैरी। 11. संशय। 12. मौन। 13. सब ने कही। (अपनी-अपनी)।

बडो कुसूत वनै इम होए। बैरी करहि आनि करि ढोए[1]।
बिना उपाइ न मिटि है ब्याधी। हुइ असाध भी लेवै साधी[2] ॥ ३८ ॥
चंदू सुलही शाहु अगारी। वधे बडे अफरे हंकारी।
तिन सों मिलहु प्रीत उपजाइ। बैर जु बध्यो शांति हुइ जाइ ॥ ३९ ॥
नांहि त लीजहि आप बिचारी। मिलि मिलि करै शाहु ढिग चारी[3]।
ज्यों क्यों करहि रिसावहि शाहु। बिगरनि[4] हित पहुंचै तुम पाहू ॥ ४० ॥
सुनि मसंद कम दिल[5] की बानी। कीन मौन गुर कछु न बखानी।
पुनहु कह्यो श्री गुरू सुनीजै। तुरक राज बड बली लखीजै ॥ ४१ ॥
हिंदुनि को मति मानै थोरा[6]। पुन सुलही पापी बड घोरा।
आगे आइ जनायो जोर। निकसे आप बडाली ओर ॥ ४२ ॥
हमरो कहिनो ई बनि आवै। करहु आप जैसे मन भावै।
तुम सुख ते सुख सदा हमारे। होनि शुभाशुभ कीनि उचारे ॥ ४३ ॥
तूषनि[7] करनि समो अबि नांही। पूरब जतन सकल बनि जाही।
बनहिं नहीं ततकाल उपाइ। खनहि कूप किम आग लगाइ ॥ ४४ ॥
सोचति जल समरो बहि जाए। सरहि कहां पुन सेतु बंधाए[8]।
श्री अरजन सुनि कीनि बखाना। चित महिं चिंत न करो महाना ॥ ४५ ॥
होनहार आवश्यक होइ। बुधि ते बल ते मिटहि न सोइ।
श्री करतार कियो जिम माणा। सो कैसिहुं निषफल नहिं जाणा ॥ ४६ ॥
जो परमेशुर कर्यो न चाहै। होइ न सो, नर कितो उमाहै[9]।
अस मन जानि करहु भरवासा। देखहु जैसे होइ तमाशा ॥ ४७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सुरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'सुलही को प्रसंग' बरननं नाम खोडसमो अंशु। १६।

---

1. (निकट आकर) वार करेगा। 2. असाध्य में भी करने योग्य होता है (साधन से)। 3. चुग़ली। 4. बिगाड़ करने के लिए। 5. कायर। 6. हिन्दू मत को नहीं मानता (कम मानता है)। 7. मौन रहने। 8. पानी वह जाने पर बाँध बाँधने से क्या ? 9. मनुष्य कितना ही उत्सुक हो।

अंशु १७

सुलही आगवन प्रसंग

दोहरा

चितवति कारज अनिक को सुलही चहति पयान।
गमन्यो शाह समीप तबि तसलीमात[1] बखान ।। १ ।।

चौपई

जबि अवकाश कहनि को पायो। तबि सुलही कर जोरि अलायो।
माझे देश चहति मैं गयो। कछूकार तहिं अफतर[2] भयो ।। २ ।।
श्री अरजन जग गुरू कहावै। कहि लोकनि को सो बिगरावै।
देश मामला देति बिगारे[3]। नर हजार ही तिस अनुसारे ।। ३ ।।
बिगर्‌यो सरब जाइ सुधराऊं। देकरि जोर आप मैं ल्याऊं।
मैं बिन गए दरब नहिं आवै। अपर न बुधि बल करि को ल्यावै ।। ४ ।।
सुनति शाहु कीनसि फुरमान। जाइ करो धन काज महान।
तूरनि ही हटि करि इत ग्रावहु। सैन संग लेकरि चढ़ि जावहु ।। ५ ।।
सुलही लई शाहु की आइसु[4]। हरखति उर निज घर को आइसु।
करि ब्रिचार चंदू ढिग गयो। मिलि सलाम करि बैठति भयो ।। ६ ।।
सुनहु दिवान वाक अस मोरा। एक काज भा ममअरु तोरा।
जिनहि हटावनि कीनसि नाता। सो मेरो बैरी बख्याता ।। ७ ।।
मैं अब्रि जाति गहौ कै मारौं। नहीं कुशल युत त्याग सिधारौं[5]।
शाहु समीप सहाइक रहीअही। तिसके दोष, मोर गुन कहीयहि ।। ८ ।।
तोहि बैर को ले करि आऊं। तौ मैं सुलही नाम कहाऊं।
माझे देश बिखै मम फेरा। तहिं क्या काज करौं नहिं तेरा ।। ९ ।।
नाता फिर्‌यो मोहि दुख लागा। गहौं जाइ करि जे नहिं भागा।
सुनि चंदू हरख्यो सुख भयो। बिन ही जतन शत्रु मरि गयो ।। १० ।।

---

1. वंदना। 2. खराब, अशान्त, अबतर। 3. मालिया या कर देने वालों को बिगाड़ता है। 4. आज्ञा। 5. (उसे) कुशल छोड़कर नहीं जाऊंगा।

जिम को सरप गह्यो नहिं जाई। नकुल[1] अचानक ले तिस धाई।
कहति भयो मैं बनों सहाइ। लिहु मम दिशि ते अबि सिरुपाइ[2] ॥ ११ ॥
इम कहि बसत्र मोलि बहु केरे। देति भयो हरखाइ घनेरे।
कर्‍यो बिसरजन धीरज दै कै। सुलही चढ़यो सैन संग लैकै ॥ १२ ॥
दिल्ली की संगति लखि पायो। दे अरदासिक दूत पठायो।
तूरन निस दिन गमनति जर्‍यै। श्री अरजन को सकल सुनर्‍यै ॥ १३ ॥
धाइ पंथ हलकारा आयो। श्री सतिगुर को सकल सुनायो।
लेकरि हाथ पठी अरदास। लिखतुम सभिही संगति दास[3] ॥ १४ ॥
अबि सुलही मग कीनि पयाना। आयहु तुम दिशि अधिक रिसाना।
श्री प्रभु हो समरथ सभि भाँति। हमरी तो पिखि धरकति छाती ॥ १५ ॥
शाहु समीपी होए दुषट। गुरु सौं करहिं न काज अनिषट।
हमरो जोर करनि सुधि केरो। सो करि पठी तुरत गन चेरो ॥ १६ ॥
श्री अरजन पठि करि अरदास। करी मौन बैठे सिख पासि।
ब्रिद मसंद सभिनि को चिंता। श्री गुरु को नहिं लखहिं ब्रितंता ॥ १७ ॥
तबि सभिहिनि कर जोरि वखाना। प्रभु जी कौन जतन अबि ठाना।
जिसते बैठे निशचल होइ। आवति चल्यो महा रिपु जोइ ॥ १८ ॥
हमरो धीरज होति बिनासी। क्या सो करहि आनि करि पासी।
कुछ सैना को नांहि न जोर। जिसते समुख जंग दें जोर ॥ १९ ॥
तुम भ्राता जेषट को मीत[4]। नहिं देखति कुछ नीत-अनीति।
आगलि बार आइ रिस भर्‍यो। नीठि नीठि तबि मोरन कर्‍यो[5] ॥ २० ॥
शाहु न तुम सौ बिगर्‍यो चहै। तऊ दुषट ए नीति ढिग रहै।
तुम दिशि अनिक तूफान उठावहि। कहि कहि अधिक सदा बिगरावहि ॥ २१ ॥
आपि करी तूषनि किस कारनि। ध्रिति हम लहै सु करहु उचारनि।
बुरा करनि बैरी ढिग आवति। नहिं उपाउ तुम कछू बनावति ॥ २२ ॥
जिम कूकर ते त्रासत हरन। तिम हमरी गति है तुम शरनि।
श्री सतिगुरु करि लेहु मिलाप। कै तजि थान चलहु कित आपि ॥ २३ ॥
ऐसी होइ न जे चलि आवै। करहि शत्रुता गहि ले जावै।
तबि सभि बिधि ही मुशकल बने। शाहु समीप दुषट हैं घने ॥ २४ ॥
हम को उतर दीजहि स्वामी। जिस ते सुख लहिं थिति पद सामी[6]।
बारि बारि सभि सिक्ख मसंद। भनति दीन ह्वै बिनै बिलंद ॥ २५ ॥

---

1. नेवला। 2 सिरोपा, मान-पत्र। 3. सब दास-सेवकों की संगति द्वारा लिखी गई। 4. आपके बड़े भाई (प्रिथीए का) का मित्र है। 5. ज्यों त्यों तब वापिस हुआ। 6. चरण-शरण में रहकर।

क्रिपा ठानि संगति सों बोले। निशचा धरहु कहां तुम डोले।
सतिगुर बनहि सहाइ हमारी। बिपदा परहि तिनहुं पर भारी ॥ २६ ॥

नहिं आवनि हम लगि तिह केरा। हुइ मारग महिं दुषट निबेरा।
जिम कूकर मिरगनि पर धावै। स्वापद पंथ विखै भखि जावै[1] ॥ २७ ॥

सुनति ब्रिंद आनंद बिलंदे। सतिगुरु बाक अमोघ हुवंदे।
भए न चिंत न हौल[2] उठावा। मनहु मर्योई सो लखि पावा[3] ॥ २८ ॥

संगति को सुनि कै हलकारा। दिल्ली पुरि को तुरत पधारा।
पहुंचि सुनायो श्री गुर बैन। सभि कै मन उपजी तबि चैनि ॥ २९ ॥

पहुंचहि नहीं सुधासर जाइ। मारग महिं ह्वै बिघन बिलाइ[4]।
अचल मेरु सम लखि गुरु बानी। सगरी संगति सुनि हरिखानी ॥ ३० ॥

अबि सुनीअहि सुलही की बाति। बहु अपशगन भए वख्याति।
फरके भुजा बिलोचन बानू। सिर बाइस[5] बैठ्यो दुख धामू[6] ॥ ३१ ॥

निकसति छींक भई दिसि दाएं। बहिर कुफेरो हरण पलाए[7]।
हुते जु संगी तिह समुझायो। गन कुसौन[8] को हम लखि पायो ॥ ३२ ॥

सुख सरीर की चहिय तुमारे। इन को फल दुरदशा बिचारे।
हम इह सभि पतिआवनि[9] कीने। बुरा करे बिन होइ न हीने ॥ ३३ ॥

सुनि सुलही बोल्यो मनमानी। कहां बिचारि करति हो बानी।
मैं क्या चल्यो जुद्ध कित करिवै। जिस ते अस संसे तुम धरिवै ॥ ३४ ॥

अपने देश गमन हम कीनि। सगरो अहै रिपुनि ते हीनि।
इक हिंदुनि गुरु सो मम बैर। तिस गहि लेहु अपर सभि खैर ॥ ३५ ॥

अहै फकीरनि के सम सोई। आयुध धरता तीर न कोई[10]।
प्रथम सखा सों मिलि हों अपने। देश बिखे मुझ त्रास न सुपने ॥ ३६ ॥

पुन माझे ते लै धन घनो। चहौं सुगहौं किधों तिस हनौ।
शाहु समीप सहाइक मेरा। चंदू बली दिवान बडेरा ॥ ३७ ॥

---

1. स्वयं ही मार्ग में सिंह द्वारा खाया जाए। 2. आंतक, भय। 3. मानो उसे मरा हुआ ही देख लिया हो। 4. मार्ग में ही नाश हो जाएगा। 5. कौआ। 6. दुःख का घर। 7. बाहर निकलते ही मृग दाएँ से आकर बाएँ भाग गया। 8. बहुत-से अपशकुन। 9. परीक्षा करके देखे हैं। 10. उसके पास कोई शस्त्रधारी नहीं।

मैं अपशगुन बिचारौं कैसे। को हुइ सनमुख लखौं न ऐसे।
इम कहि सनेसने मग चाला। दुषट रिदे हकार बिसाला ॥ ३८ ॥
पुत्र सखा सभि संग लए हैं। दिवस चलहि थिर निसा भए हैं।
गमनति मग सगरों उलंघायहु। कोठे ग्राम दिशा समुहायहु[1] ॥ ३९ ॥
एक मंज़ल नर पठ्यो अगारी। प्रिथीए को सुधि जाइ उचारी।
सुलही सखा तोहि चलि आयहु। मिलनि हेतु हियरो ललचायहु ॥ ४० ॥
सुनि फूल्यो जनु गुरुता पाई। अबि मेरो दे काम बनाई।
सगल भाँति की ठानिसि त्यारी। त्रिण अरु अंन संचि करि भारी ॥ ४१ ॥
निसि को जागति रह्यो अनंदति। बोलति करति उडीक बिलंदति।
भई प्रात सुलही ढिग आयो। सुनि करि आगे लैनि सिधायो ॥ ४२ ॥
केचित मानव लीनें संगि। मिल्यो जाइ करि धरे उमंग।
दोनहुं उतरि गले सो लागे। बूझति कुशल रिदे अनुरागे ॥ ४३ ॥
हरख हरख परसपर मिलि करि कीनो। पुन प्रिथीए आशख गन दीनो[2]।
सतिगुर करहि मरातब[3] ऊचो। वधहु, मिलिहु जो तुम मन रूचो ॥ ४४ ॥
सदा सहाइ अंग संग रहै। शाहु खुशी करि करि नित चहै।
कहि सुलही बडि क्रिपा तुमारी। अभिलाखा सभि पुरव हमारी ॥ ४५ ॥
कारज तोर मोरि उर रहै। करौं पूर अत्रि कै जिम ग्रहै।
झगरे पाछे छोर न जाऊं। मैं आयो तुझ गुरु बनाऊं ॥ ४६ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'सुलही आगवन' प्रसंग बरननं नाम सपतम दशमो अंशु ॥ १७ ॥

---

1 कोठा नामक गांव सामने आ गया। 2 प्रिथीए ने बहुत आशिष दीं। 3. मरतबा, पद।

अंशु १८
सुलही नषट प्रसंग

दोहरा

उतर्यो कोठे ग्राम ते बहिर, सैन जिह संगि ।
सेवा सभि विधि की करी प्रिथीए धारि उमंग ॥ १ ॥

चौपई

ज्यारत[1] हेतु दरब लै गयो । जाइ सु डेरे प्रापति भयो ।
तंबू मैं मिलि कै सौ दयो । 'गुरु घर कुनका' भाखति भयो ॥ २ ॥
सुलही कहि सभि क्रिपा तुमारी । क्यों धन धर्यो सु ल्याइ अगारी ।
नहीं लेति बरबस इन दीनो । सेवा ते प्रसंन अति कीनो ॥ ३ ॥
मसलति हित इकंत हुइ बैसे । कहि प्रिथीआ अबि करिहो कैसे ।
दिन प्रति धनी अधिक रिपु होवा । चरच्यो बहु सुत बयाहु संजोवा ॥ ४ ॥
शाहु त्रास भी नांहिन मानहि । उमरावनि को कछु न जानहि ।
शाहु दिवान सुता को नाता । मोर्यो कहि कूकर बख्याता ॥ ५ ॥
मोहि अचरज जोइ तिस देखे । सभि सौं करहि हंकार बिशेखे ।
अबि लौ रोम न बांको होवा[2] । वधति प्रताप अधिक ही जोवा[3] ॥ ६ ॥
सुनि सुलही ने धीरज दीनो । शाहु संग आवति कहि लीनो ।
बहुर चंदू को सकल जनाई । शाहु समीपी रहहि सहाई ॥ ७ ॥
पहुंचति श्री अरजन गहि लैहौं । करि बंधन किस दुरग गिरैहौं[4] ।
इक हुइ मास रखौ बिधि ऐसे । हेरि लेउं नर गन कहिं जैसे[5] ॥ ८ ॥
जबि मिट जाइं कहिन ते ब्रिद । रुख लखि लैहौं शाह बिलंद ।
तिह पाछै हुइ कैद मझारी । कहि किह सों तबि दैहौं मारी[6] ॥ ९ ॥
तोहि बनैहौं गुरु जग केरा । चहुं दिशि ते धन मिलहि घनेरा ।
संगति सकल पाइं तव पूजहि । सुत जुति रहनि देउं नहिं दूजहि ॥ १० ॥

---

1. आतिथ्य, उत्तम भोजन-पान आदि । 2. बाल भी बाँका नहीं हुआ । 3. देखा । 4. कैद करके किसी दुर्ग में डाल दूँगा । 5. लोगों को देख लूँगा कि क्या कहते हैं । 6. किसी से कहकर मरवा दूँगा ।

निज बल तबहि सफलता पाऊं। तुव रिपु सुत जुति जबि मरवाऊं।
नांहि त धिक जीवन है मेरा। दियो सखा को सुख न बडेरा ॥ ११ ॥
गहिन तिसै पूरब अभिलाखा। गयो वडाली महिं तत्रि राखा।
नांहित करति काज तबि सारा। अबि लौ हुतौ कवी कउ मारा ॥ १२ ॥
तोरी बात न चंदू जनाई। रिपु मारे तबि देउं मिलाई।
शाहु संग अरु संग दिवान। बनि जैहै तुव बात महान ॥ १३ ॥
इम मसलत सुनि सदन सिधारा। सुलही सुपत्यो निसा मझारा।
प्रात भई करि सौच शनाना। दिवसु चरै तिस निकट पयाना ॥ १४ ॥
बैठि गयो तहिं सहिज सुभाइ। बात कहति निज को बडिआइ।
सुनहु सखा उपकार तिहारो। ग्राम दिवायहु, बसे मझारो ॥ १५ ॥
सुख को पाइ कर्यो निज थाना। कीनि चिनावनि महिल महाना।
बडे जतन ते लगे पचावे[1]। पाक ईटिका सदन बनावे ॥ १६ ॥
कृपा ठानि करि आपि निहारो। मोहि अनंद को अपने बिचारहु।
लोक बसाए क्रिखी[2] बिसाला। आइ पिदाइश[3] बहु सभि काला ॥ १७ ॥
फिर करि देखहु चढ़हु तुरंग। मैं चढ़ि चलौं कालि को संगि।
आज पिखो मंदर अरु आवैं[1]। तुमहुं दिखाईं हरख मुझ आवै ॥ १८ ॥
इम सुनि सुलही आनंद धारा। भयो बिलोकनि को तबि त्यारा।
पुत्र सखा सगरे संगि चाले। बसत्र शसत्र तन पहिरि बिसालै ॥ १९ ॥
प्रिथीए को कर सों कर गह्यो[4]। प्रिथम ग्राम की हेरनि चह्यो।
सनै सनै अंतरि चलि गए। मंदर सकल निहारति भए ॥ २० ॥
अनिक भांति की बातनि करते। इत उत प्रेरति हेरति फिरते।
ग्राम दिखायो जितिक बसायो। तहिं ते पुन बाहर निकसायो ॥ २१ ॥
चले पचावनि की दिशि फेरि। दीखति लगे जु ऊचे ढेरि।
प्रिथीए की सराह को करता। मो महिं प्रीत बिसाल बिचरिता ॥ २२ ॥
जबि आवे पर लगे अरुढ़नि। निकट मीच[5] आई तिन मूढनि।
प्रिथीए को पिशाब तबि आयो। त्यागनि लग्यो रह्यो पिछवायो ॥ २३ ॥
सुलही निज संगनि सों कहे। चलहु उचेरे सभि दिशि लहैं।
खरे होइ चहुंदिश को हेरैं। पहुँचहि द्रिषटि दूरि अरु नेरै ॥ २४ ॥

---

1. ईंटों के भट्ठे। 2. कृषक। 3. उपज। 4. हाथ में हाथ पकड़ कर। 5. मौत।

इम कहि चढ़यो बेग ते मानी। नहिं नीके थलि पिखि अगवानी।
दौर्यो जाति संग सभि लीए। एक स्वास चढ़िहैं हठि कीए ॥ २५ ॥
होनिहार ने मति बिचलाई[1]। सने सने नहिं कीनि चढ़ाई।
श्री अरजन जी शबद बनायो। दीनो स्राप समैं सो आयो ॥ २६ ॥
ऊपर छार दिखाई परै। तरे तिसी के पावक जरै।
ऊपर कछुक भसम करि हेरा। तरै पोलि धसि जानि घनेरा[2] ॥ २७ ॥
जिदति परसपर[3] धाइ पहुंचे। चढ़े पचावे चोटी ऊचे।
गुरु बाक ते धसि गयो ऐसे। प्रान हान ते बचे न जैसे ॥ २८ ॥
धसति भसम ते उद्दरयो बल ते। निकस्यो गयो नहीं तिस थल ते।
बहुर गिर्यो तिसही महिं जाए। साथी गहिन हेतु उतलाए ॥ २९ ॥
हाइ हाइ करते तरफर्यो। उछरि उछरि तिस ही महिं पर्यो।
हुतो हाथ महिं खर[4] गंडासा। उछलति गिर्यो ताहि के पासा ॥ ३० ॥
जहां गिरी ग्रीवा तहिं धारा। ततछिन धर ते सिर कटि डारा।
अगनिसाथ तन भरथा[6] भयो। किसते नहीं निकास्यो गयो ॥ ३१ ॥
उतलावति नर वस न बसावैं। निकटि न होति इतै उत जावैं।
पहुंच्यो नहीं निकासन वारो। दूरि हटे कुछ चल्यो न चारो ॥ ३२ ॥
आप जलनि ते गाति बचावैं। सो जलि गयो न को निकसावैं।
रोदति ऊचे करति पुकारू। मरयो जरति हमरो सिरदारू ॥ ३३ ॥
प्रिथीआ सुनि दौरति चढ़ि गयो। करयो बिलोकनि भुरथा भयो।
बड़े जतन ते तबि निकसावा। चरबी सेत[7] देहि दरसावा ॥ ३४ ॥
हाइ हाइ कहि प्रिथीआ रोयो। कारन कौन अचानक होयो।
मिहरवान के सहत पुकारैं। अश्रु बिलोचन ते गन डारैं ॥ ३५ ॥
मर्यो कुमौत संगि के कहैं। या खुदाइ दोज़क[8] इह लहै।
दफन करनि को तुरक इमान[9]। जर्यो जर्यो दुख लहै महान ॥ ३५ ॥
बहुर दुशाला तिस पर डाला। खाट पाइ करि बहिर निकाला।
कबर खोद करि तहिं दफनायो। सभि महिं शोक अधिक बिदतायो ॥ ३७ ॥
जथा पुत्र भ्राता हितकारी। मरे होति शंकति दुख भारी।
तिम प्रिथीए ने संकट पावा। चितवहि-'मुझ कलंक इह आवा' ॥ ३८ ॥

---

1. होनी ने बुद्धि कुण्ठित कर दी। 2. धंस जाने के लिए खोखला स्थान था। 3. आपस में ज़िद्द करते हुए। 4. तीक्षण। 5. गिरते हुए गर्दन के पास ही (उसकी) धार थी। 6. भुन गया। 7. सफेद चर्बी। 8. नरक। 9. तुर्कों का धर्म है।

सुलही सुत रुदयंति पुकारा। प्रथीए ने पित जारति मारा[1]।
भलो सखापनि को फलदीना। मैं अबि चहौ तोहि संग कीना[2]॥ ३९॥

छल करि जार्‌यो अगनि भखाए। छादि छार चढिवाइ पचाए।
मैं क्या तोहि कपट नहिं जानौं। इसको पलटा तिस बिधि ठानौ॥ ४०॥

इत्त्यादिक सुनि प्रिथीआ डर्‌यो। चहै रिदे तिस हरखनि कर्‌यो।
करको जोरति बिनै बखानै। तुझ ते अधिक हितू हम मानै॥ ४१॥

होनिहार को लखै न कोई। अचवति सुधा हलाहल होई।
पालिय धेनु दूध के लैबे। जिम हुइ शेर उठे तन खैबे॥ ४२॥

कहौं कहां कुछ बाति न कहिबे। मुझ तजि चढ्यो तुरति भा दहिबे[3]।
अपर अनेक दीनता लहि लहि। समुझावति बहु भाँतिनि कहि कहि॥ ४३॥

तिन संगनि को गन धन दीनो[4]। नीठि नीठि पचावनि कीनो[5]।
अपर दुशाले बसत्र अछेरे। बाजी चपल जु मोल बडेरे॥ ४४॥

दरब समेत बिनै बहु कीनि। सुलही सुत को प्रिथीए दीनि।
को दिन रहि करि दिल्ली गयो। जहांगीर के ढिग कहि दियो॥ ४५॥

जर्‌यो अचानक आवै जाइ। होनिहार नहिं मिटहि कदाइ।
प्रिथीआ रह्यो बिसूरति भारो। श्री अरजन प्राप्यो तन जारो॥ ४६॥

कैसे बचहि जु दोखी गुरु को। कौन बचाइ, हत्यो सो धुर को[6]।
स्राप दियो गुरु सबद बनाइ। सौ मैं लिख्यो बनहि इस थाइ॥ ४७॥

श्री मुखवाक।

बिलावल महला ५॥

सुलही ते नाराइण राखु।
सुलही का हाथु कही न पहुचै, सुलही होइ मूआ ना पाकु॥ १ रहाउ॥
कढि कुठारु खसमि सिरु काटिआ खिन महि होइ गइआ है खाकु।
मंदा चितवत चितवत पचिआ जिनि रचिआ तिनि दीना धाकु[7]॥ १॥
पुत्र मीत धनु किछू न रहिओ सु छोडि गइआ सभ भाई साकु।
कहु नानक तिसु प्रभु बलिहारी जिनि जन का कीनो पूरन वाकु॥ २॥ १८।

---

1. प्रिथीए ने (मेरे) पिता को जलाकर मार दिया। 2. वैर। 3. जल गया। 4. उसके संगियों को बहुत-सा धन दिया। 5. ज्यों-त्यों करके मनाया। 6. आदि शक्ति द्वारा मारे गए को कौन बचा सकता है। 7. धकेल दिया, आगे कर दिया।

दोहरा

श्री अरजन को बुरा नित चितवति, चितवति मीच[1]।
बस न बसायहु मूढ को पर्‌यो सु दोजक बीच ॥ ४८ ॥

चौपई

गुर दोखी की दुरगति होइ। हिंदू किधौं तुरक ह्वै कोइ।
इंद्र आदि गुरु दोख न तिषटै[2]। दुख सजाइ लहि पद ते भ्रिषटे ॥ ४९ ॥
खिमा निधान गुरू नहिं रिसै। आपि परमेशुर नासहि तिसै।
हुइ दरगाहु बिखै मुख कारा। मरि कुमौत परि नरक मझारा ॥ ५० ॥
सभि पुंननि को होइ बिनाशी[3]। जनमहि मरहि परहि जम फासी।
इम सुलही गुर दोखी मर्‌यो। घोर नरक महिं ततछिन पर्‌यो ॥ ५१ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ चतुरथ रासे 'सुलही नषट' प्रसंग बरननं नाम अषट दशमो अंशु। १८।

---

1. मृत्यु चाहता था। (गुरु की)। 2. गुरु का दोषी बनकर इन्द्र भी स्थित नहीं रह सकता। 3. सभी पुण्य नष्ट हो जाते हैं।

अंशु १९

'प्रिथीए सौं चंदू' प्रसंग

दोहरा

पहुंची केतिक द्योस महिं सुधि सति गुरु के पास ।
मिलि संगति उतसव कीओ दुषट महां लखि नाश ॥१॥

चौपई

पंचांम्रित करिवाइ घनेरा । सति गुर को जस करहिं उचेरा ।
बारि बारि सो शबद पंठति । जिस ते सुलही मर्यो दुखंति ॥२॥
धीरज धारि भरोसा करिहि । लघु विसाल कहि श्री गुरु पुरिहि[1] ।
'बडे दुषट को भयो बिनाशि । हुइ निचिंत भोगहु सुख रासि ॥३॥
धंन धंन श्री अरजन गुरू । वाक सिंध जिनके रिपुरूरू[2] ।
ब्रहम असत्र सम जथा कहंते । कोटि जतन ते बचहि न, हंते ॥४॥
जबि ते सुलही जर मरि गयो । चिंतो दिध महिं प्रिथीआ भयो ।
गटी अनेक उतार चढ़ावहि । निस बासुर झूरति दुख पावहि ॥५॥
हुते अलंब सैलसम[3] मोरा । भावी बज्र अचानक फोरा ।
जिसने मेरा मान बधायो । ग्राम शाहु ते कहि दिलवायो ॥६॥
सदा चहति रहि करिबे आछो । मैं तिसते नित निज हित बांछो ।
जिस अलंब हौं सदा सुखारो । करति प्रतीखन अनुज संधारों ॥७॥
शाहु सभा सभि अपनी जानति । इस बैठे पिखि बुरा न ठानति[4] ।
शत्रू के घर शादी होवै । मुझ ते अवहि त्रास को खोवै ॥८॥
अपनी अज़मति नरन जनावै । कहि कहि संगति ते पुजवावै ।
तिसु को सुत ले गुरुता गादी । मन भावति लखि ठानहि शादी ॥९॥
मिहरवान मम सुत क्या करै । हेरि शरीकनि को दुख भरै ।
बिपदा परी आनि करि मोही । अब मम कौन आसरो होही ॥१०॥
नहीं शरीरनि को बिस्वास । सुलही सम छिन महिं हुइ नाश ।
मुझ पाछे सुत होइ अकेला । किस के रहै अलंब सुहेला ॥११॥

---

1. अमृतसर । 2. जिनके वचन शत्रु रूपी मृगों के लिए सिंह समान हैं । 3. पर्वत समान अवलंब । 4. उसे बैठा देख मेरा बुरा कोई नहीं कर सकता था ।

अपर उपाइ बनति नहिं कोई। इक चंदू अरजन रिपु होई।
तिस दिवान सों कौन मिलावै। कहि गुर[1], मेरो सुजसु सुनावै ॥१२॥
जिसते अदब साथ मुहि मिले। करौं चिनारी दिल्ली चले।
तिस को ले अलंब मै रहों। अमुज संघारनि[2] .ी विधि कहों ॥१३॥
इत्यादिक नित गटी गिनंता। सिमरि सिमरि सुलही पुछतंता।
अबि गसनति ही रिपु गहि लेतो। करि कै कैद मारि पुन देतो ॥१४॥
सो नहिं भयो आप मरि गयो। भावी आइ अचानक हयो[3]।
उत चंदू दुखीआ पछुतावै। देखहि सुता बदन मुरझावै ॥१५॥
इतने महिं सुधि किसे सुनाई। हरि गुविंद लिय व्याह किथांई।
दरब ब्रिंद खरच्यो तिह समे। चहुं दिशि के नर अनगन नमै ॥१६॥
सुनति मनो किन बरछी मारी। मुख अछादि पौढ्यो तिस दारी।
चितवति-तनिया रही कुमारी। जाति बिखै पति गई हमारी ॥१७॥
नाता हट्यौ न लैहै कोई[4]। मुशकल आनि मोहि कहु होई।
तनीआ दुख देखनि ते आछो। प्रान हान अपने को बांछों ॥१८॥
धिक जीवन मेरो जग मांही। जिस तनीआ पति प्रापति नांही।
नाता फेर्यो रह्यो सुखारो। सो मुझ ते नहिं गयो संधारो ॥१९॥
शाहु दिवान हुकम मम चलै। लोक हजारों मोकहु मिलैं।
जिसने त्रास तनक नहीं माना। मैं न तिदारक तिस सों ठाना[5] ॥२०॥
प्रिथीआ भ्रात वडेरो अहै। कोठे ग्राम सुन्यो सो रहै।
लिख्यो पटा मैं, दीनो जबै[6]। तिस को त्रासद लिखि हौं अबै[7] ॥२१॥
अनुज आपने को समुझावै। नांहि त कोठा ग्राम छिनावै।
देउं बिगार कार मैं सारो। सहत कुटंब गहौं दुख भारो ॥२२॥
निरभै कीनि अनादर मोरा। कहि स कठोर बिप्प्र को मोरा।
लिखि पत्रिका अपनो जोरा। 'अब लगि कहों हाथ मैं जोरा[8] ॥२३॥
नाता मोर सुता नहिं मोरि। यां ते कहौं निहोर निहोरि[9]।
अबि लगि मैं कुछ नहिंन बिगारा। होवै गो सनबंध बिचारा'[10] ॥२४॥
इत्यादिक लिखि करि पठी पाती। निस दिन दुख ते सुलगति छाती।
चलि दिल्ली ते तबि हलकारा[11]। आयसु कोठे ग्राम मझारा ॥२५॥

---

1. गुरु कहकर (पृथीए को)। 2. मार डालने की 3. नाश हुआ। 4. तिरस्कृत सगाई कोई और स्वीकार नहीं करता। 5. उसका प्रबन्ध न किया। 6. जब (पृथीए को) गाँव दिया था, तो पटा मैंने लिखा था। 7. अब उसी को भय दिखा कर लिखता हूँ। 8. अब तक मैं हाथ जोड़ कर कहता था। 9. प्रार्थना पूर्वक। 10. सम्बन्ध होने की भावना विचार कर। 11. पत्र-वाहक, हरकारा।

प्रिथीआ बैठ्यो जाइ निहार्यो। हुतो पत्र तिस आगे डार्यो।
पठि कै हरख कषट जुग धारे। पुनहि बाक भाखे हलकारे ॥२६॥
'तुम किम बैठि रहे सुख माने ?। शाहु दिवान बैरि को ठाने।
नहि अपनो तुम जीवनि चाहा। जिसको हुकम देश के माहां ॥२७॥
सुपतो किम निचित हठि करि कै। झोरी महि बिखधर[1] को धरि कै।
अबि लगि लखै सत्रंध बनै है। नतु पतिशाहु सुनाइ गहै है[2] ॥२८॥
किस के बल अलंब को लीए। बैठे बिना त्रास करि हीए।
सुनि प्रिथीए डरु कीनि घनेरा। बिगर न जाइ अनुज संग मेरा[3] ॥२९॥
मैं अति बुरा कीनि बिलमायो[4]। अपनि द्वैष को नहीं लखायो।
भ्राता जानि गहै जब जबि आई। पति[5] बिगरे क्या बनहि उपाई ॥३०॥
चंदू संग बैर तिस केरा। इस महि भला भयो अति मेरा।
तऊ जनाए बिन निज द्वैख। मो कहु बुरा बनहि सु विशेख ॥३१॥
इम बिचार चार[6] जु सनमाना। दीन बाक[7] तिह साथ बखाना।
'जिन चंदू के संग बिगारी। सो तो मोर शत्रु है भारी ॥३२॥
जे तिह संग करनि कुछ चाहो। बनौं सहाइक सदा उमाहों।
मो कहु इषट हतनि तिस केरा। इस बिधि देहु संदेसा मोरा ॥३३॥
जिस दिन गहहु कि मारउ नांहि। उतसव करौं अपनि घर मांहि।
मैं चाहति हौं नितप्रति मारा। नहीं परंतु चलहि मम चारा ॥३४॥
मैं पित को सुत अहौं बडेरा। सबि ते लघु सो लखहु खुटेरा।
बल छल करि सभि वसतु संभारी। बनि बैठ्यो आपे अधिकारी ॥३५॥
चहुं दिशि के नर दरब चढावैं। भयो धनी बहु, उर गरबावैं।
छीन लीनि मेरो अधिकारा। पित पुरि ते कहि बहिर निकारा ॥३६॥
तुम सभ ने मुहि शाहु मिलावा। एक ग्राम तबि तिसते पावा।
साथ गरीबी करौं गुजारा। लखि मुझ अपनो कीजहि प्यारा ॥३७॥
हमतो तुमरे नित अनुसारे। तिह भ्राता लखि दिहु न बिगारे[8]।
मिहरवानगी हम पर करीए। निज शत्रू को पकरि संधारीए' ॥३८॥
इत्यादिक लिखिकै, हलकारे। कुछुक दरब दे आदर धारे।
खानपान आछे करिवाई। गुरु द्वैष को बहु समुझाई ॥३९॥

---

1. विषधर, सर्प। 2. पकड़वा देगा। 3. छोटे भाई के साथ-साथ कहीं मेरा भी अनर्थ न हो जाये ? 4. विलम्ब किया। 5. इज़्ज़त। 6. पत्र-वाहक को। 7. नम्र वचनों द्वारा। 8. उसका भाई समझकर मुझ से मत बिगाड़ना।

चार बिसरजन कर्यो अनंदे । जान्यो-अबिह्वै काज बिलंदे ।
जथा अचानक सुलही मर्यो । तथा काज मम गुरू सुधर्यो ।।४०।।
हरख करति चितवति नित ऐसे । चंदू बिगरि गहै गुरु जैसे ।
दिल्ली बर्यो जाइ हलकारा । पाती देति ब्रितांत उचारा ।।४१।।
'अनुज साथ सो बैर धरंता । प्रानहान लौ जतन करंता ।
सुलही ते चाहति गहिवायो । सो मरि करि जम धाम सिधायो ।।४२।।
अबि वांछत डर, हतहि दिवान । मो समीप बहु बार बखान ।
मेलि चहति है रावरि संग । करहि जतन गहिवे गुरु अंग ।।४३।।
आप हकारो तूरन आवै । अनिक भांति की घात बतावै ।
तुमको हुइ सुखैन गहि लेनो । चहहु सजाइ करहु तबि देनो ।।४४।।
कै कंन्या को लेहै नाता । कै मानहि निज प्राननि घाता ।
करहु जतन रहि आवहि लाजा । सुधरहि नीके बिगर्यो काजा' ।।४५।।
सुनि करि चंदू हरखति होवा । लेऊं बैर सहिजे-तबि जोवा ।
जे रिपु घर महिं भेद परंता । तौ सुखेन ही काज बनंता ।।४६।।
जथा अश्रु निकसहिं चख द्वारे[1] । अंतर दुख लखियति बिधि सारे ।
त्यों रिपु को सभि भेद बतावै । भ्राता फटि करि जे मिलि जावै[2] ।।४७।।
कहिन शाह सों बनै बहानो । भ्रात पुकारू दुखी महानो ।
यांते अबि बुलाइ करि तूरन । करों मनोरथ अपनो पूरन ।।४८।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे, 'प्रिथीए सौं चंदू प्रसंग' बरननं नाम ऊन बिसती अंशु ।।१८।।

1. यथा आँख-द्वार से अश्रु निकलने पर (मन की समूची पीड़ा दीख पड़ती है)।
2. यदि भाई फूट कर साथ आ मिले ।

अंशु २०

चंदू मिलनी प्रसंग

दोहरा

लिखी पत्रिका तबि भले अपनि जनायहु प्यार ।
'आवहु मोहि समीप अबि, द्वैष जि इसी प्रकार ॥१॥

चौपई

रचौं जतन मिलि संग तुमारे । गहि लैहों ततछिन तिस मारे ।
मैं जि सहायक होयहु तेरा । बनै काज, तजि कपट बडेरा' ॥२॥
इत्यादिक लिखि चार[1] पठावा । 'मिलहु आनि, कहु, जिम गहि जावा' ।
पंथ उलंघति कोठे आयो । मिलि प्रिथीए सों सकल सुनायो ॥३॥
'तुव दिशि ते मैं बहु समुझायो । सुनि हरख्यो अबि निकट बुलायो ।
मिलहु, दुहनि को सुधरै काजू । उठो चरन धरि मग महिं आजू ॥४॥
नहिं बूझो पांधा[2] चलि परीअहि । अपनि मनोरथ पूरन करीअहि' ।
सुनि प्रिथीए नहि बिलम[3] लगाई । बड़वा[4] पर काठी बधवाई ॥५॥
मिहरवान सों करि करि प्यारू । छोर्यो करि चौकस परवारू ।
'अबि के जाइ लेय हौं गादी । शाहु दिवान भयो बहु बादी' ॥६॥
कहि इत्यादिक करमो संग । धीरज दे करि चल्यो उमंग ।
चलै दूर मग बासुर सारे[5] । निस महिं बसै कुकरम चितारे ॥७॥
थोरनि दिन महिं दिल्ली गयो । प्रविश्यो कित निवेस करि दयो ।
पठ्यो दास तबि चंदू पास । 'आयो मैं उर धरे हुलास' ॥८॥
सुनि सुध को निज निकट बुलायो । जाइ दास ने तबै सुनायो ।
'गमनहु तुरत, काज बनि आयो । सुनि प्रिथीआ मन महिं हरखायो ॥९॥
सूखम बहु पालनि को जामा[6] । पहिरि पाग बांधी अभिरामा ।
पुन चंदू के दैवे हेत । जिम सिरुपाउ गुरू सिख देति ॥१०॥

1. दूत । 2. आकर मिलो और बताओ कि वह कैसे पकड़ा जा सकता है । 3. किसी मुहूर्त्त की प्रतीक्षा न कर अर्थात् बिलम्ब न कर । 4. घोड़ी । 5. सब दिन 6. वस्त्र ।

अधिक मोल की पाग मंगाई । जरी छोर द्वै बहुति लगाई[1] ।
तैसे लियो दुकूल अछेरा । तिस हित खरच्यो मोल बडेरा ॥११॥
दास पास ते सो उचवाए । अपर वसत्र ते लीनि दुराए ।
कछुक संग नर पहुंच्यो जाई । 'आवति हैं' सुधि अग्र पठाई ॥१२॥
खरो भयो चंदू जबि हेरा । मिले भुजनि भरि जुग तिस बेरा ।
पुन बैठे इक आसन दोऊ । देखि परसपरि हरखति सोऊ ॥१३॥
प्रथम प्रिथीए प्रिथक करनि की । कही बारता जथा गुरनि की ।[2]
'मैं जेषट सुत बैठो रहिओ । बल छल ते गुरता पद लहिओ ॥१४॥
हुते नानके गोइंदवाल । तिन को पक्खी कीन बिसाल ।
इक भल्ला तहिं ते गुरदास[3] । सो ले ले संगति तिस पासि ॥१५॥
करे मिलावनि धन अरपावै । कहि कहि महिमा अधिक बधावै ।
देश बिदेशनि महिं प्रगटायो । धनी होइ करि गरब बढायो ॥१६॥
तुहमति[4] मुहि तुफान की लाए । पित पुरि बसति हुते निकसाए ।
सुलही हुतो सहाइक मेरा । मर्‍यो अचानक दुखद बडेरा ॥१७॥
अबि अलंब[5] मैं गह्यो तुहारो । बांह गहे की लाज बिचारो ।
सुत जुत[7] हतहु कि कैद करीजै । नाता[6] फेरनि को फल दीजै ॥१८॥
गुरता गादी मैं अधिकारी । मोहि दिवावहु करुना धारी' ।
सुनि चंदू नै धीरज दीनि । अबि न चिंत करि चीत मलीनि ॥१९॥
मेरे संग बैर नहिं बाधा । चाहति निज प्राननि को बाधा ।
सकल बिनासों तिस हंकारा[4] । कारा ग्रहि महिं परै दुखारा ॥२०॥
दिउं सजाइ नाता मनवाऊं । तौ चंदू मैं नाम कहाऊं ।
करौं दीन दुख ते सभि भांती । तिस बासुर हुइ सीतल छाती ॥२१॥
जाति बिखै पतिमोर बिगारी । दुहिता साक हट्यो दुखभारी ।
जावति लवपुरि को नहिं जावति । तावति सुख, मैं साच बतावति ॥२२॥
अबै शाहु को दिउं उपदेश । होइ प्रवेश सु माझे देश ।
तहां जाइ करि जतन बनावों । करि फरेब को निकट बुलावों ॥२३॥
इक बार निज धरि महिं बार । दै दै हौं पुनबार किवारि ।
जथा व्याध को जार पसार । करै फसावनि बिहंग[8] उदार ॥२४॥

---

1. दोनों छोरों पर जरी का काम था । 2. पृथिए ने पहले गुरु-पद से पृथक् किए जाने की वार्ता कही । 3. वहां का एक भल्ला जाति का व्यक्ति गुरदास है । 4. लांछन । 5. आसरा । 6. दोनों बेटे । 7. विवाह का रिश्ता । 8. अहंकार । 9. पक्षी ।

तिस पाछे गरता बर गादी । पहुंचहि तोहि करो नित शादी ।
रह्यो प्रतीखति एतो समै । हठि को त्यागि मोहि दिसि नमै ।।२५।।
नाहि त अबि लगि मैं गहिवावति । जिम चाहति तिस ते मनवावति ।
कै ले नाता, कै दे प्रान । निशचै हुइ है इही निदान ।।२६।।
सुनि सुनि प्रिथीआ अंग न भावै । करि अनंद चंदू बडिआवै ।
तुम मालिक जग के समरत्थ । बखशनि हतनि नरनि बिच हत्थ ।।२७।।
इम बक सम अघ[1] चितवति दोऊ । सिरेपाउ चहि दैबो सोऊ ।
बहुत मोल को जरी बिसाला । गुरु घर को लिहु रहो सुखाला ।।२८।।
सादरचंदु ने तबि लीनि । सिर पर धरि करि आनंद कीनि ।
दरब मंगाइ अरपना[2] करे । हाथ जोरि नंम्रयो हित धरे ।।२९।।
प्रिथीए निशचे कीनसि तबै । गुरता प्रापति मोको अबै ।
सुलही ते इह अहै महान । मालिक मुलकनि शाहु दिवान ।।३०।।
कर्यो सखापनि सुख को पाए । चितहि मनोरथ हुई दुखदाए ।
केतिक दिन तबि दिल्ली रह्यो । नित चंदू मिलि हुइ हित लह्यो ।।३१।।
सदन जानि को पुन चित चाहा । गमन्यो शाहु सचिव के पाहा ।
सादर बैठे मसलति करें । श्री अरजन संग अघ को धरें ।।३२।।
मोकहु देहु विदा, घर जावौं । बीत्यो चिर, कुटंब सुधि पावौं ।
रहौं प्रतिखति पंथ तुमारा । आवनि महि नहि करहु आवारा[3] ।।३३।।
एक आसरो हम ने हेरा । तुम ते कार सुघर[4] है मेरा ।
बारि बारि क्या कहौं बनाई । जानति सभि बिधि की चतुराई ।।३४।।
ज्यों क्यों करहू शाहु को त्यारी । लवपुरि थिरहु आइ जिस बारी ।
रावरि संग मिलौं मैं आई । तहि लै हैं सभि बात बनाई ।।३५।।
मैं पुकार करि हौ तिस थाना । बनहि बुलावनि केर बहाना ।
लवपुरि महि निज घर ले जावहु । मन भावति रिपु संग करावहु ।।३६।।
चंद रोज महि चंदू कहै । हमरो आवनि हुइ तहि रहै ।
बिलम[5] नहीं बहु, जानहु साची । हुइ पूरन जिस महि रुचि राची ।।३७।।
मिलहु आइ, सभि कार सुधारें । गुरता देहि शत्रु को मारें ।
महां दुसट सों मसलति करि कै । भयो बिसरजन[6] सुख उर भरि कै ।।३८।।

---

1. पाप । 2. अर्पण किया । 3. देरी । 4. आसान । 5. बिलम्ब, देर । 6. विदा ।

दिल्ली ते ह्वै करि असवार । गमन्यो तूरन[1] मग पग डारि ।
पहुंच्यो कोठे गाम मझारा । मिल्यो आनि अपने परवारा ॥३६॥
मिहरवान को ले करि गोद । बैठ्यो प्रिथीआ पाइ प्रमोद ।
चंदू संग मिलनि हरखावनि । सभि कर्यो ढिग करयो बतावनि ॥४०॥
केचित दिन महिं गुरता गादी । हम ढिग आइ होहि सभि शादी ।
प्रथम सहाइक भयो बिनाश । अबि चंदू हम करहि हुलास ॥४१॥

इति स्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे चंदु मिलनि प्रसंग बरननं नाम बिंसती अंशु ॥२०॥

1. शीघ्र ।

अंशु २१

गोइंदवाल गमन प्रसंग

दोहरा

श्री अरजन जग सतिगुरू संगति करति उधार।
सहत अनंद बिलंद के कितिक काल को टारि ।।१।।

स्वैया छंद

सिखय हजारों शरनी[1] परि हैं सत्तिनाम को दें उपदेश।
अजमति जुति बहू जीव मुकति भे काटे बंधन कुमति कलेश।
सेवा करि करि शरधा धरि धरि पातक[2] हरि हरि भए विशेष।
कितिक समीप रहति नहिं गमनति, दरशन को सुख लहै अशेष ।।२।।
अपर[3] देश करिवे किरतारथ कितिक बिसरजन ह्वै चलि जाइं।
रिदे ध्यान गुरू रूप वसावहिं, निशचल मति करि नहीं डुलाइं।
मिलहिं तिनहू उपदेशति सिक्खी, असि[4] ते तिक्खी जो अधिकाइ।
गुरु भाणे कहु मानैं सुख सों इक सम ब्रिती न शोक उपाइ ।।६।।
जहिं कहिं गुर की बाणी बिथरी, सुथरी करहिं कंठ हरखाइ।
पातक दादर गनको अहनी, दहनी बिघन बिपन समुदाइ।
त्रिगनि बिकार ब्रिद को शेरनि, प्रेरनि मन की प्रभु दिसि धाइ।
ब्रहम ग्यान की सुगम सुजनिनी, हननी[5] मोह, जननि सुखदाइ ।।४।।
पाठक पुंज मनोरथ पुरनी, फुरनी अनुभव की उर मांहि।
कूर बिश्यन की अहै बिरागनि, रागनि सत्तिनाम की आहि।
प्रेमा भगति उपावनि हारी, हारी निंदक ब्रिंदन दाहि।
पठि गुरू सिक्ख क्रितारथ होवति, जोवति अपनि रूप सुख पाहि ।।५।।
जिसं हित जग अवतरे प्रभु जी सभि जीवनि की चहिं कल्यान।
होति निता प्रति कारज ऐसे, जैसे वधहि भगति अरु ग्यान।
पुरवनि बिखै आइ गन संगति मंगति सत्तिनाम दे दान।
आइ उपाइन अरपहिं पग पर, परहिं शरन करि संकट हानि ।।६।।

---

1. शरण 2. पापी 3. दूसरा 4. तलवार 5. नष्ट करने वाली।

इक दिन श्री अरजन गुरु बैठे हरि मंदर महिं शुभति विसाल।
महांदेव तबि त्याग सदन को करि शनान श्री अंम्रित ताल।
गयो अनुज के निकट, देखि तबि लियो बिठाइ मान के नाल[1]।
शबद रबाबी गावति सुंदर, सुनति रह्यो करि प्रेम बिसाल ॥७॥
चौकी को जबि भोग पर्यो तहिं श्री मुख ते फरमावनि कीनि।
बडी क्रिपा करि तुम चलि आए, आइसु देहु उचित चित चीनी।
हम रावर के नित अनुसारी अहो शांति मति गुर जसु भीनि।
भली बारता नित समुझावति ग्यान उदिधि[2] महिं सद मन मीनि ॥८॥
महांदेव उर हरख्यो अतिशै तुम को ऐसे ही वनि आइ।
सरब जगत के गुरु शिरोमणि मुझ को बोलति बहु वडिआइ।
अहै वडनि की इहु वडिआइ पर जस कहिनो अपनि दुराइ।
बडो भ्रात करि मुझ को जानहू तुस गुन महिं सभि ते अधिकाइ ॥९॥
श्री नानक आदिक की गादी तिस पर बैठें तिनहु समान।
मो उर बिखै प्रतीति भई अबि, नांहि न अनुज आपनो जानि।
बिनै सहत में कहति तुमहुं को अपने नाने गुरू महान।
गोइंदवाल अंश है तिन की हमरे संग सु सनेह सु ठानि ॥१०॥
श्री गुरु अमर दिवस शुभ पूनो उतसव करति सकल हरखाइ।
सिख संगति गन मिलहि आइ करि, पाइ महां फल सभि सुखदाइ।
है मम चित महिं तहां जानि की चहौं तुमारी अबहि रजाइ।[3]
केतिक दिवस रहौं पुरि तिसहि, जीवति रहयो मिलहिं पुन आइ ॥११॥
सुनति भ्रात ते हरखति होए कह्यो बुद्धि तुमरी को धंन।
हम भी चलहिं करहि सभि दरशनि उतसव पूरनमा मन मंनि।
हुइ इकत्र पुरि पिखहिं पवित्रा जहां बचित्र पाइं फल जंन।
चिर बीत्यो दरसे बिन थल को उमगति रिदा[4] बिलोक प्रसंन ॥१२॥
इम सादर बहु भ्रात सराह्यो, महांदेव सुनि करि हरखाइ।
अपर बारता[5] अमर गुरू की करति शलाघा[6] रुचि उपजाइ।
सम पारस के परसे जिसके हुते मनूर सु हेम[7] बनाइ।
बन महिं जिम इक बावन चंदन तरू सुगंधति करि समुदाइ ॥१३॥
देश बिदेशनि महिं निज दासनि करामात साहिब करि दीन।
नरनि हजारनि के बच फुरि हैं सुर आदिक सभि करे अधीन।

---

1. इज्ज़त के साथ। 2. ज्ञानसागर। 3. आज्ञा। 4. हृदय। 5. अमरवार्त्ता, अमरकथा। 6. प्रशंसा। 7. सोना, स्वर्ण।

जिम आइसु करि देति सुभाइक मानहिं तिम बासी पुर तीन।
सिक्खी जहिं कहिं बहु बिसतारी, बिशयनि बिसतारी दुख हीन ॥१४॥
इसते आदिक करति प्रसंसा हमरे पित पर अधिक क्रिपाल।
प्रिय पुत्रनि ते आदि तजे सभि दई बडाई करे बिसाल।
जम आदिक गन व्याधि[1] नरनि की निज पुरि ते बरजे दुख जाल।
कौन कौन गुन तिन के भनी अहि अंत न पयति भगति रसाल ॥१५॥

उठे बहुर श्री अरजन सतिगुरु निज निज सदन गए सभि कोइ।
निसा परी भोजन शुभ करि के सुठ प्रयंक[2] पर पौढति सोइ।
प्रातकाल करि सोचि शनानहि चलिबे हेत त्यार गुरु होइ।
महांदेव को संग मिलायहि चहति जु दरस साथ भे सोइ ॥१६॥

नंदन हरि गोबिंद रिपु कंदन, चंद मनिंद बिलंद दुलारि।
दे धीरज बीरज जुत सुत को, हाथ बंदितिन बंदन धारि।
हटे निकेत समेत सिखय गन, सतिगुरु गमने पंथ मझारि।
दास मसंद ब्रिंद सिख संगी संग चले जैकार उचारि ॥१७॥

उलंघे मारग गए ग्राम ढिग नाम खडूर गुरु इसथान।
सुनि दातू दित आदर आयो ले निज संग प्रवेशनि ठान।
डेरा करवाइसि शुभ घर महिं नीर अनाइ पखारे पान।
पग पखार[3] करि टिके कितिक चिर श्री अरजन ह्वै करि सवधान ॥१८॥

ले दातु संग श्री अंगद थल गए दरस करिवे दरबारि।
दरब दीनि, अरदास कराइसि, हाथ जोरि ठांढे अगवारि।
बहुत प्रसादि तहां बरताइसि, नमसकार कीनिसि हितधारि।
दई प्रकरमा चारबारि फिरि सिख संगति सभि तिसी प्रकारि ॥१९॥

पुनह सिवर[4] महिं पहुंचे सतिगुरु दात सेवा सरब कराइ।
निस सुपते उठि प्रात चले गुर गोइंदबाल अनंद उपाइ।
सुनि आगवनू अपने भवनू दुशमन दवनू जुत समुदाइ।
निकसि मोहिरी आगे आइ सु मिल्यो रिदे बहु प्रेम बधाइ ॥२०॥

पुत्र आदि परवार अगारी मिल्यो गुरु सो आगे आइ।
दुहि दिशि बंदन करी भाउ धरि कुशल पुछ करि सुख को पाइ।
सुंदिर बिखै उतारे रुचिर प्रयंक डसाए ल्याइ।
सकल भांति की सेवा कीनसि खान पान आदिक समुदाइ ॥२१॥

1. संकट। 2. चारपाई, बिस्तर। 3. पांव धोकर। 5. शिविर।

निस महिं सुपते, उठे प्रात को, जाइ बावली[1] कीनि शनान।
सिख संगति तैसी विधि करि कै पुनह चुबारे दरशन ठानि।
श्री गुरु अमर अंग सभि मिलि के कीनसि चरचा आतम ग्यान।
भन्यो, सुन्यो, मन गुन्यो भले करि, सभि महिं भयो अनंद महान ॥२२॥
कितिक दिवस बसि पुरी बिताइसी पुन पूरनमाशी दिन आइ।
डल्लेवासी आदिक सिखगन भयो मेलि आए समुदाइ।
घ्रित, मिषटान चून गोधुम को, सूखम चावर[2] सूप लिआइ।
संचे भयो ब्रिंद सामिग्री देग हेति सिध स्वादि रसाइ ॥२३॥
सिखय ब्रिंद सेवामहिं ठाँढे को जल आनहि, इंधन जालि।
भयो अहार सु त्यार अनिक विधि सिख संगति थित संगत नालि।
श्री अरजन जलनिज कर धरि कै, चरन पखारै प्रीत बिसालि।
महांदेव, सेवा महुं लागे बरतावहि बहु असनरसालि ॥२४॥
मोहन, अनंद, मोहरी आदि जि सभि संगति की सेव करंति।
श्री गुरु अमरदास को मख[3] है इस कहि सगरे टहिल चहंति।
केतिक अचति कितिक बरतावति केतिक जल को देति पिवंति।
लोक हजारहुं मेलि भयो वड अधिक कुलाहन सुने शुभंति ॥२५॥
भाउ भगति बहु संगति पंगति मंगति जो पुरवति अभिलाख।
बड उतसव करि पूरनमाशी असन खुवाइ खाइ करि कांखि।
भयो प्रमोद सभिनि के मांही गुरू अमर के जसु को भाखि।
करि गुरु दरशन हरखति ह्वै करि बहु नर मिले भाउ चित राखि ॥२६॥
इम . पूरनमाशी को मेला गुरु दरशन करि नर समुदाइ।
आज दिवस महिं गुरु अमर को देखनि के फल को नर पाइ।
सभि संगति महिं आइ प्रवेशति महां महातम कह्यो न जाइ।
गुरु जसु को इम उचरति गमने आपो अपने सन सिधाइ ॥२७॥

दोहरा

मेला भयो सु बिछरगा श्री अरजन करि बास।
पूरनमा पीछे रहे मोहन, मुहरी पास ॥२८॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे गोइंदवाल गमन प्रसंग बरननं नाम एकबिंसती अंशु ॥२१॥

---

1. बांवड़ी, तालाब। 2. सूखे चावल। 3. यज्ञ।

अंशु २२.

महांदेव प्रलोक प्रसंग

दोहरा

पूरनमा के जग्ग्य महिं सिख मेला दरसाइ ।
दरशन जिम श्री अमर को फल तैसे नर पाइं ।।

सवैया छन्द

श्री अरजन पुन पुरि महिं बासे होति भयो अतिशै सतिसंग ।
नितप्रति चरचा आतम केरी करहिं जानि इह तनु छिन भंग ।
भजन पराइनि इक रस ह्वैं करि प्रीति वधहि परमेशुर संग ।
सभि को उपदेशति म्रिदु बाकनि[1] जिसते चढ़हि भगति को रंग ।।२।।
सवा जाम जामनि ते किरतनु करहिं रबाबी शबद उचारि ।
श्री अरजन जुत मुहरी आदिक सुनै सकल अरु करहिं बिचार ।
मिथ्या जगत जानि करि निशचे अंतर ब्रिती करहि सुखकार ।
मनो महाँ मुनि मन सुध करिबे कपल रिखी जुत के अनुहार ।।३।।
देखि प्रताप अनुज को तबिही जिन के उपदेशति हुइ ग्यानु ।
भ्रात सबंध जानि करि कूरो महांदेव शरधालु महान ।
तन तजिबे को सभै निकट लखि जनम सफलता चहि मनमानि ।
श्री अरजन को लखि इकांत महिं गयो समीप बैठि हित ठानि ।।४।।
श्री सतिगुरु की गादी पर तुम इशुर[2] के सरूप अवतार ।
मैं भ्राता ही जानति नित चित, अबि बखशो तुम रिदा उदार ।
उपदेशहु इहु आतम को है, किम बंधन मैं दुख गन धारि ।
किम सुख लहै दहै जग संकट, मोहि सुनावहु भली प्रकार ।।५।।
श्री अरजन शरधालु भ्रात लखि अरु जान्यो तनु तजिबे काल ।
उत्तम अधिकारी, लघु कहिबे समझहि गो[3] ब्रह्म ग्यान बिसाल ।
करनि लगे उपदेश म्रिदुल बच: भ्रात सुनहु इह बात सुखाल ।
आपहि बंधन लहि दुख भोगति श्री नानक कहि गिरा रसाल ।।६।।

---

१. वाणी । 1. ईश्वर । 2. इन्द्रियां ।

॥सलोकु । मः १॥

नानक इहु तनु जालि जिनि जलिऐ नामु बिसारिआ ।
पउदी जाइ परालि पिछै हथु न अवडै तितु निवंधै[1] तालि ॥१॥

सवैया छन्द

प्रथम कुबंधन पर्‌यो सुनहु सो अहै आतमा ताल समान ।
तनु हंता धारनि इन कीनी मैं दिज खत्री बैस सुजान ।
इत्यादिक तन अपनि रूप लखि भयो जानि हरिआवलि आनि ।
जल को कर्‌यो अछादन जैसे तिम सरूप निज छादनि ठानि ॥७॥
अहं ब्रहम इह नाम बिसारवो तनु हंता जब्रि धारनि कीनि ।
पुनहु पराल घास अरु फूस जु पर्‌यो जाल परि भा बहु पीन[2] ।
तिमि हंता पर ममता उपजी मम सुत मम ग्रिह, त्रिय[3], धन चीन ।
जल सम आतम अधिक अछाद्‌यो परदा मोटो भयो नवीन ॥८॥
ब्रित न पहुंचे इन दुइ को तजि फस्‌यो इनहु महुं, जाने नांहि ।
जबि सतिगुर उपदेश जतन को जल आतम प्रापति निज मांहि ।
इन दोनहु ते दुख को भोगहि अति दुख कं मुख लखि चित चाहि ।
वहिर ब्रिति ते उठहि वाशना तिन अनुसार जनम को पाहि ॥९॥
इह परदो तन् हंता ममता त्यागे ते आतम लखि लेति ।
मन को इंद्रय संगि सबंध जु इह बंधन अतिशे दुख देति ।
इंद्रय ते हटि करि हुइ फिर जबि टिक जावै मन रिदे निकेति ।
सो मुकती है सुखद परमगति कहति संत सभि बेद समेति ॥१०॥
बुधि ते गेय आतमा ब्रहम जु नहिं किस इंद्री विषय बिचार ।
ग्याता पाइ अनंद उदधि[4] की ततछिन मिलहै तांहि मझार ।
नहीं बाशना उठहि बहुर कबि जनम मरन नहिं हुइ संसार ।
सार असार बिचार धार करि सार गहै सभि त्याग असार ॥११॥
अंतर ब्रिती होइ करि जानहु वहिर नहीं कुछ सभि इस मांहिं ।
महांदेव सुनि द्रिग जुग[5] मुंदे अंतरि ब्रिति ते वहिर न आहि ।
ततछिन लगी समाधि अंचलि चित रस को पाइ तजति सो नाँहिं ।
बीत गए जुग जाम थिरयो जबि श्री अरजन तबि गहि करि बांहि ॥१२॥
धंन बिति तुमरी गुरुसुत हो, कहो तनक ते उपज्यो ग्यानु ।
लहहु समाधि वहिर की अबि तुम जगत आपनो रूप पछान ।

---

1. नीची जगह । 2. मोटा । 3. स्त्री । 4. उदधि समुद्र । 5. दोनों आंखें ।

ब्रहम सु दीसहि ब्रहम सु सुनिऐ तिस बिनु ऊन नहीं को थान[1] ।
जागति सुपति उठति अरु बैठति फिरति सथिति इकरस ब्रिति ठानि ॥१३॥
द्रिग उघार करि अनुज बिलोक्यो महिमा महां जानि सुख पाइ ।
निस बासुर[2] की महां समाधी सो सभि जानी इक रस भाइ ।
एक आतमा पूरन नभ सम, अंतर वहिर ब्रहम द्रिषटाइ ।
नमसकार करि उठति भयो तबि कहां भयो इहु चित बिसमाइ ॥१४॥
राग न द्वेष न मोह न माया परदा मिट्यो पछान्यो एक ।
इक दुइ दिन पुन बसे तिसी पुरि अति सुख पाइसि परम बिबेक ।
तबि श्री अरजन गिरा बखानी सुनहु भ्रात तन तजिबे टेक ।
दोइ दिवस महिं प्रानि त्यागहु बसहिं इहां हहिं सिख्य[3] अनेक ॥१५॥
श्री गुरु अमर अंश है इहनां पित, नाने तनु त्यागनि थान ।
ज्यों गज[4] फूल माल को डारे, तिम तुम तजो देहि सुख मानि ।
सुनति प्रफुल्लित महांदेव भा अबि कुछ करनो रह्यो न जान ।
नहिं चिन्ता तन राखनि त्यागनि, होहि भले करमनि ठानि ॥१६॥
नित अमर, न जनम न मरनो मिथ्या देह न थिरता[5] पाइ ।
इम कहि रह्यो अनंदति अतिशैं भ्रम अग्यान समेति बिहाइ ।
बीत गए दिन, समां सु आयो जान्यो तनको तजनि सुभाइ ।
श्री अरजन ढिग ह्वै करि पौढ्यो कह्यो प्रान अबि मेरो जाइ ॥१७॥
तबि सतिगुर परवार सहत को मुहरी ततछिन लीनि बुलाइ ।
संसराम जिह साथ अरथमल सिख संगति आनन्द सु आइ ।
सत्ता अरू बलवंड बुलाए करह कीरतन बच फुरमाइ ।
भई भीर धुनि उठी शबद की सुनि बैराग सभिनि उपजाइ ॥१८॥
महांदेव सभिहिनि को पिखि करि कर को जोरि बंदना कीनि ।
छिमहु सरब ही जे मम अवगुन सति संगति गुर सिख्य प्रवीन ।
देहु सकल बर मन लहि थिरु उर परमेशुर मैं होवसि लीन ।
सुनि करि सभिनि नमो तिसको करि अश्रु भरे द्रिग तनु तजि चीन ॥१९॥
पौढ्यो पाइ बदन पर अंबर, तत्तछिन तन तजि सभिनि मझार ।
लीन भयो श्री अरजन महिं तबि लही एकता गती उदार ।
धंन्य धंन्य मुख करहिं उचारनि उसतति सुजसु भनति बहु बार ।
सत्तिनाम सिमरहिं बैरागहिं इह जग सगरो दीसति छार ॥२०॥
ससिकारिनि की बिधि सभि कीनसि जल बापी ते तांहि शनान ।
सुन्दर बसत्र सरब पहिराइव बहु धन ते बनवाइ बिबान[6] ।

1. स्थान । 2. रात-दिन । 3. शिष्य । 4. हाथी । 5. स्थिरता । 6. अरथी ।

चहुंदिसि महिं सुमनसि लरकाइसि पाइ दुशाला मोल महान।
गन चंदन अरु संचै काषट[1] तीर बिपासा डारे आनि ।।२१।।
श्री अरजन अरुसंग मोहरी ब्रिध, गुरदास आदि समुदाइ।
कंध उठाइ चले पुरि बाहिर धुनि संखनि की अधिक वजाइ।
चमर ढुरावति जाति ब्रिंद नर तीर विपासा सुन्दर थाइं।
चिनि करि चिता सु चंदन गन ते ऊपर देहि धरयो उचवाइ ।।२२।।

श्री अरजन कर लीनि अगनित बिनर अनुसार रुदन को ठानि।
कीनि लगावनि ऊचे रोदति दिखि सभि ही के अश्रु चुचानि।
ब्रिध ने सभि समुझाए कहि कहि करहु न शोक इहीं मग जानि।
मिथ्या तन हैं बिनसनि हारे, मेलि वन्यो जल नाउ समानि ।।२३।।

जथा प्रवाह नदी को चलि है त्रिण[2] मिलि जाहिं विछुरते फेरि।
तथा सम्बन्ध शरीरनि सभि को ग्यानी जानहि जग हम हेरि।
कहां शोक इस तन को करिवो नित परणामी नसहि अदेरि।
एक आतमा सो सति समझहु आइ न जाइ अनंद वडेर ब्रडेर ।।२४।।

इम सुनि करी कपाल क्रिया उठि पुनह बिपासा नीर शनान।
गाइ राग वडहंस रबाबी पौडी लाइ सुनावहिं कान।
दीनि तिलांजुल नाम लीनि तिह पंचाम्रित बरताइहु आनि।
सने सनै पुन पुरि महिं आए बापी आगे लाइ दिवान ।।२५।।

ब्रिंद नरनि की भीर भई तहिं शबद रबाबी सुन्दर गाइं।
कितिक काल थित ह्वै नर गमने गुरु प्रसंसति सदन सिधाइ।
सुनि सुनि ग्रामनि के सिख पहुंचे श्री अरजन सतिगुरु ढिग आइ।
मिलि मिलि गमनै गुन गन बरनहिं महादेव अबि गए समाइ ।।२६।।

दिवस तीसरे पुषप भसम सभि बीच बिपासा के तिह डारि।
दिन दोइक श्री अरजन तिहठां बसे क्रिआ करि जितक संसारि।
करि जथोचित सकल बारता जथा मोहरी बचन उचारि।
मिलि मिलि करै विराग अनिक बिधि श्री गुरु अमर केरि परवारि ।।२७।।

दोहरा

सोलह सत ऊपर सपत महांदेव जनम्यासु।
ऊपर पाँच पचास के बरस वैस द्वै मासु[3] ।।२८।।

---

1. काठ। 2. तिनका। 3. पचपन साल, दो महीने।

सोलह सत बाहठ[1] अधिक भाद्रों चौथ बिचार।
महादेव परलोक भा गुरु को पुत्र उदार ॥२६॥
श्री अरजन तबहि सति संगति ले संग।
श्री अंम्रितसर को गए देति भगति को रंग ॥३०॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ चतुरथ रासे महांदेव प्रलोक प्रसंग बरननं नाम द्वै बिंसती अंशु ॥२२॥

1. सोलह सौ बासठ, 1662।

अंशु २३

श्री गुर गुन प्रसंग बरननं

दोहरा

इस प्रकार श्री सतिगुरु केतिक समें बिताइ ।
करति नरनि कल्लयान को सिक्खी जग प्रगटाइ ॥१॥

॥ निशानी छंद ॥

श्री हरि गोविंद चंद जी आनंद बिलंदे ।
चढ़ै तुरंग[1] कुरंग[2] जनु दुति मोर मनिंदै ।
अधिक पलाइ फंदावते धनुसर धरिहाथा ।
कवि अखेर[3] हित गमनते लैके सिख साथा ॥२॥
बिदय आयुध की करहिं दस संमत बैसा ।
तीर प्रहारति वेग ते रिपु को अहि जैसा ।
महां सफाई बल सहत धरि लच्छ हनंतें ।
गरक होति जहिं लगति है सेवक निकसंते ॥३॥
आरवला जिन की अलप शुभ डील बिसाला ।
भुजा पलंब अलंब बल गहि धनुष कराला ।
सुकचति पित ते करति हैं इह रीति नवीना ।
शुभति सिकंध उतंग जुग मुख बाक प्रबीना ॥४॥
दिढ संधी जग बांह की भुजदंड प्रचंडे ।
करसाखा दीरघ सुमिलि शुभ रेखनि मंडे ।
रेखा लगि मणिबंध ते भई मच्छ अकारा ।
रेखा छतर अकार की जिसको फल भारा ॥५॥
अयुत छाती उदर पर त्रवली दुति पावै ।
चिबुक[4] चारु बिसत्ती तिकुछ चौकाचमकावै ।
रकत अधर सुंदर म्रिदुल बोलति मुसकाए ।
मुख मंडल दीरघ दिपति द्रिग म्रिग डरपाए ॥६॥

---

1. घोड़ा । 2. हाथी । 3. शिकार । 4. ठोड़ी ।

सुभटनि की बिदया सबल अभ्यास करंते ।
मनहूं बीर रस अवतरयो रणप्रिय लखियंते ।
नित प्रति देहि बिसाल ह्वै तिम बल बिरधावै ।
तिम ही शत्रुनि मरदबो निज भाव जनावै ॥७॥
सिख पिखिकै सभि करति हैं मन महिं अनुमाना ।
इह सतिगुरु योधा बनहि हाने रिपु-प्राना ।
केतिक कहैं न जोगता गुरु के घर ऐसे ।
माला सेली राखते संतनि मति जैसे ॥८॥
बालक लीला करति हैं बडि होइ तजै है ।
पित दादे की रीति को सुनि पिखि वरते हैं ।
केचित कहहिं न इह करहिं गुरु पूरब रीता[1] ।
दिपति प्रतापी तेज ते शसत्रनि महिं प्रीता ॥९॥
सकल जंग की बिधि करहिं प्रिय लागै सोई ।
अरु ब्रिध को बच कह्यो जिम सो हटहि न कोई ।
गुरु के भाजर किम 'परी कहि सहज सुभाऊ ।
भाजि वडाली महिं रहे इम बचसफलाऊ ॥१०॥
मुगलमारि गुरु उपजहै बरदेति उब्राचा धरहिं ।
शसत्र तुरकनि हनैं इह होवै साचा ।
गुरु मूरति सूरति चितहिं पूरति अभिलाखे ।
हेरि हेरि अनुमान करि सिख बहु बिधि भाखै ॥११॥
पित समीप आवहिं जबहु बहु नम्रं होइ ।
जावति बैठहि सभा महिं मुख पिखि सभि कोई ।
सगरे दीरघ अंग हैं कद वधहि बिसाला ।
दबहिं शत्र छाया तरे रण पिखहिं कराला ॥१२॥
श्री अरजन ले गोद महिं सिखया सिखरावै ।
सिख संगति सुख पाइ जिम तिम करहु सुहावै ।
गुरु सिखनि सनमानी अहि नित बनहु सहाई ।
श्री नानक आदिक गुरू इह रीति चलाई ॥१३॥
गुरु बाणी बहु कंठ उठि प्रात उचारो ।
किरतन सुणहु सनेह ते निज धरम संभारो ।
जाम जामनी जागी अहि मज्जन करि लीजै ।
सभि ते करहु इकंत मन, प्रभु सिमरन कीजै ॥१४॥

---

1. पारम्परिक रीति-रिवाज ।

चितवहु अपन सरूप को सति चिति अनंदा ।
दिवस चढे दिहु दरस को चहि संगति ब्रिंदा ।
इत्तयादिक सिखया कहैंले अंक दुलारैं ।
सुन्दरता निज नंद की करि अनंदु निहारैं ।।१५।।
चहुं दिशि ते बहु संगता पहुंचहिं समुदाया ।
पूरहिं तिन की कामना करिकै निज दाया ।
ढाका आदिक देश जे दिश पूरब केरे ।
वंधे आवहिं टोल को ले भेट घनेरे ।।१६।।
दिसि दच्छन वासी जु सिख दरशन हित आवैं ।
अभिमति प्रापति होति है उपहार चढावैं ।
आदि हैदराबाद जे पुरि गिने न जाई ।
सुनि सुनि उज्जल सुजस को दरसति समुदाई ।।१७।।
पुन पशचम के देश जे बडि नगर सथाना ।
धरि धरि शरधा चौंप ते दरसहिं दुख हाना ।
बलख बुखारा सिंधु पुरि काबुल कंधारा ।
नाना आनि अकोर[1] को हेरहिं दरबारा ।।१८।।
तिम उत्तर दिसि के मनुज आवहिं धरि भाऊ ।
अरपै अनिक अकोर को देखति चित चाऊ ।
संमति महिं मेले उभै अंम्रितसर लागै ।
मन भावति सिख आवते मज्जति अनुरागैं ।।१९।।
श्री मुख ते महिमा महां बिच शबद बनाई ।
पठि सुनि कै शरधा धरति पहुंचहिं दरसाई ।
सकल दिसनि महिं सुजस बहु पसर्यो शुभ ऐसे ।
पारद नारद सारदा रंग उज्जल जैसे ।।२०।।
घर घर फूली मालती जनु सुमनस जाती ।
सुधा कि चंद्रक चंद्रिका जनहंसनि पांती
उपकारी धुज धरम की श्री अरजन होवा ।
धारनि गुरुता भारु को दिढ थंभ खरोवा ।।२१।।
नर अनुहरि लीला करहिं उर निरहंकारा ।
देति म्रिदुल उपदेश को लगि सभि हिनि प्यारा ।
करे अजमती सैं करे सिद्धां सभि दीनि ।
घाली घाल सुफलति भी किस बाद न कीनि ।।२२।।

1. भेंट ।

अज़मत नहीं जनावते सिर देति न देरे।
अजर जरन धीरज धरनि गुन धरैं बडेरे।
सत्तिनाम को दान दे नर भगति लाए।
ब्रहम ग्यान महिं निपुन को सिद्धां समुदाए ।।२३।।
सभिदिशि की संगति बिखै रहिं ब्रिंद मसंदा।
आगे हुइ निजसंग ले दरसहिं सुखकंदा।
देश बिदेश अशेष महिं ले करि गुरकारे।
खषट मास कै बरख मैं आनं गुरुद्वारे ।।२४।।
दरब बिसाल सु आइ जिम तिम खरच बिसाला।
देग अतोटी[1] चलति है निस दिन जुग काला।
अचै अहार हजार ही नित प्रति नर आवैं।
निकट हजारों रहति हैं गुरु के घर खावैं ।।२५।।
सिरे पाउ पुन देति है सिख ह्वैं मुखि जोई।
ब्रिद मसंद बिलंद धन ले गुरु तो सोई।
इत्त्यादिक नित खरच को कुछ तोट[2] न आवै।
गाइरबाबी पुंज सद सो धन गन पावैं ।।२६।।
गुर घर को बड खरच नित गन ब्रिखभ रहंते।
खरे तबैले हयन[3] के धन देति लहंते।
सेवा हित सभि पसुनि के राखे गन दासा।
लेति चाकरी सकल सो प्रापति धन रासा ।।२७।।
अपरथान जिस के नहीं बित हाथ न आवै।
सो गुरु के पुरि गिर रहै नित भोजन खावै।
माण निमाणनि के प्रभू वहु ताण निताणे।
खाइ गुरू के सदन तें मानहिं हरि भाणे ।।२८।।
सत्तिनाम को सिमरिबो पसर्यो जग सारे।
भगति करहिं मिलि संगता गुरु सुजसु उचारे।
तजैं बिकारनि को रिदे गुन गन उपजावैं।
सुनहिं उचारहि कीरतन प्रभु प्रीति लगावैं ।।२९।।
सलिता[4] सुंदर भगति की सभि देश बिथारी।
सिक्ख मीन[5] नहिं तजि सकहिं शरधा बर बारी।
सद गुन कमल प्रफुलयते जनगन जलजंता।
भ्रम बेसुखता कुल द्वैसंसै तरु हंता ।।३०।।

---

1. अक्षय, असमाप्त। 2. कमी 3. घोड़े। 4. सरिता, नदी। 5. मछली।

ब्रहम ग्यान सागर महां तिसको समुहाई।
प्रापति सभि थल महिं सुगम सुर गन को भाई।
कौन कौन गुन गुरू के कवि बरन सुनावै।
शेख शारदा[1] कहनि ते मन महिं सकुचावै ।।३१।।

दोहरा

नर तन सांगी जिम धर्‌यो करहिं निबाहनि सोइ।
रूप दुरावै प्रथम को कवि संतोख सिंह जोइ ।।३२।।

इति श्री गुरु प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे श्री गुर गुन प्रसंग बरननं नाम तीन बिसती अंशु ।।२३।।

1. शेषनाग और सरस्वती।

अंशु २४
जहाँगीर प्रसंग बरननं

दोहरा

नित प्रताप अरु सुजसु को सुनि सुनि प्रिथीआ खान ।
वहुत बिसूरति[1] दुखति है रुचहि न भोजन खान ।।१।।

सवैया छंद

सुजस गुरू को ग्रित[2] सम जानहु प्रिथीआ जरै हुतासनि होइ ।
गुर कीरति बरखा जिम पावस रिदा जवासो जर जर खोइ ।
चिंता सलिता करहि बधावनि बह्यो जाति मन थिरहि न कोइ ।
संकट नीर वधहि नित प्रति ही तट निचिंत[3] नहिं पावति सोइ ।।२।।
हेरि हेरि पति को मुख करमो धीरज देति न करी अहि चित ।
तन को भख्यति है निस दिन महिं अति दुरबलता तुमहि करंति ।
रुचि सों खान पान नहिं करते उर को हरख महां नित हंति ।
चिंता सम बैरी नहिं दूसर अंतर बरि कै दुख बरधंति ।।३।।
जतन अनेक करहु जुति उद्दम मित्र न को उतसाहू समान ।
सुलही हुतो सहाइक मरिगा अबिचंदू वड शाहु दिवान ।
मुलाकात करि मसलत ठानो तिसको पुषट करहु हित ठानि ।
उतसाही नर चहै सु करि है, चितावान प्रान दे हानि ।।४।।
लिखहु पत्रिका सुधि मंगवावहु किम दिवान के मन महिं आइ ।
दिहु उतसाह गहावहु रिपु[4] को सो मालिक मुलकनि समुदाइ ।
चहै सु करै बली सभि रीतिनि गहि कै प्रान तांहि बिनसाइ ।
गुरुता गादी लेहु शाहु ते चहुं दिसि की संगति चलि आइ ।।५।।
इम करमो ने जबि समुझायो लिखी पत्रिका सुनहु दिवान ।
गह्यो अलंब तुमारो हमने निसदिन तुब दिशि को मन ध्यान ।
शत्रु हतनि जतनि नहिं कीनसि कै बिसारि दीनसि इत ग्यान ।
भाग बली हम आशिखि नित कहिं, रहहि शाहु सों कार महान ।।६।।

---

1. मानसिक कष्ट होना । 2. घी । निश्चित । 4. शत्रु को पकड़ो ।

दे करि नर कर तुरत पठाई उतर आनो तूरनि जाइ।
गमन्यो दिल्ली दिशि को पहुंच्यो मिल्यो दिवान साथ हरखाइ।
गुरु प्रिथीए की है इहु पाती छाती दुखिति लिखि अकुलाइ।
ले करि खोलि पठी तबि चंदू लखी हकीकत ज्यो दुख पाइ ॥७॥
उत्तर लिख्यो दुषट ने ततछिन नहिं बैठ्यो मै बात बिसार।
दुहिता बदन कुमारी देखति लगति सूल सम रिदे मझारि।
करकति[1] नितप्रति चित मैं अतिशै रिपु बिसाल को जसु बिसतारि।
रुचहि न भोजन, जुरहिं न पलकां बिना नींद मैं झुरौं उदार ॥८॥
शाहु लहौर चलनि की देरि जाइ संग मैं करौं उपाइ।
गहि लेवौ करि कैद बिनासौ, लखहु निसंसै मै जु अलाइ।
गुरुतागादी तोहि दिवावौ शाहु पास ते बाक कहाइ।
सभि दिशि महिं बिदतहिं धन पावहिं सकल संगता भेट चढाईं ॥९॥
दई पत्रिका कुछक दरब जुत ले करि नर कोठे को आइ।
प्रिथीए पास दई ले खोली पठि करि रह्यो महां हरखाइ।
मुझ दुख ते दुख सौ गुन तिसको कैसे करै न अनिक उपाइ।
सभि कुटंब को कीनि सुनावनि खुशी करहि मन मोद बधाइ ॥१०॥
धरि धीरज तबि बैठ्यो घर महिं मुझ तो चिंता चंदु महान।
करहि प्रतीखनि शाहु आगमनि बिना जतन मम शत्रु हानि।
पूरब भाग उदे अबि मेरे बनौ गुरू हुइ सिक्ख जहान।
पुन सुत मिहरवान बिदतै है अनगन धन भोगहि सुखदान ॥११॥
उत चंदू अवसर को चाहति शाहु प्रसंन बात ले मानि।
करि फरेब अवकाश पाइ करि तुरकेशुर[2] सो कीनि बखान।
हजरत सुनहु रहे बहु दिल्ली समों बितायहु बसे महान।
फिरनो देश अशेष आपने सुधि को लेहु पनाह जहान ॥१२॥
बडे तुमारे बिचरति जित कित गरमी समै गर्महिं कशमीर।
केसर घोर बिलासहि बेगम अतर गुलाब उडाइ अभीर।
करैं सैल मग सैलनि केरी जहां न करती तपत अधीर।
गन सेवनि के बिटपनि देखति मन भावति पहिरति बर चीर ॥१३॥
जिम इक थल जल रोक्यो बिगरहि तिम तुमरो इक थल महिं बास।
तेज हीन हुइ तासति नहिं नर, नहीं प्रताप बिसाल प्रकाश।
अबि सूरय की चण्ड[3] किरन भी इहठां होवहि तपत अवास।
नहिं कशमीर बिखै अस उसन सु गमनहु कीजहि तहां बिलास ॥१४॥

---

1. खटकना। 2. जहाँगीर। 3. प्रचण्ड, तेज।

सुनति शाहु के उर महिं भाई आछी बाति कही समुझाइ।
सुमतिवान गुन खान पुरातन कर्‌यो दिवान इही लखि पाइ।
नित हमरे तन को सुख चाहति नीकी बातनि देति बताइ।
अबि बहार कशमीर देश की जहां न सूरज तप उपाइ ॥१५॥
इम कहि सिरोपाउ बहु मोला चंदू को बखश्यो बडिआइ।
गमन हेति त्यारी करिवाइ सि आधी चमू[1] रहे इस थाइ।
आधी संग चलहि कहि दीजै सभि बेगम को दीनि सुनाइ।
चलहु पिखहि कशमीर देश को, बिलसहिं बिना उषन हरखाइ ॥१६॥
गज तुरंग स्यंदन अरु डोरे चली पालकी हजरत संगि।
सैनां उमडी ज्यों हड[2] का जल चल्यो शाहुधरि रिदै उमंगि।
चंदु बिलंद अनंदति ह्वै कै दुहिता देखति करि मन भंग।
देउ व्याह कै लेउ प्रान गुरु तो मुझ को सुख ह्वै सरबंग ॥१७॥
शाहु संग चढ़ि चल्यो मतंगहि डेरा करति चलति पुन प्रात।
कबि हजरत गज पर चढ़ि चालहि कबि तुरंग पर उर हरखाति।
कबहुं पालकी बैठति गमनति चमूं अनिक उमराव प्रयाति।
बाजे बजै छूटहि बहु तप्पै धौंसे धुंकारति मग जाति ॥१८॥
मग उलंध शत्रु द्रव तट आए तरी[3] तरी पर ह्वैगे पार।
गन नौका हित लशकर इक्ठी बहु केवट[4] मिलि दए उतारि।
सने सने बिच देश दुआबे करति सैर को पंथ मझार।
तीर बिपासा के चलि पहुंच्यो तिस दिन हय[5] पर भा असवार ॥१९॥
करनि अखेर[6] पंथ को छोर्‌यो उमरावनि कुछ ले करि संगि।
खोजति फिरति कूल सलिता के निकस्यो कारी पिषट कुरंग।
जहांगीर जबि करयो बिलोकनि अपर बरजि किय तेज तुरंग।
बली बेग ते बह्यो बायु सम मिलति जाति पाछे हितभंग ॥२०॥
बिखम सथल आगे कुछु आइव बाजी[7] कीनसि दीरघ छाल।
जहांगीर अविनी[8] पर गिरगा लगी लात पर चोट बिसाल।
संगनि गह्यो दौर के ततछिन सनमानति बहु लीनि उठाल।
ल्याइ पालकी बिखै सु पाइव सने सने गमनै तिस काल ॥२१॥
हाहाकार करै सभि लशकरि हजरति गिर्‌यो सहाइ खुदाइ।
चंदू निकट गयो करि वंदन बहुत दरद की बात जनाइ।

---

1 फौज। 2. बाढ़। 3. नदी। 4. मल्लाह। 5. घोड़ा। 6. शिकार। 7. घोड़ा। 8. पृथ्वी।

शाहु द्रिषटि इसकी दिशि आइ कह्यो बाक किछु करहु उपाइ ।
जनम किताब नजूमी सोवहि किस कारन ते मैं दुख पाइ ।।२२।।
अवसर लह्यो दुषट ने भाख्यो हजरत कहिवे उचित न बात ।
कहौ कहां निसत सकर लागे गई किताव भई सुधि प्रात ।
अपर दरब सामिग्री केतिक भा नुकसान आज की राति ।
बहुत चोर इस देश भए अबि कित को गए न जाने जाति ।।२३।।
सुनि हजरति मति बिसमत अतिशै मोहि राज कित चोर बसंति ।
त्रास न मानहिं मेरो चित महिं मम डेरे को आइ लगंति ।
लवपुरि को सूबा नहिं त्रासति नरखोटनि को नहीं गहंति ।
ज्यों क्यों करित सकर को सावत गहि करि दिहू सजाइ अत्यंत ।।२४।।
हाथ वंदि चंदू कहि निंदक इक अरजन खत्री लखियंति ।
कहै सु नानक गादी पर मैं नहिं किसहूं ते चित डरपंति ।
सो राखति है तसकर के ढिग जहिं कहिते धन को चुरवंति ।
तुम ते तनक त्रास नहिं पायहु डेरे महिं ते वसतु कढंति ।।२५।।
रामदास पुरि[1] महद बसायो गुरू कहाइ बन्यो धनवंत ।
बड़े भ्रात को वहिर निकास्यो बल छल भांति अनेक करंति ।
देश विदेशनि तसकर भेजति नीकी वसतु न किते छुटंति ।
लेति मंगाइ समीप आपने बैठि नरनि महिं बच गरबंति ।।२६।।
सुनति शाहु बिसम्यो भा तूषनि गुर घन की बातनि चितवंति ।
उचरति भयो अनुचित न भाखो कित गुरु पद कित चोर रखंति ।
पीरन पीर महां गुर नानक जिसकी बखशिश जग बरुसंति ।
बाबर बडो हमारो होवा तिसको सलतन[2] दीनि तुरंति ।।२७।।
हिंदू तुरकनि इक सम जानति शरधालू नर किए निहाल ।
तिस गादी पर बैठि गुरु भा पुन किम ले चोरी को माल ।
अस खोटी मति को परहरीआ कैसे चोर रखै निज नाल ।
जगत बिखै जिन को जग कहीयति तिनको कभी न दरब बिसाल ।।२८।।
सुनि चंदू ने पुन उलटाइ जिम तुम कहां अहै तिम बात ।
इस बिन प्रथम गुरू जे होए तिनको जस जग में अवदात ।
इह बड क्रोधी, लोभी चंचल, नगर निकास दीनि बड भ्रात ।
अपर नरनि सों द्वेष करंता डरति न रचहि अनिक छल घाति ।।२९।।

---

1. अमृतसर । 2. सल्तनत, बादशाहत ।

शाहू कह्यो पित अकबर मेरो अरपे[1] ग्राम कितिक तिन पासि ।
लवपुरि महिं चलि अबिसुधि लहैं खरच बिसाल जि भयो अवास ।
देहि अपर कुछ अरप तिनहू ढिग चोरी बरजहि नीक न तास ।
अबि तौ चलो बिपासा उतरहु पार करहु डेरा निसबास ।।३०।।

दोहरा

दिढ नौका पर शाहू चढि पर्‌यो पार सुख संग ।
गुर जसु बरन्यो लात दुख ततछिन होयहु भंग ।।३१।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे जहांगीर प्रसंग बरननं नाम चतुर बिंसती अंशु ।।२४।।

1. अर्पित किए ।

अंशु २५

सुलभी हतन प्रसंग बरननं

दोहरा

सुलही भ्राता पुत्र[1]इक सुलबी नाम कहंति ।
चंदू अर पतिशाहू को सगरो सुन्यो ब्रितंत ॥१॥

निशानी छंद

उतर पार जबि टिके निस तंबू महिं चंदू ।
सुलबी सुलही को चितहि उरकपट बिलंदू ।
तम महिं गमन्यो पास तिस बूझी सुधि सारी ।
हमरो रिपु अरजन गुरु क्या करति उचारी ॥२॥
सुनि चंदू तरकति भयो लायक बिन होए ।
बर न चाचे को लियो पर सुख सो सोए ।
मै उपाइ गहिबे करौं दिन केतिक मांही ।
बनि सहाइ जे दुख रिदे, छोरहिंगे नांही ॥३॥
सुनि दिवान मुझ आन है सुधि हुती न तेरी ।
हम दोनहु को मारने बिधि सुगम बडेरी ।
बायू बंन्ही बली बिब बन बडो बिनाशै ।
हुकम दिवावहु शाहु ते गुरु जाउ अत्रासै ॥४॥
पहुंचति पुरि मैं पकरि हौ काराग्रह पावौं ।
निस महिं एकल को करौं धर सिर उतरावौं ।
इहां शाहु लगि बात को पहुंचन नहिं दीजै ।
रहै निकट धन दिहु तिनहि अपने करि लीजै ॥५॥
जे करि को चिरकाल महिं सुधि पहुंच बतावै ।
करि फरेब[2] वहु बिधिनि के तबि बात मिटावै ।
इह तेरे गर काज है, मारनि गर मेरे ।
गयो निसंसे मारिहौं रिण उतर बडेरे ॥६॥

---

1. सुलही का भतीजा । 2. कपट, धोखा ।

मम चाची बिधवा भई गन तरक उचारैं ।
जिस हतिबे हित पति गयो तिस तूं नहिं मारैं ।
लाज नहीं किसकाज की रिपु सुखी रहंता ।
बल छल करि जादू अधिक धसि पावक हंता ।।७।।
जतन बन्यो नहिं मोहिते चितवति चितनीता ।
समझ्यो आज प्रसंग को आयो धरि प्रीता ।
सुनि चन्दू हरख्यो रिदे जे इस करि आवैं ।
सदा आफरी तोहि को सभि कषट मिटावैं ।।८।।
प्रात समीपी रहहु तुम जबि अवसर पाऊं ।
आज समान मिलाप हुइ कहि शाह रिझाउ ।
तबहि प्रसंग चलाइ हौं तसकरनि बडेरा ।
करहु उगाही मदत को पाट्यो कहु डेरा ।।९।।
किसहुं भेज्यो चहति हैं समुझाबनि हेतू ।
किधौं हकारन को निकट तिस पठहि निकेतू ।
मैं तवि तेरो नाम लै देहौं समुझाई ।
हजरत जी सुलबी पठहु सुधि लैहै जाई ।।१०।।
साच किधौ हुइ कूर इह तिह को समुझावै ।
जाइ सुधासर इतहि ते लवपुरि को आवैं ।
कह्यो सुनहि मेरो जवै आइसु तवि दैहै ।
करहु जाइ मन भावती नहिं जियति रहै है ।।११।।
हम सामीपी शाहु के जो पनह जहाना ।
अस शत्रु जे सघहि नहिं धिक जीवन माना ।
गजके बसि जिम ससा हुइ सो मरहि न मारा ।
ता धिकार तिस ओज को भाखहि जग सारा ।।१२।।
कीटी[1] सम मम अग्र है नहिं मानहि त्रासा ।
कहाँ करहि हंकार को किसको भरवासा ।
कर्‌यो कलकित मोहि को निंदहि जग सारा ।
सुता कुमारी देखिकै परवार दुखारा ।।१३।।
बिनाहने मम चैन नहिं इम बैन उचारे ।
अबि निस महिं श्रम परहरहु, करि कार सकारे ।
दोनहुं दुरमतिदुषट बडि मसलति ठानी ।
अपने अपने थानमहिं सुपते सुख मानी ।।१४।।

---

1. चींटी ।

भई प्रात तबि कूच के धौंसे धुंकारे।
सुनि करि सगरी वाहनी[1], तूरन भई त्यारे।
गमन्यो पंथ विहीरगन लवपुरि के राहू।
चलि चंदू पहुंच्यो निकट जहिं बैठयो शाहू ॥१५॥
हजरत सुख है लात को हम देहु बताई।
चितवति पीरा आपकी मुहिं नींद न आई।
जानति जनम किताब ते किम संकट होवा।
सो तसकर हरि ले गए कुछ जाइ न जोवा ॥१६॥
कहां नजूमी अबि करैं ढिग है न किताबा।
शासत्र हीन जिम सूरमा क्या देहि जबावा।
जहाँगीर सुनि कै भन्यो अबि संकट नांही।
तऊ किताब खुजाइ अहि इस दोष कि मांही ॥१७॥
लालच दरब दिखाई अहि को खोज बतावैं।
करहु जतन सभि बिधिन के जे करि सो पावैं।
कहि चंदु चित आपके ऐसे बहु चाहा।
सुलबी को तागीद करि भेजहु गुर पाहा ॥१८॥
कठन म्रिदुल बच कहैगो समुझावहि जाई।
लेहि किताब सु तिनहु ते तसकरनि दुराई।
नहीं सपारश को सुनहि तिसको डर पावै।
बिन डरपे को देति नहिं सभि के बनि आवै ॥१९॥
करहि दोह शाहु न लखि कहि चंदु संगा।
प्रथम बिनै के बैन कहि नहिं कहै कुढंगा।
मम दिशि ते समुझाइ है नहिं चोर रखी जहि।
जे करि खरच बिसाल है धन हमते लीजहि ॥२०॥
किधौं ग्राम लिहु और अवि मद तजि चोरी।
होति पीरजी पाप बड कवि करहि जि थोरी।
बिनै करो बहुभांति की म्रिदु कहि समुझाओ।
तसकर राखहि कै नहीं इहु निशचा पाओ ॥२१॥
सुनि सुलबी कर जोरि कहि जिम आइसु पाऊं।
मिलि परखौ सभि बारता नीके समुझाऊं।

---

1. सेना।

जिम निकसहि चोरी करी तिम रचौं उपाया।
अपर थान खोजों भले दे दरब सवाया[1] ॥२२॥
ज्यों क्यों करिकै आनि हौ धन के दिउं त्रासा।
ब्रिच्छ हलाए देति फल न तु पुरहि न आसा।
इत्यादिक कहि चढ़ि चल्यो सुलबी मतिहीना।
प्रेर्यो काल सु दुरमती खल उर नहिं चीना ॥२३॥
जिम अजगर के मुख परहि अंधा बिनु हेरे।
बिन कारण दोही दुषट करि क्रोध बडेरे।
करै वैर निरवैर सौं ततछिन म्रितु पावे।
जब गहि गेरहिं नरक महिं दुख ते बिललावै ॥२४॥
गिर सो सिर मार सवल फूटति मर जैहे।
नभ दिशि बान प्रहारने उलटो तिम घैहै।
अलप[2] सेन जिह साथ है हरखति पयाना।
जो चाचे ते बच रह्यो मैं करि हौ हाना ॥२५॥
कहौ कुटंब मझार मै पैहौं बडिआई।
आनि अचानक बिधि बनी इम चितवति जाई।
जहागीर चंदू चमूं लवपुरी पयाने।
तोप रहिकले संग मैं छुटि शबद महाने ॥२६॥
चंदू रिदे बिचारतो जावति गुरु धावै।
नाता दियो हटाइ जिनसो अबि फल पावै।
इत सुलबी गमन्यो गयो जबि द्वादश कोसा।
जथेदार सय्यद मिल्यो जिसके मन रोसा[3] ॥२७॥
मिले सलामालेक सो बुझ्यो कित जावो।
पठ्यो शाहु किस काम मुझ पुन लवपुरि आवौ।
सुनि सय्यद ने तबि कह्यो हम तुम ढिग आए।
सुलही के चाकर हुते इह भट समुदाए ॥२८॥
एक बरख की चाकरी इन हाथ न आई।
सो तुझ ते सभि चहति हैं दिहु राखि बडाई।
बिना दिए सो अरि गयो तूं पुत्र समाना।
इन सुभटनि[4] को दीजीए चित चहति महाना ॥२६॥
सुनि सुलई बोल्यो तबहि मैं जानति नाही।
कबि की देनी कै नहीं, केतिक तिस पांही।

1. सवाया, सवा गुणा। 2. थोड़ी। 3. रोष, गुस्सा। 4. शूरवीर।

जबि लवपुरि को आइ हौ निरने करि लैहैं।
मिलि चंदू के संग हम निकसहि सो दै हैं ॥३०॥
सय्यद कहि किम इहु टिकहिं चहिं खान रु पाना।
कहै न लागें किसू के लैहै इस थाना।
सुलबी अखि दिखाइ रिस मैं गमनति राहु।
जाहु पुकारु शाहु ढिग नहिं धन मम पाहु ॥३१॥
सुनि सय्यद बोल्यो तबहि मग देहिं न जाना।
लेहिं नौकरी थान इस किम करें पयाना।
सुलबी कहि निज सैन को इन मारि हटाओ।
देहु दरब ऐसे अबहि वैठे पछ्ताओ ॥३२॥
सय्यद कहि भट सभि सुनो चाकर सम सारे।
तुम भी लेते दरब को तिम लखहु हमारे।
अपर जंग को काज नहिं नाहक मरि मारो।
रहहु थान थिति आपने उर भले बिचारो ॥३३॥
सुनि जबाब सैना दियो इह सय्यद पीरा।
पुनजाचति है नौकरी दीजहि धरिधीरा।
लरहिं न हम सुलबी सुनति भुखगार[1] निकारी।
तबि सय्यद ने तुरत ही जमधर उर मारी ॥३४॥
उदर पारि कै पार भी हाने खल प्राना।
गिर्यो उथलकै प्रिथी पर चित दुषट महाना।
लीनो सभि असबाब को हय भूखन सारे।
चमू हटी लवपुरी को मार्यो सरदारे ॥३५॥
उतचंदू चितवति रहति हति करि गुरुआवे।
पल्टा है बहु द्योस[2] को तिसको अवि पावै।
तबि लौ संगी आइके सुधि सकल सुनाई।
सय्यद के संग जिदि पर्यो मुख गारि सुनाई ॥३६॥
सुलही आगे नौकरी कीनी धन जाचे।
झगर परे आपस बिखै दोनहु रिस राचे।
जमधर मारी, मरिगयो, हम हटि करि आए।
सुनि चन्दू बिसम्यो रिदे मल मारनि धाए ॥३७॥

---

1. गाली । 2. दिन ।

केतिक दिन मै शाहु लखि चंदू संग बूझा ।
अबिला सुलबी कित रह्यों किस काज अरुझा ।
दो त्रै दिन मैं आवनो चहियति तिस केरो ।
कबिहुं सुधि आई कि नहिं सामीपी तेरो ।।३८।
सुनि चंदु कहि शाहु जी सय्यद सो गारा ।
झगर परे हित नौकरी बड गज बगुजारा ।
जहांगीर चितव्यो तबहि गुर पीर महाना ।
किम तसकर सो राखते इन झूठ बखाना ।।३९।।
कह्यो पुनहि बिन दोष पर तुम दोष बखाना ।
किम पहुंचहि अधि बीचि ही मूरख हति प्राना ।
मुझ मन मै इम समुझ भी कहि तूषन होयो ।
रुख लखिकै पतिशाह को चंदु दुख पोयो ।।४०।।
उठि आयो निज सदन को उरझु रहि भूरा ।
इतो जतन करि कूर के नहि उतर्यो पूरा ।
ताती वायु नहिं लगी नहि पायहु त्रासा ।
मूरख संकट के सहत भरि दीरघ स्वासा ।।४१।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'सुलबी हतन प्रसंग बरननं' नाम पंच बिंसती अंशु ।।२५।।

अंशु २६

प्रिथीआ मरन प्रसंग

दोहरा

चिंता चित गलतान ह्वै चंदू दुषट बिलद ।
चाहति गुरु अपकार को निस बासुरी[1] मतिमंद ।।१।।

निशानी छंद

जतन कपट के चितें चित बड घाति बनावै ।
पूरब करे उपाइ जे को पेश न जावै ।
शाहु लखहि नहिं इम हनों करिकै चतुराई ।
किम बैठ्यो घर महिं मरहि नित अनंद वधाई ।।२।।
अबहि शाहु को देखि रूख हरखहि जिस काला ।
मोहि साथ बातें करे तबि कहौं रसाला ।
तसकर राखनि दोष को मैं पुनह जनावां ।
अपर घात नहिं दंड तबि कहिकै लडवावौं ।।३।।
अवसर को हेरति रहित दिन कितिक बिताए ।
नर प्रिथीए को ढिग अयो दे पत्र पठाए ।
पठी इम लिख्यो बिच तूं सुमति बडेरो ।
कारज सभि पूरन करहिं, भरवासा[2] तेरो ।।४।।
हजरत को उपदेशि के लवपुरि महिं ल्याए ।
इह कारज तुझ ते सरहि नहिं अपर बनाए ।
रिपु हतिबे को समै अबि है निकट तुमारे ।
जे पुकार को मिसि बनहि मुझ लेहु हकारे ।।५।।
दोप संदोह अरोप करि कहि शाहू गहीजै ।
लिखो आपि मै आइ हौं, मिलि जतन करीजै ।
पठिकै पाती चित्यो चित करि बूझनि शाहू ।
पुन प्रिथीआ बुलवाइ हौं तूरन निज पाहू ।।६।।

---

1. रात-दिन । 2. सहारा ।

इम निशचे करि प्रात उठि मति मंद चितारे ।
गमन्यो हज़रत के निकट नर निमहि हजारें ।
रजत दंड गहि अग्र चलि, को नरनि हटावै ।
संग सुभट गमनति पगनि चहुं दिशि महिं जावैं ।।७।।
कितिक दास दौरति चलहिं अगवा पिछवाई ।
बोलति जाति नकीब जो को सुजसु सुनाई ।
आगै चलैं ढलैत कुछ खहि भडग रू ढाले ।
को सनमानति संग मैं कहि बाक रसाले ।।८।।
मंगति जन गन बोलते सिवका पर त्राला ।
गर जामा पाले बहुत सिर पाग बिसाला ।
दुह दिशि लेति सलाम को गमनति पुरि मांहू ।
पिखि दिवान नर खरे हुइ सनमान उमाहू ।।९।।
सिंह पौर महिं बर्यो जबि भट गन भे ठांढे ।
मरावनि महिं पुन गयो जे धन करि गाढे ।
जहांगीर बैठ्यो तखत बहु नमो करंता ।
निज दरजे पर तबि थिर्यो उतसाहू धरंता ।।१०।।
हजरत को अभिनदने करि करि चतुराई ।
कहति सुनावति म्रिदुल बच कीरति वरधाई ।
हसति शाह हरंखति हियो सभि सभा सराह्यो ।
चंदू दिवान पुरातनी रावरि चित चाह्यो ।।११।।
घात पाइ बोल्यो बहुर सुनि पनहजहाना ।
बहुदिन बीते प्रिथीए निज कषट बखाना ।
कह्यो आपि लवपुरि चलहिं तहिं झगर निबेरें ।
रह्यो प्रतीखति छुधति जिम भोजन दिशि हेरै ।।१२।।
अबि आवनि को चहति है तुम पाइ रजाई[1] ।
सुनहु निबेरो न्याव[2] कहु लिखु दुहनि बुलाई ।
शाहन को ईमान बड नित न्याव बिचारें ।
जथा जोग रखि प्रजा को सभि को प्रतिपारें ।।१३।।
सभि काजनि ते इहु वडो नित झगर चुकावै ।
तुम समान को नहिं भयो सुखि प्रजा बसावै ।
राउ रंक बिच न्याव के तुम लखे समाना ।
प्रिथक कर्यो पै पानि को को रख्यो न छाना[3] ।।१४।।

---

1. आज्ञा । 2. न्याय । 3. अलग ।

शमश मनिंद प्रकाश नय तम अनय नसाए ।
चोरज़ार वटपार ठग समचर सुछपाए ।
सुनि चंदू ते शाहु कहि गुरु ढिग न पठाओ ।
करहि पुकार जु प्रिथीआ निज निकट वुलाओ ।।१५।।
प्रिथम सुनैं निरनै करहि किम करहि पुकारू ।
बहुर उगाह हकारि करि तिन सिख जि उदारू ।
श्री गुरु बहुर वुलाइ हैं जबि उचित निहारैं ।
जथा जोग करिवाइ हैं, नहिं पक्ख संभारैं ।।१६।।
हाथ जोरि कहि भला जी उठि शाहु गयो है ।
भई ब्रखासति सभि सभा मुद चंद भयो है ।
सदन आइ तिस चार को सभि कह्यो प्रसंगा ।
आनहु प्रिथीआ ज़ाइ करि चलि तूरन संगा ।।१७।।
सुनि कोठे को नर गयो नहिं बिलम लगाई ।
बैठ्यो करति प्रतीखना, मिलि सकल सुनाई ।
सिमर्‌यो हजरति ने चलो नहिं गहर लगीजैं ।
हरखति चंदू ने पठ्यो मग महिं पग दीजै ।।१८।।
सुनति हौसला उर वध्यो त्यारी करिवाई ।
मिहरवानु सुतके सहत करमोढिग आई ।
तुम प्रवीन सभि मति विखै क्या कहौं वनाई ।
करो बात शुभ रीति की हुइ सहिज सुभाई ।१९।।
नहिं उलटी किम गर परहिं, पति रहै न जैसे ।
चलहि जीवका बहुत अबि नतु आछे ऐसे ।
वाहु परै तुरकानि सों, करहिं न सनमाना ।
हांसी करहि शरीक गन जे हुइ कुछ हाना ।।२०।।
मोहि न आछो अबि लगहि कित जानि तुमारा ।
गुरु पदारथ वहु दए, भल चलै गुजारा ।
सुनि प्रिथीए धीरज दई किम बोलति बैना ।
लेनि समो गादी अवहि, किम बैठिव ऐना ।।२१।।
जियति रहैं रिपु को हतहिं पुन मिलि हैं आई ।
नतु बैठो दर शाहु के लिउ किमै रिझाई ।
मिहरवान मम पुत्र सुख बहु बिधि के पावै ।
मोहि आरबल बितगई दिन अलप रहावै ।।२२।।

अंक लियो मिलि प्रेम करि सूंघति मुख माला ।
सरब रीति समुझाइ कै चाहति चितचाला ।
निकसति सनमुख छींक भी फरके बामंगा ।
समघा को सिर भार धरि नर मिल्यो कुढंगा ।।२३।।
संसै करमो बहु करहिं नहिं सकहि हटाईं ।
फुरत बिलोचनि दाहिनो लखि उर सुखदाईं ।
नहिं प्रिथीआ कुछ मन गिनै मम पक्खी चंदू ।
लवपुरि चलि करि हहिं जतन करि अनुज निकंदू ।।२४।।
दास सिक्ख गन लै पशचम मुख कीना ।
गमन्यो मारग छिप्र करि, त्रिशना किय दीना ।
निश बिसराम है दिन चलहि, दिन थोरनि मांहू ।
पहुंच्यो तरन तारन निकट, बोले नर पाहू ।।२५।।
गुरु रच्यो तीरथ महां मज्जन करि लीजें ।
चलि डेरा आगे करैं निस परी लखीजै ।
चले कोस बहु श्रमति हैं, करिले बिसरामू ।
सुनी प्रिथीआ रिस करि कहै जिसको मन बामूं ।।२६।।
इह छपडी तीरथ नहीं फल कहां नहाए ।
नहीं गुरू को रचति थल कछु पूर न पाए ।
तुरकनि छीन पचावि अनि रचिबे नहिं दीनो ।
चलो अगारी देखी यहि तीरथ हम कीनो ।।२७।।
तहां करहिं बिसराम को श्रम सभि निरवारैं ।
भले असूदे होइ हैं दिन दुइ त्रै टारैं ।
बिन हेरे गुरु थान को चलि जाति अगारी ।
जाइ पहूच्यो हेहरी उतर्‌यो मुद भारी ।।२८।।
सिक्खनि को उपदेशतो इह तीरथ आछो ।
मज्जहु शरधा धारि करि प्रापत जो बांछो ।
बिसरामहु, श्रम पर हरहु, पुन लवपुरि चालैं ।
खानपान कीनसि पुनह करि स्वाद बिसालै ।।२९।।
निसा परी सुपते पुनह उठि प्रात नहाए ।
कर्‌यो कराहु[1] बताइके हरखति हिय खाए ।
तीन दिवस बीते बसति कहि संध्या काला ।
चलहिं काल़ि[2] को लवपुरी हुइ काज बिसाला ।।३०।।

1. कड़ाह-प्रसाद । 2. कल ।

चंदू करहि प्रतीखना इक सिख मिलि आया ।
अरजन को मार्यो चहै, ले मोहि सहाया ।
निसा भई भोजन अच्यो दधि सिख ने आना ।
सूखम चावर सागर सों कीनसि बहु खाना ।।३१।।
स्वादि साथ अचि बहु गयो हुनिहार खुवायो ।
गर लौ भरि कै उदर को निस महिं सुपतायो ।
अरध निशा बदहाजमा हैजा हुइ आवा ।
सूल उठ्यो जनु सूल चुभि दुख ते बिकुलावा ।।३२।।
हाइ हाइ मुख करति है जागे नर पासू ।
कहां जतन को तबि करहिं नहिं औखध[1] रासू ।
नहि हकीम को ग्राम महिं, कछु ह्वै न उपाई ।
रुदति ह्वै दुखति सभि तिस आस चुकाई ।।३३।।
प्रिथीए ने जान्यो मरनि नहिं प्राना ।
सिक्ख दास गन हितु लखि अस बाक बखाना ।
अबि मेरो परलोक ह्वै रुज वध्यो विसाला ।
दाह करहु इस थान ही करि क्रिया कपाला ।।३४।।
पीछे होइ जु अंस मम मरि हैं कित कोई ।
दाहु आनि इस थल करहिं कहि दीजहि सोई ।
मोकहु मिलहि सु आनि करि फल उत्तम पावै ।
मिहरवान सो कहो तुम बहुत न रुदनावै ।।३५।।
इह रीति सभि जगत की आवति इक जाते ।
करहु क्रिया मेरी सकल जपि नाम प्रभाते ।
पुन आवहु चंदू मिलहु लिहु गुरता गादी ।
ज्यों क्यों अरजन को हतहु, पुन कीजहि शादी ।।३६।।
पुरहु कामना आइ करि सभि बन्यो बनाऊ ।
बैर संभारो आपने नहिं करहु बलाऊ ।
इम कहि धरनी पर पर्यो ब्याकुल बड होवा ।
बोल बंद म्रितु चिन्हमे, सभि संगनि जोवा ।।३७।।
रहे बुलावति दास गन, निकसे तन प्राना ।
चितवति गुरु संगि बैर को, परलोक पयाना ।
रुदति सकल बैठे निकट सो रात बिताई ।
भई प्रभाति उठाइकै बड चिखा बनाई ।।३८।।

---

1. औषधि, दवाई ।

ऊपर धरि करि छारि करि होए समुदाए ।
असथि बीन दिन तीन भै हटि पाछि सिधाए ।
इक सिख कोठे को गयो पूरब सुधि दैवे ।
सुनि मरनो, सुत भारजा बड कूक करैबे ॥३९॥
हाइ हाइ करि रुदत है नहिं सध्यो सरीका ।
हे पति पूरब ही भर्यो इह कियो न नीका ।
मिहरवान सुत की खबर कबि लै है आई ।
बदन मरति हम नहिं पिख्यो, बिधि कहां बनाई ॥४०॥
रही हटाइ न हट्यो तबि अप शगुन बिसाले ।
किम फल सो देवे नहीं दुख कीनि कराले ।
कहिं लगि बरनो शोक जनु किय आइ अवासा ।
इतने मैं आए असथि रोदति भरि स्वासा ॥४१॥
मिहरवान बहू रोइ कै म्रितु क्रिआ कराई ।
शबद पढायो दरब दे सुनते समुदाई ।
तिन की संगति आइ करिपुन पाग बंधाई ।
मिट्यो शोक तबि जन कह्यो जो अकल सिखाई ॥४२॥
श्री अरजन ते बैर करि लिहु गुरुता गादी ।
चंदू हतहि उपाइ ते तबि कीजहि शादी ।
भरति कह्यो तुम सों पिता इहु सुनहु संदेसा ।
सुन्यो पुत्र अरु भारजाउर लहति कलेशा ॥४३॥

दोहरा

मिहरवान मन मानि कै मौन ठानि रहि भौन ।
करहि प्रतीखन गुर बनौं हुइ है कारन कौन ॥४४॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'प्रिथीआ मरन प्रसंग बरननं नाम खषट बिसंती अंशु ॥२६॥

अंशु २७

चंदू के प्रसंग

दोहरा

संमत सोरह सत हुते ऊपर पंच मिलाइ।[1]
सपतम हुती असौज की[2] प्रिथीआ तबि जनमाइ॥१॥

निसानी छंद

सोरह सत त्रेहठ बिखे माधव को मासा[3]।
म्रितक भयो सो जानी अहि नहिं पुरवी आसा।
बुरा सु चितवति गुरू को सभि बंस[4] बिताई।
जिम तसकर ससि को कहै जर क्यों नहिं जाई॥२॥
जिम उलूक[5] कहिसूर[6] को किम उदयतिनीता।
क्यों नहि माले महिं गरहि दुखदे हम चीता।
जथा जवासो पावसै दे दोष बडेरे।
बिना चाह क्यों बरसतो हम हरति घनेरे॥३॥
बाट पार जिम पातकी निज घात तकावै।
घर मातम महिपाल[7] को गन दोष बतावै।
जार जथा कुछ वार को नित चहति बिनासा।
बक मराल को पद चितहि, किम पुरवहि आसा॥४॥
जिमि बिरहनि को चांदनी दीरघ दुखदाई।
तथा अनुज की कीरती कबहु न मन भाई।
जिमि जंबुक[8] बनपति[9] बननि नित जतन करंता।
केहरि को काढ़नि चहै किमि इच्छ पुरंता॥५॥
गादी सीता लैनि को रावनि सम होवा।
अभिलाखति ही पचग्यो नहिं सो सुख जोवा।

---

1. सोलह सौ पाँच। 2. असौज (अश्विन) की सप्तमी। 3. वैशाख संवत् 1663 ।
4. आयु। 5. उल्लू। 6. सूर्य। 7. राजा। 8. गीदड़। 9. शेर।

कंस क्रिशन के हतनि हित छल रचे घनेरे।
मारत आपहि मरिगयो, तिम प्रिथीआ हेरे।।६।।
ससाकहै मै शेर हौ गरबति बिचमाइ।
जबि आवै गज समुख तिसि तबि कौन हटाइ।
गुरु बन्यो मै नित कहै जबि जम दे पीरा।
सिक्खनि गन अरु आपि को धारहि को धीरा।।७।।
मिहरवान प्रसथान को चाहै बहुतेरा।
जननी जानि न देति है करि नेहु घनेरा।
हे सुत तू अबि आसर सिख संगति केरा।
मैं अनंद ते रहित हौं पिखि करि मुख तेरा।।८।।
तोहि पितामा जग गुरू अजमति धरि भारी।
नर निहाल करि सैं करे दुरमति उर टारी।
बखशति नवनिध सिद्ध को पिखि कै निज सेवा।
पूजनीय सभि के भए जग श्री गुरु देवा।।९।।
तोहि पिता सेवे नहीं होइ न अनुसारी।
समता को करतो रह्यो, कटु गिरा उचारी।
कह्यो न मानहिं कछु कबहि जानहि पित मेरा।
प्रभू न जान्यो अदब करि, लरतो बहु वेरा।।१०।।
सासू रही समुझावती जे चहिं गुरु गादी।
समता करहु न पिता की ह्यनहि जहि बादी।
नांहि ते लैहे दासको छूछे रहिजावो।
सेवा के बसि होति हैं, तुम सेव कमावो।।११।।
एक न मानी किसे की निज हित नहिं जाना।
लखि बिसाल बुधि आपनी उर मे गरबाना।
अरजन आइसु मानि करि लवपुरी सिधावा।
इस ही ते सु प्रसंन हुवै तिन के मनि भावा।।१२।।
गुरुता गादी पर थिर्‌यो अजमति को पाए।
देखि निकट तेरे हत्यो सुलही धसि जाए।
सुलबी गमन्यो पकरने मग बिखे संहारा।
तेहि पिता असि गति भई कछु चल्यो न चारा।।१३।।
घर अपने गुजरान बहु सिख सेवक आवैं।
बैठे करो अनंद को सुख लिहु मन भावै।

करामात को जोर तिह नर किते संहारे।
नहिं गमनो करि बैर को जीवनि चित धारे ।।१४।।
जिन मार्‌यो निज भ्रात को लखि शत्रु समाना।
कहां भतीजे सो करहि उर प्यार महाना।
बहु फल पायहु बैर ते अबि टिको अवासा।
प्रथमैं काढे नगर ते तुहमत दे त्रासा ।।१५।।
इत्यादिक माता कह्यो नीके समुझावा।
मिहरवान डर प्यो तबहि घर बैठि रहावा।
नहीं जानि की मति करी किसही इसथाने।
रह्यो ग्राम कोठे विखै तिन के सिखमाने ।।१६।।
उत पापी चंदू सुन्यो प्रिथीए तनछोरा।
पर्‌यो घाव पर लवन[1] जनु प्रापति दुख घोरा।
घ्रिण पाके पर लगि गई जनु औचक चोटा।
बान लग्यो जनु कान महि बीध्यो मन खोटा ।।१७।।
बादी हुतो समान को सो भी प्रभु हाना।
जतन निफल सभि होति है जे रचे महाना।
सुलही, सुलबी, प्रिथीआ तीनो म्रितु होए।
अबि उपाइ मैं क्या करौं मति आइ न कोए ।।१८।।
महिमा मानि न परहि पग जिह वडे कुभागा।
पातिशाह के पास महिं चारी अनुरागा।
नहिं भोजन बहु अचति है सोचति चित मांही।
निसा बिखै नहिं नींद सुख छाती रिस दाही ।।१९।।
निकट न बोलनि देति है झिरकहि बहु दासा।
नहि सुखाइ किसको कह्यो रहि मौन अवासा।
चितवति चिंता चित बिखै बहु जतन बनावै।
इक गिनती उर चढ़ति है इक करि उतरावै ।।२०।।
शाहु सुनहि सभि बात को निशचै न करंता।
रिदे अदाइब राखि करि संसे उपजंता।
हुकम नहीं कुछ देति है, गहि लिहु कि हकारो।
कई बेर कीने जतन इत उत हुइ टारो ।।२१।।
इत्त्यादिक पापातमा गिनती उर ल्यावै।
स्वास उसार बिसूरतो कबहुं न बिसरावै।

1. लवण, नमक।

खर सर समसर करक उर गडि गयो सु गाडो ।
चिंता सलिता[1] महिं बहति दुख जल बहु बाझो ।।२२।।

इक दिन गमन्यो शाहु ढिग बहु बात सुनाई ।
प्रथम भए पतिशाहू जे तिन की थडिआई ।
निज दिसि जान्यो रूख अधिक बोल्यो कर जोरे ।
हजरत जी ! प्रिथीआ गुरू तन प्रान बिछोरे ।।२३।।

गादी श्री नानक हुती शुभ रीति चलाई ।
मतो सत चित शांति जुत अति मति चतुराई ।
सिक्खी देश अनेक की पग पूजन आवै ।
अनिक अकोरंनि[2] आनिकै धन को अरपावैं ।।२४।।

अनुज नाम अरजन अहै मन महिद हंकारी ।
आंख तरे आनहि नहीं गुन एक न धारी ।
आयो निकट न आपि के निज लखहि बिसाला ।
प्रिथीआ आयो कई बेरि इह शील रसाला ।।२५।।

तिसको सुत इक मैं सुन्यो पाछे थिर गादी ।
करहि प्रतीखनि आपते बैठनि हित शादी ।
सिरेपाउ हजरत करैं सिर पाग बन्धावै ।
जगति जिठाई बिदत हुइ गंनता बहु पावै ।।२६।।

सुनि दिवानते शाहु तबि करि हुकम दिवायो ।
तुम ले अपने पासि अबि तहिं देहु पुचायो ।
लेकरि निज जन को दियो कहि बहुर प्रसंगा ।
दई जीवका प्रथम तुम बहु आदर संगा ।।२७।।

कोठे ग्राम सु धाम करि बसि बास सदीवा ।
अनुज ओज छल दाव करि पुरि ते निकसीवा ।
श्री अरजन तबि ते महां करि गरब अफारा ।
नहीं शाहु भी कुछ कह्यो उर ते डर डारा ।।२८।।

पुन तसकर ढिग राखि करि धन दूर कि नेरे ।
निकसावै मंगवावही भा घनी बडेरे ।
ताल रच्यो मंदिर कर्यो बहु दरब लगायो ।
लोकनि को बिरमावने इक ब्योंत[3] बनाये ।।२९।।

---

1. चिन्ता की नदी । 2. भेंट । 3. योजना ।

तुम भाख्यो न बुलाव तिह, आपे चलि आवैं ।
अबि लौ मिल्यो न आपको कुछ मन नहिं ल्यावैं ।
हजरत जी चाहहु करहु तसकर के हेता ।
चहीअहि कहनि बुलाइ ढिग आवश्यक एता ॥३०॥
शाहु कह्यो नहिं आइ जे पुन लेहिं बुलाई ।
निशचै कीजहि साच इह कै मिथ्या गाई ।
ज्यों क्यों करि निज देश ते चोरी हटवावौं ।
साबत करि गहि लीजिये नहिं झूठ लगावो ॥३१॥

दोहरा

चन्दू अनंद बिलंद रिद लखि निज रुख की बाति ।
बाति ब्रिच्छ को हतहि जिम, घाति देखि करि घाति[1] ॥३२॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थे चतुरथ रासे 'चन्दु के प्रसंग बरननं' नाम सपति बिंसति अंशु ॥२७॥

1. अवसर देखकर ही वार करना है ।

अंशु २८
श्री चन्द प्रसंग बरननं

दोहरा

श्री गुरु अरजन सुधासर करहिं नरनि कलयानु ।
कीरति घर घर चन्द्रिका उज्जल दीपति महानु ॥१॥

हाकलु छन्द

श्री नानक सुत श्री चंदं । तप तापति दिपति ब्रिलंदं ।
अभ्यास जोग महिं भारी । हुइ सफल जि गिरा उचारी ॥२॥
नित दास कमलीआ पासी । मति बिशियनि बिसै उदासी ।
इक सेव करनि ही भावै । निस बासुर बहुत कमावै ॥३॥
तिस निकट देखि श्री चंदं । बच भाख्यो कारजवंदं ।
'भो सुनहु कमलीआ नीका । गुरु सोढी कुल को टीका ॥४॥
श्री अरजन धीरज धारी । नित बन्यो रहित उपकारी ।
तिनि अपनो नंदन ब्याहा । हरि गोविन्द चन्द उमाहा ॥५॥
इक संमति जबहि बिताए । धन हम ढिगभेट पठाए ।
गिन देति पंचसै सारे । अबिकै नहिं रिदे बिचारे ॥६॥
लखि दुगनी भई अकोरा । एक ब्याह, बरस की औरा ।
तूं गमनहु तिनहु अवासा । हुइ कठन लेहु धन पासा ॥७॥
कहु हम दिशि ते अस बाती । इहु एक हजारनि थाती[1] ।
अरु चंचल एक तुरंगा[2] । करि दीजहिं मेरे संगा ॥८॥
जबि श्री अरजन ढिग जावो । रहु खरो, न बैठहु आवो ।
सभि खरे खरे निज लीजै । पुन हम दिशि आवनि कीजै ॥९॥
रहु तिन ढिग तावत ठांढे । नहिं जावति दें धन काढे ।
जबि देहिं उपाइन सारी । तबि निकसहु पुरी मझारी ॥१०॥
पुनि बैठहु सुपतहु आछे । इत आवहु जिम चित वांछे ।
सुनि आइसु को सिर धारा । करि बंदन पंथ पधारा ॥११॥

1. एक हज़ार की थैली । 2. घोड़ा ।

चलि सने सने पुरि आवा । बिच प्रविश्यो पिखि मुद पावा ।
श्री अरजन थित जिस थाना । सुनि सुधि को निकट पयाना ॥१२॥
बिच सभा सु जाइ प्रवेशा । करि वंदन दीदि संदेसा ।
श्री चंदू खुशी बहु कीनी । चहि भेट, आपनी लीनी ॥१३॥
मम आवनि कारज एही । अबि दुगनि प्रथम ते लेही ।
अरु लैनो संग तुरंगा । है कारण ब्याह उमंगा ॥१४॥
तुम दियो न बिलम लगाई । इस कारण ते इम गाई ।
लिहू खरो खरो धन थाती । नहिं कीजहि बैठनि बाती ॥१५॥
मैं आयसु करों न भंगा । दिहु दरब हजार तुरंगा ।
श्री अरजन सीतल छाती । सुनि मानति भे तिस बाती ॥१६॥
कहि बाक लेहु घन सारो । अबि कीजै जाइ अहारो ।
श्री नानक नन्द बिलन्दे । नित पूजनीय सुखकंदे ॥१७॥
जिम आग्या देय पठाई । हम मेटहिं नहीं कदाई ।
इम कहि सिख संग मिलायो । इसथान देग के आयो ॥१८॥
श्री गंगा तहिं बरतावै । सिख संगति ले सभि खावैं ।
गन दास करैं बहु सेवा । जहिं लंगर श्री गुरु देवा ॥१९॥
निज कर ते गन को देना । गन भोजन करते लेना ।
थिर भयो कमलीआ जाए । नहिं बैठ्यो खरो रहाए ॥२०॥
नहिं माई देहु अहारा । अचि लेवौं मैं इस बारा ।
कछु माता रुख नहिं कीना । बहु नर को देति प्रबीना ॥२१॥
पुन जाच्यो मोकहु दीजै । नहिं तनक बिलम को कीजै ।
गन सिखनि बांटति सोई । चित महिं अति काहल होई ॥२२॥
बच बोली अहिदी जैसे । रहि खरो जाचतो ऐसे ।
नहिं बैठहिं धीरज पाई । ले अचव्यो ठांढे सारा ।
करि पानी पान पखारे । पुन ते निकसि पधारे ॥२४॥
श्री अरजन के ढिग आयो । मोहि दीजहि बाक अलायो ।
नतु ठांढो निकट तुमारे । नहिं बैठो आइसु धारे ॥२५॥
तबि सतगुरु धन अनवायो । युत बाजी दियो सुहायो ।
निज सेवक संग रलायो । संभारि भले पहुंचायो ॥२६॥
श्री नानक दिहरे थाना । श्री चन्दु थिरे तपवाना ।
तबि दासनि बिनै बखानी । इह भेट तुमारी आनी ॥२७॥
सुनि हरखति होइ प्रबीना । निज सेवक बूझन कीना ।
कहु बाति कमलीआ सारी । जबि गुरु ढिग जाइ उचारी ॥२८॥

तबि हरख कि रिसि उरछाई । किमकहि करि भेंट पठाई ।
रहि ठांढो केतिक काला । किम बोले बाक रसाला ।।२९।।
गुरु दाम कमलीआ दोऊ । हुइ ठांडे आगे सोऊ ।
बिरतांत भयो जु बतावा । मैं जाइ सुबाक सुनावा ।।३०।।
नहिं छोभ गुरू उर होवा । सम पूरब के मुख जोवा ।
मुझ भेज्यो देग सथाने । तबि पहुंच्यो भोजन खाने ।।३१।।
श्री गंगा तहिं बरतावैं । सिखपुंज असन ले खावैं ।
बहु भीर भई सिख लेते । इक माता भोजन देते ।।३२।।
मैं जाच्यो इक दुइ बारी । तिन देखति गिरा उचारी ।
सम अहिदी के तुम आवो । रहि खरे असन को खावो ।।३३।।
इम कहि करि दियो अहारा । मैं खायो वहिर पधारा ।
गुरु अरजन भेंट मंगाई । सिख दे करि संग पठाई ।।३४।।
सुनि सिरीचन्द जिन भैं ना । रिस तनक धारि करि बैना ।
जे अहैं अहिदी अनिभूखे । चित चहति कहति बचरुखे ।।३५।।
तौ अहिदी तिन घर आवैं । रिपु कूरे दोष लगावैं ।
तिन आवनि को फल देखो । तुरके शुर दुखद विशेखो ।।३६।।
दियो स्राप गुरु घर को । हुइ होनहार परहरि को ।
सभि लई अकोर संभारी । धन थाती गिने हजारी ।।३७।।
पुन घोरा सुन्दर हेरा । परसन्न भए तिस बेरा ।
गुर घर महिं वधहि तबेला । हुइ अधिकै सैन सकेला ।।३८।।
बरु दीनो अस तिस काला । सिख राख्यो निकट बिसाला ।
पुन कीनि बिसरजन नीके । ढिग आयो सतिगुरु जी के ।।३९।।
कहि सकल प्रसंग सुनायो । जिम बर[1] अरु स्राप[2] अलायो ।
सभि बिखै जबै बिदतावा । श्री गंगा सुनि दुख पावा ।।४०।।
श्री अरजन बूझनि कीनं । तुम स्राप कहां करि लीनं ।
श्री नानक नन्द उवाचा । नहिं मिटि है हुइ है साचा ।।४१।।
तपवान जती ब्रति पूरा । किम बनि है तिन बच कूरा ।
सुनि गंगा सकल सुनाई । बड भीर बिखै अकुलाई ।।४२।।
सो मांगहि खरो अहारा । नहिं बैठ्यो तबहि निहारा ।
बच निषठुर जाचति जोवा । बहु काइल मम चित होवा ।।४३।।

---

1. वरदान । 2. शाप ।

सम अहिदी खर्यो उचारा। पुन दियो अचाइ अहारा।
इक इही अवग्या होई। नहिं छिमा करी सुनि सोई ।।४४।।
इम भयो स्राप गुरु जाना। हुई होनहार को माना।
नहिं चिंत चित महिं कैसे। इक रस ब्रिति नित चित तैसे ।।५४।।
गुरु धीर अमीर गम्भीरा। जिमि छुभति न नीरध नीरा।
नहिं सीतल तपत हुवंता। नहिं वधहि न घटहि कदंता ।।४६।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'श्री चंदू प्रसंग बरनन' नाम अषट बिसंती अंसू ।।२८।।

अंशु २९

चन्दू प्रसंग

दोहरा

श्री गुरु अरजन जी टिके तारन तरन[1] सथान ।
संग मसंदनि संगतां दरसहिं अनगन आनि ।।१।।

चौपई

जहांगीर किस कारन करिकै । इक शहजादे सों रिस धरिकै ।
दियो निकास कह्यो सभि ठौरि । इसके संग न मिलि हैं औरि ।।२।।
जे नौकर मम लघु कि महान । को नहिं देहि इसे सनमान ।
ग्राम नगर परवेश न होइ । देश त्याग करि गमनै सोइ ।।३।।
इम सभि को लिखि दियो निकासि । सो तजि दिल्ली तुरी अवास ।
कुछ नर संग निकसि करि आयो । सने सने बहु मग उलंघायो ।।४।।
माझे देश प्रवेश्यो आइ । दिशि पशचम चित बांछत जाइ ।
गुरु तरन तारन पुरि डेरा । केतिक दिन ते कीनि बसेरा ।।५।।
जबि शहजादा तहिं चलि आयो । इहां गुरू तिह किसहि सुनायो ।
मिलौं इनहिं दरशन करि आछे । इक दुइ दिन रही गमनो पाछे ।।६।।
इम शहजादे रिदे विचारा । उतर पर्यो डेरो निरधारा ।
तिस निस महिं करकै बिसरामू । भई प्रात, सुनि सतिगुरु नामू ।।७।।
मिल्यो आनि करि वंदे हाथा । लखि महिमा नंम्री करि माथा ।
बूझ्यो सगरो तांहि ब्रितांत । भन्यो तांहि बीता जिस भांति ।।८।।
शाहु रोस बहु मो पर कीनो । देश निकारा कहि करि दीनो ।
पशचम दिशि को मैं चलि जावौं । श्री गुर जी तित बैस बितावौं ।।९।।
भनति बिनै अधिकाइ अधीन । अपने कषट निवेदनि कीनि ।
खरच गयो थुर पास न पैसा । दिन प्रति छुधिति रंक ह्वै जैसा ।
नीठ नीठ ते खरच चलावौं । वेचि बिभूखन नरनि खुलावौं ।
अप-पातशाहित मैं जावौं । माफक गुजर तहां धन पावौं ।।११।।

1. तरनतारन नामक स्थान पर ।

इत्यादिक जबि बिनै बखानी । सुनि श्री अरजन करुना ठानी ।
निज ढिग दिन केतिक सो राख्यो । देति असन हित धन जो कांख्यो ।।१२।।
जबहि चलनि कहु तिन मनकीना । पंच सहंस्र गुरू धन दीना ।
लेकरि नमो ठानि शहजादा । गमन्यो पशचम दिशि अहिजादा ।।१३।।
जिस दिन ले तिन कीनि पयान । नर चंदू को इक तिस थान ।
सकल वारता सुनि करि गयो । चंदू निकट सुनावति भयो ।।१४।।
करहि शत्रुता गुरु के साथ । जर वर भयो मलति जुग हाथ ।
कहौ शाहु ढिग छिद्र सु पायो । रिसहि रिदे हुइ मुर मन भायो ।।१५।।
मैं करि रह्यो उपाउ मनेरा । नहीं बिगार सक्यो गुरु केरा ।
सो फकीर, मैं शाहु दिवान । अबि लगि सम कै रह्यो महान ।।१६।।
शत्रु सम शहजादा सोइ । तिह धन दीनि सखा जिम होइ ।
निज ढिग राख्यो त्रास न माना । रिसहि शाहु जब सुनि है काना ।।१७।।
प्रात होति गर जामा पाइ । गयो मूढ उर हरख उपाइ ।
तसलीमात शाहु सो कीनि । चुगली उगलनि को मति हीन ।।१८।।
हाथ जोरि करि बहुर सुनावै । सो अरजन जग गुरु कहावै ।
चहुं दिशि ते धन जिस ढिग आवै । तुम ते त्रास न कैसे पावै ।।१९।।
निज पूजा अरु धन को देखि । जिस के उर हंकार विशेख ।
शहजादा जो तुमहिं निकार्यो । नहिं किस तिस को आदर धार्यो ।।२०।।
तुम ते बडा कि तुम सम जानि । पहुंच्यो गुरु अरजन के थान ।
सादर तिसको पास उतारा । हम राखहिं तुझ धीर उचारा ।।२१।।
हमरो कहा करै पतिशाह । नहिं रय्यत जे हुकम कराहि ।
केतिक दिवस निकट सो राख्यो । सो नहिं रह्यो चलनि अभिलाख्यो ।।२२।।
गमनति को बहु धन तिह दीना । सकल रीति ते मद्दत कीना ।
तुमरो त्रास पाइ सो गयो । गुरु अरजन उर डर नहिं कियो ।।२३।।
बड हंकार जिनहुं के मांही । आंखि तरै किस आनति नांही ।
तुम ढिग आगे अरच उचारी । राखहि तसकर सदन मझारी ।।२४।।
आप कहावति है सभि मांहू । सभि ते बडो साच पतिशाहू ।
निज खातर महिं किसू न ल्यावै । बरतरि तथा जथा मन भावै[1] ।।२५।।
अपर सजाइ नहीं जे देवहु । ढिग बुलाइ अजमति को लेवहु ।
करामात जो दिख्यो न चाहो । तऊ हकारहु अपने पाहो ।।२६।।

---

1. जैसा मन में आता है, वैसा ही व्यवहार करता है ।

जे इस क्रित को तुम मन जानि । नहीं तिदारक[1] देहु महान ।
निरभै होइ बहु करहि कुकाजा । तसकर आदि लगाइ सु राजा ।।२७।।

ज्यों तुम छिमा करहु लखि पीर । त्यों उरगर बति है धरि धीर ।
श्री नानक क्रित्त न तिनको । धरहि ईरखा[2] कपटी मन को ।।२८।।

सुलबी पठ्यो न पहुंच्यो तहां । तिस पीखे उर गरब्यो महां ।
हजरत जे डर ह्वै न तुमारा । होइ राज महिं बहुत बिगारा ।।२९।।

इत्यादिक पापी बहु कह्यो । साच तुरक पति ने चित लह्यो ।
नित प्रति तिनकी आइ खुटाई । मैं अबि लौ नहिं कछु जनाई ।।३०।।

निज दिवान पापी संग कह्यौ । केतिक डंड उचित तैं लह्यो ।
जेतिक देहिं[3] लिखहु परवाना । आवै अविचलि कै इसथाना ।।३१।।

दुषटसचिव ने मति बिचलाई । उचितानुचित सकल बिसराई ।
जिनकी करति सतुति लखि पीर । डंन चहै मूरख तिन तीर ।।३२।।

धन दुइ लाख दीजि यहि आइ । तुमने कीनसि बात बिजाइ ।
शहजादा जो हमहु निकार्यो । रिपु समान उर महिं निरधार्यो ।।३३।।

टिकन दयो नहिं निकट सु काहूं । तुम धन दीनसि राख्यो पाहूं ।
आइसु जहांगीर की लेके । चंद दुषट लिख्यो बिधि कै कै ।।३४।।

शाहू कहे को दस गुन रिस को । लिख्यो कठोर हुकम गुरु दिशि को ।
अहिदी को निज निकट हकारा । तिन पर शाहु क्रोध बडधारा ।।३५।।

गहु परवाना गमनहु तुरन[4] । लिहु दुइ लाख दरब करि पूरन ।
जाहु सुधासर हुकम प्रकाश । लिहु सभि किछु श्री अरजन पास ।३६।।

म्रिदुल न बोलहु लिहु धन रासी । नाहिं त आनहु हजरत पासी ।
अपर किसू को कह्यो न कीजहि । गमनहु अबहि छिप्प्र पहुंचीजहि ।।३७।।

चल्यो अहिदीआ ले परवाना । पीछे उर पापी हरखाना ।
बीते संमत करति उपाऊ । अबि कुछ लाग्यो मेरो दाऊ ।।३८।।

लैहौं बैर देऊं दुख तैसे । सुता मोहि संकट लहि जैसे ।
नहिं भै कर्यो न लीनि सगाई । करि बिनती भी मोहि पठाई ।।३९।।

लागी अबि लौ आंचि न ताती[5] । बैठि रह्यो करि सीतल छाती ।
करति रह्यो मैं जतन घनेरे । तिनके संकट गयो न नेरे ।।४०।।

---

1. कड़ी सज़ा । 2. ईर्ष्या । 3. जितना दण्ड देना है । 4. शीघ्रतिशीघ्र ।
5. अभी तक उसे कोई हानि नहीं पहुँची ।

खत्रिनि बिखै लाज मम खोई। करनि सबंध[1] न मानै कोई।
सो बदला अबि आवहि हाथ। इम बिचारि मूरख मुद साथ[2] ॥४१॥
नहिं जानहि निजमूल उपारति[3]। अपने पर अपदा बड डारति।
इस जग महिं दुख भोग घनेरो। मर्यौ कुत्रितु अंत की बेरो ॥४२॥
नरक अगारी परिहैं जाइ। नहिं अनजान लखहि इस भाइ।
चलि लहौर ते अहिदी आयो। होनिक्रूर[4] जो दुषट सिखायो ॥४३॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतरथ रासे 'चंदू प्रसंग बरननं' नाम ऊन त्रिसती अंशु ॥२६॥

---

1. (मेरी बेटी की) सगाई लेने को। 2. सप्रसन्न। 3. अपनी जड़ उखाड़ता है।
4. क्रूरतापूर्ण भावी।

अंशु ३०

श्री हरिगोबिंद जी पित सो सम्बाद

दोहरा

श्री अरजन बैठ्यो गुरू जानति सकल प्रसंग ।
अहिदी ने दरशन कर्यो भा सीतल सरबंग ॥१॥

चौपई

लिख्यो शाहु को धर्यो अगारी । आप जोरि कर वंदन धारी ।
देखि सरूप सुभाव बिसाला । अहिदी कहि न सक्यो तिस काला ॥२॥
सतिगुरु सो खुल्हाइ पठवायो[1] । धन दोइ लाख शाहु मंगवायो ।
श्री अरजन सगरी बिधि जानी । तजनी काया अपनि पछानी[2] ॥३॥
अरु कान्हे को स्राप चितारा । तजनि देह दुख पाइ उचारा ।
हरिगोबिंद गुरु बैठे भारी । महां बली वड शसत्रन धारी ॥४॥
सो सभि बदला लेगु हमारा । भूत भविख्य भले निरधारा ।
एक दिवस अहिदी को राख्यो । भई प्रात ते सतिगुर भाख्यो ॥५॥
हम लहौर आभहि चलि जैहैं । कहै शाहु जो तिह ठां दैहैं ।
इस प्रकार कहि अहिदी तोर्यो । बोल्यो सो निज हाथनि जोर्यो ॥६॥
जिम चंदू ने मोहि पठायो । खोटे बाकनि को सिखरायो ।
सो मुझ ते किम नहिं बनि आवहि । तुम दरशन ते कुमति नसावहि ॥७॥
अपनो सेवक मोहि पछानो । रावरि कहहु तथा अबि मानों ।
पुरषोतुम तुम सभि कुछ जानहु । तऊ दिवान दुषट पहिचानहु ॥८॥
तिस ते आप रहहु सवधाना । सकल कुकरम तिसी ने ठाना ।
अहिदी ते सुनि कीनि पसाउ[3] । सतिगुरु देति भए सिरुपाउ ॥९॥
बुरा जु होइ आप जर जै है । मुरख अपनो कीता पै है ।
रुसखद हुइ अहिदी चलि गयो । चंदू संग कहति इम भयो ॥१०॥
मुझ को कह्यो आप हम आवै । कहै शाहु सो तहां दिवावैं ।
सुनि खुनस्यो[4] गमन्यो ढिग शाहु । करी अरज ह्वै करि तबि पाहु ॥११॥

1. वह चिट्ठी पढ़वाई । 2. अपना शरीर त्यागने की बात जान ली । 3. दया करके । 4. प्रसन्न हुआ ।

नहिं श्री अरजन घन कछु दीनो । अहिदी संग न आवनि कीनो ।
नहीं त्रास कुछ करहि तुमारो । हुकम अदूली गुनहि बिचारो ।।१२।।
शाहु कह्यो को दिन करि मौन । नहिन पठावहु मानव कौन[1] ।
जे नहिं आवहि तहिं टिक रहै । पुन तिउं करहि जथा तूं कहैं ।।१३।।
इत श्री अरजन सभि कुछ जाना । होनिहार बिरतंत महाना ।
श्री गुरु ग्रंथ थिरहि जहिं रैन । तिस थल बैठे जिन किह भै न ।।१४।।
ब्रिद्ध आपने निकट हकारा । सादर भाखति तहिं बैठारा ।
पुन श्री हरगोबिंद बुलाए । युत गुरदास तहां चलि आए ।।१५।।
करे प्रेम को निकट बिठाइ । अबि समरत्थ हए बल पाइ ।
कहु वुड्ढा श्री हरिगोबिंद । अबि सुचेत भै बली बिलंद ।।१६।।
गुरता गादी बैठनि जोग । दै हैं दुषटनि के घर सोग ।[2] ।
ब्रिध ने भाख्यो जोति तुमारी । होहि बीर बड आयुध धारी ।।१७।।
छत्रिनि कुल ते युद्ध हट्यो है । राज तेज को सकल घट्यो है ।
भए मलेछ शसत्र बड धारी । करहिं राज बड अविनी सारी ।।१८।।
छत्री धरम दुरयो नहिं भासै । तखत बैठि अबि इही प्रकाशैं ।
जबि कबि जगति बिपरजै होति[3] । तुम तन धारि म्रिजाद उदोति[4] ।।१९ ।
हाथ जोरि गुरुदास उचारी । ब्रिध साहिब की उपमा भारी ।
श्री नानक आदिक गुरु सारे । बहु सेवा करि सदा निहारे ।।२०।।
सफलहि बाक स्राप अरु बर को । ब्रहम असत्र जिम रघुवर करको ।
भए पंच गुर शांति सरूप । करि गुरु सिक्खी रीति अनूप ।।२१।।
देति रहे शांती उपदेश । जिह सुनि काटे सकल कलेश ।
अबि सायुध गुर होवहि आप । सिख सायुध करि बधहि प्रताप ।।२२
अपर कौन समरथ इस काल । सभि छित[5] तुरकनि राज बिसाला ।
रावर ते होवै विधि सारी । हिंदु धरम को लेहु उबारी ।।२३।।
इम सुनि करि श्री अरजन नाथ । उठे हरख ले श्री फल हाथ ।
करी प्रदच्छन फिरि करि तीन । जगत रीति सुत लख्यो प्रबीन ।।२४।।
पैसे पंच सहित नली एर । धरि आगे नंम्रे तिस बेर ।
करी सथापनि अपनी जोति । सभि गुरु के आई जिम होति ।।२५।।
बुड्ढे साहिब सों फुरमायो । करहु सु आप करति जिम आयो ।
शुभ अधिकार करनि को नीका । उठहु मुदति दिहु अबि सुठ टीका ।।२६।।

1. कोई । 2. दुष्टों के घर शोक प्रदान करने वाले हैं । 3. जब संसार में उलट-फेर होता है । 4. तुम प्रकट होते हो । 5. धरती ।

हाथ जोरि तबि ब्रिद्ध बखान्यो । इह क्या कौतक रावर ठान्यो ।
जबि हूं होति देह को अंत । तबि इस बिधि को होइ ब्रितंत ।।२७।।
तन रावर को पर उपकारी । जंबू दीप दीप अनुहारी[1] ।
जहिं कहिं कर्यो प्रकाश बिसाला । मग शुभ गमन्यो जगत सुखाला ।।२८।।
दरशन की संगति है प्यासी । दूरि दूरि ते आइं हुलासी ।
भगतनि भूर भावना जानि । आप सरीर धरहु जग आनि ।।२९।।
औचक अचरज कहां जनावहु । थिरो आप शुभ दरस दिखावहु ।
सभि के अहो आसरा भारे । चहुंदिशि दुषट दुषटता धारे ।।३०।।
बनहु सहायक संगति केरे । सरब प्रवार तुमहु दिशि हेरे ।
बिगर्यो शाहू चंदु के कहे । सभि बिधि के तुम जानति अहे ।।३१।।
सुनि करि श्री अरजन गुर कह्यो । अंत समां हम अपनो लह्यो ।
त्यागनि मैं कारन हैं घने । गए लहौर सरब ही बने[2] ।।३२।।
कान्हे ग्यानी दीनो स्राप । ब्रिथा न होइ बिचारहू आपि ।
शत्रुनि करते छूटनि सरीर । पलटो[3] ले हरि गोविंद धीर ।।३३।।
सभि संगति को गुर इह भारी । होइ सहाइक पर उपकारी ।
काज सुधार हिंगे इह घनो । धर्यो सरीर बीर रस मनो ।।३४।।
हम तजि हैं तुरकनि सिर होइ । इनको तेज करहि छै[4] जोइ ।
श्री नानक की बखशिश भारी । सिर दे करि छीनहिं हम सारी ।।३५।।
अपर उपाउ लेनि को नांही । जिसते तुरक तेज बिनसाही ।
अपर सकल कारज बनि रहे । कौन बिघन करि सकिहै लहे ।।३६।।
दीन दुनी को राज बिसाला । श्री सतिगुर के घर सभि काला ।
परमेशुर की बखशिश महां । कौन मिटाइ सकै बल कहां ।।३७।।
हुइ प्रसंन श्री नानक दीनि । तिन झूठे करिलें हमछीन ।
इत्त्यादिक सतिगुर समुझाइ । निज गादी पर पुत्र बिठाइ ।।३८।।

दोहरा

साहिब बुड्ढे निकट ते कुंकम मलय घसाइ ।
सोढी कुल के तिलक के दीनो तिलक कराइ ।।३९।।

चौपई

'राखहुं गोप नहीं, बिदता वहुं[1] । सभि संगति को सीख सिखावहुं ।
मम सरूप श्री हरिगोबिंद । जो जानहु सो लहै अनंद ।।४०।।

---

1. भारत वर्ष में दीपक सदृश । 2. सबका लाभ होगा । 3. बदला । 4. क्षय ।
5. गोपनीय नहीं रखना, सबको विदित कर देना ।

हम पछै दीजहि दसतारु। सभि बिधि कैरह मंगलाचार।
सरब मसंद संगतां सारी। लिखहु हुकम सभि लेहु हकारी ॥४१॥
चहुंदिशि को हुइ मेल बिसाला। तखत बिठावहु तुम तिसकाला।
निज सहाइता चाहि न धरैं। अपरनि की सहाइ इह करैं ॥४२॥
इम कहि परम प्रेम को करि मन। सिख्या देति भए श्री अरजन।
'अहं ब्रहम इह ब्रिति उर धरनी। बहिर क्रिआ भगतनि की करनी ॥४३॥
इह उपदेश आदि गुरु घरु को। लेहु आपि निम शरधा धरि को।
श्री नानक को आशै महां। गुरु अंगद संग जैसे कहा ॥४४॥
अजर जरनि धीरज उर धरनी। अज़मति बिदति न काहूं करनी।
रामचंद श्री क्रिशन महाने। बल करि रण आदिक बिधि ठाने ॥४५॥
नहीं शकति करि कहूं दिखाई। सही सरब ही जिम बनि आई।
तिसी प्रकार आपि मति धरो। नहीं बिदति अज़मति कित करो ॥४६॥
पुरषोतम जे करि दिखराई। हित म्रिजाद कै जननि सहाई[1]।
बिना करे बिगरहि जहि बात। ताहां करति हैं नित चित शांत ॥४७॥
जाम जामनी करहु शनान। सुनहु कीरतन प्रभु निरबान।
जगत अनित्त आतमा साचो। इम लखि सति संगति चित राचो ॥४८॥
पाइ पुत्र को गुरू बहाना। संगति को उपदेश बखाना।
श्री हरि गोविंद सुनि करि धीर। कमल बिलोचन मोच्यो नीर[2] ॥४९॥
कारन करन आप तुम सारे। असमंजस हम समुख उचारे।
इम कहि नंम्रि ग्रीव करि थिरे। धीर सबग्य जानि चुप करे ॥५०॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतरथ रासे 'श्री हरिगोबिंद जी पित सो संबाद' बरननं नाम त्रिसती अंशु ॥३०॥

1. सेवकों की सहायतार्थ। 2. कमल सरीखे नेत्रों में जल भर आया।

अंशु ३१

श्री गुर अरजन लवपुरि आगमन प्रसंग

दोहरा

इस क्रित को करि सतिगुरू निसा भई पुन आइ ।
ग्रिह प्रवेश भोजन कर्यो बैठि प्रयंक सुहाइ ।।१।।

चौपई

साध्वी श्री गंगा चलि आई । बैठी निकट देखि सुख पाई ।
श्री अरजन सभि बाति बखानि । सुनहु ! आरजे भाग महानी[1] ।।२।।
लवपुरि को हम करहिं पयान । होति प्राति निशचै हुइ जान ।
तब सुत सकल काज को स्याना । धरम धीर धरि धरनि समाना ।।३।।
नहीं सदीव देहि इह रहै । यांते सुमति सनेह न गहै ।
जो उपजहि सो बिनसन हारि । जो ऊचो सो गिरने हारि ।।४।।
इहि सनातन देहनि धरम । इस महिं प्रेम, महां उर भरम ।
दिन प्रति सभि प्रणाम को पावहि[2] । प्रथम समान सथिर न रहावहि ।।५।।
बालिक ते होवहि सु कुमार । तरुन होति पुन ब्रिधता धारि ।
जरा ग्रसे तबि जीरण होइ । बहुरो अंत समें महिं सोइ ।।६।।
रहु पीछे कुछ शोक न मानहु । देहि आपते तजनि न ठानहु[3] ।
पुत्र सु पौत्रनि को सुख देखि । शादी करहु अनंद विशेखि ।।७।।
अंत समां हुइ प्रापति जबै । हम सों मिलहिं आनि तूं तबै ।
गंगा सुनी अचानक बाती । कमल बिलोचन अश्रु पपाती[4] ।।८।।
इह किम कही आपने बानी । तीखन तपति नरांच[5] समानी ।
श्रुत दर[6] प्रविश रिदा मम बेधा । कस उपदेशति हो अस मेधा ।।९।।

---

1. हे श्रेष्ठ ! बड़े भाग्य वाली, सुनो । 2. परिणाम (अन्त) को पाता है । 3. अपने-आप शरीर छोड़ना न ठानो । 4. अश्रु-पात हुआ । 5. तीर । 6. कर्ण-कुहर ।

धीरज धरनि बखानति आपू । जिस ते इस जुत आनंद खापू[1] ।
सभि संगति के सहत कुटंबू । करनि श्रेय के आप अलबू ॥१०॥
श्री हरिगोविंद बालिक बैसा । आप जनावति कारज कैसा ।
शत्रू गन सभि रचति उपाया । नीठि नीठि[2] निज नंद बचाया ॥११॥
तुम समरथ हो नित सभि भांती । कौन आसरो गहि पशचाती ।
श्री अरजन जी पुनह बखानी । अस चिंता किम चित महि ठानी ॥१२॥
श्री नानक समरथ जगनाथ । तिनको अहै माथ पर हाथ ।
सदा सहाइक विघन न साइक । प्रभु बिसाल गन शत्रुनि घाइक ॥१३॥
गुरु प्रताप ते हरिगोविंद । दिन प्रति इनको तेज बिलंद ।
अपर न कीजहि चित दुचिताई । बेदी कुल के तिलक सहाइ ॥१४॥
अस कहि करुना धारि निहारा । उर गंगा के मोह बिदारा ।
प्रापति भयो ग्यान सुखदानी । जिम पति कहति साच तिम जानी ॥१५॥
करको जोरति बाक बखाना । जथा जोग सो क्रित तुम ठाना ।
तुमते अपर न स्यानो कोई । जो आछी हुइ भाखहु सोई ॥१६॥
इम संभाखनि करि गुरु सोए । जाम जामनी जाग्रनि होए ।
क्रिआ शनान आदि सभी करी । बहुर समाधि रूप निज धरी ॥१७॥
जबि प्रकाश रवि को हुइ आयो । चढ़नि हेतु खासा[3] मंगवायो ।
पंच सिख्य ले अपने साथ । कीनि अरुढ़नि अरजन नाथ ॥१८॥
विधीआ, जेठा लंग पिराणा । पंचम पैड़ा संग पयाणा ।
अपर सरब दै धीरज त्यागे । रहहु सुधा सर सेवा लागे ॥१९॥
श्री हरि गोविंद संग सदीवा । दरशन परसहु हरख धरीवा ।
निकसि ग्रेह ते सतिगुरु आए । गए सुधासर को दरसाए ॥२०॥
पित थल जानि भाउ बडि धारा । नमसकार कीनसि दरबारा ।
सदा कीरतनि की धुनि जहां । श्री हरिमंदर सुंदर महां ॥२१॥
करी प्रकरमां पिता निहोरे[4] । धर्यो ध्यान वंदति कर जोरे ।
निकसे वहिर पंथ तिस परे । लवपुरि दिशि सनमुखु मुख करे ॥२२॥
सिक्ख्य सकल जुति हरि गोविंद । बिदा हेतु गमने नर ब्रिंद ।
कितिक दूर जबि पहुंचे जाई । खरे भए सतिगुरु सुखदाई ॥२३॥

---

1. जिससे इस (धीरज) सहित आनन्द का नाश हो जाए। 2. ज्यों-त्यों । **3.** पालकी । 4. विनती की ।

सभि सों कहि नीके उपदेश । सिमरहु सतिगुर हरहु कलेश ।
साहिब बुड्ढा अरु गुरु दास । इन जुति श्री हरिगोविंद पासि ।।२४।।
रहहु सदा धरि गुरुमति आछे । नित प्रसन राखहु हम पाछे ।
किनहूं आग्या भंग न करनी । निज मति कीजहि इन अनुसरनी ।।२५।।
हरिगुविंद को पुनह सुनाई । अदब रखहु नित बुड्ढा भाई ।
जिम आग्या दे तैसे रहिना । नहिं इनके सनमुख कबि कहिना ।।२६।।

दोहरा

सुनि श्री अरजन के बचन बुड्ढा आदि जि दास ।
युत श्री हरिगोविंद के वंदि चरन सुखरासि ।।२७।।

चौपई

बारि बारि करि बिन घनेरी । हटिवे चहति नहीं तिस वेरी ।
श्री अरजन कहि करि बहु बारी । बरबसि सभिनि हटाइ पिछारी ।।२८।।
अपनी जोति पुत्र महिं धारी । गुर अशोक तबि चले अगारी ।
पठ्यो सिखय इक गोइंदवाल । पहुंचहु आज तहां मग चालि ।।२९।।
मिलहू अरथमल को तुम जाइ । लवपुरि गमनै देहु सुनाइ ।
होति प्रात के सो चलि आवहि । हमको मिलहि मोद उपजावहि ।।३०।।
सुनति सिक्ख्य उतलावति[1] धावा । संध्या होति पुरी प्रविशावा ।
मिल्यो अरथ मलु को करि नमो । हाथ जोरि बैठ्यो तिह समो[2] ।।३१।।
श्री सतिगुरु को दीनि संदेसा । तुमको सिमरनि कीनि विशेषा ।
लवपुरि को गमने जिसकाल । मो कहु करि तागीद बिसाल ।।३२।।
प्रात चढावहु तिनको[3] जाइ । सुनि आग्या मैं आयो धाइ ।
इम कहि बाक, सुने बिसमाने । कारन कौन करति अनुमाने ।।३३।।
श्री गुर अमर अंस मिलि सारे । सिख सों बूझति करति बिचारे ।
सुन्यो जु शाहु पठ्यो परवाना । यांते चित महिं चिंत महाना ।।३४।।
करहि शत्रुता मूरख चंदू । बिनू दोषनि दे दोष बिलंदू ।
बहुत बिचारति निसा बिताई । चल्यो अरथ मल पिखि रुनाई[4] ।।३५।।
इत श्री अरजन गुर तिह समो । रामदास पुरि को करि नमो ।
सने सने मग महिं प्रसथाने । डेरा करि जामन गुजराने ।।३६।।
भई प्रात हुइ करि असुवार । पहुंचति भै लवपुरी मझार ।
इक सद्दू सिख गुरु मुख महां । करति प्रतीखनि बासै तहां ।।३७।।

---

1. उतावली पूर्वक । 2. उसके सामने । 3. भाव, अरथमल को । 4. लालिम (पूर्व दिशा की) ।

दीन अहों मैं दीननि दयाला । भिखहु भगत के भाऊ बिसाला ।
मम घर निसाबास जै करिहीं । सरब सेव ठानौ निज करही ॥४८॥
करनि अहार आदि जै सेवा । करिवावहिं मो ते गुरु देवा ।
बनो भ्रितारथ पुरहिं आसा । सिमरति सतिगुरु धरि भरवासा ।३९॥
निस दिन जिस के उर लिव लाई । मैं किह सभे बनहुं बडभागी ।
किरतन मेल करति बहुतेरा । रिदे प्रतीखति संझ सवेरा ॥४०॥
करनि कामना पूरन तांही । सभि तजि गए सिक्ख्य घर मांही ।
ऊच नीच की परख न कोई । प्रेम बिलोकति हरि गुरु सोई ॥४१॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'श्री अरजन लवपुरि आगमन प्रसंग बरननं' नाम एक त्रिसती अंशु ।३१।

अंशु ३२
अरथ मल मिलनि प्रसंग

दोहरा

सद्धू सिख्य सभारजा[1] प्रेम करे मन मांहि।
श्री अरजन सभि जानि करि पहुंचे तिस घर मांहि ॥ १ ॥

चौपई

हेरि अनंद रूप गुरु केरा। बंदन करी चरन तिस बेरा।
घटि घटि के नित अंतरजामी। दास कामना पुरवहु स्वामी ॥ २ ॥
धनी सिक्ख ध्रमसाला छोरि। उरकी लखि आए मुरि ओरि[2] ॥
दीन बंधु यांही ते कहैं। प्रेम बसी तुम को सभि लहैं ॥ ३ ॥
हाथ जोरि वहु उसतति करिकै। तरे उतारे[3] उर मुद भरिकै।
ले करि गयो सदन के अंदर। नौतन पलंघ डसायो सुंदर ॥ ४ ॥
आसतरनि[4] ते ऊपर छाए। करि बिनती सतिगुरु बिठाए।
जथा शकति करि अपर फरश को। सिक्ख बिठाए धारि हरष को ॥ ५ ॥
और सरब सेवा करि नीके। चरन पखारति भा सभि ही के।
श्री सतिगुर के चरन पखारे। चरनांम्रित कुटंब मुख डारे ॥ ६ ॥
सरब सदन महिं छिरकनि कीनिसि। भयो निहाल अधिक फल लीनिसि।
सभि बिधि की सुचता[5] तबि करी। लेपन आदि रसोई धरी ॥ ७ ॥
भोजन करन हारि इशनाने[6]। सुच सों नीर नयो भरि आने।
बासन सकल मांझ करि ब्रिंद। पावनता करि तबहि बिलंद ॥ ८ ॥
सुंदर अंन चून गोधूम[7]। सूखम चावर धरि सुधि भूमि।
पहित[8] बनाई डालि मसाले। पाइस पाक कीनि बिधि नाले ॥ ९ ॥
घ्रित सों मेलि बनायहु नीको। करि त्यारी भोजन सभि ही को।
बहु दीपक सगरे घर करे। चौंकी नई डसाई तरे ॥ १० ॥

---

1. भार्या सहित। 2. (मेरे) मन की बात जानकर मेरी ओर मुड़ आए हैं। 3. (सवारी से) नीचे उतारा। 4. विछौना। 5. शुचिता। 6. भोजन करने वालों ने स्नान किया। 7. गेहूँ का आटा। 8. दाल।

हाथ जोरि आगे हुइ खरो। कह्यो गुरु जी भोजन करो।
सुनति उठे लखि प्रेम घनेरा। चौंकी पर बैठे तिस बेरा ॥ ११ ॥
प्रिथक प्रिथक करि थाल परोसा। भख्य भोज लेह्ज अरु चोसा।
तुरष मधुर अरु तिकत[1], सलौन। आगे धर्यो गुरू के तौन[2] ॥ १२ ॥
हाथ जोरि सनमुख रहि खरो। चाहति हुकम सु सेवा करौं।
सिख्यन सहत सु कर्यो अहारे। त्रिपत भए सभि हाथ पखारे ॥ १३ ॥
सद्धू मान राखिबे कारन। स्वाद सराहति भले अहारनि।
हाथ जोरि कहि मैं किस लायक। दीन द्याल तुम सहिज सुभायक ॥ १४ ॥
जिम दुरजोधन आदिक त्यागे। सदन बिदर के बसि अनुरागे।
सो विधि आज भई मम साथ। सभि को तजि मम घर बसि नाथ ॥ १५ ॥
रुचिर चरित्र बचित्र पवित्र। को कहि सकहि आपके चित्र।
गुरु प्रयंक पर पहुंचे जबै। भोजन अच्यो त्रिया जुति तबै ॥ १६ ॥
पुन दंपति बिजना ले गए। पौन प्रीति सों हांकति भए।
सुंदर म्रिदुल चरन को गहि कै। चांपति[3] चौप चारुको चहिकै ॥ १७ ॥
जिस जिस सिखको सुधि तबि होई। दरशन को आए सभि कोई।
धरि धरि भेट बंदना ठानहिं। मनो कामना बिनै बखानहिं ॥ १८ ॥
इसी प्रकार निमा बड गई। सुख सिहजा पर निंद्रा लई।
निकट सिख्य सभिही परि सोए। बिधीचंद आदि कहै जोए ॥ १९ ॥
जामजामनी जाग्रन कीनि। सौचा चारु सगल करि लीनि।
तन शनान जल निरमल साथ। इक चित बैठि रहे गुर नाथ ॥ २० ॥
पुनह प्रकाश भयो रवि चढ्यो। सभि संगति सुनि सुनि मुद बढ्यो।
आइ आइ दरशन को करहिं। बंदहि चरन उपाइन धरहिं ॥ २१ ॥
तबहि अरथमल चलि करि आयो। मिल्यो प्रेम करि सीस निवायो।
जेठो पुत्र मोहरी केरा। भरि करि अंक मिले तिस बेरा ॥ २२ ॥
सादर निकटि बिठावनि कर्यो। प्रिथक सभिनि ते हुइ हित धर्यो।
जिस प्रकार को कारन करना। निकट अरथमल के सो बरना ॥ २३ ॥
हमरे तन को है अबि अंत। तजिबे को सभि सुनो ब्रितंत।
महां बिरोधी हमरे जे हैं। सिर अपराध तिनहु के दै हैं ॥ २४ ॥
अपराधी जबि होहि बिसाला। उचित सजाइ बनहि तिस काला।
श्री हरगोविंद चंद बिलंदै। संकट देहिं दुषट हति ब्रिंदै ॥ २५ ॥

1. करारा। 2. उसने। 3. चरण-सेवा।

सुनति अरथमल बूझन करे। कहहु मोहि, किम तन परहरे।
श्री अरजन सभि गाथ बखानी। चंदू दूती करति महानी ॥ २६ ॥
प्रथम कहति इह चोर लगावैं। शाहु समाज मिलहि चुरवावैं[1]।
पुनह सजादा इक चलि आयो। दीन जानि तिह भोजन खवायो ॥ २७ ॥
इह दूती कीनसि मतिमंद। शाहु सिखाइ रिसाइ बिलंद।
दोइ लाख लिखि दंड पठायो। अहिदी ले हमरे ढिग आयो ॥ २८ ॥
यांते महां दुषट है एही। दोष तजनि तन सिर इसी देही।
कान्हे को है स्राप हमारे। तनु त्यागहु रिपु धरनि मझारे ॥ २९ ॥
पुन हमरे नाने बच कह्यो। माता ने जबि ही बर लह्यो।
गुरता रहै हमारे घर मैं। अबि नहिं जावहि बंस अपर मैं ॥ ३० ॥
सलिता जल चलता तुम रोक्यो। हुइ है संकट एव बिलोक्यो।
सो अबि फुरहि करहिं हम साचे। समै निकट ते तनु नहिं बाचे ॥ ३१ ॥
सो सभि कारन आइ मिले हैं। अबि तनु त्यागनि लख्यो भले हैं।
सुनति अरथ मल शोक बिसाला। रुचिर बिलोचन ते जल डाला ॥ ३२ ॥
हे प्रभु तुम अलेप सभि समै। दरस लाभ सुख जो बड हमैं।
सिख संगति सभि रहैं विसूरति। करति प्रेम हेरति तुम मूरति ॥ ३३ ॥
करहु अनेकनि को कल्ल्यान। परउपकारी सदा महान।
तुरक युकत चंदू दुख पावै। हरख धरति उर बिख को खावै[2] ॥ ३४ ॥
जबि घट अंतर पहुंचहि जाई। सोखहि अंग प्रान बिनसाई।
तैसे अबि इह नांहिन जानहि। संग निरवैरु वैर जो ठानहि ॥ ३५ ॥
आपद परहि इनहु परि जबै। इस फल को पावहिंगे तबै।
जो करते ने कारन करने। सो सभि ते कारज हैं सरने ॥ ३६ ॥
अबचल नीव रखी गुरु नानक। पचि हैं[3] निंदक दुषट अचानक।
बहुर अरथ मल जोरे हाथ। सुनो बिनै श्री अरजन नाथ ॥ ३७ ॥
मम कांयां है आप अगारी। तजि करि दिउ जर[4] तुरक उखारी।
तुम बिन जग मैं रहनि न भावै। अबि परलोक चलनि बनि आवै ॥ ३८ ॥
दिहु आग्या मैं करौं चलाना। आप रखहु तन, काल महाना।
श्री अरजन सुनि करि बच प्रेम। कह्यो रहहु तुम तन युत छेम[5] ॥ ३९ ॥
रही आरबल बासुर चाली। तबि तुम कायां तजो सुखाली।
मिलहु आनि परलोक सु मोही। नहिं बियोग बहु दिन को होही ॥ ४० ॥

---

1. शाह की सम्पत्ति (चोरों के साथ मिलकर) चुरवाता है। 2. हृदय में प्रसन्नता धारण कर भी विष-भक्षण कर रहा है। 3. नष्ट होंगे। 4. जड़। 5. क्षेम, कुशल।

इम दे धीरज राख्यो पासी। अनिक रीति की कथा प्रकाशी।
लंगर लग्यो होनि गुर केरा। अरपहि संगति आनि घनेरा ॥ ४१ ॥
आवहिं सिक्ख टोलि करि घने। पूजि पूजि गमनहिं सुख सने।
श्री अरजन को पुरि आगवनू। पसरी सुधि लघु दीरघ भवनू ॥ ४२ ॥
शरधा सहत भाउ को धरि धरि। जांहि संगता आनंद करि करि।
सुजसु उचारति नर त्रिय घरि घरि। उपदेशति नित सिमरहु हरि हरि ॥ ४३ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'अरथ मल मिलनि प्रसंग' बरननं नाम दोइ त्रिसंती अंशु ॥ ३२ ॥

अंशु ३३

चंदू ग्रिह आवनि गुरु प्रसंग

दोहरा

सिख संगति लवपुरी के सकल दरस को आइ।
वहिर दूर के सुनति इत आनि भए समुदाइ ।। १ ।।

सवैया छंद

आनि उपाइन अरपहिं दरसहिं बडे भाग सुनि सुनि उपदेश।
सत्तिनाम की उर लिव लागहि जनम जनम के कटहिं कलेश।
सुख अतोल को पाइ न डोलहिं अंतर मन के थिरहिं विशेष।
धंन्य धंन्य श्री अरजन सतिगुर प्रभु अवतार भगति के बेस ।। २ ।।
सिक्खनि को समुदाइ भयो बहु सति संगति मिलि करहिं अनंद।
इक आवति इक जाति चले नर एक निकट रहि कुमति निकंद[1]।
गाइं रबाबी बडी राति ते सुनहिं सिक्ख्य उर प्रेम बिलंद।
बानी पठहिं कंठ को धारहिं सत्तिनाम जसु उज्जल चंद ।। ३ ।।
इक दिन सतिगुरु चढि करि खासे वहिर चले रावी के तीर।
निंदक चंदू मिल्यो अगारी देखी संग नरनिगन भीर।
बूझ निकर्यो कौन इह गमनति काम दार उमराव अमीर।
मानव संग अनेक चलति हैं आगे पाछे बहुत बिहीर ।। ४ ।।
पातिशाहु को होइ समीपी कै चाकर हुइ अलप बिसाल।
सो मुझ नमो करति मिलि गमनति मानहि आनि उलंघ ततकाल[2]।
सुनि दौर्यो इक नर सिख बूझे को इह जाति ब्रिंद नर नालि।
थिरहुइ कर्यो बतावनि तिसने श्री अरजन सतिगुरू क्रिपाल ।। ५ ।।
आनि बतायहु चंदू को तिन सुनति जर्यो मन महिं दुखपाइ।
मम रिपु फिरहि दिखाइ प्रतापू बहुते मानव संग लगाइ।
मैं नित चिंता के बसि दुरबल इह नचिंत बिचरति हरखाइ।
धिक जीवन मम बुद्धि बल को धिक, सरे न कुछ बहु करे उपाइ ।। ६ ।।

---

1. दुर्बुद्धि को नाश करने के लिए। 2 औरों को छोड़ शीघ्र ही (मेरी) मानता।

तुरत तोर असवारी गमन्यो आज कहों सुधि शाहु के तीर।
उतर्‍यो करति सलाम गयो ढिग रिसि ते धरहि न किम उर धीर।
कहि प्रसंग कुछ हजरत को तबि निज दिशि रुख फेर्‍यो नहिं भीर[1]।
कर जोरे उचरति दुरमति को अबि आयहु पुरि सिक्खनि पीर ॥ ७ ॥
तुम ढिग आवनि कर्‍यो न अबि भी हिंदुनि ते पुजवावति पांइ।
नित प्रति धन अनगिनत ग्रामदन धनी भयो उर गरब वधाइ।
दोइ लाख को दण्ड लखहि क्या, ततछिन लै दै हौं इस थाइं।
आप सपारश कहो न सुनीयहि[2] तौ तसकर रखहि न डरपाइ ॥ ८ ॥
सुखी बसहि गो देश बहुर सभि करहु बुलावनि तौ चलि आइ[3]।
नतु सिक्खनि ते लेकरि धन को अपनी पुरी प्रवेशहि जाइ।
न्रिभै होइ तुम ते बहु राख्यो शहज़ादा देश जु निकसाइ।
पाइ तिदारक तौ चित समुझहि शाहु अवग्या इम दुखदाई[4] ॥ ९ ॥
इक दुइ अपर शाह के निकटी धन दे कीने अपन सहाइ।
सो उमराव कहनि तबि लागे चंदू शाह ! सुमति अधिकाइ।
देश दुखी दिखि दोख लखै उर बार बार सो अरज कराइ।
आप हदूरि हकारि निहारहु कहहु न कुछ मग पूछहु खुदाइ[5] ॥ १० ॥
दंड दिवान सु लेहि निबेरहि आप दोष ते संकति जेय[6]।
सुनि तिस बाक बिसरजन करीऐ तुमहु न लेप लगै बिधि देय।
चंदू अरु उमरावनि रुख लखि शाहु रिदे भी चाह करेय।
दरशन करौ उचारनि सुनि हौं निंदा सिफति बहु जिस केय ॥ ११ ॥
निकट वजीरखान को देख्यो कह्यो ताहि को सतिगुर आनि।
सुनि आइसु को ततछिन गमन्यो जिस थल श्री अरजन भगवान।
धरि अकोर को करे निहोरनि[7] हाथ जोरि जुग बंदन ठानि।
धंन्य धंन्य तुम गिरा धंन्य है जिह सुनि दुख ते उबरें प्रानि ॥ १२ ॥
भयो जलोधर अरु बहु पीरा निस बासुर व्याकुलता पाइ।
हाइ हाइ करि पर्‍यो पुकारति किस हकीम ते शांति न आइ।
पाठ सुखमनी ते सुनि सुख भा व्याधि गई ततकाल नसाइ।
चंदू चारी[8] करति आपकी बहु दिन बीतें करति उपाइ ॥ १३ ॥

---

1. (बादशाह के पास) कोई भीड़ नहीं थी। 2. आप सिफारिश न करें या मानें (तो)। 3. आपके बुलाने से यहाँ आ जायेगा (तो फिर) समूचा देश सुखी बसेगा। 4. दण्ड पाएगा तो मन में बादशाह के निरादर की दुःखपूर्ण प्रतिक्रिया को जानेगा। 5. खुदा का। 6. दण्ड दीवान स्वयं निपट लेगा, यदि आप दोष लगने से शंकित हैं। 7. भेंट रख कर प्रार्थना की। 8. चुग़ली।

बारि बारि सुनिशाहु बिचलगा पुन उमराव सहाइ दिवान ।
चहै कहावति भरम उपावति एव सुनावति दुषट महान ।
हजरत तऊ बडाई राखति श्री नानक गादी पर जानि ।
करे हकारनि दरशन कारन वाक सुननि की चित रुचि ठानि ।। १४ ।।

पठ्यो आप ढिग, मैं चलि आयहु दिहु दरशन को बिरद क्रिपाल ।
सुनि श्री अरजन बाक बखाने हम इस हित आए मग चालि ।
करति प्रतीखन समा सु पहुंच्यो इम कहि भए त्यार तिस नालि ।
चढि खासे पर गमने सतिगुरु पंच सिक्ख ले संग बिसाल ।। १५ ।।

करहिं हजारहु बंदन मग महिं खरे होहिं पिखि हित सनमान ।
धंन धंन गुरु सुजसु उचारहिं सुनति चलति जसु को निज कान ।
सुधि वजीर खां करी अगारी पहुंचे आइ गुरू भगवान ।
ऊचासन कहि के डसवायो चदू दुख्यो देखि सनमान ।। १६ ।।

इतने महिं गुरु दरशन दीनसि सादर कहि करि तहां बिठाइ ।
शाहु नम्यो गुरु कुशल प्रशन करि हेरि हेरि सभि सीस निवाइ ।
पुन हजरति ने बूझनि कीनि हिंदू तुरक जि बाद वधाइ ।
निज निज को मानहिं हम दीरघ कहैं भिसति इक दोजक जाइ ।। १७ ।।

दोनहु महं को साहिब जानहि किस पर करुना करे खुदाइ ।
कौन साचु कहि ? कूर कहै को ? इह संसै मेरे मन आइ ।
उत्तर देहु पीर तुम दीरघ जिसते मम खातर[1] हुइ जाइ ।
सुनि हजरत ते सतिगुरु अरजन कहि जवाब को शबद सुनाइ ।। १८ ।।

श्री मुखवाक

रामकली महला ।। ५ ।।

कोई बोलै राम राम कोई खुदाई ।
कोई सेवै गुसईआ कोई अलाहि ।। १ ।।
कारण करण करीम ।
किरपा धारि रहीम ।। १ ।। रहाऊ ।।

कोई नावै तीरथि कोई हज जाइ ।
कोई करै पूजा कोई सिरु निवाइ ।। २ ।।
कोई पड़ै बेद कोई कतेब ।
कोई ओढै नील कोई सुपेद ।। ३ ।।

---

1. हार्दिक सन्तोष ।

कोई कहै तुरकु कोई कहै हिंदू ।
कोई बाछै[1] भिसतु कोई सुरगिदू[2] ॥ ४ ॥
कहु नानक जिनि हुकमु पछाता ।
प्रभु साहिब का तिनि भेदु जाता ॥ ५ ॥ ९ ॥

दोहरा

श्री परमेशुर एक है झगरति दोइ बताइ[3] ।
सुनहु शाहु निशचै करहु एको राम खुदाइ ॥ १९ ॥
अरथ क्रिपाल रहीम को एको जान्यो जाइ ।
पक्ख बाद[4] करि परसपर झूठे दोइ बनाइ ॥ २० ॥
हमरो मत है अपर बिधि मिल्यो दोनहूं साथि ।
अरु दोनो ते प्रिथक भी नहीं बाद की गाथ ॥ २१ ॥
हुकम जान साहिब प्रभू दुख सुख जिम बनि आइ ।
हरखति रहहिं सदीव हिय दोष नहीं अरपाइ ॥ २२ ॥
सत्तिनाम को सिमरनो त्यागनि तन अभ्यास[5] ।
तीनहु ते प्रभु को मिलहि हुइ ब्रह्म ग्यान प्रकाश ॥ २३ ॥
हिंदू हुइ कै तुरक हुइ तीनहु जिनहु कमाइ ।
पारि परे भव सिंधु ते जनम कलेष मिटाइ ॥ २४ ॥
तीनहु को बिसतार करि कहैं जि अरथ बिसाल ।
अधिक होइ कहि तक सुनहु छूटहिं बंधन जाल ॥ २५ ॥
सुमति वंत थोरे कहे समुझहि बाति बिसाल ।
जिनको लगी खुदाइ लिव सोई अकल कमाल ॥ २६ ॥
इम सतिगुरु के कहति बच रवि पशचम असताइ ।
संध्या लखि करि शाहु तबि करे बिसरजन गाइ ॥ २७ ॥
उठे गुरू निकसे वहिर चंदू अवसर पाइ ।
मैं ले जावों निज सदन राखों सेव कराइ ॥ २८ ॥
समुझावों सभि बारता तुमरी दिशि ते होइ ।
लिउं दुइ लाख सुखेन ही रखहि न तसकर कोइ ॥ २९ ॥
बिना दंड ते हटहि नहिं देश न होइ अराम ।
करो न्याव ईमान[6] तुम सुजसु जगत अभिराम ॥ ३० ॥

---

1. चाहता है । 2. स्वर्ग । 3. दो बताकर (झगड़ते हैं) । 4. अपना-अपना पक्ष लेकर खींच-तान । 5. शारीरिक अभ्यास का त्यागना । 6. धर्मानुकूल न्याय ।

शहजादा राख्यो निकटि पाइ तिदारक सोइ ।
नहिं बिजाइ[1] बहुरो करहि उर दीरघ डर होइ ॥ ३१ ॥
तुमको दोष न होइ कुछ मैं लेवौं दुइ लाख ।
करों खजाने दाखली तीन चार दिन राखि ॥ ३२ ॥
अबि न बनैं कशमीर को रावरि करनि पयान ।
मरजी उर दिल्ली चलहु मानि बिनोद महान ॥ ३३ ॥
आप करहु अबि कूच को पाछे ले धन सोइ ।
करहि सपारश कबहुं को[2] नहिं सुनियहि तिस जोइ ॥ ३४ ॥
हां कहिवाई शाह ते निकस्यो ततछिन आइ ।
करे सिपाही संग गुरु निज डेरे कहु ल्याइ ॥ ३५ ॥
पंच सिक्ख्य ड्योढ़ी बिखे करिकै कैद बिठाइ ।
अंतर गुरू उतारि कै कहि कहार निकसाइ[3] ॥ ३६ ॥
तिमर भए घर ले बर्‌यो डेरा दियो कराइ ।
ब्रिंद सिपाही द्रिढ करे सावधान हरखाइ ॥ ३७ ॥
निस बासुर ठांढे रहो गहे हाथ असि ढाल ।
निकटि न आवनि देहु किस भेरि किवार बिसाल[4] ॥ ३८ ॥
मनभावति मेरी भई हरख्यो मूढ बिसाल ।
सुपत्यो खातर जमा करि[5] करि ठांढे नर जाल ॥ ३९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'चंदू ग्रिह आवनि गुरू प्रसंग' बरननं नाम तीन त्रिसती अंशु ॥ ३३ ॥

---

1. अनुचित । 2. कभी कोई । 3. कहारों को बाहर जाने को कहा । 4. बड़े द्वार बंद कर दो । 5. सन्तोष पूर्वक ।

अंशु ३४

चंदू गुरु प्रसंग

दोहरा

निसा बिती पुन प्रात भी शाहु बाक कहि दीन ।
बजे नगारे कूच के सुधि सभिहूं सुनि लीनि ॥ १ ॥

चौपई

हजरति जबि तिआर हुइ गयो । चंदू अधी[1] मेलि तबि कियो ।
दिहु प्रवानगी मुझ को आपू । दिन चारिक महिं करिव मिलापू ॥ २ ॥
कछू मामले की रहि कारि । इक संमत[2] की करनि संभारि ।
नवी सिंद लागे समुदाइ । जमां खरच को सभि समुझाइ ॥ ३ ॥
करि फरेब को छोर्‌यो साथ । शाहु न चितवी पुन गुर गाथ ।
वहु धंधे गन भोगनि बिसैं । बहुर चल्यो चढि क्या सुधि तिसैं ॥ ४ ॥
पूरब भी कबि गुरू प्रसंग । कोई न करति शाहु के संग ।
सिमरि द्वेष को दुषट चलावै । सलही सुलबी चंदू बतावै ॥ ५ ॥
लेना देना किह संग कोइ न । धन हंकारी जानहि सोइ न[3] ।
अहैं तुरक पुन ग्रसे बिकारा । कहां चिनारी गुरू उदारा ॥ ६ ॥
नहिं प्रसंग चलि मिले पिछारी । बरजि दिये[4] चंदू दुरचारी ।
गमनति मिल्यो सकल को जाइ । जे हजूर गुर गाथ चलाइ ॥ ७ ॥
बुधि बल ते बरजहु तिह रोकि । क्या तिन गाथ फकीर जि लोक ।
कहौं पिछारी तुम भरवासे । केतिक दिन मैं आइव पासे ॥ ८ ॥
करी कचहिरी अपनी सारी । किस धन दे किस म्रिदुल उचारी ।
जस जस हुते तथा हरखाए । शाहु समीप समूह सुहाए ॥ ९ ॥
चंदू हट्‌यो धीर उर धरि कै । दुषट पने महि चित को धरि कै ।
सभिनि चढाइ मूढ तहिं आयो । सतिगुर अरजन जहिं उतरायो ॥ १० ॥

---

1. पापी । 2. वर्ष । 3. (गुरु जी का) किसी से कोई लेना-देना न था, (इसलिए) धन का अधिकारी (कोषाध्यक्ष) आदि उन्हें नहीं जानते थे । 4. उन्हें मना कर दिया कि शाह के पास पीछे का प्रसंग कोई न चलाए ।

बैठ्यो सनमुख रिसि ते भर्यो। कहति भयो बच दुख ते जर्यो।
मोरि सुता की मोरि सगाई। क्यों हूं न मानी बिनै अलाई ॥ ११ ॥
भेजे दोइ बार पुरि लागी। अति चिंता चित हमरे लागी।
लेनि साक तो रह्यो किथाई। दई मोहि कूकर समताई ॥ १२ ॥
अबि लौ कछू न बिगर्यो सुपने। नाता लेहु जाहु घर अपने।
नतु कूकर भाख्यो जिमि जबै। लगों गैलि कूकर हुइ अबै[1] ॥ १३ ॥
दिहु जबाब मैं करौं उपाइ। मौज ब्याह की, कै तुम धाइ[2] ॥
त्रिभै बाक तबि सतिगुर भाखा। सुता देनि की किम अभिलाखा ॥ १४ ॥
तूं ऊची कुल अहैं चुबारा। हम को मोरी सरस उचारा।
मोरी मेल सु मोरी धारा। मिलहि चुबारे संग चुबारा ॥ १५ ॥
तबि भी कह्यो अबहि भी कहैं। सम सो मिलन भलो सभि लहैं[3]।
अंतर बहुत हमार तुमारा। कित मोरी कित होति चुबारा ॥ १६ ॥
कह्यो न कूकर, जे तैं लह्यो। जे न कह्यो तौ भी अबि कह्यो।
सिख ने कह्यो हमहु कहि तदा। सिख हम एक रूप हैं सदा ॥ १७ ॥
सुनि मन जर्यो[4], जर्यो नहिं[5] बैन। क्रूर पसारे लाल जि नैन[6]।
निकटि बुलाए अपनि सिपाही। जल भोजन पहुंचनि दिहु नांही ॥ १८ ॥
जबि लागहि गी त्रिखा महानी। दे गिन लाख देहु तबि पानी।
व्याकुल होइ छुधिति बहु जबै। लेहु लाख दिहु भोजन तबै ॥ १९ ॥
निंद्रा ते जबि सुपतनि चहै। देहि लाख तौ सोवनि लहै।
इसके मन महिं अति हंकार। निमहि नहीं अबि करौं संघार ॥ २० ॥
एक बाति को निशचै मानि। कै लिहु नाता कै दिहु प्रान।
सुनि सतिगुरु तबि बाक अलावैं। अबि ते सुपति न पीय न खावैं ॥ २१ ॥
बैठे रहै एक ही थान। करिहु जथा करिबे मन जानि।
अपर कठोर सु दुषट बखाना। करे सिपाही गन सवधाना ॥ २२ ॥
खरे रहो राखो तकराई[7]। नांहिं न खाय पीय सुपताई।
पांचो सिक्खनि पौर मझारु। कैद करहु रसरिनि को डारि[8] ॥ २३ ॥
इसके पास न आवनि दीजो। बाति वखानहिं कोइ न बीजो[9]।
रखहु इकाकी इहां बिठाइ। खरो रहै इक नर इस थाइं ॥ २४ ॥

---

1. अब कुत्ते ही की तरह पीछा करूँगा। 2. तुम्हें मार देने का। 3. बराबर का मेल सब अच्छा समझते हैं। 4. जल गया। 5. सहन नहीं हुआ। 6. क्रोध से लाल आँखें उघाड़ीं। 7. कठोरता। 8. रस्सियाँ डालकर। 9 दूसरा।

उठने देहु न पौढ़नि देह[1]। बोलनि देहु न, देखहु एहु।
इम कहि सदन वर्यो निज जाइ। महां दुषट वड खोट उपाइ॥ २५॥
सो दिन वीति गयो निस वीते। खान पान बिन सतिगुर रीते।
सिक्खनि महिं रौरा परि गइऊ। गुर कित गए न सुधि को पइऊ॥ २६॥
इत उत नगर विखै फिरि हेरैं। पिखै धरमसालादि घनेरैं।
सिक्खनि के घर सिक्ख फिरंते। कित सतिगुरु उतरे गुनवंते॥ २७॥

गए शाहु ढिग वहुरि न आए। किधौं सुधासर को गमनाए।
फिरति फिरति सरकारी लोक। वूझनि कीने सो अविलोक॥ २८॥
तिन ते सुधि गन सिक्खनि पाए। चंदू के नर संग सिधाए।
तिसके सदन प्रवेशति हेरे। तिमर भए पहुंचे तिसि वेरे॥ २९॥
प्रेमी सिक्ख तहां को गए। दिए किवार विलोकति भए।
अंतर सिक्ख पठति इक वानी। गुरु इहठां हैं तवि सुधि जानी॥ ३०॥

झिरकनि करहिं सिपाही तौन। क्या तूं वकहिं वैठि घरि मौन।
वहिर खेरा पिखि दीए हटाई। खरे न होहु जाहु निज थाई॥ ३१॥
डरैं दुषट ते टरि करि गए। सुध आपसि महिं करते भए।
वहुत विसूरत चलहि न चारा। भै ते करहिं न ऊच उचारा॥ ३२॥
पुन चंदू गमन्यो गुर तीर। निठुर सुनाइ कर्यो चहि भीरु[2]।
अवि वी मानि सुता को नाता। नांहि त प्रान होहिंगे घाता॥ ३३॥
जीवति नहिं त्यागो अवि तोही। बहु दिन की चिंता लगि मोही।
दियो कषट पति सभि मैं खोई[3]। अवि लौ त्रास भयो नहिं कोई॥ ३४॥
आनहु[4] अगनि तपावहु नीर। वीच बिठावहु तपहि सरीर।
मैं जिम तपत्यो दिन अरु राती। महां कषट ते सुलगति छाती॥ ३५॥
तिम तपतावो बिलम न लावहु। नांहि त ले नाता मनवावहु।
सुनी दुषट की आइसु जवै। जल भरि देग चढाइसि तवै॥ ३६॥
समधा वारि वारि तपतायो[5]। वारि वारि 'लिहु मानि' सुनायो।
सुनि सतिगुरु कुछ रिदै न आनी। चितैं स्राप कान्हा ब्रह्म ग्यानी॥ ३७॥
कह्यो वाक हम को डरपावै। जिम पूरव तिमही वनि आवै[6]।
नहिं तुव दुहिता लें कवि नाता। जित जे चहति प्रान करि घाता॥ ३८॥

---

1. लेटने नहीं देना। 2. भीरू बनाने के लिए। 3. मैंने सब इज़्ज़त खो दी। 4. लाकर। 5. लकड़ी जला-जला कर पानी गर्म किया। 6. जो पूर्व-लिखा है, वैसा ही होगा।

जिती अवग्या करैं दुखावैं। तितो अंत दुख लहिं पछुतावैं।
क्रोध वसी हुइ जिम अघ करता। परहिं नरक जम फासी धरता ॥ ३९ ॥
कहि चंदू अबि ग्यान सुनावति। कूकर कह्यो न तबि डरपावति।
तिसको फल अबि लेहु महाना। देउ सजाइ प्रान करि हाना ॥ ४० ॥
गुरू भन्यो जे नहिं तबि कह्यो। तऊ कह्यो जैसे करि चह्यो।
कहि चाकर सो देग उबारी! पकरो देहु तिसी महिं डारी ॥ ४१ ॥
तबि सतिगुरु उठि आपे गए। तपति नीर महिं बैठति भए।
हाहाकरि हेरि सिख करैं। उठ्यो पिराणा शकति न जरै[1] ॥ ४२ ॥
गुरु दिशि चल्यो कि लेउं उबारी। हतौं दुषट चंदू दुरचारी।
तबहि सिपाही गहि करि सोटा[2]। दुइ त्रै हते जाति को होटा[3] ॥ ४३ ॥
सतिगुरु कह्यो न आवो तीर। परहि दुषट जर खारे नीर[4]।
हम तौ तजहिं आपने प्रान। लेहु सामना तुम क्यों आनि ॥ ४४ ॥
खर्यो दूर कर जोरि पिराणा[5]। शकति दिखावनि हेतु वखाणा[6]।
प्रभु जी! रह्यो जाइ नहिं मो ते! रावर को एतिक दुख होते ॥ ४५ ॥
दिल्ली लवपुरि नगर बिसाले। अबि लेवौं निज हाथ उठाले।
दुहनि भिरावों जिउं करतारी[7]। देउं नासकरि, लगहि न बारी ॥ ४६ ॥
क्यों इतने दुख सहहु गुसाईं। दिहु शारत मुख कहहु न काई[8]।
सुनि सतिगुरु कहि किह ते पाई। जे चाहति अबि शकति दिखाई ॥ ४७ ॥
सुनहु गुरू करि सेव तुमारी। भयो क्रिपा ते प्राक्रम भारी।
चंदू दुषट मूढ क्या अहै। नासौं तुरक नाम नहिं रहै ॥ ४८ ॥
जिनके राज महां अंन्याइ। तुम सम को अस होति सजाइ[9]।
गुरु कह्यो जिनकी करि सेवा। लई शकति धारति अहंमेवा ॥ ४९ ॥
तिन महुं शकति अहै कै नांही। किम जानति अपने मन मांही।
जे जानति तूषनि करि रहो। बैठे पिखहु नहीं कुछ कहो ॥ ५० ॥
नांहि त छूछो ही रहि जै हैं। खोइ शकति को पुन पछुतै हैं।
हमने इम ही कारन करना। तूं नहिं लखैं एव आचरना ॥ ५१ ॥
परम बिसूरति तूषनि होवा[10]। नीच ग्रीव करि ऊच न जोवा।
सतिगुरु बैठे देग मझारी। तरे दुषट बहु समधा[11] जारी ॥ ५२ ॥

---

1. सहन नहीं कर सका। 2. दण्ड। 3 रोका। 4. दुष्ट की जड़ खारे जल में पड़ रही है, अर्थात् गल रही है। 5. कहा। 6 दोनों को टकरा दूं, ज्यों हाथ की ताली हो। 7 इशारे से कह दें, मुख से भले ही न कहें। 8 तुम्हारे समान को भी ऐसी सज़ा। 9. परम कातर हो वह चुप हो गया। 10. देखा। 11. ईंधन, लकड़ी।

अगनि धारि उर डर समुदाऊ। कर्यो विपरजै अपनी सुभाऊ[1]।
तज छोरि करि सीतल होवा। गुरु तन ताप तनक नहिं जोवा ॥ ५३ ॥

दोहरा

कितिक काल बैठे रहे पुन खल कहि निकसाइ।
गयो सदन निज मूढ मति महिमा लखी न काइ ॥ ५४ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'चंदू गुरु प्रसंग' बरननं चतुर त्रिंशती अंशु ॥ ३४ ॥

---

1. अपनी प्रकृति को उलट दिया।

अंशु ३५

चंदू अरु गुरु प्रसंग

दोहरा

ग्रिह चंदू के सुधि भई सतिगुरु को दुख देति ।
किसे सिक्ख की सुता थी पापी नुखा[1] निकेति[2] ॥ १ ॥

चौपई

सुनि प्रसंग दलक्यो[3] तिस रिदा । मम नैहरि मानहि जिह सदा ।
अनिक कामना जाचति पाई । गुरु गुरु सिमरति नित सुखदाई ॥ २ ॥
ससुर पातकी तिह दुख देति । को अघ ते मैं इनहु निकेत ।
कितिक दिवस ते पियो न पानी । खाइ न भोजन निंद्रा हानी ॥ ३ ॥
धिक जीवन इस घर महिं मेरो । गुरु को दुख सुनि थिर ह्वै हेरो ।
रह्यो न गयो मिठाई घोरी[4] । कुछ भोजन लै गमनी चोरी ॥ ४ ॥
पहुंची जिह ठां खरे सिपाही । सुकचति डरतिं जाति नहिं पाही ।
इक हकार करि अपने पास । दीनसि ज़ेवर तिनहि निकासि ॥ ५ ॥
राखो गुपत सुनावहु नांही । मैं इक वेरि जाउं गुर पाही ।
धरे लोभि तूषनि हुइ रहे । जाइ तुरत आवहु वच कहे ॥ ६ ॥
चंदू पातकी लखहि न जिस ते । हमहु निकासहि नहिं मन रिस ते ।
गई गुरू ढिग देखति रोई । नमो ठानि कहि बिनै भिगोई ॥ ७ ॥
श्री सतिगुरू जी पीजहि पानी । लिहु अहार को कीजहि खानी ।
पापी के सुत सों मैं ब्याही । हुती जोगता ऐसे नांही ॥ ८ ॥
कर्यो पाप को आगे आयव । जिस करि इनके सदन बसायव[5] ।
तुमरे सिख सुता पछानहु । निज दासनि लगि करुना ठानहु ॥ ९ ॥
पिखि सतिगुरु श्री मुख ते भाखा । साधु तोहि अस भाउ जि राखा ।
जे करि चहिं अपनी कल्याना । संग हमारे त्यागहु प्राना ॥ १० ॥

---

1. पापी की पुत्र-वधु । 2. घर में । 3. आंतकित हुआ । 4. शक्कर घोल कर ।
5. कोई पुराना पाप आगे आ गया, जो (मैं) इनके घर में बस रही हूं ।

जरां उखेरहिं चंदू केरी[1]। मरहि जबै दोजक महिं गेरी।
इहां हमारो पलटा लै कै। हतहिं कुमौत महां दुख दै कै ॥ ११ ॥
सकल सदन इस होइ खराब। थिरहि न किम[2], इम बनहि शिताब।
अखल कुटंब अलंब बिहीने। रोदति मरहिं महां दुख लीने ॥ १२ ॥
राखहु गोप बतावहु न। संकट इनहु संग सहि नाहिन[3]।
खान पान इसके घर केरा। हम नहिं करहिं, जाहु ले फेरा ॥ १३ ॥
सुनि सतिगुरु ते सगरी बात। आछो लख्यो प्रान को घात।
कहति आपने संग मिलावहु। करहु क्रिपा ले संग सिधावहु ॥ १४ ॥
अंगीकार न गुरु कुछ कीनो। हटि गमनी मरिबो निज चीनो।
अधिक दुखी हुइ परी बिचारी। बसि न बसावहि हुइ लचारी ॥ १५ ॥
बीति जामनी सो तबि गई। बैठे गुरु प्रभाति तबि भई।
चंदू दुषट बिचारति मन मैं। अगनि तापते पीर न तन मैं ॥ १६ ॥
त्रास पाइ नहिं मानी बात। नहिं जानत मेरो हुइ घाति।
तपत बारि की लगी न कोऊ। बारू तपति लगाइब सोऊ ॥ १७ ॥
इमि चितवति ही खाइ अहारा। आइ पातकी बड हत्यारा।
पौर बिखै सिक्खनि को हेरा। ठांढो होइ कह्यो तिस बेरा ॥ १८ ॥
इह सिख रंक कहति क्या काली। करहु ताड़नां इनहि बिशाली।
डरपावति मुहि अचरज देबा[4]। छुटिबे कारन करति फरेबा ॥ १९ ॥
मुशकल मुझ ते होनि खलासी[5]। मानहि जे नहिं तौ दे फासी।
इन जैसनि ते सुनि गरबायो। नहीं मोहि कहु मन महिं ल्यायो ॥ २० ॥
इम कहि सोटे कुछ मरवाए। रहे मोनि गुर ते डरपाए।
नहीं शकति किन कीनि दिखावनि। बैठि रहे भरि मन मुरझावनि ॥ २१ ॥
पुन गमन्यो सतिगुर के पास। कहै कुवाक उपावहि त्रास।
कूकर कहिबे को फल जोई। लह्यो कि नहीं बतावहु सोई ॥ २२ ॥
अबिलौ कहां सासना[6] बनी। देखहु आज होहि जिम घनी।
होति नहीं मैं मिथ्या बादी। द्यों अति ग़मी कि द्यों अबि शादी[7] ॥ २३ ॥
जिस धन को ढानति हंकार। सो सभि जपति[8] करौ घर बारि।
प्रथम करों तेरों तन घाति। पुन गहिवाइ लेहु तुव तात ॥ २४ ॥

---

1. चंदू की जड़ें उखाड़ दोगी। 2. किसी भी प्रकार टिक नहीं पाएगा 3. सहन न करो। 4. मुझे आश्चर्य-चकित कर डराता है। 5. मुझ से छुटकारा पाना कठिन है। 6. ताड़ना। 7. पीड़ा पहुँचाऊँ या सुख दूँ। 8. जबत।

नाता मानहि करौं खलासी। नांहित हतौं घालि गर फासी।
तवि प्रापति हुइ मन चित शांती। बिधवा लखौं सुता पशचाती॥ २५॥
इम कहि भाठ विखै ते बारू[1]। मंगवाइस तिह करहि निहारु।
तपत करनि की आइसु दई। वहु समधा ऊपर तिस पई॥ २६॥
दे दे आंचि तपत करिवायो। अगनि समान तेज प्रविशायो[2]।
इक जेसठ की रुति अति घाम। महां तपति ते तपहि तमाम॥ २७॥
लोवां[3] चलहिं सही नहिं जाहिं। पुन पावक को भा बहु दाहि।
जिस दिन ते प्रविशे गुन खानी। अच्यो न भोजन पियो न पानी॥ २८॥
सिकता तपति बिलोकति बोला। मनो नरक दर ढांपनि खोला।
ल्यावहु वहिर दिखाई बिठावहु। नहिं जे करै त्रास उपजावहु॥ २९॥
तबि सतिगुरु उठ बाहिर आए। घरनी घरनी धीर सिखाए[4]।
हरख शोक को लेष न रिदे। तन हंता उतपति नहिं कदे॥ ३०॥
जस आवसथा हुइ ब्रह्मग्यानी। जग महिं जनु जनाइ बिदमानी।
भूख न प्यास न मुख मुरझाइआ। मन की ब्रिति इक रस सुख पाइआ॥ ३१॥
कहसि कठोर चंदु कुलघाती। इन कीनसि छाती मुझ ताती।
तिम अबि तपतावहु उतपाती। इसते परे न अपर अराती[5]॥ ३२॥
धरी मौन अबि आइ न बानी। बैठति बोलति बनि ब्रह्म ग्यानी।
कूकर कह्यो कलंकति कीयो। अबि तापहु जिम तपि मम हीयो॥ ३३॥
सिकता तपत अरूढनि लागे। बोले सुनीयहि मूढ कुभागे।
अपनो भाखयो नहीं बिचारति। कूकर ह्वै किराड झख मारति॥ ३४॥
सकल बंस की जरां उखारहिं। अपने पर अपदा बहु डारहिं।
दोजक दीरघ दुखद सहेरैं। मरि कुमौति तूरन फल हेरैं॥ ३५॥
हम तो त्यागनि अहै सरीर। समा आनि पहुंच्यो अति तीर[6]।
इम बोलति आरूढनि करे। रेत हुतासन सम[7] परि खरे॥ ३६॥
सिख लंगाहु पिराणा दौन। इक बारी दौर मन भौन।
तपत रेत पर हम तन परे। सुख सों हुइ गुरु ऊपर खरे॥ ३७॥
इन कारन निकसहिं जे प्रांन। तौ हम होवहिं धंन महान।
नहिं इनको दुख देखनि करैं। आछी बात देहि परहरैं॥ ३८॥

---

1. भट्ठी में से रेत। 2. उसमें अग्नि समान लालिमा आ गई। 3. लू। 4. (जिन्होंने) धरती को धैर्य धारण करना सिखाया है। 5. वैरी। 6. बहुत निकट। 7. अग्नि समान (गर्म) रेत।

हेरति चंदू सिपाही प्रेरे। लए लशटका[1] धाइ घनेरे।
हाथनि पर पैरनि पर मारि। गहि करि मोरे बहु बल धारि॥ ३९॥
श्री गुरु करहिं बरजना घने। क्यों तुम आवति हो रिस मने[2]।
बैठे रहो खाति क्यों मारि। इह सभि ह्वै हमरे अनुसारि॥ ४०॥
कहै पिराणा रह्यो न जाइ। तुमरो दुख नहिं देख सकाइ।
अपुने प्रान देनि अभिलाखै। रावर के सरीर को राखै॥ ४१॥
कह्यो गुरु इम कीजहि तबै। हमरी आइसु होवहि जबै।
अबि हमरा इह खेल पसारा। बैठे पिखहु होइ जिम सारा॥ ४२॥
पुनह दुषट ने कहि बिठवाए। थिर सतिगुरु कुछ खेद न पाए।
चौदह लोक रचे जिन केरे। तेज हुतासन हुइ किम नेरे॥ ४३॥
तपति रेत पर निशचल बैसे। सुख ते म्रिदु आसन पर जैसे।
इत उत अंग नहीं डुलयंते। भए मौन कुछ नहीं कहंते॥ ४४॥
कह्यो दुषट पुन करछे लै कै[3]। तपति रेत दिहु ऊपर पै कै।
नहिं बोलति नहिं मानति नाता। इस के गात लगहि नहि ताता॥ ४५॥
भरि करछे तबि ऊपर पाए। नहिं कुछ कह्यो न अंग डुलाए।
दुहु दिशि ते तातो अति बारू। परि सरीर पर बहु दुख कारू॥ ४६॥
निज इच्छा करि गात समूहे[4]। सतिगुर कै तबि परे फलूहे[5]।
अज़मत नहिं जानै दुरचारी। बिन पीरा गन करे दिखारी॥ ४७॥
दोइ जाम लगि बाधा दीनसि। नहीं त्रास मन दुषटनि कीनसि।
बैठे रहै अबोल अडोल। सतिगुर महिमा महां अतोल॥ ४८॥
अजर जरनि की औधि[6] जनाई। इते कषट ते नहीं दिखाई।
इंद्र आदि जेतिक सुर सारे। चक्रित चित गुरि चलित निहारे॥ ४९॥
धंन्य धंन्य सभ करहिं बखाना। इनते बिना न ऐसो आना।
करि बंदन सुर सदन सिधारे। आपस बिखै ब्रितंत उचारे॥ ५०॥
गयो दुषट पुन गुरु निकसाए। पूरब थल तहिं आनि बिठाए।
सभि तन परि जरिबे ब्रिण भए[7]। काना स्राप साच चहि कए॥ ५१॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'चंदू अरु गुरु प्रसंग' बरननं नाम पंच त्रिसती अंशु॥ ३५॥

---

1. बेंत। 2. क्रुद्ध मन से। 3. कड़छा लेकर। 4. समूचे शरीर पर। 5. फफोले। 6. सीमा। 7. सारे शरीर में जलन के कारण फफोले हो गए।

अंशु ३६

चंदू ग्रहि गुरु प्रसंग

दोहरा

भई जामनी आनि करि छायो तिमर महान ।
खरभर[1] पर्यो बिसाल तबि जे जग अज़मत वान[2] ॥ १ ॥

चौपई

चलि आयो तबि गोरखनाथ । सिद्ध चुरासी ले करि साथ ।
मुरछित कीनि सिपाही सारे । देखि 'अदेस अदेस' उचारे ॥ २ ॥
सनमुख खरो होइ करि बोला । द्रिढि निशचा उर अधिक अडेला ।
अजर जरनि तुम सम नहिं आन । हेरति सगरे भए हिरान ॥ ३ ॥
एतिक ताप सहे नहिं डोले । नसहि जगत जिन इक बच बोले ।
तुम निज नेम निबाहनि करो । दुषट बिनाशनि इच्छ न धरो ॥ ४ ॥
मैं अबि पापी को घर जेतो । अवनी खंड उलट दिउ तेतो[3] ।
महां अवग्या को फल पावै । पुन जग महिं नहिं संत दुखावै ॥ ५ ॥
नांहि त दुषट हंकारी होइ । देहि कषट संतनि सभि कोइ ।
श्री सतिगुर सुनि करि कहिं बैन । मन संतनि के त्रासे रहै न ॥ ६ ॥
हमने करनो है अस खेले । आइ अपर को बिघन न मेले ।
होनिहार पर निशचा करनो । इह संतन को मत बर बरनो ॥ ७ ॥
इही बात अबि दे करि जानो । तनु हंता धरि नहीं डुलावों ।
सुनि करि 'धंन्य धंन्य' कहि गए । गुरु रुख देखि न सिध प्रगटए ॥ ८ ॥
छिन महिं कुछ ते कुछ करि देवैं । हेरति जिन को नर गन सेवैं ।
अवसर पाइ पीर पुन आए । करामात कामल समुदाए ॥ ९ ॥
नमो करी हुइ खरे अगारी । क्यों तुम सहो कषट तनु भारी ।
हतहिं दुषट को बिलम न लावैं । आग्या तनक आपकी पावैं ॥ १० ॥
सभि को सादर बाक उचारे । क्यों तुम नाना द्रिषटि निहारे[4] ।
एक आतमा पूरन साचो । जगत अकार जानि सभि काचो ॥ ११ ॥

---

1. घबराहट । 2. जो संसार में करामात वाले थे । 3. पापी के घर का धरती-खण्ड ही तोड़ कर उलट दूंगा । 4. क्यों तुम विविध दृष्टियों से देखते हो, (एक देखो) ।

हमरे तन त्यागनि महिं ऐसे। कारन अनिक जानीअहि तैसे।
समां सु पहुंच्यो लखि चित राचे। कर्यो चहै हम सभि को साचै ॥ १२ ॥
आप आपने थान सिधावो। हमरी खेल वीच नहिं आवों।
सुनति धंन्य कहि करि सभि गए। सवाधान चाकर सभि भए ॥ १३ ॥
कहैं परसपर सुपते सारे। चले जाति लखि चंदू मारे[1]।
गहि असि ढाल भए सवधानू। इक आसन गुरु थिरे सथानू ॥ १४ ॥
सकल जामनी गई बिहाइ। दिवस चढे उठि पापी आइ।
रिदे बिचारहि बड हठवंता। इते कषट ते नहीं वुलंता ॥ १५ ॥
भै करि नाता नांहिन मानहि। विना त्रास ते वाक बखानहि।
बारि बारि बारी बहु बारू। अति तपताए थिर्यो मझारू[2] ॥ १६ ॥
प्रान जानि लगि हठ पहुंचावै। नहिं त्यागौ मैं जियति जि जावें।
आज तपत करि लोह बिसाला। खरे करौ बोलहि तिसकाला ॥ १७ ॥
इम पापी ने रिदे बिचारा। नाता देउं कि करौ संघारा।
कहि करि दीरघ लोह मंगाई। धरि ऊपरि तर अगनि जलाई ॥ १८ ॥
सम तांवे के तपति कराई। देखि पातकी लिए बुलाई।
इस पर खरे होहु तप सहो। नांहि त नाता लैवे चहो ॥ १९ ॥
गुरू न उत्तर दीनिसि कोई। लोह अरूढनि उर महिं होई[3]।
आदि चंडाल जि किनहुं निहारे। सभिहिनि हाहाकार उचारे ॥ २० ॥
इह चंडालनि ते अति पापी। रिदे न करुना कैसिहुं ब्यापी।
चढै लोह पर भे थिर ठांढ़े। देखि देखि सिक्खनि दुख बाढ़े ॥ २१ ॥
चहैं जानि ढिग, जानि न देते। रसरिनि बांधे दिढ करि लेते।
अगनि बिपरजै सील कर्यो है। डरति गुरू ते तेज हर्यो है ॥ २२ ॥
व्रऊ गुरु पग तरवा जारे[4]। पापी बैठ्यो समुख निहारे।
पुन कहिकरि तर अगनि जराई। पूरब के समसर तपताई ॥ २३ ॥
चित बांछित हुइ दुख ते दीन। मानहि नाता डर चित चीनि।
तिसि दिन सतिगुरु कछू न बोले। तपत लोह पर थिरे अडोले ॥ २४ ॥
जरति चरम अपनो दिखरावें। अगनि ताप ते पीर न पावें।
अजमत नहिं जानहिं किम एही। परे फलूहे सगरी देही ॥ २५ ॥
हेरि नहीं परतीत उपावें। जाते अपने दुख दिखरावें।
रहे जाम लगि ठांढे ऊपर। पुन उतराए थिर गुरु भूपर ॥ २६ ॥

---

1. (गुरु को) चला गया देखकर चंदू (हमें) मारता। 2. उसमें भी स्थिर रहा। 3. भाव, मन में तैयार हुए। 4. पैरों के तलवे जल गए।

पच्यो रिदे बहु चितहि उपाया। बोल्यो नहीं त्रास नहिं पाया।
कौन जतन करि इसे मनावौं। को संकट ऐसो दिखरावौं ॥ २७ ॥
जिसते अधिक त्रास को पाइ। बोलहि ततछिन मौन हटाइ।
इह वड धरमी धरम संभारै। प्रान जाति लौ नहीं निवारै ॥ २८ ॥
यांते धरम हरन को त्रासा। दिखरावौं पुन पुरवों आसा।
इम निशचे करि मूरख मानी। कही सिपाहनि के संग बानी ॥ २९ ॥
इक चलि जाहु चंडालनि पास। आज भई को गऊ विनास।
तिस को चरम उतारति ल्यावो। सभि सरीर इसको मढ़वावो ॥ ३० ॥
सतिगुरु श्रोन सुनाइ बखाना। भोर होति ल्यावो इस थाना।
बैठि निकट दुखदेउं महानो। धरम बिगार प्रान पुन हानौं ॥ ३१ ॥
इम कहि मूरख सदन सिधारा। क्रोधी कपटी बड हतिआरा।
सो दिन गयो बीत निस आई। छायो सभि जग तम समुदाई ॥ ३२ ॥
अरधि राति जानी जबि होइ। नुखा अघी की सुनि सुनि सोइ।
संकट महां पाइ करि रोई। खान पान गुरि करहिं न कोई ॥ ३३ ॥
जाइ आज सुध लेवौ गुर की। करहिं कहां सुनिहौं सभि उर की।
सभि ते चोरी चलि करि आई। खरे सिपाही झिरक हटाई ॥ ३४ ॥
तबि कंचन के भूखन दीनि। अंतर बरी दरस गुर कीनि।
हाथ जोरि तबि खरी बिचारी। मैं अपराधनि प्रभु तुमारी ॥ ३५ ॥
कषट इते सुनि जीवति रही। दुषट कुटंब तज्यो मैं नहीं।
चलहि नहीं कुछ मेरो चारा। निज मरनो इक हाथ मझारा[1] ॥ ३६ ॥
सुनि सतिगुर बोले सुखदायक। नहीं सुता! तूं इस घर लायक।
भई प्रभाति करहिं तबि त्यारी। चलिबो चहिं, चलि संग हमारी ॥ ३७ ॥
बोली सेव जथा मैं लायक। कहि दीजै सो करौं सुभायक।
क्रिपा करी अबि मोहि बतावा। त्यागों प्रान जु जीवनि भावा ॥ ३८ ॥
गुर कहि हमरे चाह न कोई। जाहु अबै करि चित रुचि जोई।
सुनि गमनीम्रितु निशचै करिकै। क्या फल पैहौ प्राननि धरिकै ॥ ३९ ॥
बिती बिभावरि भई प्रभाती। बैठे रहे गुरु तिस भांती।
सगरे नगर पर्‌यो बड रौरा। घर घर दर दर ठौरहिं ठौरा ॥ ४० ॥
बारि बारि तिस पौर अगारी। फिरि फिरि जाति निहार निहारी।
निस दिन रहैं कि बार असंजति[2]। बांछति चित किम होइं स भंजति ॥ ४१ ॥

1. स्वयं मर जाना ही मेरे हाथ है। 2. बंद।

क्या इह करहि लखी नहिं जाई। वहिर गुरू निकसे न कदाई।
पंचहुं सिख नहीं पुन हेरे। भए कहां बच सुने न फेरे।। ४२ ।।
दुरिदुरि[1] मिलहिं करहिं गुरबाति। करहिं पातकी क्या उतपाति।
जबि को अंतरि ले परवेशा। किम कलेष दे, सुन्यो न लेशा।। ४३ ।।
बस नहिं चलहि, जतन कुछ होइ न। शाहु समीपी जुति ढिग कोइ न[2]।
ध्रमसाला[3] मिलि मिलि पछुतावैं। नहिं दिन महिं बिवहार चलावैं।। ४४ ।।
खान पान रुचि ते नहिं करें। सतिगुरु पापी को बसि परे।
चिरंकाल को द्वैष करंता। निकट मुगल चुगली उगलंता।। ४५ ।।
सतिगुर नाता लेहिं न कबै। इह मनवावति लखीयति अबै।
हठ को त्यागहिं लेहिं सगाई। इही बात आछे बनिआई।। ४६ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'चंदू ग्रहि गुरु प्रसंग' बरननं नाम खषट त्रिसती अंशु ।। ३६ ।।

---

1. छिप-छिप कर। 2. निकट में शाह या शाह का समीपी कोई भी नहीं। 3. गुरद्वारा।

अंशु ३७

श्री गुरू अरजन साहिब जी परलोक गमन प्रसंग

दोहरा

उठ्यो प्रात चंदू दुषट चितवति चित गुर बाति।
आज मनावौ जिम चहौं नांहि त करिहौं घाति ॥ १ ॥

चौपई

अति प्रिय धरम रिदे जिस केरे। तिस खोवनि हित त्रास घनेरे।
करौं आज बिधि सुता सगाई। कै गो चरम देउं मढवाई[1] ॥ २ ॥
इम चितवति पहुंच्यो तहिं आई। बैठ्यो दुषट क्रोध उपजाई।
निकट गुरू के बाक बखाना। अबि लौ नाता लिहु मन माना ॥ ३ ॥
सकल मुलख मालिक अबि शाहू। तिस दिवान मैं बैठति पाहू।
जहिं लगि राज तुरक पति केरा। तहिं लगि हुकम चलति है मेरा ॥ ४ ॥
त्रास न तनक सु मनमहिं जाना। कर्यो अनादर रंक समाना।
सो फल अबि लेवहु दुख घने। बिना धरम करि अबि दिउं हने ॥ ५ ॥
धेनु चरम को लेकरि गीला। लपटावहि जेतिक तुव डीला[2]।
पुन आतम महिं दोउं बिठाइ। सुमकहि प्रान तोहि बिन साइ[3] ॥ ६ ॥
पुनह पठौं मैं अपन सिपाही। घर को लूट लेहिं धन पाही।
गहि लैहैं तबि नंदन तेरा। इसी रीति दे कषट बडेरा ॥ ७ ॥
करौं घात नहिं जीवति छोरैं। बिना बंस करिहौ दुख घोरैं।
नांहित नाता मानो आजि। बचैं प्रान सभि सुधरहिं काज ॥ ८ ॥
सुलही सुलबी प्रिथीआ मर्यो। करे जतन तूं हाथ न पर्यो।
चहति गए मरि, पुजी न आसा। मैं अबि करिहौं तोर बिनाशा ॥ ९ ॥
किस बल के भरोस उर भूला। मम सम बली केर प्रतिकूला।
कहिबो अहै सु कहु अबि समों। जबि लगि मै बूझति करि छिमो ॥ १० ॥
स्री अरजन सुनि करि सभि श्रोत। बोले बाक जिनहु कित भौन।
अबि हम रावी चहैं शनान। सेवक पंच संग दिहु जानि ॥ ११ ॥

---

1. या गो-चर्म में मढ़वा दूंगा। 2. शरीर। 3. श्वास के बिना।

पंचदिवस बीते इस भांति। दई सजाइ अगनि सम ताती।
पावन तने पुनह जिम करैं। निशचल मति करि निशचे धरैं॥ १२॥
सुनि करि दुषट रिदे हरखायो। धरम बिनाशनि ते डरपायो।
अवि इह मान लेइ है नाता। सीतल गात होइ जल नाता॥ १३॥
इम विचार कहि जाइ शनानहु। बचहिं प्रान कहिबो मन मानहु।
दसक सिपाही करि सवधानो। खड़ग सिपर गहि संगि पिआनो॥ १४॥
अपनी द्रिषटि तरे इस राखहु। वहिर किसू ढिग कछू न भाखहु।
इत उत दूरि न जाने देहु। रावी तीर सथिरता लेहु॥ १५॥
अपर गरी ते कहि हटकावहु[1]। मज्जति बैठति कुछ न अलावहु।
इत दिशि ल्यावहु रहहु पिछारी। सिक्खनि जुति इस रखहु अगारी॥ १६॥
इम कहि कीनि घनी तकराई। सुनि खल ते चलि परे गुसाईं।
परे फलूहे सरब सरीर। छादि चादरे दीरघ चीर॥ १७॥
तरुवा चरण जरे ब्रिण होए। सनै सनै घर परि धरि जोए[2]।
निकट पिराणा सेवक हेरा। गह्यो सिकंध चले तिस बेरा॥ १८॥
सलिता दिसि छोटी इक मोरी। गमनति निकसे गुरु तिस ओरी।
को को नर पिखि ठानति नमो। लाल वरण मुख को तिह समो॥ १९॥
भोजन कीयो न पीयो पानी। दुरबल तन सजाइ खल ठानी।
हेरि हेरि नर उर बिसमावैं। क्या इन दशा भई गुरु जावैं॥ २०॥
चितकी ब्रिति एक रस तैसे। निजानंद महिं पूरब जैसे।
तन पीरा ते डिगी न सोई। मेरु हिलाइ न जिम नर कोई॥ २१॥
सनै सनै रावी के तीर। पहुंचे छुयो नीर बड सीर[3]।
कर पंकज ते मुख अरविंद। कर्यो पखारनि धीर मुकंद॥ २२॥
ब्रिंद चुरे करि मुख सितलायो[4]। महां उषनता जो तपतायो।
गहि पद पदम लंगाह पखारे[5]। प्रविशे जल महिं मज्जन धारे॥ २३॥
वहिर निकसि पट शुषक लियो है। देह अछादनि पुनह कियो है।
जपुजी पाठ करति उर प्रेमा। जो सिक्खनि की ठानति छेमा॥ २४॥
पुन पंचहु सिख कीनि शनाने। गुरु बानी को पाठ बखाने।
खरे भए सतिगुरु परवार[6]। जपुजी पाठ सुन्यो निरधार॥ २५॥

---

1. अन्य किसी गली में जाने से रोकना। 2. चरणों के तलवों पर जलने से फफोले हुए थे, (इसलिए) धीरे-धीरे धरती पर पाँव रखते चलते थे। 3. ठंडा। 4. कई कुल्ले करके मुंह शीतल किया। 5. लंगाह (सिख का नाम) ने चरण-कमल पकड़ कर धोए। 6. सिक्ख।

भोग पाइ करि सीस निवायो। पुन सिक्खनि सनि बाक अलायो।
अबि हम चहिं परलोक सिआना। चित जिम कहति सकल हम ठाना ॥ २६ ॥
श्री हरि गोबिंद संग मिलीजै। हम दिशि ते बहु धीरज दीजै।
करहु न शोक गुबिंद गुन गावो। अपर सरब को कहो मिटावो ॥ २७ ॥
सायुध होइ तखत पर राजहु। जथा शकति सैना संग साजहु।
प्रथम चंदु ते पलटा लीजहि। हतहु कुमौत महां दुख दीजहि ॥ २८ ॥
श्री गुरु अमरदास की अंस। निकट हकारो कुल अवितंश।
प्रथम रीति करि लीजहि टीका। सकल बडिनि संग कहि बच नीका ॥ २९ ॥
ब्रिध आदिक सिक्खनि सनमानहु। पुरा गुरुनि की रीति प्रमानहु[1]।
नई रीति इक रण की कीजहि। अपर प्रथम सम गति चलीजहि ॥ ३० ॥
दाह देहि नहिं करिहु हमारी। दिहु प्रवाह इस सलिता बारी[2]।
दरशन हमरो इह दरिआउ। उत्तर दिशि सिर दच्छण पाउ ॥ ३१ ॥
एक रबाबी तबि चलि आयो। हाथ दुतारा गुरु दरसायो।
कह्यो तांहि को किरतन करहु। सलिता तीर रुचिर थल थिरहु ॥ ३२ ॥
गुरू पछाने बंदन कीनि। गावनि लग्यो शबद रस भीन।
ब्रह्मादिक लखि करि गुरु त्यारी। इंद्रादिक सुर गुर सुर झारी[3] ॥ ३३ ॥
बिद्या-घर उतलावति[4] आए। किंनर जच्छ अप्पसरा ल्याए।
सकल बायु गन सिद्ध अरु चारन। नभ थिति जै जै करहिं उचारनि ॥ ३४ ॥
भयो बिवान सहत असमान। पसरीजहिं कहिं जोति महान।
गोरखनाथ लीये गन चेला। पीर अजमती मेलि सकेला ॥ ३५ ॥
गुपत[5] आइ सभि मंगल करहिं। परवारति चहुं दिशि महिं फिरहिं।
सतिगुर चरित कहै, को सुनै। बिसमति हुइ करि उर महिं गुनै ॥ ३६ ॥
इन सम धीरज धरनी मांहि। जग महिं अपर बिचरीअहि काहि।
अजर जरनि की अवधि दिखाइ। अछति शकति अति[6], दुख अति पाई ॥ ३७ ॥
नहिं संकलप रिदे महिं कीना। दोखी कहु करिबे सुख हीना।
इन की उपमा इन हूं बनै। सही सजाइ न आनी मनै ॥ ३८ ॥
अनिक प्रकार गगन महिं कहैं। अबि आवहिं सगरे चित चहैं।
श्री सति गुर तबि कुशा मंगाई। किस दिजके घर ते समुदाई ॥ ३९ ॥
आसतरन[7] अविनी पर कीना। बिसद चादरा ऊपर लीना।
पौढ़ि गए आच्छाद्यो बदन। गमनि करनि बैकुंठ निज सदन ॥ ४० ॥

---

1. पूर्व गुरुओं की रीति मानना। 2. नदी के जल में। 3. इन्द्र, बृहस्पति आदि तथा अन्य देवता। 4. शीघ्रता से। 5. गुप्त लोक के वासी। 6. अतीव शक्ति होते हुए भी। 7. बिछाई।

त्याग देहि जबि चढे विमाना। हने डंक सुर ब्रिंद निशाना।
मंजुल फूलनि अंजुल डारहिं। जै जै एको बार उचारहिं॥ ४१॥
बार आरती पुंज[1] उतारहिं। धूप धुखाव सुगंधि बिथारहिं।
अति उतसव को सगरे धारहिं। नमसकार कर बंदि दिखारहिं॥ ४२॥
भयो अकाश अरण ही बरणा[2]। पिखति लोक अचरज उर करणा।
सिख की सुता जानि तबि गई। त्रिण सम तन परहरि संग भई॥ ४३॥
घर महिं परी न किनहूं जानी। भई गुरू संग भाग महानी।
उरध गुर को चल्यो बिबाना। गन देवनि को संग पयाना॥ ४४॥
रागनि राचि अपसरा नाचहिं। चलहिं अगारी कौतक माचहि।
जहिं लगि जिसकी शकति पयाननि। बहुर थिरहिं पिखि करि ऊचानन[3]॥ ४५॥
गोरख आदि पीर सभि मुरे। बंदन करि करि निज थल थिरे[4]।
इंद्र आदिक पुन बंदन धारी। हटे संगि, गुर चले अगारी॥ ४६॥
ब्रह्म लोक लगि ब्रह्मा साथ। पुन आगे गमने गुर नाथ।
अपने सदन बिकुंठ पहूंचे। सरब लोक ते अहै जु ऊचे॥ ४७॥
केतिक दिन सुर गन वच कहैं। सतिगुर चरित सु अचरज अहैं।
जिन समानता करिहैं कोइ न। भूत न भयो भविख्यति होइ न॥ ४८॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'श्री गुरु अरजन साहिब जी परलोक गमन प्रसंग' बरननं नाम सपत त्रिसती अंशु॥ ३७॥

1. सबके सब। 2. अरुण (लाल) रंग का। 3. ऊँचा मुख करके। 4. अपने स्थान पर स्थिर हुए।

अंशु ३८

श्री अरजन बैकुंठ गमन प्रसंग

दोहरा

पंचहु सिख परवार करि सतिगुर तन तिस काल ।
मंद मंद रोदति अधिक संकट पाइ कराल ॥ १ ॥

चौपई

कवि जेठा 'वडहंसहि गावो । गुर प्रलोक भा शबद सुनावो' ।
काराग्रिह थल पापी बैसे । करनि प्रतीखनि-आइ न कैसे[1] ? ॥ २ ॥
बड़ी देर लागी नहिं आए । कहां भई गति ? लखी न जाए- ।
इतने महिं उतलावति आवा[2] । सेवक संग किते करिलावा[3] ॥ ३ ॥
तूरन आइ तीर पर हेरे । —परे चादरे तानि बडेरे ।
बहु दिन भए न सुपतनि दीनि । पिखि अवसर को निंद्रा लीनि ॥ ४ ॥
अबि सूधो भा मानहि नाता । धरम जानि ते उर डरपाता- ।
निकटि गयो नर ले समुदाए । सुपति जानि करि दशट अलाए ॥ ५ ॥
'किम तुम को अबि निंद्रा आई ? हुइ निचिंत सोयो सुख पाई ।
सुता कुमारी मैं नित हेरे । तजी नींद दिन ब्रिते घनेरे' ॥ ६ ॥
तबि बिधीए बहु रोइ सुनायो । 'दुशट पातकी ! पाप कमायो ।
तुव सिर चढ़े दोश बड दै कै । गए प्रलोक देहि तजि कै कै ॥ ७ ॥
करि कूरो मारहिं हतिआरे । बचहिं नहिं करि जतन हजारे' ।
कुछ डरपति उर महिं बिसमायो । ततछिन हटि करि धाम सिधायो ॥ ८ ॥
सदन रुदन बड सुन्यो पुकारा । चकिति चित्त ह्वै तबहि उचारा ।
'क्या होयहु, क्यों करहु ब्रिलापा ? कौन गजब गुजर्यो फल पापा ?' ॥ ९ ॥
सेवक आनि कह्यो ततकाला । 'नुखा म्रितु औचक भा काला' ।
अनिक तरकना सुनति बिचारहि । —बिना रोग किम मरी ?-उचारहि ॥ १० ॥

---

1. (गुरु जी) क्यों नहीं आए ? 2. (चंदू) आया । 3. कितनों ही को साथ लेकर ।

दुखी बिसूरति मूरख मानी। मनो कशट की ऊपजि निशानी।
म्रितक क्रिया करिवावति भए। जारनि[1] नदी तीर लै गए॥ ११॥
उत सतिगुरु की सुधि बिदताई। पर्यो रौर पुरि नर समुदाई।
'ग्रिह चंदू के गुर तजि देहि[2]। सुनि सुनि सिख निकसे तजि ग्रेह[3]॥ १२॥
'नदी तीर श्री गुरु अबि अहैं'। धाइ धाइ मानव गन लहैं।
तजि तजि काज बनक बिवहार। आवहिं लारि परे[4] नर नारि॥ १३॥
भई भीर कुछ गिनी न जाए। कितिक समिग्री ले करि आए।
अतर फूल अंबीर गुलाल। बरखावति होई धर[5] लाल॥ १४॥
नदी तीर थिर सिख दलि आए। बिधीचंद आदिक दरसाए।
बूझी सरब बारता गुरु की। सभि सों कही, कही जिम उर की[6]॥ १५॥
'नहीं देहि को दाह उचारा। —करहु प्रवाहनि वारि मझारा।
मेरो दरशन इह दरिआओ। उत्तर की सिर दच्छन पाउं-'॥ १६॥
सुनि सिख सदन सदन रुदनाए। दौरि दौरि मिलिकै समुदाए।
'वाहिगुरू' सभि बदन कहंते। इकठे भए अधिक दुखवंते॥ १७॥
ततछिनि सुंदर रच्यो बिमाना। सिक्खनि खरच्यो दरब महाना।
'सतिगुर सेव जि हुइ इस समै। बडे भाग ते प्रापतिहमैं॥ १८॥
फल अतोट ह्वै कौन सु जानै'। मिलहिं परसपर एव बखानैं।
ज़री बादला रेशम चीर। परहिं दुशाले मोल गहीर[7]॥ १९॥
सेत बसत्र मसरू बिधि घने। ऊपर पाइ शोक मन सने।
संख ब्रिंद भरि फूक बजाए। 'श्री गुरु की जै' ऊच सुनाए॥ २०॥
चामर चारु चार दिस फेरे। फूल माल लरकाइ घनेरे।
चंदन चरचहिं धूप धुखावहिं। कर जोरहिं उर प्रेम वधावहिं॥ २१॥
सनै सनै चंदू खल निंदहिं। —गुर हत्यारा दोखी-बिंदहिं।
दरब गुरू पर अग्र बगावैं[8]। लोक हज़ारहुं बीनति जावें[9]॥ २२॥
केतिक जपुजी पाठ पठंते। केतिक 'गुरू गुरू' सिमरंते।
कितिक स्वास ले शोक वधावैं। कितिक सराहैं 'शील सुहावैं'॥ २३॥
कितिक निकारति खल को गारी। 'तुरक राज की जरां उखारी'।
ले रावी के गए प्रवाहू। जहिं जल चलति कलत[10] बल माहू[11]॥ २४॥

---

1. जलाने के लिए। 2. शरीर छोड़ दिया है। 3. घर। 4. समूह रूप में। 5. पृथ्वी लाल हो गई। 6. जिस प्रकार गुरु जी ने हृदय की बात कही थी। 7. अत्यधिक मूल्यवान्। 8. गुरु जी के ऊपर धन की बौछार करते हैं। 9. फेंके हुए धन को उठा रहे हैं। 10. स्वच्छ, सुन्दर। 11. तेज।

बिधीआ, जेठा, लझ, पिराणा। इन सन जिस विधि अंति वखाणा।
तिस विधि करति बेग[1] महिं गए। कन्ध[2] बिमान उतारति भए ॥ २५ ॥

जल मैं इसथित जबि करि दीनि। जलपति बरण आइ तबि लीनि।
सभि बिधि सों पूजनि करि आछे। जल सरूप करि दीनिसि पाछे ॥ २६ ॥

निकसे सिख सलिता ते बाहरि। सिक्ख सँकरे हेरहिं जाहरि।
नहीं बहुर कुछ दई दिखाई। जल सरूप तन ह्वै सुखदाई ॥ २७ ॥
रघुबरु रामचंद मानिंदे। प्रविशे सरिजू नीर बिलंदे।
बहुर नहीं निज देह दिखाई। जल सरूप ह्वैगे तिस थाईं ॥ २८ ॥
बिसमति भए बिलोक निहारे। सभि सों जेठे बाक उचारे।
'अंत समें गुर गए वताइ। जल प्रवाह मों देहु टिकाइ—' ॥ २९ ॥
नर नारिनि की भीर उदार। हटि आए पुन नगर मझार।
धरमसाला थिति भे समुदाई। रुदति बिलोचन अश्रू बहाई ॥ ३० ॥
साथ श्बाबी लिए दुतारा। किरतन सभि के अग्र उचारा।
दरबादिक वसतूगन संगति। दियो बहुत पुन रह्यो न मंगति ॥ ३१ ॥
तिस दिन रहति भए धरमसाला। पंचहु सिक्खनि शोक बिलासा।
तिस दिन किनहुं न भोजन कीनि। मुरझावति बैठे मन दीन ॥ ३२ ॥
बिनु महिपाल चमूं जिम दीना। दूलहु बिनु बरात हीना।
जथा जामनी चंदु बिहीना। गुरु विनु संगति तथा मलीना ॥ ३३ ॥
बिना नरेशुर प्रजा दुखारी। पति बिहीन जिम पतिब्रति नारी।
जिम जन ग्राम पैंच बिन दीना। गुरु विनु संगति तथा मलीना ॥ ३४ ॥
सरब जामनी सोचति बीती। चितवति श्री अरजन पद प्रीती।
अशट जाम जे दरसति रहैं। बिना पिखे शांती क्यों लहैं ॥ ३५ ॥
नीठ नीठ अविलोक प्रभाति। शोक अधिक ते बितहि न राति।
रावी महिं करिकै इशनान। नमो करी सतिगुरु के थान ॥ ३६ ॥
सुधा सरोवर दिशा सिधारे। मनहु करति रण हारि पधारे।
सभि पूंजी जनु बनक गवाई। कै बन मैं सभि वसतु लुटाई ॥ ३७ ॥
रिदे बिचारति – माता पास। करहिं सूल सम बाक प्रकाश।
जिस को सुनति गिरहि बिकुलाए। धिक बोलन हमरो तिस भाए ॥ ३८ ॥
हरिगोबिन्द बाल तन बैसा। हमते सुनहि बाक जबि ऐसा।
दुखी होइ बहु रुदति पुकारें। 'कहां तजे पित गुरू ? उचारें ॥ ३९ ॥

---

1. प्रवाह 2. कन्धा।

क्या हम कहैं 'जियति चलि आए'। दशा देखि अस दुख नहिं पाए।
करदम रिदा न बिदर्यो[1] तबिहूं। जल गुर प्रीतम बिछुरे जबिहूं ॥ ४० ॥
हम ते आछे बन के हरण[2]। सुनति नाद को गिनहि न मरण।
त्रिगद जोन[3] क्या कीट पतंगा। प्रीतम हित जारति निज अंगा ॥ ४१ ॥
नीर बिरहि ते मीन निहारो। देति प्रान नहिं करहि अबारो।
भ्रमर तजहि नहिं गंध सुभाऊ। पुशप केतिकी बेधति जाऊं[4] ॥ ४२ ॥
हम पंचहु ते पंचहु जीव। उतम प्रेम निबाह सदीव।
प्रथम देखि करि दुख गुर केरे। अबि गुर पतनी सुत दुख हेरे ॥ ४३ ॥
एव बिचारति आरति होते। बदन खिन्न दुति, नहीं उदेते[5]।
प्रविशे जाइ सुधासर नगरी। अश्रू बिमोचि बिलोकति सगरी ॥ ४४ ॥
जहिं स्री हरिगोविंद अनंदति। आइ खरे पग पंकज बंदति।
दिन को गिनति गुरू जबि गए। 'एतिक बिरह तिनहुं के भए ॥ ४५ ॥
करति प्रतीखनि 'कबि इत आवैं ? प्रिय दरशन सुंदर दिखरावैं।
बैठहिं जबहि लगाइ दिवान। सिख संगति दरसहिं गन आनि ॥ ४६ ॥
देखि तिनहु को होइ अनंदा। जनम जनम के काटैं फंदा।
मन उदास तबि प्रापति शांती। होइ खुशी कबि, सीतल छाती' ॥ ४७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'श्री अरजन बैकुंठ गमन' प्रसंगबरननं नाम अशट त्रिसती अंशु ॥ ३८ ॥

---

1. जिस प्रकार तालाब का जल सूख जाने पर कीचड़ में दरारें पड़ जाती हैं, उसी प्रकार गुरु जी के बिछुड़ने पर हमारा हृदय फट क्यों नहीं गया। 2. हिरण। 3. निकृष्ट प्राणी। 4. बंध जाता है। 5. मुख शोभाहीन है।

अंशु ३९

सुधासर सुधि होवन प्रसंग

दोहरा

आदि ब्रिद्ध गुरदासि गन[1] चहुंदिसि महिं गुरु दास[2]।
सिमरति श्री अरजन गुरु सभि उर दरशन प्यास ॥ १ ॥

चौपई

'लवपुरि ते गमन्यो कित शाहू। सुधि पहुंची कवि की हम पाहू।
अबि किस कारन इन नहिं आए। को कारज नहिं अपर बताए[3] ॥ २ ॥
आज काल आवहिं' चितवंते। बैठे हरिगोविन्द दुतिवंते।
इतने महिं पंचहुं चलि आए। बदन बिबरन[4] दुखित जरदाए[5] ॥ ३ ॥
दीन मनै हुइ बदंन करी। गिरा व मुख ते जाति उचरी।
करि तूरनता हरिगोबिंद। बूझति 'किस थल गुरू बिलंद ? ॥ ४ ॥
किम पंचहुं तुम तजि करि आए ? बरण ज़रद मुख को दरसाए ?।
कै आवति ? गुरु बहिर सथाना। धिरे पखारनि पद अरु पाना ॥ ५ ॥
तऊ एक दुइ आवति आगे। कित्र पंचहुं गमने गुरु त्यागे ?।
बदन प्रफुल्लिति नहिन तुमारा। क्यों कारण नहिं करति उचारा ?' ॥ ३ ॥
कहति सकल पंचहुं मुख देखै। 'नाहिन कुशली' करति परेखै।
पुन श्री हरि गोबिंद बखानी। 'मौनि. नंम्रि सिर करि क्यों ठानी ? ॥ ७ ॥
दलकति रिदा देखि तुम हाल। क्यों नहिं बोलति वाक उताल ?।
गुरु बाणी को सुनति पिराणा। चाहसि चित—मैं करिव बखाणा ॥ ८ ॥
शुशक कंठ अरु अधर कपोला। कहै कि 'मुंह नहिं निकसनि बोला'।
रुदति बारि इकि निकसि पुकारी। त्रुिखुटे अश्श् न बहि द्रिग बारी ॥ ९ ॥
दासनि जुत श्री हरिगोबिंद। बदन बनज बन निकसि बिलन्द।
हिम सी गिरा[6] लगी मुरझाए। पुन पूछति 'दिहु सकल सुनाए ॥ १० ॥

---

1. भाई बुड्ढा और गुरदास आदि। 2. गुरुओं के दास। 3. और क्या काम है, बताकर नहीं गए। 4. रंग उड़ा हुआ। 5. पीलापन। 6. बर्फ जैसी वाणी।

किस ने गुर राखे अटकाइ ?। कहां बिघन भा कहु समझाइ ?
शाह चढ्यो, अबि को थिरु थियो[1]। जिनहु गुरु नहिं आवनि दियो ?॥ ११ ॥
जिम छूटहिं सभि करहिं उपाइ। कहो साच तुम क्यों बिललाइ।
अहि दी आयहु तबि के जानहिं। तुरक मंदमति बिगरनि ठानहि॥ १२ ॥
चुगली उगलति मुग़ल बिगारा। किम होई गति करहु उचारा ?'।
विधीआ धरि धीरज दिढ हीयो। सभि प्रसंग तबि बरनन कीयो॥ १३ ॥
'मिले शाहु सो पूरब जाए। थिरु हुइ घरी चारि निकसाए।
निकसति वहिर सिपाही ब्रिंद। भए संग गमने ग्रिह चंदु॥ १४ ॥
शाहु संग संबाद बखान्यो। सो हमने कुछ सुन्यो न जान्यो।
किम तहिं भई न कुछ गति जानी। पहुंचे पुन बड दुशट सथानी॥ १५ ॥
अंतरि जबहि प्रवेशति भए। द्रिढि किवार दोनहुं दे दए।
हम को ड्योढी थान टिकाए। अंतरि श्री सतिगुरु बिठाए॥ १६ ॥
खान पान अरु सुपतनि बरजे। पुन सजाइ दुख कहि कहि तरजे[2]।
—लिहु नाता नतु करिहौं घाति-। नहिं सतिगुर मानी तिस बाति॥ १७ ॥
तीन दिवस बडी दीनि सजाइ। होति भई सभि गुरू रजाइ।
नाहिं त क्या मारनि तिस केरो। तुरकनि राज प्रताप बडेरो॥ १८ ॥
इक सिख नासहि बिलम बिहीन। कहि सतिगुरु सभि बरजन कीनि।
मारि खाइ बैठे मुरझाए। हम हेरति गुरु सही सजाए॥ १९ ॥
निकसे रावी करनि शनान। तट पर थिर हुइ त्यागे प्रान।
लवपुरि संगति मिली बिसाला। जल प्रवाह कीनसि ततकाला॥ २० ॥
द्रिग आगे अस कौतक होवा। हम सिख नाम सरब ही जोवा।
मरने आगे महद कुभागे। रिदा न बिदर्यो दुख नहिं लागे'॥ २१ ॥
हरि गुबिंद सुनि दुखद महाना। बानी बान लगी जनु काना।
बेध्यो रिदा पुकारति ऊचे। 'तजि एकलि परलोक पहूचे॥ २२ ॥
सगरी संगति केरि अलंब। करहिं प्रतीखन दास कदंब[3]।
अलप आरबल गुरु जबि होए। करि पुकार ऊच सभि को'॥ २३ ॥
बैठी हुती गंग चित शांती। सुनति कूक दलकी[4] तबि छाती।
सुधि को दासी तुरति पठाई। 'गुरु प्रलोक भा' आनि सुनाई॥ २४ ॥
मनहु अचानक बज्र पहारा। कंचन बेलि गिरी इक बारा।
'हाइ हाइ' कहि कहि मुरझाई। रुदति ब्रिंद दासीनि उठाई॥ २५ ॥

---

1. किसने अपने यहाँ टिका रखा है। 2. ताड़ना की। 3. समस्त।
4. धड़कने लगी।

केस उखारति बाहु उसारति। आरति शोक बिसाल पुकारति।
सगर नगर कहिं सुन्यो प्रसंग। दौरति आवति रुदिति उतंग ॥ २६ ॥
मिले समूह आइ नर नारी। रोदति ऊचे करति पुकारी।
बिरलापहिं तजि अश्रुनि आपहिं। परतापहिं[1] गुन सिमर कलापहिं[2] ॥ २७ ॥
पुत्तर बाल बय त्याग गुसाईं !। सिर पर शत्रु दुशट समुदाई।
तुम बिन को दिवान अबि लावहि। किस ते सिक्ख मन बांछति पावहिं ॥ २८ ॥
करहि कौन दासनि कल्यान। चहुं दिशि के पग पूजति आनि।
को सुधि लै है पहुंचि हमारी। राज तुरक को बहु बुरिआरी ॥ २२ ॥
जिनहुं चह्यो करिबे अन्याइ। परयो अंधेर न सूझहि काइ।
उचितानुचित बिचार न काई। गहे बली निबलन को खाई ॥ ३० ॥
कित गमने हमरे रखवारे'। ऊची बाहु उसार पुकारे।
नगर नारि होई समुदाइ। रुदति शब्द को बिदत उठाइ ॥ ३१ ॥
सीस केस बिथरे सभि केरे। सिमरि प्रेम गुरु दुखित घनेरे।
'महां शकति जुति चाहति जेती। अच्छत सही बिपद किम एती ॥ ३२ ॥
जरी अजर उर धीरज धारी। हुइ अस छिमा न आन मझारी'।
इत्यादिक गुन रुदति भनंती। पीटति हाथनि सीस हनंती ॥ ३३ ॥
इम अंतर बडि माच्यो रौरा। सुनति दूर ते आइ सु दौरा।
रुदति अधिक श्री हरि गोविंद। सिख संगति चहुं दिशि महिं ब्रिंद ॥ ३४ ॥
सकल रोइ करि गुरु सिमरंते। आप बिमोचति लोचन अंते।
बध्यो शोक सभि महिं तबि ऐसे। बास इहाँ करुना रस जैसे ॥ ३५ ॥
'हाइ पिता, गुन निधि, सुखदानी !। कौन दुलार करहि बहु आनी।
मुख बैठनि पित अंक बडेरे। करि सनेह सिर हाथ सु फेरे ॥ ३६ ॥
सो अबि कहां न प्रापति मोही। अंति समें नहिं दरशन होही।
भूत भविक्ख्यति बिदति ब्रितंता। इम किस रीति प्रान करि अंता ? ॥ ३३ ॥
अलख गती गुर की बिसमावति। नहिं अपर ते जानी जावति।'
पुन श्री हरि गोबिंद उचारे। 'निकट पंच, जबि गुरू पधारे ॥ ३८ ॥
अंत समें किम किय फुरमावनि। तुम को कौनसि कहाँ जनावनि ?।
सो अबि बाकनि करहु बतावनि। सुनि हम धरहि महद सुख पावनि' ॥ ३९ ॥
इम प्रसंग बूझति बहु रोए। नहीं धीर मन शोक परोए।
अश्रु बिमोचति गर लगि जाई। गदगद गरा महां अकुलाई ॥ ४० ॥

---

1. बहुत दुःखी होते हैं। 2. समस्त गुणों को याद कर-करके।

त्यों अवलोकति सेवक सारे। बहुत बिसूरति अश्रु डारे।
दीन मने दुख लहति घनेरे। ग्यानी तऊ प्रेम गुरु केरे॥ ४१॥
गुर सनेह की महिमा महां। तजहिं ग्यान मिलि रोदति तहाँ।
केतिक ध्यान ठानि भे मौन। गुन सिमरति उचरति सुख भौन॥ ४२॥
सभि की दशा देखि ब्रिध भाई। ब्रहम ग्यान की जिस द्रिढताई।
दैबे हेतु सकल को धीरज। गुर को जसु कहिवे अरु वीरज[1]॥ ४३॥

दोहरा

बोल्यो चहति प्रबोधवे श्री गुर हरिगोविन्द।
शोक निवारनि सकल को बैठे दास जि ब्रिंद॥ ४४॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'सुधासर सुधि होवन' प्रसंग बरनन नाम एक ऊनिचत्वारिंसती अंशु॥ ३९॥

---

1. बल, शक्ति

अंशु ४०

श्री हरिगोविंद प्रण करण प्रसंग

दोहरा

हरि गोविंद अह ब्रिंद सिख रूदति स शोक बिलंद ।
देखति भाखति ब्रिद्ध तबि 'की जहि खेद निकंद[1] ॥ १ ॥

चौपई

सतिगुर नहिं सोचन के योग[2] । सुजसु बिथार्यो चौदस लोग ।
घन समान तन धरि बिदतावैं । जग कारज करि बहुर बिलावैं[3] ॥ २ ॥
परम धाम बैकुंठ सिधारैं । ब्रिंद अनंद बिलंद बिहारैं ।
करि गादी पर पुत्तर अबादी । भए सरूप लीन निज आदी ॥ ३ ॥
जे कारज करिबे कहु आए । नीके पूरन करि समुदाए ।
कान्हे स्राप साच के हेतु । सही सजाइ सु चंद नकेतु ॥ ४ ॥
पूरनता दिखाइ ब्रहम ग्यानी । जिन के तनहंता ब्रिति हानी ।
निज सरूप ते फुरनो आन । उठिनि न दीनसि इक रसवान ॥ ५ ॥
जग की बरतण सहिज सुभाइ । बिना जतन जिम होती जाइ ।
भगत कबीर नाम दिउ आदि । भीर परी की नसि प्रभु यादि ॥ ६ ॥
कुछ ते कुछ करि नरनि दिखाई । ग्यान ऊनता इही जनाई ।
सत्ति आतमा जग सभि काचो । जिस के उर निशचै अस साचो ॥ ७ ॥
सो नानत्त्व[4] पर फुरना करहि न । अपन सरूप लखहि, अन धरनि न[5] ।
अस स्वामी नहिं सोचनि जोग । क्रिपा तिनहु उधरे बहु लोग ॥ ८ ॥
पूरब पुंननि फल को पाइ । भोग बिशै जग चले गवाइ ।
भगति न, जोग न ग्यान विरागे । से सोचन के जोग कुभागे ॥ ९ ॥
नर तन जिनहुं अकारथ खोवा । सत्तिनाम नहिं सिमरनि होवा ।
फासी परे गए जम लोग । सो मूरख सोचनि के जोग ॥ १० ॥

---

1. दु:ख दूर करो. 2 । शोक करना । 3. लुप्त हो जाते हैं । 4. नाना रूप--भाव, संसार । 5. द्वैत धारण नहीं करते ।

मरि करि बहजोनी भरमावैं। करे पाप कै नरक सिधावैं।
जिन कबिहुं सतिसंग न करे। से सोचन के जोग जि मरे।११॥
गुर शरधा उर जिन के नांहि न। त्रिशना ते मन बरज्यो जांहि न।
गुन तजि अवगुन संग्रहि करे। सो सोचनि के जोग जि मरे॥१२॥
नहिं गुर ध्यान न गुर की सेवा। गुर बिहीन धारति अहंमेवा।
गुर हरि की लखहि न वडि आई। से सोचनि के जोग सदाई॥१३॥
इस जग अरु परलोक मझारे। सतिगुर सदा सहाइ हमारे।
सिमरनि करे दरस दें आनि। से क्यों सोचनि जोग महांन॥१४॥
वंदन करहु, कराहु करावो। किरतन सुनहु, अनंद उपावो।
मिमरे नित हाजर गुर अहैं। परम प्रेम मन को सभि लहैं॥१५॥
द्रिशटि मान हैं जितिक अकार। सभि कूरे हैं बिनसनि हार।
इन सों मोह करहि अग्यानी। जो लखियति है सुपन समानी॥१६॥
तुम को उचित न ऐसे करिबे। हरख शोक अग्यानी धरिबे।
तखत बैठि अबि सिक्ख उधारो। शत्रुगन जे सकल संघारो॥१७॥
इम सुनि कै ब्रिध के बच कान। श्री हरिगोबिंद भे सवधान।
पंच सिक्ख को बूझनि लागे। 'कहयो अंध जिम कहु हम आगे'॥१८॥
सुनति पिराणा कहि म्रिदु बानी। 'इम श्री सतिगुरु तुमहि बखानी।
हरिगुबिंद संग जाइ मिलीजै। हम दिशि ते बहु धीरज दीजै॥१९॥
करहु न शोक गुबिंद गुन गावहु। अपर सकल को कहहु मिटावहु।
सायुध होहु तखत पर राजहु। जथा शकति सैना संग साजहु॥२०॥
प्रथम चंदु ते पलटा लीजहि। हतहु कुमौत महां दुख दीजहि।
श्री गुर अमर दास की अंश। निकट हकारहु कुल अवितंश॥२१॥
प्रथम रीति करि लीजहि टीका। सकल बडिनि संग कहि बच नीका।
ब्रिध आदिक सिक्खनि सनमानहु। पुरा गुरनि[1] की रीति प्रमानहु॥२२॥
नई रीति इक रण की कीजहि। अपर प्रथम सम गति चलीजहि।
दाहु देह नहिं करहु हमारी। दिहु प्रवाह इस सलिता बारी॥२३॥
दरशन हमरो है दरि आउ। सिर उत्तर दिसि दच्छन पाउ।
सोरह सत त्रेसट गिन संमति। जेशठ शुदी चौथ हरि संमत[2]॥२४॥
महाँ पातकी शत्रु चंदु। दई सजाइ अनेक बिलन्द।
पंच दिवस लौ खाइ न पीउ। नहीं दुशट ने आदर कीउ॥२५॥

1. पहले गुरुओं की। 2. प्रभु की इच्छानुसार।

ज्यों ज्यों घात करहु तिस केरा। दुख दे जग बिदताइ बडेरा।
पिता बैर को उचित सु लैबा। पूरब घोर सजाइनि दैबा ॥ २६ ॥
बिशटा महिं रुलाइ करि मारो। तीव्र पीर नरकनि महिं डारो।
काल, कलप करि पुनह न जावद[1]। लहै सजाइ नरक की तावद ॥ २७ ॥
करी अवग्या को फल भारी। तऊ न निबटै बाकी सारी'।
सुनति पिराणे के बच ब्रिंद। तबि रिसि ते हरिगोबिन्द ॥ २८ ॥
फरकी दोनो बाहु बिसाला। द्रिग जल होति, अधर चल चाला।
बदन बिलोचन लाल कराले। भ्रिकुटी बंक चाप की ढाले ॥ २९ ॥
सभि के सुनति क्रोध करि बोले। 'करहिं क्रित्त पित आइसु को ले।
जे नहिं चंदू को हम गहैं। मुशकैं बंधी जि ना जग लहै ॥ ३० ॥
तौ हमरे सिर दोश बिसाले। चढहु अिनहु फल दुखद कराले।
जे नित व्यशन परे परदारा। कै पर दरब चोर बटपारा ॥ ३१ ॥
गुर ते बेमुख कुटिल कुचाले। कूरे काइर कुमति कराले।
लगहि दोश अस पाप उदारा। जे न करौं चंदू मुख कारा ॥ ३२ ॥
मित्रनि द्रोह अकारण द्रोही। अपनि भरोसे दे करि ध्रोही[2]।
पर संपति को देखति जरना। परजसु सुनति रिदै नहिं जरना ॥ ३३ ॥
गुर निंदक, लोलप कुलघाती। मात पिता दुखदाइक छाती।
इन अघ फल तौ हम ही पावें। जे न चंदू सिर पनहि[3] लगावें ॥ ३४ ॥
इत्यादिक कहि सभा मझारी। पित पलटा लैबे इछ धारी।
उठि पुन सुधा सरोवर गए। मज्जन करि तिलांजुली दए ॥ ३५ ॥
लौकिक बैदक जितिक बताई। पिता हेतु सभि करी गुसाईं।
हट करि चलि तिकेत कहु आए। मात गंग जहिं शोक वधाए ॥ ३६ ॥
कहति 'गुरू के बसत्रनि संग। करौं दाह मैं अपने अंग।
पति के संग जरनि इक बारी। पति बिन जरति सदा दुख कारी' ॥ ३७ ॥
सुनि श्री हरिगोविंद दुखारी। पठ्यो ब्रिध 'दिहु धीरज भारी।'
परदे अंदरि मात बिठाइ। कह्यो बाक 'दिहु शोक मिटाइ ॥ ३८ ॥
श्री सतिगुर जो आइसु करी। हम तुम को चहियति सो धरी।
हरिगुबिंद अरु नुखा तुमारी। अलप आरबल लेहु बिचारी ॥ ३९ ॥
श्री गुर पाछे सिक्ख कदंब। सभिहिनि के तुम अहो अलंब।
जहिं सिमरे तहिं हाज़र गुर हैं। तिनि हित शोक सोच क्या धरि हैं ॥ ४० ॥

1. जब तक कल्प का समय पूरा न हो। 2. विश्वासघाती। 3. जूती।

तुम बिन सभि की गति है कौन। गुरु तुम तजे आसरा भौन।
अंत समें गुरु आइसु कही। —हम हित शोक करिहु को नहीं ।। ४१ ।।
हरिगुबिंद को तखत बिठावो। मंगल आनिक प्रकार करावो-।
गुरु आइसु ते कारज एहू। तुम बसि करनि उचित लखि लेहू ।। ४२ ।।
गुर पति की मरज़ी बिन जरनो। नहीं आपके लाइक बरनो।
सिमरो निस दिन ठानहु ध्यान। मिलहु जाइ पति प्रान निदान ।। ४३ ।।
समझि पिखहु नहिं बहुर कहीजै। शोक संताप त्याग सभि दीजै'।
सुनि ब्रिध के बच स्थाने गंगा। माने सिर धरि जाने-चंगा ।। ४४ ।।
नहिं अपरनि सम मोकहु चहीयहि। रोदनि शोक मोह ते पय्यहिं।
मैं जग गुर घरनी अकलेश। जिन ते लें उपदेश अशेश ।। ४५ ।।
अस मन जानि धीर को धरिकै। करी जितिक जग रीति बिचरिकै।
सो अहिनिस[1] बीत्यो बिन खाने। गुर के गुन, अघ[2] चंदु बखाने ।। ४६ ।।
उचित जु महां शत्रुता करिबे। कहित चहित तिस प्राननि हरिबे।
सभि संगति गन गार[3] निकारैं। 'पाप आतमा नरक सिधारैं' ।। ४७ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे श्री हरिगोबिंद प्रण करण प्रसंग बरननं नाम चत्त्वारिंसती अंशु ।। ४० ।।

---

1. दिन-रात। 2. पाप। 3. गाली।

अंशु ४१

श्री हरिगोविंद पग बंधावनि प्रसंग

दोहरा

सुधि खडूर पहुंचाइकै पुन पठि गोइंदलाल ।
मऊ डल्ले सुनि करि अए धारति शोक बिसाल ॥ १ ॥

चौपई

नर नारी चढ़ि चढ़ि असुवारी । आइ सुधासरि केरि मझारी ।
रोदति पहुंचहिं कूक पुकारै । दोनहुं हाथ सीस पर मारैं ॥ २ ॥
इम बिरलापति आवति नारी । प्रविशैं गंगा सदन मझारी ।
श्री अरजन के गुन बहु कहैं । कमल बिलोचन ते जल बहै ॥ ३ ॥
सभिहिनि को सनमान महान । प्रथम राखि पुन करहि बखान ।
श्री गंगा शुभ मति महिं स्यानी । 'करहु न शोक सुनावहु बानी ॥ ४ ॥
जग गुर की आग्या जिम होइ । कैसे करहिं उलंघनि सोइ ।
अपर नरनि सम तिन तन नाहीं । सदा सुछंद आइं जग माही ॥ ५ ॥
करि कारज निज सदन सिधावैं । पर बसे होइ न आइ न जावैं ।
दुंद लोक आनंद बिलदै । सदा मुकंद दास निज ब्रिंदै ॥ ६ ॥
सुजसु बिथारि चंद मानिंदै । जनु सुखकंद सु पद अरबिंदै ।
चंदु पातकी सिर दे दोश । गए बिकुंठ परम संतोश ॥ ७ ॥
भल्ल्यनि तेहण कुल की दारा । सुनि सुनि सभिहिनि सुजस उचारा ।
मऊ डल्ले की जेतिक नारी । तिन सन[1] जगत रीति करि सारी ॥ ८ ॥
सिख संगति चहुं दिशिनि बिसाले । नितप्रति आइ सुधासर चाले ।
ज्यों ज्यों देशनि महिं सुधि जावै । सहत मसंदनि संगति आवै ॥ ९ ॥
लोक हजारहुं नित पहुंचंते । मिलि गुर सिक्खनि शोक धरंते ।
श्री हरि गोविंद चंद हमेशैं । बैठहि लाइ दिवान अशेशैं ॥ १० ॥

---

1. सहित ।

फरश बिसाल प्रथम करिवावैं। आइ आइ तहिं बैठति जावैं।
देग अनोट होति दिन सारे। जबि को चाहहि करहि अहारे ॥ ११ ॥
मानव ब्रिंद कार को करैं। अधिक समाज नितप्रति धरैं।
खरच होति कुछ गिनती नांही। सरब मसंद कार निरबाहीं ॥ १२ ॥
श्री गुर ग्रिंथ पाठ करिवाइव। भाई ब्रिध पठनि को लाइव।
करहिं रबाबी किरतत घने। कबि सिख गाइं जि रागी बने ॥ १३ ॥
भजन अखंड प्रवाह बहंता। हुइ जीवनि कल्यान सुनंता।
त्रौदश दिन इस बिधि जबि भयो। पढ्यो सु ग्रिंथ अंति लौ अयो[1] ॥ १४ ॥
जगत रीति के हेतु गुसाईं। संगति तहिं बुलाइ समुदाईं।
रामदास पुरि पैंच सु नीके। करे हकारनि अपनि नजीके ॥ १५ ॥
घनो कर्‌यो पंचाम्रित तबै। आन्यो तूरनि तहिं ते सबै।
नीकी पंगति सभा मझारा। ब्रिद्ध ग्रिंथ को अंति उचारा ॥ १६ ॥
खरे होइ गुरदास निहुरता[2]। चामर चारू ढोरनि करता।
जबहुं ग्रिंथ को पायहु भोग। सीस निवायहु सगरे लोग ॥ १७ ॥
पुन रुमाल को ऊपरि पाए। रागी तब्रहि शबद को गाए।
पढ़ि अनंद लौ करि अरदास। हरि गोबिंद ले पोशिश पास ॥ १८ ॥
रेशम ज़री समेत दुशाले। सभि अपने तबि हाथ उठाले।
साहिब बुड्ढे को तबि दई। सुंदर सकल पहिर तन लई ॥ १९ ॥
रीति चलावनि जगत मझारा। कीनो सभि विधिको बरतारा।
अपर सिक्ख प्रीतम गुरु बानी। दीनी पोशिश चारु महानी ॥ २० ॥
रागी अरर रबाबी सारे। सो पोशिश ले करि तन धारे।
दरब ब्रिंद दीनसि तिस काला। करि जथावति रीति बिलासा ॥ २१ ॥
पुन पंचाम्रित को बरतायो। भाऊ सहत ले संगति खायो।
इम सभि करि कै चालि भलेरी। सतिगुर पित हित जो तबि हेरी ॥ २२ ॥
बहुरो बंधन को दसतार[3]। हित उतसब के लिए हकार।
मुहरी आदिक भल्ले आए। दातू अंगद नंद सुहाए ॥ २३ ॥
बहु संगति को लग्यो दिवान। सुनि सुनि सुधि बैठहिं बिब आनि।
सालो आदिक ब्रिंद मसंद। चलि पहुंचे तबि धनी बिलंद ॥ २४ ॥
प्रजा जितिक पुरि बसनेहारी। आइ सभिनि अभिबंदन धारी।
जबहुं सकेल मेलबडि होवा। भिन्नहि भिन्न मसंदनि जोवा ॥ २५ ॥

---

1. भोग तक आया। 2 विनीत भाव से प्रार्थना की। 3. दस्तारबंदी के लिए।

सेली माला मंजी ल्याइ। आगे धरी गुरू के आइ।
सभि के लगे बिलोचन ऐसे। चंद चकोरहिं चितवति जैसे ॥ २६ ॥
श्री हरि गोविंद चंद अनंदे। तिन पिखि मुसकावति मंद मंदे।
बुड्ढा सनमुख थिर्‍यो निहारा। सभि सुनाइ तिह संग उचारा ॥ २७ ॥
'इह मसंद अबि क्या ले आए ?। अजहुं न जानहिं सहिज सुभाए।
अबि उन धारनि नहिं अधिकारा। शांति सरूप जथा गुर धारा ॥ २८ ॥
तुरक राज भए दुशट बिसाले। क्या कीनहु सतिगुर पित नाले।
लियो चहहिं पलटा ततकाला। बिना शसत्र क्यों करम कराला ॥ २९ ॥
संतनि केरि बिरोधी मारौं। गहौं शसत्र, नहिं माला धारौं।
प्रथम हुते छत्री महिपाला। आयुध को अभ्यास बिसाला ॥ ३० ॥
तज्यो जबहि शसत्रनि अभ्यास। लीनो तुरक राज निज पास।
देश बिदेश जीत करि लीने। शसत्रनि बल नहिं अरकनि दीने ॥ ३१ ॥
अबि निज सिक्खनि शसत्र गहावैं। बिद्या करि अभ्यासहिं पावैं।
संघर घोर करहिं, अरि घावैं। गुर सहाइ बड राज कमावैं ॥ ३२ ॥
सुनि बोल्यो बुड्ढा करि जोरि। 'गुर मरज़ी बिन बनहि न होर।
पंच गुरू आगे जग भए। जथा रीति पूरब निरमए[1] ॥ ३३ ॥
तथा मसद आप ढिग ल्याए। करहु आप जैसे मन भाए।
नई रीति जे करहु चलावनि। धरहु शसत्र गन दुशटनि धावनि ॥ ३४ ॥
जिम रावर की मरज़ी होइ। मानहि तिम नीकी सभि कोइ।
सुनि ब्रिध ते सतिगुर मुसकाए। सेली माल मसंद जु ल्याए ॥ ३५ ॥
द्वै कर बंदि बंदना करी। कह्यो 'कोश महिं दिहु इन धरी'।
कोशप[2] हुकम मानि गुर केरा। आगे ते उठाइ तिस बेरा ॥ ३६ ॥
तोशे खान महिं तबि धरी। उठि अरदास ब्रिद्ध पुन करी।
पांचहु सतिगुर के ले नाम। पाग लीनि कर महिं अभिराम ॥ ३७ ॥
जिस के छोरनि ज़री बिसाल। चमकति बहु सुखमा[3] के नाल।
सूखम सूत अधिक जिस केरा। श्री हरगोबिंद को तिस बेरा ॥ ३८ ॥
प्रथम ब्रिद्ध बंधवावनि कीनि। शोभा गुर की होति नवीन।
पुन मुहरी दे बहु धन साथ। अरपी पाग[4] दातु से हाथि ॥ ३९ ॥
अपर कहां लगि कहहि बनाई। पुरि के पैंच मसंद समुदाई।
सरब अरपना करहिं अगारी। धन दसतार ल्याइ नर झारी ॥ ४० ॥
सुंदर वाजि उठे शदियाने। सभि के उपजति अनंद महाने।
मंगल सिरज बिबिध प्रकारी। नवों निशान झुलति दुति भारी ॥ ४१ ॥

---

1. पहले प्रकट की। 2. खजानची। 3. सुखमा, सौंदर्य, शोभा। 4. पगड़ी।

मंगति जन को दरब घनेरा। दियो दान सतिगुरु तिस बेरा।
शोक बिसारि दीन सभि लोकनि। श्री हरिगोविंद करहिं बिलोकनि ॥ ४२ ॥
सभि मसंद मिलि कै चलि गए। श्री गंगा को बंदन किए।
दे आशिख सादर बैठाए। पुत्र समान जानि समुदाए ॥ ४३ ॥
सभिनि जोरि कर अरज़ गुज़ारी। 'सुनहु मात जी! करहु विचारो।
तुरकनि राज तेज अति तपै। इन सन बिगर कहां को छपै ॥ ४४ ॥
चक्करवरति सम फिरहि दुहाई। इक राह लखहु अधिक दुखदाई।
दुतीए खत्री चंदु दिवान। सतिगुर अरजुन जिस घर हानि ॥ ४५ ॥
दुशमन दीरघ दुशट सदोश। करहि बैर पापी अति रोस।
नहिं किस को जिस के उर त्रास। मन भावंति को करहि प्रकाश ॥ ४६ ॥
लोक हज़ारों नित अनुसारी। शाहु समीपे ते बल भारी।
करी प्रतग्या तिस को मारनि। सभि महिं कीनी सपथ उचारनि ॥ ४७ ॥
सो सुनि बैर बधावहि पापी। बिघन करहि को बड संतापी।
साहिब ज़ादे की वय बाल[1]। शसत्र धरनि के परे सु ख्याल ॥ ४८ ॥
चमुं न पास लरहिं रण कैसे। राजहीन ते सैन न ऐसे।
मुलख नहीं धन जहिं ते आवै। किम बलीयनि संग जंग मचावैं ॥ ४९ ॥
खिझहि तुरकपति सुन अस बाती। चारी करहि जरहि जिस छाती।
शाहु दिवान दुऊ बल भारी। फिरहि दुहाई अवनि मझारी ॥ ५० ॥
दोनहुं के बिगरे किस देश। बसहिं जाइ करि, लखिय न लेश।
हम सभि सुनि करि धरि मुख मौन। नहि कुछ बोले सनमुख तौन ॥ ५१ ॥
रावर के समीप जबि आवें। मन प्रसंन ते वाक सुनावें।
तबि तुम बूझहु दिहु समुझाइ।— सुख जुत तिथि, न उपाधि उठाइ ॥ ५२ ॥
देखहु श्री अरजन की गाथा। चल्यो न बसि हुकमीयनि साथा[2]।
प्रथम गुरनि की रीति संभारहु। अपने सेवक सिक्ख उधारहु—' ॥ ५३ ॥

दोहरा

सुनि श्री गंगा ने कह्यो 'कहनि बनहि तिन साथि।
करामात साहिब बली अपर न बस की गाथ[3] ॥ ५४ ॥
सो मैं बूझनि करि भले म्रिदुता जुति समुझाइ।
बरजौं बरजे जे रहे बरजे मन में आइ ॥ ५५ ॥
सुनि मसंद ठांढे भए मसतक टेकि सिधाइ।
श्री गंगा चितवति गुरनि द्रिगजल झलक्यो आइ ॥ ५६ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'स्री हरिगोविंद पग बंधावनि, प्रसंग बरननं नामु एक चतरिंसती अंशु ॥ ४१ ॥

---

1. बाल वय, छोटी आयु। 2. बादशाहों के साथ। 3. और (हमारे) वश की कोई बात नहीं।

अंशु ४२

अकाल बुंगा रचन प्रसंग

दोहरा

वहिर अनंद बिलंद करि श्री हरिगोबिंद चंद।
सुंदर मंदिर को गए मुख मनिंद अरबिंद ।। १ ।।

चौपई

जननी को पिखि मसतक टेका। निकटि बैठि गे जलधि बिबेका।
करि दुलार गंगा कर फेरा। रिदे सनेह अछेह वडेरा ।। २ ।।
'हे सुत ! अबि अलंब सभि केरे। सिख संगति हम तुम दिश हेरे।
नहीं आप गर सेली मेली[1]। रीति बडिन की क्यों करि पेली[2] ।। ३ ।।
चंदु पातकी अधिक बिरोधी। कुटिल कुचाली कलही क्रोधी।
तिस हतिबे प्रण कीनि सुनावनि। सकल जगत कीनसि बिदतावनि ।। ४ ।।
तुरक तेज अबि तपहि महान। महां बली लखि बनूयो दिवान।
मुशकल महां हतनि सो पापी। करी शीघ्रता प्रण महिं आपी ।। ५ ।।
मुख ते कहहु — शसत्र हम धारैं। गुरू पिता को बैर संभारैं —।
अपने घर महिं सुभट न एक। किम रण करिबे धरहु बिबेक ।। ६ ।।
सुनि गंगा ते सतिगुर बोले। 'हतौं पातकी, प्रण नहिं डोले।
जिस नर पित को बैर न लीयो। क्यों जनम्यों जग कायर हीयो ।। ७ ।।
आयुध धरौं चमूं बड करौं। रिपु सन लरौं प्रान तिन हरौं।
श्री नानक नित बनहिं सहाई। हतौं तुरक रण महिं समुदाई ।। ८ ।।
पुन पित सतिगुर आइसु[3] कही। पलटा लेउं तजौं रिपु नहीं।
सेली मेलनि कों नहिं काला। मैं करिहौं संग्राम बिसाला ।। ९ ।।

---

1. डालीं। 2 हटाई। 3. आज्ञा।

नहिं चिंता चित कीजहि माई। हमरे पुरख अकाल सहाई।
रिदे अलप जे अहैं मसंद। सुनि रण को उर धरहिं बिलंद ॥ १० ॥
मैं परबत को गरद मिलावौं। रज कन को सम मेरु बनावौं।
संत बने परताप न जानैं। हतों शत्रु मैं बनि सवधानै ॥ ११ ॥
जबि लगि चंदू दुशट न मारौं। तबि लगि रिदे न शांती धारौं।'
सुनि बल जुकति पुत्र के बैन। गंगा धरी रिदे तब चैन ॥ १२ ॥
इन को क्या समुझावनि बनै। भूत भविक्ख्यति जे लखि मनै।
खान पान करि पुन सुपताए[1]। उठि प्राती जल बिमल नहाए ॥ १३ ॥
ब्रिध के संमत सतिगुर होइ। आइ सुधासर दिशि सभि कोइ।
श्री हरि मंदर बंदन करे। चतुर प्रदच्छन के हित फिरे ॥ १४ ॥
बहुरो आइ दरशनी पौर। पिखि अकाल बुंगे की ठौर।
आइसु दई 'सुथल सुधरावहु। हित बैठनि के चारू बनावहु' ॥ १५ ॥
प्रथम आपने लेकरि हाथ। धरी ईंट बल तेज कि साथ।
कह्यो 'कुछक ऊचा थल करो। जहिं लगि पौर एक सम धरो' ॥ १६ ॥
बहुर हुकम कीनसि फुरमावनि। 'करहु हुकमनामे लिखवावनि।
चहुं दिशि महिं मसंद जहिं भारी। तिन पर आइसु लिखहु हमारी ॥ १७ ॥
जो सिख आनहि शसत्र तुरंगा। होइ खुशी गुर की सुख संगा।
सभि आवैं दरशन हित करिबे। ल्याइं अकोर[2] बिलम नहिं धरिबे ॥ १८ ॥
सुनहि लिखारी कागद लिखे। इस बिधि हुकम भयो तिस ब्रिखे।
'श्री अरजन बैंकुंठ सिधारे। खशटम गुरू महां बल धारे ॥ १९ ॥
थिरे तखत पर दरसहु आए। नीके शसत्र तुरंग मंगाए।
जो आनहि, लहि खुशी बिसाला। नहिं बिलमहु आवहु ततकाला' ॥ २० ॥
पूरब दिशि के नगर बिसाले। दिल्ली बहुर आगरे चाले।
पटणे पुर मखसूदाबाद। कांशी आदिक फरकाबाद ॥ २१ ॥
तिम दक्खन सिक्खी जिस थान। पशचम दिशि के नगर महान।
काबल अरु कंधार पिशौर। गिनौं कहां लगि सिक्खी ठौर ॥ २२ ॥
उत्तर पुरि आदिक कशमीर। गमने शीघ्र सिक्ख जनु धीर।
पंहुचि हुकम नामे सभि थान। पठि मसंद सुधि करी बखान ॥ २३ ॥
सुनि सिक्खन जो गुर की कार। खरच्यो दरब लीनि हथिआर।
चंचल तुरंग मोल करि लिए। गुर प्रसंनता चाहति किए ॥ २४ ॥

---

1. सो गए। 2. धन, भेंट।

जहिं कहिं करि खरीद बिसाले। सभि दिशि ते दरशन हित चाले।
धनी बिलंद मसंद अगारी। गमने संगति सिक्ख पिछारी ॥ २५ ॥
इत सतिगुर सभि कीनि समाजा। बसत्र बिभूखनि पहिरनि काजा।
पोशिश पीत ज़री जुत छाजैं। जामा बडि अभिराम बिराजै ॥ २६ ॥
कलगी जिगा जवाहर जरे। मुकता गुच्छ तिनहुं पर करे
कंचन कंकन हीरनि खचे। कुंडल दमक ज़ेब जुत रचे ॥ २७ ॥
मुकता माल उजाल बिसाला। इक समान गन गिरद सु ढाला।
रचे कोर हीरे बर चीरे। जिन की दमक होति विसतीरे ।' २८ ॥
नवरतने सुंदर बनवाए। नव वर वरण जिनहु अधिकाए।
तथा शसत्र सुथरे समुदाए। भूखन साज नवीन बनाए ॥ २९ ॥
हुकम सभिनि पर गुर करि दीना। साज तुरंगनि बनहि नवीना।
कंचन रजति बिभूखनि बनैं। रेशम डोर ज़री गन सनैं ॥ ३० ॥
सुनि सुनि हुक्म चौंप करि सारे। लगे करावनि कारज त्यारे।
श्री गुर ब्रिध के संमत होइ। गनक हकार्यो नीको जोइ ॥ ३१ ॥
'सुन्दर समा सुधावनि काज। जस कीजहि अभिखेकनि राज।
सुनति हुकम तिनि सोधि सुनायो। श्री सतिगुर आछो दिन पायो ॥ ३२ ॥
जिस ते दिन प्रति वधहि प्रतापा। महां बली शत्रू गन खापा।
दसमी सुदी असाढ़ मझारी। आदितवार तेज बल भारी ॥ ३३ ॥
उद्याचल तुल[1] तखत बिसाला। उदहु आपि जिम दिनकर बाला[2]।
तुरक ताप तम तोम तुरंता। उडगन करन कुकरमनि वंता ॥ ३४ ॥
करहु अद्रिशट इनहु ततकाला। निंदक पेचक दुखद कराला।
जहिं कहिं संतदास अरबिंदा। करहु प्रफुल्लिति हरखति ब्रिंदा ॥ ३५ ॥
चंद चंदुकी[3] लैता करो। अनंद गुरू सिख चकवनि धरो।
कैरव कानन दीखी जेते। पिखि मुरझाइ गिरिहिंगे तेते ॥ ३६ ॥
कही जुगति दिज करी चतुराई। सुनि करि भए प्रसंन गुसाईं।
बखस्यो दरब कितिक तिस बारा। पुन मांगनि नहिं हाथ पसारा ॥ ४७ ॥
पिखि पिखि दास उदार सुभाऊ। रिदे प्रमुदति चौगुनो चाऊ।
तिस दिन की प्रतीखना धारे। सरब वसतु करिवाइसि त्यारे ॥ ३८ ॥
केतिक वसतु बनाइ दिखावैं। सिरजहिं सुन्दर पिखि हरखावैं।
मिलि आपस महिं सुजसु उचारें। धरि शरधा गुर दरस निहारें ॥ ३९ ॥

---

1. सूर्योदय के पर्वत की तरह। 2. बाल सूर्य। 3. चंद्रमा की चाँदनी

'सुन्दर डील सुशील' उचारति । 'आयुध पहिरि महां दुति धारति ।
मन सिक्खनि के प्रेम उपावैं । बिकसति मंद मंद दरसावैं ॥ ४० ॥

सभि चाहति-दिन होइ सु नीका । बैठि गुरू निकसावहिं टीका ।
शसत्र सजाइ बिराजहिं खरे । दुशट जि दोखी गन के हरें ॥ ४१ ॥

दोहरा

सिक्खनि बिखै अनंदता जिम रवि ते अरबिंद ।
क्या करिहैं किम होइ है ? चिंत मसंद बिलंद ॥ ४२ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'अकाल बुंगा रचन प्रसंग बरननं नाम दोइ चत्वारिंसती अंशु ॥ ४२ ॥

अंशु ४३

श्री हरिगोबिंद तखति बैठनि प्रसंग

दोहरा

दिवस प्रतीखति आइगो दसर्मा आदितवार।
गन मसंद करि शीघ्रता संगति संग हज़ार॥ १॥

चौपई

'चलहु पिखहि उतसाहु बिसाला'। जित कित ते आए ततकाला।
अनिक भांति की लए अकोरा। चहुं दिशि ते चलि गुर पुरि ओरा॥ २॥
बरहिं[1] सुधासर दरशन पावैं। मज्जहिं,[2] किरतन सुनि हरखावैं।
संगति मिलि आनी समुदाई। जै जै कार करहिं बहु थाईं॥ ३॥
चहुं दिशि परे सुधासर डेरे। दरशन हित चित चौंप बडेरे।
जाम जामनी ते गुर जागे। सौचाचार करनि तबि लागे॥ ४॥
करि शनान को आसन मारे। निज सरूप महिं ब्रिति थिति धारे।
टिके सच्चिदानंद मझारी। लीनहु सुख होवति भुनसारी॥ ५॥
उदै भयो दिनकर जिस काले। पहिर्यो जामा जिस गन पाले[3]।
छबि उशनीक[4] ससि पर धारी। जिगा बधी ऊपरि दुति कारी॥ ३॥
कलगी मुकता गुच्छ उजाला। मुख मंडल पर कुंडल झाला[5]।
माल बिसाल सुढाल जि मुकता। सब्जे, हीरनि चारु सु युकता॥ ७॥
नवरतने पहिरति छबि पाए। जनु नव ग्रहि तिस के मिस आए।
अंगद सुंदर शोभति ज़ाहिर। जबर ज़ेब जिन जरे जवाहर॥ ८॥
कंकन कंचन के खचि हीरे। छाप छलायनि छबि गंभीरे।
इम सतिगुरु शोभति शुभ अंग। बसत्र बिभूखन उत्तम संग॥ ९॥
गयो मेवरो संगति सारी। 'लिहु दरशन' सुधि कीनि हकारी।
'चौक दरशनी पौर अगारी। पहुंचहु तहिं सगरे नर नारी॥ १०॥

---

1. घुस कर. 2. स्नान करते हैं। 3.जिस के बहुत पल्ले (छोर) थे। 4. दस्तार, पगड़ी। 5. झूलते थे।

सतिगुर दरसहु बांछति पावहु। जो आनी गुर कार चढ़ावहु'।
सुनि सुनि संगति करि चित चाऊ। बसत्र बिभूखन पहिरि सुहाऊ॥ ११॥
सगरे आइ थिरे तिस थान। चाहति—देहिं दरस गुर आनि।
इतने महिं श्री हरिगोबिंद। आए बनि कै छैल बिलंद॥ १२॥
सिक्खनि चख चकोर के चंद। दिनकर मनहुं बदन अरबिंद।
चित चात्रिक के धन मानिंद। बंदति कर बंदहिं नर ब्रिंद॥ २३॥
फरश बिसाल भयो रंगदार। गुरु को रच्यो सिंघासन चारु।
ब्रिध गुरदास बाम अरु दाएं। अपर मसंद सिक्ख समुदाए॥ १४॥
निज महिलनि ते चलि करि आए। पौर दरशनी सीस निवाए।
पुन हरिमंदरि सुंदर गए। दरशनि लै अभिबंदन किए॥ १५॥
पुनह प्रदच्छन करि चलि आए। थल अकाल बुंगे थित पाए।
बैठे आनि सिंघासन चारू। श्री मुख आइसु कीनि उचारु॥ १६॥
आनहु शसत्र जु हम बनवाए। जिनकै हाटिक[1] अधिक लगाए।
दौरति दास उताइल ल्याए। धरे अगारी सभि समुदाए॥ १७॥
पंचहुं सतिगुर को लै नाम। गहे खड़ग द्वै बहु अभिराम।
सो गर बिखैं पाइ गुरु लीने। पुन निखंग कर धारनि कीने॥ १८॥
गर महिं पाइ सु कट बांधा। जिस महिं सर खर करि अरि बाधा।
धनुख कठोर गह्यो तत्रि हाथ। उपमा बनी जथा रघुनाथ॥ १९॥
रच्यो तखत तिस बंदन कीनि। चढ़ि गुरु बीरासन आसीन।
ब्रिध आदिक गुरदास मसंद। अविलोकति बिसमाइ बिलंद॥ २०॥
हाथ जोरि करि बूझन लागे। 'धरहिं खड़ग इक, जे भट आगे।
दोइ आप ले निज गर पाए। इह क्या कारन देहु सुनाए?'॥ २१॥
धरे तेज सतिगुरु बच कहे। 'हम के इस हित जुग असि गहे।
इक ते लें मीरनि की मीरी[2]। दूसर ते पीरनि की पीरी॥ २२॥
मीरी पीरी दोनों धरैं। बचहि शरनि, नतु जुग परहरैं।
सुनि सतिगुरु के बाक अडोले। धरि शरधा लहि अनंद अतोले॥ २३॥
बैठे सतिगुरु तखत सुहावति। सुरगन मैं जिम सुरपति भावति।
कै मुनि गनि मैं रघुकुल चंद। कै जादव महिं क्रिशन बिलंद॥ २४॥
हेरि हेरि इम उपमा गावति। दुह दिशि चामर चारु ढुरावति।
मनहु मराल बिसद उड आवति। मुकता गन पर छुहनि न पावति॥ २५॥

---

1. सोना। 2. बादशाहों की बादशाहत।

दुति अखंड मुख मंडल केरी। तेज बिसाल दिप्यो तिस बेरी।
भयो हुकम 'संगति सभि आवै। चित बांछत ले, भेट चढ़ावै' ॥ २६ ॥
तबि संगति आई समुदाइ। हुम हुमाइ दरशन चित चाइ।
महां भीर भी चौंक मझारा। दरसहिं सतिगुर खरे हजारा ॥ २७ ॥
भई इकत्र समो लखि नीका। उठ्यो ब्रिध कीनसि तबि टीका।
केसर चंदन को तबि सोहा। पिखि मुखमंडल सभि मनि मोहा ॥ २८ ॥
प्रथम ब्रिद्ध ने धरी अकोर। नमों कीनि कर जोरि निहोरि।
बहुरो निकट जि रहैं मसंद। धरहिं भेट बंदति कर वंदि ॥ ३९ ॥
तिन पाछे जे देश बिदेश। जिनके संगति संग अशेश।
ले ले सकल उपाइन आए। धरहिं अगारी भेट बनाए ॥ ३० ॥
दसत्र बिभूखन अजब महाने। बीनि बीनि जग गुर हित आने।
बहुर शसत्र जिन की खरधारा। खरच्यो जिन पर दरब उदारा ॥ ३१ ॥
खड़ग सिपर, बिधि बिबिधि तुफंग[1]। चपल बली तन रुचिर तुरंग[2]।
जमधर[3], तरकश धनुश कराले। खंजर खंडे खर करि भाले ॥ ३२ ॥
तोमर[4], सांगनि[5], खपरे तीरनि। जिनके पिखति अनंद हुइ बीरनि।
शसत्रनि को समूह हुइ गयो। बाजी चपल तवेला भयो ॥ ३३ ॥
दोनों दिशि सतिगुरु रुख करे। परखहिं आयुध गहि करि खरे।
घोरनि मोर मनिंदन हेरें। जिन आने, ले खुशी घनेरें ॥ ३४ ॥
धन दिश नहीं बिलोचन लावें। शसत्र तुरंग संग हरखावें।
दिन जुग जाम बित्यो तिस काल। दरस दीन, सिख कीनि निहाल ॥ ३५ ॥
अनगन चढी उपाइन आगे। अनुरागहिं गुर पग बडभागे।
नौबत खानो बजहि अगारी। सभि को दियो दान तबि भारी ॥ ३६ ॥
ढाडी, भाट, कलावत, चारनि। जग गुर को जसु कीनि उचारनि।
बसत्र, दरब दीने समुदाए। पाइ दान को सभि हरखाए ॥ ३७ ॥
जिह जिह नीको ल्याइ तुरंग। कै खंडा, खर, खड़ग, खतंग।
तोमर, तबर[6], तमांच, तुफंग। सेल, सरासन, सांग, सुरंग ॥ ३८ ॥
तिस को बूझहिं निकट हकारि। करहिं सराहनि असु[7] हथियार।
क्रिपा द्रिशटि को देखति बोलें। 'सुनि सिख ! पाइं सु अनंद अतोलै ॥ ३९ ॥
संगति महिं प्रसिद्ध 'भई बात। 'शसत्र तुरंग ते गुर हरखात'।
जो नहिं ल्याए उर पछुताए। जिनहुं चढ़ाए खुशी सु पाए ॥ ४० ॥

1. कटार, 2. घोड़ा। 3. कटार। 4. नेजा। 5. बरछी। 6. जंगी कुल्हाड़ा। 7. अश्व, घोड़ा।

ढरे दुपहिरे को मन जानि। जथा जोग दे खुशी महानि।
उठि करि अपने महिल सिधारे। तेज तुरंग होइ असुवारे॥ ४१॥

दियो हुकम 'बड बनै तबेला। तुरंग दास गन करो सकेला।
जोधा आइं रहनि को जबै। रखि लेहु हम सों कहि तबै॥ ४२॥

सरब तुरंगनि दीजहि दाना। चपलन चून, घ्रिति मिशटाना।
बाजी कै सुन्दर हथियार। कहि दिहु आवहिं बेचनहार॥ ४३॥

माझे देश दुआवे जावैं। नगरनि महिं सुधि सभिनि सुनावैं।
भट रहिबो चहि, ढिग हम आवै। करहि चाकरी धन को पावै'॥ ४४।

हुते मसंद बिलंद जि ब्रिंद। तिन सों कहि श्री हरगोबिंद।
श्री गंगा माता के मंदिर। गमने तबहि दिपहि दुति सुंदर॥ ४५॥

इति स्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतरथ रासे 'श्री हरिगोबिंद तखति बैठनि' प्रसंग बरननं नाम तीन चत्तवारिंसती अंशु॥ ४३॥

अंशु ४४

गुर बिलास प्रसंग

दोहरा

जननी रिदे प्रतीखती चहि देखनि मुख चंद ।
शसत्र वसत्र संयुकति तिम गे श्री हरिगोविंद ॥ १ ॥

चौपई

देखि दूर ते सुत की शोभा । मनहुं अनंद की आवति गोभा ।
निकटि पहुंच करि बंदन ठानी । आशिख दीनि कही म्रिदु बानी ॥ २ ॥
चत्रति जरी मखमली मढ्यो । अंतर ते दासी द्रुति कढ्यो ।
बैठि मोहिरे पर ढिग माता । बोकी अनंद मेय नहि गाता ॥ ३ ॥
'कहुसुति ! संगति केतिक आई ? । देशनि के मसंद समुदाई ।
ले उपहारनि मिले कि नांही ? । जिम पूरब तुम पित के पाही ? ' ॥ ४ ॥
श्री हरिगोविंद सकल बतायो । ब्रिंद मसंदनि को सभि आयो ।
अधिक दूर नहि पहुंचे जोई । आवति चले चितहुं सभि कोई ॥ ५ ॥
शसत्र बसत्र अरु चपल तुरंग । आने सिक्खनि शरधा संग ।
अधिक प्रसंन कीनि मन मोरा । किन हत्थ्यार दीनि, किन घोरा ॥ ६ ॥
सैन सकेलैं केतिक दिन मैं । जोधा अचल रहहिं जे रन मैं ।
अपर उपाइन के अंबार । सिक्खनि अरपी शरधा धारि ॥ ७ ॥
श्री नानक सिक्खी बिदताई । देश बिदेशनि अविनी छाई' ।
सुनि माता मुख पाइ घनेरा । —गुरूता भार उचित सुत मेरा ॥ ८ ॥
दुइ शमशेर गरे शम शेर । कट निखंग कर महिं धनु हेरि ।
शसत्रन सहत डील बर बंका । सुखद सेवकनि रिपुनि अतंका ॥ ९ ॥
निकट मात के केतिक काला । नमो करि उठि आइ क्रिपाला ।
निज बैठिक महि थिरहिं प्रयंका । शसत्र उतारि गुरू अकलंका ॥ १० ॥
दुइ घटिका लगि सुख महिं आए । बहुर उठे लोचन बिकसाए ।
सुक्खा छक सुचेत पुन होवें । चढि तुरंग पर बाहर जोवें ॥ ११ ॥

करहिं अखेरब्रित्त[1] की लीला। धरहिं शसत्र करि अंग छबीला।
आइ अकाल तखति पर सोहैं। लगहि दिवान पिखहिं मन मोहैं ॥ १२ ॥
सोदर चौंकी शवद सुनंते। संगति आइ रूप दरसंते।
बहुर जाइ निज महिल मझारा। अनिक स्वाद के अचहिं अहारा ॥ १३ ॥
जाम गए जामनि सुपतावें। रहे जाम उठि सौचि नहावें।
इसि बिधि करि हैं नित विवहारू। दिन प्रति वली होति दुति चारू ॥ १४ ॥

माझे द्वाबे देश मझारी। सुधि पसरी सतिगुर की सारी।
'भए शसत्र धारी बलि भारी। सैन सकेलनि करति उचारी' ॥ १५ ॥
सुनि दोनहुं देशनि के जोधा। लरहिं मरहिं मारहिं धरि क्रोधा।
इकठे होइ चार सै सूर। हेतु जीविका आइ ह्दूर ॥ १६ ॥
थिरे तखत पर सतिगुर हेरे। सभिहिनि बंदन करि तिस वेरे।
बैंठे नहीं खरे सभि रहे। पिखि श्री हरिगोबिंद वच कहे ॥ १७ ॥
'अहैं कौन ? इन बूझनि करो। ठांढे कौन मनोरथ धरो ?'।
जाइ मेवरे बूझनि कीने। 'कौन देश ते आइ नवीने ? ॥ १८ ॥
ठाँढे रहे कहहु निज काजा। पूछति आप गरीवि निवाजा'।
हाथ जोरि करि दीनि सुनाए। 'हेत जीवका हम चलि आए ॥ १९ ॥
दोनहुं देशनि के हम वासी। चाहति रिदे रहनि गुर पासी।'
आनि हजूर करी अरदास। 'बिति[2] हित चहति रहति तुम पास ॥ २० ॥
तवि सतिगुरु के सभि बिधि जानी। —जनम धर्यो सुरगन जग आनी।
ब्रिंद ग्राम पुरि महिं समुदाए। बहु जातिनि के घर जनमाए ॥ २१ ॥
दिज, बाहज, बिट[3], शूद्रनि धामू। लीनसि जनम हमारे कामू।
सो अबि सुधि करि सभि चलि आए। हनहिं तुरक गन जंग मचाए ॥ २२ ॥
कर्‌यो हुकमु सभिहिनि लिहु राखि। देग त्रिखै दिहु भोजन भाखि।
निकट बुलाइ बिलोकनि करे। नई बैस सभि की बल भरे ॥ २३ ॥
किस के शमस[4] अलप ही आई। किस के नहिं, इक सम समुदाई।
बीस पचीसनि बैस शरीर। शसत्र सु बसत्र नहीं किस तीर ॥ २४ ॥
जिनको तुरक गवार कहंते। नहिन चाकरी हेतु रखंते।
सभि सतिगुरु सो राखनि करे। बसत्र शसत्र दे शुभता धरे ॥ २५ ॥
रहनि लगे सतिगुर के तीर। आयुध बिद्या नित करि बीर।
खंडे खड़ग तुफंग कमान। सभि को दे कीने सवधान ॥ २६ ॥

---
1. आखेट-क्रीड़ा। 2. उपजीविका। 3. ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य। 4. दाढ़ी।

बहुरो बखशे सभिनि तुरंग। हुइ असवार चढहिं नित संग।
वहिर अखेर गुरू जबि जावें। आयुध बिद्या तिनहि सिखावें ॥ २७ ॥
दिन प्रति वहिर अखेर करंते। तीर तुफंगनि ब्रिंद घुटंते।
बाज, कुही, जुररे, बड स्वान। चीते स्याहगोश बलवान ॥ २८ ॥
लगर, झगर, शिकरे, गन संग। करहिं अखेर धवाइ तुरंग।
शसत्र धरनि को सुजसु उदार। फैल्यो सगरे देश मझार ॥ २९ ॥
सुनि अबदुल ढाढी चलि आयो। भए सुभट तिन को जसु गायो।
जिस के सुनति बीर रस जागे। काइर[1] सोपि लरे नहिं भागे ॥ ३० ॥
निज सुभटानि सुनावनि कारन। करहिं जंग जैसे बड दारुन।
अबदुल को चाकर करि राख्यो। दरब दिवाइ मसंदनि भाख्यो ॥ ३१ ॥
बली तुरंग दियो हित चरिबे। सुभटनि वारि सुनावनि करिबे।
इमि दिन प्रति गुरु सैन सकेले। संगति गन पहुंचहिं करि मेले ॥ ३२ ॥
वध्यो समाज अधिक सभि भांती। सुनि पिखि माता सीतल छाती।
आइ उपाइन पूजा होते। बड पीरनि के पीर उदोते ॥ ३३ ॥
चढें सैन संग सुभट प्रबीन। इहि मीरनि की मीरी लीनि।
आइं अकोरें शसत्र तुरंग। अधिक चमूं ब्रिधति चढि संग ॥ ३४ ॥
जलति अगारी बजहि निशाना। झंडा झूलति खरो महाना।
दिन प्रति उतसव होति नवीने। बडे भाग जिनि देखनि कीने ॥ ३५ ॥
दीपमालका बहुरो आई। चहुंदिश ते संगति उमडाई।
मज्जन करहिं सुधासर मेले। खशटम सतिगुरु पिखहिं सुहेले ॥ ३६ ॥
बाजी शसत्र भेट ले हरखति-। यांते ल्यावति नीके परखति।
प्रिथक होति पूजा हरिमंदर। बैठहिं तखति आप बनि सुंदर ॥ ३७ ॥
गन मसंद संगति संग लीए। बंदन करहिं दरस चित दीए।
दक्खन दिश ते किस महिपाला। इक राज भेज्यो बली बिसाला ॥ ३८ ॥
शसत्र तुरंग ब्रिंद तबि आए। पुरे भावनी गुरु अरपाए।
श्री हरिगोबिंद रिदे बिचारें। —सिक्खनि बिखै रीति अबिडारें ॥ ३९ ॥
तिसि कारन ते बाक उचारा। 'गुरूपिता हित कीजहि त्यारा।
इक हाथी अरु पंच तुरंग। शसत्र बसत्र बहुबिधि के संग' ॥ ४० ॥
खरे होइ करि तखत अगारी। पिता ध्यान को धरि तिस बारी।
ले करि हुकम खरो गुरदास। कहि गुरु नाम कीनि अरदास ॥ ४१ ॥

---

1. कायर।

अरपी वसतू लीनि संभारी। गज ढाढी को हित असवारी।
ले तिन सुजसु गुरू को कर्यो। 'तीन लोकपति प्रभु अवतर्यो'॥ ४२॥
बहुर गए सतिगुरु हरिमंदिर। बसत्र तुरंग दिए बहु सुंदर।
श्री मुख ते फुरमावनि कीने। 'जो इह रीति करहि सिख चीने॥ ४३॥
अरपहि वसतु जि म्रितक पिछारी। होइ अखै फल बहु तिसि वारी।
प्रापति सुख परलोक मझारा। मिटहि सजाइ अघी[1] हुइ भारा॥ ४४॥
करहि रीति सिख ह्वै जि हमारो। जथा शकति अरपहि सुख भारो'।
निज पित हित के मिसि बिदताई। जिम सिक्खनि को हुइ सुखदाई॥ ४५॥
'धंनि धंनि'[2] सभिहूनि उचारी। महां बली सतिगुर उपकारी।
अधिक चमू कीनि निज संग। बखशे आयुध ब्रिंद तुरंग॥ ४६॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतरथ रासे गुर बिलास प्रसंग बरननं नाम चतुर चत्त्वारिंसती अंशु॥ ४४॥

1. पापी। 2. धन्य, धन्य।

अंशु ४५

श्री गुर बिलास प्रसंग

दोहरा

गुरू गरीब निवाज तबि नाम अपन बिदताइ ।
राखे संग गरीब जन बखशिश दे बडि आइ ॥ १ ॥

चौपई

विद्या शसत्रनि की बहु पाई । तुपक चलाइ तुरंग धवाई ।
तोमर हतहिं खतंग प्रहारहिं । हित अखेर बन जीव संवारहिं । २ ॥
धौंसा धुंकारति पुन आवैं । आवति को नर देखनि धावैं ।
सुनहिं सुजसु हरि बेहित सूर । दूरि दूरि ते आइं हदूर ॥ ३ ॥
कबहुं पच कबि दस को राखैं । परहिं शरनि जे बिति अभिलाखैं ।
दया करहिं बखशहिं सुख सारो । वसत्र शसत्र असु रुचरि अहारो ॥ ४ ॥
गुरु उपकार जानि करि बीर । मन ते अरप्यो सरब सरीर ।
जहिं गुर को कारज बनि जाइ । मारनि मरनि बिखै मुदपाइं ॥ ५ ॥
कहैं परसपर जोधा अैसे । 'हमहिं मिले पति रघुबर जैसे ।
सरब म्रिगनि ते जोनी हीन । को कारज कबि बनहि किसी न ॥ ६ ॥
अस बानर बन महिं गन हेरे । तिन पर करुना धारि घनेरे ।
महांबली रावन दससीस । प्राक्रम गरब हर्‌यो मिलि कीस ॥ ७ ॥
तिन सम सभि बातनि ते हीन । क्रिपा द्रिशटि हम पर गुरु कीनि ।
जो कहिवाइ जहान पनाह[1] । तिन के संग जंग की चाह ॥ ८ ॥
हीन जुन बानरनि समान । जे न करहुगे रण घमसान ।
तौ कीसनि ते हीन अहै को । जिस की समता हमहि कहै को ॥ ९ ॥
रण महिं न्रिभै शत्रु गन आइ । हतहु शसत्र, गुरु संग सहाइं ।
इम आपसि महिं कहि प्रण करैं । अधिक बीरता को उर धरैं ॥ १० ॥
वहिर अरूढहिं गुरू सुनावैं । 'तुमरे हुकम ओज[2] दिखरावैं ।
अरप्यो रावर[3] के पग सीस । तुमहि प्रवाह व हे जगदीश ! ॥ ११ ॥

1. जहांपनाह । 2. शक्ति, जोश । 3. आपके ।

दुहि लोकनि की चहिं कल्यान। परे शरनि रावर की आनि।
इस बिधि बहुत बीर रस वधे। आयुध क्रिया को नित सधे।। १२।।
जोधा ब्रिंद बिलंद अनंदति। गुर सुखकंद बंदि कर बंदति।
सरब दरब ले सदन पुचावैं। भोजन देग बिखे नित खावैं।। १३।।
शसत्र बसत्र बखशहिं भट गन को। जो अभिलाखति मन महिं रन को।
इम नितप्रति अति चित उतसाहति। चमूं सहत गुर कानन गाहति।। १४।।
छोरहिं बाज बिहंग पकरावैं। स्वाननि ते म्रिग ससा गहावैं।
गन जोधा आयुध ते मारहिं। करहिं अखेर जीव संघारहिं।। १५।।
जिम रघुवरु गनु सैन सकेले। सरजू तीर अखेर सु खेले।
गन जादव को संग चढाइ। जथा क्रिशन कानन फिरि आइ।। १६।।

अपर महां धरमातम राजे। बिचरे बन अखेर ब्रित काजे।
तिम श्री सतिगुरु हरिगोबिंद। करहिं शिकार बिहार बिलंद।। १७।।
चमूं चढ़हि, नभ महिं रज छावै। छुटैं तुफंगनि शब्द उठावैं।
महां कुदाइ पलाइ तुरंग। अस शोभति जनु जाहिं कुरंग।। १८।।
दिन प्रति सतिगुर चारु शरीर। बल जुति वधहि रिदे बहु धीर।
चरन बिलंद म्रिदुल अरबिंद। नख सुँदर जुति अंगुरी ब्रिंद।। १९।।
एडी जुकत अरुण है बरण। गुलफ उतंग सुभोपरि चरण।
जानूं जंघ महां दिढ होए। मनहु ओज के थंभ खरोए।। २०।।
आयुन छाती अतिशै गाढे। बज्र कपाट कठनि रिपु ठांढे।
उदर सत्रिवली सुंदर सोहति। नाभि गंभीर दिखति चित मोहति।। २१।।
बाहु अजान सु अस अमानुनो। शुभति करीकर[1] बली महानो।
दिपति प्रचंड बडे भुजदंड। मनहु बज्ज्र के इह जुग खंड।। २२।।

तुंग सिकं धनि ते बहु छैल। जिम क्रिखिचर सूंनो बडि बैल।
ग्रीवा[2] सवा गिलशति उचेरी। मुकता हीरनि दिपति घनेरी।। २३।।
चिबुक[3] चारु चौरी कुछ गोल। सुंदर दमकति जुगल कपोल[4]।
अधर म्रिदुल अरु लाल बिसाला। हीरनि पंकति दंत उजाला।। २४।।
मुसकावति ऐसे दमकावति। संपुट ब्रिद्द्रम कली लखावति।
मुख मंडल आयुत दिपतावै। कमल प्रफुल्यति महत लखावैं।। २५।।
सारद चंद[5] मनो सुख कंद। बचन सुधा श्रवते गन बुंद।
दीरघ दरशन देखति भावै। करि नासका तुंग सुहावैं।। २६।।
कुंडल करन जराऊ बने। डोलति रुचिर. लाइ धन घने।
कमल पांखुरी चारु सरीखी। आंखि बडी जुग तीखी तीखी।। २७।।

---

1. हाथी की सूंड, 2. गर्दन, 3. ठोड़ी, 4. गाल, 5. सर्दी का चन्द्रमा।

बरनी[1] कुटिल, कोर सम बाना। तिरछी चितवन क्रिपा निधाना।
दुंदभि सुर सों शबद गंभीर। उपदेशति सिक्खनि बर बीर ॥ २८ ॥
त्रिकुटी कुटिल कमान समाना। भर्‌यो भाग ते भाल महाना।
मेचिक चिक्कनि केस विशेश। सिर उशनीक सुहाइ अशेश ॥ २९ ॥
कलगी जिगा ज़ेब जिन जाहर। जबर जोति जगमगति जवाहर।
सरब बिभूखन भूखति भारे। बरण बरग बर बसत्र सुधारे ॥ ३० ॥
धनु विद्‌या अभ्यास कमावैं। कहि कहि खपरे तीर घरावैं।
धरि धरि मारहिं दूरि निशाना। बडे बेग ते छूटहिं बाना ॥ ३१ ॥
चांप[2] कठोर कहति बनिवावहिं। बड बल करि जों चऐयो जावहि।
समत एक बितहि पुन कहैं। धनु दुगनौ दिढ कर महिं गहैं ॥ ३२ ॥
जंगी तीर फुलादी खपरे। कहि कहि ब्रिद करावहिं अपरे।
हेरि हेरि तीखन बड तीर। श्री सतिगुरु हरिगोविंद धीर ॥ ३३ ॥
—तुरक शत्रु गन अंग मझारा। मम कर ते प्रविशहिं किस बारा।
कलहुं जंग महिं होइ निसंग। करौं प्रहारनि खरनि खतंग ॥ ३४ ॥
कबि तुफंग को गहे चलावैं। मारि लच्छ को तरे गिरावैं।
मुंगरी गहि भारी को फेरहिं। अनिक वारि बाहनि ते प्रेरहिं ॥ ३५ ॥
सरब नरनि ते डील बडेरो। नहिं सम अपर कहूं कित हेरो।
भुजा जंघ आदिक अंग सारे। करहिं सराहनि मिलहिं निहारे ॥ ३६ ॥
दूरि दूरि के मानव आवैं। करि दरशन मन बांछति पावैं।
पिखि सरूप को मन बिरमावैं। मिलि आपिस महिं कहैं सुनावैं ॥ ३७ ॥
'अविनी[3] पर शरीर नर कोई। अबि तो नहिं न, भविख्य न होई।
आयुध धरनि उचित बल भारे। रण महिं रिसहिं जि शसत्र प्रहारे ॥ ३८ ॥
को अस शत्रु करहि न तरासा। हनैं मुशटते करहिं बिनाशा।
सुनी कथा द्वापुर महिं भए। पांडव पंच महां बलि थए ॥ ३९ ॥
हुते समेत सि नर जु प्रमाने'। तिन ते सवा गिलशति महाने।
पंचहुं भ्राता डील बडेरे। जिन को बल कही अति बहुतेरे ॥ ४० ॥
तिम इस समें जु नरनि प्रमान। श्री हरिगोविंद तिते महान।
ऐसो डील सुशील बिसाला। नहिं पय्यत[4] जग में इसकाला ॥ ४१ ॥
अजहु सरीर वधहि बहु बरखनि। तरुनि अवसथा लगि हुइ परखनि'।
दरशन करहिं जांहि जिस देश। कहैं सुजसु अरु डील विशेश ॥ ४२ ॥
आयुध विद्‌या की अभ्यास। परचहिं सतिगुरु करहि बिलास।
तिम ही सुभट संग गन करैं। धनुख तुफंगनि को कर धरैं ॥ ४३ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे 'श्री गुर बिलास' प्रसंग बरननं नामु पंच चतवारिंसती अंशु ॥ ४५ ॥

---

1. बरौनियाँ। 2. धनुष। 3. पृथ्वी 4. नहीं मिलेगा।

अंशु ४६
चंदू को प्रसंग

दोहरा

श्री गुर हरिगोविंद जी इस विधि समो बिताइ ।
भर्यो महां बल देहि महिं दीरघ डील सुहाइ ।। १ ।।

चौपई

उत चंदू की सुनो कहानी । महां पातकी मति उरि हानी ।
श्री अरजन घर तज्यो सरीर । दे करि दोष मूढ सिर, धीर ।। २ ।।
उर महिं उरपति दुशट महांन । —इम नहिं बिदतहिं बीच जहान ।
'श्री सतिगुरु चंदू नै मारे । छपी रहै, नहिं होइ उघारे ।। ३ ।।
नुखा जारि[1] ततछिन मग पर्यो । दिली शाहु निकट चित धर्यो- ।
को नहिं कहहि हटक सभि राखौं । किस धन दे किस बिनती भाखौं ।। ४ ।।
चहति जु हत्यो बिदति नहिं होइ । भयो जतन के ततपर सोइ— ।
अनिक भांति चितवति मग जाते । —सुनति शाहु चित ह्वै न रिसाते ।। ५ ।।
पहुंच्यो पुरी सदन तबि गयो । कलहिसुता[2] देखति दुख भयो ।
जिस हित पाप कीनि बहुतेरा । तऊ न तिस को सुख किम हेरा ।। ६ ।।
जहांगीर के तीरजि जाइं । सभि सों मिल्यो प्रेम उपजाइ ।
बहु मोला किस हूं पट देति । काहुं कुशामति करि खुशि लेति ।। ७ ।।
किस हूं दरब दीनि हरिखावै । फेर घेर ते बात जनावै ।
'मर्यो गुरू अरजन लवपुरि मैं । निस हैजा हुइ गयो उदर मैं ।। ८ ।।
शाहु समीप न करहु प्रसंग । जे दल परहि कहहु इस ढंग ।
को को नाम लेति हे मेरो । तुम ढिग कहै झिरक दिहु फेरो ।। ९ ।।
होइन अस सुनिकै पतिशाहू । मुझ पर कोप करहि उर माहू' ।
नर सभि सभा कोर अपनाए । त्रसति जतन चितवति समुदाए ।। १० ।।
मिल्यो शाहु के पास पहूचा । सुजसु उचारति भा तिहमूचा[3] ।
नहिं सतिगुरु की किनहुं सुनाई । अपर प्रसंगनि बात चलाई ।। ११ ।।

1. पुत्रवधु का दाह करके । 2. कलह रूपी पुत्री । 3. अत्यधिक ।

सने सने मन त्रास बिसारे ।
इम नितप्रति रहि शाहु अगारे । चंदू घर गुरु तन तजि दयो ॥ १२ ॥
सिक्खनि बिखै बिदत बहु भयो । ‘चंदू घर गुरु तन तजि दयो ॥ १२ ॥
तऊ डरति नहिं सकति उचारै । मिलैं परसपर अघी धिकारैं ।
सने सने कहि आपस मांही । ‘कौन महां अघ पचहि सु नांही ॥ १३ ॥
श्री हरिगोबिंद गुर सुत बली । तिन हूं प्रण कीनसि बिधि भली ।
पितकौ बैरि लेइ हौं ऐसे । हरौं दुशट अपजसु जुति जैसे ॥ १४ ॥
हलति बिखै करि आनन कारा । तथा पलति महिं जाइ दुखारा ।
हित हतिबे[1] बहु सपथ करी है । सरब सभा के श्रवनि परी है ॥ १५ ॥
देश विदेश बिखै बिदताई । -सतिगुरु हतहिं न तजहिं कदाई-’ ।
केतिक सिख तिन महिं जो स्याने । मरनो कठन चंदु को जाने ॥ १३ ॥
‘शाहु दिवान हुकम जग चाले । किम पकरनि इह बनै सुरवाले ।
लोक हजारहुं मानैं बैन । बैठे पिखहिं समुख तिस नैन ॥ २७ ॥
सतिगुर सुत की बैस नवीना । बिनां बिचारे प्रण को कीना ।
शाहु संग को सकहि बिगार । राज करति जग कोस हज़ार ॥ १८ ॥
अनगन[2] सैन कोश जिस पास । जहिं जहिं रह्यो प्रताप प्रकाश ।
तिस दिवान को मुशकल पकरनि । हम इह करहि बिचारनि को मन ॥ १९ ॥
केतिक सिक्ख कहैं फिरतांहि । ‘सकल शकति है सतिगुर मांहि ।
करहिं रंक को गऊ बिसाल । गऊ रंक ततछिन वच नाल ॥ २० ॥
अनबन को ततकाल बनावैं । बनी बात को बहु बिगरावैं ।
जावत अज़मत नहिं बिदताइं । तावत नर समक्रिती कराइं ॥ २१ ॥
करामात रोकनि मत घनो । निर बिवहार करैं नर मनो ।
जबि चाहैं निज प्रण निरबाहनि । भावति करहिं रुकहिं किम नांहिन ॥ २२ ॥
छटम गुरु श्री नानक रूप । जिन के सुंदर चरित अनूप ।
जिस गुर अरजन के गन दास । करामात बहु भांति प्रकाश ॥ २३ ॥
तिस गुरु अपर नरन सम प्राना । रिपु घर तजि बैकुंठ पयाना ।
तिन को सुत तिन के सम अहै । जोति सभिनि गुर एको रहै ॥ २४ ॥
हमरे तुमरे देखति करैं । बडि दुख दे रिपु प्राननि हरैं ।
हमको निशचै इह बिसवास । चंदू हतहिं शाहु के पास ॥ २५ ॥
इस सिख मिलि करि बचन उचारैं । उर शरधा धरि, कोइ न धारै ।
बिथरति सुधि चंदू तबि सुनी । बहुत बिसूरति मुंडी धुनी ॥ २६ ॥

1. मारने के लिए । 2. अगणित ।

गुर सुत भयो महद बलवाना। तुव हतने हित प्रणं बखाना।
बहुत सपथ खाई सुनि करिकै। हतहुं कुम्रितु शत्रु को धरिकै- ॥ २७ ॥
केतिक बदरख बिते दुख भरै। गिनती चिंता बहु बिधि करै।
हरि गुविंद को गहि करि कैसे। देऊं सजाइ हतौं पित जैसे ॥ २८ ॥
को मानै मम दुहिता व्याह। कै डरपै है अबि उर मांहि।
पित की गति को रिदे बिचारहि। हुई सनबंध सरब डरु डारहि - ॥ २९ ॥
इक दिन निज दारा के संग। कह्यो गुरु को अखिल प्रसंग।
'बहु सजाइ दे रह्यो मनाइ। नहीं व्याहु सुत मन महिं ल्याइ ॥ ३० ॥
अबि तिह सुत पित वैर संभारै। मोकहु चाहति करनि संघारै।
भागहीन दुहिता अस भई। अखिल जाति महिं मम पत गई ॥ ३१ ॥
इतने जतन करे बहुतेरा। ब्याहु न बन्यो कतहुं इस केरा।
सुनति भारजा ने समुझावा। 'प्रथम कुवाक आप तैं गावा ॥ ३२ ॥
तिस ते वध्यो बिरोध बिसाला। सिख की सुता नुखा किय काला[1]।
जगत गुरु तिन मान बडेरा। नहीं सहार सके बच तेरा ॥ ३३ ॥
अबि भी तिस को पुत्र बिलंद। सुनो नाम श्री हरि गोबिंद।
करहु संधि जैसे बनि आवै। मानै व्याह सदन ले ज़ावै ॥ ३४ ॥
बिनै करहु भेजो कर जोरि। तजहु दिवानी को उर जोर।
मान लेहि इम जतन रचीजहि। आछे नरनि पठावनि कीजहि ॥ ३५ ॥
जो प्रसंन जिम किम तिन करै। जिस ते पिता बैर को हरै।
नतु तुरकेशुर को बिस्वास। कहां करति है, तजि उर आस ॥ ३६ ॥
पठहु बिनै भनि सुता सगाई।' सुनि त्रिय[2] ते चंदू चित आई।-
आछी कहे करनि इम बनै। जे अबि व्याहु करनि मन मनै ॥ ३७ ॥
इक तौ सुता पाइ पति भारी। मिटहि दोश जौ रहिन कुमारी।
दुतीये मारनि हेतु उपाइ। बहुर न करहि, त्रास मिटि जाइ ॥ ३८ ॥
घर ते निकसि सभा महिं आयो। गुरु दिशि चिंता महि चित लायो।
जुग आछे नर कीनसि त्यारू। लिखी पत्रिका हाथु बिसतारू ॥ ३९ ॥
'बैर अकारण पिता तुमारे। मो मन बांध्यो किसहुं उचारे।
इह जि रंक सिख तुम ढिग आवैं। कछू बात ते कछू बनावैं ॥ ४० ॥
जानि देहु अबि ज्यों क्यों होई। भावी[3] मेट सकहि नहिं कोई।
क्रोध बसी हुई क्या न करंता। लोभी गुन अवगुन न लखता ॥ ४१ ॥

---

1. मर गई। 2. पत्नी। 3. होनी, जो कुछ होना था, सो हो गया।

इह मम सुता करहु निज दासी। जसु जुति ब्याहु लिजावहु पासी।
दोनहुं दिशि ते मिटहि कलेशू। हम तुम साक आनंद विशेशू ॥ ४२ ॥
भली बात तौ मानहु ऐसो। संधि ब्याह करि जैसे कैसो।
जे करि पित को बैर संभारो। मुझ को हतिवे हेत उचारो ॥ ४३ ॥
तौ सुनि लेहु जथा मैं लह्यो। तुव पित मोकहु कूकर कह्यो।
लग्यो गैल मैं ह्वै कै स्वान। हट्यो तबहि करि प्रानन हानि ॥ ४४ ॥
नहिं आगे मेरो बल जाने। तबहि मरन भा लेहि पछाने।
अबि तौ जानि लियो निरधारे। तजहु बैर शुभसंधि बिचारे' ॥ ४५ ॥
तबहि दूत निज निकट बुलाए। त्रिदुल ठिठुर बच कहि समुझाए।
'मोहि प्रताप सुनावहु महाँ। त्रास धरहि उचरहु तिम तहां ॥ ४६ ॥
ज्यों क्यों नाता दे करि आवहु। करहु काज धन मुझ ते पावहु।
शाहु दिशा ते त्रास दिखावहु। —क्यों बिन कारन द्रोह कमावहु-॥ ४७ ॥
उकति जुकति की करि चतुराई। करहु मनावनि सुता सगाई।'
इत्यादिक बहुते समुझाए। अपर बहुत नर संग पठाए ॥ ४८ ॥
चले बहिल पर ह्वै असवार। कितिक पिआदे गमने लारि।
निस बिसरामहिं दिवस पयानहिं। ग्राम नगर उलंघे बहु थानहि ॥ ४९ ॥
सत्तुद्रव सलिता ह्वै करि पार। चले बिपासा तरि कै बार।
पंथ सरब उलंघ्यो नित चाले। पिख्यो सुधासर नगर बिसाले ॥ ५० ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'चंदू को' प्रसंग बरननं नाम खशट चत्तवारिंसती अंशु ॥ ४६ ॥

अंशु ४७

दूत आवनि जाइ प्रसंग

दोहरा

चंदू पठे जु दूत निज प्रविशै पुरमहि आइ।
करि निवेस[1] किस थल भले वसतू अखिल टिकाइ।। १ ।।

चौपई

लए नीर कर चरन पखारे। पहिरे बसत्र मोल जिन भारे।
सतिगुरु की सुधि सुति करि कान। 'अहैं अकाल तखत के थान।। २ ।।
आनि पहूचे बीच दिवान। बैठे सुभट[2] ब्रिंद सवधान।
तोमर, तुपक, तीर, तखार। सैफ, सैहथी, सेल संभारि।। ३ ।।
सिपर सरोही सांग धरंते। शसत्र बसत्र ते अधिक सुभंते।
स्त्री हरि गोविंद तखत बिराजे। बिरद[3] निबाहनि लोचन लाजे।। ४ ।।
जुग गर महिं सोभति शमशेर। जो रिपु को दाहन सम शेर।
धनुख निठुर बड धर्यो अगारी। फेरति सर चुटकी कर धारी।। ५ ।।
क्रिपा द्रिशटि सिक्खनि पर करते। कबि कबि फेरति तीर निहरते।
प्रभु की प्रभुता पिखि बिसमाए। तेज बिसाल सह्यो नहिं जाए।। ६ ।।
त्रसति रिदे गुरु निकटि पधारे। पद अरबिंद बंदना धारे।
पुन पाती धरि दीनि अगारी। 'पठी दिवान समीप तुमारी।। ७ ।।
देखति श्री मुख ते फुरमायो। पढ्यो पारसी निकट बुलायो।
'करहु सुनावनि क्या लिख भेजा। करकति जिनके नाम करेजा।। ८ ।।
रिसि[4] ते सुलगति है नित छाती। अबि क्या कहि भेज्यो लिखि पाती ?'।
खोलि पठ्यो मतलब सभि जाना। गुरु बोले करि ऊच बरवाना।। ९ ।।
म्रिदुल कठोर जि बाक सुनाए। सकल लोक सुनिही चित लाए।
आशै कौरा मधुर कहिन को। -जिस क्रिम करिले पान ग्रहिन को।। १० ।।

---

1. डेरा। 2. शूरवीर। 3. यश, कीर्ति। 4. गुस्सा।

सुनी पिता की बात महाना। -मैं इम करे प्रान तिनहाना।
गैल लग्यो कूकर की न्याई-। सुनति गुरु के रिस उर छाई॥ ११॥
'सुनहु दूत मम कह्यो सुनावहु। -क्यों एतिक चित महिं गरबावहु?
समां समीप आइ अबि गइऊ। कितिक काल तुव प्राननि छइऊ॥ १२॥
शांति रूप गुर पिता हमारे। नहिं रिस धरि वच दंड प्रहारे।
कूकर गैल भौंकतो तावति' हतनि न दंड प्रचंडहि जावति॥ १३॥
पित को पलटा नहिं नर लेति। सो नर नहिं, पसु मंद अचेति।
केतिक तुव ते ह्वैं तकराई[1]। करि लीजहि बहु चितव उपाई॥ १४॥
हतौं कुत्रितु तोहि को ऐसे। हलत पलत बड संकट जैसे।
करी प्रत्तग्या तैं सुनि लीनि। करौं साच साच सो लिहु मन चीन॥ १५॥
श्री गुरु अरजन को अपराधी। सभि साधनि को तू सम व्याधी[2]।
सकल संत हेरति दिशि मेरी। कहि वच करहिं भसम की ढेरी॥ १६॥
अस पापी को त्यागहि कौन। करहिं विनाशन तुव जुति भौन।
श्री अरजन को रुख सभि देखे। भए छिमी रिस खोइ विशेखे॥ १७॥
तूं मूरख क्या कहि गरबावैं। केतिक दिन महिं अबि फल पावैं।
बचहिं न हुइ सुरइशति रखवारो। अनरनि की गिनती क्या धारो॥ १७॥
संतन के बन महिं बिन त्रास। करति खोट बडि फिरति हुलास।
जौ लगि बली केहरी दारुन। मिलि करि करति न प्रान विदारन-'॥ १९॥
सुनि कर जोरि दूत पुन कहै। 'सदन गुरू नानक को अहै।
करहु छिमा सनबंध बनावहु। बनहि हीन जिन दुहिना ल्यावहु॥ २०॥
कर जोरहि अरु सीस निवावै। रहै अधीन सु सेव कमावै।
जिस हित एतिक बध्यो बिरोधे। दुहि दिशि महि अतिशै चित क्रोधे॥ २१॥
सो तुम ब्याहु लेहुगे जवै। मिटहि कलेश तुरत ही तवै'।
सुनति गुरू बोले धरि क्रोधं। 'इह तुम कहां कहति बिन बोधं॥ २२॥
चंदू कुटंब कुमुद समुदाइ। गुरु सूरज सभि को मुरझाइ।
जे अरबिंद मनावहु तिनै। गुरु तुखार[3] दुखदायक बनै॥ २३॥
जावति चंदू के तन प्रान। हमहिं न शांती होवति आनि।
रुचि सों खान न पान न सोवनि। नहिं सोहति चिंता चित खोवनि॥ २४॥
जे करि पशचम सूरज उदे। अगनि चंद्रमां श्रवहि जि कदे।
पंख लगाइ मेरु उडि जावै। थिरा[4] अथिरा, समुंद सुकावहि[5]॥ २५॥

1. शक्ति। 2. संकट, रुकावट, बाधा। 3. बर्फ़। 4. पृथ्वी। 5. सूखना।

इत्यादिक सभि हुइ बिप्प्रीत। तऊ न व्याह करहिं किसि रीति।
जिस ने पिता हत्यो बिन त्रास। मैं चाहौं तिस करनि बिनाश ॥ २६ ॥
तिस सों कहु कैसो सनबंध। हतनो बनहि तांहि मति अंध।
बहुर न ऐसी बात सुनावहु। पत्त समेत निकेत[1] सिधावहु ॥ २७ ॥
हम दिशि ते कहि देहु संदेशा। —पहुंच्यो तुव ढिग अधिक कलेशा।
अपदा परैं आनि अबि एसे। जतन अनिक ते मिटहि न कैसे ॥ २८ ॥
जानि दूत तुम को अबि तर्जहिं। नांहि त पकर सामना सजहिं।
जिस ते मूढ मती सो जानै। केतिक दिन महिं प्राननि हानै ॥ २९ ॥
इम कहि करि तिन को अपमाना। दिए उठाइ कठोर बखाना।
झूरति[2] निज डेरे कहु आए। नहिं कछु कह्यो गयो सु लजाए ॥ ३० ॥
बसे निसा इक, उरपति रहे। —हमहु आनि को लेहि न गहे-।
त्रासति नहिं सुपते सुख संगा। भई प्रभाति चढ़े तिस ढंगा ॥ ३१ ॥

दोहरा

सगरो पंग उलंघि कै दिल्ली प्रविशे आइ।
चंदू पापी सो मिले सकल प्रसंग सुनाइ ॥ ३२ ॥
महां दुशट मति पातकी[3] सुनति भयो दुख पाइ।
बूझति कहो प्रसंग सभि किम देख्यो तुम जाइ ? ॥ ३३ ॥

चौपई

कहति भए सुनि कान दिवान। उतरे प्रथम एक हम थान।
लोकनि को बूझ्यो-गुरु कित है ?। कबि हम मिलहिं होइ इक चित है ?-॥ ३४ ॥
तबहु सिक्ख इक सकल बताए। —खेलति अबि शिकार को आए।
बैठे शोभति तखत सथान। गन सुभटनि को लागि दिवान ॥ ३५ ॥
मिलहु करहु दरशन इस बेरा। ऐसो समो न पावहु फेरा-।
सुनि हम बिसमे —क्या इह कहै ? गादी[4] एहु फकीरनि अहै ॥ ३६ ॥
करनि शिकार शसत्र गन धरिबे। और तखत पर बैठनि करिबे-।
इह गति कतिबे कीनि नवीन ?। पतिशाहिन की रीति प्रबीन ॥ ३७ ॥
चमूं राखनी बली तुरंग। अपर समाज शाह जिम संग-।
सुनि सिख कह्यो-जबै सुधि आई। चंदू कर्यो पाप अधिकाई ॥ ३८ ॥
श्री अरजन तनु त्याग सिधारे। तबि ते क्रोध अधिक उर धारे।
दोइ खड़ग निज गर महिं पाए। अंग संग धनु तरकश लाए ॥ ३९ ॥

1. महल। 2. कुढ़ना, जलना-भुनना। 3. पापी। 4. गद्दी।

राखि लई सैना समुदाई। हतनि चंदु हित सपथ अलाई।
दिन प्रति सभि समाज अधिकायो। बैठनि हेतु तखत बनवायो ॥ ४० ॥
तबि हम सुनिकै गए अगारी। देखे बहु बैठे भट[1] भारी।
आप शसत्र जुत तखत सुहाए। जाइ निकट हम सीस निवाए ॥ ४१ ॥
ले तुम नाम दई जबि पाती। चितवति पित को सुलगति छाती।
जबि पढिवाइ सुनी रिस धारी। बहु कठोर तबि गिरा[2] उचारी ॥ ४२ ॥
पिता बैर को त्यागहिं नांहिन। त्रास रिदे महु मानहिं काहि न।
चंदू संग कहहु अस जाई। 'अपदा घोर मूढ नियराई' ॥ ४३ ॥
इक तौ तन की बैस[3] नवीन। दूजे शसत्र अंग धरि लीनि।
तीजे सुभटनि को नित संग। मारि मारि करि चाहसि जंगि ॥ ४४ ॥
तुझ ते कुछ उपाइ हुइ आवै। भली अहै तौ जे बचि जावैं।
सो उर करति अधिक उतसाहू। कुछ नहिं त्रास करति चित माहू ॥ ४५ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'दूत आवनि जाइ' प्रसंग बरनन नाम सपत चत्तवारिंसती अंशु ॥ ४७ ॥

---

1. शूरवीर। 2. वाणी। 3 आयु।

अंशु ४८

जहांगीर प्रसंग

दोहरा

श्री हरि गोविंद चंद कौ बोलनि अर बिवहार ।
सुनि चंदू चिंता अधिक अनिक[1] उपाव बिचारि ।। १ ।।

चौपई

नहिं मानहि मम सुता सगाई । पिता दशा दिखि त्रास न पाई ।
बधति बधति बधि गयो बिरोधा । अजहुं न मेरो मानति क्रोधा ।। २ ।।
कै मेरो अबि होइ बिनाशा । कै जीवनि ते सो बिन आसा ।
हरिगुविंद को जबि पकरावौं । तबहि बैर पूरन सफलावौं ।। ३ ।।
पुन धन खरचौं अधिक सु ऐसे । पकर्यो मरहि न निकसहि जैसे- ।
इत्त्यादिक मन गिनहि बिसाला । चिंता महिं दिन रैन दुखाला ।। ४ ।।
शाहु समीपनि रिशवति देती । कहिवे को अवसर नहिं लेति ।
जहांगीर ढिग पहुंचहि जबै । अनिक घाति बातनि कहि तबै ।। ५ ।।
हज़रति को रुख इक दिन पाइ । कर जोरति कहि बिनै बनाइ ।
माझे देश हकीकति सारी । कहति आइ जैसे धन भारी ।। ६ ।।
'श्री अरजन जो तुम बुलवाए । लवपुरि मिले आप डिग आए ।।
तिन परलोक भयो तहिं जबि ते । सुत बैठ्यो गादी पर तबि ते ।। ७ ।।
जहांगीर सुनि बूझन लाग । 'कबि के किम श्री गुर तन त्यागे ? ।
हम जबि मिले कितिक दिन पाछे । भा भरलोक कौन थल आछे ।। ८ ।।
शांति रूप शोभति जिन सूरति । मनहु विराग धरी निज मूरति ।
म्रिदुल बचन सुनिबे रुचि जागे । प्रभु लिव लगहि धंध जग त्यागे' ।। ९ ।।
सुनि जसु चंदू जर बर गयो । बात फरेब बनावति भयो ।
'सुनहु शाहु जी लवपुरि मांही । मिले गुरू जबि रावरि पाही ।। १० ।।
तिस पाछ केतिक दिन रहे । हैज़ा होइ महां दुख लहे ।
रावी तीर जाइ तन त्यागा । संगत मिली दियो तहीं दागा ।। ११ ।।

---

1. अनेक या अन्य ।

तिन सुत श्री हरि गोविंद। थिर गादी पर तरुन बिलंद।
तिन को बोलनि अरु बिवहारू। लवपुरि ते आई अखबारू[1] ॥ १२ ॥
सो खत पठिकै मैं बिसमायो। सकल अपूरब ब्योंत[2] बनायो।
तखत नाम गादी को राख्यो। आयुध बिद्या महिं अभिलाख्यो ॥ १३ ॥
तज्यो फकीरी को बेस[3]। समता चाहति शाहु बिशेश।
संग चमूं हित जंग करनि के। राखति दिन प्रति सुभट बरन के ॥ १४ ॥
कहिवावनि लाग्यो- पतिशाह। करहि अखेर ब्रित्ति[4] बन मांहू।
पूरब साके ब्रिंद पवाड़े। जिनहु कीनि बड जंग अखाड़े ॥ १५ ॥
तिन को सुनहि ढाढि अनि पास। पुन अपनो बल कहै प्रकाश।
बिना परगने बिन तुम कहे। सैंन सकेलति गन नित अहे ॥ १६ ॥
अस नहिं होइ उठावहि दुंद। किम टिक रहैं सुभट मिलि ब्रिंद।
कै निज चमूं चढावनि करी अहि। बिना लरे ते प्रथम पकरी अहि ॥ १७ ॥
कै भेजो नर आछो कोइ। अपने निकटि हकारहु[5] सोइ।
दब्यो रहै नहिं दुंद उठावै। आगै आप करहु ज्यों भावै ॥ १८ ॥
शाहु समीपी जे उमराऊ। चंदू बात को करि पुशटाऊ।
रिशवति लेनहार जे नर हैं। बुरा भला न ब्रिचारति उर हैं ॥ १९ ॥
जिस ते लें तिस को रुख करैं। साच कि झूठ ब्रिचार न धरैं।
जहांगीर उर तथा पछानी। मिलि सकलनि जिम कीनि बखानी ॥ २० ॥
श्री गुरु गादी के गुन भारे। अपनि बडिनि पर लखि उपकारे।
दुशटनि ते दूती सुनि कान। संसै होति शाहु के आनि ॥ २१ ॥
प्रथम बारता तसकर केरी। कहती रहे नहिं निरनै हेरी।
तिन को तन बिनस्यो सुत रह्यो। बैठ्यो गुरता पद को लह्यो ॥ २२ ॥
जावति करौं नहीं निरधारे। तावति बनहि न करनि बिगारे-।
रह्यो गिनत कुछ हुकम न दयो। उठ्यो सभा ते अंतर गयो ॥ २३ ॥
दिन दूसर महिं चितवति शाहू। आयो तबि वजीरखां पाहू।
गुरु ब्रितांत बूझ्यो तिस तीर। 'संत रूप श्री अरजन धीर ॥ २४ ॥
हमने सुन्यो भयो परलोका। लवपुरि महिं तिन दरस बिलोका।
दूती[6] करति रह्यो तबि चंदू। सुनि मैं भयो न निठुर बिलंदू ॥ २५ ॥
अबि तिन को नंदन[7] इक सुनयो। अपर ब्रितंत चंदु ने भनयो।
सुभट शसत्र जुत गन ढिग राखै। दुंद देश करिबे अभिलाखै ॥ २६ ॥

---

1. समाचार, खबर। 2. योजना। 3. वेष 4. आखेट-क्रीड़ा 5. बुलाओ। 6. चुगली। 7. बेटा।

इस प्रसंग सभि मोहि सुनावहु। पठहिं सैन कै नहिन ? बतावहु।
नाहिं त नर नीको इक जाइ। निकट हमारे ल्याइ बुलाइ ॥ २७ ॥
जे चित महिं नहिं चहति बखेरा। आवहिं दिल्ली पुरि बिन वेरा।
जे नहिं मानहि, मन महिं और। गमनै चमूं जाइ तिस ठौर' ॥ २८ ॥
किंचबेग अरु खान वज़ीर। सुनिकै सकल शाहु के तीर[1]।
जुग कर जोरे अरज़ गुज़ारी। 'श्री गुर अरजनि पर उपकारी ॥ २९ ॥
धन अनुगन ते ताल लवायहु। हिंदु तुरक सभि के सुखदायहु।
दुतिय ताल इक लगे बनावनि। तिस महिं बिघन कीनि उमरावनि ॥ ३० ॥
नित प्रति देते देग खराइत। अलहि खुदाइ याद हर साइत[2]।
तिन महिं तसकर आदिक दोशा। कौन सुमति सुनि करहि भरोसा ॥ ३१ ॥
चंदू दिवान जाति निज जानहि। महिमा लखहि न, मतसर[3] ठानहि।
श्री अरजन तन त्याग्यो तहां। बीत गयी सो कही यह कहां ॥ ३२ ॥
अबि तिन को सुत बली बिलंद। तरुन बैस[4] श्री हरि गोबिंद।
गुरुता गादी कीनि अबादी। दासनि अहिलादति[5] दे शादी ॥ ३३ ॥
पूजहि जगत, पदारथ देति। मन बांछति गुरु ते बर लेति।
तिनहु संग भी मतसर[6] धरै। चंदू आप ढिग दूती[7] करै ॥ ३४ ॥
मालिक मुलख आप तुम अहो। न्याव सभिनि के करिबे चहो।
बसहि जथा सुख प्रजा तुमारी। राव रंक रहूओ अरु भारी ॥ ३५ ॥
कीरति पसरी[8] अखिल जहान। सुखी आशिखा देति महान।
अबि निरनै करि सकल प्रसंग। बरतहु श्री अरजन सुत संग ॥ ३६ ॥
पठहु आप अबि को उमराव। मिलहि जाइ करि सहज सुभाव।
बिनै बखानहि तुमरी दिशि ते। हुइ प्रसंन चित आवहि जिस ते ॥ ३७ ॥
प्रथम पिता तिन को चलि आयो। ज्यों क्यों करि तनु को तजवायो।
नाहिं त कोप करहि दे स्राप। कह्यो सफल हुइ जानहु आप' ॥ ३८ ॥
सुनि करि शाहु खान के बैन। कर्‍यो सराहनि 'तूं मति ऐन।
अपर सभा के मानव ब्रिंद। कहैं तथा जिम भाखहि चंदु ॥ ३९ ॥
इस कारन ते भेजनि तेरो। है नीके निरनै करि हेरो।
जिम प्रसंन हुइ करि चकि आवहिं। पावन दरशन अपनि दिखावहिं ॥ ४० ॥
इस के सम नहिं नीकी और। कहैं न रिस करि कुछ तिस ठौर।
नहीं देश महिं दुंद उठावैं। मिटहि जु इम संदेश उपावैं ॥ ४१ ॥

---

1. निकट। 2. हर समय। 3. ईर्ष्या। 4. जवान उम्र। 5. प्रसन्न। 6. ईर्ष्या। 7. चुग़ली। 8. फैलना।

मिलिबो पाक पीर को होइ। याद खुदाइ घरी शुभ सोइ।
यांते बात इसी बिधि नीकी। भनी गिरा तैं भावति जी की ॥ ४२ ॥
होति भोर कुछ लेहु अकोर[1]। गमन करहु सतिगुरु की ओर।
करति प्रसंन इतहि को ल्यावहु। क्रिचबेग लै संग सिधावहु ॥ ४३ ॥
खां वज़ीर सुनि जहांगीर ते। हरख्यो जान्यो मिलनि पीर ते।
आइसु[2] मानी कीनि सलाम। लीनि सकेल समाज तमाम ॥ ४४ ॥
कलग़ी जिगा मुकत[3] की माला। खीनखाफ पट ज़री दुशाला।
अपर अकोर जोरि करि सारी। कितिक चमूं संग कीनसि त्यारी ॥ ४५ ॥
नीके शकुन भए पुरि निकसे। हेरि बिचारति गमनति बिकसे।
सने सने मग[4] उलंघ्यो सारे। श्री अंम्रितसर[5] पहुंचि निहारे ॥ ४६ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'जहांगीर प्रसंग' बरननं नामु अशट चतवारिंसती अंशु ॥ ४८ ॥

1. भेंट अथवा धन। 2. आज्ञा। 3. मुक्ता, मोती। 4. मार्ग। 5. अमृतसर।

अंशु ४६

मसलति करनि प्रसंग

दोहरा

डेरा करि कै सुधासर खां वज़ीर बुधिवान।
इक नर सुधि हित गुरू ढिग पठ्यो सु बाक बखानि॥ १ ।

चौपई

'करहु वंदगी गुरु अगारी। पठ्यो शाहु मैं पास तुमारी।
रावर की रजाइ जिस काला। दिहु दरशन मुहि करहु निहाला'॥ २॥
गयो सु सिक्खनि पास सुनायो। तिनहु जांइ करि सकल बतायो।
श्री हरि गोबिंद सुनति बखाना। 'आज करहु बिसराम महाना॥ ३ ।
हुइ है मेलि हमारो काली। संध्या समै करहु इस ढाली।
गुरू तेग ते रसद पुचावहु। जेतिक नर, प्रथमहि पिखि आवहु॥ ४॥
देहु तुरंगनि के हित दाना। त्रिणनि आदि सेवा जे नाना'।
सुनि करि हुकम मसंदनि तबै। कह्यो जथा, कीनसि तिम सबै॥ ५॥
क्रिपा अपनि पर लखि करि आछे। सकल सैन जूति लीनसि वांछे।
खान पान करि सुख को पाए। गुरू सुजसु करि निस सुपताए॥ ६॥
प्रात होति अंम्रितसर न्हाए। हरमंदिर अरदास कराए।
धरि शरधा निज संगी संग। करहिं सराहनि के सु प्रसंग॥ ७॥
सो दिन अरध बीति जबि गयो। भेट सकल लै त्यार सु भयो।
श्री हरिगोबिंद फरश कराइस। तखत अकाल जहाँ सुठ थाइ सु॥ ८॥
जाम दिवस ते सतिगुर आए। बसत्र शसत्र तन रुचिर सजाए।
बोलति आइ नकीब[1] अगारी। कंचनि रजत[2] दंड की धारी॥ ९॥
मनहु कुरंग कुदाइ तुरंग। सुंदर सजति बिभूखन संग।
सुभट सैंकरे आगू पाछे। शसत्र बसत्र आछे तन काछे॥ १०॥

---

1. चोबदार। 2. सोना चाँदी।

नौबति बजहि दरशनी पौरि। आइ तहिं सोढी सिरमौर।
हय[1] ते उतरि वंदना करि कै। पुल पर गमने अंतर बरिकै[2] ॥ ११ ॥
नमो कीनि हरिमंदर आगे। पुनहि प्रदछना[3] देवनि लागे।
ले हरि पौरि आचमन आए। बैठि तखत पर गुरू सुहाए ॥ १२ ॥
सभा सहत सुरपति जनु वैसे। गाइं रबाबी रागनि तैसे।
बैठे सुनि संगति बहु आई। दरशन देखति भेट चढाई ॥ १३ ॥
तबि वज़ीर खां गुरू हकारा। आयो लेकरि भेट उदारा।
तरुन बैस वैसे गुरु हेरे। मसु भीजति[4] मुख शुभति बडेरे ॥ १४ ॥
जनु पसर्यो चहि तम ढिग इंदू[5]। कै अरविंद मलिंदै बिंदू।
बंदन कीनि अनंद बिलंदे। लखि गुरू को सुखकंद मुकन्दे ॥ १५ ॥
बंदि हाथ पुन बिनै बखानी। 'हज़रत तुमहि वंदगी ठानी'।
बैठ्यो निकट 'कुशल कहु आछे ?'। कह्यो 'सकल तुम करुना बांछे ॥ १६ ॥
बूझ्यो 'कहु कारन आगवनू ?। पठ्यो शाह कारज असकवनू ?'।
सुनि वज़ीर खां जुग कर जोरे। 'लेनि हेतु आयहु तुम ओरे।। १७ ॥
चहै तुमारो दरशन शाहु। केतिक दिन ते करति उमाहू।
शरधा धारि अकोर पठाई। सम मुरीद के बिनै अलाई ॥ १८ ॥
सुनि करि श्री हरिगोविंद कह्यो। 'बडे गुरनि जिम दरशन चह्यो।
दुशट पातकी सदन उतारे। तहिं तन तजि परलोक सिधारे।। १९ ॥
शाहनि को अस ग्रहे अवाहनि। नहिं सुधि करी कैसि हूं पावनि'।
सुनि वज़ीर खां पुनह बताई। 'चुगली अबि उगली तिस थाईं ॥ २० ॥
दुशमन बात करै अणहौती। हुइ किम किमहूं करहि उदोती।
मिलहु आप अबि हज़रत संगि। बिदति होहि सभि छप्यो प्रसंग ॥ २१ ॥
दिल्ली चलहु सु बदला लेहु। दुशट पातकी सिर पग देहु।
बिनां मिले नहिं प्रापति होवहि। नहीं तिदारक मूरख जोवहि ॥ २२ ॥
अबि हज़रत को बहुत सिखायो। मुझ बूझ्यो मैं सकल बतायो।
सुनति शाहु के मोहि पठावा। —आनो जाइ गुरू इस थावा ।। २३ ॥
सुनि करि निरनै होवहि सारी। जिम श्री अरजन संगि गुज़ारी।
चलनि आपि को दिल्ली नीको। भला आपको भावति जी को ॥ २४ ॥

---

1. घोड़ा। 2. घुसकर। 3. प्रदक्षिणा। 4. मुख मंडल पर उभरती हुई मूछें शोभायमान हो रही हैं। 5. जिस प्रकार चन्द्रमा के आस पास अन्धेरा फैल रहा हो।

इक तौ शाहु संदेह मिटावै। दुतीए बदला तुम को पावै।
आगे आप अहो सरबग्य। क्या हम जानि सकहिं अलपग्य'॥ २५ ॥
अपनि रितू लखि श्री गुरु तवै। होनिहार उर जानति सवै।
कह्यो कि 'टिकहु आज की रैनि। कहैं प्रात को उत्तर वैन'॥ २६ ॥
कहि सुनि करि इम संध्या होई। निज निज थान गए सभि कोई।
पिखि सरूप सुनि बाक अमोले। करि वज़ीर खां अनंद अतोले[1]॥ २७ ॥
टिक्यो जामनी अपने डेरे। खान पान गुरू पठ्यो घनेरे।
अपनि मात संग बात जनाई। 'हमहिं शाहुने पठ्यो बुलाई'॥ २८ ॥
सुनति गंग चित चिंत बिसाला। सुत के संमत हुइ तिस काला।
गन मसंद अर सिक्ख्य जु स्याने। पठ्यो जु नर सगरे संग आने'॥ २९ ॥
निस महिं श्री माता के पास। सभा करी सतिगुरु सुख रासि।
जथा जोग बैठे जवि सवै। शाहु प्रसंग सुनायो तवै॥ ३० ॥
'बडे गुरनि के संगी अहो। स्याने सभि निज निज मति कहो।
मिलनि शाहु संग है इह नीको ?। किधौं नहीं? किम भावति जी को?॥ ३१ ॥
हुते पुरातन जितिक मसंद। कह्यो बिचरिति बुद्धि बिलंद।
'आगे श्री अरजन जी गए। चंदू दुशट कहां करि दए॥ ३२ ॥
घर शाहुनि के अधिक अंधेर। मिलि इक वेरि न बूझैं फेरि।
अपर नहीं किनि खबर सुनाई। गुज़र्यो गज़ब सु राखि छपाई॥ ३३ ॥
अस अंधेर, तहां क्यों जावहु। अपनि आप को नहीं बचावहु।
महां शत्रु जो शाहु दिवान। छल ते करति आन की आन॥ ३४ ॥
अपर न शाहु निकट हितकारी। तुरक राज गुरु शरध न धारी।
लरनि बिखै समसरता नांहि न। को थल देश मवासी जाहि न॥ ३५ ॥
जहां बसहि अरिक रण करै। अस न भरोसा किस पर धरैं।
संधि करनि अरु करनि बखेरो। दोनहुं बिखै दोष गन हेरो॥ ३६ ॥
इक जंगल[2] जहिं पाइ न पानी। पहुंचि न सकहिं सैन तिस थानी[3]।
जे करि बूझहु मतो हमारो। तौन देश के बीच सिधारो॥ ३७ ॥
अपने सिक्ख बिगड़ घनेरे। सो सभि मिलिहिं रहहिं तुम नेरे।
अपर संगतां सभि चलि आवैं। मिटहि शाहु, नहिं पुनह बुलावैं॥ ३८ ॥
बिधी चंद जेठा रु पिराणा। कहनि लगे 'पूरब किम जाणा ?।
श्री अंम्रितसर बैठे रहीअहि। बिगरहि शाहु जि निरनै लहीअहि॥ ३९ ॥

---

1. अतुलनीय आनंद। 2. मालवा का जंगल। 3. स्थान।

पठहि चमूं तिस को बल देखि। मिलहिं करहिं संग्राम विशेख।
पुन रोके हम रहैं न कैसे। सिकता[1] त्रिण पुल ते रौ जैसे ॥ ४० ॥

जंगल देश प्रवेशहिं जाई। सैन सकेलहिं तहिं समुदाई।
बिन बिगरे बिन निरने करे। नहिं प्रसथान मतो हम धरें ॥ ४१ ॥

श्री गंगा सुनिकै इस भांती। पति को सिमरति धरकति छाती।
नहिन बिखेरे ते सुख मानहि। शाहु निकट ते संसै ठानहि ॥ ४२ ॥

'इक पुत्रा मैं देखति जीवति। निकट रहिन ते सीतल थीवति[2]।
किम तुम संघर[3] करनि उचारा। भयो तरुन नहिं बल संभारा ॥ ४३ ॥

कवन राज सुधरहि जबि लरो। नाहक बिन आई म्रितु मरो।
अस मसलति को कबहि न ठानहु। करहु बखेरा सभि किछ हानहु ॥ ४४ ॥

अपनो पुरि त्यागनि किम चाहो। बडे बिघन जानहु रण माहो।
पिता पितामा[4] को जहिं बासा। लाइ दरब जहिं रचे अवासा[5] ॥ ४५ ॥

कूप[6] ताल आदिक लगवाए। लोक जतन ते नगर बसाए।
बुनिआदी इह थान हमारो। बसे रहैं जिम तथा उचारो ॥ ४३ ॥

प्रथम करहु निरनै सभि अैसे। शाहु हकारति है अबि कैसे।
जिस ते नहिं बिगरै, रस राखो। इम विचार करि मसलति भाखो' ॥ ४७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'मसलति करनि' प्रसंग बरननं नाम उनपंचासति अंशु ॥ ४७ ॥

---

1. रेत, मिट्टी। 2. रहती थी। 3. संघर्ष, युद्ध। 4. बाप-दादा। 5. निवास-स्थान। 6. कुआँ।

अंशु ५०

वज़ीर खानि मिलन प्रसंग

दोहरा

श्री गंगा के बाक सुनि ब्रिध भाई गुरुदास।
लखहिं भविक्ख्यति सगल गति बोले करति प्रकाश ॥ १ ॥

चौपई

'माता जी ! सुनीअहि हम कहे। श्री हरगोविंद सभि गति लहें।
होनिहार इन ते नहिं छानी[1]। जो करनो सगरो मन जानी ॥ २ ॥
प्रथम सपथ हित चंदू मारनि। बैठि सभिनि महिं कीनि उचारनि।
दुतीए गुर अरजन बिरतांति। होवनि लग्यो अबहि बख्याति ॥ ३ ॥
पलटो लेबे कौ अबि समों। दिल्ली चलो इही मत हमो।
बिना चले नहिं मारनि होइ। पूरन करहिं सपथ करि जोइ ॥ ४ ॥
श्री अंम्रितसर बसहु सुखारे। जहांगीर नहिं करहि बिगारे।
अगे शाहिजहां जबि होइ। जिम गुर करहिं बरति है सोइ ॥ ५ ॥
अबि चंदू को गरद मिलावहु[2]। सुजसु बिसाल जगत महिं पावहु।
इक वज़ीर खां नित ढिग शाहू। सतिगुरु को सेवक सुखु दाहू ॥ ६ ॥
तिसने सरब बाति समुझाई। चलहिं गुरू, चंदू लें धाई[3]।
जहांगीर चहि फरज़ उतारा। लिहु पलटा जिसने गुर मारा ॥ ७ ॥
नहिं आछे कुछ करनि बखेरा। बिगरे परि है जंग बडेरा।
कौन काज हित करहु बिखादा। अस कीजहि जिम हुइ अहिलादा[4] ॥ ८ ॥
श्री अरजन सभि अंतरजामी। चहैं सु करैं जगत के स्वामी।
समो जानि तन तजिबे आवा। सिमर्यो ग्यानी स्राप अलावा[5] ॥ ९ ॥
साचु करनि हित बच तिस केरा। दे चंदू सिर दोश बडेरा।
गए बिकुंठ मुकंद मुछंदे। नहीं प्रतंतर रूप अनंदे ॥ १० ॥

---

1. अलग। 2. मिट्टी में मिलाकर। 3. नष्ट करना। 4. प्रसन्न। 5. शाप दे दिया।

पंचहुं सतिगुर के छबि रूप। श्री हरिगोविंद जोति अनूप।
जिम चाहैं इह करहिं गुसाईं। सभि पर बली चिंत नहिं काई ॥ ११ ॥
महां प्रतापवंत रणधीर। इनकी सम नहिं अपर सरीर।'
इस प्रकार जबि ब्रिध ने कह्यो। श्री गंगा नीको मन लह्यो ॥ १२ ॥
सतिगुरु मंद मंद मुसकाए। कह्यो कि 'चहसि दुशट मरिवाए।
ब्रिध को कह्यो न फेरहि कोई। जिम बच कहि तिम ही सचु होई ॥ १३ ॥
होनिहार सो करहि उचारी। जो उचरहि सो होवनि हारी।
पाहन रेख मिटहि नहिं जैसे। गज रद निकसि न प्रविशहि कैसे' ॥ १४ ॥
सुनि गुरु ते गुरुदास बखानी। 'खशट गुरनि ढिग इहु अगवानी।
शुभ मति इन सम किसकी कहीअहि। निपुन जितेंद्री मन बसि लहीअहि ॥ १५ ॥
इन की मसलति सभि सुखदाई। दिल्ली चलनि मोहि मन भाई।
इस मत ते सुख बास अवासा। दुतीए चंदू दुशट बिनाशा ॥ १६ ॥
त्रितीए सपथ करहिंगे पूरी। मिलनि शाहु सों ह्वै बिधि रूरी।
करति अनंद ब्रिलंद बिलासा। आइ सुधासर बासहिं बासा ॥ १७ ॥
श्री गंगा सुनि मन हरखानी। 'इह सभि बडिअनि के इसथानी।
इनको कहनि करनि ही बनै। शुभ सभि होइ जथा बच भनैं ॥ १८ ॥
खां वज़ीर जिम जुगति बतावै। मिलनि शाहु सों तिम बनि आवै।
नितप्रति निकट हकारनि करीअहि। दान मान दे तोसन[1] धरीअहि ॥ १९ ॥
तुरकनि गन महिं अति हितकारी। राखहु मेलि रहै अनुसारी।
सकल शाह सों ब्रिथा जनावै। आछे कहि कहि तुमहि मिलावै' ॥ २० ॥
इम मसलति[2] करि श्री गुरु तबै। उठे, गए निज निज थल सबै।
सुपति जथा सुख निसा बिताई। जागे जबि प्रभाति हुइ आई ॥ २१ ॥
सौच शनान कीनि बिधि आछे। सभि लाइ बैठे कहि पाछे।
'खां वजीर को आनि हकारे। कहहु जाइ थित सभा मझारे' ॥ २२ ॥
हुकम सुनति नर तूरन गयो। डेरे जाइ निहारति भयो।
'सतिगुरु कर्यो याद तुझ ताईं। गमनहु, बैठे सभा लगाई' ॥ २३ ॥
करि उर हरख पहिरि पट आछे। चलि आयो तिस नर के पाछे।
किंचबेग लीनहु निज साथ। दरसे जाइ सतिगुरू नाथ ॥ २४ ॥
बंदे हाथ बंदगी कीनि। गुर के कहे गयो आसीन।
किंचबेग कर जोरि उचारा। 'हज़रति बांछति दरस तुमारा ॥ २५ ॥

1. प्रसन्न। 2. सलाह।

श्री अरजन को सिमरति रह्यो। करि करि प्रेम सुजसु कहु कह्यो।
सुनी कुटिलता चंदू केरी। रिदे बिसूरति[1] भा बहु बेरी ॥ २६ ॥
तुम ते सुनहि ब्रितांत जु सारा। सिर ते चाहिसि फरज़ उतारा।
यांते उचित आप को आछे। दीजहि दरस शाहु बहु बांछे' ॥ २७ ॥
पुन वज़ीर खां बाक सुनावै। 'हज़रति प्रेम समेत बुलावै।
वडे गुरुनि को सुन्यो ब्रितांत। मुख ते हाह कही पछुतात ॥ २८ ॥
श्री नानक गादी बड जानहि। सदा अदाइब राखि बखानहि।
कहि बहु बारि दोश गन चारी। चुगल शाहु की सुमति बिगारी ॥ २९ ॥
सो कुकरम को अबि फल पावै। द्रोह अकारण मूढ उठावै।
गुरु संतनि को द्रोही होइ। सकहि बचाइ न बिधि लौ कोइ ॥ ३० ॥
अबि कीजहि चलिबे की त्यारी। हम हरखहिं जबि लिहु रिपु मारी'।
क्रिपा द्रिशटि ते देखि गुसाईं। बोलति मंद मंद मुसकाई ॥ ३१ ॥
'सतिगुरु घर को तूं सिख अहैं। अपर दुशट चंदू हित चहैं।
गन तुरकनि बन बंस बिसालू[2]। तो सम सफल्यो कोई रसालू' ॥ ३२ ॥
उर शरधा पिखि प्रेम बडेरा। मान सहत मान्यो बच तेरा।
दिल्ली को करि हैं प्रसथाना। बिफल न तो आगमनि ठाना' ॥ ३३ ॥
सुनति बंदगी करि हरखायो। 'सतिगुरु धंनि मोहि अपनायो!।
रोग जलंधर उदर बिसाला। पीड़ा देति महां सभि काला ॥ ३४ ॥
पर्यो सदन बिललावति रहौं। होति बिखाद सकल ही सहौं।
निकट गरी महिं सिख इक जावति। पाठ सुखमनी मुखहुं अलावति ॥ ३५ ॥
जबि मम कान परी धुनि आनि। पीरा भई उदर की हान।
सिख शनान हित गयो अगारी। होनि लगी बाधा पुन भारी ॥ ३६ ॥
कितिक बेरि महिं सिख पुन आयो। पाठ सुखमनी मैं सुनि पायो।
बहुर भयो सुख रिदे बिचारा। इस ते मिटति कशट मम भारा ॥ ३७ ॥
इतने महिं सिख जबि चलि गयो। धुनि को सुनति न मैं पुन भयो।
बाधा अधिक बधी तबि मेरे। जानी महिमा मन तिस बेरे ॥ ३८ ॥
पठि करि नर को सो बुलवायो। जबि गुरु सिक्ख निकट चलि आयो।
सरब ब्रितांत बूझि करि राखा। पाठ सुखमनी थित ह्वै भाखा ॥ ३९ ॥
जबि लौ सुन्यो न पीरा भई। हटे पाठ, पुन तैसे थिई।
तबि मैं सिक्ख अपर ढिग राखे। निस दिन पाठ सुखमनी भाखें ॥ ४० ॥

---

1. हृदय जलाती है अथवा हृदय में खटकती है। 2. तुर्कों का समूह बड़े बाँसों का वन है अर्थात् उपकारहीन और निष्फल है।

मान्यो गुर हित करनि कराहु। सुनति सुनति भा सभि रुज दाहु।
कितिक द्योस महिं भयो अराम। करि शनान रुज गए तमाम ॥ ४१ ॥
बडे गुरुनि ढिग मैं तबि आयो। सकल बिनै भनी सीस निवायो।
उर शरधा लखिकै सिख कीनो। लियो अलंब भयो रुज हीनो ॥ ४२ ॥
इम मोकहु गुर भे सुखदाई। रोग सोग ते लीनि बचाई।
तबि को मैं सिख रावरि घर को। अपर न प्रिय तुम ते मम उर को ॥ ४३ ॥
मुक्त ते सेवा बनी न कोई। कित अचानक लवपुरि होई।
शाहु संग चढि करि चलि गए। किस ते सुध नहिं सुनिते भए ॥ ४४ ॥
जिम रावरि के पिता महान। गन तुरकनि महिं मुक्त सुखदान।
तिम अबि क्रिया आन करि दीनी। सफनी मोहि बसीठी कीनी ॥ ४५ ॥
जन प्रेमी के आप अधीन। करुना करहु जानि करि दीन।
बिरद गरीब निवाज़ तुमारा। गमन मतो किय, सो संभारा' ॥ ४६ ॥
तबि सतिगुर करि खुशी बिसाली। कह्यो 'पयान महूरति काली।
जुग कोसनि परि हुइ है डेरा। पुन बहु गमनहिं अगलि सवेरा ॥ ४७ ॥
सुभट आदि मानव जे सारे। त्यारी करनी गुरू उचारे।
सुनि सभिहिनि कै भा उतसाहू। शसत्र बसत्र सजि रिदे उमाहू ॥ ४८ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतरथ रासे 'वज़ीर खानि मिलन' प्रसंग बरननं नाम पंचासती अंशु ॥ ५० ॥

अंशु ५१

श्री हरगोबिंद दिल्ली प्रसथान प्रसंग

दोहरा

उठे सभा ते सतिगुरू पुन माता ढिग जाइ ।
नमो करी बैठे तबहि चलनि प्रसंग सुनाइ ।। १ ।।

चौपई

मसलति भई 'भोर प्रसथाना । पहुंचहिं दिल्ली शाहु सथाना ।
पाछे ब्रिध भाई गुरदास । सकल कार करि हैं तुम पासि ।। २ ।।
सभि बिधि महिं दोनहु बहु स्याने । हरमंदिर की सेव महाने ।
आवनि जानो संगति केरा । देग चलावनि काज बडेरा ।। ३ ।।
सरब अकोर संभारनि करनी । जितिक मसंद तिनहुं सुधि धरनी ।
सिक्खनि को दैबो सिरपाऊ[1] । सदा कार[2] इह सहिज सुभाऊ ।। ४ ।।
सुनि जननी, सुत को ब्रिहजाना । महां सनेह रिदा अकुलाना ।
जबि के जनमें, देखति रही । अबि लौ प्रिथक भई कबि नहीं ।। ५ ।।
लोचन जल बूंदें झलकाई । दीरघ स्वास[3] भरति दुख पाई ।
'सुनहु पुत्र ! समझावौं कहां । गुर गादी थिति बुधि मति महां ।। ६ ।।
भूत भविक्खयति के सरबग्ग्य । क्या बच कहै जीव अलपग्ग्य ।
तऊ सुचेत रहो सभि काला । नहीं दुशट के परियो जाला ।। ७ ।।
द्रोही महां, दया नहिं जांके । करम चंडाल हिंदु तन तांके ।
तुमरे पिता महां समरत्थ । भंजन घड़न जिनहुं के हत्थ ।। ८ ।।
छिमा निधान शांति चित होइ । दुशट अघी हति कर्‌यो न कोइ ।
शकति बिसाली नहीं जनाई । तज्यो सरीर समा नियराई ।। ९ ।।
तिस बिधि आप चले ढिग शाहू । बैंस नवीन धरति उतसाहू ।
हे सुत मैं वारी बहुवारी । बिना पिखै मुझ संकट भारी ।। १० ।।

---

1. सिरोपा । 2. कार्य । 3. उच्छवास ।

इक अलंब तुम देखति रहौं। सदा अनंद रिदे बहु लहौं।
कहां करौं मैं तुम ते पाछे। पुत्त्र सदन जबि पिखौं न आछे ।। ११ ।।
उद्यो पाप फल रहौं इकेली। रिदे प्रतीखति अधिक दुहेली।
करहु शीघ्रता आवनि मांही। मुझ दिशि पिखहु बिसारहु नांही ।। १२ ।।
नित प्रति सुधि पहुंचावनि करीअहि। सावधानता सभि बिधि धरीअहि।
करम काल करि भयो वियोग। इस महिं बसि नाहिन किसु लोग' ।। १३ ।।
श्री हरिगोबिंद सुनि जननी ते। धीरजि दीनि भाखि शुभ रीते।
'नहिं कीजहि चित महिं दुचिताई। गुरु सहाइ ते शुभ बनिआई ।। १४ ।।
जबहि फरागति[1] की बिधि जोवैं। नहिं ठहिरहिं आवनि तबि होवैं।
कुशल छेम की सुधि पहुंचावैं। सभि बिधि ते अनंद उपजावैं" ।। १५ ।।
इम भनि सुनि जननी के संगि। जित कित बिदत्यो चलनि प्रसंग।
करि त्यारी सेवक समुदाइ। सुभट शसत्र बसतर तन लाइ ।। १६ ।।
चहीअहि वहिर जि वसतु अनेक। करी संभारनि गिनि गिनि एक।
तिस दिन त्यारी करति गुजारा। भई जामनी खाइ अहारा ।। १७ ।।
सुपति जथा सुख प्राती जागे। सौच शनान करनि सभि लागे।
बसत्र शसत्र सतिगुरू सजाए। खड़ग धनुख तरकश अंग लाए ।। १८ ।।
त्यार होनि को बज्यो निशाना। जनु धनु घोखति घोख महाना[2]।
कसे तुरंगनि तंग बनाए। सुभट सुचेत त्यार हुइ आए ।। १९ ।।
सतिगुर ले प्रसादि समुदाए। श्री हरि मंदिर की दिशि आए।
करी नमो हुई खरे अगारी। कुशल सकल हित बिनै उचारी ।। २० ।।
लखि सथान शुभ पिता पितामा। दई प्रदच्छन कीनी प्रनामा।
करि कै पूज प्रसाद ब्रतायो। सगरी संगति सादर पायो ।। २१ ।।
पुन सतिगुरू निज माता पास। आइ नमो करि देति हुलास।
गमनि समैं लखि द्रिग जल रोका। बारि बारि सुत बदन बिलोका ।। २२ ।।
'श्री नानक आदिक गुरू पंच। सदा सहाइक हुइं, सुख संच।
बिघन अनेक बिदारनि करैं। सखा मिलाइ, रिपुनि परहरैं" ।। २३ ।।
मसतक चूमति गरे लगाइव। भई बिबसि कुछ कह्यो न जाइव।
गयो गरा भरि गद गद बानी। सुत सनेह महिं मति लपटानी ।। २४ ।।
कहि बहु बारि धीर गुर दीनी। 'अहो मात ! तुम सुमति प्रबीनी।
अपरनि को समुझावनि बनै। क्यों उर करति कशट के सनै ।। २५ ।।

---

1. फुर्सत। 2. मानों बादल की गड़गड़ाहट की बहुत गूंज है।

केतिक दिन महिं सुख सो आवहिं। बसहिं निकट आनंद उपजावैं'।
सुनि जननी बोली बडभागनि। सुंदर सूरति सुत अनुरागनि ॥ २६ ॥
'पुत्र ! सुनहु बड जतन करंते। प्रापति भए आपि दुतिवंते।
पुनि शत्रुनि बहु बिघन उठाए। निजकर देकरि गुरू बचाए ॥ २७ ॥
अबि लौं मैं तुम पारनि कीने[1]। देखति मैं नित बिपति बिहीने।
इक पुत्रा देखहु दिशि मोही। मिलहु तुरत जिम सुख मन होही' ॥ २८ ॥
'हे जननी ! जबि अवसर पावौं। तुमको सिमरि तुरत ही आवौं।
करहु अनंद बिदा अबि दीजै। सतिगुर सौंपि असीस भनीजै' ॥ २९ ॥
इम कहि वंदन करि घर निकसे। कमल बिशाल बिलोचन बिगसे।
शुभ सजाइ सेवक हय ल्यायो। श्री सतिगुरु नानक उर ध्यायो ॥ ३० ॥
भए अरूढनि जबै गुसाईं। धुनि दुंदभि हनि डंक उठाई।
असु असुवार होइ करि चाले। सग सुभटि चढि, गहि असि ढाले ॥ ३१ ॥
शगुन भए चहूं दिशि ते नीके। अविलोकति हुलसावनि जीके।
फरक्यो दहिन बिलोचन सुंदर। भुजादंड दहिनो बल मंदर ॥ ३२ ॥
निरमल दिवस बायु सुखकारी। मिली दुधट धरि सुंदर नारी।
म्रिगनि माल दाहनि को आई। मधुर बिहंगनि शब्द सुनाई ॥ ३३ ॥
शत्रु विनाश जनावनि करिही। सतिगुर हित को बिदता चरही[2]।
धौंसा धुकति जाति अगारी। चमू तुरंगनि बली पिछारी ॥ ३४ ॥
किंचबेग अरु खान वज़ीर। भए अरूढनि गमने धीर।
हयनि कुदावति मारग जाते। आयुध बिद्या महिं उमहाते ॥ ३५ ॥
दोइ कोस पर कीनसि डेरा। उतरे गुरू जाइ तिस बेरा।
हुतो मखमली तंबू सुंदर। ऊपरि ज़री पशम पट अंदरि ॥ ३६ ॥
चांदी चोब्र चतरकी रची। कंचन कलस रुचिर दुति खची।
अपर कनात चानणी चारु। रेशम डोर खिचि दिशि चार ॥ ३७ ॥
बीच प्रयंक डसाइ नवीनो। स्वच्छ बिछौना छादनि कीनो।
सेज बंद बड गुंडे ज़री। अैंचि चहूं दिशि बंधन करी ॥ ३८ ॥
धर्‍यो म्रिदुल सुंदर उपधानु। हय ते उतरि गुरू भगवानु।
चढि प्रयंक पर बैठि बिराजे। जिनके नाम लेति जम लाजे[3] ॥ ३९ ॥
फरश बिसाल चहूं दिशि होवा। उपजति हरख बैठी जिन जोवा।
गन मसंद अरु ब्रिध गुरुदास। जेठा लब्र पिराणा पास ॥ ४० ॥

---

1 पालन-पोषण किया है। 2. प्रकट कर रही है। 3. लज्जित होना।

अपर सिक्ख सगरे चलि आए। नर नारी पुरि ते उमडाए।
जथा शकति ले पान उपाइन। अरपहिं आन गुरू के पाइन।। ४१ ।।
सुभट आइ गन लग्यो दिवान। गाइं रबाबी[1] राग महान।
चमर चारु चलचाल ढुरंता। उठि अरदास करति मतिवंता।। ४२ ।।
सूरजमुखी धरे कर खरो। किह कर दंड हेम को खरो।
मेला महद सम्मेलनि होवा। चढति गुरू दरशन सभि जोवा।। ४३ ।।
केतिक नर नारी हटि आए। सतिगुर गुन बरनति समुदाए।
कितिक निसा बसिबे मति धारी। — गुरु हित हमे पुंन हुइ भारी।। ४४ ।।
संध्या भई दरस को देति। क्रिपा द्रिशटि ते दुख हरि लेति।
किस के संगि भनी म्रिदु बानी। किह सनमान कीनि शुभ जानी।। ४५ ।।
पुरि जन सभिनि संग कहि बैन। दीनि दिलासा रहै सु रैन।
खान पान करिकै समुदाए। बहुर जथा सुख महिं सुपताए।। ४६ ।।
खरे पाहरू चहुं दिशि बिखै। अपनि परायो परखति पिखै।
सावधान भट बने महान। सुपते सिमरति गुरु भगवान।। ४७ ।।

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'श्री हरगोविंद दिल्ली प्रसथान' प्रसंग बरननं नाम एक पंचासति अंशु।। ५१ ।।

1. गवैये, चारण, भाट।

अंशु ५२

दिल्ली पवस श्री हरिगोबिंद प्रसंग

दोहरा

श्री हरिगोबिंद जी उठे करि, सभि सौच शनान ।
बसत्र शसत्र को पहिर करि होति भए सवधान ॥ १ ॥

चौपई

बज्यो कूच को तबहि नगारा । कीनिसि त्यारी करनि पधारा[1] ।
ब्रिध गुरुदास मसंद जि ब्रिंद[2] । आइ निकट बंदति कर बंदि ॥ २ ॥
बैठि गए चहुंदिशि महि सारे । श्री हरिगोबिंद बाक उचारे ।
'ब्रिध साहिब ! भाई गुरदास ! । तुम स्थाने करि बास अवास ॥ ३ ॥
हरि मंदरि की करीअहि सेवा । पूजनि करहु सदा गुरुदेवा ।
सिख संगति आवति जिम आगे । सरब रीति करि तिम बडिभागे ॥ ४ ॥
कार देग की तथा चलावहु । ऊपर सरब कारज सुधरावहु ।
कितिक सुभट रहिं संग तुमारे । दास ब्रिंद होवहिं अनुसारे ॥ ५ ॥
सदा प्रसंन मात को राखहु । हमरी दिशि ते आछे भाखहु ।
संमति होइ कार को करिअहि । सभि दिसि सावधानता धरिअहि' ॥ ६ ॥
इम ब्रिध को सभि सौंपि समाजा । चाह्यो चढनि गरीब निवाजा ।
पुरिजन अर सिख सेवक सारे । सभि पर करुना द्रिशटि निहारे ॥ ७ ॥
दे करि खुशी भए असवार । करि कै जथा जोग सभि कार ।
खां वज़ीर संग मिलाए । मारग दिल्ली तबहि सिधाए ॥ ८ ॥
आगे बाजति चलहि नगारा । भाट नकीबनि सुजसु उचारा ।
जिस मग जगगुरु करति पयाना । सुनहि नारि नर जो सुध काना ॥ ९ ॥
जथा शकति ले तुरत उपाइन । पूजहिं आनि गुरू के पाइन ।
क्रिपा द्रिशटि करि चलति अगेरे । जहिं करि डेरा हेत बसेरे ॥ १० ॥

---

1. प्रस्थान किया । 2. दरबारी लोग ।

तहिं ते आइ दरस को करैं। पुरहिं कामना जो उर धरैं।
होति प्रभाति गमन को ठानैं। सैन भटनि की साथ पयानै ॥ ११ ॥

मग महिं खेलति करहिं अखेरे। बाज, कुही, शिकरे जु बडेरे।
बन के जीव उधारति जाते। पूरब बडे भाग जिन जाते ॥ १२ ॥

अनिक बिलासनि को बिलसंते। पंथ बिखै गमनति हरखंते।
खां वज़ीर निज सुभटनि साथ। चलति संग नित श्री गुरु नाथ ॥ १३ ॥

अनिक रीति ते गुरू रिझावैं। शाहुनि के सुप्रसंग चलावै।
संग अखेर ब्रित्त को करै। जिम गुरु हरखहिं तिम उर धरै ॥ १४ ॥

मधुर बचन ते बहु सनमानै। बैठहि निकट प्रेम को ठानै।
जित कित के नर पूजैं गुर को। हेरति अधिकति शरधा उर को ॥ १५ ॥

संग तुरक गन महिमा हेरे। सोपि करहिं शरधा बहुतेरे।
इस बिधि केतिक दिन प्रसथाने। क्रम करि[1] सकल पंथ उलंघाने ॥ १६ ॥

ब्रिध गुरदास मसंद जि सारे। गुरु रुखसद करि सदन सिधारे।
मिले मात गंगा को जाई। बतसन[2] ढिग जिम धेनु लवाई ॥ १७ ॥

सिमरति सुत को रिदा दुहेली। मौन ठानि करि थिरी अकेली।
पति ब्रितंत को चितवति चिंता। — तुरकेशुर[3] सुधि नही लखंता ॥ १८ ॥

खत्री शत्रु बध्यो तिस पासी। गन छलबल को करति प्रकाशी।
अबि भीचारी[4] करि बुलवाए—। इम बैठी सोचति दुख पाए ॥ १९ ॥

हाथ जोरि ब्रिध ने तबि कह्यो। 'क्यों माता एतो दुख लह्यो ?।
पुत्र तुमारो प्रभू बली है। करहि तहां सभि बात भली है ॥ २० ॥

सगरो जग सिरजनि अरु हानि। निज बल ते करि सकहि महान।
बडे गुरुनि सम जानहु नांही। तनु को अंत समो लखि तांही ॥ २१ ॥

दे करि सिर चंदू के दोश। गए बिकुंठ रहे बिनु रोस।
पित को पलटो अबि इह लहैं। मिलहिं शाहु सो शत्रु दहैं ॥ २२ ॥

नहिं चिंताचित कीजहि माई। मिलहिं पुत्र सों अनंद उपाई।
सुख पौत्रनि को करहिं निहारनि। साचि बचन मम करि उर धारन' ॥ २३ ॥

इत्यादिक बहु ब्रिध समुझाई। कहे ब्रिद्ध के शांति सु पाई।
नित गंगा गुरु नानक ध्यावै। करहि तिहावल बहु बरतावै ॥ २४ ॥

---

1. धीरे-धीरे। 2. बछड़ा। 3. जहाँगीर। 4. चुगली।

निज घर की नित तोरहि कारी। संगति आवै सदा हज़ारी।
हर मंदरि महिं पूजा होइ। बांछति को प्रापति सभि कोइ ॥ २५ ॥
इस प्रकार सगरो विवहार। संमत मात चलहि सभि कार।
उत श्री हरिगुविंद गुनखानी। मग गमने जहिं पुरि पति पानी[1] ॥ २६ ॥
करति सिवर दिल्ली पुरि गए। खां वज़ीर संग बूझति भए।
'तुव मरज़ी कहु कौन सथान ?। डेरा करहिं जहां सुख ठानि ॥ २७ ॥
सरब रीति जहिं बसहिं सुखारे। दिन समूह को करनि गुज़ारे।
जहां सुभट रहिं आछी रीति। संगति गन दरसै जुति प्रीति' ॥ २८ ॥
सुनति खान करि जोरि उचारी। 'बसहु रिदे तुम ध्यान जु धारी।
जहिं सतिसंग प्रभू गुन गावैं। तहां बसहु तुम को बनि आवै ॥ २९ ॥
सिमरहिं संत रूप अबिनाशी। तिन के आप बसति हो पासी।
नगर सुधासर श्री हरि मंदर। निस दिन बसहु तिसी के अंदर ॥ ३० ॥
जिनके सदा सतोगुन लहो। जनु प्रेमी के उर नित रहो।
जो मानहि भाणा करतार। तनु हंता जुति तजै विकार ॥ ३१ ॥
सरल सधीरज उर को हेरे। तहां बास निज करहु बडेरे।
सतिगुर शबद सदीपक जाग। सिहजा सिक्खन सेव जु लाग ॥ ३२ ॥
सत्तिनाम सिमरनि लिवा महां। इह सौरभ[2] ते महिकति जहां।
प्रेमा भगति सुखद जहिं पौन[3]। बसहु अनंद करि अस उर भौन[4] ॥ ३३ ॥
इस पुर महिं मजनू असथान। अविलोकनि रमणीक[5] महान।
केतिक कहति सुने मैं अैसे। श्री नानक जी तिस थल बैसे ॥ ३४ ॥
तहां वास सुख साथ करीजै। प्रथम चलहु देखनि करि लीजै।
दिल पसंद करि उतरहु फेर। नांहित अपर थान को हेरि' ॥ ३५ ॥
इम कहि खां वज़ीर ले चाला। जाइ दिखायहु थान बिसाला।
श्री जमना को सुंदर तीर। पावन परम प्रवाहति नीर ॥ ३६ ॥
जिस देखे उर होति अनंद। इक सम थल, कुछ ऊच बिलंद।
अवलोकति मुद उतर परे हैं। लखि गुरु रुख को सिवर[6] करे हैं ॥ ३७ ॥
तंबू शमियाने गन ताने। रेशम डोर जु अैंचि बंधाने।
खरी कनात बनात खरी की। कित कित चित्रति कार ज़री की ॥ ३८ ॥
गुरु के चहुंदिशि भट समुदाए। निज निज तंबू तहां लगाए।
पंगति लगी तुरंगनि केरी। जहां द्रिशटि करि नित गुरु हेरी ॥ ३९ ॥

---

1. जहाँ पानीपत शहर है। 2. सुगन्ध। 3. पवन। 4. भवन। 5. शोभाशाली।
6. शिविर, डेरा।

तबि वज़ीर खां निकट हकारा। 'करहु आपने सदन उतारा।
जे अवसर बनि है तुव आजू। करहु जनावनि आपनि काजू ॥ ४० ॥

नांहि त पातिशाहु के पासी। सुधि हमरी करि देहु प्रकाशी'।
अस कहि सिरोपाउ बड मोल। बखश्यो सतिगुरु कहि म्रिद बोलि ॥ ४१ ॥

किंचबेग को दूसर दए। ले दोनो सिर पर धरि लए।
ठांढे होइ बंदगी ठानी। बोले म्रिदुल स बिनती बानी ॥ ४२ ॥

'गुरु घर के हम सदा गुलाम। बखश्यो तुम हम पास तमाम'।
रुखसद[1] होइ सदन को गए। शील सरूप सराहति भए ॥ ४३ ॥

उतरे पग कर नीर पखारे। निरमल बसत्र सकल तनु धारे।
गए दुरग महिं मिलि करि दोऊ। शाहु संग मिलिबो चहि सोऊ ॥ ४४ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'दिल्ली पवस श्री हरिगोविंद प्रसंग' बरननं नाम दोइपंचासती अंशु ॥ ५२ ॥

1. विदा लेकर।

अंशु ५३

दिल्ली प्रसंग

दोहरा

पायो अवसर मिलनि को गमने हज़रत पास।
अधिक अदब ते बंदगी निव निव करति प्रकाश ॥ १ ॥

चौपई

नंम्री होति गए जब नेरे। जहांगीर इन दिशि द्रिग फेरे।
देखति बोल्यो शाहु सुजान। 'खां वजीर! ढिग आउ बखान ॥ २ ॥
श्री जग गुरु अरजन के नंद। नाम जिनहुं श्री हरि गोविंद।
गुरता गादी पर अबि बैसे। आए किधौं न कहु सुधि कैसे ?' ॥ ३ ॥
खां वज़ीर कर जोरि अगारी। चातुरता जुति गिरा उचारी।
'बय महिं अलप, ब्रिद्ध बुधि मांही। डील बिलंद और अस नांही ॥ ४ ॥
प्रियमूरति सूरति अति सुंदर। साहिब करामात गुन मंदिर।
कर्यो बिलोकनि जबि हम जाइ। तुमरी दिशि ते कह्यो सुनाइ ॥ ५ ॥
क्रिपा द्रिशटि को ठानि महाना। जिम हम भन्यो सुन्यो तिम माना।
हुइ असवार आप चलि आए। आनि सु उतरे मजनूं थांए' ॥ ६ ॥
सुनति शाहु बहु भयो प्रसंन। कह्यो वज़ीर खां को धंन।
'मुक्त ढिग करति हुते नर चारी[1]। गुरू न ऐहैं निकट तुमारी ॥ ७ ॥
किंचबेग अरु खां वज़ीर। छूछे हटि आवहिं तुम तीर-।
तिन ते सुनि मैं मानती रह्यो। इस महिं तुव बुधि को बल लह्यो ॥ ८ ॥
आछी भई गुरू चलि आए। गन दोशनि[2] ते मोहिं बचाए।
अबि सभि भांति करहु तिन सेवा। हरखावहु नीके गुरदेवा ॥ ९ ॥
हम सो मेल करावहु काली[3]। सभि ते गुरु गादी सु बिसाली'।
इम कहि उठ्यो सभा तजि शाहू। खां वज़ीर आयहु गुरु पाहू ॥ १० ॥

---

1. चुगली। 2. दोषों के समूह। 3. शीघ्र।

शाह ब्रितांत भयो सो भाखा। 'करहि प्राति मिलिबे अभिलाखा'।
तबि लौ जाम दिवस रहि गयो। —गुरु—आए संगति सुनि लयो ॥ ११ ॥
लघु बिसाल गुरु सिख नर नारी। मिलि करि सगरे पुरी मझारी।
उर अनंद धरि करि चलि आए। अग्र मसंद सिक्ख समुदाए ॥ १२ ॥
आनि कर्यो दरशन तिह समो। धरहिं उपाइन करि करि नमो।
शबद रबाबी[1] गावति राग। सुनहिं प्रेम ते जे बड भाग ॥ १३ ॥
दिल्ली पुरि के नर समुदाए। भई भीर गुर दरशन आए।
सुंदरता सरीर बड डीला। अयुध धारी रूप छबीला ॥ १४ ॥
रीति नवीन हेरि करि संगति। बिसमहिं रिदे निकटि थित पंगत।
राज साज को ब्योंत[2] बनावा। पूरब गुरनि रीति नहिं पावा ॥ १५ ॥
हेरि हेरि हरखति सिख परखति। क्रिपा द्रिशटि जन अंम्रित बरखति।
सभिहिनि की होवति अरदास। केतिक पुरवति उर की आस ॥ १६ ॥
दरशन करति न त्रिपतै कोई। निकटि थिरे को खरे सु होई।
गुरु की कार सरब ले आए। भयो उपाइन को समुदाए ॥ १७ ॥
ब्रिंद देवता इकट्ठे होइ। जथा बिशनु पूजहि सभि कोइ।
कै सुरगुरु को मिलि सुर सारे। तिम पूजनि भा गुरू उदारे ॥ १८ ॥
स्याने सिख श्री अरजन गाथा। करति भए तबि श्री गुरु साथा।
'शांतिरूप नित पर उपकारी। सिक्ख उधारे जिनहुं हज़ारी ॥ १९ ॥
दुशट फरेब अनेक बनाए। जहांगीर बहु रीति सिखाए।
लियो अंत को सिर अघ भारी। महिमा नहिं मतिमंद बिचारी' ॥ २० ॥
इम कहि लोचन ते जल डारा। सतिगुरु को उर रूप चितारा।
संगति ते सुनि करि अरु देखि। बोले गुरु दे धीर बिशेख ॥ २१ ॥
'सतिगुर सदा अमर पहिचानहु। अंग संग निज सिक्ख्यनि जानहु।
दोनहुं लोकनि बिखै सहाइ। अनिक बिघन ते लेति बचाइ ॥ २२ ॥
करनो हुतो सु कारन तेसे। गुरु सछंद परतत्र न कैसे।
जहां अराधहिं तहिं मौजूद। दासनि के पूरति मखसूद[3] ॥ २३ ॥
तिन हित चिंत न करीअहि कोइ। सिमरहु अंत सहाइक होइं'।
कहति सुनति रवि असत्यो जाइ। सोदर चौंकी भोग सु पाइ ॥ २४ ॥
करि करि बंदन सभि घरि गए। सुंदर रूप सराहति भए।
'इन को तेज प्रताप बिसाला। निज शत्रुन गन को इह काला' ॥ २५ ॥

---

1. दरबारी गायक। 2. योजना। 3. कामना

चमूं सकल करि खान रु पाना। दीनि तुरंगनि त्रिण अरु दाना।
बहुर सभिनि कीनिसि बिसरामू। सतिगुरु सिमरि रूप अभिरामू ॥ २६ ॥
मजनू थान रहहि इक संता। —गुरु मुक्ति आइ मिलैं—चितवंति।
नितप्रति नेम धारि सिमरंता। बूझों प्रशन पुरख भगवंता— ॥ २७ ॥
सो आयो, जबि भए इकंत। देखि दरस गुरु को हरखंति।
सादर कर्‌यो बिठावनि पासि। करि बदन पद, धरे हुलास ॥ २८ ॥
हाथ जोरि करि बूझनि कीने। 'उर शंशै मुझ करहु सु हीने।
इह जग साच कि झूठो बन्यो ?। निशचै भयो न में मन गुन्यो ॥ २९ ॥
जे करि साच इसे ठहिरावों। पूरब मरे नहीं द्रिशटावों।
जे करि झूठो करौं बिचारनि। सभि प्रतक्ख्य ही होति निहारनि ॥ ३० ॥
साच झूठ दोनहुं बिधि कहैं। आपस बिखै बिरोधी अहैं।
तिमर तेज[1] इकठे नहिं होइ। यांते निरनै[2] मोहि न कोइ' ॥ ३१ ॥
सुनि सतिगुरू तबि उत्तर दीनि। 'जबि नर सुपतहि निंद्रा लीनि।
सुपन अवसथा जबिहूं पाइ। सगल जगत जानहु तिस भाइ ॥ ३२ ॥
जबि लौ सुपना नर को रहै। तबि लौ साचो ही तिस लहै।
भै पावति अरु भाज्यो जाति। कै प्रिय देखति उर हरखाति ॥ ३३ ॥
जे सुपने को झूठो जानहि। त्रास बिखाद हरख क्यों ठानहि।
तबि साचो लखि कै सभि करै। बीरज बिन साचे क्यों गिरै ॥ ३४ ॥
जाग्रत जबहि अवसथा पाइ। जे साचो तबि क्यों न दिसाइ।
यांते अनर बचनि प्रभु माया। जानी परहि न बिन गुर दाया ॥ ३५ ॥
साच झूठ किछु कही न जाइ। तिह कारज इह जग तिस भाइ।
माया को आख्य[3] अग्याना। इस को रूप, न निज को जाना ॥ ३६ ॥
वसतु सत्य को जानहि नांही। कलपहि अपर तिसी के मांही।
दे द्रिशटांत तोहि समझावैं। जग की रचना तथा जनावैं ॥ ३७ ॥
तम महिं रजु को नांहिन जानहि। भ्रम ते बिसीयर[4] तिस को मानहि।
भै धरि कै भाजति कंगाइ। जे हुइ झूठो क्यों डरपाइ ॥ ३८ ॥
जे साचो हुइ बिनसै नाहीं। यांते अनर बचनि लखि तांही।
तिम ब्रह्म रूप नहीं जिन जाना। तिस को भाखति हैं अग्याना ॥ ३९ ॥
जबि अग्यान ब्रह्म को भयो। तिस अग्यान जगत निरमयो।
सतिगुरू बडे भाग ते मिले। सो उपदेश देहिं जबि भले ॥ ४० ॥

---

1. अंधेरा और प्रकाश 2. निर्णय। 3. नाम। 4. विषधर, साँप।

जैसे रज्जू ग्याता कोइ। उपदेशहि-अहि नहिं इह होइ।
मैं नीके हेरी रजु—, कहै। भै अरु कंप तिसी को दहै॥ ४१॥
तिम उपदेश गुरू जबि करै। ब्रह्म अग्यान तिसी को हरै।
कलप्यो जगत सरप की न्याई। ब्रह्म रजु सम लखि सुख पाई॥ ४२॥
बंध्या सुत सम जग नहिं कूरे। इंद्रय विशय दिखति बिधि रूरे।
सत्त्य ब्रह्म की सत्त्या संग। भासति है सति नाना रंग॥ ४३॥
जहिं साचो होवै धिशटान[1]। तहां कलपना बनिहै आनि।
जावति नहिं धिशटान सु जानहि। भावति भ्रम ते कलपनि[2] ठानहि॥ ४४॥
निशचै होइ ग्यान धिशटान। पुनह कलपना करहि न आन।
यांते सुनहु संत श्रुत मांहि। जिह अलंब[3] जग, जाहु तांहि॥ ४५॥
जिस जाने सगरो भ्रम जाइ। सभि वचित्त्रता एक लखाइ।
ब्रह्म सरूप आप हुइ, मानि। सति चेतन आनंद महान॥ ४६॥
जे माया को कीजहि निरनो। इस को अंत न क्योंहूँ बरनो।
जुग कोटानिकोट[4] गन हेरै। तऊ सु लखियति परे परेरै॥ ४७॥
माया की है शकति अनंत। खोजि खोजि हारे बुधिवंत।
किस ते पार न पायो जाइ। यांते एक रहै लिवलाइ॥ ४८॥
सोई भगत संत सो ग्यानी। सोई ततबेता गुन खानी।
धंन पुरख तिन लीनसि लाहा। बिनु इक जाने अखिल फनाहा॥ ४९॥
सुनि सतिगुर के बाक सु साधू। जाने—इह अवतार अगाधू—।
क्रिपा द्रिशटि ते भयो निहाल। तबि गुरू महिमा लखी बिसाल॥ ५०॥
'धंन धंन गुरू' कहि सुभ बानी। पद अरबिंद बंदना ठानी।
'संसै हीन भयो उर मेरा। सुनति बाक अरु दरशन हेरा'॥ ५१॥
जाइ आपने थान रह्यो है। चितवति चित, जो गुरू कह्यो है।
डेढ जाम निसि गई बितीति। उपदेश्यो लखि कै युति प्रीति॥ ५२॥
पुनि सतिगुरू स्री हरिगोविंद। भए अरूढ प्रयंक बिलंद।
पौढि रहे सुख पाइ बडेरे। सावधान चाकर चहुं फेरे॥ ५३॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'दिल्ली प्रसंग' बरननं नाम तीन पंचासति अंशु॥ ५३॥

---

1. आसरा। 2. कल्पना। 3. सहारा, आसरा। 4. करोड़ों।

अंश ५४

सतिगुरू शाह मेल प्रसंग

दोहरा

निसा जाम जागे गुरू कीनो सौच शनान।
आसन करि ग्रासीन तबि निज सरूप धरि ध्यान ॥ १ ॥

चौपई

आसावार रबाबी गावैं। राग रागनी रुचिर बसावैं।
केतिक सिक्ख सुनहिं तहिं आइ। कितिक कंठ ते पाठ अलाइं ॥ २ ॥
सत्तिनाम सिमरति सभि डेरे। जनु अंम्रित बरखंति बडेरे।
प्रात होति लै सतिगुरू बानी। पठति सुनति करि प्रीति महानी ॥ ३ ॥
सूर[1] उदै सभि सूर[2] सु आए। गुरु तंबू दर पर समुदाए।
श्री हरिगोविंद चंद अनिंदे। बिकसे जुग लोचन अरबिंदे ॥ ४ ॥
सूखम बसत्र महिद अभिरामा। गन पालनि को पहिर्यो जामां।
रंगदार सुंदर दसतार। सिर पर शोभति दुती उदार ॥ ५ ॥
ऊपर जिगा जवाहर जरे। कलगी मुकता को गुछ धरे।
नव रतने अंगद भुज पाए। जबर जवाहर गरे सुहाए ॥ ६ ॥
वहिर फ़रश करवाइ बिसाला। तंबू ते निकसे तिस काला।
खरे सकल हुइ बंदन ठानी। दरशन करति गुरू गुनखानी ॥ ७ ॥
कंचन खचति प्रयंक बडेरा। आसतरन ते म्रिदुल घनेरा।
बैठे लग्यो दिवाना महाना। जोधा थिरे शसत्र धरि नाना ॥ ८ ॥
सिख मसंद सेवक समुदाए। खरो मेवरो अरज़ अलाए।
पुरि बासी सिख करे कराह। ग्रावनि लागे गुरू के पाह ॥ ९ ॥
जिनहु भावनी पूरन होई। अरपनि लगे आनि करि सोई।
पुरि ते गुरू लगि लारो पर्यो। दरशन करनि प्रेम उर भर्यो ॥ १० ॥

---

1. सूर्य। 2. शूरवीर।

'कोस सैंकरे जिन हित जाते। आए धरि महिं सो सुख दाते।
को अस मंद भाग ह्वै भारे। जाइ नहिं गुरू दरस निहारे'॥ ११ ॥
इम आपस महिं कहि कहि चाले। सौच शनाननि ठानि उताले।
लै लै संग कराह उमाहे। चलि आवति श्री सतिगुर पाहे॥ १२ ॥
होनि लगी सभि की अरदास। बरतहि पंचांम्रित गुरु पासि।
बहु उतसत्र करि करि नर नारी। दरसहिं गुरु पर है बलिहारी॥ १३ ॥
गन संगति को मेल सकेले। दरसहिं चहुंदिशि गुरू सुहेले।
इतने महिं वज़ीर खां आयो। पग पंकज पर सीस निवायो॥ १४ ॥
सादर तिसै बिठावनि कीनि। पिखि सरूप मुद प्रेम प्रबीन।
हाथ जोरि करि अरज़ गुजारी। 'हज़रति करति याद हित धारी॥ १५ ॥
दरस अपूरब हेरनि चाऊ। सुनि गुन गन मन सहिज सुभाऊ।
गुरू जी बारि बारि तुम बाति। बूझति रह्यो रिदे हरखाति॥ १६ ॥
क्रिपा धारि निज करहु पयाना। मित्रनि सुख दिहु शत्रुनि हाना'।
सुनि करि श्री हरिगोविंद चंद। श्री मुख ते बोले जग बंद॥ १७ ॥
'अबि संगति सगरी चलि आई। धरि शरधा दरसहि सुख पाई।
पूरन इनहु भावनी होइ। बरति कराहु लेति सभि कोइ॥ १८ ॥
गुरु प्रसादि ले घर बरतावैं। सभि परवार जनम सफलावैं।
बहु प्रेमी दरशन हित आए। क्रिम इन त्याग सकहिं, चलि जाए॥ १९ ॥
जबि इन की हुइ पूरन आसा। करि करि दरशन जाहिं आवासा।
तबि हम चलहिं शाहु के पासी। मिलहिं भले, दिल होहिं हुलासी'॥ २० ॥
सुनि वज़ीर खां बहुर उचारे। 'हम भी सेवक सिक्ख तुमारे।
देहु प्रसादि खाइ सुख पावैं। मानुख जनम अपनि सफलावैं॥ २१ ॥
हज़रति के हित दीजहि और। पहुंचावौं मैं तिस ही ठौर'।
तबि सतिगुर दीने हुइ थाल। भरि कराहु संग स्वाद बिसाल॥ २२ ॥
'इक को राखहु अपनि अवास। दूसर देहु शाह के पास'।
ले वज़ीर खां करि कै नमो। उठि तूरन गमन्यो तिस समो॥ २३ ॥
निज निकेति इक पठि करि थाला। दूसरि शाहु निकटि ले चाला।
उतलावति दर उलंघि तमाम। हज़रत कीनि शनान हमाम॥ २४ ॥
निकस्यो बहिर असन रुचि जागी। हुती सीत रुत बहु छुधि लागी।
तबि कराहुले पहुंच्यो तहां। हेरति हज़रत मुख ते कहा॥ २५ ॥
'कहु वज़ीर खां क्या ले आयो? सतिगुर संग नहीं द्रिशटायो'।
कर जोरति तबि कह्यो सुनाए। 'श्री गुरु क्रिपा प्रसाद पठाए॥ २६ ॥

आप त्यारि होवति हित आवनि। प्रथम करहु मुख महिं इह पावनि'।
हुती छुधा ढिग शाहु मंगायो। भर्यो कवर[1] कर आनन पायो॥ २७॥
स्वाद अपूरब पाइ अजाइब। कह्यो 'धनं गुरु नानक साहिब'।
इक शुभ असन दुतिय गुरु कला। त्रितीए छुधा स्वाद अति भला॥ २८॥
अपर ग्रास पुन मुखमहिं पाए। खावति रुचि ते बचन अलाए।
'श्री नानक ब्रिध बय बहु होवैं। अस प्रसाद जिन हित करि जोवैं॥ २९॥
बिना दसन सो खाइं सुखारे। साद बिसाल सभिनि इकसारे।
अबि लौ मैं न स्वाद अस पायो। इह सम अपर बहु खायो'॥ ३०॥
कहि वज़ीर खां 'जो गुरबानी। अति स्वादल सगरे दुख हानी।
मेरो दरद सुनति जिस गयो। परखी तबि तन सभि सुख दयो॥ ३१॥
सुंदर अति सरूप बड डील। देखति रहीअहि म्रिदुल सुशील।
मसु भीजति[2] मुख नेत्र बिसाल। क्रिपा द्रिशटि देखनि शुभ ढालि॥ ३२॥
बोलति मनहु जरति हैं फूल। तुम पर खुशी करहिं अनुकूल'।
इम बोलति अचवन को कर्यो। बैठनि तखत शाहु चलि पर्यो॥ ३३॥
सुनि गुन पुन वज़ीर खां संग। कह्यो 'जाहु चढि वेग तुरंग।
आनहु अबै हमारे पासि। दरशन करौं गुरू सुखरासि'॥ ३४॥
हरखति हज़रत ते सुनि करिकै। गयो गुरू ढिग हय पर चरिकै।
पहुंच्यो उतलावति तबि पास। करी नमो भाखी अरदास॥ ३५॥
गुरू भन्यो 'हम आगे त्यार'। इम कहि भए सु असु असुवार।
जेठा आदि पंच सिख साथ। गमन कीनि श्री सतिगुरु नाथ॥ ३६॥
सने सने हय को ठहिरावैं। तेज होति कुछ अलप कुदावैं।—
मो ते जाति अगारी पौन—। रिसति मरोरति है पग दौन[3]॥ ३७॥
अवनी[4] बजति परति जबि पौर। पहुंचे एव दुरग के पौर।
जो देखति सो सीस निवावै। धीरज मान रिदे बिसरावैं॥ ३८॥
मूरति पिखहि अपूरब अहै। सुंदरता देखति ही रहै।
इह गुरु रूप कितिक नर जानैं। कितिक बिलोकति बूझनि ठानैं॥ ३९॥
'कौन देश को बड महिपाला ?। जहां बसैं, तिन भाग बिसाला'।
पहुंचे जहांगीर के तीर। श्री हरिगोविंद बीर सधीर॥ ४०॥
चौकी तखत समान बिछाई। सुजनी सेत स्वच्छ संगि छाई।
द्वै उमराव आइ अगुवाए। मिले देखि करि सीस निवाए॥ ४१॥

---

1. ग्रास, कौर। 2. दाढ़ी-मूंछ उठ रही है। 3. दोनो पावों को। 4. धरती

ले करि गए शाहु के तीर। बैठि गए चौकी पर धीर।
सादर बंदन करि कै शाहू। रूप बिलोकति बैठे पाहू॥ ४२॥
मनहु बीर रस धर्‍यो सरीरा। दिपति प्रताप रिदे गंभीरा।
हज़रति हेरति बिसम बिचारी। —इह गादी संतनि मत धारी॥ ४३॥
गुरू प्रथम सभि तैसे भए। इनकी क्रांति लख्यो मत नए।
बहिर बेस महिं फरक महाना। अंतर की गति जाइ न जाना॥ ४४॥
जे मत राज साज को धारी। हिंदु तुरक जिस दावे कारी।
तौ निज गादी रीति बिगारी। होइ न बडिआई पुन भारी॥ ४५॥
जे अंतरि मत संतनि होई। बाहर वेख बिगार न कोई।
तथा प्रशन करि परखौं अबै—। इम बिचारि बोल्यो बच तबै॥ ४६॥

'सुनहु पीर जी! जग मत दोइ। हिंदु तुरक महिं नर सभि कोइ।
राम, रखुदाइ, क्रिपाल, करीम। अलह, अकाल, अनंत, रहीम॥ ४७॥

इम कहि क्रिया प्रिथक ही करैं। निज निज को शुभ सभिहि उचरैं।
कौन दौनि महिं आछो अहै?। जग बंधन ते को छुटि रहै?'॥ ४८॥
श्री हरिगोविंद सुनति बखाना। 'सिरजनहार[1] एक हम जाना।
इक सम पंचहुं तत ते बने। इंद्रिय देहि एक सम सने॥ ४९॥
करनहार को सिमरहि जोइ। सभि ते दीरघ जानहु सोइ।
इस पर भगत कबीर बखाना। दुहूं दिशनि को भेद मिटाना॥५०॥

श्री ग्रंथ जी वाक।

प्रभाती स्री कबीर जी की॥
अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे॥ १॥
लोगा भरमि न भुलहु भाई॥
खालिकु खलक खलक महि खलकु पूरि रहिओ स्रब ठाईं॥ १॥ रहाउ॥
माटी एक अनेक भांति करि साजी साजन हारै॥
ना कछु पोच[2] माटी के भांडे ना कछु पोच कुंभारै॥ २॥
सभि महि सचा ऐको सोई॥
तिसका कीआ सभु कछु होई॥
हुकमु पछानै सु एको जानै बंदा कहीऐ सोई॥ ३॥

1. निर्माणकर्ता। 2. कमी।

अलहु अलखु न जाई लखिआ गुरि गुड़ दीना मीठा ।
कहि कबीर मेरी संका नासी सरब निरंजन डीठा ॥ ४ ॥ ३ ॥

चौपई

बाहिर बनाउ एक सम बनयो । अंतर ब्रह्म एक ही भनयो ।
जो नर चहि अपनी कल्यान । तजि जावे को भजि भगवान ॥ ५१ ॥
मानुख जनग अमोलक रतन । दुरलभ प्रापति हुइ बड जतन ।
बिशियनि बिलसनि, बंधनि दावे । इक बिराटिका[1] बदले जावे ॥ ५२ ॥
जे लागे सिमरनि सत्तिनाम । से लाहा लै गे निज धाम ।
जिस के छूटि जाइ भ्रम उर का । तिस कै क्या हिंदू क्या तुरका ॥ ५३ ॥
सभि महिं पूरन एक पछानहिं । जथा गगन व्यापक जग जानहि ।
सत्ता चेतन की सभि पाइ । इक सम ही सभि परहि लखाइ ॥ ५४ ॥
जिनहु देहि हंता दिढ धारी । ते दावे बांधहि भ्रम भारी ।
हलति नहिं सुख, पलति न ढोई । प्रभु ते सदा दुहागणि सोई ॥ ५५ ॥
नहि तनु हंता, होति न दावे । तन बिन अपनि रूप लखि पावे ।
हलति महां सुख, पलति अनंदे । सो प्रभु पति की प्रिआ बिलंदे ॥ ५६ ॥
छुटिबो नहिं जानहि नर अंधा । दावे बंधन ते लहि बंधा ।
तन हंता के बिना बिसारे । नहिं प्रभु पायति अपर अपारे ॥ ५७ ॥
यांते सुनहु शाहु तन मान । इस के त्यागनि ते दुख हान ।
जबि तन हंता भई बिनाश । तबि दावे बंधन कित आस ॥ ५८ ॥
सुनि हज़रत ने रिदा बिचारा । —नयो वेस इक बाहर धारा ।
प्रथम गुरू के मत सम मत है । निशचा एक रीति ही चित है— ॥ ५९ ॥
'धंन पीर जी' वाक बखाना । श्री नानक के हो तुम थाना ।
जिनको सुजसु चंद सम चारू । हिंदु तुरक सभि करति उचारू ॥ ६० ॥
इम कहि अरप्यो दरब हज़ारा । करी भेट उर शरधा धारा ।
सो जेठे ने लीनि उठाइ । रंग शाहु संगि ते हरखाइं ॥ ६१ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'सतिगुरू शाह मेल' प्रसंग बरननं नाम चतुर पंचासति अंशु ॥ ५४ ॥

---

1. कौड़ी ।

अंशु ५५

केहरि निकंदन प्रसंग

दोहरा

'खुशी करहु निज पीर जी सभि सथान निज जानि।
दिहु दरशन को दिन इहां मम इछ पूरन ठानि' ॥ १ ॥

चौपई

इम कहि सुनिकै करे बिसरजन[1]। उठि निकसे ले अपने सिख जन।
शाहु सभा बरखाशत भई। निज निज थान सकल चलि गई ॥ २ ॥
आए श्री सतिगुर निज डेरे। चहुंदिशि बंदन होति घनेरे।
कुछ बिसराम पौढि करि कीनि। घटिका चतुर बिताइ प्रबीन ॥ ३ ॥
बहुर उठे चढि चले तुरंग[2]। नदी बिलोकनि श्यामल रंग।
तीर तीर गमने गुर धीर। हेरति बिमल प्रवाहति नीर ॥ ४ ॥
दूरि इकंत थान बहु सुंदर। उतर परे तहिं श्री गुन मंदर।
सौचाचार कर्यो थल थिरे। जल कर चरन पखारनि करे ॥ ५ ॥
हाथ जोरि तहिं सिक्खनि बूझे। 'शाहु संग किम बाक अरूझे ?।
मुलाकात कैसे करि भई ?। पूरब आइ कीनि अबि नई ॥ ६ ॥
रहे प्रसंन कि नहिं दिशि दोऊ। चारी करति रह्यो सठ जोऊ'।
निज प्रिय जानि दास सिख सारे। मिले जथा, सु प्रसंग उचारे ॥ ७ ॥
'नहीं शाहु के रिदे खुटाई। सादर मधुरी गिरा[3] अलाई।
हिन्दू तुरक बाद की गाथा। बूझति रह्यो हमारे साथा ॥ ८ ॥
जिम संसै कीनो हम आगे। उत्तर पाइ कर्यो अनुरागे।
सुनि सिक्खनि—हितकारी शाहू—। हाथ जौरि पुन कहि गुरु पाहू ॥ ९ ॥
'पापी करि को पाप महाना। राख्यो गोप, नही इन जाना।
सो बिदतावहु बदला लीजै। जस कीनसि तस फल को दीजै' ॥ १० ॥

---

1. बिदाई। 2. घोड़ा। 3. वाणी।

सुनि सतिगुरु बोले सिख भावति। 'गुरु पित पलटा लेहिं न जावत।
तावत सुख सों नींद न आवै। खान पान रुचि ते नहिं भावै ॥ ११ ॥
केतिक दिन महिं गहि करि तांही। हतौं कुमौत[1] तजौं किम नांही।
पूरी करहिं सपथ ए कही। गुरु दोखी उबरहि अबि नहीं' ॥ १२ ॥
इस प्रकार करि बचन विलास। चहैं दुशट को करिबो नाश।
चढि तुरंग पर डेरे आए। खान पान करि निसा बिताए ॥ १३ ॥
बहुर शाहु जबि याद करंता। ढिग हकारि गुरु दरस लहंता।
चढि शिकार को बहिर सिधावैं। बडे झील फिरि बाहरि आवैं ॥ १४ ॥
भई शाह को सुधि गुरु केरी। खिलति अखेर[2] ब्रिती बहुतेरी।
इक दिन ले करि अपने संग। गए शिकार अरूढि तुरंग ॥ १५ ॥
मीर शिकारनि शिकरे लीनि। जुररे, बाज रु स्वान, कुहीनि।
गन गडीरने पर हैं चीते। कातन गमने म्रिग भै भीते ॥ १६ ॥
हते झपट ते लपट बिहंगा। शूकर ससे झंखार कुरंगा।
को तुपकनि ते मारि गिराए। को तीरनि तखारनि धाए ॥ १७ ॥
पाढे घेरि घेरि गुरु मारे। करि लाघवता तीर प्रहारे।
निज आगे को जानि न दीयो। तुरकेशुर हेरति हित हीयो ॥ १८ ॥
आयुध बिद्या महिं बडि जाने। देखि तमाशो उर हरखाने।
सुन्यो प्रथम कित केहरि बली। भई शाहु के उर सुधि भली ॥ १९ ॥
भन्यो सभिनि सों 'करहु पयाना। जित दिशि केहरि सुन्यो महांना'।
तबि आगू हुइ ले गुरु संग। चल्यो शाहु चढि तुंग मतंग ॥ २० ॥
खोजन कर्‌यो सु कानन जबै। भभकति निकस्यो केहरि तबै।
हेरति सूरा क्रितिक पलाए। को सुनि शब्द निकट नहिं आए ॥ २१ ॥
घोरा ठरे मूत्र को छोरा। गज नहिं गमनहिं घोर सु ओरा।
शाहु मतंग थिरहि नहिं कैसे। महां बीर ते काइर जैसे ॥ २२ ॥
तबि पुकार करि गुरु सों कह्यो। खरे सु धीरज को जबि लह्यो।
'तुम ही करहु प्रहारनि इसै। जबि लौं घात करहि नहिं किसै' ॥ २३ ॥
श्री सतिगुरु घोरा तबि छोरा। खड़ग सिपर गहिगे तिस ओरा।
तुपक छुटनि कहि शाह हटाई। पिखनि तमाशो लगि समुदाई ॥ २४ ॥
बर्‌यो बिरे महिं केहरि जहां। लगे बिलोचन सभि के तहां।
धीरज सहत जाति गुरु आगे। मनहुं बीर रस सोवति जागे ॥ २५ ॥

---

1 बुरी मौत। 2. शिकार।

बरन बदन को अरुन बिसाला। गमनति गहे खड़ग अरु ढाला।
निकट होइ करि शेर प्रचार्यो। 'निकसि वहिर अबि क्यों बल हार्यो?'॥ २६ ॥
सनमुख द्रिशटि भई जबि दोऊ। निकस्यो गरजति केहरि सोऊ।
फेरति लांगुल टौर कराला। झटकति सटा भीम जनु काला॥ २७ ॥
लांबी बेल भयानक दांत। बदन पसारि आइ भभकाति।
हेरति लोक सकल बिसमाए। —श्री गुर बचहिं न इस अगवाए॥ २८ ॥
हम आगे अस केहिर महां। नहीं बिलोकनि कीनो कहां—।
ठांढे दूर त्रास को पावैं। देखति गन, को निकट न आवै॥ २९ ॥
आवति सनमुख बदन पसारा। धरि धीरज सतिगुरू निहारा।
बाम हाथ धरि सिपर अगारी। करि प्राक्रम को मुख परि मारी॥ ३० ॥
कुपे[1], ओज ते दीनि धकेला। आगे होइ पछेला मेला।
चंद्रहास चमक्यो कर दाए। गिरति शेर के उदर लगाए॥ ३१ ॥
वही भगौती[2] गुर के कर की। करि तकबीर तुरत दो धर की।
गिर्यो प्रिथी पर पग उलटाए। मर्यो जानि देखनि गन आए॥ ३२ ॥
बरछै हते शाहु के हाथी। तिस दिशि कर्यो जतन के साथी।
कीनि बिलोकनि ह्वै करि पाहू। बली शेर ते बिसम्यो शाहू॥ ३३ ॥
'धंन धंन' सतिगुर को कहै। खरो निकटि तिस की दिशि लहै।
केहरि को निकस्यो तबि जीव। महा प्रकाशवंति सो थीव॥ ३४ ॥
आरुनता फैली सभि गैन[3]। देखति शाह उठाए नैन।
बूझे गुरू 'कहां इह भयो?। कौन हुतो मरि कित इह गयो॥ ३५ ॥
क्यों प्रकाश अैसो द्रिशटायो। पिख्यो अपूरब मैं बिसमायो'।
सुनि श्री हरि गोबिंद बखानो। 'कासम बेग नाम इस जानो॥ ३६ ॥
तुम हकारिकै बूझनि कीजै। सुन्यो चहहु सो उत्तर लीजै'।
जहांगीर ले नाम गुहारा। तिन तरु पर थिरू होइ उचारा॥ ३७ ॥
'पूरब जनम हुतो नर तन मैं। अबि केहरि हुइ बासौं बन मैं।
पातिशाह अकबर तुव तात। लगति कबीले महिं तिस भ्रात॥ ३८ ॥
इक दिन अमरदास गुरु पास। गयो शाहु करि दरशन आस।
हुतो संगि मैं दिखि रिस छाई। —क्या पूजनि हिंदू ढिग जाई?॥ ३९ ॥
चल्यो नहीं मेरो कुछ चारा। मुख ते बहु अपवाद उचारा।
नरनि सुनाइ निंद मैं करी। जरी न गुरु कीरत, मति जरी॥ ४० ॥

---

1. गुस्से से भरकर। 2. तलवार। 3. आकाश।

निस महिं डेरा गोइंदवाल। उठ्यो अचानक सूल बिसाल।
खाने बिखै मास रहि काचा। खायो मैं सु उदर नहिं पाचा ॥ ४१ ॥
गुरु अरु मास चितवना चित मैं। दुख ते होति भयो तवि म्रितु मैं।
मास दोश ते धरि तन शेर। गुरु चितवति फल लह्यो घनेर ॥ ४२ ॥
आप आनि करि मुझ को मारा। भव सागर ते कीनि उधारा।
तूं बडभाग दरस को पावति। ध्यान जुगीशनि के जो भावति ॥ ४३ ॥
इम कहि सुरग बिखै चलि गयो। सुनति शाह मन मैं बिसमयो।
रूप अकार न देखति भयो। जनु तरु बोलति इम सुनि लयो ॥ ४४ ॥
सतिगुर की महिमा बडि जानी। बली बीर अति कीरति ठानी।
करामात साहिब गुरु गादी। करी हज़ारनि के घट शादी[1] ॥ ४५ ॥
बडे बहादुर गुरु बल भारी। गेर्यो शेर सिपर मुख मारी।
जथा डील तिम आयुध धारी। कोइ न समसर[2] होइ तुमारी ॥ ४६ ॥
हज़रति हरखति ले गुरु तीर। सने सने[3] हटि गमने धीर।
रूप बिलोकति सुजसु बखानति। गुरु बोलति सुनि पुन सनमानति ॥ ४७ ॥
पुरि के निकट गए जिह समो। शाहु बंदि कर कीनी नमो।
सतिगुरु निज डेरे को आए। शाहु दुरग प्रविश्यो निज थाए ॥ ४८ ॥
सभि उमराव जिनहुं गुरु देखे। आपस महिं जसु करति विशेखे।
'बली बहादुर बीर बिलंद। उतरि केहरी कर्यो निकंद ॥ ४९ ॥
करि बहादुरी शाहु दिखाई। कीरति आप बदन ते गाई।
खान पान करि खिलकत[4] सारी। सुपति जथा सुख निशा गुज़ारी ॥ ५० ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'केहरि निकंदन' प्रसंग बरननं नाम पंचम पंचासति अंशु ॥ ५५ ॥

---

1. प्रसन्नता। 2. समान। 3. धीरे-धीरे। 4. उपस्थित समूह।

अंशु ५६

दिल्ली ते कूच करनि प्रसंग

दोहरा

बीति गई सो जामनी[1] कीने सौच शनान।
बसत्र शसत्र गुरु पहिर करि बैठे लाइ दिवान ॥ १ ॥

चौपई

हाननि पंचानन को काननि। को आनन भनि को सुनि काननि।
सुधि हित आए सिक्ख पुरि बासी। देखति दरशन बैठे पासी ॥ २ ॥
बूझति भे प्रसंग जिम भयो। 'केहरि बली आपि हति दयो।
सुख सरीर सारे पर रह्यो ?। नख को घात नहीं कित लह्यो ? ॥ ३ ॥
ढिग मसंद ने सकल सुनाई। 'जंबुक[2] सम सुखेन लिय घाई'।
इतने महिं वज़ीर खां आयो। हाथ जोरि करि सीस निवायो ॥ ४ ॥
बैठ्यो निकट सुजसु बहु कह्यो। 'शाहु आपि ढिग आवनि चह्यो।
श्री सतिगुर डेरे बिच रहो। नहिं आगवन इहां को चहो-॥ ५ ॥
तिम कहि मोकहु पठयो अगारी। भयो प्रसंन हेरि बल भारी'।
बैठि रह्यो करि गुरू समीप। उत भा त्यारि तुरक अवनीप[3] ॥ ६ ॥
चलि मजनू के आइ सथान। गुरु करिवाइसि फरश महान।
करि डसवावनि बडि मसनंद। धरि पाछे उपधानु बिलंद ॥ ७ ॥
गादी पर बैठे गुरु पूरे। चामर चलहि चलाचल रूरे[4]।
बडो दिवानि लग्यो तिह समो। आनि अनेक ठानिते नमो ॥ ८ ॥
जहांगीर जबि बैठे हेरे। हय ते उतरि आइ तबि नेरे।
करि अभिबंदन बैठ्यो पास। कहि अखेर के बाक बिलास ॥ ९ ॥
'केहरि बली आपि के मारा। पुन ब्रितंत तिन अपनि उचारा।
साहिब करामात गुरु गादी। सिक्खनि दियो ग्यान अहिलादी[5] ॥ १० ॥

1. रात। 2. गीदड़। 3. बादशाह। 4. सुन्दर। 5. प्रसन्न होकर।

श्री हरिगोविंद सुनति उचारा। 'अंति समं जिस जस मन धारा।
पाइ जून तस करम अधीन। भोगति दुख सुख को जिम कीन'॥ ११॥
घटिका एक बैठि करि शाहू। गमन्यो पुन उर धारि उमाहू।
इस प्रकार बीते दिन केते। सतिगुरु निज सिक्खनि सुख देते॥ १२॥

पुरि ते सिख संगति चली आवैं। भए बिलोचन को फल पावैं।
चंद बदन को दरशन करि करि। बैठति निकट अनंद उर भरि भरि॥ १३॥

कमल पांखरी आंखि बिसाले। तीनख कोर बान अनियाले।
दरशन करहिं कामना पावैं। अनिक अकोरनि को अरपावैं॥ १४॥

इस प्रकार सिक्खी बिसतारी। करनि पयान शाह भा त्यारी।
पठ्यो वज़ीर खान को तबै। करि बंदन प्रसंग कहि सबै॥ १५॥

'हज़रति कही करनि असुवारी। कह्यो आप सों—कीजहि त्यारी।
नगर आगरै चलि करि थिरैं। केतिक दिन बिलास तहिं करैं॥ १६॥

करहु आप भी सैल घनेरे—। शाहु दहति है मेल बडेरे।
खेलहु मिलि अखेर[1] बिधि नाना। बन उपबन को पिखहु महाना॥ १७॥

कह्यो शाहु मन प्रेमी ह्वै कै। —गमनहु संग क्रिपा निज कै कै'—।
इत्यादिक कहि कीने त्यारि। भए साथि सतगुरु असुवारु॥ १८॥

गमने पंथ आगरे चले। हित अखेर हज़रत कबि मिले।
हनहिं म्रिगनि कहु अधिक धवाइ। देखति ओज[2] शाहु हरखाइ॥ १९॥
इम क्रम क्रम ते पहुंचे जाई। थिरे आगरे पिखि शुभ थाई।
कबि कबि मिलहिं निकट बुलवावहिं। होइ एकठे वहिर सिधावहिं॥ २०॥

इक दिन किस को मुख ते सुन्यो। गुरु को 'सचु पतिशाहु' सु भन्यो।
जहांगीर उस संसै भयो। —मुझ ते भी उचो पद थियो॥ २१॥

रह्यो गिनति चित महिं अधिकायो। —इह किम नाम अपनि धरायो।
साचो पातिशाहु नरे कहैं। इती जिठाई क्यों करि लहैं॥ २२॥

एक द्योस[3] पुन चढे शिकार। भयो मेल बोल्यो हित धारि।
'सुन्यो जगत महिं नाम तुहारा। कहि—साचा पतिशाहु - उदारा॥ २३॥

गुरु नाम तुम को बनि आवै। जथा प्रथम ही बिधि कहिवावैं।
सुनि बोले श्री हरगोविंद। 'अैसो नाम जि कहिं जग ब्रिंद॥ २४॥

---

1. शिकार। 2. जोश। 3. दिन।

अरुपहिं भेट आइ दरसै हैं। दूरि दूरि ते संगति अैहै।
हम नहिं किस को कहैं कदाई। आपहि नाम धरैं समुदाई ॥ २५ ॥
जहांगीर को कहि समुझायो। तऊ न निशचे तिस उर आयो।
श्री गुरु जानि लीनि मन केरी। —लखि न सकहि बिनु लोचन हेरी—॥ २६ ॥
बिपन[1] शिकार खेलि करि आए। धनु तरकश, कट खड़ग सुहाए।
संगति अधिक आगरे नगर। हित गुरु दरसन आए सगर ॥ २७ ॥
उत्तम अनिक अकोरनि ल्याए। 'पंचाम्रित करिकै समुदाए।
मनोकामना जिम करि आवैं। दरशन करे गुरु के, पावैं ॥ २८ ॥
सुंदर डील बिलंद सुशीला। मुख मंडल जनु चंद छबीला।
भुजा प्रलंबति आयुत छाती। दिपति दसन जनु हीरनि पांती ॥ २९ ॥
क्रिपा भरे अरबिंद बिलोचन। पिखहिं कटाखनि बंधनि मोचन।
इत्त्यादिक सुंदरता सारी। महांराज के लच्छण भारी ॥ ३० ॥
करि संगति दरशन, हरखावै। जोधा गुरु बिलंद सुहावै।
'इहि घालहिंगे कबि घमसाना। महांबीर करि हैं रिपु हाना' ॥ ३१ ॥
इत्त्यादिक जसु को बिसतारैं। बार बारि गुरु रूप निहारैं।
कुशल प्रशन गुरु सभि सों करैं। क्रिपा द्रिशटि दासनि परि धरैं ॥ ३२ ॥
निकटि निकटि के पुरि अरु ग्रामू। आवैं सुनति सुजसु अभिरामू।
सिवख्य सैंकरे बनहिं नवीन। लोक प्रलोक श्रेय को चीन ॥ ३३ ॥
दिन प्रति रहित अधिक ही मेले। दरशन करि करि होहिं सुहेले।
मनोकामना गुरु ते पावैं। जहिं कहिं गमनहिं जस बिदतावैं ॥ ३४ ॥
बहुरो इक दिन चढे शिकार। जहांगीर ह्वै करि असुवार।
कहि करि सतिगुरु संग चढाए। हयनि कुदावति चले अगाए ॥ ३५ ॥
श्री हरिगोविंद दूसरि शाहू। दोनहु असु पर गमनति राहू।
कानन चले जाति उतसाहू। भनति सुनति बच अपसि मांहू ॥ ३६ ॥
जहां म्रिगनि को अधिक बसेरे। लिए जाति भेती जि अगेरे।
कूकर, चीते, बाज घनेरे। बहरी, जुर्रे बेग बडेरे ॥ ३७ ॥
संगि बावरै लेति सिधाए। जाइ प्रवेशे बन समुदाए।
सतिगुरु अरु हज़रत इक संगि। करैं धवावनि वेग तुरंग ॥ ३८ ॥
बन के जीव घेरि करि मारहिं। निकसहिं अग्र न जियत सिधारहिं।
तीरनि संग अैंचि गुरु हने। जहांगीर संघारति घने ॥ ३९ ॥

1. विपिन, जंगल।

स्वान[1] गहैं अरु चीते छोरहिं। जानि न देति फांध करि दौरहिं।
इस बिधि करि अखेर को नाना। पिखहिं तमाशो करति पयाना[2]॥ ४० ॥

वहुर भई तछिन बड धाम। चाहति उतरनि हित बिसराम।
बन को छोरति हटे पिछेरे। हेरति छाया सघन घनेरे॥ ४१ ॥

देखि सथान रुचिर तरु तरे। उतर्‌यो शाहु खेद[3] परहरे।
तिस ते कितिक दूरि गुरु थिरे। तरे तरोवर के सुख करे॥ ४२ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'दिल्ली ते कूच करनि' प्रसंग बरननं नाम खट पंचासति अंशु ॥ ५६ ॥

1. कुत्ता। 2. प्रस्थान। 3. थकावट।

अंशु ५७

आगरे आगवन प्रसंग

दोहरा

शाहु तरोवर के तरे अलप नरनि तिह संग।
बैठ्यो हित बिसराम के खरो समीप तुरंग॥ १॥

चौपई

तैसे कितिक दूर गुर थिरे। घाम तपत निरवारनि करे।
तहिं इकि घाही चलि करि आयहु। घाम खुरचबे हित ललचायहु॥ २॥
आवति सुन्यो—गुरू इत आए। हित शिकार के अग्र सिधाए—।
हरख्यो—मैं इत दर्शन पाऊं। मनोकामना सभि पुरिवाऊं॥ ३॥
संग नरनि की भीर न कोई। मसतक टेकों दरशन होई।
हाथ जोरि मैं अरज़ गुज़ारौं। मन तन के दुख सभि निखारौं–॥ ४॥
इम चितवति चलि करि तहिं आयहु। जहांगीर जहिं थिर सुख पायहु।
बूझनि लग्यो 'साच पतिशाहु। कित उतर्यो कहीअहि मुझ पाहु ?॥ ५॥
शाहु नरनि कुछ समझ्यो नांही। जन्यो हज़रति हेरनि चाही।
दियो बताइ 'अमक तरु तरे। छाया सघन बिखै तहिं थिरे'॥ ६॥
इम ही बूझति पहुंच्यो जाइ। जहांगीर बैठ्यो जिस थाइं।
बरजन वारो नर जहिं खरो। तिस ढिग जाइ बूझबो करो॥ ७॥
'बैठ्यो जहिं साचो पतिशाहू। भेट चढावनि चाहति पाहू।
शाह समुख देखति इम कह्यो। 'आवनि देहु कहां इन लह्यो॥ ८॥
किन्हु न बरज्यो रुख को हेरे। कर धरि टका गयो तबि नेरे।
वेख सरूप देखि सो घाही। अधिक अनंद धारि उर मांही॥ ९॥
आगे टका राखि निज कर ते। बंदन करि नंम्रि हुई सिर ते।
हाथ जोरि पुन अरज़ गुज़ारी। 'साचो पातशाहु, गुरु भारी!॥ १०॥
दरशन की अभिलाख घनेरी। सुनहु श्रोन ते बिनती मोरी—।
दीन दुनी को मालिक अहैं। साचो पातिशाहु—इम कहैं॥ ११॥

दास गरीब जानि करि मोही। बनहु सहाइ म्रितू जबि होही।
अपर कामना कोइ न नाथ! जम ते शखहु दे करि हाथ' ॥ १२ ॥
जहांगीर सुनिकै बिसमायो। —गुरू जानि मोकहु इह आयो।
मो महि कहां शकति है अैसे। रच्छा करों पलति महि जैसे ॥ १३ ॥

दुनीआं महि करिबे समरत्थ। नहीं दीन कुछु हमरे हत्थ।
श्री हरिगोविंद मुझको जाना। यांते इस बिधि बाक बखाना ॥ १४ ॥
दीन दुनी जो करहि सहाइ। सचि पतिशाहित तिस बनि आइ।
गुरू कहति थे जो मम पास। करहिं आप नर नाम प्रकाश ॥ १५ ॥
हम नहि किस के संग बखानहिं। साचो पातिशाहु जगु जानहिं।
कहैं आप ही ते इह नामू। बिदत्यो सगरे पुरि अरु ग्रामू ॥ १६ ॥
इह कहिबो गुर को सभि साचा। लगनि न देत दास दुख आंचा।
इम चित महि चितवति भा शाहू। गुर निशचै होयहु उर मांहू ॥ १७ ॥
'घाही सुनि' तबि कह्यो सुनाई। 'हम दुनीआं के शाहु कहांई।
अंतकाल ह्वैं नही सहाइ। तहिं कुछ हमरे बस न बसाइ ॥ १८ ॥
साचो शाहु गुरू जिस कहैं। अपर थान सो उतर्यो अहै।
तिन ढिग पहुंचहु अरज़ गुज़ारो। रिदे मनोरथ को तहि सारहु' ॥ १९ ॥
इम सुनि टका उठाइ सु घाही। गमन्यो अपर नरनि के पाही।
'श्री हरिगोविंद सच पतिशाहू। उतरे कहां ? देखिबे चाहू ॥ २० ॥
मोहि बतावहु सोइ सथान। बिदत गरीब निवाज महान'।
सुनि लोकनि गुरु थान बतायो। जहि तरु छाय अराम सु पायो ॥ २१ ॥
पहुंच्यो जाइ दरस को करिकै। बंदन कीनि धरनि सिर धरि कै।
टका राखि करि अरज़ गुज़ारी। 'मैं आयहु गुरु शरनि तुमारी ॥ २२ ॥
अंतकाल महि बनहु सहाई। जमदूतनि ते लेहु बचाई।
अभिलाखति बहु दिन ते दरशन। आज भाग बडि ते भा परसन ॥ २३ ॥
नाम ग़रीब निवाज़ तुमारा। करहु निबाहन बिरद उदारा'।
सुनि सतिगुरू क्रिपाल बखाना। 'सिमरहु सत्तिनाम कल्याना ॥ २४ ॥
धरम किरत करि खाहु अहारा। इन दोइन ते सदा सुखारा।
नहि जमदूत देखिबे पावहिं। कर ते करि सतिगुरू बचावहिं' ॥ २५ ॥
सुनि बंदन करि गमन्यो घाही। अधिक अनंद धारि उर मांही।
तपत निवारी समां बिताइ। चढ्यो शाहु सतिगुरू बुलाइ ॥ २६ ॥
महिमा महां मान करि मन मैं। जहांगीर प्रेमी गुर तन मैं।
देखति निकट तुरंग चलावै। मुसकावति मुख बाक अलावै ॥ २७ ॥

सनै सनै पुरि मैं चलि गए। निज निज सिवर उतरते भए।
सुख सों निस दिन कितिक बताए। कबि कबि शाहु मिलहि बिगसाए ॥ २८ ॥
पुन इक दिन तैसे चढि शाहू। गुरू बुलाए पठि नर पाहू।
हुतो प्रभात समो हुइ त्यार। ज़ीन तुरंग सजि भे असवार ॥ २९ ॥
नगर आगरे इक घर मांही। सिख की सुता असिख के ब्याही।
गुरु दरशन को चाहति रहै। पति ससुसार न आइसु लहै ॥ ३० ॥
जबि इशनान करनि कउ लागहि। मुख ते इम कहि मनु अनुरागहि —।
श्री गुर साचे जे करि अहैं। सभि घट घट की सुधि को लहैं ॥ ३१ ॥
तौ मम आसा पूरन करिअहि। अगने दरशन इहां दिखरीअहि —।
इस बिधि बोलति ले करि नीर। करहि सु मज्जन सौच शरीर ॥ ३२ ॥
नितप्रति कहिबो को करि नेम। चाहति दरशन मन महिं प्रेम।
तिस को चितवति सतिगुरु चाले। करति निबाहन बिरद बिसाले ॥ ३३ ॥
जाति बीथका[1] तिस घर जोई। हय चपलाइ चलहिं चहि सोई।
लेकरि जल को हेत शनान। चढी सदन पर समां पछान ॥ ३४ ॥
उत ते सतिगुर तहिं चलि आए। तिस के सदन जबहि नियराए।
सिख तनुजा जबि जल तन डारति। जिम नित बोलति तथा उचारति ॥ ३५ ॥
'जे साचो गुर अंतरजामी। पुरहिं कामना मम जगस्वामी।
इहां आइ दरशन दिखरावहिं। मुख मंडल दुति सदन सुहावहिं' ॥ ३६ ॥
सुनि सतिगुर निज श्रौन मझारा। रोकि तुरंगम बाक उचारा।
"समै शनान बखानति जाचा। चाहति परख्यो जो गुर साचा ॥ ३७ ॥
सो उठि करि पुरवौ निज आसा। नित चाहति जिस दरशन पासा'।
सुनि करि तनु को तुरत अछादा। ततछिन उठि धरे अहिलादा ॥ ३८ ॥
सुंदर बदन चंद मानिंदा। श्री हरिगोविंद रूप बिलंदा।
लोचन कीनि चकोरन जोरा। हुइ बलिहारी जुग कर जोरा ॥ ३९ ॥
अधिक प्रसंन भई मनमांही। प्रेम अधिक जांके तन मांही।
सीस निवाइ बंदना ठानी। रुकी प्रेम ते आइ न बानी ॥ ४० ॥
'धंन गुरू पूरन अवतारा। कर्यो सफल मुझ संसै टारा।
पुरवो दास मनोरथ घने। करे उधारनि जांहि न गने' ॥ ४१ ॥
जसु को करति रही चिर काल। चले गुरू सो भई निहाल।
चंचल चारु तुरंग चलावति। देखति मुख नर नारि लुभावति ॥ ४२ ॥

1. वीथि, गली।

शाहु संग मिलि गमने बन मैं। करति अखेरनि बांछति मन मैं।
शूकर[1] ससा कुरंग[2] हराए। स्वान रु चीते छोरि गहाए॥ ४३॥

अभिलाखति फिरि बन के महीआ। हरे नगर को हरख उमहीआ।
निज डेरे महिं आन बिराजे। डील दराज़ प्रलंब[3] भुजा जे॥ ४४॥

जसु बिसत्रिति[4] भयो तिस देश। दिन प्रति संगति आइ विशेश।
दासनि करहिं कामना पूरी। जग महिं सुनि इह कीरति रूरी॥ ४५॥

सेवक नए अनेक सुजाने। आवति दरशन को सुख माने।
लें गुर ते पग पाहुल घने। उपदेशहिं दासनि हित सने॥ ४६॥

सुनि करि सुजसु सुजन रखग्रावहिं। निंदक चंदु आदि दुख पावहिं।
करहि मेल को शाहु घनेरे। कवि हकारि, कै आवति डेरे॥ ४७॥

दरब अकोर बसत्र बहु मोले। अरबहि हयों[5] जो देशनि टोले।
इस बिधि केतिक दिवसु बिताए। नगर आगरे थिर सुख पाए॥ ४८॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'आगरे आगवन प्रसंग' बरननं नाम सपत पंचासति अंशु॥ ५७॥

1. सूअर। 2. हिरण। 3. लम्बी भुजाओं वाले। 4. विस्तृत। 5. घोड़ा।

अंशु ५८

शाहु को नज़ूमी भ्रमावनि प्रसंग

दोहरा

दिन प्रति पिखि इख़लास को जहांगीर गुरु केर।
अदब करहिं उमराव सभि बंदहिं जबिहूं हेरि॥ १॥
चंदू के मेली दुखहिं निंदक अपर बिसाल।
जथा चोर पिखि चंद को जानहि दुखद कराल॥ २॥

चौपई

चंदू सुनहि शाहु को मेल। करहि अखेर होहि गुरु गैलि[1]।
दरब पंच सै नीति[2] पुचावै। कहहि मधुर सनमान बधावै॥ ३॥

—मम प्राननि को शत्रू महां। शाहु संग मिलि धन गन लहा।
नित प्रति मिलहि बधहि अधिकाइ। इम जे भयो मोहि दुखदाइ॥ ४॥

बिना उपाइ बिन चिंत जि रहों। नहीं बचौं तिन ते दुख सहों।
मैं बनि चुगल मुगल पति[3] पास। चुगली उगली बोल्यो तास॥ ५॥

बुरा करनि तिस कीनि उपाइ। भला बिसाल बनति नित जाइ।
खर कंटक लखि बोवनि कर्यो। सो तो रह्यो कमल शुभ खिर्यो॥ ६॥
धन सुगंधता जिस ते पाई। यौं बिपरीति भई बरिआई।
अबि को जतन बनावौं अैसे। हरिगुविंद काराग्रिह बैसे॥ ७॥
तहां दरब को लोभ दिखावौं। कैद बिखै कहि कै मरिवावौं।
तौ बचाइ मेरौ हुइ जाइ। मिलहि न शाहु संग किम आइ—॥ ८॥
इम गिनती को गिनति हमेश। संकट चिंता जिसहि विशेश।
गिनति गटी को जतन बिचारा। मिल्यो नजूमी[4] सों हित धारा॥ ९॥

---

1. साथ। 2. नित्य, हररोज़। 3. जहांगीर। 4. ज्योतिषी।

निस में तिमिर[1] भए घर गयो। दरब पंच सै तिस को दयो।
भनति बिनै समु तिसके साथा। 'मेरो भलो अहै तुव गाथा। ॥ १० ॥
चित दे करहु इही उपकार। अपर देउं धन पंच हज़ार।
हुइ लचार मैं तुझ ढिग आयो। बनि सहाइ अबि हौं शरनायो॥ ११ ॥
सुनति नजूमी बोलनि कीनि। 'शाहु दिवान भए किम दीन।
सिर के जोर करौं तुव काजा। फेर शाहु मति सहत समाजा॥ १२ ॥
को दुख भयो सुनावन कहीअहि? मैं निखारौं चित न धरीअहि'।
सुनि तबि सभिहि ब्रितंत उचारा। 'हिंदु गुरू संग वैर हमारा॥ १३ ॥
तुझ ते परदा नाहिन राखौं। जथा भई सगरी मैं भाखौं।
गुरु अरजन को सदन उतारा। दे सजाइ बड पूरब मारा॥ १४ ॥
अबि तिस को सुत हरिगोविंद। कर्यो शाहु सों मेल बिलंद।
मैं करि चारी[2] इहां हकारा। आइ आपनो काज जवारा॥ १५ ॥

तिस को हत्यो चहति मैं अबै। इस उपाइ चितव्यो सुनि सबै।
तूं कहि शाहु संग अस बात। साढसती आई बक्ख्यात॥ १६ ॥
मुख मुरझाइ बनहु दिलगीरि। जिस ते शाहु धरै नहिं धीर।
म्रित को भै दिखरावनि करीअहि। बूझै जतन त एव उचरीअहि॥ १७ ॥
हरि गुविंद आखय वक्ख्यात। सोढो होइ सु खत्री जाति।
हित तुमरे सो फेरहि माला। थल गुलेर महिं बैठि निराला॥ १८ ॥
तबि सुखैन दिन बितहिं तुमारे—। एव प्रबोधहु जाइ सकारे[3]।
टरहि शत्रु तबि लिहु धन घनो। करहु जतन बहु बुधि ते भनो॥ १९ ॥

तबहि नजूमी धीरज दीनि। 'मैं इम करौं चित करि हीन।
शाहु करति नित मैं जु बताए। पूरब अनिक[4] बार पतियाए[5]॥ २० ॥
इक मेरे कहिबे की देरि। सुनति गुरू को पठहि गुलेर'।
गयो चंदु तबि हरख धरंता। जान्यो गह्यो न छुटहि कदंता॥ २१ ॥
पित कै सम करि कै इस हान। तबि निचिंत हुइ टिकों सथान—।
निस महिं पर्यो रह्यो नहिं सोवा। गिनत गटी चित चित परोवा॥ २२ ॥

भई प्रभाति नजूमी गयो। बगल किताब मलिन मुख कियो।
जाइ सलाम शाहु सों करी। कहिन बात चातुरता धरी॥ २३ ॥
मलिन नजूमी की दिश हेरि। शाहु बिहस बूझति 'है खैर?।
किम आवति है मन मुरझायो?। कछू काज तौ नहिं बिगरायो॥ २४ ॥

---
1. अंधकार। 2. चुग़ली। 3. प्रात:काल। 4. अनेक। 5. विश्वास।

सुनि करि कहिन लागि छल सानी। 'विद्या करहिं बिचार महानी।
दयो आप को सभि कुछ खाति। चहिं दिन रैन ख़ैर[1] तुव गाति॥ २५॥
खोजनि करे भले ग्रैह सारे। साढसती अब्रि चढी तुमारे।
क्रूह महद इह दुख की दाता। जिस पर चढति करति इह घाता॥ २६॥
पुन उपाइ मैं अधिक बिचारे। जिस ते नीकी रहै तुमारें।
सुनति शाहु दलकयो[2] धरि त्रासा। 'कबि ते चढी कहहु मुझ पासा ?॥ २७॥
जतन बिचार्यो सो कहि दीजैं। साढसती बल जिस ते छीजैं'।
तबहि नजूमी बाक उचारे। 'दुखद चढी इह आज निहारे॥ २८॥
बहु लोकनि को नहीं सुनावहु। राखहु गोप महां फल पावहु।
सोढि बंस खत्री शुभ जाती। हरि गोविंद नाम बक्ख्याती॥ २९॥
करहि शनान तीन हूं काला। दुरग गुआलियर थान निराला।
गहि करि माला बैठहि बरनी। ठानि मौनि करि अैसे करनी॥ ३०॥
तुमरे हेतु मनोरथ धारै। पाक अलाह रिदै संभारै।
करह जतन हुइ ख़ैर तुमारी। साढसती बल हुइ निरवारी॥ ३१॥

अपने देश अशेश विशेश। खोजहु अस नर मिटहि कलेशं।
सुनति शाहु चित चिंत परोवा। कहे नजूमी के डरु होवा॥ ३२॥
इक चंदू दुइ त्रै उमराऊ। हुते समीप, बिलोकि सुभाऊ।
सभिनि एक मति पूरब गिन्यो। तऊ न बिनु बूझै तिन भन्यो॥ ३३॥

कितिक काल सोचति रहि शाहू। बोल्यो वहुर बिलोकि पाहू।
'अस नर है कि नहीं किस ठाहर ?। नतु खोजहु पुरि करि बहु आहर॥ ३४॥

करहि जु बरनी फेरै माला। मोहि बिखाद बिनाश बिसाला।
अस आनहु खोजहु पुरि सारे। तिस को दै हौं दरब उदारे'॥ ३५॥

चंदू इक उमराव सु प्रेरा। शहु संग बोल्यो तिस बेरा।
'अैसा नर रावर के पास। सगरे पते मिलति हैं तास॥ ३६॥

जो हिंदुनि महिं गुरू कहावै। लाखहुं सिख बनि सीस निवावैं।
जिनहु वहिर केहरि[3] को मारा। सो इस बिधि को रिदे बिचारा॥ ३७॥
सोढी कुल खत्री तिन जाति। हरि गोविंद नाम बक्ख्याति।
करामात भी सुनी सु राखै। लोक सकल—गुर गुर–तिस भाखैं॥ ३८॥
दरब पंच सै रावरि घर ते। पहुंचति नित अनंद सों बरते'।
कहै शाहु 'सो तौ गुर पीर। मरउत शरधा पिखि भे तीर॥ ३९॥

---

5. कुशल। 1. काँप उठा। 2. शेर।

किम इह बात कहनि बनि आवै । बरनी करनी दुरग सिधावै ।
श्री नानक गादी जु भली है । तिस पर बैठ्यो वाक बली है' ॥ ४० ॥
सुनि बोल्यो तबि चंदु कुपात्रा[1] । 'तुम कुल के दीपक चवगत्रा ।
जहां पनाह आप बड भागे । सभि जग के द्रिग तुम दिशि लागे ॥ ४१ ॥
ख़ैर शरीर जि होहि तुमारे । तौ गिनती अस कहां बिचारे ।
तुम ते श्रेशट अपर न कोई । रावरि श्रेय करहि नहिं जोई ॥ ४२ ॥
श्री नानक गादी पर बैसा । रिदे न संसा कीजहि अैसा ।
सो वेदी कुल महि तन पायो । इह सोढी खत्री कुल जायो ॥ ४३ ॥
बिना संदेह पठावनि करीअहि । अपर न गिनति कोइ बिचरीअहि ।
जे रावरि तनु की सुख होइ । प्रान देति हम देरि न कोइ ॥ ४४ ॥
तुम कशट जि बांट्यो जाइ । हम सहि लेहिं रिदे हरखाइ ।
जे इम सुनि है हरिगोबिंद । करहि जाप लहि अनंद बिलंद ॥ ४५ ॥
नहिं सकहु तुम आप उचारहु । दिहु सनमान समीप हकारहु' ।
पुन तीसर उमराव बखानै । 'विद्या महां नजूमी जानै ॥ ४६ ॥
जाप जु करहि नाम तिस जाति । जानी विच किताब बक्ख्याति ।
खोजे बिना निकट सो पायो । होइ न जग, अस नहिं बतायो ॥ ४७ ॥
आगै बहुत बारि पतियावा । जथा कहै तिम बन्यो बनावा' ।
कह्यो नजूमी 'हम इह काम । खोजहिं हजरत हाल तमाम ॥ ४८ ॥
देखति बुरो आइ बतलाऊं । कहे जतन सभ खेद मिटाऊं ।
सदा शाहु की श्रेय करंते । दरब समूह सदीव लहंते ॥ ४९ ॥
हरिगोबिंद करि है चालीसा । सिमरहि नाम अलह जगदीशा ।
करहि शाहु की खैर खुदाइ । मिटहि कलेश अनेक बलाइ' ॥ ५० ॥
सुनि उमराउ कहंति 'हम जाना । गुन बिद्या तुम बिखै महाना ।
अजमत जुति मति संत सुभाइ । जाप करनि, सो दयो बताइ ॥ ५१ ॥
तिस ते भलो न क्यों हुइ शाहू । बसहि इकंत दुरग के मांहू ।
इक चिति सिमरहि नाम खुदाइ । साढसती आदिक दुख जाइ' ॥ ५२ ॥
एव उतार चढाउ सुनाए । जहांगीर को मन भरमाए ।
सभि के कहे जानि करि साची । डरति मरनि ते गिरा उबाची[2] ॥ ५३ ॥
'आइ आप मैं तिन के डेरे । किहौं त्रिनै जुति बाक अगेरे ।
क्रिपा करहिं लेवहिं बच मानि । करहिं जाप ते मम कल्यान' ॥ ५४ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'शाहु को नजूमी भ्रमावनि' प्रसंग बरननं नाम असट पंचासति अंशु ॥ ५८ ॥

1. दुष्ट । 2. मृत्यु का डर देखकर बोले ।

अंशु ५६

श्री गुरु हरगोबिंद दुरग प्रबेशनि प्रसंग

दोहरा

सुधि भोजन के करनि की शाहु नहीं सुधि कोइ।
दासनि कहि बहु बारि तबि अच्यो[1] कुछक उठि सोइ ॥ १ ॥

चौपई

चार पांच मूढनि[2] के मति की। सुनि करि बात चित चित म्रितु की।
चढि गज पर गमन्यो गुरु ओरे। बरजे रखे साथि नर थोरे ॥ २ ॥
खुशी न चित को भावति कोई। तिसी संदेह बिखै त्रिति होई।
पहुंच्यो गुरु ढिग बंदन धारी। अरपी चारु अकोर[3] अगारी ॥ ३ ॥
मौन ठानि करि बदन मलीना। बैठ्यो शाह निकट मन दीना।
सतिगुर चतुर, परखि मुरझायो। हित बूझनि के बाक अलायो ॥ ४ ॥
'हज़रत ! कहहु कवन है कारन ?। जिस ते एव दशा किय धारनि।
बदन प्रकाशति नहीं तुमारा। मनहु जूप महिं मन को हारा ॥ ५ ॥
नहिं बिलोचनि बिकसती आछे। नहिं पूरब सम बोलनि बाछे।
को अस काज बिगार्यो कांहू ?। जिस ते खुशी नहीं मन मांहू' ॥ ६ ॥
कह्यो शाह 'क्या कहौं सुनाई। असमंजस गति कही न जाई।
तऊ अवश्श्य बनी अबि आनि। सुनहु पीर जी करौं बखान ॥ ७ ॥
साढसती मोरे पर आई। अपर नहीं कुछ होति उपाई।
एक जतन सो हाथ तुमारे। जिस ते उपजहिं खैर हमारे ॥ ८ ॥
दुरग गुआलियर महिं थिर ह्वै कै। सिमरहु अलह माल कर लै कै।
इक चालीसा जे तुम करो। साढसती को बल परहरो ॥ ९ ॥
खैर होइ सभि रीति हमारे। हुइ बरनी जबि एव तुमारे'।
श्री सतिगुर सुनि सभि लखि पाई। जथा दुशट मिलि कीनि खुटाई ॥ १० ॥

---

1. खाया। 2. मूर्खों। 3. भेंट।

अबि जे करहिं हटावनि शाहू। मलिन होइ, संसै मन मांहू।
जे नहिं जाइं, कुटिल मिलि कहैं। हम सों बिगरै, भेद न लहै॥ ११॥
उर बिचार गुरु कह्यो बनाई। 'तौ परि साढसती नहिं आई।
नहीं कशट कुछ आवहिं नेरे। श्रेय अहै तेरी हम हेरे॥ १२॥
जिस पर साढसती अबि आई। तिस ते बनहि न एक उपाई।
काल जाइ भखि देखति तेरे। मरहि कुम्रितु[1] पाप फल प्रेरे। १३॥
हमरे प्रविशे दुरग मझारे। उपजति है कल्यान तुमारे।
तौ हम जांहि जाप को करैं। सभि संकट तेरे परहरैं॥ १४॥
सुनति शाहु हरख्यो मन मांहू। —साढसती बल होइ बिनाहू—।
'धनं गुरू जो तुम सभि लायक। शरनागति के कशट नसायक[2]॥ १५॥
खातर जमां रिदे अबि होई। संकट मोहि छुवै नहिं कोई।
क्रिपा धारि हुइ हरख समेता। जाप करनि गमनहु मम हेता॥ १६॥
तुम ते आछो को हुइ प्यारो। जिन के दिए प्रान तन धारों'।
परवाना[3] तबि शाहु लिखायो। दुरगपती[4] के पास पठायो॥ १७॥
'श्री हरि गोविंद इहठां आवैं। करि चालीसा मोहि बचावैं।
आछे थल डेरा करिवावहु। जो किछ चहैं सु पास पठावहु॥ १८॥
देते रहियो अधिक अनंद। मानहु कह्यो सकल कर बंदि।
निकट हमेश जाहु इक बारी। बूझति रहहु लेहु सुधि सारी॥ १९॥
इम कहि शाहु बंदना करी। ग्रिह कौ गमनि सु इच्छा धरी।
सतिगुर कह्यो 'रहै सभि डेरा। हम गमनैं तित होति सवेरा॥ २०॥
कर्महिं निवारनि बाधा तोरी। बहुर बिनाशहिं कुटिल जि खोरी[5]'।
सुनति शाहु कहि 'मैं अनुसारे। करहु प्रथम मो पर उपकारे'॥ २१॥
गयो शाहु उठि अपने धामू। श्री हरिगोविंद तन अभिरामू।
त्यारी करति भए निज सारी। सभनि सुनावति गिरा उचारी॥ २२॥
'पंच सिक्ख गमनहिं हम संग। रहै चमू सुधि लेहु तुरंग।
होवति रहै देग इस रीति। सभि की सुधि सभि बिधि लिहु नीत'॥ २३॥
कह्यो मसंदनि को समुझाइ। 'हम आवहिं दिन कितिक बिताइ।
सभिनि संभार करो हुशियार। रहहु सुचेत निवेस[6] मझार'॥ २४॥
खान पान करि निसा बिताई। भई भोर गमने गोसाईं।
पंच सिक्ख ले संग पयाने। पहुंचे जाइ गुआलियर थाने॥ २५॥

1. बुरी मौत। 2. नष्ट करने वाले। 3. चिट्ठी। 4. किले का प्रबन्धक। 5. छिमकर वैर करने वाला। 6. निवास, घर।

दुरगपती आखय हरिदास। सिमिरति सदा सहित गुरपास।—
किम दरशन मैं चलि करि पावों। नहीं दुरग को छोरि सिधावों॥ २६॥
अहैं कैद इस महिं बहु राजे। मेरे गए बिगर हैं काजे।
शाहु तकीद करति बहु बारी। दुरग बिसास न कीजहि धारी॥ २७॥
नहीं कोस भर छोरि सिधावहु। जिन दरमाहा बैठे पावहु।
नहिं दुरग तजि जायहु जावै—। सिमरहि सतिगुरु—दरस दिखावैं॥ २८॥
गयो शाह को जबि परवाना। करति प्रतीखन हरख महाना।
पहुंचे तहिं श्री हरिगोविंद। तबि हरिदास उठ्यो करि बंदि॥ २९॥
वंदन कीनि भाउ बड धारा। लेकरि संग सु दुरग मझारा।
प्रविश्यो आछो थल जहिं हेरा। जाइ करायहु सतिगुरु डेरा॥ ३०॥
इक सुंदर परधंक डसायो। आस तरन सों नीके छायो।
तिस पर बिनती भाखि बिठाए। बैठि तरे मन बांछति पाए॥ ३१॥
कहति भयो 'सुनि सुजसु तुमारा। चहति रह्यो मैं दरस उदारा।
घटि घटि की तुम जाणनि हारे। आन दियो दरशन इस बारे॥ ३२॥
कर्यो निहाल मोहि को आछे। देति मनोरथ दास जु बांछे'।
भाउ हेरि करि बहु हरिदास। श्री मुख ते किय बाक प्रकाश॥ ३३॥
'गुरु घर के जो शरधा धारी। दुह लोकनि गति लहति सुखारी।
श्री नानक जग गुर सभि मालक। चार पदारथ दें ततकालक॥ ३४॥
सुनति हरख करि कै हरिदास। वसतु जु चहियति पठी सु पास।
कैद बिखै पहीपाल बिसाला। उमर कैद जिन की सभि काला॥ ३५॥
कबहुं न छोडनि जिन को होइ। तिसी दुरग महिं गेरति सोई।
सुनी सभिनि 'सतिगुरु इत आए'। भए अनंद मनहुं छुटकाए॥ ३६॥
कर जोरे सभि ही तहिं आइ। गुरु को दरस कीनि सुख पाइ।
सभि के ऊपर बसत्र मलीन। तन ते दुरबल चिंता पीन॥ ३७॥
केश शमश महिं जूंक[1] घनेरी। पाइन परी पीन ही बेरी।
जीरन पट तन धारनि करे। झुकति होनि की आस न धरे॥ ३८॥
बिछरे परवारनि अरु देश। निस दिन जिनहुं कलेश विशेश।
जरासिंध जिम राज गहे। देखि क्रिशन को आनंद लहे॥ ३९॥
तिम सभि पिखि श्री हरिगोविंद। नाम क्रिया जुग की मानिंद।
देखति क्रिपा क्रिपाल बिसाला। सभि को दई धीर तिस काला॥ ४०॥

---

1. जूंएँ।

रहनि लगे पुन दुरग मझारे। सभि कैदिनि को देति अहारे।
पातशाहु ते धनु बहु आवै। पुन हरिदास रसद पहुंचावै ॥ ४१ ॥
बनहि तिहावल नित समुदाइ। जिते दुरग महिं सगरे खाइं।
छुधिति रहनि पावैं नहिं कोई। स्वादल असन देति बहु होई ॥ ४२ ॥
जेतिक कैदी ब्रिंद सिपाही। सतिगुरु दें पंचाम्रित खांही।
तऊ बचहि पुन वहिर दिवावैं। आनि लोक गन ले करि खावैं ॥ ४३ ॥
इक दुइ काल बीत करि गए। गुरू अहार न करो भए।
पंच सिक्ख जेठा रु पिराणा। सभिहिनि पिखि कर जोरि बखाणा ॥ ४४ ॥
'इह कारन भा कौन गुसाईं ? आप नही भोजन को खांही।
धिक हमरो तुमरे बिन खायो। बरत्यो देखति लें मुख पायो ॥ ४५ ॥
श्री मुख ते फुरमावनि कीनि। 'इह भोजन हम खांहि कबी न।
वहिर जाइ मिहनत करि ल्यावहु। रसद खरीदहु विपनी[1] जावहु ॥ ४६ ॥
तिस ते त्यार अहार करीजहि। हित भोजन के सो हम दीजहि।
नांहि त रहि हैं पौन[2] अहारी। जबि लगि बासहिं दुरग मझारी ॥ ४७ ॥
सुनि सतिगुर ते बहर सुनाई। 'हम निज हाथनि ल्याइं कमाई।
कीजहि भोजन आप हमेशू। हम को अहै सुखेन विशेशू ॥ ४८ ॥
ले आग्या गमने तिस बेरे। वहिर दुरग के निकट ठठेरे।
तिन सों निज मिहनत ठहराई। 'करहिं अपर ते दुगनि कमाई ॥ ४९ ॥
सरब जामनी क्रिती करै हैं। एक रजतपण दोनहु लैहैं।
कह्यो ठठेरनि 'जे बहु घालि। देहिं मजूरी तुमहिं बिसाल' ॥ ५० ॥
संध्या ते गहिलीनि दिवान। धरनि लगे करि तान[3] महान।
जथा ठठेरा बिधी बतावै। पकरि हथौरे तथा लगावैं ॥ ५१ ॥
होति भोर लगि बासन ब्रिंद। घरे अगारी ते सु बिलंद।
होइ प्रसंन रजतपण दीनि। दोनहुं रसद खरीदनि कीनि ॥ ५२ ॥
चून सु चावर सूखम लीने। घ्रित मिशटान लियो शुभ चीने।
पय खरीद गुर के ढिग ल्याए। पाक सिद्ध सभि कीनि बनाए ॥ ५३ ॥
सभी त्यार करि थार परोसा। सतिगुर को अचाइ करि पोसा।
सभिहिनि पाइ अनंद विशेशू। करति भए तिम कार हमेशू ॥ ५४ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथे चतुरथ रासे 'श्री गुरु हरगोविंद दुरग प्रवेशनि प्रसंग' बरननं नाम एक ऊनसशटी अंशु ॥ ५९ ॥

---

1. वन, जंगल। 2. पवन, वायु। 3. बल, शक्ति।

अंशु ६०

सिक्खनि मसलति करनि प्रसंग

दोहरा

उर हरखति चंदू भयो पुर्‌यो मनोरथ जानि।
दयो नजूमी को दरब अरु उमरावनि मान ॥ १ ॥

चौपई

परे कैद अबि करीहौं हान। छूटनि निकसनि होहि तहां न—।
जतन बिचारति मारनि केरा। निस दिन गिनती गिनही घनेरा ॥ २ ॥
जमांदार को लिख्यो बनाइ। 'इहु मम रिपु[1] जानहु इत आइ।
करि उपाव मैं तुझ ढिग भेजा। इस दुख ते मम पाक करेजा ॥ ३ ॥
नहिं दुरग ते निकसनी पावै। इम कीजहि जिम जम घर जावै।
सो उपाउ मैं कहौं बनाई। पोशिश सभि दिहु ज़हिर लगाई ॥ ४ ॥
अति तीछन जिस ते ततकाल। तजहि प्रान पहिरति बिकराल।
निज नर आछो कीनि पठावनि। इह बनवावहि हित पहिरावनि ॥ ५ ॥
तुम निज कर लै के ढिग जावो—। पोशिश पठी शाहु—बतरावो।
कहहु कपट के माधुर बैन। पहिरावो तन हेरहि नैन ॥ ६ ॥
जबि मम रिपु जम धाम पहूचे। तोहि मरातब[2] करि हौं ऊचे।
शाहु निकट ते मान करावौं। हेत गुज़ारे ग्राम दिवावौं ॥ ७ ॥
पंच हजार दुख मैं दैहौं। अपनि सखा प्यारो करवैहों।
इम लिखि करि आछो नर भेजा। कह्यो कि 'दरब संग गत ले जा ॥ ८ ॥
पठ्यो पातकी[3] को नर गयो। देखि दुरगपति को खत दयो।
पठि करि जान्यो अखिल[4] हवाल। सतिगुर ढिग पहुँच्यो ततकाल ॥ ९ ॥
'तुझको पठ्यो शाहु इस थाने। सभि फरेब इह चंदू ठाने।
लोकनि धन दे सिखलायो। हत्यो चहति इस दुरग पठायो ॥ १० ॥

---

1. शत्रु। 2. मनोकामना, पद। 3. पापी। 4. समस्त।

अपर न बरनी करनी कोई। इह प्रपंच सभि तिस ते होई।
अबि मुझ को लिखि भेज्यो तैसे। मैं तिस कही न मानों कैसे॥ ११॥
सबि पढि करि सतगुरनि सुनायो। पुन पावक मैं सो खत पायो।
श्री हरि गोबिंद बाक उचारे। 'मरहि दुशट पहुंचै जमद्वारे॥ १२॥
आनि समा ढिग पहुंच्यो तांही। हतौं कुमौत बचाहि अबि नांही।
जमादार सुनि करि हरखायो। 'इह बड पापी बहुत बचायो॥ १३॥
करी अवग्या बडिहुं बडेरी। अबि लौ नहिं बाधा कुछ हेरी।
दिहु सजाइ तबि दुशट जु सारे। निरधारहिं रावरि उर धारे॥ १४॥
बहिर जाइ चंदू नर हेरा। कह्यो 'जाहु निज सदन सवेरा।
हम ते अब अस होति न कोई। भलो जानि तुम कीजहि सोई॥ १५॥
लिख्यो शाहुइन राखि सुखारे—। चहि चंदू अघ हम नहिं धारे'।
गयो निरासा जाइ सुनायो। बहु दुख ते मन महिं मुरझायो॥ १६॥
निस दिन जिसके चित बिसाला। हतौं किमैं नतु मेरो काला—।
उमरावनि धन दीनि सिखायहु। 'नहीं शाहु के याद करायहु॥ १७॥
गुर को जिकर करहु कबि नांही। जिस ते बसहि दुरग के मांही।
शाहु जि कहै, फेरी मति दीजै। निज सुख हित गुर नहिं निकसीजै॥ १८॥
बसहि दुरग सिमरंति ख़ुदाइ। तुमरी बिनसहि अखिल बलाइ।
निज सुख चहहु दुरग महिं राखो—। सिमरहि शाहु जि. इस बिधि भाखो॥ १९॥
इत्यादिक नित कपट रचंता। महां दुशट अघ[1] नहीं लखंता।
इसी रीति दिन बीते चाली। नहि शाहु कबि कीनि संभाली॥ २०॥
बैठि सभा महिं जिकर जि कर्यो। कहि करि उमरावनि सो हर्यो।
'तुमरे तन सुख हुइ गुर बैसे। दुरग बिखै निकसाउ न कैसे॥ २१॥
दरब जाति रावर के घर ते। नित अनंद सों बैठ्यो बरते।
तुमरे कुशल, गुरू धन पावै। इस महि दोश न कुछ बनि आवै'॥ २२॥
इम फरेब[2] की कहि कहि बात। जहांगीर की मति बिचलाति।
दुइ दिन ऊपर बहुर गुजारे। मिलि सिख पंचहुं कीनि बिचारे॥ २३॥
'श्री अरजन की सम इह बाति। चंदू तकहि गुरू तन घाति।
शाहु समीपी सभि अपनाए। तिम भाखहिं जिम देति सिखाए॥ २४॥
जहांगीर किम धीरज गहै। सगरे नर बद मसलति कहैं।
अवनीपन कै श्रवण बडेरे। जिस किस ते सुनि लेति न हेरे॥ २५॥

---

1. पाप। 2. धोखा।

दोइ तीन मिलि फेरहिं मत को। पुरहिं काज निज, कहति असति को।
जहां कचहिरी समसर सारी। इक आशै पर करति उचारी ॥ २६ ॥
सो कारज पुरवहि नहिं कैसे। करहु बिचारन निज उर अैसे।
सतिगुर छिमा निधान महाने। लवपुरि राखे बरजि निसाने ॥ २७ ॥
निज बल नहिं संभारनि कीनि। हम को अज़मति करनि न दीन।
सहि करि सरब सज़ाइ सरीर। गमनि कीनि बैकुंठ सधीर ॥ २८ ॥
इह कौतक सभि चंदू करे। शाहु रिदे कुछ समझ न परे।
दुरगु ग्वालियर गुरू बिठाए। तहिं क्या करहिं लखि नहिं काए ॥ २९ ॥
मानि बाक जे दए बिठाई। —बहुर बुलावौं—सुधि नहिं आई।
जे सुधि होहि तिनहुं मति फेरी। नहीं हकारै गुर इस वेरी ॥ ३० ॥
आपे शाहु बुलावहि पाही। नहिं अस आस धरहु उर मांही।
अरु सतिगुर अज़मति न दिखावैं। सहैं सकल जैसे बनि आवैं ॥ ३१ ॥
यांते करहु बिचारनि बाति। जिस ते गुर सिक्खनि कुशरात।
जेठे ते सुनि सकल पिराणां। सभिनि सुनावति बाक बखाणा ॥ ३२ ॥
'गुर मरज़ी जेकरि इम नांही। करहु जि तुम लखि कै उर मांही।
करहिं क्रोध ते बाक उचारनि। परहिं आनि तबि संकट दारून ॥ ३३ ॥
कहहु सहाइक ईहु तबि कौन। नहिं ढिग बचहिं न गमने भौन[1]।
करहु कार हुइ गुर अनुसारी। सभि बिधि उपजहि कुशल तुहारी ॥ ३४ ॥
इतने बिखै आइ ब्रिध भाई। सभि उठि चरन परे सहिसाई[2]।
सिक्खनि अपने बिखै बिठायो। 'अबहि अराम सतिगुरू पायो ॥ ३५ ॥
जबि उठि बैठहिं, दरशन कीजहि। देश सुधासर की सुधि दीजहि।
आवन भयो आप को कैसे ?। सुमति सहत सुधि दिहु हम तैसे ॥ ३६ ॥
ब्रिध तबि कही 'गुरू सुधि पाई। दुरग गुआलियरु थिरे सु जाई।
किस कारन ते 'तहां पठाए। जान्यो जाइ न लोक बताए ॥ ३७ ॥
सुनति मात ब्याकुल मुरझाई। उर संदेह समूह उठाई।
पठि दासी को मोहि बुलावा। चित संकट गन सकल सुनावा ॥ ३८ ॥
मो प्रति हुकम मात दिय एहु। —तुम तहि जाहु, सरब सुधि लेहु।
बनहु सहाइक शीघ्र करीजै। ठानहु जतन दुरग निकसीजै ॥ ३९ ॥
इस सेवा हितु मैं चलि आयो। मात बाक को नहिं उलटायो'।
सुनि जेठा बोल्यो 'तुम स्याने। उचित उपाउ कौन अबि ठाने ?' ॥ ४० ॥

---

1. भवन, महल। 2. सहसा, अचानक।

निज संबाद सुनाइ सु दीना। 'तुम आगे हम अैसे कीना।
नहीं रजाइ[1] गुरू ते लीनी। यांते मसलति भी सभि हीनी॥ ४१॥
तुम अरु गुरु महिं भेद न कोऊ। आप कहहु हम ठानहिं सोऊ;
बिन अज़मति होइ न छुटकारा। पर्‍यो बिघन अस, लेहु बिचारा॥ ४२॥
जे करि त्रास पइ उर शाहू। तौ निकसाइ दुरग के मांहू।
नाहिं त तिस को बिगरति क्या है। गुरू बिठाइ निचिंत भया है॥ ४३॥
जे कबि सिमरहि गुर गुन जानि। चहै हकारनि को हित ठानि।
चंदू के पक्खी समुदइ। कहि बहु बिधि ते मति बिचलाइं॥ ४४॥
अवधि बढी तिनि बासुर चाली। बिती अधिक लखि आज सु व्याली।
हम चाहति हैं कर्‍यो उपाइ। किम रावर की अहै रजाइ ?'॥ ४५॥
सुनि भाई ब्रिधि ने मन जानी। जथा भविक्ख्यति महिं प्रभु ठानी।
कह्यो बाक सिक्खनि समुझाए। तुरकेशुर दिहु त्रास दिखाए॥ ४६॥
मात हुकम ते मैं इह कह्यो।, जतन करनि को पठवनि चह्यो।
–किस के कहे करी अस बात ?–। गुरू बूझहिं लिहु नाम सु मात'॥ ४७॥
इम सिक्खनि मिलि मसलति होई। 'जांहि जामनी[2] महिं तहिं दोई'।
ब्रिध आइसु[3] ते उर हरखाए। करनि उपाउ सभिनि मन भाए॥ ४८॥
ढरे दुपहिरे सतिगुरु जागे। मिल्यो ब्रिद्ध भाई अनुरागे।
जिम बूझी सुधि सरब बताई। अति अनंद पिखि रह्यो समाई॥ ४९॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे 'सिक्खनि मसलति करनि' प्रसंग बरननं नाम सशटी अंसू॥ ६०॥

---

1. आज्ञा 2. रात 3. आज्ञा

अंशु ६१

रातीं जहांगीर को शेरों ने डराइआ

दोहरा

श्री हरिगोविंद ब्रिद्ध को देखि रहे हरखाइ।
'कहहु सुधासर सुधि सकल सिख संगति समुदाइ ॥ १ ॥

चौपई

प्रिय पुत्रा जु प्रतीखति—आवैं—। अस मम मात सनेह उपावै।
सकल कुशल तिन अहै सरीर ?। पिखनि चहति मम कौ युति धीर ॥ २ ॥
किम आगवन आप को भयो ?। कायां निबल खेद मग लयो।
असु पर चढनो चलनि हमेश। हुयो होइगो श्रमति विशेश ॥ ३ ॥
श्री नानक के हेरनि हारे। बडी अबसथा बल तनु हारे।
बैठि रहनि ही तुम बनि आवैं। दरशन ते गन दोश मिटावैं ॥ ४ ॥
बचन तुमारे सुधा* समान। श्रवन करे सुख लहैं महान।
क्रिपा सहत कोमल गुरुबानी। सुनति अनंदति आप बखानी ॥ ५ ॥
'छोरि सुधासर को जिम आए। कुशल छेम सों बसहि तिथाए।
सरब ओर ते संगति आवै। मुदति रिदे अंम्रितसर नावैं ॥ ६ ॥
हरि मंदिर महिं जाहि बहोरी। परम प्रेम ते अरपि अकोरी।
सिमरति हैं इक दरस तुहारा। करहिं प्रतीखन भाउ उदारा ॥ ७ ॥
रावरि की सुध पहुंची जाइ। —शाहु मिल्यो बहु प्रेम उपाइ।
संग अखेर शेर को मारा। भयो जगत महिं सुजसु तुमारा ॥ ८ ॥
डेरे बिखै शाहु चलि आयो। गुरू अदाइब अधिक वधायो—।
पुनहु दुरग महिं प्रविशनि सुन्यो। मात बिसूरति सिर को धुन्यो ॥ ९ ॥
बडे गुरनि कहु सिमरनि करिती। तुम दिशि ते शंका उर धरिती।
अधिक बिखाद रिदै महिं पायो। पठि दासी तबि मोह बुलायो—॥ १० ॥
चित की चिंता सकल सुनाई। कह्यो कि—तुम जावनि बनिआई।
कारज सकल सुधारहु जाइ। ज्यों क्यों करि मम सुत को ल्याइ ॥ ११ ॥

*. अमृत

सुनि करि मैं पुन बहु समुझाई। —श्री सतिगुर समरत्थ सदाई।
जिम चित चहैं करैं सो बाति। रहु निचिंत, कीरति अवदात॥ १२॥
तऊ सनेह आप को धारति। अश्रु बिलोचन ते बहु डारति।
इक पुत्रा, पुन प्रथम बिछुंने। आए दूर ब्रिंद दिन पुंने॥ १३॥
दुरग गुआलियरु प्रविशे आप। सुनि माता कै महत संताप[1]।
कह्यो मोहि प्रति पुनह बनाइ। —तुम स्याने जीवनि बनि आइ॥ १४॥
मैं सुनि कै नहिं हुकम हटायो। बडी मज़ल[2] करि तुम ढिग आयो।
अबि इहठां बैठनि तुम केरा। नहिं आछो करि निरनै हेरा॥ १५॥
अब जिम कहहु लिखहिं सुधि पाछे। जिसते माता रहि मन आछे।
जाइ वेग ते कुशल सुनावैं। करहि प्रतीखनि—सुत अबि आवैं॥ १६॥
सुनि करि श्री हरिगोबिंद चंद। कहि मुसकावति देति अनंद।
'सभि बिधि लिखहु मात को धीर। सहि सेवक हम कुशल शरीर॥ १७॥
केतिक दिन महिं दरसहिं आइ। किमहु न चित महिं चिंत उपाइ।
मेल शाहु को जे अबि होइ। चलहिं सदन कहु बिलम[3] न कोइ'॥ १८॥
सुनि सतिगुरु ते लिखि अरदास। पठी तुरत ही माता पास।
इस सतिगुर को भयो ब्रितंत। धीरज के समेत भगवंत॥ १९॥
जहांगीर की सुनी कहानी। पुन चंदू ने हिकमत ठानी।
—शाहु चलहि दिल्ली अबि आछे। गुरू हकारन को नहिं बाछे॥ २०॥
परचहि अपर ख्याल महिं जाइ। यां ते इस ले चलौं चढाइ—।
जबि गुरु जाइ गुआलियर वरे। शाह साथ इम बोलनि करे॥ २१॥
'चली अहि दिल्ली के बड मंदिर। तहिं नवरोज करहु मिलि सुंदर'।
इत्यादिक बहु बात बनाइ। सभि उमरावनि दियो सिखाइ॥ २२॥
'ज्यों क्यों करि अबि शाह चढावहु। चलहु सकल निज घर सुख पावहु'।
दिन प्रति सरब कचहिरी कहै। 'अब दिल्ली महिं सुख बहु अहै'॥ २३॥
सुनि सबि ते चित बिखै बिचारी। गमनि करनि कहु होयहु त्यारी।
जहांगीर गज चढि करि चाला। दिन प्रति मजलैं करति बिसाला॥ २४॥
दिल्ली आनि प्रवेश्यो शाहू। मिली ब्रिंद बेगम निज नाहू।
चंदू अधिक अनंदति भयो। —गुरू ब्रितंत बिसरि अबि गयो॥ २५॥
दुरग गुआलियर छोर्‌यो दूरि। को नहिं करे है ज़िकर हजूर।
गुरू कैदीअनि महिं पर गयो। मरहि तहां ही रिपु मम छयो—॥ २६॥

---

1. दुःख 2. लम्बा सफ़र 3. देर

पीरनि हेतु शीरनी आनि। तुरक समीपि दरूद बखानि।
धरि उर हरख दई बरताइ। चिंता कशट बिलंद बिलाइ ॥ २७ ॥
—श्री अरजन पूरब मैं मार्यो। तिस को पुत्र कैद महिं डार्यो।
अबि सुख नींद सोवनो करों। सभि पीरनि के पग सिर धरों ॥ २८ ॥
करी मदत मेरी बल लाइ—। इम कहि मूरख अधिक मनाइ।
इस प्रकार दिन कितिक बिताए। नहिं गुर सिमर्यो नहीं बुलाए ॥ २९ ॥
तबि सिक्खनि अज़मति को जतन। करति भए शत्रू को हतनि।
इस प्रकार ही दिवस बितावा। जामनि भई तिमर को छावा ॥ ३० ॥
लियो पिराणा जेठे संग। दारुन बने केहरि अंगि।
आगै दिल्ली पुरि महिं शाहू। बिखम बिसाल दुरग के मांहू ॥ ३१ ॥
रंग महिल चामीकर केरा[1]। तिस अंतर परयंक बडेरा।
चहुं दिशि बिखै महां तकराई। जागहि नर नारी समुदाई ॥ ३२ ॥
पौरनि बुरजनि नेरहि नेरे। रहैं पाहरू[2] गिरद घनेरे।
जहांगीर सुख सों परि सोवा। जाइ दुहूं सिक्खनि तब्रि जोवा ॥ ३३ ॥
नहिं को देख सक्यो जबि गए। भीम शेर को तन धरि लए।
दीरघ दांत बिसद[3] दरसंते। लांगुल सटा[4] झटक पटकंते ॥ ३४ ॥
तीखन नख अरु आंखनि लाल। बदन पसारि बिसाल कराल।
आधी राति शाहु ढिग गए। तब्रहि उदर पर दो पद दए ॥ ३५ ॥
शाहु अचानक आंख उघारी। देखि केहरी दारुन भारी।
'हाइ, हाइ' डर धारि उचार्यो। —साढसती इह अई—बिचार्यो ॥ ३६ ॥
—इस डर ते मुख राखनि हेतु। जार करति गुरू क्रिपा निकेत।
—इम उर सिमरति उर्यो बिलंद। उचरि नाम 'श्री हरि गोविंद ॥ ३७ ॥
बनहु सहाइक अबि तुम आइ। शेरनि ते मुझ लेहु बचाइ'।
गुरु को ध्यावनि जबि किय शाहू। श्री गुर उठे जानि मन मांहू ॥ ३८ ॥
ततछिन आइ हटावनि कीने। दोनहु दिशिनि दूर करि दीने।
बहुर पसार तुंड को आए। भीम अकार करे दरसाए ॥ ३९ ॥
गुरु सों उर धरि कहै 'बचावहु। इन दोइन को दूर हटावहु'।
तबि गुर धरि कर दुहिन रुमालू। दुहिं शेरन दिय बदन बिसालू ॥ ४० ॥
करे हटावनि दूरि सिधारे। नर मुख कर तिन बाक उचारे।
'श्री गुरु ने अबि तोहि बचायहु। समझहु महिमां नहिं बिसरायहु ॥ ४१ ॥

1. सोने का महल 2. पहरेदार 3. सफेद 4. गर्दन के बाल

भए लोप गुरु केहरि दोऊ। सुपत्यो शाहु न, डरि धरि सोऊ।
जागि जामनी जाम गुज़ारी। भई प्रभाति सिमरि गति सारी॥ ४२॥
बोले निकट नजूमी स्याने। आइ सलामनि करि निज काने।
तिन सों निस की सकल सुनाई। 'भयो त्रास बड नींद न आई॥ ४३॥
जुग केहरि जुग दिशि चलि आए। पाइन सों मम उदर दबाए।
कही नजूमी की सचु जानी। —साढसती तन धरि निजकानी॥ ४४॥
जिस हित सतिगुरु राखे राखे—। इम बिचार तिन नाम सु भाखे।
लियो नाम ततछिन चलि आए। जुग शेरनि ते लीनि बचाए'॥ ४५॥
सुनी बात बोले तबि स्याने। 'जीव अवसथा तीनहु जाने।
गाढी नींद बिखै जबि सोवै। इंद्रै मन आदिक लै होवैं॥ ४६॥
बसहि रिदे महिं ले बुधि संग। कुछ सुधि रहै न आदिक अंग।
तहिं ते जबि उथान को पावै। सुपन अवसथा गर महिं आवै॥ ४७॥
सूखम ते अति सूखम नारी[1]। तिस महिं रचहि स्रिशटि[2] इह सारी।
गिर[3] सागर जुत अवनि बनावै। चंद सूर रचि गगन चावै॥ ४८॥
तहां त्रास कै आनंद होइ। दुख सुख शत्रु मित्र सभि जोइ।
जाग्रनि बहुर अवसथा पावै। सुपन स्रिशटि सगरी बिनसावै॥ ४९॥

दाहन लोचन आतम रहै। बाम बिखै बुधि बासौ लहै।
तीन अवसथा तीनों थान। तबि तुमको भा सुपन महांन॥ ५०॥
रुचि केहरि आपै लै त्रासा। सभि जाग्रति महिं भयो बिनासा।
नहिं मन महिं शंका कुछ करीअहि। उरु दिन महिं सुनि निस महिं धरीअहि॥ ५१॥

सुनति शाहु कहि 'मैं जबि जागा। पिखे प्रतक्ख खरे मम आगा।
सनमुख ग्रावति बदन पसारे। गुरु निज कर ते दूर बिदारे॥ ५२॥
देखति मेरे हुइगे लोप। गुरु बरजे न तु आवति कोप'।
कहै नजूमी अपर जि स्याने। 'इह तो कुछ शगर[4] सम जाने॥ ५३॥
आज सुपति कीजहि तकराई। लोह कनात[5] लगहि चहुं घाई।
अहै जंजीर दार तनवावो। ब्रिंद पाहरू द्वार जगावो॥ ५४॥
बिद्या भूतनि धरें जु महां। तिन ते कार कढावहु तहां।
श्री गुर हरि गोविंद तहिं राखो। नहीं दुरग ते निकसनि भाखो॥ ५५॥

---

1. नाड़ी 2. सृष्टि, संसार 3. गिरि, पहाड़ 4. भूत-प्रेतों का खेल, जादूगरी 5. लोहे की कनात

हुइ इकंत नित सिमरति मौला। जिस ते साढसती बल हौला।
बचे बिघन ते मिटी बलाइ। मैं किताब पिखि जतन बताइ॥ ५६॥

सोई साच भई लिहु जानि। इस उपाइ बिन होत न हान'।
समैं कचहिरी चंदू आयो। मुनि ब्रितंत को अधिक द्रिढ़ायो॥ ५७॥

गन उमरावनि भाख्यो तैसे। मानी जहांगीर तबि वैसे।
कपट सभिनि को लख्यो न गयो। सुनति वज़ीर खान दुख भयो॥ ५८॥

–क्या मूरख बिपरीति सिखावैं। रिदै बिसूरति बस न बसावैं।
हज़रत को रुख लखि करि तैसे। धरि मौन मति कही न कैसे॥ ५९॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे 'शाहु को डरावन' प्रसंग बरननं नाम एक ससटी अंसू॥ ६१॥

अंशु ६२

भाई जेठे को 'अजर जरन'[1] का उपदेश

दोहरा

दिन बीत्यो संध्या भई शाहु करि जिस भाइ।
तकराई सभि बिधि करी लोह कनात लगाइ ॥ १ ॥

चौपई

जार लोह को ऊपर तन्यो। चहुं दिशि महिं जनु पिंजर बन्यो।
ब्रिंद पाहरू द्वार सुचेत। खरे करे जागनि[2] के हेतु ॥ २ ॥

सभि बिधि सों करिकै तकराई। सुपत्यो शाहु नींद तबि पाई।
अरधि राति लौ सोवति रह्यो। बहुर त्रास तैसे तबि लह्यो ॥ ३ ॥

दोनहु दिशि ते दारुन शेर। दीरघ दांत सु आवति हेरि।
बोल्यो डरति हाथ को बंदि। 'राखो मुहि श्री हरिगोबिंद ॥ ४ ॥

इक तुम हो नित मम रखवारे। बनहु सहाइक, दास तुमारे'।
बिनै सुनी प्रभु दौरति आए। कर रुमाल धरि दुहनि हटाए ॥ ५ ॥

ज्यों ज्यों मुख पसार करि आवैं। त्यों त्यों सतिगुर दूर हटावैं।
चतुर घटी[3] लगी केहरि रहे। नर मुख करि अैसे बच कहे ॥ ६ ॥
'जो सतिगुर दे हाथ बचावैं। तिन की महिमा क्यों बिसरावैं।
निस महिं त्रासति निकटि बुलावति। दिन महिं दूर राखवे भावति ॥ ७ ॥
खाइ जाति हम त्यागति नांही। श्री गुर जे अबि आइ न पांही।
समझहु भले आज तुम छोरा। इम कहि लोप भए तिस ठौरा ॥ ८ ॥
बहुर न नींद शाहु को आई—। क्या अचरज कुछ लख्यो न जाई।
गुरु की महिमा भाखति शेर। नर मुख करि छप जावति फेरि ॥ ९ ॥
क्यों केहरि बन के इह आवैं। किस कारन ते त्रास उपावैं—।
चितवति चित प्रभात हुइ आई। शाहु चित बसि उठि सहिसाई ॥ १० ॥

---

1. असह्य को सहने का 2. रात भर जागने के लिए 3. चार घड़ी

चंदू सहत नजूमी स्याने। अरु केतिक उमराव महाने।
पठि करि नर से सरब हकारे। झुकि झुकि आइ सलाम उचारें॥ ११॥

कह्यो 'भली कीनसि तकराई। गुरु राख्यो नतु लीनसि खाई।
लोह पिंजरे सम करवायो। द्वार पाहरू को समुदायो॥ १२॥
रुके न क्यों हूं तैसे आइ। मुख पसार चाहति ले खाइ।
गुरु सिमर्‍यो तिन आनि बचायो। बलि करि बाहुनि दुहनि हटायो॥ १३॥

क्या शगर ते अचरज होवति ?। महां त्रास को निस महिं जोवति।
क्यों न बिचारहु करहु मिटावनि। नांहि त धरहिं मोहि तन खावनि'॥ १४॥
सुनति नजूमी स्याने ब्रिंद। कह्यो 'भई को मरज़ बिलंद।
दानशवंद तबीब हकारहु[1]। पुरि सगरे नर ऊंच उचारहु॥ १५॥

सुनहिं आप को नाम जि स्याने। आवहिं सभि बिद्या जो जानें।
प्रथम अहैं चाकर अस जेतिक। करहु दिखावनि आवहिं तेतिक'॥ १६॥
सुनति शाहु ने आछी माने। पठि पठि नर तबीब गने आने।
सभि को कर नारी दिखरावै। बितहि जामनी तथा बतावै॥ १७॥
सुनि तबीब कुछ रोग न देखैं। शेरनि ते बिसमाइं विशेखैं।
नहीं अकल महिं कुछ बनि आवै। तरू शाहु को कहि परचावैं॥ १८॥

तबि तबीब बनि जेठा गयो। बहु मोले पट तन पर लयो।
गन उमराव खरे कर जोरे। गन स्याने बैठे इक ओरे॥ १९॥
किनहुं कीनि न ख़ातर जमा। शाहु रिदै डरु संसै जमा।
देखि भलो नर सभि सनमाना। जेठा गयो निकट तिस थाना॥ २०॥

शाहु बांहु आगे करि दीनि। निस प्रसंग कहि, ले जिम चीन।
कहनि लग्यो 'मैं पिखौं न नारी। नहिं प्रसंग कुछ करहु उचारी॥ २१॥
क्या तबीब जो नारी देखे। सूरत देखि न रोग परेखै।
मम उसताद अहै नहिं काचो। गुन पूरन बच साच उबाचो॥ २२॥
जानि लीनि मैं रोग तुमारो। सुनहु इकंत होइ निरधारो।
नहिं गन महिं मैं कहौं ब्रितांत। निफलहि मंत्र जि हुइ बक्ख्यात'॥ २३॥

जहांगीर सुन भयो इकांकी। जेठा गयो निकट तबि तांकी।
बैठि कह्यो 'तुझ सपथ ख़ुदाइ। कहौं जि साची देहु बताइ॥ २४॥
तो कहु रोग न उपज्यो कोई। निस महिं त्रास किमू ते होई।
हौल[2] रह्यो दिल टिकहि न कैसे। दीप सिखा बहि बायू जैसे॥ २५॥

1. पीरों-फ़कीरों और स्यानों को बुलाओ 2. कम्पन, भय

मानि शाहु कहि 'साचु सुनाई। मम पीरा तैं निशचे पाई'।
'सुनि हज़रति आवति जुग शेर। दुहदिश ते करि कोप[1] घनेर ॥ २६ ॥
गुरू हाथ दे तोहि बचावैं। नांहि त दोनहुं तुम कहु खावैं।
हटंति कहैं—गुरु महिमा जानि। नहीं बिसारनि उर ते ठानि ॥ २७ ॥
डर हरिबे हित जतन बतावैं। सो क्यों करि तुम रिदे न ल्यावैं।
जे नहि समझ्यो मैं समझाऊं। रोग त्रास सभि दूर मिटाऊं ॥ २८ ॥
इम जेठे जबि पते लगाए। हज़रत कह्यो 'ठीक तैं गाए।
अबि जिम हटहिं, वताबनि कीजै। तुव पूरन उसताद लखीजै ॥ २९ ॥
किम केहरि कहि बूझ बुझावैं। दिहु समझाइ न मम मन आवैं।
अपने महिं शरधा दिढ जानी। तबि जेठे मुख गिरा बखानी ॥ ३० ॥
'गुरुपठि दुरग न कीनि संभाली। अवधि बढ़ी तबि सभि दिन चाली।
सो बितीत ऊपर दिन गए। निकट गुरू न बुलावति भए ॥ ३१ ॥
गुरु संगि झूठ बोलिबो ठाना। तिह फल होयहु त्रास महाना।
जेकरि आज न मनुज पठावैं। टरहिं न केहरि[2] आवति घावैं ॥ ३२ ॥
समा बिते कुछ ह्वै न उपाई। गुरु दिशि नमो करहु सिर न्याई।
कर जोरहु अरु बाक उचारहु। —खिमहु प्रभू निज बिरद[3] संभारहु ॥ ३३ ॥
पठौं मनुज अबि निकट हकारौं। दरशन करौं सीस पग धारौं—।
उठि करि अबहि न बूझहु कोई। करहु अरज, कबि त्रास न होई' ॥ ३४ ॥
सुनि हज़रत उर लागी आछे। साचि जानि गुरु मिलनो बांछे।
बंदन जेठे की दिशि कीनि। 'देहु दरब बहु' आइसु दीनी ॥ ३५ ॥
कहि जेठा 'मैं लेति न धन को। जबि लगि होति अनंद न मन को।
पुन हम आवैं गुरु जबि देखैं। सुख को पावति, हमहूं परेखैं ॥ ३६ ॥
इम कहि निकस्यो वहिर पधारा। बैठि शाहु उमराव हकारा।
कह्यो 'जाहु अबि ह्वै करि त्यार। सतिगुरु के ढिग बिलम बिसारि[4] ॥ ३७ ॥
मम दिशि ते ले गमहु उपाइन। धरि आगे करि बंदन पाइन।
बिनती बहु बखानि संग आनहु। —देहु दरस निज करुना ठानहु—' ॥ ३८ ॥
इम कहि तिस को तुरत पठायो। गुरु दिशि मुख करि सीस झुकायो।
'बखशहु करी अवग्या मोरी। अबि में समझि शरनि गुर तोरी' ॥ ३९ ॥

---

1 गुस्सा 2. शेर 3. यश, मान, कीर्ति 4. आज्ञा 5. बिना देर किए

पुन मन महिं इम शाहु बिचारा। —रहौं जामनी बिखै सुखारा।
गुरु संग झूठ कहनि फल लागा। आगे करौं अधिक अनुरागा ॥ ४० ॥
जे करि आज शेरि दरसावौं। इह नहिं. अपर जतन करिवावौं —।
जबि जेठा सतिगुरु ढिग गयो। अंतरिजामी सभि लखि लयो ॥ ४१ ॥
ब्रिध जुति बैठे सेवक सारे। श्री हरि गोविंद बाक उचारे।
'उठि जेठा जमना तट जाउ। गंगा सागर भरि ले आउ' ॥ ४२ ॥
उठि करि सिख ततछिनि भरि ल्यायो। सतिगुरु आगै आनि टिकायो।
बहुरि कर्‌यो श्री मुख फुरमावनि। 'ले अबि जाहु करहु तहिं पावनि' ॥ ४३ ॥
सुनि जेठे जुति अचरज धारे। ले करि जाइ तहां जल डारे।
आइ खरो कर जोरि अगारी। हित सिक्ख्या के गुरू उचारी ॥ ४४ ॥
'जबि गंगा सागर भरि आना। घट्‌यो कि नहिं जल नदी महाना ?।
बहुर जाइ तिस के मधं गेरा। बढ्‌यो कि नहीं कैसे तबि हेरा ?' ॥ ४५ ॥
सुनि जेठे कर जोरति कह्यो। 'नदी प्रवाह सदा जल बह्यो।
इक घट[1] भरे कहां घटि जैहै। डारे बीच कहां बडि ह्वै है ॥ ४६ ॥
श्री अरजन नंदन तबि कहैं। 'अपनि बिखै जानहु बिधि इहै।
गुर ग्रिह शकति चलति जलसलिता[2]। सद प्रवाह पूरन ही ढलता ॥ ४७ ॥
घट सम सेवा करि तैं पाई। जरी न जाइ तऊ बिदताई।
जहिं ते लीन तहां क्या नांही ? अस मन जानि निरखि उर मांही ॥ ४८ ॥
किस के कहे शाहु के पासि। करामाति को कीनि प्रकाश ?।
यांते उचित दंडके अहैं। गुरु आग्या के बाहरि चहैं' ॥ ४९ ॥
तबि जेठे करि जोरि बखाना। 'मैं गुरु बचन प्रेम ते माना।
सिख संगति रावर की जेती। ब्रिद्ध तुम महिं लखि भेद न तेती ॥ ५० ॥
हुकम पाइ पूरब इन केरा। अरु संगति महिं संकट हेरा।
महां दुखी पछुतावति सारे। रहैं अलंब जि दरस तिहारे ॥ ५१ ॥
पर उपकार हेतु मैं कीनि। गुरु सिख होवैं चिंत बिहीन।
अपने हित मैं नहीं दिखाई। ज्यों भावहि त्यों करहु गुसाईं' ॥ ५२ ॥
सुनि करि भाई ब्रिद्ध बखाना। 'हुकम मात गंगा कहु माना—।
करहु जतन—कहि बारंबारी। भेज्यो मोहि बिलंब बिसारी ॥ ५३ ॥

---

1. घड़ा 2. सरिता, नदी

बडे गुरनि के सिमरति चरित। जरी अजर यांते चित उरति।
इतने कोस पठे मैं आयो। करहिं न जतन जाति निकलायो ॥ ५४ ॥
सिख संगति गुरु जननी केरा। बहुतनि को हित या महिं हेरा।
तउ मैं कह्यो उपाव करीजहि। जिम गुर भावै तिम अबि कीजहि' ॥ ५५ ॥
सुनि ब्रिध ते निज मात संदेशा। बोलति भए गुरू जगतेशा।
'जे ब्रिध आदि मात सभि केरा। लीनि मतो इम जतन वडेरा ॥ ५६ ॥
तौ हम कहां सकहिं कहि बानी। तऊ न आछी तैं क्रित ठानी।
अजर जरनि की वडि वडिआई। महिमा कहैं संत समुदाई' ॥ ५७ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे 'जेठे' को प्रसंग बरननं नाम दोइ सशटी अंसू ॥ ६२ ॥

अंशु ६३

वज़ीर खां लैण आया । राजाओं को धैर्य

दोहरा

गुर सैनापति नर पठ्यो आयहु श्री गुर पास ।
दरशन देखति जोरि कर नमो करी अरदास ।। १ ।।

चौपई

'हय[1] गन रावर के पुरि मांहीं । घास अलप[2] कर आवति नांही ।
दाने के अधार पर रहैं । हरे त्रिणानि[3] कहु किमहुं न लहैं ।। २ ।।
देति दरोगे मलिन सु थोरे । दुरबल होति आप के घोरे' ।
सुनि कहि श्री हरि गोबिंद चंद । 'ब्रिध साहिब तुम सुमति बिलंद ।। ३ ।।
डेरा करहु संभारनि सारो । जबि लगि मेलि न बनहि हमारो ।
सभि को दीजहि खाना दाना । ले करि खरचहु दरब महाना ।। ४ ।।
सकल तुरंग चमूं लिहु संग । हरो घास पिखि थिरो निसंग ।
बांगर[4] की दिसि त्रिण बहु जहां । जाइ करहु अबि डेरा तहां ।। ५ ।।
हम जबि करैं हकारनि आवहु । भावत त्रिणनि तुरंग चरावहु' ।
ब्रिध साहिब गुरु के बच माने । भयो तयार अभिबंदन ठाने ।। ६ ।।
चलि करि आनि पहूच्यो डेरे । निस बसि कै दुरबल अस्व[5] हेरे ।
होति प्रात चढि ले दल सारा । दीरघ पंथ उलंघि निहारा ।। ७ ।।
चले आगरे ते सभि आए । दिल्ली नगर पिख्यो समुदाए ।
सुन्यो घास जहिं खरो उदारे । पंच कोस पुरि त्यागि पधारे ।। ८ ।।
हरित त्रिणनि देखति हरखाए । कर्यो सिवर उतरे समुदाए ।
लई सभिनि की सुधि ब्रिध तबै । जो चहियति सो लें भट सबै ।। ९ ।।
दिल्ली महिं मिल शाहु कि साथ । जबि लौ चढे न सतिगुरु नाथ ।
तबि लौ तहां टिकायहु डेरा । सहत तुरंगनि हरख घनेरा ।। १० ।।

---

1. घोड़ा 2. थोड़ी 3. हरी घास 4. बांगर प्रदेश 5. अश्व, घोड़ा

अबि लौ तिस थल चिन्ह लखंते। 'जागा ब्रिध की' लोक करंते।
कवि सिख वैठहि सेव करंता। तुरक राज कर नहीं रहंता ॥ ११ ॥
पठ्यो शाहु उमराव जू तूरन। पहुंच्यो जाइ पिखे गुरु पूरन।
करी बंदगी जुग कर जोरे। वैठि कह्यो 'पद शाहु निहोरे ॥ १२ ॥
घनी बंदगी तुम सों ररी। —रच्छ्या मोरि आप ने करी।
अबि आवहु दरशन दिहु सुंदर। पूर नगुरू गुननि के मंदर[1]'—॥ १३ ॥
गुरू कह्यो 'इस थान सुखारे। एकल सिमरहिं सिरजण हारे।
हम जबि के इस दुरग प्रवेशे। न्रिप कैदी सुखपाइं विशेशे ॥ १४ ॥
आप सुखी पर को सुख होइ। अस शुभ थान न त्यागहि कोई'।
सुनि उमराव गयो चढि करिकै। गमन्यो पंथ शीघ्रता धरिकै ॥ १५ ॥
जाइ शाहु के साथ सुनाई। 'कहहिं—इहां हम रहिं हरखाई।
कैदी सगरे सुख को पावैं। किम इह थान त्यागि हम जावैं' ॥ १६ ॥
सुनि विसम्यो चित महिं वहु शाहू। —किस कारन तें आइ न पाहू।
करि हकारनि इच्छा जबी ते। निस महिं त्रास न उपज्यो तबि ते ॥ १७ ॥
कै गुर मेरो कूर विचारा। यांतें नहिं आवनि मति धारा।
अपर सबब क्या ? नहिं इत आए। जिनहुं प्रान मम निसा बचाए ॥ १८ ॥
चितवति रह्यो कितिक चिर काला। शेर त्रास ते त्रसति बिसाला।
—जेकरि गुरू प्रसीद न होइं। कबहु निसा महिं धावहिं सोइ—॥ १९ ॥
करति बिचार रिदे फुरि आई। —खां वज़ीर तिन सिक्ख सदाई।
सो तिन के सुभाव कहु जानहि। मम ढिग कीरति गुरनि बखानहि ॥ २० ॥
ल्याइ सुधासर ते सु मिलाए। अपर लोग नित चुगली लाए—।
इम बिचारि निज निकटि हकारा। हुइ एकलि तिह साथ उचारा ॥ २१ ॥
'निस शेरनि परसंग[2] सुनाए। करे हकारनि गुरु नहिं आए।
तूं अबि जाहु मिलावहु आनि। कहि सभि बाकनि प्रथम समान' ॥ २२ ॥
खां वज़ीर कर जोरि सुनाई। 'गुरु दोखी सभि ब्याधि उठाई।
दीरघ पीरनि के गुर पीर। अजर जरनि धरि धीर अभीर[3] ॥ २३ ॥
त्रिन सम तन सनेह नहिं धरें। सहैं अवग्या दुशट जि करैं।
नाहिं त तिन के बाकनि संगि। थिरहि कौन खिन महिं हुइ भंग ॥ २४ ॥
ब्रिंद सहाइक कहिं तुम पास। गुरु संगि बिगरनि करहिं प्रकाश।
जे रावर निरनै कबि करो। दोश अदोशी तबि उर धरो ॥ २५ ॥

1. गुणों की खान 2. प्रसंग, घटना 3. निर्भयता, कायरताहीन

बडे पातशाहनि पर आदि। अरु तुम पर गुर करहिं प्रसादि[1]।
प्रिथम भए बाबर चवगत्ता। श्री नानक तिन को बर दित्ता॥ २६॥
अज़मति पिखि करि भंग चढाई। पुशतनि की पतिशाहति पाई।
बहुर हुमाउ शाहु परबीन। छीन सलेमशाह[2] छित लीनि॥ २७॥
चल्यो वलाइत मग तिस गयो। श्री गुरु आंगद जिस थल भयो।
श्री नानक गादी पर थिरे। ग्राम खडूर बास को करे॥ २२॥
बर हित गयो रह्यो ढिग खर्यो। कितिक काल बीत्यो थक पर्यो।
गुरू बारिकनि संग रचि रहे। पातिशाह संग नहिं किछु कहे॥ २९॥
उर शरधा परखनि के हेतु। नहिं बोले गुरु क्रिया निकेत।
शाहु रिदे रिस को उपजाई। —मम दिशि नहीं द्रिशटि को लाई॥ ३०॥
निकट बिठावनि कहि सनमानै। सो तौ रह्यो, कहां इह ठानै—।
कर्यो हंकार न जानहि शाहू। धर्यो दसत असि कबजे मांहू॥ ३१॥
खैंचि प्रहारौं दोधर करौं। थिरौं न पुन, मारग चलि परौं।
खड़ग मुशट सों कर लगि रह्यो। छुटहि न निकसहि बल करि लह्यो॥ ३२॥
बहुरि बिनै करि चहि बखशावनि। बोले श्री अंगद जसु पावन।
खड़ग मुशट पर धरि करि हाथ। हतनि चहति हम को रिस साथ॥ ३३॥
नहीं सलेमशाहु पर कोपा। दियो निकास महां रण रोपा।
खड़ग मुशट जे धरति न कर को। अबि ही लेति राज बड धर को॥ ३४॥
तऊ आस धरि चलि ढिग आवा। गमनहु अबहि वलाइत थावा।
लशकर बड सकेल चलि आवहु। अपनो राज निसंसै पावहु॥ ३५॥
इस महिं कारण हैं बड अैसे। श्री नानक नर निफल न कैसे।
श्री अंगद के सुनि करि बैन। बंदन कीनसि लज्जित नैन॥ ३६॥
खड़ग मुशट ते छुटि गा हाथ। चढि गमन्यो तूरनता साथि।
जाइ वलाइत लशकर ल्यायो। बहुर राज दिल्ली कहु पायो॥ ३७॥

तिन के सुत अकबर पतिशाहू। श्री गुरु अमरदास के पाहू।
लेकरि बर चत्तौर को तोरा। गमनि कीनि पुन लवपुरि ओरा॥ ३८॥
गोइंदवाल मिल्यो तबि जाइ। ग्राम परगना भेट चढाइ।
बिनती कहि प्रसंन बहु करे। अधिक प्रीति उर शरधा धरे॥ ३९॥
तिन के पुत्र आप अबि अहो। पिता पितामा के सम रहो।
करहु प्रसंन लेहु बर आछे। पूरहिं गुरू मनोरथ बांछे'॥ ४०॥

---

1. कृपा 2. शेरशाह

जहांगिर सनि बहुत प्रसंन। कहि वज़ीर खां को 'धंन धंन'।
दीनी बहुमाला सिरुपाइ। पच सहसर धन मगवाइ ॥ ४१ ॥
'उचरी बात अपूरब नीकी। महिद सुखद सद ही प्रिय जी की।
बिनै करहु अबि लेकरि आवहु। बिना बिलम गुरु निकट सिधावहु' ॥ ४२ ॥
हज़रत रुख वज़ीर खां हेरि। चढि तुरंग गमन्यो बिन देर।
जे कैदी महिपालक सारे। सुनी—शाहु के गुरू हकारे—॥ ४३ ॥
चिंतातुर उर व्याकुल होए। छोरि धीर मन शोक परोए।
हुइ इकत्र सगरे चलि आए। कारे दरशन पाइनि लपटाए ॥ ४४ ॥
दो कर जोरि अगारी खरे। नंम्रि होइ किन सिर धर धरे।
दीन बचन घिघि आवति कोई। 'श्री गुर तुम ते बडो न होई ॥ ४५ ॥
को हम को कबि आनि छुटावै। रच्छक तुम बिन अपर न पावैं।
श्री करतार क्रिपालु कहते। तिन सरूप हम तुमहिं लखंते ॥ ४६ ॥
शरनि परे की लाज निबाहो। दान अभैता दिहु उतसाहो।
दीननि पर दयालु की बान। बिरद ग़रीब निवाज महान ॥ ४७ ॥
बिन गुन गज अराधना करी। नगन चरन धाए प्रभु हरी।
श्री गुरु सरब भांति समरत्थ। भंजन रचनि आपि के हत्थ ॥ ४८ ॥
तुम ते हुइ हम कैद खलासी। अपर सभिनि ते भए निरासी।
बैस बिताइ बीच ही मरैं। तुम ते छुटहिं आस हम धरैं ॥ ४९ ॥
इत्यादिक कहि बिनै बडेरी। क्रिपा द्रिशटि, सुनि सतिगुरु, हेरी।
दई धीर जेते नर नाथ। 'तुम को राखहिंगे हम साथ ॥ ५० ॥
संग लेय सभि निकसनि करैं। नतु हम भी इस ही थल थिरैं।
करि हैं सभि की बंद खलासि। सिमरहु सत्तिनाम सुखरासि' ॥ ५१ ॥
सुनति नरिंद्र बिलंद अनंदे। 'अटल बचत जग बंद मुकंदे'।
भई खुशी जनु रिकरे कैदि। बैठे छूटनि धारि उमैद ॥ ५२ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे 'वज़ीर खां वाक' प्रसंग बरननं नाम तीन शशटी अंशु ॥ ६३ ॥

अंशु ६४

पीर मीआं मीर और जहांगीर मेल

दोहरा

जबि वज़ीर खां चढि गयो, बहुत बरख को पीर।
आयो पुरि के निकट, सुनि गयो शाहु तिस तीर ॥ १ ॥

चौपई

महां ब्रिद्ध जरजरी सरीर। अंतर ब्रिती रहति धरि धीर।
जुग भौहनि के रोम बिसाला। भए सुपैद झुके झपि जाला ॥ २ ॥
मुद्रित लोचन ऊपरि छाए। बोलै कबहुं बहुत बुलाए।
ज़ोर जोग के बैस बिसाल। राख्यो निज सरीर चिरकाल ॥ ३ ॥
वहिर जगत ते ब्रित्ति उठाई। लेति अनंद रस रिदे टिकाई।
जेतिक शाहु भए तिन आगे। राखि अदब पद पंकज लागे ॥ ४ ॥
चढहि पालकी पर असवारी। शाहु चलहि पद साथ अगारी।
बहु शरधा राखति उर माही। गयो शाहु तबि तिस के पाही ॥ ५ ॥
करी बंदगी बैठ्यो जाई। सरब नरनि की भीर हटाई।
जहांगीर इक, दूजो पीर। अपर न राख्यो अपने तीर ॥ ६ ॥
बूझति भयो 'संत के लच्छन। कहो पीर जी है जु बिचच्छन[1]।
जिस ते सुखी रहै तजि शोक। होति न दीन दौनहुं लोक' ॥ ७ ॥
कहै पीर 'सुनि संतनि भूखन। सभि बिकार ते रहै अदूखन।
रोक बाशना चाह मिटाई। भए अचाह एक लिवलाई ॥ ८ ॥
सीतल भयो रिदा निशकाम। सहजा ब्रित्ति[2] इसी को नाम।
जीवन मुकति अवस्था एही। नहिं उथान फुरनो बिधि केही ॥ ९ ॥
मित्रक मनिंद जगत महिं अहै। सभि रस तजि आतम रस लहै।
चिदानंद महिं पाइ बसेरे। त्रिण सम अपर रसनि को हेरे ॥ १० ॥

---

1. विलक्षण, अद्वितीय, अनोखा 2. सहजावृत्ति

मन रिखीक सिथले पर जाइं। जग बरतण सजि हे निधि पाइ।
जतन जोर ते करहि न कोइ। उर की लहिर बिलै सभि होइं॥ ११॥
करामात सभि लैता पावै। फुरनो होइ न कहां लगावैं।
तिन अंतर बल बडि हुइ जावै। फूक मारि ब्रहमांड उडावैं॥ १२॥
ससि[1] सूरज के डकरे करैं। तारे तोरि तुरत करि तरे।
सो परंतु निज ब्रत निबहाइं। प्रथम जु फुरना दयो मिटाइ॥ १३॥
फ़रना उठहि रिदे महिं जवै। अस पद ते उथान हुइ तवै।
निज फुरने पर थिरता धारि। हुइ सुचेत रहिं चौकीदार॥ १४॥
—मत फुरना कबि उठै हमारो -। उठनि देति रहैं मन मारो।
पाइ अवसथा म्रितक मनिंद। मगन रहैं नित ब्रह्मानंद॥ १५॥
जिम श्री रामदास के नंदन। श्री अरजन दुख दोख[2] निकंदन।
लवपुरि मैं जबि कैद परे हैं। नर दुशटन बहु तंग करे हैं॥ १६॥
—लाख दख दिहु सुपतनि देवैं। पान करहु भौ भी लख लेवैं—।
सुनि गुर कह्यो - न खाइं न पीवैं। नहिं सुपतहिं, इक थल थिर थीवैं—॥ १७॥
हुते संग सिख पिखि दुख लह्यो। जेठे अपर पिराणे कह्यो।
—जे अबि होवै हुकम हजूर। लवपुरि दिल्ली करि द्यों चूर॥ १८॥
इह क्या वसतु अवग्या करैं। करहुं नाश, नहिं थिरता धरैं—।
कह्यो गुरू—तुम कितते पाई ?। —प्रभू लीनि तुम सेव कमाई—॥ १९॥
करति सेव लीनिसि जिह पांही। तिन महिं शकति अहै कै नांही ?—।
—हे प्रभु तुम महिं शकति अनंत। आदि न अंत महां भगवंत—॥ २०॥
हुकम भयो—करि तूशन धरने। कारन सरव आप हैं करने—।
पुन मैं सुन्यो सज़ाइन देति। मोन गुरू सभि ही सहि लेति॥ २१॥
दरशन हेतु गयो तिन पास। बंदति चरन करी अरदास।
—श्री गुरु अरजन जी ! धंन धंन। तुम सम जग महिं पुरख न अंन॥ २२॥
एक सूरता[3] रावरि मांही। अपर किसी महिं पय्यत नांही—'।
सुनि इम शाहु रिदा डग डोला। पीर संग कर जोरति बोला॥ २३॥
'पूरब हमको सुधि नहिं दई। अैसे महां पुरख सुख मई।
नहिं महिमा कबि कही सुनाइ। गुज़र गई पर आज बताइ'॥ २४॥
कह्यो पीर 'तम दुनीआं नर हो। क्या महिमा लखि धारति उर हो।
गुरु महिमा हम भी नहिं जानहिं। तौ कैसे तुझ निकट बखानहिं'॥ २५॥

1. चन्द्रमा 2. दोष 3. शूरवीरता

कह्यो शाहु 'हिंदू तनु सोइ। कहिनी बनै न महिमा जोइ।
तुरकनि मत महिं दोश गनंते। असि तरीफ क्यों आप करते ?' ॥ २६ ॥
बहुर पीर कहि 'शाहु लखीजै। महिमा को कारन सुनि लीजै।
हम सभि पीर जाति दरगाह। सभि की बाति होति इन पाह ॥ २७ ॥
अंतहिपुर ते निकसहिं बाहर। सभि को दरशन दे करि ज़ाहर।
इन सों पीरनि मेला होई। अपर कीनि तहिकीक[1] न कोई ॥ २८ ॥
सभि जानति भे मिलि तिस ठौर। इह खुदाइ कै अंतर और।
श्री नानक गादी जो पावै। सो सरूप तहिं नदरी आवै ॥ २९ ॥
जे निशचा इम कहे न ठानहि। बूझहु अपर पीर जे जानहिं'।
जहांगीर सुनि कै जबि लह्यो। 'क्यों न पीर जी आगे कह्यो ? ॥ ३० ॥
अदब राखि, करिबंद ख़लासी[2]। लेति असीस तिनहु के पासी।
सुनति पीर उत्तर दिय अैसे। 'गुरू अछल हम कहति न कैसे ॥ ३१ ॥
ज़बि मुरादि[3] तिन हासलु हुई। देखि भुले हम पुन सुधि दई।
सभि प्रति आइसु गुरू उचारी। —आइ न को हम खेल मझारी— ॥ ३२ ॥
हुकम दियो बिध शिव को ऐसे। —खेल बिखै तुम आउ न कैसे।
अस हग ने ही खेल पसारी। को सुर करहि न शकति जि डारी ॥ ३३ ॥
जे नव नाथ सिद्ध चवरासी[4]। पीर फकीर सती संन्यासी।
हुकम त्रास ते हटि समुदाए। नहीं शकति को लावनि आए ॥ ३४ ॥
श्री अरजन सभि बिधि समरत्थ। लाखहुं कानी दाहन हत्थ।
बाम बिखै सो धरति करोरैं। जे करि इक कानी कबि छोरैं ॥ ३५ ॥
नहीं शाहु नहिं प्रजा रहंती। गगन न अवनी कितहुं दिसंती।
सभि मरदन करि गरद उडंते। को बल करि नहिं अग्र टिकंते ॥ ३६ ॥
करनि परेतु हुतो तिन तैसे। बल होते निरबल भे अैसे।
उर बिशेखता इह तिन केरी। फुरन उथान न करि किस बेरी ॥ ३७ ॥
सजहि ब्रित्ति ते नित चित सीतल। मगन सदा आतम रस हीतल।
जीवनि मुकति अवसथा झूलति। ब्रित्ति एक रस कबहुं न भूलति ॥ ३८ ॥
दुख जबि निकसे हुइ दुख खान। सो सुख रूप, दया की बान।
प्रान त्याग कर रावी तीर। चंदन चिखा जलाइ सरीर ॥ ३९ ॥

---

1 पूछताछ 2. मुक्त करना 3. मनोकामना 4. नौ नाथ और चौरासी सिद्ध

बहु संगति मिलि भी इक थाइं । घन की सम फूलनि बरखाइ ।
अतर अंबीरनि अलता डालि । लवपुरि पूरण भा तिस काल ॥ ४० ॥
किरतनु बहुत भयो तिस थान' । सुनति शाहु अति भयो हिरान ।
नहीं पीर ढिग बोल्यो गयो । करि बदन घरि आवति भयो ॥ ४१ ॥
—कर्यो चंदु ने इह अपराधू । मोकहु दोश देति गन साधू ।
'राखहि चोर' करति सो चारी । कहिति कूर मुझ प्रति दुरचारी ॥ ४२ ॥
कर्यो कुकरम सकल इह तांही । मुझ को गेरहिं दोजक[1] मांही ।
नाहिं त अबि तिन के सुत तीर । बख़शावौं अपराध गहीर[2] ॥ ४३ ॥
करौं प्रसंन चंदु गहि दैहौं । हाथ जोरि करि खता छिमै हौं ।
बिन अपराध होइ हौं तबै । श्री हरिगोविंद खुशि हैं जबै— ॥ ४४ ॥
इम बिचार करि तूशन कीनि । गुरति प्रतीखति होइ अधीन ।
—आवहिं तूरनि—चाहति शाहू । —गयो बज़ीर खान अबि पाहू— ॥ ४५ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे 'पीर अते शाहु संबाद' प्रसंग बरननं नाम चतुर शशठी अंसू ॥ ६४ ॥

1. नरक 2. गम्भीर

अंशु ६५

वज़ीर खां वापस आइआ

दोहरा

खां वज़ीर उर हरख धरि पहुंच्यो सतिगुर पास ।
नंम्रि होइ बदंन करी जल दरशन जिम प्यास ।। १ ।।

चौपई

पिखि श्री हरिगोविंद उचारे । 'आउ वज़ीर खांन गुर प्यारे ।
सहत कुटंब कुशल है तेरे ? । कहहु शाहु की सुधि जिम हेरे ।। २ ।।
क्रिपा भरे सुनि सुदर बैन । हुइ वज़ीर खां के तर नैन ।
हाथ जोरि कहि 'मिहर[1] तुमारी । जुकति कुटंब कुशल बिधि सारी ।। ३ ।।
मैं रावरि ते करिहौं लाजा । सर्यो न कैसे को शुभ काजा ।
तऊ आप सभि घट के मालिक । हित अनहित लखि लिहु ततकालक ।। ४ ।।
बरतै सरब आप की मरज़ी । दास धरम क्रित ठानति अरज़ी ।
चंदु संचारनि बिना न आछे । चारी[2] करति शाहु ढिग गाछे ।। ५ ।।
गुरु द्रोही दीरघ अपराधी । ब्रिद प्रपंच रचहि जनु ब्यापी ।
छिमा आदि को क्यों बनि आवै । जबि लौ दुशट द्रिशटि दरसावै ।। ६ ।।
जतन करहु मारनि को जबै । किस ते रुकहु न, हति हो तबै ।
पठ्यो शाहु मुझ पास तुमारे । प्रेम बिनै जुति बचन उचारे ।। ७ ।।
—प्रान दान मुझ को गुरु दीनो । अबि दरशन दिहु ग्यान प्रबीनो ।
करति प्रतीखनि निस दिन चाहति । —कबहि बिलोकों—महां उमाहति ।। ८ ।।
प्रथम गयो उमराव जु मरि कै । नहिं दरसे चित चिंता धरि कै ।
मोहि हकारनि करि समुझायो । अधिक प्रेम ते इतहि पठायो ।। ९ ।।
उचित आप को दरशन दीजहि । सरब सिद्ध कारज करि लीजहि' ।
श्री हरि गोविंद सुनति बखाना । 'अटक[3] परी इक कठन महाना ।। १० ।।

---

1. क्रृपा 2. चुगली 3. रुकावट

जबि हम प्रविशे दुरग मझारी। भयो कैदी अनि को सुख भारी।
खान पान ते भए सुखारे। छुटनि भरोसा मन महिं धारे॥ ११॥

अबि सुनि लीनो—शाहु हकारे—। परे शरनि वहु बिनै उचारे :—
रावरि विना न हम गति काई। कै मारहु कै देहु जिवाई—॥ १२॥
हमरे सदा प्रतग्या इही। शरनि परे कह त्यागति नहीं।
जो नर आरति कहि इक बेरा। —श्री हरि गोबिंद मैं अबि तेरा॥ १३॥
क्या गिनती है इहां बचावनि। निकट न देउं दूत जम आवनि।
दास जियति की रच्छा[1] न करैं। म्रितक भए किम दुख परहरैं ?॥ १४॥

जन की करों कामना पूरन। संकट ते उबार[2] करि तूरनि।
मरन प्रयंत नरिंदनि[3] कैदि। नहिं छूटनि की रिदे उमैद॥ १५॥

इन को छोरनि शाहु जि मानहि। तबहि हकारनि हम को ठानहि।
नांहि त रहैं इसी हम थान। पारहिं करहिं महीप[4] महान॥ १६॥
अरु गुरु द्रोही गहै न थिरता। परहि नरक महिं कुम्रितु मरिता।
काल नजीक आइ अबि होवा। सहत कुटंब सदन दे खोवा॥ १७॥

अबि तुम गमनहु शाहि कि पास। करहु कैदी अनि कथा प्रकाश।
इनहु समेत दुरग निकसैं हैं। नांहि त बैठे इहां रहै हैं॥ १८॥

सुने वज़ीर खान गुरु बैन। बिखम[5] बात, निज बसि जो है न।
कह्यो न गयो बिचारति रह्यो। —मानहि शाहु कि नहिं—चित लह्यो॥ १९॥
तऊ गिनति मन—बिखम न कोई। शक्ति अनंत गुरू महिं होई।
अनबन भी सभि लेहिं बनाइ। बनी बात को दें बिगराइ॥ २०॥

मेरो धरम, बचन गुर मानों। जिम कहि तिम चलि शाहु बखानों।
फेरौं नहिं, गमनौं अनुसारे—। इम बचारि करि बचन उचारे॥ २१॥
'दया करनि की बानि[6] तुमारी। निकट दुखी भे शरनि अगारी।
अपनि प्रतग्या करहु निबाहिन। सदा सहाइक संसै नांहिन'॥ २२॥
इम कहि सुनि कै हुइ असुवार। गमन्यो पंथ शीघ्रता धारि।
गयो शाहु ढिग बैठ्यो देखि। करी बंदगी निम्र बिशेख॥ २३॥
कह्यो शाहु 'गुरु की सुधि देहु। कर्यो कि नहिं आवनि, लखि नेहु।
अधिक प्रतीखनि मैं नित करिता। दरशन देहिं बिघन गन हरता॥ २४॥

---

1. रक्षा 2. बचाना, निकालना 3. राजा 4. राजा 5. विषम प्रतिकूल 6. आदत

सुनि वज़ीर खां जुग कर बंदि। कहित शाहु सों देति अनंद।
'सदा चहति हैं कुशल तुमारे। क्रिपा भरे गुर बाक उचारे ॥ २५ ॥
पर्यो काज अवि अैसो आइ। करनो कठन सु जान्यो जाइ।
तुमरे कहे बिनां नहिं होइ। नतु ल्यावति मैं करिकै सोइ:—॥ २६ ॥

महिपालक[1] कैदी समुदाइ। परे शरनि सतिगुरु की धाइ।
अपनो बिरद बिचारनि कीनि। नहीं दुरग पग बाहरि दीन ॥ २७ ॥
—जे करि ए सगरे खुटि जाइं। तौ हमरो चलिबो बनि आइ।

नांहि त बैठे हम इस थान। सिमरहिं श्री नानक भगवान—'॥ २८ ॥
सुनति शाहु ने रिदे बिचारि। 'करी मुहिंम लग्यो धन भारी।
मर्यो ब्रिंद लशकर तिस काल। तबि पकरे दुरब्रिति महिपाल ॥ २९ ॥

होहिं मवासी देश बिगारहिं। लूटि कूटि मम नगर उजारहिं।
अनिक जतन ते बल बहु लाए। दुशट महीपति तबि पकराए ॥ ३० ॥
किम छोरनि अबि तिन को होइ। दंड उचित अपराधी जोइ।
निकस कैदि ते पाइं फतूर[2]। केतिक देश मिलावहिं धूरि'॥ ३१ ॥

सुनि वज़ीर खां गिरा उचारी। 'रावर को प्रताप है भारी।
करे जोर, को अरै न आगे। सुनहिं नाम तौ दुशमन भागें ॥ ३१ ॥
तुम तन की करि ख़ैर ख़दाइ। इस के सम नहिं वसतू काइ।
जीवन लगि है सकल समाज। देश, कोश[3], सैना, सभि राज ॥ ३३ ॥
निज सरीर की कुशल बिचारो। अपर न रिदे कछू तुम धारो।
नर तन दुरलभ पुन अस हौनि। जहाँ पनाह ! सकल सुख भौन[4] ॥ ३४ ॥
इह फरेब सभि चंदू करे। दुरग जु अस महिं सतिगुरु बरे।
अबि तौ करनि बनति है तैसे। श्री हरि गोबिंद उचरैं जैसे ॥ ३५ ॥
गुरु प्रतिकूल आप जबि होवहु। त्रास बिसाल निसा महिं जोवहु।
करहु आप जैसे मन भावै। जिस ते सुख तुमरो तन पावै ॥ ३६ ॥
मसलति नहीं अपर की लीजहि। जानि शुभाशुभ आपहि कीजहि।
हम तौ चाहति कुशल तुमारी। कायां रहै सदीव सुखारी'॥ ३७ ॥
सुनि वज़ीर खां के बच शाहू। गिनती अनिक गिनति मन माहू।
कह्यो 'जि कैद बिखै महिपाला। छोडनि को जि कहौं इह काला ॥ ३८ ॥
दे करि दंड सकल छुटि जावहु। नहिं आगे पुन गर उठावहु।
दरब करोरनि लगि इह देवैं। नहिं आगे अपराध्र करेवैं ॥ ३९ ॥

---

1. राजा 2. जेल से निकल कर फिर बिगड़ जाएँगे 3. खज़ाना
4. सुख के घर

इम करिबे महिं बड नुकसाने । बहु धन खरच पकरि न्रिप आने ।
श्री हरि गोविंद तहिं जि पठाए । सो हुइ दीन दुखी घिघिआए[1] ॥ ४० ॥
करी क्रिपा तिन पर हठ धारा । संग निकासनि बाक उचारा ।
बिन छोडे अबि नहिं बनि आवै । गुरु प्रतिकूल त्रास उपजावै ॥ ४१ ॥
नहिं भेजति जे गुरु को तहिंवा । महि पालक तबि मिलते कहिंवा ।
चंदू मसलति दई पठाए । जिस ते अस कुपेचि उपजाए ॥ ४२ ॥
जहां कहां कीनिसि खुटि आई । अबि इह पापी उचित सज़ाई ।
इत्यादिक कहि सोचति शाहू । जानहिं कठन दोनि दिसि मांहू ॥ ४३ ॥
छोड़हिं न्रिप तौ लखहिं कुनीति । बिनु छोडे हुइ निस भय भीत—।
पुन वज़ीर खां जुग कर जोरे । 'पिखहु आप निज तन की ओरे ॥ ४४ ॥
रहे सलामति. सभि इह आछे । काज न आइ किसी तनु पाछे ।
जीवनि लगि सगरो बिवहार । सुखदायक प्रानी निरधार ॥ ४५ ॥
—जो आवश्श्य बनति है करनी । नहि सोचहि तिह—बुधि जन बरनी ।
रावरि के सरीर पर सारे । धन कोटिनि लगि डारिय वारे ॥ ४६ ॥
जथा अनंद आप तुम रहो । सो निचिंत[2] हुइ तूरन कहो ।
जिस कारज महिं गुरु हुइं ठांढे । सो आछो हुइ नित सुख बाढे ॥ ४७ ॥
रहहिं न्रिपति सगरे अनुसारी । जिम गुरु कहैं करैं तिम कारी ।
अपने कारज कहि सुधरावहु । करहिं चाकरी[3] जहां पठावहु ॥ ४८ ॥
भई सजाई तिनहु कहु भारी । परे रहे दुख कैद मझारी ।
छूटिहंगे गुरु के उपकारा' । सुनति शाहु पुन रिदे बिचारा ॥ ४९ ॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे 'श्री गुर हकारन' प्रसंग बरननं नाम पंच शशठी अंसू ॥ ६५ ॥

1. दीनता दिखाना 2. निश्चिन्त 3. गुलामी, नौकरी

अंशू ६६

बंदी छोड़ जी दिल्ली आए

दोहरा

रिदे बिचारति सुमति ते जहांगीर पतिशाहु ।
—ले निकसहिं गुरु न्रिप कितिक रहैं अपर गढ मांहु— ॥ १ ॥

चौपई

चितवति जतन शाहु मन मांहू । —हुइ आगवनि गुरू मम पाहू ।
दरसौं त्रास निसंसै नासौं । निसा बिखै सुख पाइ हुलासौं—॥ २ ॥
कितिक काल महिं जुगति बखानी । सुनहु वज़ीरखान ! हित ठानी ।
करहु बंदगी गुरू अगारी । दिहु दरशन को करुना धारी ॥ ३ ॥
जेतिक तुमरे दामन साथ । गहिनि करहिं, आनहु नर नाथ[1] ।
तिन पर सफलहि क्रिपा तुमारी । प्रान दान दीनसि उपकारी—॥ ४ ॥
गुरु प्रसंन हुइ करि चलि आइं । कहौ तथा शुभि मति उपजाइ ।
पहुंचहु जाइ, नहीं बिदतावहु । कुछ न्रिप संग गुरू निकसावहु ॥ ५ ॥
तुरत चढाइ इहां लै आवहू । सनमानति आनंद उपजावहु ।
सुनि वज़ीर खां करी सलाम । चढ़ि करि चल्यो तुरंग[2] अभिराम ॥ ६ ॥
तूरन गमन्यो पहुंच्यो जाई । उतर्यो वहिर दुरग अगत्राई ।
जल सों कर बदन परवारे । भयो पुनीत सु बसत्र सुधारे ॥ ७ ॥
गयो नंम्रि हुइ गुर अगवाई । कर जोरति पग परसे जाई ।
'उठहु गरीब निवाज क्रिपाला ! । लेहु संग कैदी महिपाला ॥ ८ ।
जो दामन गहि लेहिं तुमारे । बंद खलासी[3] सो हुइं सारे ।
हुते दुरग के जे दरवान । हुकम शाहु की दियो वखान ॥ ९ ॥
कैदी महिपालक जे अहैं । जों सतिगुरु के दामनि[4] गहैं ।
सों सभि दुरग निकसि करि जाइं । पग के बंधन देहु कटाइ ॥ १० ॥

---

1. राजा 2. घोड़ा 3. बंधनमुक्त 4. शरण

श्री गुरु हरिगोबिंद गुसाईं। लखि करि तुरकेशुर चतुराई।
चढनि हेतु निज वसत्र मंगाए। दौरति दास सकल ले आए॥ ११॥
अरुण[1] बरुण चीरा सिर चारू। जुग छोरनि कै ज़री उदारू।
सुंदर पेच लाइ सो साजा। मुख मंडल तबि अधिक बिराजा॥ १२॥
जामा पहिर्‌यो चारु बिसाला। बने पचास जास के पाला।
सुंदर बंद सु दुंद बिलंदे। आयुत उर पर लमक सुहंदे॥ १३॥
सिर पर जिगा जेब जिस ज़ाहर। जबर अजाइब जरे जवाहर।
कुंडल करन[2] करन[3] महिं कंकन। आंखि बिसाल बिलोकनि[4] बंकन॥ १४॥
जथा सुंड भुजदंड प्रचंडे। नवरतने अंगद जहिं मंडे[5]।
जर महिं मुकता माल बिसाला। बिच बिच हीरनि जालनि झाला॥ १५॥
जरे जवाहर छाप छलाइन। शोभति सुभ सरूप छबि आइन।
ले बहु मोला ललित दूकूल। ज़री जुकति शोभति शृज मूल[6]॥ १६॥
गहि दीरघ पहिरी शमशेर। बली बिसाल सुभति सम शेर।
जांबूनद[7] के फूल लगाए। बांधि लइ अस ढाल सुहाए॥ १७॥
कंचन महिं जराउ जखाओ। अस निखंग कट सग लगायो।
धनुख कठोर हाथ महिं गह्‌यो। पनहि पाइ चलिन को चह्यो॥ १८॥
सुनि पिखि कै कैंदी महिपाल। हरखति सभि आए ततकाल।
दीन मलीन, कुनाल कराले। बहु गरूए पंग बंधन डाले॥ १९॥
देखि क्रिपा करि कह्यो क्रिपाल। 'इक दामन गहि इक महिपाल'।
उतलावति जबि पकरनि धाए। सने सने दे धीर गहाए॥ २०॥
जामे के पचास थे पाले। गहे पचासनि ही महिपाले।
दो भूपति कैदी तबि रहे। अपर सरब ने दामन गहे॥ २१॥
सो कर जोरि महां घिघिआए। 'हमहुं न त्यागे जाहु इथाएं'।
निकटि होति को हटक सिपाही :— गहहु कहां ? छूछो अबि नांही॥ २२॥
जामे के पचास ही पाले। गहे पचास भुवाल बिसाले।
अधिक भीर गुरु केर समीप। रवसि आपस महिं थिरे महीप॥ २३॥
तुमरी परालबध दुख पावहु। हटहु पिछारी निकट न जावहु'।
दोनहु न्रिप तबि ऊच पुकारे। 'प्रान दान दिहु गुरू हमारे॥ २४॥
तुमरे बिन को रक्ख्यक नांही। आनि छुटाइ कैद जे मांही।
हम अनाथ के तुम हो नाथ। क्रिपा करहु लीजहि निज साथ॥ २५॥

---

1. लाल 2. हाथों में 3. कानों में 4. दृष्टि 5. सजे हुए 6. कन्धे
7. सोना

देखि क्रिपाल दीन दुखिआरे। श्री मुख ते कहि ऊच हकारे।
'दुइ जामे के बंद हमारे। आइ गहो निज हाथ मझारे ॥ २६ ॥
सुनति नरिंद अनंद बिलंदे। आए दुंद दौरि गहि बंदे।
करि छूछो[1] सभि बंदीखाना। श्री गुरु चाहति भे प्रसथाना ॥ २७ ॥
जहिं कहिं सुधि लोकनि सुनि पाई। हित देखनि के आवति धाई।
श्री गुरु संग सकल महिपाला[2]। निकसति दुरग गहे सभि पाला ॥ २८ ॥
धंन्य धंन्य गुरु बडि उपकारी। क्यों न गहै नर शरनि तुमारी।
जीवति म्रितक सदा रखवारे। देति अनंद कशट निरवारे[3]' ॥ २९ ॥
आवति देखनि नर गन दौरि। सने सने गुरु निकसे पौरि।
हाथ बंदि सभि बंदन ठानि। मानव गुनहिं सु मन अनुमान :—॥ ३० ॥

कबित्त

संकट नरन को बिकट जे ब्रिलाप जैसे,
निकसे निसंग संग जनक नरिंद को।
कैधों उड ब्रिंद करि ओज को बिलंद राहु,
रोके छुटि चले साथ पूरन सु चंद के।
कैधों घेरि आनीं नारी सुंदर महांनी,
दैंत हांनी करि लीनि, पाछे गमनी गुबिंद के।
तिन के मनिंद आज शोभति मुकंद महां,
निकसे नरिंद संग श्री हरि गोबिंद के ॥ ३१ ॥
कैधों जरासिंधु ने नरिंद ब्रिंद कैदि करे,
गमने अरिंद सु गोबिंद ने छुडाइ दीनि।
कैधों राखशिंद[4] गहि इंद्र के समेत सुर,
रामचन्द्र जाइ गढि लंक निकसाइ दीनि।
बली ज्यों पारस नाथ रोके नरनाथ जीति,
मिलि कै मछिंद्रनाथ सभि मुकताइ दीनि।
श्री हरि गुबिंद आज तिनहुं के मनिंद[5] कीनि,
संगि ले महेंद्रनि को दुक्ख ते बचाई दीनि ॥ ३२ ॥

सवैया

जूंक परी, बहु बार बधे, सिर रूखे बडे न नही चिकनाई।
जीरन चीर मलीन फटे, तन छादिन भी नहीं होहि सबाई।

1. खाली 2. राजा 3. दूर कर दिए 4. रावण 5. समान

बंधन भार धरे बहु पाइनि मंद ही मंद चल्यो जिन जाई।
श्री हरि गोबिद धीर बिना कहु कौन करै दुख ते छुटकाई॥ ३३॥
देश विशेश को राज सुत भारजा[1] आदि हितू नहिं पासी।
दीह महां दुरगेय बडो दिढ, जाइ न को गढ मैं बलरासी।
हीन उपाइ रहे दुख पाइ जु छूटनि ते नित धारि निरासी।
श्री हरि गोबिंद धीर बिनां कहु कौन करै अस बंद खलासी[2]॥ ३४॥
देश बिदेशनि जीति भले इक राज भयो बडि तेज प्रकाशी।
नांहि रह्यो अवनि तल[3] को अस, जो रण ठानि करै बल नाशी।
दीह वध्यो तुरकेश प्रताप गहे रिपु तांहि न छोरनि आसी।
श्री हरि गोबिंद धीर बिना कहु कौन करै अस बंद खलासी॥ ३५॥

दोहरा

परवारति खसि फस महां महीपाल तिस काल।
दुरग पौर निकसे गुरू कौतक होति बिसाल॥ ३६॥

चौपई

लोक हज़ारहुं हेरनि हेत। मिले आइ हुइ शीघ्र समेत।
भई दूर लगि पंगति खरी। गुरु दरशन ले बंदन करी॥ ३७॥
उचरहिं सुजसु महां तिस काला। बंद खलासी जानि न्रिपाला।
'तुम बिन कौन करे अस आज। बिरद[4] संभारि गरीब निवाज'॥ ३८॥
बसत्र बिभूखण शसत्र सजंते। डील बिसाल चलति दुतिवंते।
निकसि दुरग ते बाहर खरे। तबहि लुहार हकारनि करे॥ ३९॥
सभि के पग बंधन कटवाए। हुइ निरबंध महिप[5] हरखाए।
जिम सिक्खनि पर किरपा धारैं। करम बंध ततछिन कट डारैं॥ ४०॥
तिम लोकनि द्रिशटांति दिखायो। जो चलि सतिगुरु शरनी आयो।
सो निरबंधन हुइ मुद पावै। बद्ध्यति होहि न आवै जावै॥ ४१॥
देखि क्रिपानिधि की बडिआई। तबि हरिदास मोद उर पाई।
—रहौं संग मैं नांहि न त्यागौं। सफल जनम गुरु सेवा लागौं—॥ ४२॥

पाधड़ी छंद

हरिदास हेरि करुना निधान।
चित चहति दियो आनंद महान।
तबि कह्यो 'जितिक कैदी न्रिपाल।
सभि लेहु संग अबि पंथ चाल॥ ४३॥

1. पत्नी 2. बंधनमुक्त 3. पृथ्वी तल 4. यश, सम्मान 5. राजा

हम ते सु जदो हुइ करि पयान*।
ग्रिप सने सने चलि हैं महान।
हम करहिं शीघ्रता मग बिसाल।
उर शाहु प्रतीखति बितिय काल'॥ ४४॥

इम कह्यो पुनह कीनो पयान।
चढि करि तुरंग चंचल महान।
तबि खां वज़ीर निज संग लीनि।
मुख करति बारता गुरू प्रबीनि॥ ४५॥

सभि सिक्ख आदि जेठे अनंद।
गमने सु लारि कुल सोढि चंद।
धरि शसत्र शुभति जिम महिद सिंघ।
बलिहार जाति संतोख सिंघ॥ ४६॥

अबि रासि चतुरथी पूरि कीनि।
गुरु क्रिपा धारि उद्दम सु दीनि।
सुंदर बिलास कीने प्रकाश।
जिस पठति सुनति सभि पाप नाश॥ ४७॥

इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रिंथे चतुरथ रासे कवि संतोख सिंघ बिरचतायां भाखायां 'श्री हरिगोबिंद दुरग निकसन' प्रसंग बरननं नामु खसट सशठी अंसू॥ ६६॥

चतुरथ रास समापतं॥

चौथी रास समाप्त होई॥

* प्रस्थान

संज्ञा-कोश

अकाल वाहिगुरु अथवा परमात्मा के लिए प्रयुक्त संज्ञा ।

अकाल-तख्त अमृतसर के हरिमन्दिर के सामने गुरु हरिगोविंद द्वारा सन् 1665 ई० में बनवाया एक ऊंचा चबूतरा, जिस पर बैठकर वे दीवान सजाया करते थे ।

अकाल-पुरष देखिए 'अकाल' । पुरष' कहने में परमात्मा के पौरुष पूर्ण रूप का संकल्प भी इसमें निहित हैं ।

अकाल-बुंगा अकाल-तख्त को ही कहते हैं ।

अटल राइ माता नानकी जी से गुरु हरिगोविंद का चौथा पुत्र । बचपन में करामात दिखाने के कारण 9 वर्ष की आयु में पिता के संकेत पर शरीर त्यागा । आज भी अमृतसर में बावा अटल के नाम से एक भव्य गुरुद्वारा देखा जा सकता है—वहां पका अन्न चढ़ता है ।

अणी राइ माता नानकी से ही गुरु हरिगोविन्द का तीसरा पुत्र ।

अनंती दया राम की पत्नी, गुरु हरिराइ की सास ।

अब्दुल खां सूबा जालन्धर का मुस्लिम नवाब ।

(गुरु) अमर दास गुरु परम्परा में तीसरे गुरु, जिनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में 'महला ३' के अन्तर्गत संगृहीत है ।

अमृतसर गुरु रामदास (चौथे गुरु) द्वारा बसाया नगर । इसका पुराना नाम (गुरु का चक) था, अमृतसर नाम वहां पांचवें गुरु द्वारा बनवाए पक्के तालाब के कारण पड़ा ।

(गुरु) अर्जुन देव पांचवें गुरु । इन्होंने ही गुरु ग्रंथ साहिब का सम्पादन किया था ।

आसमान खां पैंदेखां का दामाद ।

आनंद गुरु ग्रंथ साहिब में राग रामकली के अन्तर्गत गुरु अमरदास द्वारा रचित एक विशेष वाणी । आजकल सिक्ख रहत-नामों के अनुसार इस वाणी का पाठ सिक्खों में विवाह के अवसर पर किया जाता है ।

आज्ञा राम गुरु हरिगोविंद (छठवें गुरु) का एक सिक्ख ।

(गुरु) अंगद देव द्वितीय गुरु। गुरु-गद्दी प्राप्त होने से पूर्व इनका नाम भाई लहणा था।

कबीर उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध सन्त कवि। सन्तों में सबसे अधिक वाणी इन्हीं की गुरु ग्रन्थ में संकलित हुई।

करतारपुर (1) जि० गुरदास पुर, तहसील शकरगढ़ में गुरु नानक द्वारा सं० 1561 में बसाया एक नगर जिसे गुरु जी के ज्योति-जोति समा जाने पर रावी नदी ने लगभग लील लिया। (2) जालन्धर के निकट गुरु अर्जुन देव द्वारा सं० 1651 में बसाया एक नगर, जिसे बाद में धीरमल्ल ने अपने लिए प्राप्त कर लिया।

करमो गुरु अर्जुन देव जी के बड़े भाई पृथिए की पत्नी। भाई-भाई में द्वेष उत्पन्न करने तथा गुरु हरिगोविन्द के प्राणों पर एकाधिक आघात करने में इस महिला का विशेष हाथ रहा है।

कटारू काबुल का एक सिक्ख दुकानदार। अज्ञानवश जिसका तोल का बाट पांच पैसे भर कम था और गुरु अर्जुन जी ने अदालत में उसकी लाज रखी थी।

काले खां पेशावर का नवाब। यह गुरु हरिगोविंद द्वारा पराजित मुगलस खां का भाई था। अपने भाई का बदला लेने के लिए इसने भी गुरु जी से युद्ध किया और मारा गया।

कान्हा एक साधु, जो अपनी वाणी गुरु ग्रंथ में दर्ज करवाना चाहता था, किन्तु अर्जुनदेव ने उसे अपनाने से इनकार कर दिया था।

काशी वर्तमान बनारस, वाराणसी।

कालू बेदी श्री गुरु नावकदेव के पिता।

काबुल भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा पर एक प्रदेश।

किदारा (भाई) गांव मद्र का एक सिक्ख। इसे कंठमाला रोग था, गुरु जी का जूता छूने से यह रोग-मुक्त हुआ था।

कुतब खां जालन्धर का पठान सरदार। इसने पैंदेखां को गुरु जी के विरुद्ध लड़ने में सहायता दी थी।

कुरुक्षेत्र वर्तमान हरियाणा का नया ज़िला—एक प्रसिद्ध तथा ऐतिहासिक तीर्थ स्थल।

कुक्को गुरु हरिगोविंद जी का सिक्ख योद्धा। गुरु जी के लिए लड़ा और शहीद हुआ।

क्रिशन चन्द — भोउ गांव के निवासी खत्री। आप गुरु अर्जुन देव के श्वसुर और गंगा माता के पिता थे।

कौलां — लाहौर के निकट मुज़ंग कस्बे के एक काज़ी रुस्तम खां की सुपुत्री, जिसने गुरु हरिगोविन्द की शरण में आकर जीवन पवित्र किया। करतारपुर में इसकी समाधि विद्यमान है, कौलसर इसी के नाम पर है।

कौलसर — गुरु हरिगोविंद द्वारा सन् 1684 में अमृतसर में कौलां के नाम पर बनवाया सरोवर।

कोठा — पृथीचन्द द्वारा बसाया गया एक गांव। यह रेलवे स्टेशन जैतो से 14 मील दूर बठिंडा के निकट है।

कंधार — भारत के उत्तर पश्चिम में एक सम्पन्न प्रदेश।

खडूर — जि० अमृतसर, थाना वैरोवाल में गुरु अंगददेव जी का निवास स्थान।

खानपुर — वह गांव जहां गुरु अर्जुनदेव तथा उनके सेवकों को ठहरने को स्थान नहीं दिया गया था और लोगों ने उन्हें गांव से चले जाने को कहा था।

खारा — तहसील तरनतारन, जि० अमृतसर का एक गांव।

खेम कौर — गुरु हरिगोविंद की पुत्र-वधू, सूरज मल्ल की पत्नी।

खां वज़ीर — जहांगीर तथा बाद में शाहजहां का मंत्री। यह गुरु-घर से प्रभावित था और समय-समय पर बादशाह को गुरु-घर के अनुकूल बनाता रहता था।

ग्वालियर — मध्य-प्रदेश का प्रसिद्ध दुर्ग, जहां गुरु हरिगोविंद को रखा गया था और जहां से आते समय उन्होंने कई राजाओं को स्वतन्त्र करवा कर 'बंदी-छोड़' पद प्राप्त किया था।

ग्रंथ (गुरु) — गुरु अर्जुनदेव ने प्रथम पांचों गुरुओं एवं अन्य भारतीय सन्त महात्माओं की वाणियों का संग्रह करके एक ग्रंथ तैयार किया था। बाद में गुरु गोविंद सिंह ने इसे 'गुरु पद' प्रदान किया।

गुजरात — भारत के पश्चिमी भाग में एक प्रदेश।

गुपाला (गुपाल राय) — गुरु अर्जुन का सिक्ख। गुरु हरिगोविंद ने एक बार इससे जपुजी का शुद्ध पाठ सुनकर इसे घोड़ा और खिल्लअत प्रदान की थी।

गुमटाला गांव — अमृतसर के पास का एक गांव। वहां के जंगल में गुरु हरिगोविंद ने बादशाह का सफेद बाज़ पकड़ लिया था। बाद में यही घटना अमृतसर के युद्ध का कारण बनी।

गुरदास (भाई) गुरु अर्जुन देव के प्रसिद्ध सिक्ख। इन्होंने गुरु ग्रंथ के लिपिक का कार्य किया था। बाद में गुरु हरिगोविंद की सेवा में भी रहे।

गुरदित्ता (बाबा) गुरु हरिगोविंद का दमोद्री माता से उत्पन्न प्रथम पुत्र।

गुरुसर गुरु का लगवाया सरोवर। इस नाम के अनेक तालाब और गुरद्वारे पंजाब में मौजूद हैं।

गुलाब घोड़ा, जो गुरु-सिक्खों से शाहजहां ने छीना और विधीचंद (विधिए) ने छल-पूर्वक लौटा लिया था।

गूजरी (माता) गुरु तेग बहादुर की पत्नी।

(गुरु) गोविंद सिंह गुरु तेग बहादुर तथा माता गूजरी के सुपुत्र, दशम गुरु।

गोइंदवाल जिला अमृतसर, तहसील तरनतारन में ब्यास नदी के किनारे गोंदा खत्री द्वारा बसाया एक नगर। इसमें उसे गुरु अमरदास की विशेष सहायता प्राप्त हुई थी।

गोरख नाथ-पंथ के प्रवर्त्तकों में से प्रसिद्ध नाथ योगी।

गोंदा खत्री गोइंदवाल नगर बसाने वाला मरवाहा खत्री।

गौरजा दयाराम की पत्नी और गुरु हरिराय की तीन सासों में से एक।

गंगा (माता) गुरु अर्जुन देव जी की पत्नी और गुरु हरिगोविंद की जननी।

चित्र सैन वह सौदागर जिसका जहाज़ अटक गया था और गुरु जी ने ध्यान-मात्र से कंधा लगा कर चला दिया था।

चित्तौड़ राजपूताने का एक प्रसिद्ध गढ़। महाराणा प्रताप सिंह के कारण विशेष ख्याति।

चुटाला शीशम का एक पेड़, जो कि गुरु हरिगोविंद के ससुराल मंडियाली में है।

चोला जिला अमृतसर के थाना सरहाली के प्रदेश का एक गांव, जिसका पूर्व नाम भैनी था। गुरु अर्जुन देव ने इसका नाम-परिवर्तन कर दिया था।

चंदी गुरु नानक देव की सास, (माता) सुलक्खणी की माता।

चंदू जहांगीर का दीवान। इसके अभिमान के कारण गुरु अर्जुन ने इसकी पुत्री की सगाई गुरु हरिगोविंद के लिए अस्वीकार कर दी थी। प्रति-शोध में इसने गुरु अर्जुन को अत्यन्त पीड़ित किया—बाद में स्वयं भी कुत्ते की मौत मरा।

चंद्रसर चन्द्र सरोवर।

छज्जू — एक महात्मा जो अपनी वाणी गुरु ग्रंथ में संगृहीत करवाना चाहते थे, किन्तु गुरु अर्जुन ने स्वीकार नहीं की।

छिहरटा — एक बड़ा कुआं, जो अमृतसर के पश्चिम में चार कोस की दूरी पर है। इसे सं० 1654 में गुरु अर्जुन देव ने बनवाया था और इस में एक ही समय छ: रहट चल सकते थे।

छोटे (मीर) — पैंदे खां का ससुर। पैंदे खां के निवास स्थान का नाम भी छोटा मीर था।

जहांगीर — मुगल सम्राट्, अपने न्याय के लिए प्रसिद्ध किन्तु गुरु-घर के लिए कभी संकीर्ण और कभी उदार।

जपुजी — गुरु ग्रंथ में संकलित आरम्भिक वाणी। रचयिता गुरु नानक। प्रात:काल पाठ किया जाता है।

जुआला — दया राम की पत्नी, हरिराय (गुरु) की तीन में से एक सास।

जेठा — गुरु रामदास का पूर्व नाम। गुरु हरिगोविंद का एक वीर सिक्ख जो गुरुसर के युद्ध में शहीद हुआ।

जैदेव — एक महात्मा, जिनकी वाणी के कुल दो पद गुरु ग्रंथ में उपलब्ध हैं। ये बंगाल के रहने वाले और संस्कृत के विद्वान् पंडित थे।

जोधू (राय) — कांगड़ा का राजा। इसने अपनी स्त्री के उपदेश से (जो कि सिक्ख पुत्री थी) गुरु हरिगोविंद से सिक्खी प्राप्त की।

टाइली — ज़िला जालन्धर, तहसील नवां शहर, थाना राहों के गांव दौलतपुर के पास बाबा सिरी चन्द का उपासना-स्थल है। बाबा जी कीरतपुर जाते हुए तीन दिन शीशम के इस पेड़ के नीचे रहे।

डल्ला — गुरु हरिगोविंद का ससुराल। कपूरथला के सुलतानपुर इलाके में यह गांव है। यहां के नारायण दास की सुपुत्री दमोद्री से गुरु हरगोविंद का प्रथम विवाह हुआ था।

डरोली — माता दमोद्री के बहिन-बहनोई रामो और साईंदास का निवास स्थान (गांव)।

तरन-तारन — अमृतसर नगर से 15 मील उत्तर में बसा एक गुरु धाम। इसे गुरु अर्जुन देव ने बनवाया था। तालाब में लगाने की ईंटें नूरदीन पठान ने छीन कर सराय बनवा ली थी। बाद में सराय ढहा कर राजा रणजीत सिंह ने तालाब पूरा करवाया।

तिपरा (तृप्ता) गुरु नानक जी की माता । मेहता कालू वेदी की पत्नी ।

तिलक तिलोका गढ़शंकर निवासी एक प्रेमी सिक्ख जिसने किसी योगी के दर्शनों से बैकुंठ प्राप्ति का लोभ भी छोड़ दिया था और सतिगुरु के अतिरिक्त किसी के भी दर्शनों से इंकार कर दिया था ।

तेग बहादुर नवें गुरु । माता नानकी से उत्पन्न गुरु हरिगोविंद के पांचवें पुत्र ।

थम्ह (स्तम्भ) करतारपुर में गुरु अर्जुन देव ने एक दीवान खाना बनवाया था, उसमें पक्के स्तम्भ की अपेक्षा शीशम की लकड़ी लगी थी, इसी लिए नाम थम्ह (स्तम्भ) पड़ गया । अब यह भवन कई मंजिल का है ।

दमदमा गुरु जी के विश्राम करने का ऊँचा स्थान, वडाली से एक फलांग दूर दक्षिण की ओर वह स्थान जहां गुरु हरिगोविंद ने एक सूअर मारकर विश्राम किया था ।

दया राम गुरु हरि राय के ससुर ।

दमोदरी गुरु हरिगोविंद की प्रथम पत्नी । नारायण-दया कौर की पुत्री ।

दया कौर नारायणदास की पत्नी । गुरु हरिगोविंद की सास ।

दर्शनी दरवाजा अमृतसर के किनारे हरिमन्दिर की बड़ी ड्योढ़ी ।

दातू गुरु अंगद देव तथा माता खीवी के छोटे पुत्र, जिनका जन्म खडूर में सं० 1594 में हुआ ।

दाला डूम भाई मरदाने का एक सम्बन्धी रबाबी ।

दासू गुरु अंगद देव तथा माता खीवी के बड़े पुत्र, जिनका जन्म सं० 1581 ई० में हुआ ।

दाई अभिशप्त गंधर्वी । दाई रूप में अपने स्तन को विष लगाकर इसने गुरु हरिगोविंद को शिशुता में ही मार देना चाहा था । किन्तु स्वयं मृत्यु को प्राप्त हुई ।

दिल्ली भारत की युग युग से चली आती राजधानी । यमुना नदी के किनारे बसा बड़ा नगर ।

दिलबाग घोड़ा, जिसे गुरु-सिक्खों से शाहजहां ने छीन लिया था और बाद में जिसे भाई बिधिया छल पूर्वक लौटा लाया था ।

दुआरका अधिक द्वारों वाली नगरी । काठियावाड़ में सागर तट पर एक तीर्थ-स्थान, जिसे श्रीकृष्ण ने बसाया था, द्वारिका ।

दु:ख भंजनी बेरी अमृतसर सरोवर के उत्तर में घाट पर लगा बेरी का पेड़, इसके नीचे दुनीचंद खत्री की एक पुत्री का कोढ़ी पति स्नान करके नीरोग हुआ था ।

देसा (माई) पट्टी गांव की एक बांझ स्त्री, जिस पर दया कर गुरु हरिगोविंद पुत्र लिखने लगे थे, घोड़े के पग बदलने से 1 का 7 हो गया ।

धनवन्ती माता गंगा की मां, किशन चंद की पत्नी, गुरु अर्जुनदेव की सास ।

धरम चंद गुरु नानक का पौत्र, बाबा लखमी चंद का पुत्र, जिसका जन्म सम्वत् 1580 में हुआ था ।

धीर मल्ल गुरु हरिगोविंद का पौत्र, बाबा गुरदित्ता का प्रथम पुत्र । इसे प्रिथी चंद का अवतार माना गया है ।

नत्ती (अनती) बटाला निवासी रामा-सुखदेई की पुत्री, बाबा गुरदित्ता की पत्नी, गुरु हरिगोविंद की पुत्र-वधु ।

(गुरु) **नानक देव** प्रथम गुरु ।

नानक देहुरा देहुरा बाबा नानक, ज़िला गुरदासपुर, रावी नदी के इस ओर बाबा सिरी चंद द्वारा बसाया नगर ।

नानक मता उत्तर प्रदेश में जिला नैनीताल के स्थान पीलीभीत से 15 मील दूर उत्तर पश्चिम में यह स्थान विद्यमान है । बाबा कमलिया (अलमस्त) की सहायता के लिए गुरु हरिगोविंद भी यहां पधारे थे ।

नानक सर नानकियाना का यह तालाब जो राय बुलार ने गुरु नानक के नाम पर बनवाया था ।

नानकी गुरु हरिगोविन्द की दूसरी पत्नी ।

नानू कुरुक्षेत्र का वह ब्राह्मण जिसने गुरु जी पर आपत्ति की थी ।

निहाला एक सिक्ख । हरिगोविंद के ससुर । माता दमोदरी के पिता ।

नीम बुड्ढन के टीले पर लगाया बाबा गुरदित्ता का नीम का पेड़ ।

नूरखां वह पठान जिसने तरनतारन के तालाब की ईंटें बलात् छीनकर अपनी सराय बनाई थी । गुरु अर्जुन के कथन को सत्य करने के लिए बाद में राजा रणजीत सिंह ने सराय ढहा कर वे ही ईंटें तालाब पर लगवाईं ।

नंद कौर साधु की माता, गुरु हरिगोविंद की समधिन, गुरु-पुत्री, वीरों की सास ।

पटना बिहार प्रदेश की राजधानी। दशमेश गुरु गोबिंद का जन्म स्थान।

पट्टी वह गांव जहां की माई को गुरु हरिगोविंद ने 7 पुत्रों को वरदान दिया था।

पीलो एक महात्मा जो अपनी वाणी गुरु ग्रन्थ में संगृहीत करवाने के लिए गुरु अर्जुन के पास आए थे, किन्तु उनकी वाणी स्वीकार नहीं की गई थी।

प्रिथीआ (पृथीचन्द) गुरु अर्जुन के बड़े भाई, आजन्म गुरु जी के प्रति ईर्ष्या और द्वेष में जलते रहे।

पैंड़ा गुरु अर्जुन का एक सिक्ख। गुरु हरिगोविंद के समय में भी वीरता प्रदर्शित करता रहा।

पैंदे खां एक अनाथ असहाय पठान जिसे गुरु हरिगोविंद ने बच्चों की तरह पोषित किया, मित्रों की भांति मान दिया। अन्त में गुरु जी के प्रति इसने विद्रोह किया और युद्ध में उन्हीं के हाथों मारा गया।

पंच सिक्ख कौलां-त्याग की प्रेरणा देने वाले पांच सिक्ख—किशना, तीरथ, तखतू, निहालू और तिलोका।

प्रेम चन्द खत्री गुरु हरिगोविंद का समधी, सूरज मल्ल का ससुर।

बन्नो लाहौर गांव खारा का वह सिक्ख जिसने जिल्दबंदी के लिए प्राप्त गुरु ग्रंथ की दूसरी नकल तैयार करवाई थी।

बावली साहिब गोइंदवाल में 1616 में गुरु अमरदास जी द्वारा बनवाई वापिका जिसकी 84 सीढ़ियां हैं।

बिधीचंद (बिधीआ) ज़िला लाहौर के सुरसिंह गांव का वासी जाट। आरम्भ में चोरी डाके का जीवन। गुरु सिक्खों की संगति में गुरु अर्जुन देव जी की शरण में आया। गुरु हरिगोविंद के बड़े-बड़े कार्य इसने किए। युद्धों में भी वीरतापूर्वक लड़ा और बादशाह से गुरु के घोड़े भी उड़ा लाया था।

बिपासा (ब्यास नदी)— ब्यास नदी, दोआबा जालन्धर का एक पक्ष।

बिशन कौर गुरु तेग़ बहादुर की सास। माता गूजरी की माँ।

बीड़ जंगल, रक्षित वन।

बीबी (भाणी तथा बीरो) दो संज्ञाएँ यथास्थान देखिए।

बुड्ढा (बाबा) गुरु नानक से लेकर गुरु हरिगोविंद तक गुरु घर का पूज्य आत्म-ज्ञानी सिक्ख प्रथम छ: में से पाँच को गुरु पदासीन करवाने की पुरोहिताई इसी ने की। बचपनावस्था में ही गुरु नानक की शरण में आया था और फिर आजीवन गुरु घर का आदरणीय सेवक बना रहा। गुरु ग्रंथ साहिब का प्रथम पाठी यही था।

बुड्ढन शाह गुरु नानक काल का एक मुस्लिम फकीर, जो सतिलुज के किनारे कीरतपुर के टीले पर नानक के दूसरे रूप बाबा गुरुदित्ता की प्रतीक्षा करता रहा और उसके आने पर प्राण त्यागे।

बेरी साहिब ज़िला लाहौर के रेलवे स्टेशन अटारी के तीन मील दक्षिण में यह गुरुद्वारा है। यहाँ गुरु हरिगोविंद पधारे थे और उन्होंने बेरी के पेड़ से अपना घोड़ा बाँधा था।

ब्राह्मण अभिशप्त गन्धर्व, जिसने बालक हरिगोविंद को प्रिथीआ परिवार के कहने पर विष देने का असफल प्रयास किया था।

भागभरी (भागो) काश्मीर की एक गुरु भक्त बुढ़िया जिसने स्वयं कातकर गुरू हरगोविंद के लिए चीर तैयार किया था।

भागन मंडियाली के दुआरा की पत्नी जिसे नारद के वरदान से कन्या प्राप्त हुई थी।

भानी (माता) गुरु अमरदास की पुत्री और गुरु रामदास की पत्नी। गुरु अर्जुन देव जी इन्हीं की सन्तान थे।

भाना (साहिब) बाबा बुड्ढा का पुत्र।

भिखारी गुजरात (पंजाब) का गुरु-इच्छा मानने वाला एक आदर्श सिक्ख। गुरु अर्जुन देव ने किसी के सम्मुख इसे उदाहरण रूप में गुरु इच्छा मानने वाला कहा था।

भैनी (गाँव) एक गाँव।

मउ ज़िला जालन्धर तहसील फिल्लौर का एक गाँव, जहाँ गुरु अर्जुनदेव का विवाह हुआ था।

मक्का मुसलमानों का प्रसिद्ध तीर्थ।

मजनूं लोक कथाओं का प्रसिद्ध प्रेमी नायक। दिल्ली के निकट यमुना किनारे 'मजनूं का टीला' नामक एक स्थान जहाँ गुरु नानक तथा गुरु हरगोविंद विराजे थे।

मल्ला एक गाँव जहाँ बीबी वीरो के ससुराल थे। साधु, गुरु हरिगोविंद का दामाद, यहाँ का रहने वाला था।

मरवाही गुरु हरिगोविंद की तीसरी पत्नी। मूल नाम महादेवी। मरवाही गोत्र नाम है।

मटनी मरवाही माता का गाँव। यही गुरु हरिगोविंद की तीसरी सगाई हुई थी।

महादेव गुरु अर्जुनदेव का बड़ा और पृथीए से छोटा भाई। बीबी भानी की दूसरी संतान।

मांगट भाई बन्नो का ज़िला गुजरात का निवास-स्थान। यहाँ की संगति के लिए ही भाई बन्नो ने गुरु ग्रंथ की नक़ल करवाने का उद्यम किया था।

मिहरवान प्रिथीचंद का पुत्र। सोढी परिवार में कवीश्वर नाम से प्रसिद्ध। इसने भी पिता की भाँति गुरुजी से द्वेष बनाए रखा।

मिहरा बकाला का एक प्रेमी सिक्ख। माता गंगा का देहाँत इसी के घर में हुआ था।

मुलतान पश्चिमी पंजाब का एक प्रसिद्ध नगर।

मुँदावनी गुरु ग्रंथ साहिब के उपसंहार में लिखी भोग-वाणी। अन्तिम चरण का वाणी-पाठ।

मुजंग लाहौर के निकट एक स्थान, जहाँ के काज़ी की पुत्री कौलाँ गुरु जी की शरण में आई थी।

मुगलसखाँ अमृतसर युद्ध का पठान सेनानी, जो गुरु हरिगोविंद के हाथों मारा गया।

मोहन गुरु अमरदास जी का बड़ा लड़का। मस्त और भजन-पाठ में लीन रहने वाला। गुरु ग्रंथ तैयार करने से पूर्व गुरु अर्जुन देव जी इसे प्रसन्न करके, इसी से वाणी-संग्रह की पोथियाँ लाए थे।

मोहरी गुरु अमरदास जी का छोटा पुत्र।

मंजी साहिब गुरु जी जहाँ जहाँ विश्रामार्थ चारपाई पर बैठे, वहाँ-वहाँ इस नाम से गुरुद्वारे बने हैं। गुरुद्वारे के चबूतरे को भी मंजी कह देते हैं।

मंडियाली गुरु हरिगोविंद के ससुराल का गाँव।

रागमाला छः मुख्य रागों को उनकी पत्नियों और पुत्रों सहित विशद परिचय। गुरु ग्रंथ साहिब के अन्त में परिशिष्ट रूप में यह विद्यमान है।

(गुरु) रामदास चतुर्थ गुरु।

रामदासपुर गुरु का चक। अमृतसर नगर का पुराना नाम।

रामकुँवर बाबा बुड्ढा जी के वंशज।

रामसर रामसरोवर, अमृतसर।

रामकली एक राग विशेष।

रामराय गुरु हरिराय का बड़ा पुत्र।

रामो डरोली निवासी साईंदास की पत्नी। माता दमोदरी की बड़ी बहिन। गुरु हरिगोविंद की बड़ी साली।

रामा नत्ती (अनंती) का पिता। बाबा गुरदित्ता का ससुर।

रुहेला ब्यास नदी के किनारे का एक गाँव, जहाँ गुरु हरिगोविंद जी ने एक नया नगर बसाया था।

लक्खू लाहौर निवासी प्रेमी सिक्ख, जिसके वचन से बुद्धू का भट्ठा कच्चा रह गया था।

लद्धा लाहौर का एक परोपकारी सिक्ख, जिसने सत्ता-बलवंड रबाबियों को गुरु अर्जुन से क्षमा दिलवाने के लिए स्वयं अपना मुंह काला करके, गधे पर सवार होकर क्षमा-याचना की थी।

लालचंद गुरु तेग़ बहादुर का ससुर।

लाहौर रावी नदी पर बसा पश्चिमी पंजाब का प्रसिद्ध नगर।

लंगाह लाहौर का एक प्रसिद्ध सिक्ख।

वडाली अमृतसर का समीपवर्ती गाँव। छिहरटा के निकट स्थित। गुरु साहिब प्रायः वहां आते-जाते रहे।

वली खां जालन्धर के सूबेदार अब्दुल खाँ का पुत्र।

वीरो माता दमोदरी के गर्भ से गुरु हरिगोविंद की पुत्री।

वेद ऋक्, साम, अथर्व, यजुः—चार वेद।

श्वान पिस्ता जाति की वह कुतिया जिसने गुरु हरिगोविंद को दिया जाने वाला विष-मिश्रित दही खाकर प्राण दिये थे।

शाह हुसैन वह महात्मा जिसकी वाणी गुरु अर्जुनदेव ने कान्हा-पीलू आदि के साथ ही ग्रंथ में लेना अस्वीकार कर दिया था।

सक्रगंगा गुरु अर्जुन ने करामात द्वारा गंगा में डूबा-बहा अपना लोटा इस जल-स्रोत से निकाला था और बाद में इसे सक्रगंगा का नाम दे दिया था। अब यह प्रसिद्ध तीर्थ है।

सद्द बाबा सुन्दर की वह वाणी, जो गुरु ग्रंथ में संगृहीत है। इसे मृत्यु के समय पढ़ा जाता है।

सत्ता-बलवंड दो डूम भाई। ये एक बार गुरु अर्जुन से नाराज़ होकर पीड़ित हुए थे, तब लाहौर के लद्धा नामक सिक्ख ने इन्हें क्षमा दिलवाई थी।

साईंदास गुरु हरिगोविंद का सांढू। दमोदरी माता की बड़ी बहिन रामो का पति।

साधु मल्ला-निवासी धरमा का पुत्र, गुरु हरिगोविंद का दामाद, बीबी वीरो का पति।

सिंधा गुरु हरिगोविंद का कुल पुरोहित। अमृतसर युद्ध में शहीद हुआ।

सुधासरोवर अमृतसर।

सुलबी सुलही खाँ के बड़े भाई का पुत्र। यह पृथीचन्द की प्रेरणा से गुरु अर्जुन को संताप पहुँचाने गया था, किन्तु मार्ग में वेतन के लिए झगड़ा हो जाने से अपने ही सेवकों के हाथों मारा गया।

सुलहीखां जहाँगीर का पठान अधिकारी। पृथीचन्द का मित्र होने के नाते गुरु अर्जुन को अकारण कष्ट पहुँचाना चाहता था, किन्तु 'गुरु का कोठा' स्थान पर भट्ठे की आग में जलकर मर गया।

सुन्दर गुरु अमरदास जी का प्रपौत्र। 'सद्द' नाम की वाणी रचयिता।

सुखदेई बाबा गुरदित्ता की सास, नत्ती की माता।

सुलतानविंड अमृतसर के दक्षिण में गुरु अर्जुन देव का स्थान।

सूरजमल्ल गुरु हरिगोविंद का मरवाही माता के उदर से उत्पन्न दूसरा पुत्र।

सोधेखां लाहौर के किले का अश्व-पाल, जिसे भाई विधीचन्द ने खूब छकाया।

हरदेई गुरु हरिगोविंद की सास, हरिचन्द की पत्नी। नानकी की माता।

हरदास ग्वालियर में बंदीखाने का प्रबन्धक। दुर्ग का जमादार।

हरगोविंदपुर रूहेला धरती पर बनाया नवीन नगर, जिसके लिए अब्दुल खाँ से युद्ध हुआ।

(गुरु) हरगोविंद छठे गुरु। गुरु अर्जुनदेव जी के सुपुत्र।

हरिमन्दिर — अमृतसर का बड़ा गुरु-मन्दिर, जिसका निर्माण गुरु रामदास ने आरम किया और गुरु अर्जुन देव ने सम्पूर्ण किया। बाद में अनेक धनवा श्रद्धालुओं ने उसे उत्तरोत्तर सजाया-संवारा और उसकी उन्नति की।

हरीचन्द — माता नानकी का पिता। गुरु हरिगोबिंद का ससुर।

हाफ़िज़ाबाद — ज़ि० गुजराँवाला का एक नगर, जहाँ कश्मीर से लौटते हुए गु हरिगोविंद विराजे थे।

————

सक्रगंगा — गुरु अर्जुन ने करामात द्वारा गंगा में डूबा-बहा अपना लोटा इस जल-स्रोत से निकाला था और बाद में इसे सक्रगंगा का नाम दे दिया था। अब यह प्रसिद्ध तीर्थ है।

सद्द — बाबा सुन्दर की वह वाणी, जो गुरु ग्रंथ में संगृहीत है। इसे मृत्यु के समय पढ़ा जाता है।

सत्ता-बलवंड — दो डूम भाई। ये एक बार गुरु अर्जुन से नाराज़ होकर पीड़ित हुए थे, तब लाहौर के लद्धा नामक सिक्ख ने इन्हें क्षमा दिलवाई थी।

साईंदास — गुरु हरिगोविंद का सांढू। दमोदरी माता की बड़ी बहिन रामो का पति।

साधु — मल्ला-निवासी धरमा का पुत्र, गुरु हरिगोविंद का दामाद, बीबी वीरो का पति।

सिंधा — गुरु हरिगोविंद का कुल पुरोहित। अमृतसर युद्ध में शहीद हुआ।

सुधासरोवर — अमृतसर।

सुलबी — सुलही खाँ के वड़े भाई का पुत्र। यह पृथीचन्द की प्रेरणा से गुरु अर्जुन को संताप पहुँचाने गया था, किन्तु मार्ग में वेतन के लिए झगड़ा हो जाने से अपने ही सेवकों के हाथों मारा गया।

सुलहीखां — जहाँगीर का पठान अधिकारी। पृथीचन्द का मित्र होने के नाते गुरु अर्जुन को अकारण कष्ट पहुँचाना चाहता था, किन्तु 'गुरु का कोठा' स्थान पर भट्ठे की आग में जलकर मर गया।

सुन्दर — गुरु अमरदास जी का प्रपौत्र। 'सद्द' नाम की वाणी रचयिता।

सुखदेई — बाबा गुरदित्ता की सास, नत्ती की माता।

सुलतानविंड — अमृतसर के दक्षिण में गुरु अर्जुन देव का स्थान।

सूरजमल्ल — गुरु हरिगोविंद का मरवाही माता के उदर से उत्पन्न दूसरा पुत्र।

सौधेखां — लाहौर के किले का अश्व-पाल, जिसे भाई बिधीचन्द ने खूब छकाया।

हरदेई — गुरु हरिगोविंद की सास, हरिचन्द की पत्नी। नानकी की माता।

हरदास — ग्वालियर में बंदीखाने का प्रबन्धक। दुर्ग का जमादार।

हरगोविंदपुर — रूहेला धरती पर बनाया नवीन नगर, जिसके लिए अब्दुल खाँ से युद्ध हुआ।

(गुरु) हरगोविंद — छठे गुरु। गुरु अर्जुनदेव जी के सुपुत्र।

हरिमन्दिर अमृतसर का बड़ा गुरु-मन्दिर, जिसका निर्माण गुरु रामदास ने आरम्भ किया और गुरु अर्जुन देव ने सम्पूर्ण किया। बाद में अनेक धनवान श्रद्धालुओं ने उसे उत्तरोत्तर सजाया-संवारा और उसकी उन्नति की।

हरीचन्द माता नानकी का पिता। गुरु हरिगोविंद का ससुर।

हाफ़िज़ाबाद ज़ि० गुजराँवाला का एक नगर, जहाँ कश्मीर से लौटते हुए गुरु हरिगोविंद विराजे थे।

———